ओड़िया

महाभारत

आदिपर्व



आदिकवि सारलादास

आदिकवि सारलादास कृत ओडिया महाभारत

आदि पर्व

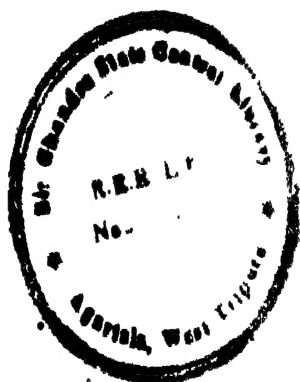


वाणी प्रकाशन
नयी दिल्ली-110002

आदिकवि सारलादास कृत ओड़िया महाभारत

आदि पर्व

डॉ. नीलाद्रि भूषण हरिचन्दन
डॉ. हरिश्चन्द्र मिश्र





ISBN 81 7055 394 6

वाणी प्रकाशन
21-ए, दरियागंज, नयी दिल्ली 110002
द्वारा प्रकाशित

मानस टाइप सैटर, दिल्ली 110002
द्वारा लेजर कम्पोज

एस. एन. प्रिंटर्स, दिल्ली-110032
द्वारा मुद्रित

ORIA MAHABHARAT AADI PARV
by Aadikavi Sarladas

Translated by
Dr Niladri Bhushan Harichandan,
Dr Harishchandra Mishra

पुरोवाक्

आज राष्ट्रीय चेतना के अभाव के समय यह आवश्यक हो गया है कि विभिन्न भारतीय भाषाओं के प्रासंगिक एवं मूल्यवान रचनाओं का राष्ट्रभाषा में अनुवाद किया जाये। यह एक भारतीय राष्ट्रीय चिन्ता से जुड़े व्यक्ति का राष्ट्रीय दायित्व बनता है। इसी आवश्यकता को केन्द्र मे रखते हुए ओड़िया साहित्य के आदि कवि शूद्रमुनि सारलादास के अठारह खण्डों में रचित महाभारत का हिन्दी गद्यानुवाद आरम्भ हुआ। इस संदर्भ मे उड़ीसा सरकार के पास भी आर्थिक सहायता के लिए निवेदन किया गया। आशाएँ बनीं और बिगडीं। काम चलता रहा। अब प्रकाशित होने जा रहा है। भारत में ही जन्मे सारलादास जैसे महान रचनाकार की कालजयी रचना से हिन्दी जगत अनभिज्ञ रहे, यह दुर्भाग्य की बात लगती है। इसीलिए यह प्रयास हिन्दी-साहित्य को प्रस्तुत किया जा रहा है। इस पुरोवाक् के सन्दर्भ में ही उस महान रचनाकार के जीवन युग, साहित्यिक रचनाधर्मिता एवं वैशिष्ट्य आदि का परिचय देना आवश्यक है, क्योंकि अनभिज्ञ पाठक अपनी समझ को एक रास्ता दे सके।

उड़िया साहित्य के ऐतिहासिक विकास की धारा में 'आदिकाल' के बाद 'सारला युग' को अभिहित करने वाले सारला दास एक महान रचनाकार थे, जिन्होंने 'महाभारत', 'चण्डीपुराण' और 'विलंका रामायण' जैसी तीन रचनाओं के द्वारा उड़िया भाषा और साहित्य का सूत्रपात और पल्लवन किया। सभी उड़िया साहित्य के इतिहास लेखकों ने (ख्री. 1400-1500 ई.) के काल को 'सारला युग' नाम से अभिहित किया है। भाषा साहित्य के प्रतिष्ठाता के रूप में सारलादास एक ऐसे महत्त्वपूर्ण कवि के रूप मे आते हैं जिन्होने उड़िया साहित्य और भाषा को एक स्वतन्त्र स्वरूप प्रदान किया। वस्तुतः पन्द्रहवीं शताब्दी, समग्र भारतीय साहित्य मे भाषा साहित्य के विकास की दृष्टि से उल्लेखनीय काल है। असमिया साहित्य में शंकरदेव (जन्म सन् 1447) मैथिली साहित्य मे चण्डीदास (जन्म सन् 1418) और हिन्दी साहित्य में कवीर (जन्म सन् 1337) आदि प्रमुख साहित्यकारों ने इस शताब्दी मे जन्म ग्रहण करके, विभिन्न भाषा-साहित्य को एक निर्दिष्ट भित्ति भूमि पर प्रतिष्ठित किया था।

मध्य युग के कवियों की भाँति ही सारलादास का परिचय, वंशावली और जन्म स्थान इत्यादि का पता कवि की लेखनी द्वारा किसी व्यवस्थित लेखन के क्रम में प्राप्त नहीं होता। सकेतों और किवदन्तियों के सहारे ही उनका परिचय प्राप्त हुआ है। सारलादास के वचपन का नाम सिद्धेश्वर परिड़ा था।

महाभारत के 'आश्रमिक पर्व' में 'शूद्रमुनि सारलादास' नामकरण के सन्दर्भ में संकेत मिलता है कि जगत् माता सारला देवी ने प्रसन्न होकर ही उन्हें यह नाम प्रदान किया।

इसी प्रकार मध्य पर्व में उनके जन्म स्थान और उनके बड़े भाई परशुराम का उल्लेख भी मिलता है। मातृ-पितृहीन सारलादास के अभिभावक या परिपोषक उनके यही बड़े भाई हैं। अनुमान किया जाता है कि चित्रोत्पला नदी के उत्तर भाग में जखोरपुर पाटणा के अंतर्गत कनकपुर और कनकपुर के अंतर्गत सारोल ग्राम में सारलादास का जन्म हुआ। बाद में जंखोरपुर पाटण झंकड़ परगना में परिणत हुआ। इसके अंतर्वर्ती कनकपुर ग्राम में प्रसिद्ध सारला पीठ है। वस्तुतः शक्तिरूपिणी देवी आरम्भ में अब्राह्मण सम्प्रदाय द्वारा पूजिता थीं, परवर्ती काल में हिन्दू तंत्र ने इन देवियों को (वैदिक अर्थ में) देवताओं के बीच संयोजित कर लिया और वे ब्राह्मणों के द्वारा आराधिता हुई; फिर भी अब्राह्मण और तथाकथित नीच जाति के शूद्र देवी के आपूजक रहे। सिद्धेश्वर सारला देवी के पूजक और वरदपुत्र थे और उनकी कृपा से ही उन्हें काव्य-प्रतिभा प्राप्त हुई थी। लगता है मध्ययुगीन साहित्यिक परम्परा में सम्भवतः कवित्व के लिए शक्तिरूपिणी वाग्देवी की प्रेरणा का लाभ एक प्रतिष्ठित धारणा

थी। महाकवि कालिदास अपने प्रारम्भिक जीवन में घोर मूर्ख होने पर भी देवी की कृपा से अमर कवित्व के अधिकारी हुए—ऐसी किंवदन्ती सुविदित है। सारला के समसामयिक कवि चण्डीदास ने भी इष्टदेवी बासुली की कृपा से कवित्व लाभ किया था—ऐसा वर्णन है। इसी क्रम में यह आख्यान सारला के साथ भी जुड़ा रहा है।

सारलादास के बारे में जो कुछ भी प्राप्त होता है, वह अर्द्धसत्य किंवदन्ती, भक्तिमय मिथ्या, विनय, दैन्य भरे इधर-उधर कहे गये तथ्यो के अलावा अन्य किसी उत्कृष्ट तथ्य पर निर्भर नहीं करता। सारलादास का जन्म एक दरिद्र कृषक परिवार में हुआ था। वे जाति से शूद्र थे। कवि के वंशजों का व्यवसाय नौका चालन और कृषि कार्य था। शायद इसीलिए वे कृषि के महत्त्व को मानते थे और मध्यपर्व में अर्जुन के वनवास के एक विशेष प्रसंग में भी कृषि के प्रति आग्रह को विवेचित करते हैं; जो शिव के वर के रूप में ब्राह्मणों को प्राप्त हुआ था। पार्वती उल्लेख करती हैं कि शिव का अवढरदानी रूप देखो कि प्रति दिन इनके अपूजित लिग पर जो ब्राह्मण पुत्र ढेला मारता था। उस पर प्रसन्न होकर इन्होंने उसे वर देने के लिए कहा। उसने जब भिक्षा याचना की निन्दा करते हुए कृषि-कर्म द्वारा जीविका उपार्जन का वरदान माँगा तो इन्होंने उसे प्रसन्न होकर उसकी इच्छा के अनुकूल कृषि-कर्म निन्दनीय था, किन्तु शिव के वर से वह ब्राह्मणों के लिए भी उत्कृष्ट कर्म हुआ। यहाँ सारलादास भिक्षा याचना करके जीने वाले ब्राह्मणों की अपेक्षा कृषि कर्म करके जीने वाले ब्राह्मणों की उत्कृष्टता प्रतिपादित करते हैं।

सारलादास के बारे में उडीसा में अनेक किवदन्ती प्रचलित हैं—उसमें प्रसिद्ध है सारलादास को सारला चण्डी के वरपुत्र के रूप मे प्रतिपादित करना। कवि और कवि का परिवार ग्रामांचल में संगीत सम्पन्न गृहस्थ था। उनके भाई परशुराम के अधीन प्रवहमान चन्द्रभागा का घाट भी था—ऐसी सूचना मिलती है। कवि अपने पिता के बारे में आश्चर्यजनक ढंग से चुप है। किन्तु वे बड़े भाई का नामोल्लेख अपने ग्रन्थ में अनेक बार करते हैं क्योकि ज्यादा संभव है कि उदार प्रकृति के अग्रज परिवार का सारा भार अपने सिर पर लिये थे। असमारी (अविवाहित) छोटे भाई को सारला मन्दिर के वट वृक्ष के नीचे बैठकर दिन-रात गप कहने और ताड़पत्र पर गप लिखने के लिए छोड़ दिये थे, और प्रतिभाशाली अनुज इसीलिए बड़े भाई के प्रति हमेशा कृतज्ञ थे। स्वाभाविक प्रतिभा के अधिकारी होने के कारण कृषक कवि सारलादास विनय के अवतार थे। वे कही भी एक स्रष्टा के रूप मे परिचय नही देते, अपनी सृजन-क्षमता को वे सर्वत्र सारलादेवी की अनुकम्पा पर आरोपित करते चलते हैं।

(कवि स्पष्ट कहता है कि मुझ दृष्टिहीन को माँ सारला ने दृष्टि दी। मुझे सारला देवी जो आज्ञा देती हैं, में उसे ही लिख रहा हूं। मैं तो जन्म से मूर्ख हूँ, विद्या नही पढ़ी, जापमत्र नहीं जानता। इस माता की कृपा से मेरे मन में जो स्फुरित होता है, उसे मै नील कल्पतरु के नीचे बैठकर लिखता हूं।)

कृषक कवि में असाधारण प्रतिभा के होने पर भी गम्भीर विनय और सम्पूर्ण असूया-शून्य भाव से बार-बार निःसंकोच भाव से अपने को 'शूद्र' कहकर प्रचार करता है। उड़ीसा की जनचेतना का कवि आज भी 'शूद्रमुनि सारलादास' नाम से सम्मानित है, किन्तु कवि जो शूद्र अर्थात् कृषिजीवी श्रेणी मे उत्पन्न हुआ था, उसे उसके प्रति और ओड़िया साहित्य के प्रति एक प्रच्छन्न आशीर्वाद मानकर चलना होगा। क्योंकि उसी के परिणामस्वरूप ही इस सृजनशील प्रतिभा ने देश की माटी के साथ घनिष्ठ सम्पर्क मे आकर जातीय सस्कृति के सकल विभावो का निर्यास सहज रूप में आत्मीभूत कर लिया था। मालूम होता है कि वे सस्कृत नही जानते थे या साधारणतः किसी प्रकार एक उच्च विद्वान न थे। मायाधर मानसिंह मानते हैं कि यह भी उनकी प्रतिभा के लिए एक और आशीर्वाद था। तथाकथित ये सभी अभाव भी सारलादास की रचनावली को दे पाते हैं—दृढ़व्यक्तित्व, उस उड़ीसी माटी का स्वतन्त्र वर्ण-विभव, उड़िया जाति का समग्र व्यक्तित्व, अपनी मौलिक गन्ध—जिसको उच्च पाण्डित्य नष्ट कर देता। संस्कृत जानना या न जानना सारलादास और उनकी रचना को छोटा नहीं करता।

सारलादास के कवित्व-स्फुरण के सन्दर्भ में तीन किवदन्तियाँ प्रचलित हैं—

1. एक दिन सारलादास कृषिकार्य में संलग्न रहते बहुत कष्ट का अनुभव कर रहे थे। अपनी क्लान्ति को दूर करने के लिए अर्थहीन अवान्तर संगीत गा रहे थे। इसी समय सारला देवी एक रूपवती नारी का रूप धारण करके उसी रास्ते से निकलीं। तत्क्षण उन्होने अपना गान बन्द कर दिया। इसके बाद देवी ने वृद्धा वेश में आकर कृष्ण-चरितामृत का गान करने का उपेदश दिया और उसी क्षण उनके कंठ से उस परम पुरुष का माहात्म्य

झंकार उठा। इससे सारलादास विस्मित होकर आहार छोड़कर सो गये। रात में सारला देवी ने प्रसन्न होकर सारलादास को दिव्य लेखनी प्रदान की और उनके कंठ में बैठकर पद कहने की दृढ़ प्रतिश्रुति दी। देवी की अनुकम्पा से सारलादास महाभारत जैसी रचना करने में समर्थ हुए।

2. सारला पीठ से बहुत दूर एक शूद्र बस्ती थी। शूद्र प्रतिदिन अपनी सन्तान को विद्या सिखाते और नाना छोटी-छोटी कहानियाँ सुनाते और दूसरे दिन उनकी स्मृति की परीक्षा करते। छोटे बच्चों की स्मरण शक्ति के ह्रास से वे लज्जित होते। इसी प्रकार की भर्त्सना पाने के कारण सारलादास की आत्मग्लानि बढ़ने लगी। इसी आत्मग्लानि से जर्जरित होकर वे देवी की शरण मे आपन्न हुए। देवी के प्रसन्न होने पर उन्होंने महाभारत लिखने के लिए वर माँगा। देवी ने उन्हें आदेश दिया कि नीलबट के नीचे बैठकर वे आकाश में होने वाली वाणी को लिखते रहें। देवी की कृपा से महाभारत की रचना कर सकें।

3. श्रमिक संन्यासी सारला रौद्र ग्रीष्म के प्रचण्ड ताप मे अपने श्रम को दूर करने के लिए अपने प्रिय चौतीसा का सतुलित कठ से गान कर रहे थे। पद-याद न होने मे सगीत की मधुर ध्वनि अपने आप बन्द हो गयी। हठात् एक नारी मूर्ति ने उनसे पुन. याद करने क लिए अनुरोध किया। अत उन्होने सगीत की आवृत्ति की। उनकी पाण्डित्य-प्रतिभा केवल देवी के वरदान के कारण ही सम्भव हुई।

सारलादास अपन ग्रन्थो मे सर्वत्र प्राय' एक ही भाव से स्वयं को मूर्ख, अपडित, शास्त्र-बुद्धिहीन बताते है और उद्घाषित करते हे कि वाग्देवी सारला की कृपा और उनके स्वप्नादेश से ही वे अपनी रचनाएँ प्रस्तुत कर सके। वस्तुतः यह यथार्थ नही ह। यह तो कवि का दैन्य ही कहा जाएगा। उनकी बहुशास्त्र दर्शिता और पाण्डित्य का परिचय उनके ग्रन्थों में सर्वत्र विराजमान है। सस्कृत प्रभावित ब्राह्मण-सस्कृति और साहित्य के विरुद्ध एक व्यापक सास्कृतिक विद्रोह सारलादास क साहित्य में दिखाई देता ह। ब्राह्मण समाज की कोपदृष्टि से आत्म रक्षा के लिए ही वे सारला देवी के प्रसाद से महाभारत आदि ग्रन्थ लिखने की दयनीयता प्रदर्शित करते ह।

सारलादास अपने जन्म-जन्मातर की कथा को एक उद्‌भट कल्पना क आधार पर प्रस्तुति करते जान पड़ते हैं। वे बतात है कि शिव के अभिशाप से उन्होने मर्त्यलोक में जन्म ग्रहण किया है—सामाजिक व्यवस्था के अनुकूल वे ऐसा कहने के लिए बाध्य होते हे लगता है समसामयिक समाज में वे सहानुभूति आकर्षित करने का प्रयास करना चाहते है। उसके अनुसार वे मर्त्यलोक मे पहले जन्म मे कालिदास हुए। द्वितीय जन्म म महाकाल और तीसर जन्म म सारलादास हुए। अन्य जन्मों में भी मर्त्यलोक म जन्म लूगा और प्रत्येक जन्म मे पन्द्रह लाख कथा की चिन्ता करूगा। इस प्रकार चार जन्म मे साठ लाख कथा कहूँगा।

सारलादास की सृजनशीलता की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि की ओर भी ध्यान दना आवश्यक है। इसी पृष्ठभूमि मे सारलादास का युगीन जीवन, सन्दर्भ आर मूल्य की सतत् धारा सृजनात्मक होती है। छठी मे चोदहवी शताब्दी के बीच उत्तरी उडीसा के भौमकर और केशरी राजागण, केन्द्रीय उडीसा मे शैलोद्‌भव राजागण आर दक्षिणी उड़ीसा मे गग राजागण उड़िया सस्कृति के मूल सस्थापक थे। खारवेल वश राजाओ ने ई. पू प्रथम शताब्दी में जिस स्थापत्य का गठन इस प्रदेश में आरम्भ किया था, उसे सोम या केशरी वंशियों ने प्रसारित किया और गंग राजाओं के हाथ से आश्चर्यजनक परिणति हुई। अनेक सूक्ष्म कला कृतियों स अलंकृत बडे बडे मन्दिरो की रचनाओं द्वारा देश को भर देने वाले भिन्न-भिन्न राजवंशों के ये राजागण युग-युग तक पारस्परिक प्रतियोगिता में लगे रहे। वे लोग भी काव्यत्व और पाण्डित्य के परम पोषक थे। किन्तु देश के शिष्ट समाज की भाषा संस्कृत ही थी। इसीलिए दीर्घकाल तक उड़ीसा मे एक स्वतंत्र स्थानीय साहित्य का अभ्युदय सभव नहीं हुआ।

गंग राजागण जिस प्रकार के मन्दिर निर्माता थे, उसी प्रकार साम्राज्य निर्माता और साम्राज्य शासक थे। इन गंग राजाओं ने केवल उत्तर, दक्षिण, पूर्व और पश्चिमी उड़ीसा को एक शासन के अधीन नही किया, अपितु उडीसा की राजनैतिक सीमा को गगा से गोदावरी पर्यन्त शताब्दी-शताब्दी तक संप्रसारित किया और इस अत्यन्त विस्तृत साम्राज्य पर इस प्रकार की दक्षता के साथ शासन किया कि उसका चिह्न उड़ीसा के सामाजिक जीवन में आज भी देखने को मिलता है।

तीन सौ वर्ष के गौरवमय राज्यत्व के बाद सन् 1415 ई. में गंगवंश का अंत हुआ। इसके बाद कपिलेन्द्र देव से गौरवान्वित सूर्य वंश आरम्भ हुआ। गंग वंश के आरम्भिक समय में ही उत्तर भारत मुसलमानों के द्वारा आक्रान्त हुआ। वे लोग बंगाल पर अधिकार करने के बाद उड़ीसा को अपने अधिकार में लेने के लिए बार-बार आक्रमण करते रहे; किन्तु ओड़िया लोगों के द्वारा वे केवल परास्त ही नहीं हुए थे, अपितु ओड़िआ लोगों ने उन लोगों को उनकी राजधानी तक बार-बार खदेड़ा था। इस प्रकर समस्त उत्तर भारत के मुसलमानी शासन के अधीन होने के बाद भी उड़ीसा तीन सौ वर्षों के दीर्घ काल तक स्वाधीनता के गौरव-पताका को उड़ाता रहा। सूर्यवंशी राजागण भी पूर्ववर्ती गंग राजाओं की तरह उड़ीसा के उत्तर सीमान्त में मुसलमानों की शक्ति को बारम्बार बाधा देते रहे; किन्तु उन्हीं लोगों के समय उड़ीसा के दक्षिण-पश्चिम सीमा की ओर मुसलमानों का ब्राह्मनी राज्य प्रतिष्ठित हुआ था। इसीलिए सूर्यवंशी राजाओं को उत्तर-दक्षिण दोनों सीमाओं पर मुसलमानवाहिनी के साथ संघर्ष करना पड़ा था और दोनों दिशाओं के युद्ध में वे बराबर विजयगौरव लेकर लौटे थे।

ऐसा माना जाता है कि उड़िया महाभारत के कवि सारलादास सूर्यवंश के प्रतिष्ठाता और श्रेष्ठ गौरवशाली सम्राट कपिलेन्द्र देव (1435-1467) के समसामयिक थे। यही कपिलेन्द्र देव उड़ीसा में एक कहानी में परिणत हो गये हैं। एक सामान्य सैनिक से अपनी दक्षता और प्रतिभा के बल से उन दिनों अन्तिम गंगवंशीय राजाओं के सेनापति हो सके थे और उन्होंने राष्ट्र की आवश्यकता के अनुरूप दुर्बल गंग राजा से देश का शासनभार अपने हाथ में ले लिया था। इस सैनिक सम्राट ने उड़िआ वाहिनी की विजय पताका भारतीय उपमहादेश के दक्षिण में कावेरी के किनारे तक फहरायी और पश्चिम में मुसलमान साम्राज्य के हृदपिण्ड स्वरूप विदर और वारांगल आदि दुर्ग को अपने अधीन कर लिया था।

इस प्रकार यह समग्र उपमहादेश जब विदेशियों के शासन और अधिकार में था, उस समय उड़ीसा स्वाधीनता एवं उज्ज्वल सामरिक यश का भोग कर रहा था। उन दिनों यह प्रदेश उड़िया जाति की संस्कृति और सभ्यता का सूचक विस्मयकारी मन्दिरो के द्वारा अलंकृत हो रहा था। सच मे उन दिनों इस देश की समृद्धि की तुलना नहीं थी। इस काल में निर्मित कोणार्क और भुवनेश्वर मन्दिरों के शरीर पर इस देश के महाराजे जिस जाति को चित्रित कर गये हैं, वह जाति कैसी थी ? उन दिनों उस जाति की जीवन के प्रति अटूट श्रद्धा थी। उस जाति की चेतना मात्र युद्ध, शिकार, खेल व विजय अभियान मे नहीं थी, अपितु वे उत्तम भाव से प्रणय संगीन एवं नृत्य का उपभोग कर रहे थे। समाज के सुधी जनों की वाणी के अनुसार अपने देवता के पृष्ठतल पर वे अपना सर्वस्व समर्पित करना जानते थे। इस जाति की प्रकृति उन दिनों अपने प्रति, अपने राजा और अपने देश के प्रति गर्व अनुभव करने की थी।

श्री सुरेन्द्र महान्ति सारलादास की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि के सन्दर्भ में लिखते हैं कि किंवदन्ती, अनुमान और उपकथा के बीच सारला का इतिहास अवलुप्त है। महाभारत के आदि पर्व में सूर्यवशी सम्राट कपिलेन्द्र के एक परोक्ष या तिर्यक उल्लेख से सारलादास को कपिलेन्द्र देव के समसामयिक रूप मे उल्लेख किया जाता है :

'प्रणिपत्ये खटई कपिलेश्वर नामे राजा

तेतिश कोटि देवे चरणे जार पूजा।'

उडिया महाभारत के कवि सारलादास ने इस प्रकार के अनुकूल राजनीतिक परिवेश और समृद्ध उदार काल में जन्म ग्रहण किया था। इसीलिए सारलादास प्रकृति से जातीय कवि थे। उनकी प्रकृति का प्रमाण यही है कि उनके महाभारत में हम उस काल की समस्त सुखमय परिस्थितियाँ बारम्बार प्रतिबिम्बित होते देखते हैं।

उनके पूर्ववर्ती लेखकों ने भी गद्य और पद्य के रूप में जो क्षेत्र प्रस्तुत किया था, निःसन्देह वे सारला की पृष्ठभूमि के रूप में प्रतिफलित होते हैं। संस्कृत प्रेमी गंग राजाओं के समय उन रचनाओं के प्रति कुंठित अवस्था का संकेत मिलता है; किन्तु छोटा होने पर भी, 'केशव-कोइलि' या 'कलसा चौतीसा' की सुख श्राव्यता या जनप्रियता ने निश्चय ही उस अर्द्धशिक्षित कृषक-कवि सारला को साहस एवं प्रेरणा प्रदान किया था। फलतः वे एक उपेक्षित एवं अपरीक्षित भाषा में एक विराट महाकाव्य की रचना का रूपक तैयार करने के दुःसाहसिक पथ पर आगे बढ़ सके। एक कृषक के रूप में सारला का उड़िया महाभारत

वस्तुतः एक विस्मय जनक सिद्धि है; किन्तु वे तो एक साधारण कृषक न थे; प्रतिभाशाली थे और म .काव्योपयोगी युग में जन्मे थे। सारलादास का उड़िया महाभारत अपने काल एवं प्रतिभा का एक सुवर्ण-संयोग ही कहा जाएगा।

सारलादास का उड़िया महाभारत इस समृद्ध ऐतिहासिक परिवेश को छोड़कर उस ग्रंथ में अन्तर्निहित साक्ष्य के द्वारा भी महत्त्वपूर्ण है और ग्रंथकार सारलादास उड़िया साहित्य के प्रथम ऐतिहासिक लेखक के रूप में खड़े होते हैं। सारला के पूर्व से आधुनिक काल तक जितने उड़िया कवि या लेखक थे, उन सबका व्यक्तित्व आज तक केवल छाया मात्र रह गया है। सारलादास हम लोगों के सामने एक साधारण मनुष्य और नागरिक रूप में खड़े हैं, उनका गाँव था, परिवार था, एक निर्दिष्ट जीविका थी और जिसकी रचना में हमें प्रत्यक्ष या परोक्ष भाव से समसामयिक ऐतिहासिक घटनाएँ प्रतिबिम्बित होती दिखाई देती हैं। वे जिन नदियों की, गाँवों की, देव-देवियों की कथा कहते हैं वे सब आज भी हैं। इन छः सौ वर्षों में उनमें विशेष परिवर्तन नहीं हुआ है।

इस प्रदेश में बहुत काल से जनश्रुति प्रसिद्ध है कि तरुण सारलादास हल चलाते समय माँ सारला का आदेश पाकर महाभारत लिखने लगे। धान के खेत में हल चलाना साधारणतः एक क्लान्ति दायक कार्य है। श्रम की कठोरता को भूल जाने के लिए पृथ्वी के सभी देश के किसान हल चलाते समय कभी-कभी गीत भी गाते हैं। स्काटलैण्ड के श्रेष्ठ कवि रावर्ट वर्णेस किसान थे और उनकी प्रथम काव्य-स्फूर्ति हुई थी हल चलाते-चलाते। कृषक कवि सारला की प्रतिभा प्रथम रूप में उसी प्रकार मानी जाएगी और लगता है उसे ही उपयुक्त जनश्रुति में देवी के प्रत्यक्ष आदेश का रूप बना दिया गया। उस समय उड़ीसा स्वाधीन था। साम्राज्य की प्रसिद्ध कृषकवाहिनी गाँव-गाँव में सज्जित थी। गाँव-गाँव में अखाडे जीवित थे। मालूम होता है कि कवि का बाल्यकाल एक प्रकार से धान के खेत में बीत गया और दूसरी तरफ गाँव के अखाड़े में; कारण कि उस समय साम्राज्य के प्रत्येक युवक से युद्ध मे जाने की आशा की जाती थी। इस देश का कृपक सम्प्रदाय ही जातीय वाहिनी के लिए सर्वाधिक सख्यक सेना की व्यवस्था करता था। धान के खेन और अखाड़े के अलावा लगता है युवक कवि की सन्ध्या ब्राह्मण विद्वानों के मेल मे कटती थी, भारतीय काव्य-पुराणो की कथा सुनने मे। सारला के महाभारत मे युद्धाभियान, द्वन्द्व युद्ध, सामरिक क्रीड़ा आदि जिस प्रकार जीवन्त भाव से वर्णित हैं, उनसे मालूम होता है कि इन सबके बारे में कवि की व्यक्तिगत भिज्ञता थी और खूब सभव है सम्राट कपिलेन्द्र देव के दक्षिणाभियानों में कवि ने स्वयं सैनिक रूप मे योग दिया हो। गोदावरी के किनारे स्थित उड शिवपुरी तीर्थ जिसका सारलादास ने अपने ग्रन्थ में उल्लेख किया है, वह अब भी है। डॉक्टर कृष्णचन्द्र पाणिग्रही निःसन्देह भाव से प्रमाणित करते हैं कि कवि ने ऐतिहासिक कोण्डाविडु, देवर कोण्डा, वाह्मनी और विजयनगर इत्यादि दुर्ग और राज्यो का चित्र ही पतले पौराणिक आवरण के नीचे छोड़ा है। उन सभी अभियानों में योग दिए बिना कवि अपने गाँव में बैठकर ये सब ज्ञान प्राप्त नहीं कर सकता था। आनुष्ठानिक विद्या शिक्षा के न होने पर भी प्रतिभा की सहज अंतर्दृष्टि और प्रत्यक्ष वास्तविक अभिज्ञता के फलस्वरूप सारलादास जीवन को उस प्रकार चित्रित कर पाये हैं; जिस प्रकार के जीवन को देखा और जाना था। वे संस्कृत के पुराणों के अतिमानवों को चित्रित करने नहीं जा रहे थे, वे चित्रित कर रहे थे रक्त मांस के पुरुष और स्त्री को। सारला का जगत एक साधारण कृपक का जगत है। वहाँ देव-देवियों के पद भी साधारण जनपथ के धूल से धूसरित हैं। उनके अभिजात नायिकाओं के कोमल कर-पल्लव के बीच रसोईघर के धुआँ का कष्ट या घर में रहने की स्पष्ट कठिनाइयाँ भी हैं। सारला की रानियाँ और राजकुमारियाँ नारी की स्वाभाविक छोटी-छोटी ईर्ष्या को प्रकाशित करके गंभीर परिवेश के बीच भी हास्यास्पद हो गयी हैं।

श्री सुरेन्द्र महान्ति सारला और उनकी कृति के संदर्भ में तुलनात्मक आलोचना का सहारा लेते हुए विवेचन प्रस्तुत करते हैं। जिस प्रकार प्राचीन ग्रीक साहित्य में होमर और अंग्रेजी साहित्य में चसर का नाम प्रतिष्ठित है, उसी प्रकार उड़िया साहित्य में सारला का नाम स्मरणीय है। चसर (सन् 1340-1400) ने जिस प्रकार अंग्रेजी साहित्य को फारसी भाषा और साहित्य की निर्भरशीलता और गौणत्व से मुक्त करके, एक स्वकीयता सम्पन्न भित्ति पर प्रतिष्ठित किया, सारलादास ने भी उड़िया साहित्य के क्षेत्र में उसी प्रकार उड़िया भाषा और साहित्य को संस्कृत के प्रभाव और प्राधान्य से मुक्त करके उसे एक स्वतन्त्रता प्रदान की थी। जिस प्रकार मध्ययुगीन अंग्रेजी कथित भाषा चसर के प्रयोग और अनुशीलन से मार्जित होकर एक साहित्यिक

सौकुमार्य प्राप्त कर सकी थी, उसी प्रकार सारला की लेखनी से कथित उड़िया भाषा एक स्वकीयता सम्पन्न और सार्वलीन सौन्दर्य प्राप्त कर सकी थी। वस्तुतः अठारहवीं शताब्दी में रीति प्रधान संस्कृत काव्य के चित्रण और रुचि द्वारा उड़िया साहित्य के प्रभावित होने तक, सारला की भाषा उड़िया साहित्य की आदर्श भाषा के रूप में ग्रहण की जाती रही है। सारला के समय में उड़िया साहित्य अविकसित और स्फुटनोन्मुख अवस्था में ही था, किन्तु संस्कृत साहित्य का अनुशीलन उड़ीसा में एक नये शीर्ष का स्पर्श कर चुका था। गीतगोविन्दकार जयदेव के अलावा, आर्या सप्तसती के रचयिता गोवर्धनाचार्य, एकावली के रचयिता विद्याधर, सहृदयानंद के रचयिता कृष्णानंद महापात्र सन्धि विग्रहिक और लांगुला नरसिंह देव के सभा कवि, राधाविलास, कुवलयाश्वचरित, प्रशस्ति रत्नावली, चन्द्रकला नाटिका, नरसिंह विजय, नाटक प्रभावती परिणय और सुप्रसिद्ध साहित्य दर्पण के प्रणेता श्री विश्वनाथ कविराज प्रमुख कविगण समग्र भारतीय वांग्मय में प्रसिद्धि और प्रतिष्ठा प्राप्त कर चुके थे।

इसी समय सारलादास ने अपनी महान कृति महाभारत की रचना की। संस्कृत महाभारत के कथा सूत्र में यह उनकी नयी रचना है जो अठारह पर्वो में विभाजित है। इसमें लगभग एक लाख चालीस हजार पद हैं। मूल महाभारत ग्रंथ के सौप्तिक पर्व, अनुशासनिक पर्व और महाप्रस्थानिक पर्व सारलादास के महाभारत में नहीं मिलते हैं। मध्य पर्व, गदा पर्व और काइंसिका पर्व नाम से तीन नये पर्वो को सारलादास ने संयोजित किया। मूल ग्रथ से सारला का वैषम्य समान रूप में नहीं है।

1. मूल महाभारत मे वर्णित ने होने वाले अनेक विषयो को सारलादास नूतन भाव से उपस्थापित करते हैं। 2. मूल ग्रंथ के अनेक विषयों को वे एकदम छोड़ देते हैं। 3. मूल ग्रंथ मे विशद रूप में वर्णित अनेक प्रसंगों को सारला अति संक्षेप में प्रस्तुत करते हैं। 4. मूल महाभारत के कितने संक्षिप्त स्थलों को सारलादास विस्तृत भाव से चित्रित करते हैं। इससे सारला के महाभारत की विशेषता और अद्भुत शक्ति का परिचय ठीक रूप में मिलता है। सारलादास महाभारत के स्थान-स्थान पर उडीसा में प्रचलित नाना सामाजिक विधि व्यवस्था का वर्णन करते हैं। विवाह, अभ्यर्थना, विदाई, अतिथि सत्कार, ब्राह्मण-परिचर्या, शकुन, शरीर-रक्षा, मंत्र-तन्त्र विद्या के समाज में प्रसार के सन्दर्भ में नाना घटनाओ के बहुत ही नूतन प्रसंगों की अवतारणा करके सारला अपनी कवि कल्पना को प्रसारित करते हैं। सारला महाभारत के आदि समीक्षक श्री गोपीनाथ नन्द 'भारत-दर्पण' पुस्तक में ठीक ही लिखते हे, "...यह कवि मूल ग्रंथ का अनुवाद नहीं करता, किंवा अविकल अनुकरण से नहीं लिखता। मूल ग्रंथ के प्रगाढ़ सुश्रूषा में एकान्त अनुरक्त होकर समग्र भारत के स्थूल-स्थूल विषय ओर घटनांश को मात्र अपने अव्याहत स्मृति कोश में प्रदीप्त रखकर असामान्य कल्पनाशक्ति और विषय संनिधान प्रवीणता के बल से बलवान होकर, अल्पीकरण, विस्तृतीकरण, अनुक्त प्रक्षेप और उक्त निक्षेपादि क्रम से इस प्रकाण्ड ग्रन्थ को लिख गया है।" (श्री भारत दर्पण, पृ. 11)

किन्तु पन्द्रहवीं शताब्दी में सारला महाभारत की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि तृतीय-चतुर्थ शताब्दी मे संस्कृत महाभारत की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि से पृथक थी। संस्कृत में रचित महाभारत में जिस प्रकार गुप्तयुग की आध्यात्मिक भावना और सांस्कृतिक चेतना प्रकाशित हुई है, उसी प्रकार सारला का उड़िया महाभारत पन्द्रहवी शताब्दी में उत्कल की आध्यात्मिक भावना द्वारा प्रभावित था। इसलिए सारला के महाभारत में संस्कृत महाभारत की अपेक्षा जो वैषम्य परिलक्षित होता है, वह 'शूद्र' सारला दास की संस्कृत की अनभिज्ञता अथवा मूर्खता प्रस्तुत नहीं करता। सारला महाभारत में परिलक्षित प्रक्षेप और वैषम्य सम्पूर्ण स्वेच्छाकृत है।

सारला का काल ब्राह्मण संस्कृति के विरुद्ध प्रबल प्रतिक्रिया और विद्रोह का काल था। उत्कल में पारम्परिक बौद्धधर्म के विवर्धन धारा मे वज्रयान, सहज साधना, नाथपंथ ओर तन्त्राचार इत्यादि विभिन्न रूप में जो समस्त आध्यात्मिक भावना और साधना प्रकाश पाई थी उसने भी सारला के काल को निन्दित कर दिया था। वस्तुतः सारला का काल इन समस्त आध्यात्मिक आचारों और विचारो के विलय का काल था। षोडश शताब्दी में योगाचार और संयमपिण्डित जो पिण्ड ब्रह्माण्डवाद और महायानी बौद्ध दर्शन का शून्यवाद, चैतन्य प्रचारित वैष्णव धर्म को प्रभावित करके उत्कल के जातीय आध्यात्मिक साधना के रूप में प्रतिष्ठित हुआ था और पुनः जिसे आधार बनाकर पंचसखा साहित्य समेत एक विपुल आध्यात्मिक साहित्य उड़िया में रचित था, सारला के काल को उसने ही उन्मेषित किया था। पुनः जगन्नाथ महाविष्णु और शून्य पुरुष के रूप में परिकल्पित हुए थे। सारला शाक्त थे, तथापि महायान की शून्यवादी भावना और दर्शन द्वारा उनकी आध्यात्मिक चिंता प्रभावित थी।

इसीलिए सारला महाभारत में इन सभी आध्यात्मिक भावनाओं के संकेत मिलते हैं, जो संस्कृत महाभारत में नहीं थे, ऐसा प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में सूचित होता है। इस प्रकार के अनेक उदाहरण मिलते हैं। पिण्डब्रह्माण्ड तत्त्व का उल्लेख आदि पर्व में अन्न लोभी, अतृप्त क्षुधा सम्पन्न भीम की किशोर अवस्था की एक घटना बनाकर किया गया है। उसके आधार पर मनुष्य का पिण्ड ही ब्रह्माण्ड है, विराट का आधार है। मनुष्य ही तैंतीस कोटि देवताओं का विग्रह है। मनुष्य ही हिरण्यगर्भ है। यह पूरी घटना इस अर्थ का तो संवहन करती ही है; इसके साथ एक अतृप्त क्षुधा जर्जरित कृषक परिवार का अन्न के लिए दैनन्दिन क्रन्दन और कलह का यथार्थ चित्रण भी मिलता है।

इसी के साथ श्रीकृष्ण की अनुचिंता पर भी विचार करना आवश्यक है। 'मूपली पर्व' के आरम्भ में महाविष्णु से बैकुंठ लौट आने का आदेश पाकर संसार के मोहावर्त्त में विकल श्रीकृष्ण इस प्रकार विचलित हो रहे हैं कि 'कुटुम्ब का भोग छोड़कर मैं क्यों जाऊँगा' कहकर रोदन कर रहे है, मत्तगर्व से बहुरति करने के कारण 'कुटुम्ब बढ़ने से माया मोह में पड़ा' कहकर अनुशोचना करते हैं। 'बत्तीस हजार रमणियों को' और असंख्य पुत्रों को किस प्रकार छोड़ दूँगा कहकर, शोकजल बहाते हुए प्रिय सखा औ' शिष्य अक्रूर के सामने रो रहे हैं।

यहाँ कृष्ण को मरणशील मनुष्य से भी अधिक भंगुर आर दयनीय कर दिया है। सारलादास 'जन्मे कृषिकारी न जाणे शास्त्र विधि' होने के कारण संस्कृत महाभारत के बहुवन्दनीय गीता के प्रवक्ता श्रीकृष्ण का ऐसा चरित्र चित्रण कर गये हैं। —ऐसा नहीं है। बौद्धतत्त्व प्रभावित उत्कलीय आध्यात्मिक भावना में श्रीकृष्ण महाविष्णु के एक अवतार हैं और महाविष्णु की सोलह कलाओं में एक कला मात्र। महायानियों की धारणा में संसार की कल्याण कामना में, बुद्ध जीवों को मोक्ष-प्रज्ञान कराने के लिए समय-समय पर बोधि सत्त्व रूप में जन्म ग्रहण करते हैं। सारला महाभारत में श्रीकृष्ण तत्त्व इसी धारणा के अनुकूल होने के कारण, श्रीकृष्ण को महाविष्णु के एक अवतार रूप में चित्रित किया गया है। उत्कलीय पंचसखा दर्शन में भी श्रीकृष्ण को परमपुरुष विष्णु के रूप में ग्रहण करके उनको एक अवतार के रूप में चित्रित किया गया है।

किन्तु सारला महाभारत के श्रीकृष्ण अभिनव और विचित्र हैं। नाना व्युत्पात के बीच बुद्ध प्रचारित बौद्ध धर्म जिस प्रकार विडम्बित हुआ, पुनः ब्रह्मचर्य और संयम पिण्डित बौद्ध आध्यात्मिक साधना, परवर्तीकाल मे धर्माचार के आवरण में जिस प्रकार यौन व्यभिचार-में विपर्यस्त हो गया था, उसमें केवल बुद्ध के अवतार के रूप में, जन समाज में प्रचरित ध्यानी बुद्ध, बोधि सत्वों के स्वैराचार आर व्यभिचार के कुम्भीपाक में कामना के पंक को निर्वाण की विभूति रूप में भक्तों के बीच में वितरण करके, खुद को और अपनी भक्त मण्डली को घोर निर्गादत किए थे। बौद्ध सहज साधना में अवलोकितेश्वर और प्रज्ञा पारमिता तत्त्व की द्वैत कल्पना और उसमें अन्तर्निहित कामना के बीज को उत्पन्न करके, योग साधना के बीच द्वैत की अद्वैतता का जो प्रचार किया गया था, वह भी यौन कामना की प्रचण्ड बाढ़ के स्रोत मे बालू के बाँध की तरह बह गया था। सारला महाभारत में श्रीकृष्ण इसी प्रकार एक साधना भ्रष्ट सहज सिद्धाचार्य के रूप में चित्रित हुए हैं। श्रीकृष्ण के बैकुंठ प्रत्यावर्त्तन के लिए महाविष्णु के आदेश के बाद प्रवल संसार मोह और घोर दारा-आसक्ति के कारण, संसार परित्याग करने की वेदना में आँसुओं की वर्षा के बीच सहज तान्त्रिक बौद्ध आध्यात्मिक साधना को निन्दित और उपहसित करने का प्रयास, सारला के महाभारत में भी देखा जा सकता है। यह संस्कृत महाभारत में नहीं है। यह संस्कृत महाभारत के परमज्ञानी तत्त्वदर्शी और अनासक्त कर्मयोग के मंत्र गुरु श्रीकृष्ण का एक प्रकार से व्यंग्यचित्र है। वस्तुतः सारला महाभारत में श्रीकृष्ण एक साधना भ्रष्ट सहज सिद्धाचार्य के रूप में चित्रित हैं। फिर भी सामाजिक व्यभिचार के निवारण का उद्देश्य भी महाभारत के कृष्ण के माध्यम से होता है। इसी सन्दर्भ को आगे बढ़ाते हुए श्री सुरेन्द्र महान्ति अपना विवेचन प्रस्तुत करते हैं। सारला का काल घोर भ्रष्टाचार के बीच सहज साधना के विलय का काल था। प्रवर्त्तक और संस्कार रूप में सारलादास ने आध्यात्मिक जीवन को यौन व्यभिचार के अतल पंक से उद्धार करके, समाज में अद्वैत, शून्य उपासना और योग संयम पिण्डित आध्यात्मिक साधना की वार्त्ता का प्रचार किया था। किन्तु उसके लिए जनसमाज से सहज पंथ के स्वाथ आकर्षण और सहज सिद्धों के बहुविस्तृत प्रभाव का उच्छेद करने के लिए, एक सामाजिक कथा की आवश्यकता थी। इसी उद्देश्य की सफलता के लिए सारला ने प्रचण्ड कवित्व और प्रतिभा के बल से श्रीकृष्ण को सहज सिद्ध कृष्ण के रूप में परिणत करके, उनके बहुत से भ्रष्टाचार और व्यभिचार के वर्णन के बीच, सहज मार्ग

की विडम्बना के प्रति समाज की सचेतन दृष्टि को आकर्षित करते हैं। सारला के महाभारत में श्रीकृष्ण आध्यात्मिक विपर्यय और विडम्बना के एक संकेत हैं। 'खानिकार के जन्म का वृत्तान्त' प्रसंग में (बूढ़ी) सहज सुन्दरी के ऊपर श्रीकृष्ण का कामपीड़क आक्रमण और गोप चन्द्रसेना की स्त्री राधा के साथ निशा रात्रि में रमण के लिए गली-गली में घूमने जैसा कर्म इसका उदाहरण है। यह सारला का अपना निजस्व है। संस्कृत महाभारत में यह परिलक्षित नहीं होता।

सारला के महाभारत में जैन और बौद्ध मत की छाया दिखाई देती है। हम जानते हैं कि महाभारत एक समर काव्य है। शुरू से अंत तक यहाँ अगणित छोटे-छोटे युद्ध और अंत में महायुद्ध से उत्पन्न भयावह विनाश का दृश्य ठीक हमारे सामने घटित विश्वयुद्ध के ध्वंस को स्मरण कराता है। अपनी सामरिक भिज्ञता से या वर्णित विषय के सहजात गुण से, युद्धादि का वर्णन सारला की लेखनी से उत्साह और उन्मादना देकर उत्साहित करता आ रहा है। किन्तु सारला के महाभारत में सर्वव्याप्त सामरिक आयोजन के भीतर भी हम बराबर शान्ति और अहिंसा का प्रस्ताव सुनते हैं। यह निश्चय ही उड़ीसा की जातीय चेतना में जैन और बौद्ध दोनों धर्मो की गम्भीर छाप रखता है। सारलादास के काल में यह प्रभाव आज की अपेक्षा अधिक गम्भीर और सचेतन रहा होगा। सारला के जन्म स्थान से कुछ दूर स्थित रत्नगिरि का अपभ्रंश उड़िया में रचित बौद्ध गानों का गायन कवि के समय में इस समय की तरह प्रत्नतात्त्विक विषय नहीं हो गया रहा होगा। इसी से लगता है, सारला के महाभारत में शान्ति, अबैर, अहिंसा, करुणा आदि बौद्धभाव निजस्व उदार सौन्दर्य लेकर बार-बार प्रस्फुटित होता है। दृष्टान्त स्वरूप सभा पर्व में उनका एक स्वतंत्र अहिंसा-उपनिवेश वर्णित हुआ है। राजा या उपनिवेश के नेता सिन्धु देश के समुद्र के किनारे समुद्र को बाँध कर यह उपनिवेश राज्य स्थापित करते हैं। उस राजा का किसी भी प्रतिवेशी राजा के साथ कोई विवाद नहीं था। अन्य राजा के राज्य पर आक्रमण करने का विचार उसकी कल्पना में भी नहीं था। राजा और उसकी प्रजा केवल अहिंसा में विश्वास करते थे; अपरिग्रह भी कर रहे थे। जैन भिक्षुओं के जानुघंटिका की तरह राजा जानु पर घंटी बाँधकर अपना दैनन्दिन भोजन भिक्षा के द्वारा संग्रह करता था। जनकल्याण ही राजा का व्रत था।

सारलादास मूल महाभारत के नायक-नायिकाओं को अपने प्रयोजन के अनुसार केवल परिवर्तित ही नहीं करते, वरन् वे मूल ग्रन्थ के क्रम को भी तोड़कर चूर करने मे हिचक नहीं करते। मूल महाभारत के अठारह विभाग और मुख्य कथा के सन्दर्भ में कृषक कवि की मात्र एक सामान्य धारणा थी–ऐसा प्रतीत होता है। इसीलिए मूल महाभारत के मात्र आदि और अन्तिम बिन्दु दोनों को अपरिवर्तित रखकर बीच मे उड़िया कवि पूरा स्वाधीन हो गया है। सारला के महाभारत में मूल महाभारत के अनेक प्रसिद्ध गल्प और आलोचनाएँ खो गयी हैं; किन्तु अनेक नूतन गल्प एवं चरित्र भी मिलते है जो कवि की गंभीर और वास्तविक (यथार्थ) दृष्टि को प्रमाणित करते है। सारलादास शायद किसी भी क्षण भूलते नहीं हैं कि वे ग्राम जन के लिए ही महाकाव्य लिख रहे थे। मूल महाभारत में कलि-अवतरण नहीं था। इस वर्णन को दृष्टान्त स्वरूप लिया जा सकता है।

धर्मराज युधिष्ठिर जब स्वर्ग के लिए प्रस्तुत थे, उसी समय उनके राज्य का एक ब्राह्मण भूम्याधिकारी ने अपने शूद्र भृत्य को आदेश दिया कि वह उसके धान के खेत के पास के भीटे को तोड़कर जमीन के साथ समान कर दे। भृत्य ऐसा करने के लिए गया और भीटे को तोड़ते-तोड़ते माणिक्य-मण्डित दो सुवर्ण कंगन पाया। भृत्य ने उन दोनों कंगनों को ब्राह्मण को देकर कहा कि अधिक सम्भव है कि उसे उनके कोई पूर्व पुरुष वहाँ छिपा दिए थे। अब उसे वे रखें। ब्राह्मण ने उस कंगन को लेने से इनकार किया। उसने कहा कि वह केवल जमीन के शस्य का भागी है, जमीन के नीचे स्थित द्रव्य पाना उसका अधिकार नहीं। भृत्य स्वयं खोद-खोदकर पाया है जिस कारण वह द्रव्य उसका है; किन्तु भृत्य ने उत्तर दिया कि वह केवल अपनी दैनिक मजदूरी पाने का अधिकारी है, अन्य किसी धन रत्न का नहीं। इसलिए कंगन लेकर वह पाप भागी नहीं होना चाहता। प्रभु और भृत्य किसी समाधान पर न पहुँच सकने पर, धर्मराज युधिष्ठिर के पास गये। युधिष्ठिर यह कलह सुनकर कौतूहलाक्रान्त हुए; किन्तु स्वयं किसी सिद्धान्त पर न पहुँचकर भिज्ञ मंत्री सहदेव की ओर देखने लगे।

सहदेव ने कहा कि यह सत्ययुग का प्रभाव है। श्रीकृष्ण के आदेश से वे कलि को बाँध रखे हैं। कारण श्रीकृष्ण चाहते थे कि युधिष्ठिर के राज्यत्व के अन्तिम दिन तक इस धरा पर सत्ययुग ही विराजित रहे। जिस दिन श्रीकृष्ण पाण्डवों के पक्ष से दूत कर्म करके दुर्योधन की सभा में जा रहे थे, उसी दिन इस धरा पर कलि अवतीर्ण हुआ था। श्रीकृष्ण और सहदेव

दोनों उसे देखे थे। श्रीकृष्ण ने सहदेव को आदेश दिया था कि वे कलि को पकड़कर एक खम्भे में बाँध रखें। युधिष्ठिर के अंतिम दिन तक उसी प्रकार बँधा रहेगा। युधिष्ठिर के पृथ्वी त्याग के बाद परीक्षित राजा हुए हैं। इसीलिए वे कलि को बन्धन मुक्त करने के लिए जा रहे हैं।

कलि के बंधन मुक्त होते ही, ब्राह्मण स्वामी और शूद्रभृत्य के विवाद ने हठात् अन्य रूप धारण किया। अब ब्राह्मण ने दोनों कंगन को अपना कहकर दावा किया; क्योंकि वह उसकी जमीन से बाहर हुआ है। भृत्य ने कहा कि ब्राह्मण स्वामी जमीन के ऊपर के शस्य का मात्र हकदार है, जमीन के नीचे रहने वाली सम्पत्ति पर उसका अधिकार नहीं है। वह तो उस कंगन को स्वयं खोद सकता था। यह उसे उसके श्रम के पुरस्कार रूप में पाने की बात है।

कलियुग के राजा परीक्षित ने वर्तमान स्वामी-भृत्य के विवाद को सुनकर राय दी कि कंगन न स्वामी का है और न भृत्य का, वह राजा का है। उन्होंने तत्क्षण उस मूल्यवान कंगन की जोड़ी को राजकोष में रख देने के लिए आदेश दिया। ज्यादा संभव है महाकवि सारलादास अपने जीवन में इस प्रकार के धन सम्बन्धी, न्याय के विचार के अनेक दृष्टान्त देखे थे और देखकर अपने हृदय में विद्रोही हो चुके थे। हो सकता है इस कथा रूपक के नीचे हम कविचित्त का आज वही अव्यक्त विद्रोह देख पा रहे हैं।

मूल महाभारत के वैषम्य को सारला महाभारत में निर्दिष्ट करने के लिए कुछ कथाओं का विवेचन आवश्यक है। हम देखेंगे कि कृषक कवि की वास्तविक दृष्टि संपन्न प्रतिभा मूल महाभारत के उदार और गम्भीर चरित्रों को मनोहर पार्थिवता प्रदान करती है।

गंगा : सारला की गंगा, संस्कृत महाभारत या भारतीय पुराण साहित्य की गंगा, शान्तनु की प्रणयिनी सुन्दरी गंगा नहीं है। सारला महाभारत में वे एक अनमानर्नीया अदमनीया, प्रचण्डकलह पूर्णा पत्नी हो गयी हैं। लगता है मूल महाभारत को बिना पढ़े ही कृषक कवि ने गंगा के चरित्र की कल्पना की है; बाढ़ की भीषण एक नदी की भयंकरता से जिसका नाम वे देवी वहन कर रही थीं। कृषक कवि के पक्ष में यह एक स्वाभाविक कल्पना है। गंगा देवी और गंगा नदी अभिन्न हैं। विभीषिकामयी एक नदी का नारी का रूप धारण कर, एकाएक सुशीला और सुन्दरी हो जाना ही अस्वाभाविक है। इस प्रकार कल्पना में अभ्यस्त सभी साधारण पाठक के लिए ये चित्र असंगत महसूस हो सकते हैं; किन्तु कृषक कवि की धर्म निरपेक्ष सृजनशील अन्तर्दृष्टि को एकबारगी भ्रान्ति नहीं कहा जाना चाहिए। मूल महाभारत में वर्णित गंगा का चरित्र मनस्तत्त्व की ओर से एक असम्भव चरित्र लगता है। जिस अर्द्धांगिनी का विवाह प्रेम से हुआ हो, वह अपने प्रिय-पुरुष की सन्तानों को जन्म लेते ही कैसे मार देगी ?

किन्तु सारला की लेखनी में गंगा की शिशु-हत्या एक स्वाभाविक युक्ति युक्तता पाती है; क्योंकि यहाँ गंगा का विवाह प्रेमात्मक नहीं, एक व्यवस्थापित विवाह मात्र है। अर्थात् जो विवाह गंगा की इच्छा के विरुद्ध हुआ था। विवाह के पूर्व सारला की गंगा स्वामी से कह देती है कि उसने अपने पिता की प्रतिज्ञा का पालन करने के लिए बाध्य होकर, विवाह किया है। अतः उससे वे प्रणय की आशा उस प्रकार न करें। लौकिक जीवन का वर्णन करने वाले सारला की इस नायिका गंगा का इस प्रकार वास्तविक होना ही स्वाभाविक है। वस्तुतः सारलादास यह दिखाना चाहते हैं कि वृद्ध पुरुष जब एक अल्पवयसी कन्या से विवाह करता है तो वह शान्तनु की तरह ही प्रताड़ना तथा दुःख पाता है। वृद्ध वयस में विवाह करने की दुर्दशा का यथार्थ ही यहाँ चित्रित हुआ है। गंगा का कलह बड़ा ही जीवन्त एवं लौकिक हो सका है। गंगा सर्वदा उनके विपरीत आचरण करती है। उनकी पोथी फाड़ देती है; कमण्डल एवं पूजा की सामग्री फेंक देती है। हर एकादशी को रमण करने के लिए बाध्य कर देती है। उन्हें नंगा कर देती है। इस प्रकार हर समय उनका व्रत भंग करती है। कहती है क्षत्रिय होकर तपस्वी होगे। भोजन माँगने पर ढकेल देती है। रति माँगने पर मारती है, किन्तु वही गंगा व्रत आचरण के दिन उन्हें रति करने के लिए बाध्य करती है। शान्तनु का जीवन दूभर हो जाता है। समाज में यह अनमेल विवाह की विभीषिका आज भी देखी जाती है। सारला ने गंगा के चरित्र में उसे उतारा है। इसीलिए सारला का ग्रामीण प्रतिभा में संस्कृत महाभारत के नायक नायिकागण हिमालय की उच्चता से खिसककर उड़ीसी गाँव के धान के खेत और गोशालाओं में जिस प्रकार स्वच्छन्द भाव से गति करते हैं; इस प्रकार का

दुःसाहसिक परिवर्तन केवल प्रशंसनीय नहीं, वह केवल उच्चकोटि की सृजन प्रतिभा के निकट ही संभव हो सकती है।

द्रौपदी : एक आभ्यन्तरीण पल्ली ग्राम में, कृषक के परिवेश में, नगर और अभिजात से बहुत दूर सारला बड़े हुए थे। यह देखकर अत्यन्त आश्चर्य होता है कि इस कृषक कवि की एकदम सूक्ष्म, प्रतिभा मानवीय और दैवीय सौन्दर्य के प्रति भी कितनी तीव्र और सचेतन थी और सामाजिक श्रेणी में बहुत ऊँचाई में वास करने वाले नर-नारी के चरित्र के सम्पर्क में भी उनकी कितनी गम्भीर अन्तर्दृष्टि थी। महाभारत की नायिका द्रौपदी ही इसका प्रकृष्ट उदाहरण है।

भारत के तरुण राजकुमार द्रौपदी के सुदूर ख्यात रूप के लोभ से पांचाल नगर मे समवेत हुए और द्रौपदी के मुख को देखने के लिए उत्साहित थे। इसी समय राजकुमारी एक ढकी हुई डोली में सभा स्थल में लायी गयी। वहाँ सभा अत्यन्त उत्तेजित होकर चीत्कार करने लगी। जरासन्ध ने साहसपूर्वक द्रौपदी के भाई धृष्टद्युम्न से कहा, "हे धृष्टद्युम्न ! सुनो, मन की बात कोई कह नहीं पा रहा है। तुम अपनी बहन को डोली में छिपाकर रखे हो, उसे तो किसी ने देखा नहीं, यै राजा किसके लिए लक्ष्य भेद करेगे। उसे बाहर करो। इस समवेत राज-वर्ग को शान्त करने की यही एकमात्र उपाय हैं।"

यह सुनकर राजा द्रुपद ने कन्या को डोली से बाहर निकालकर सबके सामने आकर खड़े होने का आदेश दिया। केशिनी और जयसेनी नामक दो सखियो का हाथ पकड़कर द्रौपदी प्रथम बार समस्त तरुण राजा और राजकुमारों के सम्मुख विराजिता हुई। उन सबने द्रोपदी की सुन्दरता की कथा सुनी थी, किन्तु यह कौन रूप ! उद्भिन्न योवना द्रौपदी का रूप, शरीर और अगो आदि की अलोक-सामान्य सुपमा देखकर सहसा अनेक को मानसिक विभ्रम हुआ। निर्झर देश के राजा गणपति कह उठे, "इस प्रकार की एक कन्या के द्वारा इस द्रुपद राजा का समग्र कुल ही धन्य हुआ। उनके कुंचित सघन केश पर पुष्प के बिना ही भ्रमर बिहार करते हे। उसका ललाट आम्रपल्लव की तरह दिखाई देता है। अधर बन्दूक पुष्प की तरह और ओष्ठ बिम्ब फल की तरह और दात दाडिम के बीज की तरह दिखाई देते हैं। अर्द्धचन्द्र ललाट के नीचे अपूर्व रोमावलियुक्त भ्रूलता खचित है। उसके इपत रक्तिम दोनो नेत्रों को देखने पर सभी पुरुष अचेत हो जाएँगे। वक्र नयन से देखने पर हदय छिद्रित हो जाएगा। संसारजन की रक्षा के लिए ही उसने दृष्टि को नीचे कर लिया है। यह जब सभा की ओर किंचित मात्र देखेगी तो अनेक पुरुष-हत्या का दोप इसे लगेगा। यह सुज्ञानी नारी धर्म-चारिणी पाप के भय से दृष्टि फेर ली है। हे धर्म देवता ! यह सभा की ओर न देखे। हम लोग यहाँ अच्छे आये। बिना विपत्ति के यहाँ से लौट जायें। यदि वज्र पाषाण भी हो तो वह इसके कटाक्ष से फट जाएगा।.. वह ज्ञानवती सुन्दरी जब बोलेगी तो मत्तपिक इसकी बात सुनकर आम्रवन को छोड़ देगी। जिस पुरुष के सामने यह बात बोलेगी क्या वह शरीर धारण कर सकेगा ? दामन के राजा बिना पूछे न रह सके—इस राजकुमारी की देह पर अलकार क्यों नहीं है ? दुर्योधन ने उत्तर दिया, "तुम पागल हो गये क्या ? यह बात समझ नहीं पाते ? इस प्रकार की कोमलागी अलकार भार कैसे सह पाएगी ?" कर्ण ने कहा, "इस प्रकार की सुन्दरी के लिए सोने के अलकार की क्या आवश्यकता ? उसका अपना सौन्दर्य सोने से हजार गुना अधिक मूल्यवान हे।"

छद्मवेशी अर्जुन ने लक्ष्य भेद करके इस स्वप्न सुन्दरी को प्राप्त किया और पाण्डव भाइयों के साथ पाचाल नगर से बाहर अवस्थित कुम्हारशाला को ले गया, जहाँ जननी कुन्ती उद्विग्न होकर उन लोगो की अपेक्षा कर रही थीं। वहाँ विलास लालिता सुन्दरी उस राजकुमारी बाला को वृद्धा सास ने, अपने पुत्रों की तरह, कुम्हारशाला की राख के ऊपर सोने का आदेश दिया। राजप्रासाद के विलास से कुम्हारशाला की राख-शय्या तक यह जिस प्रकार हटात् और असम्भव परिवर्तन हुआ, इस प्रकार के अवस्था-परिवर्तन का अनुभव किए बिना, हम द्रौपदी को रक्त-मांस का मनुष्य नहीं कह सकते थे। सारला की लेखनी में यह स्वाभाविक नारी हताशा से गे पड़ती है। राख को देखकर द्रौपदी विकल होकर बोली कि हे देव ! मेरे भाग्य में यही लिखे थे। हंस के पंख के समान मुलायम मुक्ता रत्न-शोभित शय्या पर सोती थी और सेकड़ो दासियाँ सेवा करती थीं। सुसज्जा पर रेशमी वस्त्र बिछाकर उसके ऊपर कपूर का चूर्ण छिडका जाता था। उसके ऊपर मेरा शरीर पड़ता था। अब मैं राख के ऊपर कैसे सोऊँगी। मैं पांचाल राजा की दुलारी थी। देवपुरुष ने यहाँ लाकर ऐसा कर दिया। सास कुन्ती ने बहू के अंगांगी भाव को देखकर कहा कि तुमने जो अर्जित किया है, उसका भोग करो। संसार में सम्पत्ति विपत्ति अपने कर्म का फल होता है। यह देखकर भीमसेन गरज उठे और आँख तरेरकर बोले कि द्रौपदी ! क्या चाहती हो ? सोती क्यों नहीं ? उसे देखकर द्रुपद कुमारी

भयभीत हुई कि यह दुष्ट ब्राह्मण मुझे मार न दें।

अब द्रौपदी भय से बहाना बनाकर पाँचों पतियों के पैरों के नीचे सो गयी और मन ही मन सोचती थी—'हाय रे भाग्य, राजा की लड़की के रूप में जन्म देकर अंत में भिक्षुक ब्राह्मणों से विवाह करवाया।' इस प्रकार का सुन्दर मानवीय वास्तविक चित्र महाभारत में एकदम नहीं है।

इसी भीरु, सूक्ष्म सुषमा मण्डिता, तन्वी तरुणी को ही हम दुर्योधन की सभा में किस प्रकार देखते हैं ? वहाँ वह क्रुद्धा नागिनी की तरह सहसा उद्दीप्त एक जीवन्त मूर्ति है। सत्य और न्याय के लिए उसका पूरा शरीर व्याकुल है। कौरवों के अत्याचार से अपनी रक्षा न कर पा रहे अपने पाँचों वीर पतियों को वह उपहास से जर्जर करती है।

इसके बाद हम द्रौपदी से मिलते हैं एक महिमामयी साम्राज्ञी के रूप में । सम्राट युधिष्ठिर के सिंहासन का आधा भाग अधिकार करके वह महारानी का मुकुट पहनकर सुशोभित है; किन्तु हठात् सभा मण्डल में उसकी सौत, भीम की जंगल-पत्नी का पुत्र कुमार घटोत्कच प्रवेश करता है। सारला की लेखनी में सौत के पुत्र को देखते ही महारानी द्रौपदी के राजकीय गाम्भीर्य का क्षीण प्रलेप उभर आया। समभाव से ईर्ष्यालु हिडिम्बकी की शिक्षा के अनुसार पुत्र घटोत्कच ने उस विराट सभा में सबको नमस्कार किया, केवल द्रौपदी को छोड़ दिया। इसलिए महारानी का क्रोध सँभाला न जा सका और घटोत्कच की भद्रता के अभाव की भर्त्सना करने के साथ-साथ उसने उसको अपमृत्यु का शाप दिया। हिडिम्बिकी सभा के बाहर कान देकर सब सुन रही थी। वह तूफान की तरह सभागृह में घुस आई और दो सौतों के बीच एक जीवन्त, स्वाभाविक, नारीजनोचित कलह आरम्भ हुआ, स्थान और समय का बिना विचार किए। जंगल नायिका गरज उठी, "तुम अपने को क्या समझती हो, मेरे बेटे को शाप दिया स्वयं एक माँ होकर ?" जिसके पाँच पति हैं उस स्त्री का लोग कभी सम्मान करेंगे ? मेरा बेटा अपने राज्य का राजा है। वह क्यों तुम्हारे सामने सिर झुकायेगा ? तुम तो मात्र बन्ध्या हो। बन्ध्या स्त्री अशुभ होती है क्या तुम इसे नहीं जानती ? सुनो बाझिन, यदि कभी तुम्हारे पुत्र होगा तो जान लो मैं तुम्हें उल्टा शाप दे रही हूँ, वे सात वर्ष के होने के पूर्व ही मरेंगे। यह भी मूल महाभारत मे नहीं है।

सत्याम्ब कथा : वन पर्व मे सारलादास कौतूहलवर्धक और शायद एकान्त निजस्व मौलिक गल्प भर्ती किए है; जो अन्ततः संस्कृत महाभारत में नहीं है। यह सत्य आम की कथा है। पाण्डव बारह वर्ष तक वन-वन और देश-देशान्तर घूमते रहे। दुर्योधन के दरबार के समय यह संवाद विचार किया गया कि वनवासी पाण्डवों ने लगता है वन-वन में घूमकर जीवन समाप्त कर दिया। सत्य-मिथ्या जानने के लिए एक ब्राह्मण को भेजा गया, कारण यह मालूम था कि पाण्डव ब्राह्मणों की याचना को अस्वीकार नहीं करते। उस दूत-ब्राह्मण को यह कहा गया कि वह अऋतु फल की तरह कुछ एक असंभव द्रव्य माँगेगा। ब्राह्मण की भिक्षा जानकर यदि कोई जिस किसी भी प्रकार इसे पूरा कर देगा, तब निश्चय जान लिया जाएगा कि वे पाण्डव हैं। ब्राह्मण-दूत आज्ञानुसार गया। एक घोर वन मे उसने एक गोष्ठी को देखा जिसको उसने पाण्डव होने का अनुमान किया। उसने उनसे भीषण भूख का छल करके भोजन माँगा और क्या खाओगे पूछने पर कहा कि वह पका आम चाहता है। वह शरद काल था। पका आम कहाँ से आएगा ? इससे पाण्डव घोर चिंता में पड़ गए। क्षुधित ब्राह्मण के अभिशाप से उद्धार पाने के लिए उन लोगों ने श्रीकृष्ण की याद की। श्रीकृष्ण आये और आते ही उन्होने पाण्डवों को एक आम की गुठली को माटी में ढकने को आदेश दिया। फलतः आम का वृक्ष शीघ्र खड़ा हुआ। श्रीकृष्ण ने कहा कि उन्होंने मात्र वृक्ष खड़ा कर दिया है; किन्तु केवल सत्य की शक्ति ही उस पेड़ को फलवान कर सकती है। उन्होंने पाँचों पाण्डवों और द्रौपदी को उस वृक्ष के आगे अपने-अपने पाप और दुर्बलता को अकुंठित भाव से प्रकाशित करने के लिए कहा।

पाँचों भाइयों ने अपने-अपने पाप और दुर्बलता को प्रकाशित किया। सबसे विस्मयकारी है द्रौपदी की स्वीकारोक्ति। श्रीकृष्ण और पंच स्वामियों के समक्ष द्रौपदी ने कहा कि पंचपतियों के होते भी उसकी समय-समय पर वीर और सुन्दर कर्ण के प्रति अभिलाषा होती है। यहाँ नारी का मनोवैज्ञानिक सत्य उद्घाटित हुआ है।

गोलक पुत्र कथा : कुन्ती के साथ पाण्डवों के इन्द्रप्रस्थ में रहने के समय के घटना चक्र में सारलादास ने एक नयी कल्पना की है। युधिष्ठिर प्रतिदिन धृतराष्ट्र के दर्शन के लिए अपने सभी भाइयों के साथ जाते थे। धृतराष्ट्र के आदेश से वे दुर्योधन की सभा में प्रवेश करते थे। दुर्योधन प्रतिदिन उनका अनादर करके कहता कि हे धर्मसुत ! बैठो। हे पवनसुत ! बैठो। हे वासवसुत ! बैठो। हे अश्विनी संभूत ! बैठो। हे कुमार पुत्र ! बैठो । सभी भाई सभा में बैठ जाते। भीमसेन कुन्ती के पास जाकर कहता है कि हे माँ, दुर्योधन हम सभी भाइयों को भिन्न-भिन्न पिता के साथ जोड़कर सम्बोधित करता है। कुन्ती आश्वासन देती है कि इसमें कोई बात नहीं है। पिता का नाम लेकर बुलाने से धर्म उदय होता है, किन्तु भीम आश्वस्त नहीं होता है। बार-बार उसी प्रकार दुर्योधन की सभा में जाते और दुर्योधन उसी प्रकार उपहास करता। युधिष्ठिर अजातशत्रु होने के कारण क्रोधित नहीं होते, किन्तु भीमसेन परिताप से अत्यन्त क्रुद्ध होता। कुन्ती के चरणों में गिरकर कहता कि हे माँ ! कूट वचन सह नहीं पाता। कुन्ती ने कहा कि तुम बड़े दुष्ट हो। हर समय द्वन्द्व की चिन्ता क्यों करते हो ? भीम ने कुन्ती से कहा कि मेरे पिता पाण्डु को छोड़कर अन्य पाँच पिता का नाम क्यों लिया जाता है ? तुमने कैसे हम लोगों को पैदा किया ? कुन्ती के समझाने पर भी भीमसेन सह नहीं पाता। वह इस अपमान से दुःखी होकर आत्महत्या करना चाहा। एक दिन दुर्योधन ने माँ कुन्ती के अनाचार का जिक्र करके पाण्डवों को लज्जित किया। उस दिन भीमसेन आकर किवाड़ बन्द करके सो गया। खाना नहीं खाया। किसी के मनाने पर भी नहीं माना। सभी चिन्तित हुए। अन्त में अर्जुन ने कृष्ण को याद किया। उसके याद करते ही गरुड़ पर बैठकर उपस्थित हुए। युधिष्ठिर ने अपना सारा कष्ट निवेदित किया। वासुदेव ने भीमसेन को जगाया। भीमसेन ने अपना दुःख वासुदेव को वताया कि युधिष्ठिर के लिए धृतराष्ट्र तो काशी देवता हैं। किन्तु वह अन्धा हम लोगों को निन्दित करने के लिए सभा में भेजता है। दुर्योधन हम लोगों के पिता को अलग-अलग नामों से सम्बोधित करता है।

यह चाण्डाल युधिष्ठिर उसे कैसे सहता है ? कभी थोड़ी भी आज्ञा नहीं देता। मारो कहने पर मैं सबको मार गिरा देता। क्षत्रिय कुल में पैदा होकर यह महापापी है। सब समय अक्रोधी रहता है। इस बात को सुनकर अच्युत ने कहा कि हे भीमसेन ! किवाड़ खोलो। मै तुमसे एक रहस्यपूर्ण वात वताऊँगा। दरवाजा खोलकर भीमसेन वाहर आया। कृष्ण ने कहा कि यदि दुर्योधन कूट वचन कहता है तो क्या तुम कूट वचन नही कह सकते। मारुति ने कहा कि मैं तो कुछ नहीं जानता हूँ। वासुदेव ने बताया कि जब दुर्योधन तुम्हें कहेगा कि हे पवन सुत ! बैठो। तब तुम कहना कि हे गोलकपुत्र (सिंहोर पुत्र) ! मै बैठ रहा हूँ। इस प्रकार की बात सुनकर दुर्योधन लज्जित होगा। कृष्ण की ऐसी सलाह सुनकर भीमसेन हर क्षण गोलकपुत्र, गोलकपुत्र घोखता है। यह बताकर नारायण अन्तर्धान हो गये। भीम स्नान और भोजन के समय भी गोलकपुत्र, गोलकपुत्र कहकर याद करता है। हमेशा उसे इस पद की रट लगी रहती है। उसे याद रखने के लिए रात में सोता भी नहीं है। एकाएक तीन प्रहर रात होने पर सो जाता है। एकाएक यह भूल जाता है। हाय ! हाय ! मेरा पद कहाँ चला गया ? कहकर खोजते समय सहदेव के साथ टकरा गया। सहदेव के पूछने पर भीम ने पूछा कि वासुदेव ने कौन-सा पद बताया था ? सहदेव के गोलकपुत्र कहने पर भीम आह्लादित हुआ और कहा कि मेरा निस्तार हुआ। पुनः गोलकपुत्र को याद करने लगा। दूसरे दिन युधिष्ठिर के साथ वड़ी प्रसन्नता से दुर्योधन की सभा में जाने लगा। आज वह बड़ी तेजी से आगे-आगे चलने लगा। इसके पूर्व दुःख से सबसे पीछे रहता था। भीम का उत्साह देखकर युधिष्ठिर चिन्तित होते हैं।

सभा में पहुँचने पर दुर्योधन ने पूर्ववत सबके पिताओं का अलग-अलग सम्बन्ध निरूपित करते हुए बैठने के लिए कहा। जब दुर्योधन ने कहा कि हे पवनपुत्र ! बैठो, तब भीमसेन ने हँसकर कहा कि हे गोलकपुत्र बैठ रहा हूँ। यह सुनकर सभी सभासद ठठाकर हँस पड़े। इस प्रकार मानगोविन्द बहुत लज्जित हुआ। तत्क्षण सिंहासन से कूद पड़ा और क्रोध से वह जाकर कोप भवन में सो गया। सभी उसे मनाते रहे किन्तु हठी मानगोविन्द नहीं माना, माता गान्धारी के मनाने पर भी मानगोविन्द नहीं माना। माँ गान्धारी समझाती रहीं कि तुम्हारी गलतियों के कारण ही तुम्हें अपमानित होना पड़ा। दुर्योधन ने कहा कि हृदय का पाप मन जानता है और बेटे का बाप माँ ही जानती है। मैं तो जानता हूँ कि तुम मेरी माँ हो और धृतराष्ट्र मेरे पिता हैं। फिर भीम ने मुझे गोलकपुत्र क्यों कहा ? जब तक इस बात को समझ नहीं लूँगा, तब तक उठकर भोजन नहीं करूँगा। तब गान्धारी ने कहा कि एक विशेष नक्षत्र में पैदा होने के कारण मैं ब्रह्मासुरी हुई। अतः भय से कोई वर मुझे प्रदान नहीं हुआ। मेरे नाम से वरण करते ही सभी राजा मर जाते थे। पिता ने व्यास को बुलाकर पूछा। व्यास ने कहा कि इसको पहले गोलक वृक्ष

को प्रदान करो। पिता गान्धारसेन के आँगन में एक गोलक वृक्ष (सिंहोर-वृक्ष) था। व्यास ने स्वयं मुझे कन्यादान दिया और गोलक वृक्ष को बर-वेश में सुसज्जित किया। व्यास ने मेरे दाहिने हाथ को वृक्ष के डाल में बाँधकर मुझे प्रदान कराया। मेरा हाथ उस गोलक वृक्ष से लगा। तत्क्षण वह वृक्ष मर गया। तुम्हारे ब्रह्मासुर पिता को कोई कन्या नहीं प्रदान कर रहा था। उनके बरण की इच्छा से एक सौ आठ कन्याएँ मर गयीं। अब मैं धृतराष्ट्र से ब्याही गयी। यह गुप्त बात व्यास और वासुदेव के अलावा कोई नहीं जानता। हे बेटा ! तुम जिसको खोज रहे थे, वही मिला। दूसरे का दोष देखने में अपने ही दोष का रहस्य प्रकट हो गया। भीम ने जो कहा वह सत्य है। यह सुनकर गान्धारीनन्दन विषण्ण हुआ। दुष्ट दुर्योधन ने सोचा कि पामर गान्धार सेन ने ऐसा क्यों किया कि विधवा कन्या को मेरे पिता को दिया। अपने नाना से बदला लेने के लिए उसने लौहगिरि पर्वत पर एक पाषाण-गृह का निर्माण किया और कूट कपट से गान्धार सेन को उनके सौ पुत्रों के साथ लाकर बन्द कर दिया और धीरे-धीरे अन्न-जल के बिना सबको मार डाला। अपनी बुद्धिबल से मात्र शकुनि ही बचा जो बाद में दुर्योधन का मन्त्री हुआ। उसने भी प्रतिज्ञा की कि मैं दुर्योधन के शत भाइयों का विनाश करके रहूँगा। महाभारत की युद्ध रचना में उसने अपनी भूमिका निभायी और कौरवो का विनाश करवाया। यह सारलादास की कथा अपने आप में मौलिक है और जीवन के सत्य से प्राप्त की गयी लगती है। लोक जीवन में बातों-बातों में सम्मान बोध उभरता है और व्यापक संघर्ष हो जाता है और उसमें अपने सगे लोगों का ही विनाश होता है। सारला के कथा भण्डार की मौलिक कल्पना का ये कथाएँ उदाहरण मात्र हैं। वैसे सारी कथाएँ ही उनकी मौलिकता को लेकर आगे बढ़ी हैं।

उत्कल के महान कृपक कवि सारलादास संस्कृत महाकाव्य के नायक नायिकाओं को इसी प्रकार अपने जीवन्त रक्त-मांस रीति में चित्रित कर जाते हैं। उनकी कृपक दृष्टि स्वाभाविक भाव से देश की मृत्तिका से ऊपर नहीं उठती थी। उनका कृषक चित्त जीवन को रोमांटिक या दार्शनिक दृष्टिकोण से देखने का अभ्यस्त नहीं था; किन्तु सच में महाकाव्य के नायक-नायिका वृन्द इस कारण हमारी आँखों में छोटे नहीं हो जाते। सत्याम्ब गल्प में उनकी स्वीकारोक्ति या राजसूय दरबार में उनका हिड़िम्बिका के साथ सौत कलह या विवाह-रात्रि में कुम्हारशाला में रुद्ध विलाप द्वारा उनकी द्रौपदी का व्यक्तित्वहीन न होकर हीरे की तरह चमकने लगता है। वही वरेण्य कृपक कवि की असाधारण सृजन शक्ति, रचना की दुःसाहसिकता और मनुष्य चरित्र में गंभीर अंतर्दृष्टि को प्रमाणित करती है। हमें यह याद रखना चाहिए कि कवि अपने समग्र महाकाव्य को एक हिन्दू जन की देवी की दृष्टि के नीचे ही लिखते चला है। उसके रहते, उनकी कृषक प्रतिभा को अपने धर्म अनुयायी संस्कृत महाकाव्य के विराट नायक नायिकाओं को हिमालय की उच्चता से खींचकर गाँव के कीचड़युक्त पथ पर चला पायी है, इसीलिए यह विराट शूद्र सबके लिए नमस्य हे।

उड़िया साहित्य में सारलादास एक ऐसे लेखक हैं, जिनकी लेखनी साहित्य का अर्थ केवल 'जीवन' समझती थी। वे साहित्य का अर्थ दर्शन या धर्म या नीति शिक्षा नहीं मानते थे। वह प्रतिभा आदर्श प्रचार करने की छलना नहीं करती। वे केवल हमारे घर के नारी-पुरुष को लेकर गल्प कहने के लिए उद्यत हैं एव उसी गल्प को हृदयग्राही करने के लिए स्वाभाविक भाव से अतिरंजित करने के लिए प्रस्तुत हैं। मूल महाभारत में दार्शनिक और तात्त्विक आलोचनाएँ हैं। सारला इन सबको अपने महाभारत में सम्पूर्णतः पोंछ देते हैं। सारला महाभारत में सुप्रसिद्ध भागवत गीता का अठारह अध्याय केवल अठारह पंक्तियों में समाप्त हो गया है। मूल की अपेक्षा यह अधिक स्वाभाविक है, क्योंकि एक पूरी पुस्तक के अठारह अध्याय के पारायण समाप्त होने के समय तक युद्धोद्यत शत्रुवाहिनी अपेक्षा करती रहेगी कोई आशा कर सकता है क्या ? सारला को पाण्डित्य या भिज्ञता का जरा भी अहंकार न था। वे बारम्बार अपने निम्न जन्म, विद्याहीनता और बुद्धिहीनता का उल्लेख करते हैं; किन्तु सत्य या विनय के नीचे एक उच्चकोटि की साहित्यिक सृजनशक्ति उनके भीतर जागृत थी। शायद वे उसे स्वयं भी नहीं जानते थे।

सारला महाभारत एक स्वतंत्र और अभिनव सृष्टि है। सारला का प्रचण्ड कवित्व और प्रतिभा ने इसको एक नूतन महाभारत में परिणति करके इस महाकाव्य को अधिक संवेदनशील कर दिया है। पराशर और सत्यवती का मिलन, धृतराष्ट्र, पाण्डु और विदुर का जन्म, धृतराष्ट्र और गान्धारी का विवाह, फिर गान्धारी के शतपुत्र जन्म से पाण्डवों के स्वर्गारोहण पर्यन्त प्रत्येक घटना, परिस्थिति और चरित्र सारला की लेखनी में एक स्वतंत्र रीति से परिवेष्ठित है। सारला संस्कृत महाभारत के कहे

गये दुर्योधन आदि शत भाइयों का नाम भी ग्रहण नहीं करते। संस्कृत महाभारत में धार्तराष्ट्री शत भाइयों का नाम निम्न रूप में वर्णित है–

दुर्योधन, युयुत्सराज, दुःशासन, दुःहस, दुःशील, जयसंध सम, सह, विन्ध, अनुविन्ध, दुर्धर्ष, सुबाहु, दुष्प्रधर्षण, दुर्मुख, दुष्कर्ण, कर्ण विकंशति, दिकर्ण, शल, सत्व, सुलोचन चित्र, उपचित्र, चित्राक्ष, चारुचित्र, शरासन, दुर्भद, दुर्विगाह, विवित्सु, विकटानन, उर्णनाभ, सुनाभ, नंद, उपनन्दक, चित्रवाण, चित्रकर्मी, सुचमी, दुर्वलोचन, अयोवाहु, महावाहु, चित्रांग, चित्रकुण्डल, भीम वेग, भीमवल, वलाकी, वलवर्धन, उग्रयुध, सुषेण, कुण्डधार, महोदर, चित्रायुध, निषंगी, पाशी, वृन्दारक, दृढ़वर्मा, दृढ़क्षत्र, सामकीर्ति, अनुदर, दृढ़संध, सत्यसंध, सद, सवाक्, उग्रश्रवा, उग्रसेन, दुष्पराजय, अपराजित, कुण्डेशायी, विशालाक्ष, दुराधर, दृढ़हस्त, सुहस्त, वातवेग, सुवच्चिः, आदित्यकेतु, विम्वाशी, नागदत्त, अगजायी, कवची, कथन, कुण्ड, धनुर्धर, उग्र, भीमरथ, वीरवाहु, अलोलुप, अभय, अनाधृष्य, कुण्डभेदी, निरावी, चित्रकुण्डल, प्रथम, प्रयामी, दीर्घरोम, दीर्घवाहु, व्युढ़ोरू, कनक ध्वज, कुण्डाशी और विरजा।

किन्तु सारला के उड़िया महाभारत में दुर्योधन शत भाइयों का नाम सम्पूर्ण पृथक् है–

"दुर्योधन, दुःशासन, दुर्जय, दुर्वालक, दुर्जन, दुर्वेध, दुभेद्य, दुर्छम, दुरन्त, दुःसह, दुरम, दुःसम, दुर्गम, दुष्काम, दुर्भर, दुराचार, दुष्कर्म, दुर्मना, दुरदृष्ट, दुःस्थनक, दुर्भाग्य, दुर्वल, दुर्भान, दुरन्तक, दुर्धट, दुर्जर, दुर्मन, दुर्छप, दुषण, दुरक्ष, दुर्घर्ष, दुर्धक्ष, दुर्भिक्ष, दुष्पीड़क, दुरूव, दुष्कर, दुर्द्दर, दुरवद, दुर्भेद्य, दुष्कृयः, दुरासद, दुरापद, दुराशय, दुरानंद, दुर्वीर, दुर्भर, दुष्पद, दुर्गति, दुराधार, दुश्चर, दुस्तव, दुःसंक, दुर्भ्रद, दुरक्षक, दुरासंग, दुःशील, दुरूह, दुःशम, दुस्तेज, दुःसंग, दुर्वह, दुर्वासक, दुरात्मा, दुर्विन्द, दुष्कर, दुष्पाल, दुष्कम्प्य, दुःसाध्य, दुर्वर, दुर्गुण, दुर्भिज, दुराध्यक्ष, दुष्प्रधर्ष, दुःस्वभाव, दुष्कर्मी, दुर्निष्ठ, दुस्पर्श, दुर्भुज, दुर्मोह, दुरन्तक, दुष्प्राण, दुरपि, दुष्पाप, दुःशय, दुःस्वाय, दुराक्षेप, दुष्प्रपंच, दुर्लभ, दुस्त्रप, दुरद, दुष्पठ, दुष्टदमन, दुर्जर, दुर्घर्ष,* दुस्तप, दुर्गरोधक, दुर्धर, दुरत्यय, दुरामय और दुःसाध्य।

संस्कृत महाभारत के वर्णन के अनुसार महर्षि द्वैपायन से वर लाभ कर गान्धारी शत पुत्रों की माँ हुई थी, किन्तु सारला महाभारत में दुर्वासा के मंत्र से गान्धारी ने शतपुत्रों को प्राप्त किया था। महाभारत में धार्तराष्ट्री शतभ्राता दुर्गति और दुर्नीति रूप में वर्णित है, अतः 'दुः' आदि में रखकर दुर्नामा व्यंजक उनका नामकरण संस्कृत महाभारतोक्त नामकरण से अधिक समीचीन है। सारला इसीलिए महाभारत में लिखते हैं–'दुर्वासा मन्त्रे उत्पत्ति दुर्नामा सविएँ।' (दुर्वासा के मंत्र से उत्पन्न होने के कारण सभी दुर्नामा हैं।)

संस्कृत महाभारत में दुर्योधन प्रमुख शत भाइयों के नामकरण का उत्कर्ष और तात्पर्य सहज ही जाना जा सकता है। और फिर 'कृषिकारी' और 'मूर्ख' अपिण्डत, सारला संस्कृत साहित्य मे सुपण्डित नहीं थे, तो 'दुः' आदि में रखकर धार्त्तराष्ट्री शत-भाइयो के दुःव्यंजक नाम की परिकल्पना और सृष्टि नहीं कर पाते, किन्तु सारलादास ने भणिता प्रसंग में अपनी संस्कृत अनभिज्ञता ओर मूर्खता के सम्बन्ध में जो दयनीयता प्रदर्शित की है, पुनः जन्म से मूर्ख होकर केवल वाग्देवी सारला के द्वारा अनुप्राणित होकर महाभारत ग्रंथ की रचना करने जेसे वक्तव्य को विना विचारे ग्रहण करना उचित नहीं है। पण्डित गोपीनाथ नंद ठीक ही लिखते हैं–

"...उड़िया भाषा के शैशवावस्था मे इस प्रकार के महाग्रन्थ रचना में तदीय महनीय सफल प्रतिज्ञा का समुज्ज्वल आलोक प्रतिदृष्ट होता स्पष्ट दिखाई देता है। कवि महाशय संस्कृत में कितनी दूर तक अवश्य सव्युत्पन्न थे, अथच, उनका सुप्रगाढ़ शास्त्र सुश्रूषा सम्यक वलवती थी। इसमें किसी प्रकार भी सन्देह नहीं किया जा सकता।" वैसे सारला महाभारत में ज्योतिष सम्बन्धी ज्ञान सराहनीय है। कृषक कवि तिथियों, महीनों, नक्षत्रों आदि का विस्तृत और ठीक-ठीक विवेचन करता है। इमसे प्रतीत होता है कि उन्हें ज्योतिष शास्त्र का भी अच्छा ज्ञान था। पूजा विधियों का विवेचन ब्राह्मण धर्म विरोधी होने पर भी बड़ा जीवन्त हो पाया है। अतः सारलादास की बहुज्ञता ही साबित होती है।

महाभारत दाण्डीवृत्त में लिखा गया था। उड़िया साहित्य में सारलादास ही दाण्डीवृत्त के आदि प्रवर्त्तक हैं। पदों में

अक्षर संख्या की असमानता दाण्डीवृत्त का लक्षण है। वस्तुतः यह सारला की रीति या भंगी के रूप जाना जाता है। प्रथम पंक्ति में अक्षर संख्या बारह और दूसरे में बाईस होती है। वैसे दाण्डी छंद में एक-एक पद नौ अक्षर से शुरू होकर बत्तीस तक रह सकते हैं। कहीं-कहीं तो सारला ने प्रथम पद में तेरह और द्वितीय पद में बत्तीस अक्षरों का प्रयोग किया है। मध्य पर्व से एक उदाहरण लिया जा सकता है—

"खदड़ सेनर जे नोहिला सन्तति,
समुद्रकुले तप करइ राये नित्यसि थिला नग्रकु समुद्र
दश योजने परियन्ति।"

सारला की रचना में विशेष्य और विशेषण में कोई भेद नहीं है। शान्ति, तोष, विवेक, अतृप्ति आदि विशेष्यात्मक शब्द को सारला विशेषण के अर्थ में व्यवहार करते हैं। सारला की रचना के कितने ही शब्द प्रचलित और निर्दिष्ट अर्थ के बदले सम्पूर्ण या अंशतः एक नूतन अर्थ और मूल्य प्राप्त करते हैं। 'समस्या' शब्द का अर्थ जटिल प्रश्न है, किन्तु सारला इसे 'उत्तर' अर्थ में व्यवहार करते हैं। 'क्रोध' शब्द का अर्थ कोप या द्वेष है; सारला इस शब्द को दुःख के अर्थ में व्यवहार करते हैं। 'मूर्ति' शब्द का अर्थ प्रतिमूर्ति होने पर सारला की रचना में इस शब्द का दिग के अर्थ में व्यवहार हुआ है। संस्कृत की प्रधानता और प्रभाव से मुक्त होकर सारलादास केवल विषयवस्तु की ओर से अनिभव और बलिष्ट स्वातन्त्र्य का परिचय देते हैं—यही नहीं है; भाषा और प्रयोग की रीति में भी एक दुःसाहसिकता का परिचय देते हैं। यह व्याकरण से बहिर्भूत और व्याकरण के नियमों के विरुद्ध हो सकता है; किन्तु यहाँ साहित्य मुख्य और व्याकरण गौण है।

सारला का उड़िया महाभारत, प्राचीन काव्य का एक महाप्रवाह है। यह कहीं अत्यन्त विन्यस्त और रुक्ष, कहीं रुद्र और भयंकर, कहीं बीभत्स और विकट तो कहीं कान्त, कमनीय, प्रसादगुण युक्त और काव्येश्वर्यमय है। सारला का यह गौरवमय भित्ति उड़िया साहित्य की भित्ति के ऊपर काव्य-साहित्य को निरन्तर प्राप्त होता रहा है। तुलनात्मक परिप्रेक्ष्य में देखा जाए जो सारला महाभारत और संस्कृत महाभारत का पार्थक्य और मेल; तुलसी के रामचरितमानस और वाल्मीकि रामायण के पार्थक्य और मेल की भूमिका में आता है। दोनों कवि युगीन चेतना और युगीन मूल्यों के सन्दर्भ में परम्परित कथा के ढाँचे में, अभिव्यक्ति के स्वरूप में, चरित्र-चित्रण में लोक जीवन की सन्निविष्टि में परिवर्तन करते हैं। यद्यपि तुलसीदास दार्शनिकता, धार्मिकता और नैतिक आदर्श पर ज्यादा ध्यान देते हैं, किन्तु उनके पूर्ववर्ती सारलादास ज्यादा मिट्टी से जुड़ते हैं और अपनी चेतना में अधिक प्रगतिशील हैं। उड़िया साहित्य और जीवन पर सारला के महाभारत का प्रभाव उसी प्रकार है, जिस प्रकार हिन्दी साहित्य और वहाँ के जीवन पर 'रामचरितमानस' का है। जातीय महाकाव्य होने के नाते सारला महाभारत काफी जनप्रिय है। कवि की रचना में सामाजिक द्वन्द्व की छाया दिखाई देती है तो निम्न जन के प्रति गम्भीर ममता भी है। इन विषयों पर संक्षेप में प्रकाश डाला जाएगा।

सारलादास अपने समग्र काव्य के लिखने में अपने निजी पर्यवेक्षण के ऊपर ही निर्भर रहते थे एवं अपने दैनिक जीवन तथा सामाजिक, राजनीतिक और ऐतिहासिक घटनाओं को चतुरतापूर्वक अपनी सहज सृष्टि में सन्निहित कर सके थे। माणिक्य कगन की कथा की तरह अनेक कथाओं से यह प्रमाणित होता है। आदि पर्व में वे जिस ब्राह्मण और चाण्डाल संग्राम का वर्णन करते हैं, वह सामाजिक, ऐतिहासिक और नृतात्त्विक दृष्टिकोण से गुरुत्वपूर्ण और कौतूहलमय है। हो सकता है यह ब्राह्मण और अब्राह्मण द्वन्द्व या आर्यों का दाक्षिणात्य अभियान हो अथवा कवि के पूर्व उड़ीसा में एक ब्राह्मण वंश के स्थापना की तरह किसी असंलग्न और स्मरणीय घटना के प्रतिबिम्ब की तरह मालूम होता है। इस कथा का यथार्थ तात्पर्य स्वभावतः रहस्यमय और व्यंजनापूर्ण है। संक्षेप में कथा इस प्रकार है—

अज्ञातवास काल में सारा भारत घूमते-घूमते पाण्डव गोदावरी नदी के किनारे स्थित उड़ादी शिवपुर तीर्थ स्थान पर पहुँचे। यह स्थान आज एक हिन्दू तीर्थ के रूप में विराजमान है। वहाँ वे माँ कुन्ती के साथ विष्णुकर पण्डा नामक ब्राह्मण के घर में रहे। इसी समय गौतमी तीर्थ में नहान की बात सुनकर माँ कुन्ती को विष्णुकर पण्डा के पास छोड़कर सभी पाण्डव भाई जाने के लिए तैयार हुए, किन्तु कुन्ती ने कहा कि भीम को साथ न ले जाने से अच्छा होता; क्योंकि नहाने के लिए दुर्योधन

आदि भी आये होंगे, उसके कारण समस्या हो सकती है। अंत में वैसा ही हुआ।

एक दिन भीम ने देखा कि छोटे से नगर उड़ादी शिवपुर का शान्त वातावरण चंचल हो उठा। नगर में युद्ध के लिए प्रस्तुति चल रही है। सभी नागरिक उच्च स्वर से चीत्कार करके युद्ध के लिए सुसज्जित हो रहे हैं। भीम के द्वारा कारण पूछे जाने पर विष्णुकर पण्डा ने इस प्रकार उत्तर दिया—

बहुत समय पहले शिवपुर में एक पुण्यात्मा ब्राह्मण वास कर रहा था। अपनी विवाहिता पत्नी से दो पुत्र पैदा होने के बाद वह तीर्थ-यात्रा के लिए गया। पुण्यतोया वैतरणी में स्नान करने के लिए जाने वाले रास्ते पर वुद्धकूट पर्वत के निकट एक प्रगल्भा चाण्डाल युवती ने उस रूपवान ब्राह्मण को बस में कर लिया। उसने उनको दस वर्ष तक मोहग्रस्त किया और उससे दस पुत्र पैदा हुए। उसी दिन से ब्राह्मण-ब्राह्मणी के पुत्रों और चाण्डालों के पुत्रों के बीच संग्राम चला आ रहा है। चाण्डाल गण उड़ीसा से आते है। वे अत्यन्त बर्बर और असभ्य हैं। वे केवल सम्पत्ति को नहीं लूटते, रूपवती ब्राह्मण कन्याओं का अपहरण भी कर ले जाते हैं। प्रतिवर्ष सावन महीने में वे इसी प्रकार लूटने के लिए शिवपुर में आक्रमण करते हैं। यही उनके आने का समय है। इसीलिए यह युद्ध का आयोजन है।

उड़ीसा देश के चाण्डाल सच में शिवपुरी पर चढ़ आये। विष्णुकर पण्डा के साथ भीम दूर खड़े होकर यह आक्रमण देख रहा था, किन्तु चाण्डालों के पास आते ही बेचारे विष्णुकर प्राण के भय से भागने लगा, भीम ने बहुत कष्ट से उसे रोके रखा और पास के एक वृक्ष को उखाड़कर चाण्डालों के ऊपर झपट पड़ा, इस प्रकार प्रहार करने लगा कि वे अल्पकाल में ही विक्षिप्त होकर चारो दिशाओं में भागने लगे।

इसके बाद शिवपुर के नागरिकों ने एकत्र होकर, अपना कोई राजा न होने के कारण भीम को राजा बनाया। भीम राजा हुए और विष्णुकर पण्डा को मन्त्री पद पर नियुक्त किया। भीम ने सभी प्रतिवेशी अंचल राज्य पर आक्रमण किया और अधिकृत करके भाइयों के आने के समय तक शिवपुर राज्य की सीमा को भी अधिक विस्तृत कर लिया था। पाण्डवों के तीर्थ यात्रा से लौटकर आने पर भीम ने विष्णुकर पण्डा को उस राज्य का राजा बनाकर विदाई ली। युधिष्ठिर के राजसूय उत्सव के समय विष्णुकर पण्डा दक्षिण-भारत के एक बहु सम्मानित राजा अतिथि के रूप में दिखाई देता है।

सारला के महाभारत में भीम का चरित्र कवि का प्रिय चरित्र लगता है। भीम के माध्यम से वे एक निर्भीक वीर पुरुष के मनोवैज्ञानिक सत्य, पारिवारिक सत्य, सामाजिक राजनीतिक सत्य को व्यक्त करना चाहते हैं। सब समय माता कुन्ती से उपेक्षा पाने वाला भीम माँ और भाइयो के प्रति अगाध प्रेम रखता है। वहीं भीम राजा दुर्योधन की उपेक्षा और निन्दा को बर्दाश्त नहीं कर पाता। एक तरफ अपार उदारता है तो दूसरी ओर तिरस्कार के बदले अति तिरस्कार की भावना उसके मन में बराबर सक्रिय है। माँ कुन्ती जल प्रभा कुम्भीर, बकासुर दैत्य के मुँह के मृत्यु के लिए ढकेल देना चाहती है, किन्तु वही भीम माँ को सिर पर रखकर वन में ले जाता है। युधिष्ठिर को बड़े भाई की तरह श्रद्धा करने पर भी आवश्यकतानुसार वह पूरे साहस से उनकी धर्मनिष्ठता पर व्यग्य करता है। वह युधिष्ठिर को कपटी और धर्म-धूर्त कहता है। कौरवों के विनाश होने पर उन्हें पुनः जिला देने पर वह युधिष्ठिर की निन्दा करता है। भीम सर्वदा सहज मानवीय चेतना के बीच विकसित हुआ चरित्र है। इसके परिप्रेक्ष्य में युधिष्ठिर के चरित्र की आलोचना करना [illegible] नहीं भूलते हैं। भीम शत्रु के विनाश के लिए सब समय कटिबद्ध है। वह धर्म के झूठे आडम्बर में जीवन के सत्य को भूलता नहीं है। इसकी स्पष्टता स्वर्गारोहण प्रसंग में दिखाई देती है। इसमें भीम एक सबल मानवीय मन से युक्त चरित्र के रूप में दिखाई देता है। युधिष्ठिर जब चारों भाइयों माँ कुन्ती और द्रौपदी को लेकर स्वर्गारोहण कर रहे हैं, तब एक-एक करके सभी मृत्यु को प्राप्त होते हैं। उस समय भीम सबका गुणगान करके व्यथित होता है। द्रौपदी के अचेत होकर गिरने पर युधिष्ठिर निर्मम भाव से अपने लक्ष्य स्वर्ग की ओर बढ़ते चले जा रहे हैं, किन्तु भीम पुकारता है कि हे युधिष्ठिर ! रुको, देखो द्रौपदी गिर पड़ी है। तुम्हें सहायता के लिए पुकारती है। युधिष्ठिर कहते हैं कि संसार के माया में आसक्त [illegible] उचित [illegible] भीम कहता है कि हे स्वामी ! तुम्हारी पुत्रवती प्रिया भार्या सब समय तुम्हारी सहायता करती र[illegible] [illegible] प्रति निद[illegible]। उचित नहीं है। धर्म राजा होकर मन से इतने दरिद्र क्यों हुए। उन्होंने भीम से कहा कि माया[illegible] [illegible]कर शोक मत करो। [illegible]

भीम द्रौपदी को गोद में लेकर विलाप करता है। सोचता है कि इस सौन्दर्य के आधार को छोड़कर चले जाने के लिए युधिष्ठिर का कैसे मन बढ़ा ? इस प्रकार उसके मन में द्रौपदी के प्रति सौन्दर्य बोध विकसित होता है। वह कहता है। हे स्वामी! इसके केश कृष्ण चामर की तरह सुन्दर हैं। लोभ से भ्रमर उसका साथ नहीं छोड़ते। सिर पर भार होने के कारण वह पुष्प नहीं लगाती। शरीर पर भारी लगने के कारण वह अलंकार धारण नहीं करती। हे स्वामी ! उसकी भ्रूलता मदन धनु की तरह सुहावनी है। इसको लेकर कन्दर्प त्रैलोक्य को भयभीत करता है। इसकी आँखें नीलोत्पल की तरह हैं। इसे देखकर मुनिगण ध्यान छोड़ देते हैं। ताम्बूल के बिना इसके अधर की लालिमा प्रस्फुटित होती है। नासिका तिल-पुष्प और दाँत माणिक्य की तरह दिखाई देते हैं। इसकी अँगुलियाँ चम्पा कली की तरह और नख जूही पुष्प की पंखुड़ी की तरह झलकते हैं। इसकी चाल मत्त गज की तरह और सुललित वाणी कोकिला की तरह है। हे स्वामी ! इतने सौन्दर्य लक्षण से युक्त होकर जो अग्नि से उत्पन्न हुई, उसे छोड़कर जाने के लिए तुम्हारा मन कैसे हुआ ? यहाँ पाषाणवत अरसिक लगने वाले भीम की अपूर्व सौन्दर्य दृष्टि अभिव्यंजित है। इस प्रकार सारलादास चरित्र में काव्य और काव्य में चरित्र रचना करने में सर्वदा सफल दिखाई देते हैं। भीम प्रत्येक भाइयों की मृत्यु पर उन्हें गोद में लेकर विलाप करता है और उनके गुण तथा वैशिष्ट्य को याद करके अत्यन्त संवेदित होता है। यहाँ कवि ने भीम के चरित्र को उदार मानवीयता से परिपूर्ण दिखाया है। सारलादास की लेखनी में भीम केवल वीर, निर्भीक एवं प्रतिशोध परायण नहीं है अपितु वह सत्यवादी, निष्कपट, करुण-हृदय, मातृवत्सल, सहानुभूतिशील और उदार है।

कवि की निम्न जन के प्रति गंभीर ममता भी इनकी रचनाओं में मिलती है। यह भी एक अत्यन्त व्यंजनापूर्ण है कि एक निम्न श्रेणी के व्यक्ति होने के कारण सारलादास अपने महाभारत में पतित जनता के लिए उदार संवेदना प्रदर्शित कर सके हैं। समाज के घृणित जन के संध से भी वे हमारे सामने समस्त मानवीय स्वर्ण प्रतिभा गढ़ने हैं। जारा शबर उनके महाकाव्य में समग्र अनार्य-संस्कृति के प्रतीक रूप में खड़ा है। अनार्य कहकर द्रोणाचार्य ने जिसे युद्ध विद्या सिखाने के लिए अस्वीकार किया था, उसी का नाम जाग है, बाद में वही एकलव्य हुआ। जारा ने श्रीकृष्ण की हत्या की। पुनः सागर के किनारे-किनारे भ्रमते-भ्रमते पुरी में पहुँच आये। श्रीकृष्ण के अदग्ध तैरने वाले हृदपिण्ड को खोज-खोजकर जारा समुद्र के जल से उठा लाया। सारलादास ने स्वयं इसकी कल्पना की थी या अन्य किसी की कल्पना का प्रचार किया है, किन्तु यह निश्चित है कि उनके महाभारत में स्थान पाने के कारण ही यह उड़ीसा की जातीय चेतना का अंग बन चुका है कि जारा शबर द्वारा उद्धृत श्रीकृष्ण का वही अर्धदग्ध हृदपिण्ड ही इस समय का जगन्नाथ है। दूसरी कथा में श्रीकृष्ण ही कलियुग में मानवोपकार के लिए जगन्नाथ का रूप धारण किए हुए हैं।

मालवराज इन्द्रद्युम्न ने विष्णु पूजा के उद्देश्य से विष्णु की प्रतिभा की खोज के लिए चारों ओर दूत भेजा। ब्राह्मण विश्वावसु ने उनको महोदधि के किनारे स्थित नील पर्वत अरण्य में जारा शबर द्वारा छिपाकर रखा और पूजित होने वाले को बताया। विष्णु के नाना घटनाओं के बाद जारा शबर के अरण्य कन्दरा का त्याग करके राजा इन्द्रद्युम्न द्वारा निर्मित विराट मन्दिर में रहने के लिए स्वीकार किया। विष्णु ने राजा को स्वप्न में बताया कि वे जिस मूर्ति रूप में मन्दिर में विराजमान होंगे; उसे वे प्रातः काल जलकुण्ड में देख सकेंगे। दूसरे दिन प्रातः काल उसी कुण्ड के जल में नीचे वह प्रतिमा देखने को मिली। राजा ने उसे स्वयं कुण्ड से बाहर निकाल लेने के लिए चेष्टा की; किन्तु वह प्रतिमा इतनी भारी थी कि राजा तो राजा, उनकी सेना और सामन्त भी उसको खिसका न सके। राजा बाध्य होकर हाथ जोड़कर दण्डवत सो गया। देवता ने उन्हें पुनः स्वप्न में बताया कि राजा या राजा की सैन्य शक्ति उसको हटा नहीं सकती। वह तभी उठेगा यदि उसे एक ओर से अनार्य जारा और दूसरी ओर से आर्य (ब्राह्मण) विश्वावसु पकड़कर उठावें।

वही हुआ और जगन्नाथ विराजमान हुए; किन्तु एक कृषक कवि की चौदहवीं-पन्द्रहवीं शताब्दी में इस प्रकार की गंभीर अन्तर्दृष्टि सम्पन्न कल्पना की बात आज सोचने पर हमें विस्मय से अभिभूत होना पड़ता है। कारण कि इस कल्पना में यह कृषक कवि आज से छः सौ वर्ष पीछे सम्पूर्ण सामाजिक विभेद की क्षुद्रता को लाँघकर मुक्त कंठ से देवता के मुख से घोषणा कर सका था कि भारत का आध्यात्मिक एवं सामाजिक उत्थान केवल आर्य और अनार्य संस्कृति के सम्मिश्रण से ही

होगा।

सारला महाभारत की जनप्रियता के क्रम में हमें यह देखना होगा कि सारला महाभारत में इस प्रकार के अन्य बहुत से गुण होने पर भी हमें मानना होगा कि यह एक सुपरिकल्पित ग्रन्थ नहीं। इसको एक सुयोजित उद्यान नहीं कहा जा सकता है; वरन् यह एक जगल है। सारलादास निश्चय ही प्रतिभाशाली थे; किन्तु उनके भाग्य मे आनुष्ठानिक ज्ञान-साधना और ज्ञानाहरण घटा नहीं था। उनके महाभारत के वर्ण्य-विभव में यही स्पष्ट भाव से प्रतिफलित है। आरण्यक होने के कारण ही सारला का महाभारत उड़िया जनता के निकट अत्यन्त प्रिय है। उड़िया मे तीन पद्य और एक गद्य महाभारत हैं; जो मूल महाभारत का प्रायः अनुवाद हैं, किन्तु लोग उन सभी महाभारत के पाठ के प्रति सुरुचिपूर्वक आग्रही नहीं हैं। साधारण पाठक साहित्य में अपना रंजित चित्र देखना चाहता है। वे स्वयं को ही हजार गुना करके खड़ा करना चाहते हैं। वे चाहते हैं कि जीवन की सकल रूढ़ वास्तविकता ही मनोरम ढंग से साहित्य मे चित्रित हो। सारला महाभारत के अरण्य राज्य में इन सबका प्रचुर स्वाद मिलता है। सारला के ग्रथ मे हम एक तरफ कृषक की वास्तविक दृष्टि से जीवन को देख पाते है तो दूसरी ओर देखते हैं मधुर स्वाभाविक अतिरजन, जो ग्रामीण जन की चित्रवृत्ति का एक अपिरहार्य अग है। सारला की कलम से सेनाओं की संख्या कोटि, अर्बुद (अरब) से नीचे नही खिसकती। भीम की अरण्यपत्नी हिड़िम्बिका के पुत्र घटोत्कच को लें तो वह भी युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ मे आते समय, सो सगड कस्तूरी, एक लाख सागड़ सुगन्धित पदार्थ और अनेक लाख सग्गड आम ले आया था। सम्राट कपिलेन्द्र के साम्राज्य मे हो सकता हैं एक सगड कस्तूरी भी मिल पाये या नहीं इसमे सन्देह है, किन्तु इस प्रकार की अतिरंजित और निरकुश कल्पना ग्रामीण किसानो के लिए अत्यन्त स्वादिष्ट होती है। ग्राम कवि की प्रतिभा जानवूझकर स्वाभाविक रूप मे प्रयुक्त हुई है।

पहल जैसा कहा गया ह, सारला अपने ग्रथ मे कोई दार्शनिक या तात्त्विक आलोचना को स्थान नही दते हैं। किसानो के स्वाभाविक रुचि क अनुसार वे अपने ग्रथ को कंवल कर्म और घटना का एक वन्याक्रात स्रोत वनाकर छोड दंते है। कृषक कवि अपने सहजात बुद्धि से जानत थे कि मूल महाभारत मे दीर्घ तात्त्विक, दार्शनिक और आध्यात्मिक आलोचना होने के कारण सभी ग्रामीण श्रोता वर्ग के लिए आदरणीय नही ह और इसी कारण उनका समग्र ग्रथ भी अनादृत हो जाएगा। कवि ने जिस प्राकृतिक जन के लिए अपना ग्रन्थ पाकृत या जनभाषा मे लिखा था, सब समय उसके बौद्धिक स्तर को अपनी दृष्टि में रखा था।

मूल ग्रन्थ के नीरस तात्त्विक आलोचना को छोड देने पर भी कृषक कवि नाना स्थलो पर कृषक जनता के लिए उपयोगी सभी उपदश को रखना नहीं भूलता है। यह सव एक बुद्धिमानी, भिज्ञ उडिया किसान के मुह से निकलना जिस प्रकार स्वाभाविक होना चाहिए था, उसी प्रकार स्वाभाविक होना चाहिए था, उसी प्रकार स्वाभाविक था। शान्ति पर्व मे भीष्म द्वारा युधिष्ठिर को उपदेश के माध्यम से सारलादास कृषक, गुणीजन एवं कवियो के प्रति सद्भावना रखने की बात करते है कि कृषकों का धन न छीनना, गाया के लिए चरागाह छोडना, गुणियों की पूजा करना तथा कवियो के लिए कभी कृपण न होना।

'कृषिकर्मकारी जने न ताण्डिबु धन
गोचर निमन्ते छाडि देबु बहु स्थान।
गुणीगण जाणिकरि करिधिबु पूजा,
कविमानकु कृपण न होइबु राजा।' इत्यादि

यहाँ सारलादास एक अचेत सैनिक के मुख से एक राजा को सुशासन हेतु उपदेश देते हैं किन्तु उस दौरान कृषक और कवि दोनो के कल्याण की सामाजिक आवश्यकता को नहीं भूलते। राजा के सुशासन में कविजन का सम्मान किस प्रकार आवश्यक हो गया। निश्चय ही कवि हर क्षेत्र मे सामाजिक उपयोगिता का अवसर निकाल ही लेता है। मालूम होता है कि उदार चेता दूरदृष्टि सम्पन्न कृषक कवि अप्रासगिक हुए होंगे, इसीलिए भीष्म के मुख से जानवूझकर युधिष्ठिर राजा को कवियों के प्रति सश्रद्ध होने का उपदेश पूरा कर देते हैं। युधिष्ठिर के काल में जो कवि बच गये थे, वे तो स्वयं कृष्ण द्वैपायन, महाभारत

के महास्रष्टा और श्रीकृष्ण से सिआर तक समग्र जाति के लिए वे नमस्य थे। इसलिए भीष्म के इस प्रकार के निरर्थक उपदेश देने का तात्पर्य क्या है ?

किन्तु सारला के समय में उड़ीसा के कृष्ण द्वैपायन कविजन, विशेषतः प्राकृत भाषा के कविगणों का राजा और राष्ट्र द्वारा अवहेलित एव असम्मानित होना स्वाभाविक था। कारण कि उस समय संस्कृत ही एकमात्र भाषा थी और संस्कृत भाषा में केवल संस्कृत पण्डितों का ही स्थान था। भाषा कवियों का स्थान वहाँ न था। हो सकता है उसे राजदर्शन का स्थान प्राप्त था, जो महलों के एक ऑगन प्रान्त से जुड़ा था। लगता है स्वय कवि को भी इस प्रकार की भिज्ञता एक या दो बार मिली हो एवं उदारमना महाकवि नहीं चाहते थे कि भविष्य में उनके भाई कविगण इस प्रकार की तिक्त अनुभूति पावे। अपने चिर अवहेलित लेखकों के सम्मान और कल्याण के लिए ही महाकाव्य अचेत भीष्म के मुख से भावी शासक युधिष्ठिर के द्वारा कवि और गुणी जनों के प्रति सश्रद्ध व्यवहार का उपदेश दे पाये हैं।

बंगला में महाभारत लिखने से दो सौ वर्ष पूर्व ही सारलादास उड़िया मे महाभारत लिख चुके थे। तभी तेलुगु भाषा में भी महाभारत का लिखना आरम्भ हुआ जो तीन पुरुष कवि पण्डितों द्वारा अठारहवी शताब्दी में पूरा हुआ। शायद अन्य किसी आधुनिक भारतीय आर्य भाषा मे इतने अतीत मे सम्पूर्ण महाभारत नही लिखा गया और न ही सारला महाभारत की तरह लिखा गया। जिस भाषा में लिखा भी गया तो उसका प्रादेशिक जनता पर गंभीर एव सम्पृक्त प्रभाव भी नही पड़ा, जिस प्रकार सारला महाभारत का उड़िया जनता पर प्रभाव पड़ा है। सारला महाभारत के गल्प, पद्यांश एवं उपदेश उड़िआ जातीय चेतना के गम्भीरतम स्तर पर स्थान पा चुके है। किसी एक सामान्य घटना को वृहत् रूप मे परिणत होते देखकर उड़िया मुख से निश्चय ही निकल पड़ेगा—'ए जे झिमिट खेरार महाभारत जात'—जो सारला की अपनी कल्पना है। कौरव और पाण्डव भाइयों के बीच जीवनव्यापी पारस्परिक विद्वेष 'डू-डू' (झिमिट) खेल से आरम्भ होने की सूचना सारला महाभारत की है। कपटी व्यक्ति की साधुता देखते ही उड़िया कहेगे 'तुला मुरा काक या तुलसी वन बाघ' (गुह म रुई लिया बगुला या तुलसीवन मे बाघ) इसी प्रकार 'गंगा बाइले थिवि, गागी बोइले जिवि' जैसे आप्त वाक्य सारला महाभारत के है। 'कर्ण मले पाच, अर्जुन मले पाँच' (कर्ण के मरने पर भी पाण्डव पाँच और अर्जुन के मरने पर भी पाण्डव पाँच) 'गान्धारी कुयर नाहिं कि धृतराष्ट्र कु कन्या नाहिं' (न तो गान्धारी के लिए कोई वर था और न धृतराष्ट्र के लिए कोई दूसरी कन्या ही थी) ये सब उपवाक्य उड़ीसा मे मुहावरों के रूप में प्रसिद्ध एव प्रचलित है। यही नही, साधारण ग्रामीण उत्कलियों के सामने सारला महाभारत केवल दृष्टान्त या प्रवचन मात्र नहीं है, वह एक पुण्यप्रद ग्रंथ हो गया है। उड़ीसा के ग्रामांचल मे यह विश्वास व्याप्त है कि इसके पारायण करने से अपुत्रिक व्यक्ति को पुत्र प्राप्त होता है। व्यापक जनप्रियता के कारण ही एक दिन यही महाभारत बंगला म अनूदित होकर पठित हुआ था।

वस्तुत. सारलादास की प्रगतिशीलता, यथार्थ चिन्ता, आम आदमी को वास्तविक चिन्ता, ग्राम्य जीवन की स्वाभाविकता, मानव मनोविज्ञान की सत्यता ने उनके साहित्यिक रचना को आज भी प्रासंगिक एवं मूल्यवान बना दिया है। उड़िया भाषा और साहित्य के अध्ययन के दौरान हम दोनो के मन में उत्कण्ठा उठी कि हिन्दी भाषा एवं साहित्य जगत् को इस शूद्र कवि के महाकाव्य और उनकी रचनाशीलता से परिचित कराया जाय।

सारला के उड़िया महाभारत में आदि या शृंगार रस प्रखर है—किन्तु इसमे उत्कटता नही है। एक सुकुमार और ललित सौन्दर्य बोध उत्कट आदि रस के बहुचित्रण को कमनीय शिल्प रूप प्रदान किया है। इनकी चटख, वर्णना भंगी और विदग्ध रसिकता एक काव्यिक रसोत्कीर्णता प्रदान करती है। नारी के रूप वर्णन में केश से पादांगुलि पर्यन्त वर्णना रीति है, जो रीति युग की रचनाओं में एक प्रधान अभिमुख्य के रूप में परिलक्षित हुई है। यह रूप वर्णना की भंगी अनेक नारी प्रसंगों में मिलती है। द्रौपदी के सौन्दर्य वर्णन की विशेषता विवेचित है। मध्य पर्व में चन्द्रावती, शोभावती और वन पर्व में मेरुशूल-नन्दिनी, त्रिपुर मोहिनी के रूप वर्णन से सारलादास की दृष्टि-भंगी को समझा जा सकता है। केवल सौन्दर्य वर्णन ही विशिष्ट नही है अपितु नारी मनोविज्ञान का यथार्थ चिन्तन भी विशिष्ट रूप ग्रहण कर सका है। वे नारी के गुह्य सत्य को बाहर निकाल लेने में बड़े सफल रहे हैं। सत्याम्ब कथा प्रसंग में द्रौपदी के सत्य को बड़ी चालाकी से बाहर किया गया है। सत्यवती के द्वारा अपनी पुत्रवधुओं को आश्वस्त करने के क्रम में नारी मनोविज्ञान का खुलासा किया गया है। 'कोई भी नारी सुन्दर पुरुष से आकर्षित

होती है, चाहे उसका रिश्ता कुछ भी हो।' यही नहीं इसी प्रसंग में कवि कह उठता है कि 'मन जाणे पाप, माँ जाणे बाप' (मनुष्य का मन ही उसका पाप जानता है, बेटे के बाप को माँ ही जानती है)। भारतीय आदर्श के बीच यथार्थ का यथार्थ चित्रण मौका मिलते ही सारलादास कर बैठते हैं। यही नहीं संन्यासियों, योगियों, ब्राह्मणों की बहु सामाजिक मान्यता के बीच सारलादास उनके सत्य को भी जाहिर कर देते हैं। अग्निकार ऋषि द्वारा हिरणी के साथ रति-क्रिया प्रसंग में, अनुज बंधुओं के साथ रमण करके व्यास द्वारा पुत्रोत्पत्ति के सन्दर्भ में तथा हिरणी के साथ व्यास के रमण द्वारा मृगसेन राजा की कथा में जीवन से दूर रहने वाले ऋषियों का जैविकीय सत्य बड़े स्पष्ट ढंग से व्यंजित हुआ है।

किसी भी स्थिति में सारलादास जीवन के यथार्थ को आदर्श के झूठ में घसीटना नहीं चाहते। अपने यथार्थ को आदर्श के आडम्बर में ढकने वाले ऋषियों, महर्षियों को भी नगा करने में सारलादास सकोच नहीं करते। देवी सारला की कृपा से लिखा जाने वाला काव्य संसार-जन के लिए समर्पित है। इसीलिए सारलादास के काव्य में प्रायः सभी रसों की अभिव्यंजना हुई है। शृगार रस का प्राचुर्य होने पर भी सारला महाभारत मे ट्रेजिडी धर्मी गाम्भीर्य पुनः वीर और वीभत्स रस मुख्यतः अवलम्बित हुआ है। विभिन्न युद्ध वर्णन एवं वीर रसाश्रयी युद्ध के चित्र आलोकित हुए है। सारलादास का वर्णन और शब्द विन्यास अनर्गल होने पर भी विषयवस्तु के अनुरूप हुआ है, अर्थात् भाषा, भाव और विपयवस्तु के बीच एक अविच्छेद्य ऐक्य यहाँ प्रतिष्ठित हुआ है। सारलादास के मल्ल युद्धो का वर्णन बड़ा ही जीवन्त हुआ है। उसको पढते ही गाँव का अखाड़ा आँखो के सामने नाचने लगता है। अस्त्र और शस्त्रों का युद्ध उतना ही सजीव है। आश्चर्य होता है कि इतने हथियारों से कवि कैसे परिचित है ? उसकी युद्ध निपुणता तो ऐसी लगती हे जैसे कवि युद्ध क्षेत्र से कमेन्ट्री प्रस्तुत कर रहा हो।

बीभत्स रसाश्रित वर्णन, सारला के महाभारत मे यथार्थ मे वीभत्स और लोम हर्पककारी है। 'शल्य पर्व' में कुरुक्षेत्र का वर्णन अत्यन्त भयंकर है। निपुण चित्र शिल्पी की अत्यन्त अयत्न विन्यस्त रेखाओ द्वारा एक निपुण चित्र अंकन कला की तरह, सारला का शब्द विन्यास, अधकार रजनी की प्रेतिनी ओर यागिनी से पूर्ण रणांगन में, शवारण्य के जो चित्र अंकित किए है, वह जितना प्रभावशाली, उतना ही सम्मोहनशील भी ह।

उपमा और उपमेय का सयत विन्यास और नूतन रूप कल्पना सारला के उपमा और उपमेय के महाभारत में एक उल्लेख योग्य सफलता और नूतन रूप कल्पना एक काव्यिक कमनीयता प्राप्त करती है। उपमा ओर उपमेय के विन्यास मे सारलादास प्रकृति के विभिन्न सौन्दर्यमय विभूति के अलावा दैनदिन ग्राम्य जीवन से भी बहुत से उपादान आहरण किए हैं। इसीलिए सारलादास ताजे बिम्बों का प्रयोग करते दिखाई देते हे। उनके उपमानो मे लोक जीवन और लोक जीवन की समस्याएँ सजीव होकर खड़ी हो जाती है। जेसे—चक्रव्यूह का निर्माण हो चुका हे, अर्जुन नही है। पाण्डव अति व्याकुल हैं। मानो आषाढ़ बरसने पर किसी किसान का बेल मर गया हो। अनेक उदाहरणो से विस्तार होगा। अत. संकेत से ही पाठ्य सामग्री की विशेषताओं को चित्रित करना समीचीन होगा।

महाभारत के विषयवस्तु परिवेषण मे एक नाटकीय रीति और सलापमय चातुर्य, सारलादास के उड़िया महाभारत को एक काव्यिक सौन्दर्य प्रदान करने के साथ-साथ, स्थान-स्थान पर सार्थक कविता की कोटि का स्पर्श करा गया है। स्वल्पोक्ति के बीच व्यजना की व्यापकता उक्ति की रमणीयता ओर विपयवस्तु की सवेदनशीलता यहाँ लक्ष्य की जा सकती है। सारला महाभारत मे कुट्टनी सहज सुन्दरी के निकट राधा द्वारा प्रेरिता होकर आयी। सहज सुन्दरी और राधा की बातचीत काव्यिक है। प्राचीन कविता का यह अयत्न विन्यस्त, सुकुमार विलास के बीच परकीया सम्भोग में बहु अभिज्ञातावती चतुरी, कुट्टनी सहज सुन्दरी, पुन: प्रतीक्षारत, अभिसारिका वधू राधिका की उत्कंठामयी चरित्र, जिस प्रकार उत्कीर्ण हुआ है, वह नितान्त स्थूल पाठक को भी विमोहित करता है। यह संवेदनशीलता और प्रभावशीलता ही प्रत्येक सार्थक रसोत्तीर्ण कविता का लक्षण है। 'मध्य पर्व' में पार्वती और लक्ष्मी के बीच कलह, हिड़िम्बा और द्रौपदी के बीच उच्चवाच ग्रामीण कलह की तरह दिखाई देता है।

सारला महाभारत को पढ़ने पर लगता हे कि अपने को शूद्र, अल्पज्ञ और मूर्ख अपंडित कहने वाला कवि अपने बहुआयामी व्यक्तित्व से भरा-पूरा है। जीवन और जगत् के विविध क्षेत्रों का भरपूर ज्ञान कवि को है, केवल ज्ञान ही नहीं बोध भी है जो उसकी रचना प्रक्रिया में साकार हो सका। जीवन के समग्रबोध यथार्थज्ञान और उसकी अभिव्यंजना के सन्दर्भ से

गुजरने पर पता चलता है कि ओड़िआ भाषा और साहित्य की शैशवावस्था में कवि का भाषा पर अजब अधिकार है। लोकभाषा में जितना प्रवीण है उतना ही शिष्ट साहित्यिक भाषा पर तत्कालीन प्रचलित आंचलिक एवं भारतीय भाषा पर विशेष अधिकार है। यही कारण है कि हिन्दी की बोलियों में आज भी प्रचलित शब्द सारला के शब्द कोश में मिलते हैं। प्रयोग की समानता भी है, किन्तु वे ही शब्द ओड़िआ में आज प्रचलित नहीं हैं।

उन्होंने अपनी भाषा को अपने चिन्तन में समाहित कर लिया था। अतः शब्दों को अपने चिन्तन के अनुकूल तोड़ा-मरोड़ा और आवश्यकतानुसार उसे नया अर्थ दिया या अर्थोत्कर्ष की सारी भूमिका में उन्होंने शब्दों को तराशा। उनकी रचनात्मक अभिव्यंजना में शब्द उनके सहचर बनकर हमेशा उनका साथ देते हैं। सारलादास का चिन्तन भाषिक चिन्तन रहा है और साहित्य उनके चिन्तन की भाषा। इसी सन्दर्भ में वे अपने मन में, लोक मन में या कि जनमन में रचनात्मक स्तर पर पहुँच सके। सारलादास का व्यक्तिमन हमेशा सामाजिक मन होता चला है और इस क्रम में उन्होंने भाषा को किसी भी व्याकरण की देहली में आबद्ध नहीं होने दिया है। सामाजिक मन की व्याख्या के अनुकूल उनके शब्द बराबर खराद पर चढ़ते रहे हैं। इसीलिए सारलादास संस्कृत के आभिजात्य से परहेज करके लोकभाषा को रचनात्मकता प्रदान करते हैं। यह प्रयोग उनके भाषा दर्शन का परिणाम है न कि उनकी अनभिज्ञता का। किसी भी स्तर पर कवि रूढ़ियों का शिकार नहीं होता। सब कुछ बदलता है तो उसकी भाषा भी वदलती है, शब्दों का अर्थगौरव भी बदलता है। सारलादास की शब्द एवं भाषा की सम्पदा को इसी आधार पर देखा जा सकता है।

राष्ट्र, राज्य, राज्य सीमा, वन, नदी, सागर, पहाड़ आदि के जीवन्त वर्णन में कवि का भूगोल चरितार्थ होता है। ऐसा लगता है कि कवि ने पूरे पृथ्वी का या कि पूरे भारत का भ्रमण किया हो। एक प्रकाण्ड भूगोल शास्त्री के रूप में एक क्रम से भारत के भूगोल का वर्णन हुआ है। इसी के साथ उसका इतिहास ज्ञान भी सार्थक हुआ है। द्रौपदी के स्वयंवर में केशिनी द्वारा एक लाख राजाओं के राज्य, नाम ओर गुण का वर्णन कवि के इतिहास भूगोल के समन्वित ज्ञान का परिचायक है। पर्वतों, पहाड़ियों, वनों एवं नदियों आदि के वर्णन में वह बड़ा ही सफल हुआ है। पाण्डवों के वनवास-प्रकरण में इनके वर्णन का सुयोग कवि निकाल लेता है। वहीं उसका जन्तु जगत् का ज्ञान, वनस्पति जगत् का ज्ञान प्रतिपादित होता है। एक-एक करके एक-एक जन्तुओं एवं वनस्पतियों के नाम एवं गुणों का उल्लेख करता है। वहाँ एक प्राणिशास्त्री तथा वनस्पति शास्त्री की भूमिका निभाता है। ग्रह-नक्षत्रों, पर्वो आदि के वर्णन में भी वह काफी सफल होता है। यद्यपि सारलादास ब्राह्मण धर्म या सामन्ती धर्म का एवं सामन्ती व्यवस्था का विरोधी रहा है, फिर भी उसका वर्णन बड़ा ही सजीव है। तब वह एक अच्छे ज्योतिषाचार्य के रूप में सामने आता है। धामिक अनुष्ठानों ओर अनुष्ठान सामग्री के वर्णन में पुरोहित बन जाता है। कथा साहित्य लिखने में व्यास तो है ही। युद्ध आदि के सन्दर्भ मे वह शस्त्र-विद्या में प्रवीण दिखाई देता है। जीवन की छोटी-छोटी घटनाओं में वह एक कुशल गृहस्थ की भूमिका निभाता है। यही नहीं कौन-सा क्षेत्र है जिसे सारलादास ने नहीं स्पर्श किया और उसे जीवन्त नहीं बना दिया। सारला का भक्त नारी के रति शृंगार का जीवन्त चित्रण करता है। कितना प्रायोगिक बन गया है सारलादास का शृंगार चित्रण।

निश्चय ही सारलादास ने युगीन जीवन को भली भाँति समझा, उसे भोगा और उसका बोध किया। तत्कालीन यथार्थ और इतिहास के संकुल मे फँसी भारतीय जिन्दगी के सत्य का अनुभव किया। उसकी मूल्यहीनता से उसे उबारना चाहा। जीवन की समस्त तिक्तताओं और विषमताओं में से जीने योग्य जीवन की तलाश की ओर युगीन जीवन-मूल्यों के अनुरूप एक विराट, व्यापक जीवन को रचने की सफल कोशिश की। यह जीवन युगीन अपेक्षाओं का जीवन था। युगीन आवश्यकता एवं अर्थवत्ता में उसने जीवन को मानवीय मूल्य प्रदान करने की कोशिश की। इसीलिए उसने सब कुछ को बदला। मन के झूठे आदर्श से मनुष्य को नंगा किया। उसकी सच्चाई में उसे खड़ा भी किया। न्याय-अन्याय की भूमिका में मनुष्य को मनुष्य बनने के लिए चेतना दी तो सामन्ती वर्ग को भी उन्हें मनुष्य समझने के लिए चेतनात्मक स्तर पर बाध्य किया। इसीलिए सारलादास के उपदेश कृषक और कवि के कल्याण को नहीं भूलते। यही नहीं सारलादास ने परम्परित भारतीय देवताओं को भी तर्क और प्रत्यक्ष बोध के धरातल पर रक्त-मांस का मनुष्य बनाया तथा मनुष्य की कमजोरियों में उसे ढाला। इस बात की ओर संकेत किया जा चुका है। वस्तुतः सारलादास ने युगीन जीवन के सन्दर्भ में उसकी आवश्यकता, अपेक्षा में समग्र मानवीय जीवन को समग्र मानवीय

मूल्य प्रदान करने की बराबर चेष्टा की है। इसीलिए उनका यह काव्य अपनी प्रासंगिकता में मूल्यवान हो सका है। केवल उड़ीसा के लिए ही नहीं तब भी और आज भी भारतीय जीवन का एक मूल उत्स है। पुरी के जगन्नाथ पूरे भारत के जगन्नाथ हैं और सारलादास ने उन्हें भी खूब बनाया-बिगाड़ा है या कि बदलने के लिए मजबूर किया है।

वस्तुत. सारलादास की प्रगतिशीलता, यथार्थ चिन्ता, आम आदमी की वास्तविक चिन्ता, ग्राम्य जीवन की स्वाभाविकता, मानव-मनोविज्ञान की सत्यता ने उनके साहित्यिक रचना को आज भी प्रासंगिक एवं मूल्यवान बना दिया है। ओड़िआ भाषा और साहित्य के अध्ययन के दौरान हम दोनो के मन में उत्कठा उठी कि हिन्दी भाषा एव साहित्य जगत को इस शूद्र कवि के महाकाव्य और उसकी रचनाशीलता से परिचित कराया जाये। इस कवि की सारी विविधताओं का विवेचन संभव नहीं। आशा है मूल ग्रथ का अनुवाद ही स्वयं पाठक तक पहुँचकर समग्र बोध का कार्य पूरा कर सकेगा।

इस विशाल कार्य को करने की चुनौती सहर्ष स्वीकार की गयी। अडचनें भी काफी आई। सबसे बड़ी समस्या इसके प्रकाशन की थी। सारला-साहित्य ससद के अध्यक्ष इजीनियर प्रभाकर स्वाई ने इस अनुष्ठान की अगुआई की। हम लोग उनके आभारी है। हिन्दी साहित्य के प्रसिद्ध आलोचक प्रो. नामवर सिह जी ने इस अनुष्ठान को सार्थक बनाने मे सक्रिय सहयोग दिया। यह ग्रन्थ प्रकाशित होकर पाठको के सामने है जो प्रोफेसर नामवर सिह के प्रयास का परिणाम है। हम उनके सार्थक प्रयास के लिए उनके आभारी है। वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली ने इतने बडे ग्रन्थ के प्रकाशन का दायित्व अपने ऊपर लिया है। निश्चय ही यह हिन्दी साहित्य के लिए एक बड़ी चेष्टा है। सरकारी अनुदान के बिना यह प्रयास निश्चय ही सराहनीय है। इतने बडे राष्ट्रीय कार्य हेतु सरकारी सहायता आवश्यक भी है। आशा और अपेक्षा है कि भविष्य मे सरकारी सहयोग प्राप्त हो। इस व्यापक कार्य को हाथ मे लेने के लिए हम वाणी प्रकाशन के आभारी है। हमारा यह श्रम हिन्दी पाठको तक समर्पित है। उनके अध्ययन तक पहुँचना ही हमारी श्रम की सार्थकता है। इत्यलम्।

नीलाद्रिभूषण हरिचन्दन

हरिश्चन्द्र मिश्र

आदि पर्व

(प्रथम खण्ड)

गणेश वन्दना

1. दधि-मंगल विघ्नराज की जय हो, जिसकी प्रसन्नता से सब कार्य सिद्ध होते हे।
2. सकल विघ्न-विनाशन, गजानन, मंगलयोगेश्वर, परमानन्द, पार्वती-नन्दन की जय हो।
3. जो मंगल शंखचक्रधारी, सरोज–दधिमुख, मंगल वरदायक, सदय प्रत्यक्ष नाथ हैं।
4. जो महाब्रह्म, योगेश्वर, सिन्दूरमण्डित गजमुख, यम..र्प–गंजनकारी सर्व अपराध–दुःख खण्डनकारी हैं।
5. उस चन्द्रेशखर देव और सिद्ध लम्बोदर देव की जय हो, जय हो।
6. सुरगण-रक्षक देव की जय हो, जय हो। परमगतिदाता देव की जय हो, जय हो।
7. हे प्रभु ! जब संग्राम में त्रिपुर राक्षस का बध्र नहीं हुआ तब तुम्हारे बुद्धिबल से उस महावीर का नाश हुआ।
8. तुमने साठ हजार वर्ष में ।;ना प्रयास के उसका नाश किया।
9. देवराजा ने तुष्ट होकर वरदान दिया कि सकल भुवन में हे स्वामी ! तुम्हारी पूजा सर्वप्रथम हो।
10. वेदव्यास ने जिस समय 'महाभारत शास्त्र' को प्रारम्भ किया उस समय ब्रह्मा ने तुम्हें तत्काल दृढ़ आज्ञा दी।
11. महामुनि व्यास का ग्रंथ कवित्वपूर्ण होगा; तुम लिखने का शुभारम्भ करो।
12. जिस रामघाट तीर्थ में गंगा, यमुना, सरस्वती तीन नदियों का संगम हुआ है।
13. पश्चिममुखी धवलांगी सरस्वती नदी के किनारे पश्चिम पार्श्व में वांछा कल्प वट-वृक्ष है।
14. जहां सिद्ध देवतागण विराजमान हैं; वहीं त्रिवेणी में स्नान करके और माधव का दर्शन करके.....
15. वे स्वामी जिस हस्त में लेखनी लेकर निविष्ट चित्त "और" तल्लीन होकर योगध्यान में वट-वृक्ष के नीचे बैठे।
16. व्यास ने कहा, हे महाब्रह्म तुमने ही इस आदि सिद्ध ग्रंथ को कहा है वर्णन किया है उसे हे स्वामी ! तुम लिखो।
17. हे स्वामी ! जिस योग से जिस शास्त्र को "जिस दृष्टि से" लिखा; उस अमृत दृष्टि से शीघ्र ही प्रसन्न हो।
18. गिरिजा-नन्दन सद्गति में ध्यानस्थ होकर अपने श्री हस्त में लेखनी लेकर एकाग्रचित्त होकर बैठे।
19. सदानन्द-तनय योगेश्वर योग से मन और चित्त को एक करके अजपा योग में लीन हुए।
20. करुणामय नाथ, शरणदाता, महावीर, संसार-सागर-नाथ,

वरदाता साधुदेव है।

21. विस्तृत-उदर, सत्‌ज्ञानी, पृथुलकाय नाथ, काल से बचाकर अभय देने वाले है।

22. इस घोर संसार-सागर को तैरने के लिए इच्छा किया। हे नाथ ! इस दुस्तर सागर से पार करके मेरी मनोकामना पूरी करो।

23. मयूर-पुच्छ-मुकुटधारी, बत्तीस कला-युक्त, हर्षपूर्ण नाथ, नृत्य रंग में आत्मविस्मृत रहने वाले है।

24 जो महात्मा दिन-रात नही जानता है, उस पुरुषोत्तम ने अनन्तकाल व्यतीत किया।

25 तुम पुरुषों मे सिद्ध, देवताओं मे आदि हो, जिसके दर्शन से पाप दूर होता है और प्रसन्नता से कार्य सिद्ध होता है।

26 श्री विघ्नेश्वर के चरणो मे मेरी सेवा अर्पित है। तुम मुझसे प्रसन्न हो। मै यह श्री महाभारत कहूगा।

27 तुम्हारे पद्‌मपाद म मेरी भक्ति और विनय है। हे परशुधर नाथ गणपति ! तुम सदय हो।

28 तुम आदि, अत, मध्य हो, तुम सर्वव्यापी हो। भूत, भविष्य, वर्तमान को लेकर तुमने ग्रथ की रचना की।

29 मातु लक्ष्मी-स्वामी के चरणो मे मेरी आशा है। ग्रथकार शूद्रमुनि सारला दास कहत है।

सारला देवी वन्दना

1 जम्बूद्वीप, भारत खण्ड, उड्राष्ट्र मडल मे चित्रोत्पला नदी के किनारे उत्पलेश्वर शिवलिग अवस्थित है।

2 जयन्ता राज्य की निजभूमि जाज नगर के निकट दक्षिण वाराणसी की कुश स्थली भूमि द्वारका है जो पुण्यवासी क्षेत्र कहा जाता है।

3 महोदधि के उत्तर तट पर अवस्थित नील सुन्दर पर्वत और नील कल्पवट के पास श्री यमेश्वर महालिग विराजमान है।

4 बलराम, कृष्ण और सुभद्रा नामक तीन ब्रह्म जहाँ विराजमान है ये महात्मा चार सौ बत्तीस हजार वर्ष से योगलीन है।

5 कलिकाल को ध्वस करके जो करोडो लोक-लोगो की पूजा का भोग कर रहे है। उनकी श्री कपिलेश्वर महाराज प्रणत होकर सेवा करते हैं।

6 उस नील सुन्दर गिरि के कछार में कटिदेश में श्रेष्ठ भूमि भारत खण्ड की पूर्व दिशा में, ईशान कोण में.....

7 चन्द्रभागा नामक एक नदी वृद्धमाता नदी के पार्श्व से होकर महोदधि में गिरती है।

8 उस नदी के किनारे परशुराम घाट के पास कनकावती नामक ग्राम अवस्थित है।

9 उसी के पास सारोल नामक ग्राम में माहेश्वरी चण्डी सारला नाम से विराजित है।

10 वे परम वैष्णवी महायोगेश्वरी और परम साध्वी है जो प्रत्यक्ष वर दे रही है।

11 उस देवी की इच्छा सार्थक है। पाषाण होने पर भी उनकी इच्छा प्रस्फुटित हो रही है।

12 मातगी, मत्तभोला सर्वमगला रूप वह देवी मेरे ग्रथ के अर्थ को सुनकर हर्ष और कौतूहल अनुभव करती है।

13 वे महादेवी श्री सारला चण्डी नाम से प्रसिद्ध है। मै उनका पुत्र सारला दास कवि हूँ।

14 शाकुम्भरी ने प्रसन्न होकर मुझे आज्ञा दी। तुम श्री महा-महाभारत रचकर कपिलास मुक्ति प्राप्त करो।

15 हे प्रबुद्ध जन ! सुनकर अपने मन म अन्यथा न लेना क्योंकि मै जन्म से मूर्ख हूँ, पण्डित नही हूँ।

16 एकाग्र चित्त स सावधान होकर तुम्हारा सब पाप दूर हो जायेगा।

महाभारत प्रशस्ति

1 कुम्भ-ऋषि-नन्दन महाब्रह्मवेत्ता अगस्त्य महाऋषि की भणिति अमृत रसमय है।

2 वैवस्वत मनु ने कहा—हे पण्डित महात्मा अगस्त्य ! अमृत रस वाक्य कहो।

3 श्री महाभारत नाम किस प्रकार हुआ ? विचार करके हे ऋषि ! मुझे यह बताये।

4 हे वैवस्वत मनु ! आदि पर्व चरित्र सुनो। देवगण ने समस्त ग्रंथों को सायास तौला।

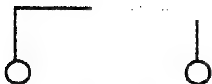
5 बारह योजन लम्बे काठ को तुला दण्ड बनाया। दोनों पलडो को तीन-तीन योजन ऊँचा बनाया।

6 अनन्त कोटि विष्णु पुराण और अनन्त कोटि ब्रह्म

पुराण को सबने लेकर तुलादण्ड परिपूर्ण किया।

7. पचीस लाख अष्टादश पुराण, रामायण एवं चण्डी पुराण आदि समस्त के साथ.....।

8-9. विष्णु पुराण, मार्कण्डेय पुराण, शिवपुराण, नारद पुराण; इन चार प्रमुख पुराणों को मुख्य करके समस्त पुराणों को तुलादण्ड पर रखा।



10 दूसरी तरफ अठारह खण्ड महाभारत रखा। समस्त शास्त्रों से यह महागुरु हुआ।

11 जब युक्ति से वह महाभार हुआ तो कश्यप और अंगिरा ऋषि ने उसको महाभारत नाम दिया।

12 तौल मे बहुत भारी 'महा असम' होने के कारण इसका नाम महाभारत हुआ।

वंशानुचरित 'संभव पर्व'

1 वैवस्वत मनु ने प्रणाम किया। हे मनि ' तुम्हारी प्रसन्नता से मैंने अनेक धर्मो का अर्जन किया।

2 श्री कर में अर्घ्य लेकर अगस्त्य महामुनि के दोनों पैरों का प्रक्षालन करके कहा—हे महामुनि ' मुझे मोक्ष का कारण बतायें।

3. वस्त्र, कुण्डल, रत्नमाल, गंध-चंदन, धूप-द्दीप, नैवेद्य नाना उपहार-द्रव्य.....।

4. ये सब देकर अनेक विधि से मनु महाराज ने मुनि के पैरों की पूजा की।

5. हे घट-ऋपि-नन्दन ! तुम्हारे पद्‌म-पाद में मेरी अहर्निश-सेवा अर्पित है। तुम मेरे सन्देह का निवारण करो।

6. महामुनि कहते हैं कि हे युगपति ! सुनो; सप्तद्वीप पृथ्वी में सोम वंश ही अधिपति है।

7. आदि से ही शून्य, शून्य से ही पवन; पवन से ही योगपुरुष शून्य पैदा हुआ।

8. योगपुरुष से गायत्री मंत्र पैदा हुआ। इसी से चार महामंत्र उत्पन्न हुए।

9. इस महामंत्र से चार पाद पैदा हुआ। इसी से यमज पुरुष-प्रकृति पैदा हुए।

10. यमज से कर्म की उत्पत्ति हुई। इससे निर्गुण की उत्पत्ति हुई।

11. निर्गुण से बुदबुद की उत्पत्ति हुई। बुदबुद से प्रबुद्ध अण्ड उत्पन्न हुआ।

12. अण्ड फूटने से निरंजन पैदा हुआ। निरंजन से शक्ति उत्पन्न हुई।

13. शक्ति से ब्रह्मा, विष्णु और महेश तीन पुत्र पैदा हुए।

14 देवताओं ने समुद्र-मंथन किया जिससे चन्द्रमा पैदा हुआ।

15 चन्द्रमा से सन्तति की उत्पत्ति हुई। दक्ष प्रजापति ने सत्ताईस कन्याये प्रदान कीं।

16. चन्द्रमा ने वृहस्पति की भार्या तारा का हरण किया। उस उत्तम परदारा के साथ वह शृंगार रस में मत्त हुआ।

17 चन्द्र के वीर्य और तारा के रज से बुद्ध नामक पुत्र की उत्पत्ति हुई।

18 बुद्ध-नन्दन पुरुरवा महाराज देवताओं के राजा हुए और नवद्वीप को लेकर साम्राज्य को प्रतिष्ठित किया।

19. पुरुरवा ने सचराचर पृथ्वी को विभाजित किया। सप्तसागर और नवद्वीप को लेकर साम्राज्य को प्रतिष्ठित किया।

20. पुरुरवा-नन्दन महिपाल आयु ने सप्तद्वीप पृथ्वी को एकत्र किया।

21 आयु-नन्दन नहुष हुए। अमर आकाश में वे इन्द्र पद पर बैठे।

ययाति उपाख्यान

1. पुरुरवा से कुरु वंश की उत्पत्ति हुई। नहुंप-नन्दन ययाति का प्रकाश हुआ।

2. ययाति बड़ा प्रतापी हुआ और उसने नौ जातियों की नौ कन्याओं को ग्रहण किया।

3. शुक्र ऋषि की कन्या देवयानी को और देवकुल से नन्दिनी को प्राप्त किया।

4. असुरकुल से शर्मिष्ठा को और तक्षक नाग की कन्या

संतुष्टि को प्राप्त किया।

5. नागकुल की एक कन्या प्रदत्त हुई। इस प्रकार वह राजा भाग्यवान है।
6. मानव कुल के राजा बुद्धसेन की कन्या वृन्दावती को प्राप्त किया।
7. गोपल नृपति वीर ऋतुध्वज की युगावती नाम की एक कन्या थी।
8. उसको और निपाद कुल से रेवती को प्राप्त किया।
9. शबर राजा अजर की मृगाधी नाम की कन्या थी।
10. वह ययाति को प्रदत्त हुई ओर कोशल के ब्राह्मण राजा ने उन्हें एक कन्या दी।

11 पश्चिम सौराष्ट्र के राजा की कन्या कृष्णावर्ता थी।

12 इन्दु राजा प्रबालसेन की नवी कन्या उनको हठात् प्राप्त हुई।

13 इस प्रकार नौ जाति से नौ कन्याये प्राप्त होने से उनको नौ पुत्र पैदा हुए।

14 पहले पृथ्वी को नो भागा मे विभाजित करके राजा ने नौ पुत्रो में नौ खण्ड भूमि को बॉट दिया।

15 उनके ज्येष्ठ पुत्र महिपति पुरु थे। वे ओडिआ भार्या की सन्तान थे।

16 माता का भाग आड राष्ट्र मण्डल होने से यह राष्ट्र सब समय भारत खण्ड से जुदा था।

17 पुरु के नन्दन प्रवीर ने राष्ट्रपति होकर उस बारह राष्ट्रो मे विभाजित किया।

18 फिर एक खण्ड के सात खण्ड किये। इन सब खण्डो या मण्डल को परिदण्ड मे विभाजित किया।

19 प्रवीर-नन्दन मनसिवा नामक वीर ने अनेक दुप्टो को मारकर महिभार को हल्का किया।

20 प्रवीर नन्दन मनसिबा का पुत्र अनुपम चक्रवर्ती था।

21 पहले से उसके साथ सैन्य दल न होने पर भी अकेले अस्त्र धारण करके नौ खण्ड मेदिनी को प्राप्त किया।

22. धातु पुरुप अनुपम चक्रवर्ती ने अपने अनुसार सप्तद्वीप पृथ्वी का विधान किया।

23 अनुपम-नन्दन ईलीन वीर के दुप्यन्त नामक एक पुत्र हुआ।

24 मदर देश के राजा कौस्तुभ की दुहिता का नाम मन्दारवती था।

25 इस दुप्यन्त की महिमा कही नहीं जा सकती। उसने अस्सी सहस्र योजन पर्यन्त समुद्र को छीन लिया।

26 समुद्र के भीतर एक शुभ स्तम्भ स्थापित किया। जिससे वहॉ से समुद्र सीमा का उल्लंघन नहीं कर सका।

27 सन्तुप्ट होकर मोदवती कन्या ने उसे वरमाला दी। फिर शकुन्तला उनकी भार्या हुई।

28 दुप्यन्त-नन्दन वीर भरत ने समुद्र को और सात सौ योजन तक हटा दिया।

29 सात सौ योजन का एक खण्ड करके उसने पृथ्वी को खण्ड-खण्ड किया। इसलिए वह भरतखण्ड मेदिनी कही गयी।

30 इसी को ग्राम की सीमा मे विभाजित किया। लट्ठे से नापकर पृथ्वी को बॉटकर एकत्रित किया।

31 भरत-नन्दन भूमन्यु ने भूत-भविष्य ज्ञान से समस्त शास्त्रो की साधना की।

32 फिर इस मूल पृथ्वी को मण्डल के रूप मे खण्ड-खण्ड करके नव-सृष्टि का विधान किया।

33 भूमन्यु-नन्दन ने विरथ ने पात्र, अमात्य और योद्धा का विधान किया।

34 उनके पुत्र विभुर्तक्षय ने प्रत्यक्ष भाव से खण्ड–मण्डल के रूप मे राज्य का विभाजन किया।

शम्भुराण–उपाख्यान

1 विभुर्तक्षय-नन्दन शम्भुराण अधिपति ने सूर्य सहित समस्त दिग्पालो का वरण किया।

2 विश्वानल का विधान करके शम्भुराण महाप्रतापी हुआ।

3 सूर्य-नन्दिनी तपती की तेजमय मूर्ति को देवता सहन न कर सके।

4. उसको केवल सज्ञा ने जन्म दिया। कोई भी उसके पास नही जा सकता था।

5 आकाश में देव सूर्य ने दिग्पालों का वरण करके एक स्वयंवर सभा सम्पादित की।

6 तपती की स्वयंवर सभा में आकर देवता अपने-अपने स्थान पर बैठे।

7. नौ सागर और ब्रह्मर्पियों को साथ लेकर पद्मयोनि

ब्रह्मा ने मलय-मण्डल में प्रवेश किया।

8. चौदह कोटि शिवगणों को साथ लेकर रुद्र वृषभवाहन होकर वहाँ पहुँचे।

9. अलकापुरी से धनाधिप कुबेर सात पद्म सैन्य लेकर उपस्थित हुए।

10 अमर उपवन को छोड़कर देवराज इन्द्र ऐरावत पर चढ़कर उपस्थित हुए।

11. चौंसठ पुत्रों और देवताओं को लकर सुरनाथ इन्द्र सूर्य की सभा में प्रविष्ट हुए।

12 उनचास पवन, यक्ष, किन्नर और कालगणों को लेकर यम ने प्रवेश किया।

13 मधुकर मलय, अनन्त वसन्त, करुणाकर गगनपति सूर्य के पास गये।

14 मण्डल चक्रवती नरपति वज्र ने घोर गर्जन करके स्वयंवर सभा मे प्रवेश किया।

15 मेघमाला के साथ नृपति हिमालय ने पर्वत पर प्रवेश किया।

16 गन्धर्व, यक्ष, किन्नर, सुरसिद्ध मुनि और देवताओं को लेकर वह स्वयवर सभा अनुष्ठित हुई।

17 अनादि सूर्यदेव ने सभी देवताओं का इस स्वयंवर सभा में स्वागत किया।

18 सभी देवता आसीन हुए। विनम्र भाव से सूर्य ने सबसे कुशल-क्षेम पूछा

19 मेरी इस दुहिता तपती के स्वयंवरण के लिए ही मैंने आप सबको निमन्त्रित किया।

20. मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि यह जिसके कण्ठ में पुष्प माला डाल देगी, वह इसका पति होगा।

21. देवतागण विविध वेशभूषा से युक्त होकर पद्मासन मे बैठ गये।

22. कर्ता ने कहा हे–तपती ! मैंने तुम्हारे लिए सभी देवताओं का वरण किया।

23. तुम्हारे चित्त में जिसके प्रति इच्छा है, उसके हृदय में पारिजात पुष्प-माला डालो।

24. पिता की बात सुनकर माला लेकर तपती सुरनाथ के पास गयी।

25. तपती के अग्नि के तेज सी ज्वाला से इन्द्र भय से दूर हट गये।

26. जब इन्द्र देवता दूर हो गये, तब तपती माला लेकर कुबेर के सामने पहुँची।

27. संज्ञा-पुत्री तपती जब पास आयी तब उसके तेज से महाज्वाला उत्पन्न हुई।

28. कुबेर उस सभा में न रह सके। उठकर अपने राज्य में लौट गये।

29 सूर्य-नन्दिनी माला लेकर चली और सामने पदम्योनि को देखा।

30 ओह ! तपती का तेज महाग्नि की तरह था। हंस पर आरूढ़ होकर पिता अन्तर्धान हो गये।

31. दिनकर-कुमारी पितामह को देखकर माला लेकर वहाँ पहुँची, जहाँ त्रिपुरारि आसीन थे।

32 सदाशिव के पास जाने से उनके रुद्र-शरीर में महा-ज्वाला लगी।

33 देव पंचानन भय से दूर हट गये। शिवगणों को लेकर वे कैलाश को चले गये।

34 पुनः तपती एक माला लेकर हिमवन्त के पास पहुँची।

35. हिमवन्त उसे देखकर भयभीत होकर अपने स्थान से उठकर शून्य पथ में चले गये।

36. ओह ! तपती के तेज से देवता गण भाग गये। देवलोक में अपने-अपने आवास में पहुँचे।

38. यदि दुहिता पिता के गृह में रजवस्ला होगी तो पितरों को नर्कगति मिलेगी।

39. सूर्यदेव के इस प्रकार विचार करते-करते शम्भुराण राजा एक घोड़े पर चढ़कर वहा पहुँचे।

40. सूर्य ने कहा कि हे तपती ! सुनो । ये महाराज सोमवश के अधिपति हैं।

41 इनके पूर्व-पुरुष देवलोक में प्रधान थे। माला लेकर इनके पास जाओ।

42. पिता की वाणी से उस मृगनयनी सुन्दरी ने माला और अर्घ्य लेकर प्रवेश किया।

43. शम्भुराण अश्वारूढ़ थे। माला लेकर तपती सामने पहुँची।

44. नृपति के हृदय पर एक पुष्पमाला डाल दी। शम्भुराण ने उसे हाथ से पकड़कर गोद में बैठाया।

45. अंशुमाली ने यह देखकर परम आनन्दित होकर 'साधु-साधु शम्भुराण' कहकर जयध्वनि की।

46. राजाधिराज सूर्य ने महा आडम्बर से यथारीति तपती को प्रदान किया।
47. शम्भुराण ने तपती के साथ विलास किया। उससे कुरु नामक पुत्र पैदा किया।

शान्तनु-उपाख्यान

1. इसके बाद कुरुवंश जगत्प्रसिद्ध हुआ। कुरु की भार्या भानुमती थी।
2. तब इससे पार्थिव नरपति पैदा हुए। इस प्रकार सोमवंश की उत्पत्ति हुई।
3. पार्थिव की भार्या चित्रोत्पला थी, जिसके पुत्र राजर्षि शान्तनु थे।
4. शान्तनु महाराज रुद्र की सेवा करके सप्तद्वीप के एकमात्र चक्रवर्ती राजा हुए।
5. काषाय, कौपीन और जटा धारण करके उन्होंने अत्यन्त भक्ति से काशी 'विश्वनाथ' की सेवा की।
6. सोम के रूप में शिव ने गो-हत्या दोष किया। इसीलिए हटकेश्वर नाम धारण करके पाताल लोक में एक कैलाश पर्वत की रचना की।
7. शिव की सेवा करते हुए शान्तनु वहाँ रहे। पाताल लोक से वे मृत्युलोक मे नहीं आये।
8. पाताल में रहकर वे मत्युलोक की ओर दृष्टि देते थे। दिव्य-चक्षु से राज्य पर आने वाले अनिष्ट को देखते थे।
9. दैत्य और दानव जब अनीति करते थे, तब वे पाताल से सर-संधान कर मत्युलोक के दानवों का विनाश करते थे।
10. इस प्रकार उन्होंने शिव की सेवा करके सप्तद्वीप को क्षत्रिय-रहित करके एकछत्र राज्य किया।
11. सप्तद्वीप में उन्होंने मन्त्रपूत सात बाणों को भेजा, जो सुदर्शन चक्र की तरह सप्तद्वीप में घूमते रहे।
12. उनके सैन्यबल को जो निर्बल करता उसका शिरच्छेदन करते थे। इस प्रकार वे सत्यवादी सप्तद्वीप का सत्य से नियन्त्रण करते थे।
13. अहो ! सोमवंश के राजत्व में प्रजा कृषि-उत्पादन का सोलहवाँ भाग मालगुजारी के रूप में देती थी।
14. इन्द्र देवता के साथ उनकी विशेष प्रीति थी। इसीलिए कृषि-भूमि में मेघ रात में बरसते थे।
15. सन्तान की चिन्ता न होने से सभी प्रजा आनन्द से रहती थी। इसलिए सोमवंश का वह राजा सार्थक था।
16. निर्धात के घर में धवल, सुन्दर और शुक्लाम्बर परिहित शरीर लेकर गंगा पैदा हुई।
17. निर्धात ने अनादि निरंजना कन्या का तेरह वर्ष तक पालन किया।
18. निर्धात ने कहा—हे बिटिया ! मैं क्या करूँ...तुम कुमारी रूप हुईं। मैं तुझको किसे दूँगा ?
19. हे देवी गंगा ! तू बड़ी धैर्यशाली है। तुझे देखकर मुझे बड़ा डर लगता है।
20. गंगा ने कहा—हे मेरे पिता ! आप सुनें। मेरे पति रुद्र देवता हैं।
21. वे त्रिशूलधारी देव मेरे प्राणनाथ हैं। केवल वे ही मेरा हठ सह झेल सकते हैं।
22. निर्धात ने कहा—हे बिटिया धवललांगी ! सुनो । परमयोगी रुद्र ने ब्रह्महत्या की।
23. अनेक तीर्थ करके विश्वनाथ पाताल में बड़े दोषी होकर बैठे हैं।
24. गंगा ने कहा—हे पिता ! मैं तुम्हारे घर रहूँगी। जब वे विश्वेश्वर आयेंगे मैं उनका वरण करूँगी।

शान्तनु-विवाह

चित्रवीर्य, विचित्रवीर्य और भीष्म का जन्म

1. इस प्रकार पिता के घर में रहती हुई कन्या गंगा कुमारी लड़कियों के साथ कौतुकपूर्वक खेला करती थी।
2. पिता के घर में जब हजार वर्ष बीत गये, तब कन्या को देखकर निर्धात को काफी दुःख हुआ।
3. हे बेटी ! तुम्हारा स्त्रीजन्म निष्फल हुआ। मैं लांछित हुआ। मैं देवताओं को स्वयंवर में बुलाकर तुम्हारा वरण करवाऊंगा।
4. जिसको चाहो उसे माला डालकर अपनी मनोवांछा पूरी करो।
5. गंगा ने कहा—हे तात ! तुम विमुख मत होओ। रुद्र

देवता के अलावा मेरा कोई अन्य प्रिय नही है।

6 वे मेरे बल्लभ हैं और मै उनकी नारी हूँ। अनेक जन्मो से सदाशिव की मनोहारिणी हूँ।

7 निर्धात ने कहा कि हे बेटी ! मै तुमसे कहता हूं कि तुम्हारी इस अवस्था से मुझे अनेक दोष लगते है।

8 जब अविवाहित कन्या पिता के घर मे रजस्वला होती है तो इक्कीस पीढ़ियो तक पूर्वजो का गात नहीं मिलती।

9 गगा ने कहा कि हे पिता ! अनेक युग तक मै [illegible] ही [illegible] स्वभाव स रहूँगी।

10 दुहिता की बातो स निर्धात अत्यन्त प्रसन्न हुए। जाह्नवी पिता के घर रही।

11 गगा के जन्म मे सत्ययुग बीत गया परन्तु [illegible] म भेट नही हुई।

12 [illegible] हजार वर्ष तक सत्ययुग म [illegible] बाल अवस्था म रहती रही।

13 [illegible] हजार वर्ष [illegible] बीत गया। तथापि गगा के साथ महेश्वर की भेट नही हुई।

14 [illegible] युग के अन्त तक [illegible] शान्तनु [illegible] रहे।

15 सदानन्द [illegible] शान्तनु [illegible]।

16 शिव ने कहा कि तुम स्वर्ग [illegible] करके सुन्दर भुवन को देखो।

17 तुम अभी स्वर्ग और [illegible] म जाकर समझो कि किस स्थान पर देव कैसे हैं।

18 सदाशिव की बात से रुद्र अवतार लेकर गोभव[illegible] शान्तनु महर्षि चलते है।

19 एक बैल पर चढ़कर सिर पर जटा धारण करके श्वेत-वर्ण शरीर से वे त्रिपुरारि जैसे दिखाई देते है।

20 आकाश पथ म उन साभ[illegible] चक्रवर्ती के जाने के समय एक लाख डमरू आकाश मे बजने लगे।

21 उनके एक हाथ मे पिनाकी की तरह धनुष और दूसरे हाथ में त्रिशूल विराजमान है।

22 भस्म रमाये हुए, हृदय पर रुद्राक्ष माला धारण किये हुए उनका श्वेत शरीर प्रत्यक्ष सदानन्द की तरह दिखाई दे रहा था।

23 इस प्रकार आकाश मे वे दिग्विजय कर रहे थे। उनको ईश्वर समझकर देवराज ने उनकी पूजा की।

24 आवले के वृक्ष के नीचे गगा तपस्यारत थी। विभोर होकर उनका चित्त शान्तनु से लग गया।

25 इसे देखकर निर्धात ने कहा कि तुम शान्तनु की भार्या बनो।

26 [illegible] प्रसन्न हुई और हाथ मे माला लेकर शान्तनु के गले म डाल दी।

27 जल और [illegible] लेकर राजा ने सकल्प किया कि [illegible] म दुहिता प्रदान करूगा।

28 निर्धात ने यह सत्य, सत्य है, सत्य है तीन बार कहकर गोद म बैठाया।

29 अनेक प्रकार से पूजाविधि पूरी की और दुहिता के लिए मन्त्र [illegible] किया।

30 शान्तनु [illegible] मे [illegible]। दुर्वासा ऋषि वहाँ पहुँच गए।

31 [illegible] मास [illegible] तिथि का सामवार को हस्त नक्षत्र के तृतीय प्रहर मे [illegible]।

32 [illegible] नामक योग म [illegible] नामक क्षण म, कन्यालग्न म, तारा-चन्द्र शुद्धि की शुभ वेला मे [illegible]।

33 इस समय स्वीकार होने के बाद दुर्वासा ने दोनो कन्या [illegible]।

34 पुरोहित ने कहा कि हे [illegible] गोत्र और पिता-माता का नाम लो।

35 शान्तनु ने कहा कि मै साभ[illegible] हूँ। मेरे प्रपितामह शम्भुराग नृपति है।

36 शम्भुराग के पुत्र करु नरनाथ है। उनके पुत्र पार्थिव है।

37 मै पार्थिव व्रती का पुत्र हूँ।

38 शान्तनु के मुख से ऐसी बात सुनकर गगा देवी विस्मित हुई।

39 गगा ने कहा—हे पिता ! तुमने गलत काम किया। यह ईश्वर विश्वनाथ नही है।

40 ईश्वर देवता का कुल गोत्र नही होता और उसके फिर पिता, पितामह और प्रपितामह कहाँ !

41 जो स्वामी ईश्वर है उनका कुल, मार्ग और गोत्र नही

है। सब निश्चल है।

42 यह कहकर गंगा पिता की गोद से उठ गयीं। निर्धात ने कहा—हे बेटी ! क्यों मना करती हो ?

43. मेरे मन में इच्छा थी कि मैं ईश्वर का वरण करूँगी। लेकिन दो युग तक दु.ख सहने पर भी मेरी मनोकामना पूरी नहीं हुई।

44 निर्धात ने कहा—हे बेटी ! जब मेने सकल्प किया था तब तुमसे पूछा था।

45 तुम्हारी स्वीकृति के बाद ही मैंने संकल्प किया। अब संकल्प तोडने का दोष मुझे लग रहा है।

46 यह धवलागी पिता की बात सुनकर शीघ्र लौटकर उनकी गोद में बैठ गई।

47 गगा ने कहा—हे शान्तनु ! सुनो। मेरे बल्लभ पचानन है।

48 ईश्वर जानकर मेने तुमको सम्मति दी। मेरे पिता ने अनजाने मे तुम्हे सकल्प किया।

49 अपने मन मे विचार करके कहो कि तुम मेरा हठ सह सकोगे।

50 स्वयं ईश्वर देवता सह न सके तो ब्रह्मा के कमण्डल में मुझे देखकर चले गये।

51 पितामह मेरे हठ को सह न सके तब उन्होने मुझे वामन नारायण विष्णु के पैरो में गिरा दिया।

52 वामन देवता जब मुझे नही सह सके तब मुझे मरु के कोटर मे छोड़ गये।

53 इसीलिए मेरी अधोगति हुई। मेने गृहवास के लिए इच्छा की।

54 मे अपने रूप को छिपाकर निर्धात के घर मे पैदा हुई। त्रिलोचन को न देखकर मै दुःखी हुई।

55 मै जब तुम्हारी मनोहारिणी होऊँगी, तब मुझे सम्भाल सकोगे न ?

56 शान्तनु ने कहा—तुम बडी जजाली हो। पति पत्नी का हठ नही सहेगा ?

57 यदि पति का हठ पत्नी नही सहेगी तो पति-पत्नी का गृहवास कैसा होगा।

58 हे नृपति ! मै साफ-साफ तुम्हे कहती हूँ कि मै पगली और विद्रोही हूँ।

59 अनेक दोष करने पर क्रोध न करियेगा और दस दोष करने को मेरा अपराध न मानियेगा।

60. मेरी भर्त्सना मत करना। गाली मत देना। मेरे मनोनुकूल आज्ञा का पालन करना।

61 मुझे सर्वथा प्रेम से गंगा कहोगे। जब क्रोध से गांगी कहोगे तो मैं नहीं रहूँगी। मेरा व्रत पूर्ण हो जायेगा।

62. शान्तनु ने कहा कि यही मेरा संकल्प है कि अनेक दोष करने पर भी सहूँगा और तुम्हारा भक्त होऊँगा।

63 इस प्रकार सत्यव्रत शान्तनु ने सत्य वाक्य कहकर धवलागी साध्वी को प्राप्त किया।

64 सत्य-रक्षा करके निर्धात ने आडम्बर के साथ कन्या दान किया।

65 वर-कन्या घी का हवन करते हैं। इसी प्रकार विवाह का विधान हुआ।

66 इस प्रकार रात्रि होने पर मधु-शय्या मन्त्र के अनुसार शय्या-सुसज्जा हुई।

67 पाच-सात दिन बिताकर व अपने देश गये। वारुणावन्त पर्वत के पास पहुंचे।

68 यमुना के किनारे अपने राज्य मे रहे। शान्तनु महाराज गगा की सेवा करने लगे।

69 इस प्रकार प्रेम बहुत बढ गया। उनका गगा के साथ मानसिक मिलन हुआ।

70 हजार वर्ष पर्यन्त बीत गये। महाचचला ने ऋषि के साथ झझट मचाया।

71 नियम-संयम के दिन वह रति बढाती। वह झंझट वाली बारह-व्रत के समय सुरति माँगती थी।

72 ऋषि के बहत्तर दिन के उपवास को उसने प्रीति लगाकर तोड दिया।

73 ऋषि का केवल श्री एकादशी व्रत ही रहा। उसको भी छोड़ने के लिए उसने खूब झंझट किया।

74 मकर महीने के शुक्ल पक्ष की एकादशी का अनेक विधि से महर्षि पालन करते थे।

75 शान्तनु के इस कठोर व्रत-भाव को देखकर उस धवल-मुखी ने ऋषि के साथ प्रेम भाव बढ़ाया।

76 धवलागी ने कहा—हे सोमवशी ! सुनो। तुम तो बड़ी निष्ठा से दिन-रात एकादशी का पालन कर रहे हो।

77 शान्तनु ने कहा—हे सगिनि ! सुनो। श्री एकादशी व्रत मुक्ति का कारण है।

78. आत्मा, नारायणात्मा और महाब्रह्म है। संसार-सागर के लिए धर्म की नौका है।

79. राग, क्रोध, मोह, अहंकार ये सब संसार की रचना हैं। सांसारिक धारणा रस्सीहीन बन्धन है।

80. ये सब जितने राग, क्रोध, मोह और हिसा हं वे सब आकारहीन संसार सागर के जल में ध्वस्त हो जाते हैं।

81. शान्तनु कहते हैं कि हे प्रिय सुनो। मेरा और तुम्हारा एक ही भाव से सत्याश्रयी होना उचित हे।

82. हे सगिनी ! तुम मेरे साथ अब एकादशी व्रत करो। हम दोनों बैकुण्ठ का वास करेंगे।

83 इस एकादशी व्रत की ऐसी महिमा ह। इसका पालन करने से अवश्य ही बैकुण्ठ मिलेगा।

84 इस वचन को सुनकर उस धवलांगी ने कहा—तुम पूर्णरूपेण परम योगी नहीं हो।

85 तुमने पुन: ससार के लिए राज्य भार को ग्रहण किया और वशपरम्परानुसार क्षत्रिय वृत्ति को नहीं छोडा।

86 राज-पद अत्यन्त कठिन कार्य ह। क्षत्रिय वृत्ति का आचरण करने पर तपस्वी धर्म कैसे रहा ?

87 हे ऋषि, यतिराज्य का उपकार जहाँ राजनीति करती है, वहा तुम्हारे उपवास का अर्थ क्या है ?

88 जो राजा राज्य की चिन्ता करता ह, उसका उपवास उचित नहीं है। क्या नरपति दण्ड-साज कर दिग्विजय नहीं करेगा !

89 दूसरे राज्य को जीतकर उसे ग्रहण करना चाहिए। वीरत्व ओर समारोह के साथ अपनी सेना की सज्जा करनी चाहिए।

90 युद्ध-यात्रा के द्वारा दुष्टों का निवारण करना चाहिए। सन्तजन का पालन और तपोधन का उद्धार करना चाहिए।

91. हे महर्षि ! तुम महाभिज्ञ हो। राजपद पर बैठकर क्यों एकादशी का पालन करते हो ?

92. जाह्नवी ने असह्य वचन कहे। इस महाराज्य मे प्रवेश करके क्यों व्रत राज की सेवा करते हो।

93 गंगादेवी हर समय धर्म को नष्ट करना चाहती हैं। ऋषिमणि उनके चरित्र की माया को समझ नहीं सकते।

94. महासती ने अनेक अनुचित बातें कहीं। ऋषि के साथ प्रीति बढ़ाई।

95 दिन-रात रमण करने से मानसिक अशान्ति होती है। फिर भी निरन्तर रति-क्रीड़ा में समय बिताते हैं।

96 अनेक प्रकार से चाटु वाक्य कहकर गंगा ऋषि की गोद पर अधिकार करके बैठ गयी।

97 सहसा ऋषि को नग्न कर दिया। जाह्नवी का रूप देखकर ऋषि विह्वल हो गए।

98. इस झंझटी की इच्छा के अनुसार एकादशी व्रत छोड़कर शान्तनु राजा ने शृंगार-इच्छा की।

99 इस प्रकार अत्यन्त प्रीति बढ़ी। दिन-रात रमण करके अशान्त हुए।

100 इस समय प्रीति और अधिक बढ़ी। सहज रूप में दो हजार वर्ष बीत गये।

101 इसी प्रकार जाह्नवी चपला और दुष्ट-प्रकृति की थी। स्थिर होकर रहने मे उसे शान्ति नहीं मिलती।

102 इसके बाद बाहर जाने की इच्छा की। इस प्रकार शान्तनु ऋषि को अनेक दु:ख दिये।

103 समयानुसार अन्न-जल नहीं देती है। सारे दिन-रात ऋषि की इच्छानुसार वह कुछ भी नहीं करती थी।

104 ऋषि एक समय ऋषिधर्म छोड़कर शृंगार में प्रविष्ट हुए। उस समय उसने देह-दान न करके उन्हें धक्का दिया।

105. रमण-मन्दिर मे शान्तनु ने विभिन्न रति-बन्ध में केलि-क्रीडारत मिथुन मूर्ति की खुदाई की ओर अंकन किया।

106 गंगा को सम्बोधित करके अनेक चाटु-वाक्य कहे। उस मानिनी ने ऋषि से बातें न कीं।

107 ऋषि ब्रह्मचारी रति-शास्त्र पुराण गंगा को समझाते हैं। परन्तु शान्तनु के रहते गंगा अन्त:पुर में प्रवेश नहीं करती।

108. उस अबला तरुणी ने ऋषि के दण्ड, कमण्डल, स्रुव, शुव और प्रोक्षणी को लाकर चूल्हे में जला दिया।

109 ऋषि के काषाय वस्त्र और कुश की आटी को प्रज्वलित आग पर रखकर भस्म कर दिया।

110 इस तरह अनेक प्रकार से उन्हें विमुख किया। गृहवास के लिए ऋषि ने अनेक दु:ख सहे।

111. भूख के समय जान-बूझकर अन्न नहीं देती है। भूख न

रहने पर अनेक प्रकार से जिद करके भोजन कराती है।

112 अनेक वेश भूषित होकर ऋषि शृंगार के लिए पास बैठे।

113 पीछे से आकर जब शान्तनु ने उसे आलिंगन में पकड़ा, तब वह महाबला युवती घर से बाहर निकल गयी।

114 भागकर अनेक युवतियों के समूह में घुस गयी। काम चेष्टा से महात्मा अत्यन्त व्याकुल हुए।

115 दीवाल में जो नग्न नारी की मूर्तियाँ थीं उन्हें ऋषि ने कामातुर होकर चुम्बन किया।

116 हृदय से लगाकर आलिंगन करके उस चित्र मूर्ति का रमण किया।

117 ओह ! यह जो काम नामक पुरुष है, उसके पास जाने से वह अवश्य दुःख देता है।

118 पण्डित हो या मूर्ख हो, काम के शराघात को कोई भी नहीं सह सकता।

119 आसक्त होकर महात्मा ने पुत्तलिका का रमण किया। शीघ्र ही काम से आक्रान्त होकर मूर्च्छित हो गये।

120 पुत्तलिका में रमण करके मुनि ने वीर्यपात किया। दीप्त और अमोघ वीर्य से मुनि का पुत्र पैदा हुआ।

121 एक बलवान और सुन्दर पुत्र उत्पन्न हुआ। उसे देखकर तपोवन्त ने अपनी गोद में उठा लिया।

122 चित्र पुत्तलिका से उत्पन्न होने के कारण मांसवशी गंगा ने उसका नाम चित्रवीर्य रखा।

123 पुत्र को लेकर महात्मा बाहर आए। गंगा से छिपाकर उन्होंने उसे मत्स्यगंधा की गोद में दे दिया।

124 गंगा की ना जानकारी में तुम इसका प्रतिपालन करो। पराशर महामुनि ने पुत्र को गोद में लिया।

125 मत्स्यगंधा ने यत्नपूर्वक पुत्र का पालन किया। अयोनिजात चित्रवीर्य बढ़ने लगा।

126 वे तपोधन गंगा के साथ मिलन के लिए चिन्ता करने लगे। किन्तु भय से उससे कुछ न कह सके।

127 शान्तनु और पराशर को बैठाकर मत्स्यमती ने आश्वासन दिया।

128 हे पुत्र शान्तनु, मेरी बात सुनो। यह संसार धर्म से ही चलता है।

129 हम तुम्हारे माता-पिता हैं। हमसे न पूछकर तुमने क्यों जंजाली गंगा से विवाह किया ?

130 हे बेटा ! उसका त्याग करो नहीं तो अनेक दुःख पाओगे और तुम्हारा प्राणनाश होगा।

131 जो पुत्र गुरुजन की बात नहीं मानता उसका वंशनाश होता है और उसकी जीवन-नौका गहरे जल में डूब जाती है।

132 जाह्नवी रुद्र देवता की है। ईश्वर देवता को भी अनेक प्रकार से अपने बस में रखती है।

133 शान्तनु ने कहा—हे माँ ! तुम गुरुजन हो। तुम्हारी बात न मानने से दोष लगेगा।

134 माता के वचन न मानने से आयु क्षीण होती है। पिता के वचन तोड़ने से धर्म का नाश होता है।

135 माता की बात सुनकर शान्तनु ने कहा—हे माँ ! गंगा को बिना देखे मेरा दिन नहीं बीतता।

136 तुम माता पिता मेरे गुरुजन हो किन्तु गंगा के लिए मैंने तुम लोगों की उपेक्षा की।

137 एस प्रिय वचन बोलकर गुरुजन की बात टाल दी। शान्तनु राजर्षि गंगा के सामने विनीत हुए।

138 एक दिन गंगा ने पूछा—हे महाज्ञाता शान्तनु ! तुम जिस रुद्र के भक्त हो

139 वह विश्वनाथ कहाँ है, सोचकर मुझे बताओ और मुझे सन्देहमुक्त करो।

140 शान्तनु ने कहा—पाताल लोक में हटकेश्वर कैलाश पर्वत पर त्रिलोचन विराजमान हैं।

141 जाह्नवी सुनकर परम आनन्दित हुई। भले ही इसका घर जल जाय, मैं तो चली जाऊँगी।

142 वह अनवरत रोती हुई पेट के बल सोई रही। तीन दिन में एक बार भी भोजन बनाकर नहीं दिया।

143 पास में बैठकर मुनीश्वर शान्तनु गंगा के शरीर को सहलाते हुए समझाते हैं—

144 ललाट को सहलाते हैं और पाँव दबाते हैं। जोर से आलिंगन करके मुनि आह्लाद से केलि करते हैं।

145 जिस समय तपोवन्त ने बलपूर्वक उसका आलिंगन किया, उस समय उसने मुनि के केश को पकड़कर बहुत मारा।

146 सिर पर मुष्टियात किया और पद-प्रहार किया।

नख-दन्त घात से शरीर को विदीर्ण किया।

147 ऋषि के कपडो को फाडकर खण्ड-खण्ड कर दिया। माला, वदशास्त्र, पोथी को नोचकर कुएं मे डाल दिया।

148 इस प्रकार देवी गगा न मुनि की अनेक प्रकार से दुर्दशा की। विध्वस होने वाले वृद्ध कहकर हृदय-विदारक गाली दी।

149 खूब बुरा बात बोलता है और [illegible] गाली देती है। शान्तनु ने [illegible] गगा [illegible] तुम इतना [illegible] [illegible] हो।

150 [illegible] तुमने [illegible] किया। सारे संसार के लोग तुम्हे [illegible] [illegible] है।

151 [illegible] [illegible] करता है [illegible] [illegible] [illegible]।

152 तुम पाप [illegible] [illegible] [illegible] गगा [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]।

153 [illegible] शान्तनु [illegible] [illegible] [illegible] थी। [illegible] [illegible] था।

154 [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]।

155 [illegible] [illegible] है। यह बात [illegible] [illegible]।

156 [illegible] [illegible] क्यो अकारण [illegible] [illegible]।

157 [illegible] [illegible] शान्तनु ने [illegible] किया। फिर भी [illegible] नही [illegible]।

158 इस प्रकार बहुत काल तक शान्तनु गगा न बदाश्त किया। एक समय गगा गर्भवती हुई।

159 शान्तनु बहुत आनन्दित हुए। अब [illegible] गर्भवती का शरीर कष्ट सहेगा।

160 पुरोहित से पूछकर कोख पूजा की उत्सव किया गया। दस मास पूर्ण होने पर गर्भ भारी हुआ।

161-162 कन्या मास मे शुक्ल पक्ष की नवमी तिथि को श्रवण नक्षत्र के बृहस्पतिवार को पन्द्रह घडी रात्रि म गगा के गर्भ म आसानी से एक पुत्र अवतरित हुआ।

163 मकर मास के श्रवण नक्षत्र मे गण्डमूल नक्षत्र नही होता। इसलिए शान्तनु पुत्र के मुख को देखने के लिए भीतर घुसे।

164 सुवर्ण के पात्र म अन्न लेकर अन्त पुर म महामुनि ने गमन किया।

165 शान्तनु [illegible] [illegible] न उन्हे देखकर पुत्र को [illegible] मे [illegible] दिया।

166 नारायण नारायण कहकर [illegible] शान्तनु [illegible] घर से बाहर [illegible] गये।

167 क्रोध [illegible] [illegible] [illegible] तो [illegible] भाव स पुन क्रोध का सवरण किया।

168-169 जिस माता ने दस मास तक पुत्र को धारण किया [illegible] गर्भ [illegible] व्यथा का त्याग कर सकती है [illegible] [illegible] इस प्रकार [illegible] करते वे [illegible] बोले।

170 [illegible] [illegible] से [illegible] बाहर निकल जाएगा। [illegible] [illegible] इसी क्षण टूट जायगा।

171 यह कहकर [illegible] [illegible] कर्म करके लौटकर गगा के पास पहुचे।

172 अनेक प्रकार से पत्निका की सेवा की। किन्तु उसने [illegible] के साथ कलह मचाया।

173 पुन शान्तनु को अपने पास नही आने दिया। काम सवरण करके ब्रह्मचर्य न छोड दिया।

174 विभिन्न प्रकार से चाटुवाक्य कहने पर भी उसने क्रोध को शांत न देकर [illegible] [illegible] दिया।

175 [illegible] [illegible] [illegible] होकर चित्रपुत्तलिका के साथ काल [illegible]।

176 मुख का चुम्बन करके उन्होने विचित्र ढग से रति की। अमोघ वीर्य भूमि पर गिर गया।

177 शाप का अमोघ वीर्य नष्ट नही हुआ। उस बिन्दु से एक पुत्र उत्पन्न हुआ।

178 शान्तनु न अपने पुत्र को गोद मे उठा लिया। उसका नाम आह्लाद म विचित्रवीर्य रखा।

179 भयभीत होकर गगा स छिपाकर अर्द्ध रात्रि मे पुत्र को लेकर सत्यवती को सौप दिया।

180 अगस्त्य कहते है—हे योगेश्वर ! सुनो । चित्रवीर्य और विचित्रवीर्य अयोनि-अवतार ही हैं।

181 पुनः गंगा के साथ सत मिलन हुआ। एक बार फिर गंगा गर्भवती हुई।

182. ओह ! मिथुन शुक्ल पक्ष पूर्णिमा रात्रि—उत्तराषाढ़ा नक्षत्र मे एक पुत्र उत्पन्न हुआ।

183 रविवार—उत्तराषाढा नक्षत्र मकर राशि के योग मे पुत्र प्रकाशित हुआ।

184 पुत्र को देखकर तपस्वी के प्रसन्न होने पर गंगा ने फिर पुत्र के मुण्ड को काट दिया।

185 यह देखकर तपस्वी आश्चर्यचकित हुए और नारायण-नारायण कहते हुए बाहर निकल गये।

186 आत्मज के वध से वे काफी व्यथित हुए। उन्होंने क्रोध से भर्त्सना करने का विचार किया।

187 पुनः ऋषि ने सोचा कि इस गर्भधारिणी माता ने अनेक कष्टों के साथ पुत्र को गर्भ में धारण किया।

188 उसने जब अपने हाथ से पुत्र का नाश किया तो मेरा क्रोध करने में क्या लाभ !

189 यह कहकर महात्मा ने क्रोध का त्याग करके गंगा को बहुत प्यार-दुलार किया। मकर-मास कृष्णपक्ष प्रतिपदा तिथि सोमवार श्रवण नक्षत्र में तपस्वी समुद्र स्नान के लिए गंगा को साथ लेकर गये।

192 सत्यवती और पराशर चित्रवीर्य और विचित्रवीर्य को लेकर सिन्धु स्नान के लिए गये।

193 पराशर महर्षि समुद्र स्नान समाप्त करके बाल कुमारों को लेकर चन्द्रभागा नदी में जाकर स्नान कर रहे थे।

194 इस समय शान्तनु के पद्मवन में जल उद्यान से दो कुमार निकले।

195 उन्होंने पिता-माता कहकर शान्तनु के दोनो पैरों को छू लिया। धवलांगी यह देखकर विषण्ण हुई।

196 गंगा ने पूछा—ये किसके लड़के है ? तुम्हारे लड़के की तरह लगते है।

197 इस पर शान्तनु ने कहा कि ये मेरे पुत्र नहीं हैं। पुनः लड़कों द्वारा पिता कहने पर उन्होंने लड़कों को नहीं मारा।

198 उस तपस्विनी ने मन में विचार करके क्रोध से कहा कि ये दोनो तुम्हारे ही पुत्र हैं।

199 शान्तनु ने कहा—मैं कहाँ से पाऊँगा। तुम्हारे अलावा मेरी कोई भार्या नहीं है।

200 धवलांगी ने सुनकर क्रोध किया। वह स्थिरबुद्धि सम्पन्ना थी और भूत-भविष्य को जानती थी।

201 क्रोध में शान्तनु से कहा कि जब तुमने मुझसे छिपाया तो ये तुम्हारे दो पुत्र अपुत्रिक होकर मर जायेंगे।

202 धवलांगी द्वारा यह शाप दिये जाने पर पराशर दोनो बच्चों को शीघ्र लेकर चल दिये।

203 यमप्रशस्थ स्थान पर पराशर पहुँचे । शान्तनु स्नान करके अपने राज्य मे लोटे।

204 गंगा के साथ शान्तनु ने काफी प्रीति की। एक समय गंगा गर्भवती हुई।

205 प्रीति मिलन के समय तपस्वी ने उससे पूछा—हे प्रिय वल्ली ! क्या पुत्रों का नाश करना है ?

206 गंगा ने कहा कि मैं स्वभाव से दुष्ट हूँ। पुत्र के लिए भी मेरी मनोभावना नहीं है।

207 208 तुला मास कृष्ण पक्ष तृतीया तिथि चन्द्रवार रोहिणी नक्षत्र में तृतीय प्रहर के समय गंगा के गर्भ से पुत्र उत्पन्न हुआ। पुत्र दर्शन के लिए शान्तनु ने प्रवेश किया।

209 उन्हें देखकर गंगा ने कटारी उठा ली। शान्तनु ने कहा—गंगा ! रुको-रुको।

210 अति विराग से देवी ने हाथ में कटारी लेकर कुमार को काट दिया।

211 शिव-शिव कहकर वे तपचारी लौट आये। संकल्प भग्न होने के भय से कुछ नहीं कहा।

212 फिर गंगा गर्भवती हुई। मदनमूर्ति एक पुत्र उत्पन्न हुआ।

213 ऋषि को देखते ही उसने शिशु का शिरच्छेद किया। शान्तनु ने कहा कि यह बड़ी प्रमादी है।

214 इस प्रकार गंगा के छः पुत्र उत्पन्न हुए और ऋषि के देखने पर गंगा ने उन सबका नाश कर दिया।

215 एक समय फिर वह गर्भवती हुई। शान्तनु महायति ने कुछ नहीं कहा।

216. कात्यायनी के द्वारा दस मास तक गर्भभार सहन न कर सकने पर महामुनि ने आलिंगन करके आदर से पुकारा।

217. गंगा ने सोचा कि मैंने शान्तुन को अनेक कष्ट दिये। आत्मा से उत्पन्न पुत्रों का भी विनाश किया।

218. इतना दोष करने पर भी कभी उन्होंने क्रोध नहीं किया। भर्त्सनापूर्वक गांगी नहीं कहा।

219 संकल्प के कारण छोड़कर नहीं जा सकती हूं। सत्य का उल्लंघन करके यहां से कैसे जाऊं।

220 इस बार इस पुत्र को अवश्य मारूंगी। भर्त्सना न करने पर अपना गला काट लूंगी।

221 इस प्रकार सोचते-सोचते गर्भ भारी हो गया। महा बलवान पुत्र का भार सहन नही कर सकती।

222 माहेश्वरी ने कहा—हे मुनि ! इस बार बड़ा बलवान पुत्र गर्भ में है।

223 ऋषि ने कहा—बलवान हो या कि सुन्दर हो, अब उसकी प्राप्ति नहीं होगी तो जन्म होना और न होना एक ही है।

224 यह कहकर शान्तनु सोचते हैं कि इस गर्भालसा सुन्दरी के दस मास पूर्ण हुए।

225-226 वृश्चिक मास कृष्ण पक्ष प्रतिपदा रोहिणी नक्षत्र भृगुवार सिद्ध योग वाणिज्य करण—रात्रि पांच दण्ड में पुत्र पैदा हुआ।

227 पुत्र प्रसव के समय की ऋषि ने पुनः गणना की। रोहिणी नक्षत्र के वृष राशि में अमृत योग में पुत्र उत्पन्न हुआ है।

228 शुक्र-उदय की वेला में स्वस्थ, सुन्दर और बत्तीसी कलायुक्त पुत्र उत्पन्न हुआ।

229 पांचवें घर में शनि, चतुर्थ घर में बृहस्पति, सप्तम में रवि चन्द्र लग्न में है

230-231. तृतीये राहु, नवमें केतु, एकादशे मंगल और नवमे शुक्र, अष्टम बुद्ध शुभ योग में अधिष्ठित है। वाम में योगिनी ईशान कोण में अधिष्ठित है।

232. बत्तीस पाद में महेन्द्र योग है। एकतीस पाद में जन्म नहीं और एक पाद में भोग करना है।

233. पैर की ओर से एक पुत्र उत्पन्न हुआ। जाह्नवी ने इसे देखकर गोद में लिया।

234 शान्तनु ने देखकर कहा—यह बड़ा विचक्षण है। जगद्विजयी योगेश्वर और चौंसठ गुणों से युक्त है।

235 जाह्नवी ने कहा—हे राजा ! क्यों नहीं आते हो ! अपने तनय को नहीं देखोगे ?

236 शान्तुन ने कहा—यह तो मुझे अप्राप्य है। मेरे न देखने पर मेरा पुत्र बच जायेगा।

237 हे भगवान ! आओ अपने पुत्र को देखो। देखने पर पुण्यशील होकर मुक्त हो जाओगे।

238 जिस समय पुत्र गर्भ से पैदा होता है, उस समय उसका मुख देखने से माता-पिता का जीवन सफल होता है।

239 दूसरे, पिता द्वारा मुख देखने पर अपुत्रिक लक्षण टूट जाता है।

240 दुर्भाग्यवशात् वह मरे या जीवे 'पुत्र मुख दर्शन' से पिता धर्मलाभ करके मुक्तिलाभ करता है।

241 ऐसा विचार करके उस भाग्यवान पण्डित ने एक सुवर्ण पात्र में अर्घ्य किया।

242 अर्घ्य के साथ सुवर्ण दीप में गाय का घी लेकर पताका बाती थाली और एक नारियल लिया।

243 पुत्र दर्शन के लिए महात्मा चलते हैं। पुत्र को न देखकर वे अन्दर जाते हैं।

244 सोरी घर में सोमवंशी पहुंचे। वहां पुत्र को लेकर गंगा स्वस्थ रूप में बैठी थी।

245 हे महात्मा ! देखो यहां तुम्हारा पुत्र है। अर्घ्य देकर वे तपोनिष्ठ ध्यान से देखते हैं।

246 गंगा इसी समय हाथ में एक विजयकर्ण कटार लेकर ऋषि के देखते-देखते पुत्र को मारने के लिए उद्यत हुई।

247 गंगा का हाथ शान्तनु ने पकड़कर कहा—हे गांगी, तुमने कितने पुत्रों का नाश नहीं किया !

248. हे गांगी ! छः पुत्रों के वध से तुम्हारी इच्छा पूरी नहीं हुई। हे गांगी ! तुम बडी मन्द और दुष्ट हो।

249. संसार में जितनी गर्भवतियाँ हैं, उन सबका अभिशाप तुम्हारे सिर पर हमेशा पड़े।

250. उन्होंने कटारी छीनकर एक थप्पड़ मारा। धकेलकर

बेटे को छीन लिया।

251. गंगा शान्तनु की बात से प्रसन्न हुई। ओह ! मेरा संकल्प पूर्ण हो गया। हे महामुनि ! मैं अब जा रही हूँ।

252. इतना ही सुनने के लिए मैं प्रतीक्षा कर रही थी। गांगी बुलवाने के लिए मैंने छः पुत्रों को मारा।

253. इतना कहकर देवी शीघ्र उठीं। पुत्र को छोड़कर गंगा सन्तुष्ट हुई।

254. शान्तनु ने उठकर उसे गोद में पकड़ा। तुम्हारा संचित व्रत पूरा हुआ।

255. अभी जिस पुत्र को तुमने पैदा किया। वह तुम्हारा दूध न पाने से कैसे जीयेगा !

256. उल्टे देखकर गंगा ने शान्तनु से कहा—जीवे या मरे, मेरा क्या गया।

257. महामुनि ने जोर से गंगा को अपनी अंकवार में बाँध लिया। क्रोध से कात्यायनी ने उन्हें ढकेल दिया।

258. मुझे तुम जबरदस्ती क्यों पकड़ते हो ! व्रत पूरा हुआ। मैं तुम्हारे घर से बाहर जा रही हूँ।

259. इतने दिन तक मैंने संकल्प का पालन किया । भृत्य की तरह तुम्हारी सेवा की।

260. संकल्प था गंगा कहने पर रहूँगी; गांगी कहने पर नहीं रहूँगी। तुमने गांगी कहा। इसलिए मैं अपना व्रत पूरा करके जा रही हूँ।

261. अब मैं तुम्हारा गुरु हूं और तुम मेरे शिष्य। हे महामुनि ! गुरुपत्नी को तुमने क्यों छुआ ?

262. क्रोध से गंगादेवी ने कहा कि मुझे स्पर्श किया है। इसलिए मैं तुम्हें शाप दूँगी।

263. इस पुत्र से जो पुत्र पैदा होगा, हे शान्तनु ! उसी से तुम्हारा शिरच्छेदन होगा।

264. डर से शान्तनु ने उसे छोड़ दिया। शीघ्र ही अनादि कात्यायनी जल में विलीन हो गयीं।

265. पुत्र को लेकर मुनि विस्मित हुए। विचार करके मुनि ने उसका भीष्म नाम रखा।

266. गंगा ने कहा था कि मरने से मरे; जीने से जीवे। इसलिए भीष्म ने इच्छा-मृत्यु वर प्राप्त किया।

267. पराशर, शान्तनु और भूरिश्रवा तीनों आत्मीय हैं। पराशर से व्यास संभूत हुए।

268. शान्तनु से चित्रवीर्य, विचित्रवीर्य उत्पन्न हुए। तृतीय आत्मज रूप में भीष्म उत्पन्न हुए।

269. शान्तनु महर्षि की जो तीन सन्तानें थीं, उस मूल से कुरुवंश की उत्पत्ति हुई।

चित्रवीर्य और विचित्रवीर्य का विवाह

1. भरद्वाज की रूपवती कन्या व्यास को प्रदान की गयी।

2. पद्म-दल देश का राजा पद्मनाभ पंचभूत को लय करके वासुदेव की पूजा किया करता था।

3. दान में पुण्यवान, मान में चक्रवर्ती, ज्ञान में पण्डित और सकल लोगों के हित का व्रती था।

4. उस राजा के राज्य में अधर्म का प्रवेश नहीं था। सभी लोग सत्कर्म करते थे, योग साधना से निर्दोष थे।

5. एक सागर रथारोही, दो सागर गजारोही, सात सागर अश्वारोही, तीन सागर पदातिक उस राजा की सेना थी।

6. अठारह अक्षौहिणी सेना सेवा करती थी। वह महाशक्तिशाली राजा महाज्ञानी था।

7. वह पद्मनाभ राजा जगत् में प्रसिद्ध था। वेद शास्त्र में वह अजेय था।

8. मन्त्री और अमात्य सर्वदा सेवारत थे। उस पद्मनाभ राजा के एक सौ पुत्र थे।

9-11. सुनाभ, सौनाभ, वज्रनाभ, योगनाभ, बड़नाभ, शुद्धनाभ, जयनाभ समनाभ, गगननाभ, नीलनाभ, वरुणनाभ, अरुणनाभ—इस प्रकार पद्मनाभ के भाग्य से महावीर अनेक पुत्र पैदा हुए।

12. नीलवंश में मलय पैदा हुआ। इस प्रकार उसका वंश विख्यात हुआ।

13. उससे अम्बा, अम्बिका, अम्बालिका, अम्बिलिका नाम की चार सुन्दर कन्यायें पैदा हुईं।

14. वे गन्धर्व-अंश में विद्याधरी हैं। तीनों लोकों में उनके रूप की तुलना नहीं है।

15. शान्तनु के बेटे चित्र-विचित्र हैं। अम्बालिका ने चित्रवीर्य का वरण किया।

16. नृपति ने संकल्प करके विवाह योग में उसे प्रदान किया।

17 मकर-शुक्ल दशमी, रोहिणी नक्षत्र, सोमवार को पण्डितों ने शुभ योग निर्धारित किया।

18 उस दिन विवाह के अनुकूल आनन्दपूर्वक अनेक मंगल उत्सव मनाये।

19 सोमवंशी राजा वर और बारातियों को लेकर अनेक समारोहों के साथ चले।

20-21 अनेक वीर, वाद्य और विजय-छत्र-पताका लेकर गजारोही, अश्वारोही, रथारोही और पदातिक सैन्य को परिचालित करके शान्तनु, पराशर, भूरिश्रवा और अनेक देश के राजा चले।

22 पद्मदल देश में प्रवेश किया। चित्रवीर्य कुमार वर-वेश में विराजमान हुए।

23 पद्मनाभ नृपति का गोत्र काश्यप और शान्तनु महर्षि का गोत्र सोम था।

24 कौशिक पुरोहित ने आमंत्रक वरण किया। दोनों के गोत्र का विवाह सूत्र में बाँध दिया।

25 इस प्रकार कन्या का प्रदान करके अनेक उपहार देकर विवाह सम्पन्न किया।

26 दोनों के साथ विवाह पद्धति की समाप्ति हुई। वर-वधू [illegible] का पारण किया।

27 विवाहोपरान्त वर कन्या अपने घर गये। भोजन और मुखप्रक्षालन के बाद शयन मन्दिर में विराजमान हुए।

28 इस प्रकार वर कन्या के विवाह समारोह पर राजाओं ने भव्य व्यवस्था के साथ भोजन किया।

29 वर-कन्या का विवाह सम्पन्न करके सोमवंशी अधिपति आनन्दपूर्वक चले।

30-31 राजा ने परम आनन्दपूर्वक अम्बिका की छोटी बहन अम्बालिका को विचित्रवीर्य को प्रदान किया।

32 कन्याओं को लेकर शान्तनु महामुनि अपने घर लौटे।

भीष्म के विवाह का प्रस्ताव

1 अगस्त्य ने कहा—हे युगपति ! चित्रवीर्य और विचित्रवीर्य के विवाह का विवरण सुनो।

2 वधु को लेकर पत्नी द्वारा विलास करने पर भी सन्तान उत्पन्न नहीं हुई।

3 यह देखकर शान्तनु दुःखी हुए। गंगा का शाप स्मरण हो आया।

4 माहेश्वरी गंगा तो इन बच्चों की माता है। उनका शाप प्रत्यक्ष विधाता के शाप की तरह है।

5 मन में विचार करके वे तपोनिष्ठ सोचते हैं। किस प्रकार माता के शाप को मिटा सकेंगे।

6 तपोधनी मन ही मन सोचते हैं। शाप से बचने के उपाय की चिन्ता करते हैं।

7 अनेक योग यज्ञ और मन्त्र-आह्वान करने पर भी शाप नहीं मिटा।

8 चित्रवीर्य और विचित्रवीर्य अपुत्रक हुए। वंश-रक्षा हेतु सन्तान नहीं हुई।

9 सोमवंशी अधिपति महात्मा ने विचार किया। भीष्म को बुलाकर महर्षि ने पूछा—

10 हे पुत्र ! तुम कन्या को प्रदत्त होकर सन्तानोत्पत्ति के द्वारा वंश की रक्षा करो।

11 यह विचार करके महर्षि ने भीष्म के लिए कन्या ढूँढना आरम्भ किया।

12 उसी पद्मदल देश के राजा पद्मनाभ की अम्बा नामक एक कन्या थी।

13 उसी नृपमणि ने एक लाख राजाओं को निमन्त्रित करके उस कन्या का स्वयंवर किया।

14 मलयानिल में अनेक उत्सव किये। आरम्भ में सभी महीपाल से जाकर मिले।

15 सभी राजाओं को भोजन परोसा गया। अश्व और हाथियों को जल, घास और चना दिया गया।

16 ओह ! राजा की सम्पदा इतनी थी कि उसने बारह योजन तक छाया-मण्डप तैयार किया।

17 पृथ्वी से आहूत चार कम एक लाख राजा अनेक सुसज्जाओं से विराजमान हैं।

18 अगस्त्य ने कहा—हे राजस्वामी ! चरगणों ने शान्तनु को निमन्त्रित किया।

19-20 अम्बा के स्वयंवर के लिए निमन्त्रित करने वाले चरगणों से भीष्म ने कहा—पद्मदल राजा ने मेरे दो भाइयों को कन्यायें दीं। जब उनके एक और कन्या है तो उसे मुझे देना चाहिए।

22 यह सुनकर सभी दूतगण पद्मदल देश को लौट गये।

23 पद्मनाभ को शीघ्र जाकर कहा। तुम्हारा यह स्वयंवर

व्यर्थ हुआ।

24 हम लोगों ने अनेक देशों में जाकर निमन्त्रण देने के बाद कुंजल देश में प्रवेश किया।

25-26. शान्तनु को माला देकर निमन्त्रण दिया। उस समय भीष्म ने हमें पास बैठाकर कहा, अम्बिका और अम्बालिका दो कन्याओं को तो चित्रवीर्य और विचित्रवीर्य को दिया। जब एक और कन्या है तो उसे मुझे क्यों नहीं प्रदान करते ?

27. हे चरगण ! जल्दी जाकर कहो कि भीष्म ने अम्बा कन्या को उन्हें प्रदान करने के लिए कहा है।

28 नृपति यह सुनकर विषण्ण हुए। पहले से न कहकर इसे उसने क्यों छिपाया।

29-30 मैंने स्वयवर के लिए यत्नपूर्वक एक लाख राजाओं को निमन्त्रित किया। पहले से ही अनेक नृपति आकर बैठे हैं। अब यदि मैं इन्कार करूँगा तो क्या मुझे सभी राजा जीवित छोड़ेंगे।

31 चरगण सुनकर तुष्ट हुए और कन्या को शीघ्र सभा में ले आये।

32 हे बेटी ! मैंने राजाओं को तुम्हारे लिए निमन्त्रित किया। ये राजा नर-वेश में रहते हैं।

33 स्वयवर की विधि के अनुसार कन्या को सबको दिखाया और माला डालकर जिसकी इच्छा हो, वरण करने के लिए कहा।

34-36 इस समय भीष्म के दूत मन्थन सेनापति एक सौ रथ लेकर स्वयंवर सभा में प्रविष्ट हुए और चारणों से कहा—मैं भीष्म का दूत हूँ। जिस अम्बा कन्या के लिए स्वयंवर किया जा रहा है, उसे भीष्म को प्रदान करो।

37 पद्मनाभ ने कहा कि वह गांगेय महावीर हैं। पहले से जानने पर मैं क्यों स्वयवर करता।

38 देखो मैं एक लाख राजाओं को बुलाकर स्वयंवर कर रहा हूँ। अब मैं इसे कैसे तोड़ सकता हूँ।

39-42. मन्मथ ने कहा—हे राजाओ ! सुनो ! तुम सब स्वयंवर के लिए आये हो। पद्मनाभ की दो कन्यायें चित्रवीर्य और विचित्रवीर्य को प्रदत्त हैं। अम्बा कन्या को भीष्म को प्रदान करने के लिए तुम सब राजगण विचार करो। भीष्म इसी क्षण यहाँ उपस्थित होंगे।

43. यदि तुम लोग अवज्ञा करोगे तो क्या भीष्म का सामना करने की तुममें शक्ति है ?

44. सभी राजा सुनकर भयभीत हुए। भीष्म के आने की खबर सुनकर सभा से उठ गये।

45-46 सभी राजाओं ने पद्नाभ को बुलाकर कहा—हम अपने-अपने राज्यों को जा रहे है। हम भीष्म से भयभीत हैं। तुम यह कन्या भीष्म को प्रदान करो।

47. पद्नाभ ने कहा—वरित हुए तुम्हें मैं अवश्यै कन्या प्रदान करूँगा।

48 राजाओं ने कहा- किसका इतना साहस है—जो प्रज्वलित चिताग्नि में कूदेगा।

49 इसके बाद सभी राजा भयभीत होकर स्वयंवर छोड़कर भाग गये।

50 सभी राजा सभा भग करके अपने-अपने राज्य को निराश होकर चल दिये।

51 भीष्म को कन्या दूँगा—ऐसा सोचकर पद्मनाभ राजा बहुत प्रसन्न हुए।

52 गंगा के पुत्र मेरे जामता होंगे। इससे बड़ा भाग्य मेरा और क्या हो सकता है ?

53 दुहिता को गोद मे लेकर पद्मनाभ राजा ने कहा—तुम्हारा अगाध पुण्य है और तुम्हारा जीवन धन्य है।

54 पच राज्य के अधिकारी गंगा-नन्दन तुम्हारे वर होंगे।

55. जिसने इच्छा-मृत्यु का अमर वर प्राप्त किया है और जो जगत्विजयी एवं अभय वर दाता हैं।

56 उस राजा ने अनेक उत्सव किये । परम आनन्द से बधाई दी।

57 इस समय मन्मथ सेनापति को बुलाकर नरपति ने बताया।

58. ओह ! शीघ्र ही जाकर तुम शान्तनु को कहो कि मैंने भीष्म को कन्या देने के लिए सकल्प किया है।

59. तुमने स्वयं देखा है कि स्वयंवर भग्न हो गया है। मैं भीष्म को कन्या दूँगा। यह मेरा सकल्प है।

60. आज्ञा मानकर वह दूतपति जाकर भीष्म के सामने शीघ्र प्रविष्ट हुआ।

61 हाथ जोड़कर सेनापति ने कहा कि हे देव ! तुम्हारी आज्ञा से मैंने स्वयंवर तोड़ दिया।

63 हे स्वामी ! शीघ्र सैन्य सुसज्जित करके, विवाह-सामग्री

और पुरोहित लेकर चलो।

64. अमृत योग—मकर शुक्ल सप्तमी के दिन कुरुराज स्वामी ने यात्रा आरम्भ की।

65. मकर—शुक्ल सप्तमी के अमृत योग में विवाह होगा—इस समाचार के साथ चरगण को शीघ्र भेजा।

66. चरगण के द्वारा कहे जाने पर पद्मनाभ राजा ने मंगल अनुष्ठान किया।

67. गंगा से उत्पन्न विद्या-भक्ति से पूर्ण महारथी भीष्म वर-वेष में सुसज्जित हुए।

68-69. न देखकर न पढ़कर अक्षर लिखना सीखा। बिना गुरु के अनेक विद्यायें सीखी। सहस्र मन्त्र से युक्त भीष्म ने बिना गुरु के शिक्षा प्राप्त की।

70. कुरुवीर विवाह-सामग्री लेकर सुसज्जित हुए। पराशर ने शुभ-मंगल लग्न का निर्णय किया।

71. भीष्म ने परशुराम सहित चारों भाई हरिराम, नीलराम, रघुराम के साथ यात्रा की।

72. विश्वामित्र और यदुराम आदि ब्रह्मचारी वारुणावन्तपुरी में प्रविष्ट हुए।

73-74. काशीश्वर, निर्झर राज्य के राजा गणपति, ऋतुपर्ण, मदानन्द, अरुणसेन, माधवसेन, विक्रम[illegible]ा, सभी बन्धु राजा अपनी-अपनी सेना लेकर आये।

75. इस प्रकार द्वारदेश में वीरवाद्य बजता था। अ[illegible] सैन्यदल का महा समारोह था।

76. अनेक अप्सरायें नृत्य-गीत करती थी। चारण मंगल-स्तुति-पाठ कर रहे थे।

77-78. एक करोड़ रथ, पाँच खरब हाथी, बारह परार्ध ईरान देश के द्रुतगामी अश्व की शोभायात्रा थी। पाँच लाख विजय-पताका तथा छत्र उठे हुए हैं जिससे सूर्य दिखाई नहीं देता था।

79. दमामा, निसान, ढोल, तुरही और शंखनाद और घोर-गर्जन से आकाश उद्वेलित (छलछला) रहा है।

80. शिवपूजन के लिए एक लाख गायें दुही जा रही हैं। विष्णुवरण के लिए तीन लाख ब्राह्मण मन्त्र पाठ कर रहे हैं।

81. देवी का आह्लादपूर्वक शीतल द्रव्य 'प्रापनक आदि' से अर्चन किया जा रहा है। भैंसा, भेड़, बकरी का बलिभोजन दिया जा रहा है।

82. ग्रहशान्ति मन्त्र ज्योतिषीगण पढ़ रहे हैं। चारों द्वारों पर लोगों को अन्न-जल दिया जा रहा है।

83. मृदंग, झाल, झाँझ, रसवेणी (मधुर वाद्य विशेष) बज रहा है। स्वर्ग की अप्सरायें और निपुण गायिकायें नृत्य-गान कर रही हैं।

84. गांगेय अन्तःपुर में पूजा समाप्त करके ब्रह्मावरण एवं सर्वदेव पूजा कर रहे हैं।

85. धवलांगी के पुत्र वर-वंश में सर्वमंगला की अनेक स्तुति कर रहे हैं।

86. देवों का तेज लेकर जिसका शरीर प्रकाशित है उस कात्यायनी विन्ध्यवासिनी को नमस्कार।

87. हे सहस्र-भुजा देवी ! तुम्हारे अनेक आयुध हैं। तुमने मानवी रूप में असुरों का वध किया।

88. हे अभय-पिंगलाक्षी ! दर्पमर्दिनी तुम्हारे शरीर से नौ करोड़ कात्यायनी उत्पन्न हुई हैं।

89. अघोर रूप में अट्टहासमुखी, दो स्थिर आखों वाली, आकाश का अतिक्रमण करने वाली हैं।

90. श्री भुज में डिमडिम—डमरू एवं उरु पर्यन्त नर-अस्थि की माला धारण करके श्मशान में भ्रमण करती हैं।

91. काट-काट, मार-मार चिल्लाकर रण-रंग में मंथन करने वाली कौतूहल से नाचती है।

92. हे विवस्त्रा, मत्तमातंगी ! विकट दांतों से लगी हुई जिव्हा चमकती है।

93. तुम्हारी दृष्टि आकाश और पाताल में है। हे देवी ! तुमने सिंह को वाहन बनाने की इच्छा की।

94. काल-काम-निद्रा देने वाली, मोहिनी, इच्छा सैन्य उत्पन्न करने वाली, तुम्हारे हृदय पर अस्थि की माला और हाथ में कंगन तथा पहुआ है।

95. जटा कुण्डल धारिणी, भयंकर वाद्यकारिणी, भूपण्डि धूमरा जिसके वक्ष स्थल पर मन्दार की माला दोलायमान है।

96-99. उद्दण्ड नृत्य में प्रमत्ता, हाकिनी, डाकिनी, रणरंग में कौतूहली, चन्द्रघण्टा, महामाया, विजया, विस्पा, अट्टहासिनी, महापिंगला, योगेश्वरी, गोस्वामिनी, आपाद खण्डनी, सुरलोक—रक्षिणी, श्रीचण्डी, सारला, सर्वमंगला के प्रमाद से श्री महाभारत आदि पर्व शास्त्र-संवाद सम्पूर्ण हो।

100. श्रीमंगला नाम का मैं तल्लीन होकर ध्यान करता हूँ। हे माता ! शूद्रमुनि सारला दास पर प्रसन्न रहो।

भीष्म की प्रतिज्ञा

1. अगस्त्य मुनि कहते हैं–हे वैवस्वत मनु ! सुनो। भीष्म महारथी ने देवी की अनेक स्तुतियाँ कीं।
2. गंगा के तनय महारथी भीष्म देवी की अनेक प्रार्थना कर रहे हैं कि हे जगन्माता ! मुझे विवाहोनुकूल योग प्रदान करो।
3. जो तुम्हारी आराधना करता है उसकी तुम रक्षा करती हो। हे भक्त-जन-वत्सला ! मेरी मनोकामना पूरी करो।
4. भीष्म के सिर पर रत्नमणिजड़ित दोलायित मुकुट, हृदय पर आभूषण और गले में रत्नमाला शोभित है।
5. बाहु, मस्तक, कर्ण और कण्ठ में अलंकार भूषित होकर जाह्नवी के पुत्र क्रीड़ारत सिंह की भाँति दिखाई देते हैं।
6. नयन में अंजन, पैरों में अलक्त, शरीर पर नूतन वस्त्र, कुंकुम और मन्त्रसूत्र परिहित होकर विराजमान हैं।
7. दधि-मत्स्य शुभ पदार्थ को लेकर अनुकूल योग में गणिकाएँ शुभ मुख-ध्वनि के साथ चलती हैं।
8. उनके पास दो लाख चामर डुलाया जा रहा है। ऐसे भीष्म शान्तनु के पास जाकर उपस्थित होते हैं।
9. उन्होंने पैरों में पाद्यार्घ्य देकर प्रणाम किया और कहा– हे देवस्वामी ! विवाह-कार्य में उपस्थित हों।
10. जगन्नाथ को स्मरण करके पद्मनाभ राज्य के लिए हम लोग शुभ यात्रा करेंगे।
11. भीष्म के मुख से ऐसी बात सुनकर पूर्व व्यवस्था 'गंगा के अभिशाप' को सोचकर शान्तनु स्तम्भित हुए।
12. तपोनिष्ठ अधोमुख होकर बैठे और उनकी दोनों आँखों से अश्रुजल की वृष्टि होने लगी।
13. पिता को दुःखार्त्त देखकर महारथी पूछते हैं–हे पिता ! आपका अश्रुजल आनन्द का है या विषाद का ?
14. शान्तनु ने भीष्म के मुख को देखकर कहा–हे पुत्र ! पहले तुमसे तुम्हारी शुभ वार्ता पाकर मैं प्रसन्न हुआ।
15. फिर पूर्व की बात सोचकर मैं विषण्ण हुआ। एक आँख से आनन्द का और दूसरी आँख से विषाद का जल बह रहा है।
16. भीष्म ने कहा–हे स्वामी ! मुझे देखकर आनन्दित हुए किन्तु आँखों में विषाद का स्थान क्यों है ? मुझे विस्तार से बताइये।
17. शान्तनु ने कहा–हे पुत्र। तुम्हारी माता गांगी जिस समय तुम्हारा विनाश करना चाह रही थी, उस समय उसके प्रति मेरे मन में विरक्ति का भाव उत्पन्न हुआ।
18-19. क्रोध में मैंने उसकी भर्त्सना की। उसे न सहन कर पा रही चली जाती उस अनादि अपर्णा को मैंने पीछे से पकड़ लिया और कहा, पैदा करने के बाद पुत्रों को क्यों मार डाला।
20. गंगा ने कहा–मैं तुम्हारी परम गुरु हूँ। मेरा व्रत पूर्ण हुआ। अब मुझे क्या पकड़ते हो।
21. क्रोधी गंगा ने मुझे अभिशाप दिया–इस पुत्र के मीत से जो पुत्र पैदा होगा। उससे तुम्हारी हत्या होगी।
22. हे पुत्र ! यदि तुम विवाह करोगे तब अवश्य तुम्हारे पुत्र उत्पन्न होगा।
23. हे पुत्र ! तुम्हारी माता ने मुझे शाप दिया कि तुम्हारे पुत्र के हाथों मेरा शिरश्छेदन होगा।
24. पिता की बात सुनकर भीष्म ने उत्तेजित होकर सहसा माथे से मुकुट उतार दिया।
25. वरवेश को छोड़कर विश्व महात्मा बैठ गये। सब वाद्य बन्द हो गये। सबकी आत्मा विषादमय हो गयी।
26. परशुराम ने कहा–हे भीष्म ! क्यों विषण्ण हुए ?
27. भीष्म ने कहा–हे राजदेव ! सुनो । पिता के अभाव में मेरे विवाह का अर्थ क्या है ?
28. अनेक प्रयत्न करके पिता पुत्र-लाभ करता है। वंश रक्षा के लिए पुत्र की कामना करता है।
29. मेरे पुत्र होने से यदि पिता का विनाश होगा तो उस विवाह से मेरा क्या धर्म होगा !
30-31. पुत्र वही है जो अपने वंश की रक्षा करता है। मेरे पुत्र से जब शान्तनु जैसे पिता का विनाश होगा, तो मेरे विवाह का क्या प्रयोजन है। माया-मोह मैंने छोड़

दिया। सन्तान न हो।

32. दक्षिणावर्त शंख में जल-तिल लेकर भीष्म ने पत्नी ग्रहण न करने का संकल्प किया।

33 मेरे शरीर मे जब तक आयु रहेगी, मे तीन बार सकल्प करता हूँ कि मै कभी भी प्रतिज्ञा का उल्लंघन नही करूगा।

34 मेरे भार्या न हो तो न हो, मेरे पुत्र न हो तो न हो, पर मेरे पिता शान्तनु चिरायु रहे।

35 जब तक सूर्य-चन्द्र उदय होते रहेंगे, तब तक मै काम, मोह और भार्या की उपेक्षा करूगा।

36 मेरे विवाह की वार्ता सुनकर आप इतने विपण्ण हुए। परम योगी पुरुष, क्षत्रिय, चूडामणि भीष्म ने यह कहा।

37 पद्मनाभ राज्य मे सुना जाता है कि भीष्म वर-वेश मे विवाह-यात्रा करके आ रहे है। प्रस्तुत रहो।

38 वरण काल मे जितनी युवतियाँ आती है, सब अम्बा कन्या की पशसा करती है।

39 धन्य-धन्य हे भार्या ! तुमने पुण्य अर्जन किया था, जिससे गगा-नन्दन भीष्म तुम्हारे स्वामी होगे।

40 तुम्हारे पिता माता धन्य है, तुम्हारा जीवन सार्थक है। अमृतयोग मे शुभ क्षण मे तुम्हारा जन्म हुआ।

41 अत्यन्त आनन्द से राजा ने उत्सव किया। दहेज और भोजन की व्यवस्था की गयी।

42 अनेक रथारोही, गजारोही, अश्वारोही और पदाति सैन्य को लेकर स्वागत के लिए पद्मनाभ राजा आ रहे है।

43 भूमि को आच्छन्न करता हुआ पेन्नदल और विजय-दण्ड लेकर राजा त्रिपुरा नदी के उत्तर तट पर आ रहे है।

44 भीष्म के पास जो दूत गये थे, उन्होंने लौटकर विस्मय एव दु खपूर्वक पद्मनाभ से कहा—

45 हे स्वामी ! भीष्म महारथी विवाह करने के लिए आ रहे थे। उस समय उनके पिता शान्तनु ने रोका।

46 विभिन्न व्यवस्था स्थान पर रोक दी गयी। वरयात्री गण लौट गये।

47 पद्मनाभ ने कहा—मै किस पाप से दोषी हूँ। शान्तनु महर्षि ने क्यों निरोध किया ?

48 चरो की बात का सम्यक् रूपेण विश्वास न करते हुए भी नरनाथ अपनी पुरी को लौट आये।

49 उस दिन विश्वासपूर्वक राजा बाट जोहते रहे। वरयात्रियों के लिए सारी व्यवस्था का विन्यास किया।

50 चार दिन तक बाट जोहकर राजा विमुख हुए। उन्होंने अपने पुत्र जऊनाभ को भेजा।

51 वहाँ जाकर हे पुत्र ! ज्ञात करो कि भीष्म विवाह करने के लिए क्यो नही आये !

52 राजा के इस वचन को सुनकर दोनों पुत्र वहाँ गये। सात दिन मे वारुणावन्त पहुँचे।

53 शान्तनु को प्रणाम करके जऊनाभ और सऊनाभ ने पूछा—हे स्वामी ! भीष्म देव विवाह के लिए क्यों नहीं गये ?

54 शान्तनु ने कहा—दारा-ग्रहण से विमुख हुआ। मेरे लिये वह विवाह नहीं हुआ।

55 हे वत्स पुन भीष्म की आशा मत करो। निराश होकर जाओ और अन्य को कन्या प्रदान करो।

56 पिता ने भीष्म को उनके पास बुलाया और कहा कि पद्मनाभ राजा ने अपने दो पुत्रो को भेजा है।

57 हे पुत्र ! तुम इस कन्या को प्रदत्त होओ। सन्तान के अभाव मे सब धर्म नष्ट होते है।

58 भीष्म ने कहा कि अब वह बात क्या फिर होगी। मेरे लिए तुम्हारे जैसे पिता का नाश होगा।

59 अनेक प्रकार मे समझाने पर भी उन्होने अस्वीकार ही किया। राजा के दोनो लडके लौट गये।

60 अपने राज्य मे प्रवेश करके उन्होने पिता से वार्ता बताई। हे तात ! भीष्म की आशा छोड दो।

61 पिता के लिए उन्होंने दारा-ग्रहण परिहार किया है। उस महावीर ने सकल्प किया है।

62 पुत्रो के मुख से ऐसी वाणी सुनकर पद्मनाभ राजा ने विचारपूर्वक कहा।

अम्बा-उपाख्यान

(अम्बा के लिए शाल्व नृपति का वरण)

1 हे बेटा ! पहले अम्बा कन्या को शाल्व नृपति माँग रहा था। मैंने उसे मत्त गर्व से अस्वीकार किया।

2 स्वयवर किया, उसे भीष्म ने नष्ट किया। समय से मेरी दुहिता किसी को प्रदत्त नही हुई।

3. भूपति ने शाल्व के पास अपने मन्त्री अंजसेन को भेजा।

4 शीघ्र जाओ। शाल्व को माला देकर आओ। मैं उसे अपनी इस योगेश्वरी को प्रदान करूँगा।

5. राजा के आदेशों से मन्त्रिवर चला। शीघ्र ही शाल्व के देश में प्रविष्ट हुआ।

6. शाल्व का दर्शन करके सारी व्यवस्था के बारे में बताया।

7 तुमने पहले से ही उस कन्या को माँगा था, इसीलिए पद्मनाभ नृपति तुम्हें एक कन्या प्रदान करेंगे।

8 शाल्व ने कहा कि अम्बा कन्या ही मेरे हृदय की पात्री है।

9 मन्त्री ने कहा—वही अम्बा कन्या है, जिसे राजा तुम्हे वास्तव में प्रदान करेंगे।

10 यह सुनकर राजा प्रसन्न हुआ। मन्त्री को माला देकर उसे वरण किया।

11 वृष-शुक्ल त्रयोदशी अनुराधा नक्षत्र शुक्रवार को सेनाबल लेकर तुम्हारे राज्य मे आऊँगा।

12. शाल्व हर्षित होकर बहुत गौरवान्वित हुआ।

13 पद्मनाभ राजा मुझे कन्या देंगे। इससे बड़ा मेरा पुण्यार्थ और क्या है।

14 वर का वरण करके मन्त्री लौट आया। राजा ने अनेक उत्सव किये।

15. अम्बा कन्या के विवाह के लिए राजा पद्मनाभ ने पुनः समारोहपूर्ण व्यवस्था की।

16 इष्ट-कुटुम्ब, आत्मीय, बन्धु और अनेक देश के राजाओं को निमन्त्रित किया।

17 वे शाल्व दण्डधारी अनेक रथो के साथ सैन्यदल को लेकर विवाह के लिए आने लगे।

18 चऊरी नगरी में प्रवेश के समय नृपति महिदास ने शाल्व से पूछा।

19 शाल्व ने कहा, पद्मनाभ ने मुझे अम्बा कन्या को प्रदान करने के लिए वरण किया है।

20 महिदास ने कहा—अकारण क्यों आये। दूत के मुख से वार्ता नहीं पायी ?

21 अम्बा कन्या के लिए स्वयंवर हुआ। गंगा के नन्दन भीष्म के लिए स्वयंवर भग्न हुआ।

22. हम लोगों के रहते ही उन्होंने कहा कि मैं वरमाला देकर भीष्म का वरण करूँगा।

23. रास्ते में इस प्रकार की सूचना पाकर शाल्व भीष्म के भय से लौट गया।

24. निश्चय ही जब कन्या ने भीष्म का वरण किया है तब तो वह युक्तितः गुरुपत्नी हुई।

25. शाल्व इस प्रकार की बात सुनकर लौट गया और पद्मनाभ राजा राह जोहता रह गया।

26 दिन और रात के दो शुभयोग समाप्त हुए। रात बीत गयी पर शाल्व नहीं आया।

27 दूत ने शीघ्र आकर बताया कि हे स्वामी ! भीष्म के डर से वे नही आये।

28 पुनः शुभ व्यवस्था नष्ट हुई। अम्बा कन्या युवा अवस्था को प्राप्त हुई।

29 तीसरी बार उसने वीरबाहु नृपति को निमन्त्रित किया। किन्तु भीष्म का वरण सुनकर वे नही आये।

30 चौथी बार मान अर्जुन को निमन्त्रित किया। वर-पूर्वा मानकर उसने विवाह नही किया।

31 इस प्रकार राजा ने अनेक देश के राजाओं को निमन्त्रित किया, किन्तु भीष्म के डर से कोई उसके पास नही आया।

32 पन्द्रहवे वर्ष में कुमारी मनोहारी युवा अवस्था में पहुँची।

33 जब किसी को प्रदत्त नहीं हुई, तब कन्या को लेकर राजा वारुणावन्त पहुँचा।

34 भीष्म के पास जाकर कन्या को उनके सामने खड़ा किया।

35. उसने कहा—हे गांगेय ! इस मेरी कन्या का वरण करके इसका विनाश या पोषण तो नहीं किया; उसको ऐसे ही छोड़ दिया।

36 मेरी कन्या ने तुम्हारा क्या अपराध किया है ? उसे मैं तुम्हारे पास ले आया हूँ; उसे सम्भालो।

37 भीष्म ने कहा कि मैने तुम्हारी दुहिता का वरण किया। किन्तु उसकी उपेक्षा करके मैंने क्या दूसरी से विवाह किया ?

38. मेरे पुत्र होने से मेरे पिता का नाश हो जायेगा। मैंने शान्तनु के लिए दारा-वर्जन किया है।

39. जहाँ कहीं भी तुम कन्या को प्रदान कर दो। मैंने छोड़ देने की प्रतिज्ञा की है।

40. पद्मनाभ ने कहा—हे भीष्म ! अनेक देश के राजाओं को मैंने निमन्त्रण दिया, परन्तु तुम्हारे डर से कोई प्रदत्त नहीं हुआ।

41. राजा ने शान्तनु, पराशर और भूरिश्रवा को कन्या दिखाकर प्रत्येक से गुहार की।

42. यह कन्या यौवनवती, सुन्दरी, कामिनी, अपूर्व रूपवती और त्रैलोक्यमोहिनी है।

43 इन पितामह लोगों ने अनेक प्रकार से भीष्म को समझाया, किन्तु दृढ़वचन होकर भीष्म ने किसी की बात नहीं मानी।

44 सत्य के कारण ससार बचा हुआ है। सत्य को मिटा दने मे प्राणी को नरक गति प्राप्त होती है।

45 मैंने पिता के लिए व्रत किया। तुम लोग किस लिए मेरे धर्म को तोडते हो ?

46 सबकी बातों का जब गांगेय ने ध्वस कर दिया तो पद्मनाभ दुःखी हुए।

47 पद्मनाभ ने दुहिता को बुलाकर कहा—तुम फिर मेरे घर पर जाकर क्या करोगी ?

48 भीष्म की सेवा निरन्तर करती यहां रहो। पोषण करना चाहें तो पोषण करें। या नाश करना चाहे तो नाश करे।

49 सेवा करने पर हो सकता हे कि व दया करें। ऐसा मानकर तुम उनकी सेवा करो।

50 अम्बा को छोड़कर दुःखापन्न चित्त से राजा अपने राज्य को लौट गये।

51. राजा की नवयुवती दिन-रात भीष्म के प्रासाद मे सेवा करती है।

52. भीष्म ने उस नारी को देखकर क्रोध किया और कहा कि इस पापिन को बाल पकड़कर ले जाओ।

53. पात्र मन्त्री ने इस सुन्दरी को देखकर विमोहित चित्त होकर भी क्रोध प्रकाश करके उसे बाहर निकाला।

54. सुन्दरी ने कहा—हे गांगेय ! मेरा नाश करने से तुम्हारा क्या धर्म होगा ?

55-56. यह सुनकर शान्तनु-पुत्र ने कहा—मेरे राज्य को छोड़कर चली जाओ क्योंकि तुम्हें देखकर मुझे बहुत डर लगता है।

57. अम्बा ने कहा कि अब मैं कहाँ जाऊँगी। मुझसे तुम्हारा अवश्य पराभव होगा।

58. अम्बा कन्या ने कहा कि मैं अवश्य जा रही हूँ किन्तु जहाँ भी मैं मरूँगी तुम्हें ही हत्या का पाप लगेगा।

59 भीष्म के सामने अनेक भर्त्सनाओं के साथ उसने कहा—तुम्हारे नाश के लिए मैं प्रयाग में आत्मविसर्जन करूँगी।

अम्बा चरित्र

1 यह कहकर उस सुन्दरी ने आकर परशुराम से क्रन्दन-पूर्वक गुहार किया।

2 गंगा के किनारे बैठकर युवती रो रही है। परशुराम ने पूछा—हे आर्या !

3 तुम्हारे जैसा रूप-गुण देवलोक में भी अगोचर है। किस पामर ने तुम्हारी उपेक्षा की ?

4 अम्बा कन्या ने कहा—हे गोस्वामी ! मै बहुत दुःखी हूँ। महान जन समझकर मैं शरण माँगती हूँ।

5 परशुराम ने कहा—मैं संकल्प करता हूँ कि तुम्हारी मनोवांछा पूर्ण करूँगा।

6 यह मेरा सत्य है, तीन बार सत्य है। हे युवती ! वर माँगो, मैं अभी दूँगा।

7 अम्बा कन्या ने कहा कि हे देव ! मुझसे प्रसन्न हों। मुझे किसी अन्य चीज की आवश्यकता नहीं है। मुझे स्वामी दान दीजिये।

8 हे सुन्दरी ! तुम्हारी जो इच्छा है, उसे माँगो। तीनों लोक में जिसकी इच्छा करोगी, मै दूँगा।

9. अम्बा कन्या ने कहा—हे महायती ! तुम सुनो । भीष्म महारथी के द्वारा वरण करने पर भी मैं प्रदत्त नहीं हुई।

10 मैं अम्बा कन्या, पद्मनाभ की कुमारी हूँ। मैं उनको दान रूप में माँगती हूँ; हे तपचारी ! मुझे दीजिये।

11. नीलराम और रघुराम को बुलाकर परशुराम ने कहा—इसको लेकर भीष्म को समर्पित करके आओ।

12. स्वामी की आज्ञा शिरोधार्य करके नीलराम और रघुराम कन्या के साथ बारुणावन्त पुर गये।

13. अहो ! भीष्म ! तुम्हे परशुराम का आदेश है कि तुम अम्बा कन्या को प्रदान होगे।

14. भीष्म ने रघुराम की ओर देखकर कहा—तुम्हारे डराने से मैं विवाह करूंगा ?

15 क्या मुझे तुम्हारे परशुराम का भय है। मैं अम्बा कन्या को क्यों प्रदान होऊँगा ?

16 नीलराम ने कहा कि परशुराम की आज्ञा उल्लंघन करने से अवश्य तुम्हारा शिरश्छेदन होगा।

17 मे परशुराम के सामने तुम्हारी बात कहूँगा। तुम अपनी दुष्मति के कारण अवश्य मारे जाओगे।

18 क्रोध से भीष्म ने नीलराम से कहा—अपने परशराम से जाकर कहो।

19 नीलराम और रघुराम लोटे और अम्बा कन्या रोती हुई उनके पीछे-पीछे दौडती रही।

20 परशुराम त्रिपुर पर्वत पर विराजमान है। उस समय नीलराम और रघुराम दोनो भाई प्रविष्ट हुए।

21 प्रणाम करके नीलराम ने कहा कि हे स्वामी ! भीष्म हम लोगों पर बहुत क्रुद्ध हुआ।

22 कहा कि तुम्हारे परशुराम आवे। जितने प्रकार से वे युद्ध कर सकते है, करे।

23 अम्बा कन्या बहुत व्याकुल होकर रोती है। आदेश के उल्लघन के लिए परशुराम महाकुपित हुए।

24 परशुधर नाथ क्रोध से दौड पडते है। पीछे-पीछे नीलराम, रघुराम और हरिराम तीनो भाई दौडते है।

25 अभिमानिनी अम्बा भी पीछे-पीछे दौडती है।

26 कालाग्नि मूर्ति होकर महावीर परशुराम भीष्म के स्थान पर पहुंचे।

27 परशुराम का क्रोध देखकर भीष्म महारथी परशुराम के पास क्रुद्ध होने पर भी नही गये।

28 क्रोध से परशुराम ने पूछा—अरे ! तूने मेरी आज्ञा भ्रष्ट की। तुममे कितना दर्प है।

29 मै जानता हूँ कि तुमने अम्बा कन्या का वरण तो किया, परन्तु विवाह नही किया।

30 पराशर ने कहा—हे पुत्र ! भीष्म ! सुनो। परशुराम तुम पर क्रोधित है।

31 ये बडे दुष्ट, कालान्तक, महाविक्रमी, युगान्तक और द्वितीय यम है।

32. हे वत्स ! यमदग्नि का विषाद देखकर तीनों भाइयों के रहने पर भी इसने अपनी माता के सिर को काट दिया।

33. यह निर्दयी और निःसकोची है। यह निर्भय, अक्षय और त्रिलोक में महायोद्धा है।

34 इसके क्रोध करने पर कोई नहीं बच सकता। इसने पृथ्वी को इक्कीस बार क्षत्रियविहीन किया है।

35 क्षत्रिय वृत्ति मे उसने सतयुग का भोग किया। स्वयं अनेक प्रकार की विद्याओं की सृष्टि की।

36 इसके साथ तुम विवादी न हो। क्रोधपूर्ण कटाक्ष से देखते ही तुम्हारा शिरच्छेदन हो जायेगा।

37 हमारी सौगंध, तुम ना मत करो। अम्बा कन्या को मेरी आज्ञा मानकर प्रदत्त होओ।

38 भीष्म ने कहा—मै कैसे प्रदत्त होऊगा। भार्या के लिए मैं पिता का कैसे नाश करूंगा।

39 पराशर ने कहा—उसे ग्रहण करो। पीछे से कलंकित करके उसमे रति-शृगार मत करना।

40 भीष्म ने कहा—हे पितृगण ! तुम लोग सुनो। मैने अगस्त्य पुराण मे देखा है।

41 तीस दिन मे एक बार कामिनी नारी अशुद्ध होती है। प्रथम दिन स्पर्श करने से चाण्डाल को स्पर्श करने का दोष लगता है।

42 जितने वस्त्रो से स्पर्श हो, उतने वस्त्रो के साथ स्नान करके उपवास करने से पाप दूर होता है।

43 दूसरे दिन रजस्वला नारी को स्पर्श करने से प्रत्यक्ष ब्रह्म हत्या का दोष लगता है।

44 तृतीय दिन स्पर्श करने से पूजित शिवलिंग को तोडने की अगति पाता है।

45 चतुर्थ दिन जो स्त्री के पास जाता है उसको गो हत्या, मातृ-हरण और ब्रह्महत्या का दोष लगता है।

46 पचम दिन शुद्धि-स्नान करने पर पुरुष का उसके पास जाना उचित है।

47 नानाधर्म, पितृ-कार्य आदि का त्याग करके स्त्री—व्रतचारी होना चाहिए।

48 49 पाचवे दिन से सातवे दिन तक जो पुरुष नानाव्रत प्रवाहित रक्त का पान करते है। इस प्रकार शास्त्र-धर्म वाक्य में कहा गया है।

50. भीष्म ने कहा कि विवाह करने के बाद कैसे रति-शृंगार की इच्छा नहीं करूँगा ! मेरे पुत्र होने पर तुम लोगो का नाश करेगा।

51 इस प्रकार की बात सुनकर पराशर देव सन्तुष्ट हुए।

52. परशुराम से क्रोध मे भीष्म महारथी ने कहा—हे परशुराम ! मुझको तुमसे क्या भय है।

53. भाग जाओ! यहाँ अकारण बडप्पन न दिखाओ। सहोदर को अकारण कलंकित न करो।

54 तुम यथार्थ मे मेरे सहोदर हो। हे भ्रातृदेव ! इसी क्षण के लिए क्यों मरोगे।

55 किंचित दोष से अपने बडप्पन का नाश मत करो। शृगाल के युद्ध मे सिंह का भी ध्वस हो जाता है।

56 भीष्म के मुख से कटु वचन सुनकर क्रोध से वीर परशुधरपाणि दौडे।

57 यमदग्नि के पुत्र क्रोध मे दौडे और भीष्म को अनर्गल ढग से मारा।

58 भीष्म को परशुराम ने खीचकर पकडा और उनको नीचे गिराकर छाती पर चढ बैठे।

59 परशुराम द्वारा भीष्म का सिर मरोडते समय गंगा कुमार ने तत्क्षण उन्हें उलट दिया।

60 परशुराम को नीचे दबाकर भीष्म हृदय के ऊपर चढ बैठे। बाये हाथ से दबाकर मुष्टि-प्रहार किया।

61 भीष्म की वज्राघात सी मुट्ठी से परशुराम की नाक से रक्त प्रवाहित हुआ।

62 यह देखकर शान्तनु दौडकर पहुँचे और भीष्म का हाथ पकड लिया।

63 रुको, रुको हे पुत्र ! भीष्म महारथी ! सहोदर सहोदर मे क्यों विनाश-लीला हो रही है।

64 शान्तनु और पराशर ने संग्राम रोक दिया। लज्जित होकर परशुराम चले गये।

65 अम्बा कन्या इसके बाद प्रयाग तीर्थ को गयी। त्रिवेणी में स्नान करके उसने माधव की पूजा की।

66 हे माधव ! तुम मेरे साक्षी हो। भीष्म के प्रमाद से मैं निराश्रया हुई।

67 भीष्म को मेरी हत्या का पाप लगे। माधव को साक्षी देकर प्रयाग में कूदकर वह आत्मविसर्जित हुई।

68 मैं स्त्री मात्र हूँ, योद्धा नही हूँ। जन्म-जन्म में मैं भीष्म का साध्य करूगी।

69 यह मेरा रूप, गुण, लक्षण देखकर संग्राम में भीष्म शस्त्र छोड देगा।

अपुत्रिक होकर चित्रवीर्य और विचित्रवीर्य की मृत्यु

1. अगस्त्य ने कहा—हे योगेश्वर ! सुनो। भीष्म का ऐसा जीवन-चरित्र है।

2 भीष्म ने पिता के लिए दारा-ग्रहण नहीं किया और दो भाई गंगा के शाप से अपुत्रिक हुए।

3 इस प्रकार दोनो राज्य करते है। सन्तान के लिए अनेक याग-यज्ञ करते है।

4 अनेक उपवास करने पर भी उनको पुत्र नही हुआ। गंगा के शाप का कौन मिटा सकता है।

5 अपुत्रिक होकर तीनों भाइयों ने पंच नगर मे सौ हजार वर्षो तक राज्य किया।

6 महाक्षत्रियत्व मे अनेक राज्यों को जीता। इसके बाद चित्रवीर्य और विचित्रवीर्य को गलित कुष्ठरोग हुआ।

7 अनेक वैद्य का प्रयोग करके भी आरोग्य नहीं हुआ। नाना औषधियो से कुछ भी फल नही मिला।

8 इसी रोग से चित्रवीर्य नही बच सका और प्राण-त्याग किया।

9 एक समय विचित्रवीर्य ने प्रयाग मे जाकर अपुत्रिक दोष के लिए त्रिवेणी मे कूदकर आत्मविसर्जन किया।

10 अपुत्रिक रहकर ही चित्रवीर्य और विचित्रवीर्य नष्ट हुए। भीष्म के द्वारा दारा परिहार के कारण पुत्र नही उत्पन्न हुआ।

11 इन्द्र प्रशस्त, यम प्रशस्त, हस्तिना, जयन्ता और वारुणा सब इतने हतप्रभ हुए कि उसकी कल्पना नहीं की जा सकती।

12 भीष्म ने दिग्विजय करके शत्रुओं का विनाश किया और शत्रु का दर्प-ध्वस करके पंचराज्यों को सभाला।

13 शान्तनु को बुलाकर पराशर ने कहा—गंगा के शाप से इतना बडा वंश डूब गया।

व्यास द्वारा धृतराष्ट्र, पाण्डु और विदुर का जन्म

1 पराशर ने कहा—हे सत्यवती ! तुम अम्बिका और

अम्बालिका को समझाओ।

2 वंश में किसी प्रकार पुत्र उत्पन्न हो इसलिए वधुओं को व्यास के पास भेजो।

3 व्यास ऋषि वधुओं के साथ रमण करें। सन्तान उत्पन्न होने से वंशवृद्धि का कारण होगा।

4. सत्यवती ने कहा कि हे स्वामी ! ऐसा कैसे होगा। ज्येष्ठ भ्राता और अनुज वधू का मिलन अत्यन्त अग्राह्य है।

5 इस प्रकार सोचकर महामती सत्यवती अम्बिका के भवन में उपस्थित हुई।

6 यागेश्वरी ने गुरुपत्नी को देखकर प्रणाम किया और विधिपूर्वक पूजा की।

सत्यवती ने वधू के शरीर को सहलाया और व्याकुल होकर कहा—इतना बड़ा वंश अकारण नष्ट हुआ। भस्म होने के बाद वंश अंकुर उत्पन्न हो सकता है।

9 सन्तान-उत्पत्ति के लिए ज्ञान है, किस प्रकार से कार्य सिद्धि की जायेगी।

10 हाथ जोड़कर अम्बिका ने कहा—सभी ने देखा है कि सतीत्व में ही मेरे दिन बीत गये।

11 सत्यवती ने कहा कि मुझसे ऐसा मत कहो। वंश बढ़ाने के लिए धर्म-पथ छोड़ो।

12 अम्बिका ने कहा कि मैं तुम्हारी बात मानूँगी। हम सत्यव्रत छोड़ेंगी किन्तु पुरुष कौन होगा ?

13 भीष्म को कहा कि हमारे पास आये। भीष्म ही वंश रक्षा कर सकते हैं। अन्य से कोई काम नहीं।

14 वधू की बात सुन सत्यवती भीष्म के पास गयी और एकान्त में बैठकर उनसे कहा—

15 हे पुत्र ! जिसमें तुम्हारा सत्य वचन अन्यथा न हो और वंश की रक्षा भी हो—ऐसा विधान करो।

16 तुम अम्बिका और अम्बालिका के साथ रमण करो। पुत्र उत्पन्न करके वंश का उद्धार करो।

17 गांगेय कह रहे हैं—हे अनादि माहेश्वरी ! सुनो। तुम परम गुरुजन हो। तुम्हारे क्रोध से मैं डरता हूँ।

18 मैंने पिता के लिए दारा का परिहार किया। अपने द्वारा किये गये सत्य का कैसे उल्लंघन करूँ।

19 माता की बात भीष्म ने जब नहीं मानी, तब सत्यवती उदास होकर चली गयी।

20 अनेक विचारपूर्वक सत्यवती ने यमुना नदी के किनारे जाकर व्यास मुनि का साक्षात्कार किया।

21 व्यास ने प्रणाम करके माता सत्यवती से कहा—हे माता! तुम यहाँ क्यों आई ?

22 माहेश्वरी बटवृक्ष के नीचे बैठी। उनकी दोनों आँखों से अश्रुजल प्रवाहित हो रहा था।

23 हे माँ ! धैर्यपूर्वक स्थिर होकर बोलो। क्या रहस्य है ? मुझे सन्देह लग रहा है।

24 दुःख शान्त करके दास राजा की कन्या कहती है—तुम मेरे पण्डित, तपस्वी और ब्रह्मचारी पुत्र हो।

25 बेटा ! चित्र-विचित्र अपुत्रिक होकर मरे और शान्तनु के कारण भीष्म ने पत्नी ग्रहण नहीं की।

26 तुम्हारे समय में जब सोमवंशी राजा का नाश हुआ। कोई भी इस समस्या के बारे में नहीं सोच रहा है।

27 बेटा ! किसी प्रकार वंश की रक्षा करके संसार के लोगों की मनोकामना पूरी करो।

28 पुत्र ! सभी तुम्हें द्वितीय नारायण कहते हैं। तुम अनादि के गर्भ में भव समय प्रवेश करते हो।

29 यह कथा कालातीत रहेगी कि व्यास जैसे महर्षि के रहते वंश-नाश हुआ।

30 तुम अनाकार सनातन, अनादि पुरुष हो। तुमने तो गोत्र वर्ग की चिन्ता नहीं की।

31 व्यास ने कहा कि हे माँ ! सुनो। किसी बुद्धि से अब वंश का उद्धार किया जा सकता है।

32 प्रथम यदि पुत्र सन्तान उत्पन्न होगी तो वह पुत्र वंश में महाक्षत्रिय होगा।

33 सत्यवती ने कहा कि सन्तान के लिए जब हम यज्ञ करेंगे तब बहुत समय लग जायेगा।

34 एक ही वंश के निहत होने से जम्बूद्वीपादि के सात प्रधान वंश विध्वस्त हो जायेंगे। अभी तो भीष्म के भय से शत्रुसेना आक्रमण से निवृत्त है।

35 मात्र इसी बारह दिन में जब पुत्र पैदा होगा तो राज्य की रक्षा होगी। ऐसा विचार करके कार्य करो।

36 वह धार्मिक कहते हैं कि हे माँ ! किस प्रकार कार्य सिद्ध होगा ?

37 सत्यवती ने कहा—हे बेटा ! एक बात है कि तुम मेरे पुत्र हो और मैं तुम्हारी माँ हूँ।

38. तुम इस कुल के लिए लज्जा की उपेक्षा करो। समस्त धर्मों को छोड़कर पुत्रोत्पत्ति के कार्य को ग्रहण करो।

39 सत्यवती ने कहा—तुमको मेरी सौगन्ध है। मैं एक बात कहूँगी। तुम अस्वीकार मत करना।

40 वे परम पण्डित महात्मा कहते है। सनक नामक ब्रह्मर्षि गुरुवचन को न मानने के कारण विनाश को प्राप्त हुए।

41 जो पुत्र यह जान लेता है कि माता-पिता के साथ उसका सम्बन्ध एक ही देह में पिण्ड और प्राण की तरह है उसके माता-पिता की बात अलंघनीय है।

42 अनुकूल या प्रतिकूल गुरुजन की बात को जो व्यक्ति मत्त होकर इन्कार करता है वह विनाश को प्राप्त होता है।

43 जैसी आज्ञा देनी हो तुम शीघ्र दो। सत्यवती ने कहा, तुम मेरे परम योगी पुत्र हो।

44 हे पुत्र ! मेरी वधू अम्बिका और अम्बालिका के साथ तुम अकेले प्यार करो।

45 तुम दोनों के साथ रति-रंग करो। यह सुनकर व्यास स्तम्भित हो गये।

46 हे माँ ! यह तो बड़ा दुघट द्विधाग्रस्त कार्य है। किन्तु मेरे उल्लंघन करने से वंश का नाश होगा।

47 सत्यवती ने कहा—बेटा साहस क्यों नहीं करते हो ! तुम तो संसारी जन के अलोप्य पाप को दूर करने वाले हो।

48 विशेषतः ये उत्तम नारियाँ है। और भ्रातृ-वधुएँ है। पुत्रोत्पत्ति होने पर वंश साधु होगा।

49 बेटा ! तुम्हारे वीर्य से जो पुत्र उत्पन्न होगा वह ज्ञानी, बलवान, पण्डित और भाग्यवान होगा।

50 बेटा ! हमारे वंश में अब तक जितने हुए है, सबको वह पुत्र मुक्त करेगा।

51 बेटा ! तुम इस बात की अवहेलना मत करो। बड़ी वधू अम्बिका के पास तुम अभी जाओ।"

52 व्यास ने कहा—मैं सहमत हूँ। तुम जाकर वधुओं को तैयार करो।

53. व्यास को सहमत करके सत्यवती चली। तत्क्षण अम्बिका के घर मे प्रविष्ट हुई।

अम्बिका और अम्बालिका को सत्यवती का उपेदश

1 पद्मनाभ की दोनो कन्याओं को एकान्त में बैठाकर सत्यवती ने परमार्थ बताकर समझाया।

2 हे सोमवंश की ठकुराइन ! तुम दोनों संकल्प करो। मैं एक बात पूछूँगी।

3. यह सुनकर अम्बिका और अम्बालिका सविनय कहती है कि जिस कार्य में धर्महानि होगी उसे कैसे करेंगी।

4 हे माँ ! तुम हमारी स्वामिनी हो और हम तुम्हारी दासी है। स्वामी की बात को सेवक कहाँ अस्वीकार करता है।

5 हे मा ! अज्ञानवश सब कुछ खो दिया। राज्य भ्रष्ट होने की चिन्ता और सन्देह उपस्थित हो गया है।

6 जिस प्रकार अब भस्म बीज से अंकुर उत्पन्न होगा ! हे माहेश्वरी ! तुम ऐसी आज्ञा दो।

7 सत्यवती ने कहा, तुम दोनो एकमन होकर मेरे शरीर को स्पर्श करके कहो कि पाप होगा या पुण्य, तुम उसे स्वीकार करोगी।

8 अम्बिका ने कहा, तुम परम माहेश्वरी हो। अभी तक हम तुम्हारी आज्ञा का पालन करती आ रही हैं।

9 अब मरने के समय क्यों गुरुजन के आदेश का उल्लंघन करेंगी। विचार करके कहे जिसमें हम सक्षम हों।

10 बेटी ! तुम्हें समझाकर मै भीष्म के पास गयी। भीष्म ने निश्चित रूप से दारा ग्रहण न करने की बात कह दी।

11. मेरे ज्येष्ठ पुत्र व्यास के साथ तुम दोनों प्रेम-मिलन करो।

12 बेटी ! उसका वीर्य अमोघ और अक्षय है। चन्द्रमा की तरह दो पुत्र उत्पन्न होंगे।

13 सत्यवती की ऐसी बात सुनकर दोनो बहनें मूर्च्छित हुई।

14 दोनो को अपनी गोद में दोनो हाथों से पकड़कर मुख पर चुम्बन देकर महासती सान्त्वना देती है।

15 हे मा ! विचार न करके तुमने बहुत गर्हित बात कही। जेठ की मर्यादा कैसे होगी

16. नीतिमान होकर माँ ! अनीति की बात क्यों कही ?

जल के साथ अग्नि को क्यों एक साथ मिलाया।

17 देव ब्रह्मा ही अग्नि है। गंगा शिव की पत्नी हैं।

18 ब्रह्मा रुद्र के ज्येष्ठ भ्राता हैं। तुमने गंगा और ब्रह्मा मिलन कराया।

19. अज्ञानवशात् जो जल और अग्नि को एक हाथ में पकड़ता है, उसका पाप जेठ और अनुजवधू के मिलन के पाप जैसा होता है।

20 उस पाप से जो व्यक्ति दूषित होता है, उसके महापाप दोष को चित्रगुप्त लिखता है।

21 हे मास ! इस बात का विचार क्यों नहीं करती हो ! जानते हुए क्यों हम इस नरक दोष में जायेंगी ?

22 सत्यवती ने कहा—पुत्र उत्पन्न होने पर यह पुत्र सम्पूर्ण दोष को दूर करता है।

23 व्यास के अंश से जो पुत्र उत्पन्न होगा, वह हमारे गोत्र के पाप व कलंक को समाप्त करेगा।

24 महीयसी ने दोनों हाथ पकड़कर कहा—बेटी ! तुमको शपथ है, अस्वीकार मत करना।

25 अम्बिका और अम्बालिका ने कहा—हे परम गुरु तुम रहो। एक तो हम नारियाँ हैं दूसरे और झंझट में क्यों पड़ें।

26 सत्यवती ने कहा—बेटी ! पूर्व कथा सुनो। मैं सन्तान धर्म की बात कहती हूँ।

27 नीला, कमला नामक दो बहनें दास राजा की पटरानियाँ थीं।

28 बेटी ! दास राजा ने दस हजार वर्ष तक राज्य किया। सत्यव्रत रहने पर भी निःसन्तान रहे।

29 राजा के वीर्य से जब सन्तान नहीं हुई, तब वे दोनों पत्नियाँ पर-पुरुषगामिनी हुई।

30 जिसके वीर्य से पुत्र उत्पन्न होगा उसे लेकर गुप्त शृंगार-रति की।

31 इस प्रकार दोनों देवियों ने सन्तान न पाने पर एक समय मान्य, गुरु और गुरुजन किसी को नहीं छोड़ा।

32 ससिया श्वसुर, भसुर, बहनोई जिस किसी के साथ ही अपरिमित रूप में रति-योग कराया।

33 इस प्रकार के अनीति रति-योग में मैं अकेली दुहिता उत्पन्न हुई।

34 माता ने कहा—हे सत्यवती ! मैंने अमद उपाय से तुम्हें उत्पन्न किया। तुम जलघाट में नौका लेकर रहो।

35 दास राजा को पुत्र नहीं था। मैं ही उनकी इकलौती बेटी हूँ। मेरे पिता ने धर्म की उपस्थापना की।

36 जब मैं बारह वर्ष की हुई, मेरे पिता ने मुझे यमुना नदी के किनारे नियुक्त किया।

37 पिता ने कहा—तुम नाव से दोनों किनारों के लोगों को पार कराना।

38 धन, कौड़ी देने पर भी मत लेना। नाव पर बैठने पर प्रसन्नतापूर्वक पार करा देना।

39 पिता की आज्ञा से मैं यमुना के किनारे रहकर प्रसन्नता पूर्वक लोगों को पार कर देती थी।

40 माता के अपराधपन एवं अनीति के कारण मैं किसी को प्रदान नहीं हुई। पिता ने भी किसी वर का वरण नहीं किया।

41 इस प्रकार नौका में ही मैं दिन-रात बैठी रहती थी। कष्ट करके जो आता था, उसे मैं पार कर देती थी।

42 इस प्रकार मैं दो वर्ष तक नौका खेती रही। एक दिन मेरी नाव में पराशर मुनि आकर बैठे।

43 पराशर ने कहा—मैं तपोनिष्ठ हूँ, दूसरे किसी को नाव में मत बैठाओ।

44 मैंने कहा कि इस नाव में पचास लोग बैठते हैं। हे महर्षि ! एक खेप में तुम अकेले कैसे बैठोगे !

45 पराशर ने कहा—मैं एकदम भारी नहीं हूँ। तपस्वी हूँ, नाव में बैठने में डरता हूँ।

46 अकेले ही मुझे लेकर पार करो नहीं तो मैं उतर जाता हूँ।

47 महर्षि बैठे, कहकर मैंने लोगों को बाहर कर दिया। पराशर को लेकर मैंने नौका को खेना आरम्भ किया।

48 नदी में खेते हुए नौका शीघ्र जाकर बीच में पहुँची।

49. मेरे अत्यन्त सुगठित स्तन, जघा और सुन्दर काया को नाव में देखकर महात्मा आसक्त हुए।

50 मैं खेते-खेते थक गयी किन्तु नाव नहीं चलती थी। बीच धारा में मेरी नाव चक्कर काटती रही।

51 मेरी काया पसीने से काली हो गयी। देह से साड़ी का पल्ला हवा से उड़ गया।

52 नाव के एक सिरे पर ऋषि थे और दूसरे सिरे पर मैं थी। आख भरकर ऋषि मेरे स्तन और जंघाओं को

देख रहे हैं।

53 वे तपचारी काम से विह्वल हुए। आरम्भ में उन्होंने कहा—क्यों शीघ्र पार नहीं करती ?

54 हे ऋषि ! मैं दो वर्ष से नाव खे रही हूँ, किन्तु किसी भी दिन ऐसी अवस्था नहीं हुई।

55 यह तुम्हारी माया है, नहीं तो गंगा को क्या मेरा लोभ है। तुम नदी में कूद पड़ो, मेरा क्या जाता है।

56 पराशर ने कहा—तुम नौका नहीं खे सकती हो तो मुझे बदनाम करके नदी में गिराकर क्यों मारना चाहती हो?

57 हे महर्षि गंगा ने जब परेशान किया तो मैं इस नदी में कूद पड़ती हूँ।

58 हे जाह्नवी ! मुझे भोग करो। मैं राजकुमारी होने के कारण इस कार्य के योग्य नहीं हूँ।

59 यह कहकर मैं जल में कूदने जा रही थी कि पराशर ऋषि ने मुझे गोद में पकड़ लिया।

60 गोद में रखकर ऋषि ने मुझे जंघा पर बैठाया। मदनार्त्त होकर भान ने मेरे मुख का चुम्बन किया।

61 कामातुर होकर ऋषि ने रमण की इच्छा की। मैं पाप करती हूँ, मुझको तुम्हें पान की इच्छा है।

62 अपनी करुणा के आगे सत्यवती कहती है, मेरे चरित्र रीति और वृत्तान्त को सुनो।

63 पराशर ने कहा—मैं शृंगार प्रति आसक्त हूँ। हे सत्यवती! मुझे तुम रति-दान करो।

64 मैंने कहा—हे ऋषि ! मुझे छोड़ो, रोगी। मुझसे रति शृंगार मांगने में तुम्हें लज्जा नहीं आती!

65 मैं बालिका हूँ, पुनः अविवाहित और अरजस्वला हूँ। मैं वर्जित हूँ। आमिष भोजन से पोषित हूँ।

66 परस्त्री, ब्रह्मस्त्री और गुरुपत्नी के साथ रमण करने से क्या दोष होता है—हे महामुनि ! मुझे बताओ।

67 हे मुनि ! तुम अज्ञानी लोगों के ज्ञानदाता हो। परन्तु तुम्हारा नीतिहीन आचरण और लोभ अपरिमित है।

68 अज्ञानी प्राणी का तो कुछ दोष नहीं होता है, किन्तु पण्डित होकर पाप करने से उसकी मुक्ति कहाँ मिलेगी!

69 मुनि ने मन्त्र सिद्ध करके एक चुल्लू पानी दिया। इसके पान करने से तुम रजवती होगी और तुम्हारा रज क्षरित होगा।

70 कमण्डल-जल से मुनि ने उसको स्नान कराया। एक योजन तक कस्तूरी से आमोदित हुआ।

71 सुगन्धित समीर एक योजन पर्यन्त प्रवाहित हुआ। पराशर ने मुझे योजन-गन्धा नाम दिया।

72 जिस जल में तुम ऋतु स्नान करोगी, वह कपूर और चन्दन की गन्ध से युक्त होकर एक योजन तक प्रवाहित होगा।

73 मैं ब्रह्म ऋषि हूँ। मैंने तुमसे श्रद्धा किया। आज से तुम्हारा नाम योजन-गन्धा हो।

74 सत्यवती ने कहा—हे पराशर ! तुम सुनो। आकाश में देखो सूर्य उदित है।

75 दिन में रति करना बड़ा दोष है, यम शिरश्छेदन दोष का अभिशाप देते हैं।

76 सूर्य नहीं देखेगा—कहकर पराशर ने धोती को आकाश में फैला दिया। जब सूर्य दिखाई नहीं पड़ता।

77 उस दिन माघ मास शुक्लपक्ष तृतीया तिथि को बीनेता ने दिवस शृंगार करने से इन्कार किया।

78 दिवस में शृंगार करने से आयु क्षीण होती है। उत्पन्न पुत्र सन्तान दुष्ट होती है।

79 दुहिता होने पर वह महारुग्णा होती है। बलहीन और आयुहीन होकर शीघ्र ही विनष्ट हो जाती है।

80 दिन के शृंगार में हे ऋषि ! ऐसी अवस्था होती है। तुम तो ब्रह्मर्षि हो, मैं क्या तुमसे अधिक जानने वाली हूँ।

81 नदी के दोनों किनारों पर लोग भरे हुए हैं। राजकुमारी होकर कैसे विपथ में प्रवेश करूँ।

82 तत्क्षण ब्रह्मचारी ने माया की। बैशाख मास में भी कुहरा आच्छन्न हो गया।

83 ऋषि की मन्त्रशक्ति से नौका मझधार में पड़ी रही। मन्त्रवादी ऋषि के कारण नौका किसी किनारे पर नहीं लगती है।

84 हे पराशर मुनि ! यह धर्म-नौका अगाध जल में है। पाप से भय क्यों नहीं करते हो।

85 कामदेव नामक जो महात्मा है, उसको लंघन न कर सकने के कारण ब्रह्मा ने शाप दिया।

86 धर्म को छोड़कर ऋषि ने कन्या को गोद में पकड़ लिया। योजन-गन्धा के साथ शृंगार-रस में डूब गये।

87 विशेषतः वह महात्मा काम-शास्त्र में पण्डित थे। अनेक रस में वनिता ने शृंगार-भंग किया।

88 मेष मास, शुक्ल पक्ष तृतीया तिथि को ऋषि का शृंगार सम्पूर्ण हुआ।

89-91 तोताल करण भृगुवार, मेष मकरान्ति के सातवें दिन के शुभ योग में नवमें चन्द्र, एकादश वृहस्पति, वामे योगिनी के अमृत क्षण में, माहेन्द्र योग में अत्यन्त सुन्दर कृष्ण-वर्ण एक पुत्र सन्तान पैदा हुई।

92 चन्द्रमा के समान सन्तान उत्पन्न हुआ। सत्यवती उसे देखकर परमानन्दित हुई।

93-95 पराशर ऋषि ने पुत्र को गोद में लेने के समय पुत्र के मुख से जो रुदन हुआ उसमें वेद-ध्वनि उच्चरित हुई।

96 यह देखकर महात्मा का वाक् स्फुरित नहीं हुआ। वत्स के अजपा मन्त्र ने महाब्रह्म का भेद।

97 महाज्ञानी पुत्र को देखकर गंगा ने लाभ किया। भर भर करके गंगा ने नाव को डुबो दिया।

98 नौका डूबने पर ब्रह्म माता तैरने है। नदी के भीतर पुत्र को तत्क्षण पकड़ दिया।

99 बाल शिशु अगाध जल में गिरा दिया। अनादि गंगा ने मुनिदेव व्यास को सम्भाल लिया।

100 गंगा का महाराज जाना लगी। मन में उस अनादि चंचला ने व्यास को छोड़ दिया।

101 अगाध गंभीर जल में गिराकर बाल शिशु अनन्तकोटि ब्रह्माण्ड में हार पाता। ब्रह्माण्ड में जाकर बैठा।

102 विश्व पुरुष का महाब्रह्म भजन अनन्त योगध्यान अनाकार विष्णु ने देखा।

103 अनाकार शून्यगामी ने उसे गोद में लेकर प्रसन्नता पूर्वक हृदय में छिपा लिया।

104 शून्य पुरुष का उसने व्योम वर्ण-चिह्न देखा। कोटि-कोटि ब्रह्माण्ड देखकर प्रसन्न हुआ।

105 महाब्रह्म साधना करके अनादि शून्य पुरुष के गर्भ में प्रविष्ट होकर उसने समस्त कौतूहल देखा।

106 शून्य का शून्य में लखन करके उसने भूत, भविष्य एवं वर्तमान का विधान बाल्यावस्था (अकाल) में ही किया।

107 ब्रह्मा ने अपनी इच्छा प्रकट करते हुए कहा—तुम इस विधान को जगत में प्रसारित करो।

108. घटनाहीन, कारणहीन, शाश्वत भुवन में तुम्हारे अर्थ को जानने वाला कोई नहीं होगा।

109 सत्यवती कहती है—हे बधुओ सुनो। इस प्रकार से सन्तान उत्पत्ति हुई।

110 ये सब वार्ता पाकर दास राजा ने पराशर को मुझे प्रदान किया।

111 कैवर्त्त कुल में मेरा जन्म हुआ था। मुझे अजाति और अगति से व्यास ने मुक्त कर दिया।

112 महाब्रह्म के प्रभाव से सबको एकाकार किया। उस वेदव्यास ने हमारे अनेक पूर्व पुरुषों का उद्धार किया।

113 बेटी! व्यास के वीर्य से जो पुत्र उत्पन्न होगा, वह बलवान, धार्मिक और तेजस्वी होगा।

114 तुम लोग अपने मन में अन्यथा मत लेना। व्यास की प्रसन्नता से परमगति प्राप्त करो।

115 अम्बिका ने कहा—हे सत्यवती! सुनो। स्त्री जन्म जल जावे, हम नीच जाति है।

116 सदैव अशौच, अनीति, अक्रिया द्वारा हमने सब कुछ विनष्ट किया, परन्तु हम सतवन्ती है।

117 मदिरा पीकर जैसे लोग बेसुध हो जाते है और सिर झुक जाता है, ऐसे ही हम सुन्दर पुरुष को देखकर मत हो जाती है।

118 इसीलिए हमारा नाम प्रमदा है। हम अनवरत सुन्दर पुरुष की इच्छा करती है।

119 हम लोग तो उनकी बहुत इच्छा कर सकती है, किन्तु वे महातपस्वी, व्यास क्या नीति का उल्लंघन करेंगे!

120 सत्यवती ने कहा—तुम्हारी इच्छा करते ही मैं इसी क्षण बुला लाऊंगी।

121 बधुएं कहती हैं—इस कार्य में जो पाप होगा, उसका कारण कौन बनेगा?

122 सत्यवती ने कहा—मैं तो तुम लोगों को मिलाती हूं। यह पाप सब मुझे ही होगा।

123-124 यद्यपि, बधुएँ विपथगामी होती हैं, तो गुरुपत्नियाँ उन्हें संयत करके रखती हैं। तुमने जब इस प्रकार का विधान किया, तो मैं तुम्हारी बातों से सहमत हुई।

व्यास के द्वारा अम्बिका के गर्भ से धृतराष्ट्र का जन्म और अम्बिका की मृत्यु

1. वधू को समझाकर सत्यवती जाकर अर्द्धरात्रि में व्यास को ले गयी।
2 अम्बिका के भुवन में जाकर सत्यवती प्रविष्ट हुई । वेदव्यास को समझाकर भीतर भजा।
3 दिव्य पलंग पर सुन्दरी सो रही थी। रत्नमय मन्दिर मे अकेले मुनि प्रविष्ट हुए।
4 व्यास को देखकर सलज्ज और भीत होकर मस्तक झुकाकर शय्या पर महासती पड़ी रही।
5 व्यास पलग पर जा बेठे। अभ्रान्त पुरुष को काम-वाण ने आक्रान्त किया।
6 परम पुरुष को देखकर देवी को बहुत डर लगा। उसका शरीर कदली-पत्र की भांति कापने लगा।
7 तपोनिष्ठ व्यासदेव महा लज्जित हुए, किन्तु काम विह्वल होकर ज्ञानभ्रष्ट हो गये।
8 महात्मा व्यास मौन ने अम्बिका के साथ मिलन के लिए खींचकर उसे आलिंगनबद्ध किया।
9 विनीत होकर व्यास महामुनि ने कहा—हे परमवधू, मानिनी उठो।
10 ज्ञानभ्रष्ट होकर मदन विह्वल महात्मा ने अम्बिका को गोद में ले लिया।
11 विभ्रान्त, सलज्ज, सशंकित, मानिनी, मानवती अह [illegible] होकर बैठी।
12 व्यास अनेक [illegible] कहते है किन्तु वह उत्तर नही देती है, हर्षित नहीं होती है।
13 द्वार पर खड़ी सत्यवती प्रार्थना करती है, हे काम देवता! वधू के मन में प्रीति दो।
14 कामदेवता को मन ही मन याद करती हुई उसी जगमोहन पुरुष को पाँचों मन मे याद करती है।
15. कमलानन्दन अनग योगनिर्जित, तल्लीन, शिव दर्प-भजनकारी की जय है
16 तुम भुवन-सुन्दर हो, मुनियों की तपस्या भग्न करने वाले हो और पुरुष के दर्प को भग्न करते हो।
17 सुन्दर, अनंग, पुष्पधनु, महापद्मन, माधव नारायण-तनुज तुम्हारी जय हो।
18 19. पंच–पुष्प वाण से सुशोभित श्रीहस्त, युवा–जन दर्प-मर्दनकारी मदन, रति देवी-वल्लभ तुम्हारे चरण में नमस्कार हो। हे काम ! तुम अम्बिका के शरीर मे प्रवेश करो।
20 सकल संसार के हितकारी, षट्‌यन्त्र-भोगी, पुष्पचापधारी तुम्हारी जय हो।
21 मदन, मोहन, शोषण, तापन, स्तम्भन—इन्हीं पंचसर मे त्रिपुरारि शिव का तप भग्न किया।
22 तुम्हारे उद्यम से कुमार सम्भव हुआ। उस कार्तिक ने षडानन तारकासुर का वध किया।
23 तुम तारण के कारण, उद्धारण के देवता, कृष्ण नारायण और सकल जनवर्धनकारी हो।
24 श्रीवत्स लक्षण-नन्दन के चरण मे, विनयपूर्वक सारला दास नमस्कार करता है।
25 अगस्त्य ऋषि ने कहा—हे मनमनु के तनुज वैवस्व मनु! तुमने जो पूछा उसे सुना।
26 योजनगन्धा ने जब स्तुति की—उसे सुनकर परम आनन्दित होकर पंचसर योद्धा कामदेव वहां पहुँचा।
27 अम्बिका के अंग मे वह अनंग सुन्दर प्रविष्ट हुआ। मदन के पंचवाणों से भेदा।
28 युवती ने काम-मूर्छित होकर व्यास के साथ रति-इच्छा की।
29 माहेश्वरी और व्यास मुनि ने एकान्त भवन में रति शृंगार किया।
30 वे महात्मा, महान, अव्यय और अजय है। पाषाण की तरह महात्मा स्खलित नही हुआ।
शृंगार बढ़ा। उन पराक्रमी, बलवान, प्रतिभावान और शक्तिमान का महारण चलना आरम्भ करता है।
32 प्राण, अपान, व्यान, उदान, समान—इन पंचात्माओं को रुद्ध करके महात्मा ने इच्छा की।
33 यद्यपि दोनो को विविध प्रकार से शृंगार प्राप्त हुआ; फिर भी लज्जा से सुन्दरी ने उनका शरीर नही छोड़ा।
34 मिथुन अर्कवासर कृष्ण-त्रयोदशी को अम्बिका के साथ व्यास ऋषि ने शृंगार किया।
35 इस प्रकार शृंगार चला। अठारह दण्ड रात्रि में कामदेव ने अर्द्धचन्द्र वाण छोड़ा।
36 महारेत स्खलित हो गया। विन्दु प्रसारित हुआ।

सुन्दरी का दर्प-भग्न हुआ और वह मूर्च्छित हुई।

37. महाब्रह्म भेदकर मुनि ने वीर्य छोड़ा। अमोघरत पड़ने से सुन्दरी की आत्मा विसर्जित हुई।

38. प्राणत्यक्ता होकर वह युवती पड़ी रही। पण्डित, भिज्ञ, यती ने उसको गोद में पकड़ा।

39. मूर्च्छिता सुन्दरी फिर चेतना न प्राप्त कर सकी। एक चन्द्र-प्रभ पुत्र पैदा हुआ।

40. पृथ्वी पर जब बच्चा गिरा तब उसके पदाघात से मेदिनी काँप गयी। मेरु टलमल हुआ।

41. पुत्र-प्रसव करके अम्बिका मर गयी। महात्मा ने पुत्र गोद में लिया।

42. पुत्र को हृदय से लगाकर मुनि ने तुष्ट होकर कहा—तुम्हारा शरीर वज्र हो।

43. शीघ्र ही सत्यवती भीतर घुसी। व्यास ने माता को पुत्र का समर्पण किया।

44. उत्तम मुनिवर सत्यवती की गोद में पुत्र देकर शून्य में अन्तर्धान हो गये।

45. सत्यवती पुत्र को गोद में रखकर विचार करती है कि यह बत्तीस गुणों से पूर्ण अनंग मूर्ति की तरह सुन्दर है।

46. रूप गुण भूलकर देवी पुत्र का निरूपण करती हैं। ध्यान से दोनों आँखों को देखा।

47. सुगठित, सुन्दर, सोहर शुभ सार्थक और सबल पुत्र के चक्षु में दोनों पुतलियाँ नहीं थीं।

48. बार-बार अत्यन्त श्रद्धा से दोनों आँखों को अन्धी देखकर देवी विषादमय हो गयीं।

49. हर्ष को छोड़कर दुखी देवी ने महाकष्ट पाया। पुत्र का नाम धृतराष्ट्र रखा।

50. अम्बिका मृत-शव होकर पड़ी थीं। शान्तनु, भीष्म, भूरिश्रवा पहुँचे।

51. पुत्रोत्पत्ति सुनकर महा आनन्द हुआ किन्तु नेत्र-अन्ध देखकर विपण्णता आयी।

52. ब्राह्मणों को अनेक प्रकार दान दिया गया। अम्बिका देवी को शीघ्र ही श्मशान की ओर ले चले।

53. श्मशान में चितारोहण किया। शास्त्र-विधान के अनुसार प्रेत-कर्म किया।

54. ग्यारहवें दिन घृत-आहुति देकर पारण किया। आनन्द और दुःख के साथ पुत्र का लालन-पालन करते हैं।

55. पुत्र को लेकर सत्यवती सोचती है—इतनी अवस्था से इतनी प्रीति करायी किन्तु फल क्या हुआ!

56. यह पुत्र समय पर राजत्व के योग्य नहीं होगा। किस पाप के फल से सोमवंश ऐसा परित्यक्त हुआ।

57. पण्डित के मुख से तथ्यवाणी सुनी। योग के अनुसार जन्म अनुकूल है।

58. पुत्र का कृत्तिका वृष राशि में शुक्रवार को जन्म हुआ। इसीलिए क्षेत्र में ब्रह्मराक्षस वर्ण हुआ।

59. अगस्त्य ने कहा—हे युगमनु ! सुनो। अन्धे पुत्र को देखकर सत्यवती विषण्ण हुई।

60. यह पुत्र राजा होने के योग्य नहीं हुआ। हे विधाता पुरुष ! तुम प्रतिकार करो।

सत्यवती के द्वारा व्यास का आह्वान और अम्बालिका के गर्भ से पाण्डु का जन्म

1. पुनः देवी ने ध्यान से व्यासदेव का स्मरण किया। माता के पास महामुनि उपस्थित हुए।

2. पुत्र को गोद में रखकर दास राजा की कन्या योजन-गन्धा ने व्यास की गोद में रख दिया।

3. हे बेटे ! इतने कष्ट से जो सन्तान पैदा की, उसके नयन-भ्रष्ट होने से राज्य की अगति हुई।

4. बेटा ! शरीर का मुख्य अंग दोनों आँखें हैं। जो नयन-भ्रष्ट हो गया, उससे क्या आशा की जाय!

5. हे ब्रह्मर्षि ! तुमने इतना बड़ा पाप किया, किन्तु अन्धे पुत्र के कारण वंश उदास हो जायेगा।

6. दुःखपूर्वक सत्यवती ने कहा—पुनः अम्बालिका के शयन-गृह को जाओ।

7. उसके साथ हे पुत्र ! तुम प्रीति करो। राज्य-भार-क्षम पुत्र को पैदा करो।

8. भगवान तपस्वी यह सुनकर दुःखित हुए। हे माँ! कितना असामाजिक पाप कराओगी!

9. सत्यवती ने कहा—बेटा। जब एक बार पाप किया तो फिर पाप से क्यों डरते हो।

10. बेटा ! मेरी शपथ है। इसे मन में धारण मत करो। पाप को दूर रखकर पुत्र पैदा करो।

11. योगेश्वरी ने व्यास को राजी किया। स्वयं अम्बालिका देवी के घर में प्रविष्ट हुई।

12. अत्यन्त भक्ति से अम्बालिका ने प्रणाम किया। सत्यवती ने उसको समझाया।

13. सत्यवती ने कहा—हे बेटी ! अम्बालिका ! सुनो। तुम मेरी एकमात्र कुल-मण्डन हो।

14. अम्बिका के एक पुत्र हुआ। तुम क्यों सन्तुष्ट होकर रही गयीं ? कोई उपाय क्यों नहीं किया ?

15. जिस प्रकार तुम्हें एक पुत्र हो; वैसा ही उपाय तुम करो।

16. अम्बालिका ने कहा—मेरे कर्म में तो पुत्र नहीं लिखा है तो मैं धर्म क्यों छोड़ूँगी।

17. सत्यवती ने कहा—यदि बुद्धि है तो किसी भी प्रकार वंश-रक्षा करना उचित है।

18. दो बहनें यदि एक ही प्रकार होतीं तो कोई बात नहीं। पुत्रवती होने का जो यश उसे प्राप्त हुआ है उसे तुम कैसे सहन कर सकती हो।

19. अब व्यास तुम्हारे भवन में प्रवेश करेंगे। प्रेम से उनकी भक्ति करो।

20. एकनिष्ठ मन से प्रेम-भाव बढ़ाओ। एक राज्य-धर पुत्र तुम्हें प्राप्त हो।

21. शृंगार के समय अम्बिका ने लज्जित होकर नेत्र मूँद लिये, जिससे अन्धा पुत्र पैदा हुआ।

22. व्यास को आनन्द से रति-शृंगार दो। तुम्हें एक राज्य-भार-क्षम पुत्र पैदा हो।

23. यह सुनकर भानवती ने विषाद त्याग दिया। सत्यवती ने अम्बालिका को वस्त्र-भूषित कराया।

24. व्यास को लेकर अन्तःपुर में प्रविष्ट होकर चन्द्रशाला गृह में विराजमान कराया।

25. अम्बालिका को अनेक वेश-भूषित कराकर सत्यवती ने व्यास से मिलन कराया।

26. पराशर-नन्दन ने भिन्न वेश धारण किया। मुनि के शरीर से पाण्डु रंग प्रकाशित हुआ। •

27. चन्दन, अगरु, कर्पूर, कस्तूरी इन चतुःसम और अनेक सुगन्धित पदार्थों का शरीर में लेपन किया।

28. शरीर पर अनेक आवरण और अलंकार धारण किये। ऋषि-रूप छोड़कर राजा की तरह दिखाई पड़ते थे।

29.-30. वे महाब्रह्म, जगत् वन्दनीय अनंगसुन्दर और पुरुषोत्तम हैं। दीक्षा-गुरु ज्ञान-गुरु, शिक्षा-गुरु, महाभिज्ञ, परमगुरु, साधक, अनादि और सर्वज्ञ पुरुष हैं।

31. प्रलय-काल-खण्डनकारी द्वैपायन नारायण ने साठ लाख महाभारत के श्लोकों की रचना की।

32. यह अम्बालिका मदन-भाविनी, परम योगेश्वरी और काम-रसोदीप्ता है।

33. मदन, मन, पवन तीनों का निरोध करके मदन ने उसे आच्छन्न किया। काम योद्धा के साथ उसका मुकाबला हुआ।

34. एक तरफ काम-पीड़ा लेकर मुनिवर बैठे और दूसरी ओर अम्बालिका पलंग पर प्रेम-भाव से बैठी।

35. दास राजा की कन्या धर्म का स्मरण करती हैं। हे धर्म-पुरुष ! सोमवंश का उद्धार हो।

36. मदन के बाण से घायल होकर मुनि ने अम्बालिका को खींचकर आलिंगन किया।

37. पद्मनाभ की कन्या धर्म का स्मरण करती है। भुजा से भुजा भिड़ाकर महात्मा प्रियतमा को प्यार करते हैं।

38. हृदय से हृदय भिड़ाकर, मुख-चुम्बन करके कामातुर मुनि विवस्त्र हो गये।

39. हास्य, लास्य, प्रेम-कौतुक और अधर-पान करने के बाद उसे नग्न करके महामुनि ने आलिंगन में बाँध लिया।

40. रतिशास्त्रानुकूल योग से चन्द्रकला का भेदन किया। वामा का काम-रस क्षरित हुआ।

41. प्रमदा का जब रस स्रावित हुआ तब प्रेम-भाव से भाविनी ने ब्रह्म-सिद्ध को आकर्षित किया।

42. मुख का चुम्बन लेकर दोनों हाथों से जकड़कर अम्बालिका ने मुनि से कहा—हे तपोवन ! मेरे प्राण की रक्षा करो।

43. कामाच्चाट के कारण युवती रति-शृंगार माँगती है। दो जुड़वें वृक्ष की तरह दोनों जड़ित होकर एक हो गये हैं।

44. निर्भय और शाश्वत मुनि ने रतिरंग की इच्छा से लाज-भय छोड़कर मनोकामना पूरी की।

45. काम-भाव से पच्चीस प्रकृति डूब गयी। रति शृंगार

करके ऋषि का माथा हेठ नत हो गया किन्तु वे अशान्त और अतृप्त रह गये।

46.-49. मार्गशीर्ष-कृष्ण चतुर्थी कवार रोहिणी नक्षत्र वृषचन्द्र वृश्चिक संक्रान्ति के प्रथम प्रहर में पूर्ण चन्द्रकला लेकर एक बच्चा पैदा हुआ।

50. मर्कत द्रव की तरह उसके शरीर का वर्ण है। मयूर-चन्द्रिका चित्रित उसका कपाल है।

51. आरक्त पद्म की तरह उसके दो चक्षु हैं। सिंह की तरह वक्षस्थल और कटि है।

52 विस्तारित बाहु मकर-केतन के समान है। चौंसठ गुण और लक्षणो से युक्त अनंग-सदृश है।

53 अनेक लक्षण से युक्त पुत्र उत्पन्न होकर स्वर्ग, मर्त्य और पाताल में विदित हुआ।

54 दोनों कानों में दो अमृत-कुण्डल शोभित है। वक्ष-देश में शुद्ध पद्म-मणि शोभित है।

55 पुत्र को देखकर सत्यवती प्रसन्न हुई। वह दिग्पालों की अनेक स्तुति करती है।

सत्यवती के द्वारा शिव की स्तुति

1. अखिण्डत कपाल पर वाम कर रखने वाले उमापति के चरणो में मेरा शिरसा प्रणाम है।

2 जिसके नेत्र की पुतलियां प्रचण्ड अग्नि की तरह हैं, वे पिनाक, सारंग, त्रिशूल, डमरू, धारण करने वाले शरीर में भस्म लेपनकारी है।

3 जिनका शरीर शुद्ध सुधाकर की तरह निर्मल है वे स्वयं सिद्ध, आदि अनादि स्वरूप, भाव-निग्रही हैं।

4. जो महाभोगी, परमज्ञान–योगी, सर्प-माल-भूषित तनु हैं, उन शिव की पादवन्दना करती हूं।

5. 7 अनेक प्रकार से नरमुण्ड की माला, नागमणि का भूषण, दोलायित कुण्डल, सिर पर पिंगल केश, लोहित जटा, शशांकमौली, ताण्डवभृकुटि, सफेद, पीत, लोहित, हरित विरहित रंग वाले, अग्नि, सूर्य, चन्द्र और अन्धकार के चारों ओर कलाओं से शोभित हैं।

8 9 तुम योगेन्द्रनाथ, परमदयालु, विश्वनिधि, त्रिपुर-अन्धक असुर का शिरच्छेदनकारी, विपुलवसन-अधिकारी होने पर भी उल्लग्न, लज्जा-विरहित, वामदेव, गिरजा-अर्द्धांग देव हो।

10. हे उमापति ! तुमने शुभ अवसर दिया। सत्व, रज और तम गुणों की तुमसे ही उत्पत्ति है।

11. सुरपति, शशि-पद्म-नाथ, तुम्हारा पद्म-पाद मेरे सिर पर भूषित हो।

12 विश्वेश्वर को प्रणाम करके शुद्रमुनि सारलादास कहते है कि मेरे सिर पर त्रिपुरारि का पाद-पंकज अंकित है।

व्यास द्वारा धृतराष्ट्र को दिव्य-चक्षु-दान और संजय से धृतराष्ट्र और पाण्डु को विद्यादान

1 अगस्त्य कहते हैं–हे युगपति ! सुनो। कुरुवंश में कुमार पाण्डु की उत्पत्ति हुई।

2 पुत्र को लेकर योजन-गन्धा आनन्दित हुई। त्रैलोक्य मोहन पुत्र को देखकर सबने श्रद्धा की।

3 व्यास के मुख की ओर देखकर सत्यवती ने कहा–तुमने पुत्रोत्पत्ति करके धर्म-रक्षा की।

4 हे पण्डित ! भिक्षु मुनि ! तुमने सोमवंश का उद्धार किया। तुमसे ऐसा पुत्र उत्पन्न होकर वंश साधु हो गया।

5 आकाश मे सूर्यादि देवताओं ने तुम्हें साधु-साधु कहा। ऐसा एक पुत्र उत्पन्न करने वाला कोई नहीं है।

6. बेटा ! अम्बिका से तुमने कुल का ज्येष्ठ पुत्र पेदा किया। चक्षुविहीन होने के कारण उसका नाम धृतराष्ट्र हुआ।

7 पुत्र ! तुम्हारी महिमा अलौकिक है। तुमसे इतना बलवान पुत्र पदा हुआ।

8 माता के वचन से धृतराष्ट्र पर दया करके महामुनि ने उसके हृदय में दिव्य चक्षु दिये।

9. भीतर से देखने पर उसे सब कुछ दिखाई देता है। उसके साथ मुनि गालब के पुत्र को रख दिया।

10.-12 अन्तःसिद्धि, कर्णसिद्ध, रसायन, धातुवाद विद्या, आकर्षण-विकर्षण दृष्टि, मन्त्र-सिद्धि, क्रमशः वेदपाठ, अंग-न्यास-ध्यान, ब्रह्म बूटिका अंजन, रमरसायन, आदि संजय कुमार ने पढ़ाया।

13-14. शस्त्र विद्या सुर-सागर, संकल्प, बल, ज्ञान, ध्यान,

शास्त्र, संहिता, सकल वेद-विद्या आदि से संजय को सर्वजयी बनाया। फिर चौदह विद्या और एक सौ भाषा में पारंगत कराया।

15. उन्होंने धार्मिक, विवेकी गालब के पुत्र को अन्ध-पुत्र का प्रिय सखा बनाया।

16. व्यास के अनुग्रह से महा धार्मिक, बलिष्ठ धृतराष्ट्र संजय के कहने पर शिक्षा ग्रहण करते हैं।

17. देवी ने अनेक यत्न से पुत्र को पाला। पुत्र को देखकर मुनि अन्तर्धान हो गये।

18. पुत्र की उत्पत्ति देखकर भीष्म, भूरिश्रवा, पराशर, शान्तनु हर्षित हुए।

19. दास राजा की कन्या सत्यवती द्वारा पालित दोनों पुत्र धृतराष्ट्र और पाण्डु अध्ययन करते है।

अम्बालिका द्वारा प्रयाग में आत्म-विसर्जन

1. अम्बालिका ने कहा—हे सत्यवती ! सुनो सत्य का उल्लघंन करने से मेरी अधोगति हुई।

2. दुराचर पाप करके मैंने सन्तान उत्पन्न की। मेरा यह दूषित कर्म वंश के लिए बड़ा लज्जास्पद है।

3. अनेक पातकों से मैं बोझिल हो गयी हूँ। मेरे उत्पन्न पुत्र को सँभालो।

4. मेरी चिन्ता मत करो। हे देवी ! पुत्र का यत्नपूर्वक पालन करो। मै प्रयाग तीर्थ को जाऊँगी।

5. दोषदहन के लिए मैं तीर्थ में अवश्य आत्म-त्याग करूंगी। मुझे प्रसन्नतापूर्वक आशीर्वाद दो।

6. राज्यधर पुत्र के रहते हुए बेटी ! कैसे जाओगी ! ऐसा कहा किन्तु धर्मार्थ के लिए माता ने मना नहीं किया।

7. वह तपस्विनी रूप धारण करके बारह युवतियों को साथ लेकर तीर्थ-वास के लिए चल दी।

8. माता की श्रद्धा और अनुराग, मोह को छोड़कर पाँच महीने में प्रयाग पहुँची।

9. तुलामास शुक्ल पक्ष शनिवार चतुदर्शी को रोहिणी नक्षत्र में देवी प्रयाग में प्रविष्ट हुई।

10. स्नान करके देवी ने माधव-दर्शन के बाद वट-वृक्ष के नीचे ब्राह्मणों को दान दिया।

11. हे देव माधव ! मेरा और कोई पाप नहीं है। दूसरों से हिंसा, अपवाद नहीं किया था।

12. वंश के लिए गुरुजन के आदेशनुसार मैंने भूसर के साथ रति-शृंगार करके एक मात्र पाप किया।

13. हे श्रीरंग मेरे इस दोष का खण्डन करके स्त्री-धर्म-दोष से मेरा शीघ्र उद्धार करो।

14. इस प्रकार के दोष के लिए पद्मनाभ की कन्या ने सूर्य का स्मरण करके त्रिवेणी संगम में आत्म-विसर्जन किया।

15. गुरु रमणदोष समस्त समाप्त हुआ। वह निरंजन स्वरूप में आकाश में अवस्थित हुई।

लोकेश्वर द्वारा पाण्डु और धृतराष्ट्र को विद्यादान

1. धृतराष्ट्र और पाण्डु दोनों भाई बढ़ रहे हैं। गालव-पुत्र ने प्रसन्नतापूर्वक उन्हें विद्या दान की।

2-3. वृषभ मास पूर्णिमा तिथि, सोमवार, ज्येष्ठा नक्षत्र बब करण के शुभ योग मे आकर व्यास वारुणावन्त में उपस्थित हुए।

4. दोनों पुत्रों को सत्यवती ने व्यास की गोद में दिया।

5. दोनों पुत्रों को देखकर पराशर तनुज प्रसन्न हुए। धृतराष्ट्र और पाण्डु को दोनों जंघाओं पर बैठाया।

6. संजय ने जो विद्या पढ़ाई थी, उसको व्यास के सम्मुख सम्पूर्ण रूप मे सुनाया गया।

7-13. हैहय वंश के चन्द्रगुरु के पुत्र भाव गुरु, भाव गुरु के पुत्र वराणचन्द्र गुरु, उनके पुत्र रुद्रेश्वर गुरु, उसका पुत्र विमुख गुरु, उसके पुत्र लोकश्वर गुरु थे। इस सारे गुरुवंश ने उन्हें ऐसी विद्या सिखायी जिसे किसी ने न कभी सुना था और न देखा था।

14. व्यास ने लोकेश्वर गुरु को बुलाकर दोनों पुत्रों को शस्त्र और शास्त्र विद्या पढ़ाने के लिए कहा।

15. व्यास की आज्ञा से गुरु लोकेश्वर ने वन के भीतर एक अखाड़ा बनाया।

16-17. वे लोकेश्वर गुरु सर विद्या सिखाते हैं। वे धनु, द्रोण, ढाल, तलवार, मल्ल-विद्या, डमरू, परिघ, भाला, नाराच, असिपत्र, जाठी, सभी विद्याओं में निष्ठापूर्वक प्रवीण हुए।

18 वेदशास्त्रमन्त्र आदि अनेक विद्याओ से वे पण्डित भाग्यवान पुत्र युक्त हुए।

19-21 नक्षत्र-व्यायव्य करण-इन्द्रयोग में कर्कट संक्रान्ति के इक्कीसवें दिन लोकेश्वर गुरु कुमारो को विद्या पढाने के समय अखाडे में भाग्यवर व्यास प्रविष्ट हुए।

22. नाना विद्याओं से प्रवीण उस पाण्डु के ऊपर भाग्यवर व्यास प्रसन्न हुए।

24 आदि गुरु ने सार्थक शस्त्र-मन्त्र सिखाया, जिससे शब्द भेदी अस्त्र का प्रयोग कर सकेगा।

25 प्रसन्न होकर शब्दभेदी विद्या के साथ अनेक विद्याये पाण्डु को सिखाई।

धृतराष्ट्र का विवाह-प्रस्ताव और अनेक राज-कन्याओं की मृत्यु

1 सत्यवती ने भीष्म को बुलाकर कहा—एक कन्या खोजकर धृतराष्ट्र का विवाह कराओ।

2 3 भीष्म महारथी यह सुनकर प्रसन्न हुए। शाल्य राजा की शाल्यती नामक एक कन्या थी। भीष्म ने अपने हाथ से शाल्य राजा को पत्र लिखा। अपनी कन्या मेरे पुत्र को प्रदान करो।

4 शाल्य भीष्म का वचन सुनकर परम प्रसन्न हुआ। धृतराष्ट्र को प्रदान करने के लिए कन्या को समारोह के साथ लाया।

5 शाल्य नृपति ने सैन्यदल लेकर दुहिता के साथ सत्यवती से भेंट की।

6 शाल्य राजा ने जिस दिन संकल्प किया उसी दिन रात्रि में कन्या ने प्राण-त्याग किया।

7 शाल्य देखकर बहुत विकल हुआ। यमुना के किनारे कन्या का दाह करके लौट आया।

8 अनग देश के अनगसेन राजा के कालिन्दी नामक एक दुहिता थी।

9 उसको राजा धृतराष्ट्र ने वरण किया। एक माला देकर संकल्प किया।

10 वरण करके शान्तनु इधर लौटे। उसी दिन वह कन्या मृत्यु को प्राप्त हुई।

11 निर्झर देश के राजा गणपति के घर में एक कन्या पैदा हुई।

12 उसका नाम शरधृति है। सत्यवती के सामने पराशर ने धृतराष्ट्र के लिए कन्या का वरण किया।

13 निर्झर देश के राजा गणपति प्रसन्न हुए। मैं बहुत भाग्यवान हूँ—कहकर नगर मे उत्सव कराये।

14 सोमवंश को अपनी कुमारी का प्रदान करूँगा। यह वंश पृथ्वी के मध्य देश का अधिकारी है।

15 निर्झर गणपति ऐसा कुछ सोच रहे हैं, तब तक उसी रात्रि को कन्या की मृत्यु हो गयी।

16 इस प्रकार अनेक कन्याओं के क्षय-प्राप्त होने के बाद दूसरी कन्याओं का वरण किया।

17 18 कर्ण-माधव राजा ने कन्या प्रदान करने के लिए धृतराष्ट्र के नाम जब संकल्प किया, उसी दिन नाम लेते ही उस कन्या को साप ने काट लिया और उसका देहान्त हुआ।

19 वैवस्वत मनु ने अगस्त्य ऋषि से पूछा—धृतराष्ट्र का नाम लेते ही कन्याएं क्यों मृत्यु को प्राप्त होती है।

20 अगस्त्य ने उत्तर दिया कि इसकी कृत्तिका वृषराशि है और जाति में ब्रह्मराक्षस है, इसीलिए कन्याएं मृत्यु को प्राप्त होती है।

21 व्यास जैसे ऋषि के वीर्य प्रदान करने पर भी उसने ब्रह्मासुर रूप में क्यों जन्म लिया?

22 कृत्तिका योग में ऋषि ने शृंगार आरम्भ किया और रोहिणी योग में वीर्य-त्याग किया।

23 अम्बिका कन्या रति-शृंगार न सहन करने पर मृतप्राय होकर मूर्छित हुई।

24 कामातुर होकर महात्मा ने रेत-त्याग किया। इसीलिए ब्रह्म-राक्षस लक्षण से युक्त पुत्र पैदा हुआ।

25 26 अगस्त्य ने वैवस्वत मनु से कहा—धृतराष्ट्र का ऐसा योग हुआ। ब्रह्मासुर लक्षण से युक्त होने के कारण कन्याओं का वरण होने से विनाश होता है।

27 वैवस्वत मनु ने कहा—तो फिर कैसे होगा? हे भगवान! यह बात मुझे समझाकर कहो।

28 अगस्त्य ने कहा—हे युगपति सुनो। धृतराष्ट्र के वरण से एक सो एक कन्याएँ मृत्यु को प्राप्त हुई।

29 वज्रगिरि देश के राजा वीरकेतन ने आकर एक कन्या

प्रदान की।

30 उस नरपति ने अपनी चन्द्रावती नामक कन्या को अनेक समारोहो के साथ लाकर प्रदान किया।

31 धृतराष्ट्र दोनों आखो से अन्धा था। विवाह करने के लिए दूसरे देश मे नही जाता क्योकि लोग देखकर उपहास करेंगे।

32 वश से विशेष गरिष्ठ होने के कारण व नृपति इस प्रकार दूसरे राष्ट्र से कन्या लाते है।

33 वे विवाह करने के लिए वारुणावन्त म कन्याओ को लाते है। अब भी सोमवश-राज्य मे यह रिवाज बना हुआ है।

34 उस दिन मे राजगण विवाह के लिए नही जाते है। कन्याएँ ही अपने भुवन स आती है।

35 उस वारकनन ने कन्या प्रदान की और मधु शय्या पर विधिपूर्वक उसे शयन कराया।

36 केलि-क्रीडा समाप्त करके वे कन्या सो गये। वह चन्द्रवदना मरी हुई पाई गई।

37 प्रात काल सुन्दरी को शमशान ले जाया गया। दहन करके ग्यारह दिन म शुद्ध हुए।

38 विवाह योग करने से जब अनेक कन्याये मर गयी, तब धृतराष्ट्र के लिए कोई कन्यादाता नही हुआ।

विदुर का जन्म

1 एक बार मुनि आये। उन्हे देखकर सत्यवती प्रसन्न हुई।

2 व्यास को बुलाकर वह एकान्त मे कहती है। अम्बुवती मेरी बहुत भक्ति करती है।

3 हरिकेश देश के राजा केशव शूद्र योनि मे उत्पन्न है। उसकी नन्दिनी अम्बुवती विचित्र-वीर्य राजा को प्रदत्त हुई।

4 हे बेटा! जब ये दोनो पुत्रवती हो गयीं तो अम्बुवती का मन विकृत हो गया।

5 तुम मेरे पण्डित परम ज्ञानवान पुत्र हो। अम्बुवती से एक पुत्र पैदा करो।

6 माता की बात से वे मुनिवर अम्बुवती के भवन मे प्रविष्ट हुए।

7 अम्बिका और अम्बालिका के प्रकरण को वह जान रही थी। अत वेश-भूषित होकर तत्क्षण तैयार हो गयी।

8 वह प्रियवती युवती व्यास के रति-शृगार का भाग करके मिलन-रस मे निमज्जित होकर हर्षित हुई।

9-11 तुला मास कृष्ण-पक्ष सप्तमी वृहस्पतिवार पुष्य नक्षत्र साध्य योग बव करण से अपूर्व चन्द्रप्रभ पुत्र पैदा हुआ।

12 परम पण्डित व्यास ने देखा कि अमृत योग लेकर पुत्र उत्पन्न हुआ।

13 वह पुत्र पैर की ओर से पैदा हुआ। उसके दोनो पैर मे पद्म चिह्न और करतल मे शख-मीन चिह्न अंकित थे।

14 विद्वद्वर की तरह दिव्य वाणी मे बोलता था। इसीलिए व्यास ने उसका नाम विदुर रखा।

15 गोद मे लेकर व्यास ने मुख-चुम्बन लिया। कहा—तुम भूत-भविष्यत् ज्ञात होओ।

16 हे बालवत्स! तुम सर्वदर्शी होओ। किसी भी समय लक्ष्मी तुम्हारा साथ नही छोडेगी।

17 समर-कौशल बुद्धि से दूर रहो। पाण्डित्य और धार्मिकता मे तम्हारा दिन क्रमशः बीते।

18 ऐसा वर देकर ब्रह्म गुरु ने पुत्र को सत्यवती की गोद मे समर्पित किया।

19 पराशर ने कहा—धृतराष्ट्र जाति से ब्रह्मराक्षस है। इसीलिए वह जिस कन्या का वरण करता है, उसकी मृत्यु होती है।

20 व्यास न कहा—हे मा कुछ चिन्ता मत करो। वह मन्द क्षण मे पेदा हुआ। मै उसका उपाय करूंगा।

व्यास का गान्धारसेन के साथ साक्षात्कार

1 यह कहकर व्यास अन्तर्धान हो गये और गान्धारसेन के आवास मे पहुंचे।

2 गान्धार राज्य के नृपति गान्धारसेन के एक सौ पुत्र और एक ही दुहिता थी।

3 दुहिता का नाम गान्धारी था। वह मन्द क्षण में पैदा होने से ब्रह्मासुरी थी।

4.-5. ज्येष्ठ मास, कृष्ण पक्ष, अमावस्या रात्रि में कृत्तिका नक्षत्र में वह उत्पन्न हुई। गान्धारी अमावस्या की घनी रात्रि, कृत्तिका नक्षत्र वृष राशि में जन्म होने से ब्रह्मासुरी हुई।

6. गान्धारसेन राजा जिस राजा को माला देकर वर रूप में वरण करता है, वह मर जाता है।

7. उडंग देश का नृपति भानुवन्त गान्धारी को वरण करके तत्क्षण मर गया।

8. महाराष्ट्र का नृपति विरूपाक्ष गान्धारी को वरण करके मृत हुआ।

9. निकट के कोई राजा गान्धारी से विवाह नहीं करते थे। दूर के बाईस राजा गान्धारी का वरण करके मर गये।

10 गान्धारी किसी को प्रदत्त नहीं हुई। इसलिए गान्धार सेन दुहिता को देखकर विकल हुआ।

11 गान्धारसेन दुहिता के विषय में सोचता है—इस लक्ष्मी जैसी दुहिता के समान वर इच्छा करने पर कहाँ पाऊँगा!

12. कुम्भ मास कृष्ण पक्ष प्रतिप्रदा के दिन व्यास मुनि गान्धारसेन के भवन में प्रविष्ट हुए।

13. देखकर गान्धार नृपति प्रसन्न हुए और व्यास के चरणों का जल से प्रक्षालन किया।

14 गान्धारसेन ने खुद पांव धोकर चरणामृत को अपने सिर पर छिड़का।

15. नूतन और सूक्ष्म वस्त्र, कुण्डल, रत्नमाला, आसन, पादासन, पादार्घ्य देकर महाराज ने दिव्य पूजा की।

16. सुवर्ण सिंहासन पर व्यास को बैठाया। भृत्य की तरह होकर व्यास से पूछा—हे मुनि ! मुझ पर अनुग्रह करो।

17. प्रत्यक्ष देवनारायण वेदव्यास मुझे गति-मुक्ति देंगे। मेरा वंश देखो मोक्ष गति को प्राप्त हुआ।

18. यह तुम्हारी चरण-धूलि मेरे घर में पड़ी। अनायास मुक्ति के कारण को प्राप्त किया।

19. अत्यन्त विनीत होकर गान्धारसेन ने स्तुति करके कहा—हे देव ! तुमने कथा द्वारा संसार को मुक्ति गति दी।

20. मैं जन्म-जन्म से तुम्हारा दासानुदास हूँ। हे नाथ ! तुमने अमृत वचन से संसार को तारा।

21. भूत, भविष्य और वर्तमान को लेकर तुमने ग्रन्थ की रचना की। अनाकार मन्त्र से तुमने शून्य पुरुष का उद्‌बोधन किया।

22. अनादि विष्णु ने अपने वक्षस्थल में तुम्हें स्थान दिया। महाप्रलय काल में तुम नारायण रूप को देखते हो।

23. गान्धारसेन ने व्यास के चरणों में शत-सहस्र दण्डवत् प्रणाम करके अनेक प्रकार से स्तुति की।

24 श्री सत्यवती-नन्दन का चरण मेरे हृदय में है। शूद्र मुनि सारला दास सदानन्द के पद्‌मपाद में प्रणाम करता है।

25 अगस्त्य मुनि कहते हैं कि हे वैवस्वत मनु ? सुनो। गान्धारसेन नृपति का व्यास ने कल्याण किया।

26 हे राजा ! बैठो। तुम्हारी मनोवांछा सिद्ध हो। अनिष्ट की शान्ति हो और कुल कुशल-क्षेम से पूर्ण हो।

27 तुम्हारे सब सहोदर भाई कुशल से तो हैं ? तुम्हारी पटरानी अन्तःपुर में कुशलपूर्वक तो है ?

28 तुम्हारे पुत्र सन्तान भाग्य से सदाचारी तो है ? नाती लोग आरोग्य तो हैं?

29. देवता और ब्राह्मण में भक्ति रखते तो हो ? हव्य की आहुति प्रतिदिन देते तो हो ?

30 दुखी दरिद्र को अन्नदान तो करते हो ?

31 शून्य पुरुष वृष्टि तो करते हैं ? ठीक प्रकार से पृथ्वी से शस्य उत्पन्न होता तो है ?

32 संसार का पालन हे राजा ! करते तो हो ? तुम्हारी जन-प्रजा कुशल से तो है?

33. प्रजा-पालन में अन्याय तो नहीं करते हो ? दैत्य दानवों का साध्य तो करते हो ?

34. तीर्थ में असुरों का उपद्रव तो नहीं है ? सर्व तपोजनों की रक्षा करते तो हो ?

35. राज्य उत्तम नीति से चल तो रहा है ? संसार का शुभ ही राजा का सबसे बड़ा कर्त्तव्य है।

36 मेरा सारा कुशल हे महामुनि ! सुनो। मेरी कथा ध्यान पूर्वक सुनिये।

37 हे स्वामी ! मेरी गान्धारी नामक एक कन्या है। कृत्तिका वृष राशि में उत्पन्न, जाति से ब्रह्मासुरी है।

38. वर्तमान मैंने जितने राजाओं का वरण किया; वरण करते ही वे बाईस राजा मृत्यु को प्राप्त हुए।

39. भयभीत होकर कोई दुहिता को प्रदान नहीं हुआ। वह युवती होकर मेरे घर में पड़ी है।

40. जब रजवती दुहिता पिता के घर में रहती है तो उसके शोणित से पितृ लोग स्नान करते हैं।

41 ऐसा पाप मैंने पुराणों से सुना है। शरीर कलंकित जानकर मेरी आत्मा दुःखित है।

42 हे पराशरतनय ! मेरा प्रतिकार करें। गान्धारी के लिए कोई उपाय करना है।

43 व्यास ने कहा—हे राजा ऐसा ही होता है। सत्ताईस नक्षत्रों में ही तो सभी पैदा होते है।

44 आश्विनी-मघा-मूल के आदि तीन दण्ड-दोष का नाम गण्ड है।

45 यह शास्त्र मे लिखा है कि ज्येष्ठा, अश्लेषा, रेवती शेष पाँच दण्ड में गण्ड दोष लगता है।

46 जिस दिन में आश्विनी-त्रिदण्ड पडता है, तब पुत्र-कन्या उत्पन्न होने से यह गण्ड दोष लगता है।

47 पिता को इसी योग मे रात्रि को जब पुत्र उप्पन्न होता है तो पिता को एक वर्ष तक गण्ड दोष लगता है।

49 दोनों सन्ध्याया मे जब सन्तानोत्पत्ति होती है। तब सन्तान तत्क्षण मर जाती है।

50 मघा नक्षत्र के आदि तीन दण्ड में पैदा होने से पॉच वर्ष तक गण्डदोष लगता है।

51 मूल नक्षत्र के आदि तीन दण्ड मे पुत्र पैदा होने से चार वर्ष तक गण्ड दोष लगता है।

52 ज्येष्ठा नक्षत्र के अन्तिम पाच दण्ड में पैदा होने से दो वर्ष तक गण्ड दोष लगता है।

53 अश्लेषा-रेवती के अन्तिम पाँच दण्ड में पैदा होने से पांच वर्ष तक गण्डदोष लगता है।

54 इन सब योग वाले दिन सन्तान पैदा होने से पिता को गण्डदोष लगता है।

55 रात्रि-काल में यदि सन्तानोपत्ति होगी तो माता को गण्डदोष लगेगा—ऐसा अगम्य मुनि ने कहा है।

56 उभय सन्ध्या में बालोत्पत्ति से काल उसका पराभव करता है।

57. इन सब नक्षत्रों में गण्डदोष लगता है। गान्धारसेन के सामने व्यास ने यह कहा।

58 देव, मनुष्य, असुर कुल में जो पैदा होते हैं. इनका स्वभाव-निर्णय कैसे किया जा सकता है।

59. अश्विनी, मृगशिरा, पुष्य, हस्त, रेवती, श्रवण, पुनर्वसु, अनुराधा, स्वाति नक्षत्र लेकर उत्पन्न होने वाले पुत्र कन्या-देवांशी होते हैं।

60-61 द्विज, आर्द्रा, रोहिणी, उत्तरा भाद्र, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तरपूर्वा-षाढ़ा, पूर्वा भाद्र, उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र में पुत्र-कन्या पैदा होने से मनुष्य जाति का होगा।

62 कृत्तिका, मघा, विशाखा, ज्येष्ठा, शतभिषा, अश्लेषा, धनिष्ठा, चित्रा, मूल नक्षत्र में राक्षस होते हैं।

63 कृत्तिका नक्षत्र के अमावस्या को पैदा होने से गान्धारी ब्रह्मासुरी हुई।

64 उस अमावस्या के दिन चन्द्रमा नष्ट हो जाता है। उस दिन अति दोष लेकर कन्या उत्पन्न होती है।

65. अमावसी कन्या जिस पुरुष से ब्याही जाती है, उससे देह-स्पर्श से यश और आयु नष्ट होती है।

66 व्यास ने गान्धारसेन से यह बात बताई तो उसे सुनकर गान्धारसेन राजा मूर्च्छित होकर गिर पडा।

67 उसके विजयसेन मन्त्री ने ऊपर उठाकर गोद में उसे ले लिया। पण्डित भिड़ायती ने उसे स्वस्थ किया।

68 व्यास ने कहा—हे राजा गान्धार ! सुनो। इसके प्रतिकार के लिए मेरे पास एक उपाय है।

सिंहोर साहाड़ा वृक्ष-माहात्म्य

1 गोलक वृक्ष से सूर्य के रथ का चक्र बनता है। महाकल्प वृक्ष महापातक दूर करता है।

2 प्रजापति ने प्रथमतः इसकी रचना की जिसके दोषयुक्त कन्या से विवाह करने की युक्ति बताई गयी है।

3 गान्धारसेन ने कहा कि यह वृक्ष मेरे भवन के मध्य में ही है। हे मुनि ! में उसकी नित्य पूजा करता हूँ।

4 व्यास ने कहा—हे भाग्यवान राजा ! तुम सिंहोर वृक्ष की पूजा करते हो, इससे क्या लाभ है ?

5. गान्धारसेन ने उत्तर दिया—इस सूर्य के रथचक्र के दर्शन करने से असंख्य कोटि पापों का विनाश हो जाता है।

6. व्यास ने कहा—हे राजा ! ऐसा नहीं है। मुझसे शास्त्र सम्मत विधान सुनो।

7. वृषभ मास कृष्ण पक्ष दशमी तिथि गुरुवार सतभिषा नक्षत्र में विश्वनाथ स्वामी विराजमान हुए।

8. पिनाकी, शुलपाणि, नन्दिकेश्वर देव वृषभ के पृष्ठ पर आरूढ़ होकर जा रहे हैं।

9. हृदय पर सात फेरा होकर साँप का आभूषण है। अन्तरिक्ष में नौ लाख डमरू बजते हैं।

10. स्वामी देवराज आनन्द से विहार कर रहे हैं। बैल पर चढ़कर देव मध्यपुर में पहुँचे।

11. अनेक तीर्थो मे प्रवेश करते आराम से आ रहे है। महेश्वर वैतरणी नदी के किनारे चल रहे हैं।

12 वाम पार्श्व में एक सिहोर का वृक्ष है। बैल ने इस वृक्ष के एक पत्ते को माथे पर रखा।

13 ईश्वर ने पूछा, हे महावृषभ सुनो ! इस पत्त को माथे पर रखा क्या लाभ होगा ?

14. वृषभ ने कहा—देव ! वाम पार्श्व में सिहोर वृक्ष होन पर एक पत्र सिर पर रखने से अमृत-भोजन मिलेगा।

15. दाहिने पार्श्व में बेर के वृक्ष होने पर उसके पत्र को सिर पर लेने से शत्रु का नाश हो जाता है।

16 हे शिव ! सुनो। सामने श्वेत दूब देखकर सिर पर लेने से अनेक रोग दूर हो जाते है।

17. 18. पीछे फिरकर तुलसी वृक्ष को देखकर उसके झरे हुए पत्ते को सिर पर रखने से जाने-अनजाने सारे पाप तत्क्षण दूर हो जाते हैं।

19. वृषभ ने यह चरित कहा कि सिहोर पत्र को ग्रहण करने से सुपक्व अन्न प्राप्त होता है।

20. सदानन्द ने कहा—सिहोर पत्र लेने से भोजन प्राप्त होता है—इसकी मैं परीक्षा लेकर जानूँगा।

21 चौदह भुवनों में महादेव घूमे किन्तु पानी, घास और आहार के पास वृषभ को नहीं ले गये।

22. जी भरकर वे वृषभ को गिरि, अरण्य ओर आकाश में घुमाते रहे।

23. सूर्यास्त के समय पंचानन, त्रिनेत्र कलाश के पास पहुंचे।

24 अमृतभोजन बनाकर उमा स्वामी का रास्ता जोहते-जोहते खिन्न हो गयीं।

25. तेरह घड़ी सूर्य के चले जाने पर ठाकुराने स्वयं भोजन करने के लिये बैठीं।

26. सुवर्ण थाली में सारा भोजन—पीठा, खीर, खोआ, छैना और रबड़ी आदि रखा।

27-28. सुवर्ण कटोरे में सब कुछ भरकर देव और पितृ लोगों को अन्न पानी देकर मुख में पाँच बार स्पर्श करके पानी छिड़ककर तीन बार आचमनी करने के समय डिमडिम डमरू बजने लगा।

29. गोस्वामिनी सुनकर दुःखी हुई। ईश्वर आ रहे हैं, मैं कैसे भोजन करूँगी ?

30. संकोच से भोजन छोड़कर जल्दी से उठ गयीं। बैल के नाद में ले जाकर छिपा दिया।

31. पीठा, खीर, शाक को कंचुक पट में भर दिया। मुँह धोकर देवी बाहर आई।

32. रत्ननिर्मित घड़े में जल भरकर शिव के सम्मुख देवी उपस्थित हुई।

33 सदानन्द ने नन्दिकेश्वर को बुलाकर ओदश दिया—वृषभ को लेकर नाद मे लगा दो

34. आज्ञानुसार नन्दिकेश्वर ने उसको ले जाकर यत्नपूर्वक खूँटे से बाँध दिया।

35 नन्दिकेश्वर का बुलाकर ईश्वर ने आज्ञा दी कि पुआल, घास, आहार, जल अन्न आदि बेल को कुछ मत देना।

36. स्वामी की आज्ञा से दृढ़तापूर्वक बाँध दिया। वज्र पल्ले को खीचकर किवाड़ जकड़ दिये।

37. वृषभ सोचता है, ईश्वर मेरी परीक्षा कर रहे हैं। सूर्यनाथ ने क्यों इसका विचार नहीं किया ?

38. जब मेरी यह बात निष्फल हो जायेगी, तब सूर्य की कौन किस युक्ति से भक्ति करेगा ?

39. निस्पृह होकर बासी पुआल मुख में देने पर देखा कि अमृत भोजन नाद में भरा हुआ है।

40. सन्तोषपूर्वक वृषभ ने भोजन किया। एकनिष्ठ होकर आनन्द से सूर्यदेव का स्मरण किया।

41. भोजन करके वृषभ आनन्दित हुआ। हे पण्डित जन ! सूर्य देवता की नित्य वन्दना करो।

42. मैं तो ईश्वर के कष्ट से पार हुआ। यम फिर मेरा क्या कर सकता है!

43. सूर्यनारायण की कृपा से हाथों-हाथ फल प्राप्त होता है। शूद्रमुनि सारला दास सूर्य के पद्म-पाद की

वन्दना करते हैं।

44. व्यास ने कहा—हे गान्धारसेन ! सुनो । इस पत्र को सिर पर धारण करने से ऐसा फल मिलता है।

45. खाकर वृषभ तृप्त हुआ। प्यास के लिए पन्ना और भूख के लिये अमृत-भोजन पाया।

46. महातृप्त होकर वृषभ सोया है। शुभ में (आनन्द से) रात्रि बीत गयी।

47. देव शिव कपाट खोलकर वृषभ के लिए विकल होकर भीतर घुसे।

48. ईश्वर वृषभ की ओर देखकर हँसे। सिंहोर वृक्ष का ध्यान करके तुमने क्या फल प्राप्त किया ?

49. बैल ने कहा—देव! शास्त्र मिथ्या नहीं है। सूर्य के जितने भक्त हैं वे सुख से पार हो जाते हैं।

50. ईश्वर ने कहा—तुमने जिस प्रकार प्राप्त किया; उसी प्रकार संसारजन को प्राप्त होवे।

51. वृषभ ने कहा, देव ! सचमुच पाया। तुम्हारे भोजन से पहले मैंने खा लिया।

52. हे स्वामी ! जो जिसका भक्त होता है; उसकी चिन्ता उसका उपास्य अवश्य करता है।

53. यदि स्वामी को सेवक की चिन्ता नहीं होगी, तो किस प्रकार यह संसार पार होगा।

54. तुम्हारे भोजन के लिए जितनी व्यवस्था हुई थी, तुम्हारे खाने से पहले मैंने उसे प्राप्त कर लिया।

55. स्वामी झुककर मेरे नाद को देखो। कर्पूर रस की तरह सुगन्धि से आमोदित हो रहा है।

56. यह रूप देखकर ईश्वर विषण्ण हुए। लज्जित होकर उन्होंने पार्वती से पूछा।

57 वृषभ को मेरा भोजन किसने दिया ? हे देवी ! तुम इसका तथ्य जानती हो ?

58-59. ईश्वर की बात सुनकर पार्वती हँसी। तुम्हारे आने में देर देखकर मैं सारा भोजन लेकर खाने बैठी थी। इसी समय डमरू का शब्द हुआ।

60. क्षुधित होने के कारण तुम मुझसे क्रोध करोगे। यह सोचकर मैंने सब कुछ वृषभ के नाद में भर दिया।

61. गिरजा के वचन सुनकर सदानन्द हँसे। देवतागण ऐसा करके प्राप्त कराते हैं।

62. पराशर-पुत्र व्यास कहते हैं—सूर्य की सेवा करने से ऐसा तपफल मिलता है—यह विदित है।

63. हे राजा ! अभी चलो सिंहोर वृक्ष देखेंगे। गान्धारी को उसे प्रदान करेंगे।

64. प्रासाद के भीतर आँगन में गोलकवृक्ष सिंहोर को वर वेश में सुसज्जित किया।

65. कन्या-वेश में गान्धारी को सुसज्जित किया। मंगल-वाक्य से उसको स्वीकार करके वरण किया।

66. उदक-पाद-गोत्र उस शकट वृक्ष का है। वृन्दारक गोत्र गान्धारसेन वंश का है।

67. उभय-कुल गोत्र का मुनि ने उच्चारण किया। गोलक वृक्ष को गान्धारी प्रदान की गयी।

68. गान्धारी के हाथ को गोलक वृक्ष की डाल पर रखकर मन्त्रोच्चार द्वारा मुनि कुश बन्धन करते हैं।

69. गान्धारी और वृक्ष जब एक साथ जुड़ गये, तभी सिंहोर वृक्ष मर गया।

70. उसे देखकर व्यास मुनि चकित हुए। गान्धारसेन नृपति दुःखी होकर बैठे।

71. व्यास ने कहा—हे राजा ! चिन्ता मत करो। इसका समस्त दोष समाप्त हुआ।

गान्धारी के साथ धृतराष्ट्र का विवाह

1. अब तुम मेरी बात मानो। अपनी गान्धारी मेरे धृतराष्ट्र को प्रदान करो।

2. व्यास की बात से राजा सेना सज्जित कर हस्तिनापुर चलता है।

3. गान्धारी को लेकर व्यास मुनि चले। वह युवती धृतराष्ट्र को प्रदान की।

4. धृतराष्ट्र का कृत्तिका वृषराशि और ब्रह्मासुर वर्ण है। गान्धारी अमावस्यी और ब्रह्मासुरी है।

5. धृतराष्ट्र के नाम से वरण करने पर अनेक कन्याएँ मरीं। गान्धारी के वरण करने से बाईस राजा मरे।

6. धृतराष्ट्र को कन्या नहीं है और गान्धारी को वर नहीं है। ये जाति से ब्रह्मासुर और ब्रह्मसुरी हैं।

7. दोनों को एक योग होने से प्रीति हुई। धृतराष्ट्र और गान्धारी दोनों एकात्म हुए।

8. अगस्त्य कहते—हे वैवस्वत मनु ! सुनो। गान्धारी

धृतराष्ट्र को प्रदान हुई।

9. दो असुर का समयोग हुआ। प्रेम बढ़ा और बहुत रंग-कौतुक उत्पन्न हुआ।

कुन्ती का बालचरित, दुर्वासा की सेवा और उनसे वर-प्राप्ति

1. वैवस्वत मनु ने अगस्त्य से पूछा—पाण्डु का कैसे विवाह हुआ ? हे ब्रह्मर्षि ! कहिये।
2. हे महात्मा ! सुनो । अमिय दिव्य-रस की तरह पाण्डु का चरित है।
3. सिद्धपुर राज्य में कुन्तिभोज नामक राजा की भार्या का नाम जम्बुवती है।
4. वह करवीरपुर के राजा मदन महादेव की कन्या है।
5. कुन्तिभोज राजा की एक ही कन्या है। प्यार से राजा ने उसका नाम कुन्ती रखा।
6. वह भाग्यवन्ती बड़ी सुन्दर है। अति सुन्दर वह युवती अतुलनीय है।
7. कुन्तिभोज राजा पुत्र न रहने के कारण एक अकेली दुलारी को अपार स्नेह करते हैं।

8-10. एक शुभ समय दुर्वासा महर्षि ने कुन्तिभोज राजा के नगर में प्रवेश किया।

11. कुन्तिभोज राजा ने देखकर पादार्घ्य देकर कहा—आज ऐसे शुभ दिन में हे महात्मा ! मेरा निस्तार हुआ।
12. आज मेरे अनेक कार्य सिद्ध हुए। मैं आपके पादपद्म का प्रक्षालन कर सकता हूँ क्या ?
13. दुर्वासा ने कहा—तुम कुशल से तो हो ? पात्र-अमात्य सब सेवा तो कर रहे हैं ?
14. कुन्तिभोज ने कहा—मेरा सब कुछ कुशल है। आज आपको देखकर मेरा जीवन सुफल हुआ।
15. दुर्वासा ने कहा—मैं तुम्हारे राज्य में चातुर्मास बिताने आया। एक घर मुझे दो।
16. हे राजा ! तुम्हारे राजप्रासाद में बड़ी सम्पदा मैंने देखी। मेरी यहाँ रहने की तृष्णा बढ़ी।
17. कुन्तिभोज ने कहा—मैं क्या करूँ ! आपको रखकर आपकी यथोचित भक्ति नहीं कर पाऊँगा।
18. जाइये, कहने से आपको क्रोध उत्पन्न होगा। यह जानकर हे तपोधन ! मुझ पर कृपा करें।
19. दस हजार योजन तक का मैं राजा हूँ। मेरे दस भाई हैं किन्तु पुत्र नहीं है।
20. राज्य चिन्ता से यदि मैं आपको भूल जाऊँ तो हे ईश्वर समान महर्षि ! आप मुझ पर क्रोध न करना।
21. दुर्वासा ने कहा—तुम मेरी सेवा कैसे करोगे ! तुम अपने किसी आदमी को मुझे दे देना।
22. छोड़े हुए कपड़े साफ कर देगा। यह सब कर देने से मेरी भक्ति पूरी हो जावेगी।

24. कुन्तिभोज ने कहा—मैं दूसरे को क्यों दूँगा। मेरी एक मात्र कन्या आपकी सेवा करेगी।
25. दुहिता को बुलाकर राजा कुन्तिभोज ने आज्ञा दी। नगर के बाहर एक आश्रम बनाया।
26. कुन्ती विनय और भक्ति के साथ दुर्वासा ऋषि की सदा सेवा करती।
27. ब्राह्म मुहूर्त में आँगन में झाड़ू लगाती; गाय के गोबर को घोलकर यत्नपूर्वक छिड़कती।
28. प्रतिदिन कुछ सूखे आम्रपत्र समेटकर लाती। छोड़े हुए लंगोट को धोकर छप्पर पर सुखा दिया करती।
29. गड़ुआ, ताम्र-पत्री और कटोरे को खटाई से माँजती है। काली गाय के गोबर से आश्रम को लीपती है।
30. राख को अच्छी प्रकार पीसती है। बेल के वृक्ष से तोड़कर बेल-प लाती है।
31. यह राजकुमारी अल्पवयसी है। सचेतन भाव से ऋषि की सेवा करती है।
32. ऋषि रात्रि में भीतर समाधिस्थ रहते हैं। दोनों किवाड़ को बन्द करके कुन्ती बाहर बैठी रहती है।
33. कुन्ती को भक्ति से दुर्वासा खूब सन्तुष्ट हैं। मुनि ने नाना तीर्थ जाने की इच्छा नहीं की।
34. कुन्तिभोज के राज्य में मुनि निश्चिन्त होकर रहे। चातुर्मास के लिए कहकर पाँच वर्ष तक रह गये।
35. अर्द्ध सूर्योदय के चार पद में दक्षिण महोदधि के तीर्थों में सभी जाते हैं।
36. दण्ड, कमण्डल और ताम्र-पात्र हाथ में लिये हुए तपोवन्त कुन्तिभोज राजा के पास पहुँचे।
37. वह महीधर स्वामी देखकर उठा और मुनि के चरणों में प्रणाम किया।

38. इतने समय तक मुझपर दुर्वासा ने अनुग्रह किया। एक समय आने पर इच्छा पूर्ण हुई।

39. दुर्वासा ने कहा—मैं इस बार आया तो तुम्हारे राज्य में पाँच वर्ष तक रह गया।

40. नृपति ने कहा—हे तपोधन ! मेरा निस्तार हुआ। इस प्रकार रहने से आपका कौन भक्त नहीं होगा।

41. दुर्वासा ने कहा—मैं बहुत सुख से रहा। कुन्ती की भक्ति से नाना तीर्थो की उपेक्षा की।

42 मैंने तुम्हारे पुर मे अनेक सुख पाये। हे कुन्तिभोज तुम्हें शतपुत्र प्राप्त हों।

43. तुम्हारी कुन्ती सोमवंश की सुलक्षिणी हो। धर्म-देवता उसे वीर्य प्रदान करें।

44 धर्म के बल से बलवान पुत्र पैदा हो। तुम्हारी दुहिता पद्मकटक की ठकुरानी हो।

45 ऐसा वर देकर चलते बने। कुन्ती मुनि के पीछे-पीछे दौड़ी।

46 राज्य छोड़कर महात्मा ने वनस्थली मे प्रवेश किया। कुन्ती पाँच कोस तक पीछे-पीछे दौड़ रही है।

47. कुन्ती ने जगल मे छींककर आवाज की। हठात् दुर्वासा ने मुड़कर देखा।

48 दुर्वासा ने कहा—हे आर्या ! तुम दौड़कर आ रही हो। मुझे छोड़कर जाने के लिए तुम्हारा मन नही करता।

49 हे बेटी ! तुम लौट जाओ। वन प्रदेश मे प्रवेश मत करो। भालू-बाघ हैं, बेटी तुम्हें मार डालेंगे।

50 कुन्ती ने कहा—मैंने ईश्वर की तरह ऋषि की सेवा की। इतने दिन तक सेवा करने पर भी मै निष्फल हुई।

51 52 बालू का पिण्ड बनाकर पत्र रखकर ध्यान मे पूजा करने से वह भी प्रसन्न होता है। आप जैसे ऋषि की इतने समय तक सेवा करने पर भी मैं कुछ न पा सकी। सब व्यर्थ हुआ।

53. दुर्वासा ने कहा—तुम तो चुप थीं। पाँच वर्ष सेवा करके भी कुछ नहीं माँगा।

54. महामन्त्र को मैं बिना माँगे नहीं देता हू। मैंने सोचा इसकी कोइ आवश्यकता नहीं है।

55. अब भी हे महामात्मा ! मुझ पर अनुग्रह करो। मैं मन्द जाति स्त्री हूँ। मुझे एक चीज दो।

56. दुर्वासा ने कहा—जो तुम्हारी इच्छा होगी, उसे अवश्य दूँगा। जिससे हे सुन्दरी ! तुम्हारी मनोकामना पूरी होगी।

57. हे ऋषि ! मैं बालिका हू। रहस्य नहीं जानती हूँ। यह जानकर हे महात्मा ! मुझ पर अनुग्रह करो।

58. दुर्वासा ने कहा, हे आर्ये ! स्त्री के लिए एक व्रत है, जिससे सुन्दर, सुभिज्ञ, पण्डित और भाग्यवान पति मिलता है।

59 तुम्हारा सुपुत्र अत्यन्त बलवान होगा। सग्राम में कभी पीछे नही हटेगा।

60 ऐसी इच्छा स्त्रियों का स्वभाव है। सुन्दर पुरुष को देखकर आत्मविस्मृत हो जाती हैं।

61 मैं तुम्हें महामत्र जपमाली दूँगा। इसको यत्नपूर्वक रखो।

62 शय्या पर जाकर जिसकी याद करोगी, वह आकर तुमसे प्रसन्न होगा।

63 ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र, सूर्य, पवन जो भी हों, जब नहीं आयगे तो ब्रह्माण्ड फट जायेगा और वे मृत्यु को प्राप्त होंगे।

65 महात्मा जपमाली देकर तत्क्षण आकाश में चले गये।

कर्ण का जन्म

1 दुर्वासा की यह बात सुनकर कुन्तिभोज की कन्या विचार करती है।

2 इस महायती ने मुझे जो माला दी, इसकी परीक्षा में कैसे करूँगी।

3 यमुना के किनारे देवी ने साल-पत्र की शय्या तैयार की और अस्ताचल में गये सूर्य का स्मरण किया।

4 जब कुन्ती ने दुर्वासा ऋषि के महामन्त्र का स्मरण किया, तब सूर्य का आसन आकाश में काँप गया।

5. मैं इसकी उपेक्षा करके कैसे नही जाऊँगा ! सूर्यनारायण कुन्ती की शय्या के पास पहुँचे।

6. कुन्ती को सूर्य ने अपनी गोद मे लिया। मदन रस से विह्वल होकर मुख का चुम्बन लिया।

7 दोनों हाथ जोड़कर कुन्तिभोज की कन्या ने पूछा—तुम कौन महात्मा हो जो मेरे साथ बलात्कार करते हो ?

8. कहते हैं कि मैं वही विरंचि नारायण सूर्य हूँ जिसको तुमने ऋषि के महामन्त्र से स्मरण किया।
9. हे बालिका ! क्या अब भी तुम मुझे शृंगार नहीं दोगी! अनेक प्रकार से अंशुमाली ने चिरौरी की।
10. कुन्ती ने कहा—मैं अविवाहिता अरजस्वला हूँ। तुम दिग्पाल होकर मेरे साथ अनीति करते हो !
11. दिनकरनाथ ने कहा—तुमने भूल की। असमर्थ नारी होकर मुझे क्यों बुलाया।
12. हे नाथ ! मैंने ऋषि-विद्या की परीक्षा के लिए स्मरण किया। सुज्ञानी नाथ ! मेरा शील-भग क्यों करोगे ?
13. विरंचि ने कहा—दुर्वासा के महामन्त्र का जो लंघन करेगा; उसका ब्रह्माण्ड फट जाने से प्रणान्त होगा।
14. तुमने बिना विचारे मेरा स्मरण किया। मै अब रमण किये बिना तो लौटकर नहीं जाऊँगा।
15. यमुना नदी के किनारे घने जगल में आदि देव सूर्य ने कुन्ती के साथ संभोग की इच्छा की।
16. शान्त मूर्ति होकर कमल-लोचन ने भग की ओर लिग बढ़ाया।
17. स्खलनहीन कन्या सूवी-भेद्य है। इसीलिए देव ने लिंग को सूई के बराबर किया।
18. देव-देवी विवस्त्र हुए। वह बालिका अबोध है और रति क्रीड़ा में अनभिज्ञ है।
19. सूर्य ने कुछ संभोग किया। दुर्वासा के मन्त्र के डर से लौट न सके।
20. वीर्य-पतन काल में उस कुन्तिभोज की कन्या ने विकल होकर बहुत विनय की।
21. हे कर्तार नाथ ! अपना वीर्य मत छोड़ो। तुम्हारे अमोघ रेत से मेरे गर्भ में सन्तान ठहर जायेगी।
22-23. मैं अविवाहिता और अरजस्वला कन्या हूँ। जब मेरे गर्भ में सन्तान रहेगी, तो मैं पिता को मुँह कैसे दिखाऊँगी और मुझे कान प्रदत्त होगा!
24. दोनों कुल बड़े लज्जित होंगे। अनुग्रह करके हे देव ! वीर्य गर्भ में मत छोड़ो।
25. दिनकरनाथ ने कहा—रति-रंग करके वीय-पात न करने से लिग-भंग दोष होता है।
26. कुन्ती ने कहा—हे दिनकर ! यदि तुम वीर्य पात करोगे ही तो उससे चन्द्र-प्रभ पुत्र उत्पन्न हो।
27. कुन्ती की बात सुनकर विरंचि ने गर्भ में सम्पूर्ण महारेत दुलका दिया।
28. वीर्य-पतन के समय देवी ने वेग से दृढ़ आलिंगन किया। अनेक रंग में सूर्य ने शृंगार रस दिया।
29. कुन्ती की योनि में उपस्थ सम्पूर्ण प्रविष्ट हुआ। विरंचि ने कहा—तुम्हें पुत्र प्राप्त होगा।
30. कुन्ती ने कहा—हे देव भगद्वार से सन्तान उत्पन्न न हो। भग-द्वार से पुत्र उत्पन्न होने से मैं असती हो जाऊँगी।
31. मैंने कन्या होकर कुल को दूषित किया। उसे विकल देखकर विरंचि नारायण ने दया की।
32. वीर्य को ऊपर उठाकर कर्ण द्वार में स्थापित किया। ऐसा होना पूर्व निर्धारित था।
33. महा अमोघ, अक्षय रेत से कान के रास्ते चन्द्र-प्रभ पुत्र उत्पन्न हुआ।
34. उसे देखकर कमल-लोचन आनन्दित हुए। गोद में पुत्र को लेकर उसे वीर कर्ण नाम दिया।
35. स्वामी ने दोनों कानों में दो अमृत कुण्डल पहनाये। अमृत, अभेद्य कवच को लेकर तालु को छिपाया।
36. पुत्र के शरीर में वज्र-रस का लेपन किया। कान में महामन्त्र पढ़ा।
37. घुँघराले बाल, दीप्त कपाल और अधर, गरुड़ की तरह आँखें और नाक और सुन्दर गण्डस्थल है।
38. सिंह की तरह शरीर और हाथी के सुण्ड की तरह दो भुजाएँ दिखाई देती हैं।
39. लाल दो आँखें शोभायमान हैं। दोनों स्कन्ध प्रदेश पर्ण-पर्वत की तरह दिखाई देते हैं।
40. अस्फुट चम्पा की कली की तरह अँगुलियाँ दिखाई देती है। उल्टे कदली वृक्ष की तरह सुन्दर जंघा हैं।
41. सुन्दर, सुगठित, अतुलनीय प्रचण्ड तेजस्वी पुत्र अनंग की तरह सुन्दर है।
42. भाला परशु, कृपाण आदि शस्त्र तुम्हारे शरीर में न घुसे, न काट सके।
43. हे कुँवर ! तुम रण में अभय हो और दान में सागर की तरह हो।
44. तुम जब तक रथ पर बैठे रहोगे, तब तक युद्ध में तुम्हें तीनों लोक में कोई नहीं जीत सकता है।

45. उसे अनेक विद्या देकर उदण्ड मार्तण्ड उदयगिरि भेदकर विकसित हुए।

46. कुमार को गोद में लिये वह कुन्तिभोज की कन्या मन में सोचती है कि क्या उपाय करूँ।

47. इस सुन्दर पुत्र को लेकर मैं क्या करूँगी ! पिता-माता के सामने मैं क्या कहूँगी।

48 शिशु को देखकर वे अवश्य पूछेंगे—इस पुत्र को तुमने कहाँ से पाया ?

49. माता-पिता के आगे मैं झूठ कैसे बोलूंगी ! सत्य कहने पर मैं अपरिमित लज्जित होऊंगी।

50 पर-दारायणी कहकर कोई मुझे प्रदत्त नहीं होंगे। सभी दुर्वासा ऋषि को दोष देंगे।

51 कहेंगे कि मुनि के साथ रहने के समय दुर्वासा के रमण से तनय उत्पन्न हुआ।

52 इस जपमाली के रहते मुझे डर किस बात का है ! अनेक प्रकार से मैं पुत्र उत्पन्न कर सकूँगी।

53 कुछ कर्दम मिट्टी लेकर देवी ने एक पिटारी तैयार की।

54 उसके भीतर पुत्र को रखकर यमुना नदी में बहा दिया।

55 जिस तनय का तेज प्रत्यक्ष बालादित्य की तरह था, उस कर्ण के तेज से कर्दम की पिटारी सुवर्ण पिटारी के रूप में परिणत हुई।

56 यमुना नदी में तैरती हुई चली गयी। उत्तर पूर्व दिशा में डूबती-उतराती चली जा रही है।

57 वहाँ से पचास योजन दूर उत्तर कोने में दारुणावन्न में वह पिटारी लगी।

राधा का जन्म-चरित और उसके द्वारा कर्ण का पालन

1 गालव-नन्दन संजय है। संजय की राधा नामक दुहिता है।

2. पूर्व जन्म की अनसूया अप्सरी ने गर्व के कारण चन्द्र से प्रेम नहीं किया।

3. क्रोध से सुरनाथ ने अभिशाप देकर कहाँ—रे पापिनी ! जाओ तुम मानुषी हो जाओ।

4. संजय मन्त्री की भार्या श्रद्धा तुम्हारा पालन करेगी और तुम्हारा नाम राधा होगा।

5 वासव के शाप से वह स्वर्ग से पतित होकर उसी शरीर से बालिका रूप हुई।

6. सिंह राशि के बृहस्पतिवार को सभी लोग तीर्थ-स्नान के लिए गौतमी नदी के किनारे गये।

7 जन-समूह के बीच शिशु पड़ा था। उससे संजय मन्त्री की भेंट उस तीर्थ में हुई।

8 भीतर आड़ में कुमारी रो रही थी। श्रद्धावती ने उसको गोद में उठाया।

9 कोई उसे अपना नहीं कह रहा था। संजय-भार्या उसे हस्तिनापुर ले आयी।

10 उसका नाम सोच-समझकर राधा रखा। उसे सुन्दर देखकर यत्नपूर्वक पाला।

11 वह संजय दुहिता यमुना स्नान करने गयी। उसने एक पिटारी जल की धारा में डूबती-उतराती देखी।

12 बड़ी श्रद्धा से हाथ बढ़ाकर देवी ने उसे पकड़ा। पिटारी को लेकर राधा शीघ्र चली आयी।

13 किनारे लाकर पिटारी को दो टुकड़ों में किया। बालादित्य जैसे पुत्र को देखा।

14 पुत्र को गोद में लेकर अपने घर को गयी। संजय ने कहा—आर्ये ! कुमार को सँभालो।

15 इस पुत्र को तुम श्रद्धा से लायी हो। इसलिए इस पुत्र का नाम राधेय होगा।

16 संजय कुमारी ने यत्नपूर्वक कर्ण का पालन किया। बाद में अनुभव नृपति को वह प्रदान हुई।

कुन्ती के साथ पाण्डु का विवाह

1 यमुना जल में पुत्र को फेंककर कुन्ती विषादमुक्त होकर लौटी।

2 शरीर को सँभालकर देवी कुन्ती अन्तःपुर में प्रविष्ट हुई।

3 दुर्वासा का कल्याण प्रत्यक्ष हुआ। कुन्तिभोज नृपति के तीन पुत्र उत्पन्न हुए।

4. कर्णभोज, वीरभोज और मुकुन्दभोज नामक राजा के तीन पुत्र उत्पन्न हुए।

5. बलवान, सुन्दर और जगज्जयी कुन्तिभोज के पुत्र विद्या

सम्पन्न हुए।

6 कार्तिक मास शुक्ल पक्ष बुधवार को पूर्णिमा के दिन कुन्तिभोज स्वामी गंगा स्नान के लिए गये।

7 इस गंगा-स्नान मे आये हुए भीष्म की कुन्तिभोज राजा के साथ मैत्री हुई।

8 दोनो की रोहिणी वृष राशि होने पर गंगा के किनारे मैत्री मिलन हुआ।

9 भीष्म के साथ पाण्डु कुमार आये थे और कुन्तिभोज तथा कुमारियो के साथ कुन्ती भी आयी थी।

10 पाडु भीष्म की गोद मे बैठे थ। कुन्ती कुन्तिभोज की जघा पर बैठी थी।

11 ऐसा स्वरूप देखकर सत्यवती ने कुन्तिभोज से पूछा कि क्या यह लडकी तुम्हारी है ?

12 कुन्तिभोज राजा ने कहा—हां, यह मेरी दुहिता है। यह कहकर सत्यवती को प्रणाम किया।

13 पराशर ने कहा—हे नरनाथ ! तुम सुनो। हमारे पुत्र पाण्डु को अपनी दुहिता प्रदान करो।

14 कुन्तिभोज सुनकर आनन्दित हुए। दुहिता देने का सकल्प किया।

15 उसी तीर्थ-स्थान मे उत्सव किया और विवाह के शुभ योग मे लग्न निर्धारित किया।

16 कुन्तिभोज नरपति काश्यप गोत्र के है और विचित्रवीर्य के पुत्र का गोत्र सोम वश है।

17 दोनो वश का गोत्रोच्चार करके सत्यवादी पुरोहित उपाध्याय ने विवाह का शुभ योग कराया।

18 शुभ लग्न मे कुमारी प्रदान हुई। कुन्तिभोज ने दहेज रूप मे एक पद्म रथ दिये।

19 दो पद्म हाथी, चार पद्म अश्व और बारह योजन भूमि राजा ने दहेज मे दी।

20 राजा ने परम आनन्दित होकर पाच लाख राजछत्र, एक लाख आलम्ब और अनेक वाद्य दहेज मे दिये।

21 एक सौ पद्म गाय, बावीस धन-भण्डार राजा ने दान दिया।

22 भीष्म ने शान्तनु से अति विनयपूर्वक कहा—मै अपुत्रिक होने के कारण दण्डधारी नही होऊगा।

23 भूरिश्रवा भी राज-पद पर नही बैठेगे। चक्षु-अन्ध होने के कारण धृतराष्ट्र असमर्थ हुए।

24 विदुर विलक्षण होने पर भी अन्य जाति का है। पाण्डु को क्या पंचकटक का चक्रवर्ती बनायेगे ।

25 पराशर ने कहा तुम सच कहते हो या झूठ बोलते हो? पाण्डु को राजपद देने मे क्या तुम्हें क्रोध नहीं होगा ?

26 भीष्म ने कहा—मेरे मन मे कोई दूसरी बात नहीं। सत्य वाक्य मे प्रतिज्ञा करता हूं।

27 पराशर और शान्तनु यह सुनकर परम आनन्दित हुए। राज्य में पाण्डु का अभिषेक कराया।

28 व्यास, वसिष्ठ, मार्कण्डेय आदि समस्त तपचारियों ने पुण्य-अर्घ्य दिया।

29 पुष्कर क्षेत्र के अधिपति ने करोडो तीर्थो मे अनेक याग-यज्ञ करके पूर्णाहुति दी।

30 कुमार पाण्डु के सिर पर अभिषेक किया। जय-जय की वाणी तीनों लोको मे सुनाई दी।

31 कल्पवृक्ष के नीचे विवाह-अभिषेक किया और शुभ अवसर मे पाण्डु का नरेन्द्र पद दिया।

32 सैन्यदल लेकर अपने देश को लौटे। नगर के लोग बहुत खुश हुए।

33 काशी देश के राजा काशीश्वर की अनुमति नाम की एक कन्या थी।

34 काशीश्वर राजा वश्य जाति का था। इसीलिए अनुमति विदुर को प्रदान की गयी।

35 अन्ध, पाण्डु, विदुर तीन भाई होने पर भी धर्मार्थ पाण्डु राज-पद पर बैठे।

36 अगस्त्य ने कहा—हे वैवस्वत मनु ! सुनो। तीनो लोक मे पाण्डु नृपति प्रसिद्ध हुआ।

37 वह पाण्डु राजा धार्मिक, विवेकी, दयालु, दानी, वीर, देव और विप्र का भक्त था।

38 हमेशा राजा घृताहुति देता है। कर्मचारियों की व्यवस्था करके राज्य-शासन करता है।

39 विद्या-गुरु होकर भीष्म ने पाण्डु को अनेक विद्याएँ सिखायी।

40 शास्त्र विद्या, उत्तम धनुर्विद्या, मल्लयुद्ध, विमोहन मत्र-विद्या मे सिद्ध किया।

41 इस प्रकार महाभिज्ञ, बलवान, बुद्धिमान क्षत्रियवर होने से अठारह वश उनकी सेवा करते हैं।

42 गुणवन्त, भाग्यवन्त, पण्डित, क्षत्रिय, महायोद्धा और

सत्यवादी पाण्डु ने किसी से विवादी न होकर सबको अधीनस्थ किया।

43 सूर्यवंश के राजा ऋतुवर्ण पाण्डु राजा की हमेशा सेवा करता है।

44 गंगा वंशी राजा समर्थ और दृढ़प्रतिज्ञ भीष्म महारथी अग्रसेना की परिचालना करते है।

45 हैहय वंश के राजा रुद्रदेव महामल्ल तीन लाख योद्धा लेकर पाण्डु नृपति की सेवा करते हैं।

46 आंध्र देश का राजा विरूपाक्ष दो लाख क्षत्रियों को लेकर दक्षिण सीमा की रक्षा करता है।

47 भोज वंश के राजा विष्णुभोजसेन पांच लाख योद्धा लेकर पाण्डु राजा की सेवा करते हैं।

48 ब्रह्म देश का राजा मदनसेन सैन्य दल लेकर उत्साह पूर्वक सेवा करता है।

49 रुद्र वंश का राजा भद्र नृपति पाण्डु राजा की सेवा परम आनन्द से करता है।

50 कायस्थ वंश का राजा इन्द्रपाद सोम वंश नरेन्द्र 'पाण्डु' की सेवा करता है।

51 नवद्वीप और सप्त सागर में जितने राजा हैं, सब सोम वंश राजा की पाद सेवा करते हैं।

52 इस प्रकार अठारह वंश, स्वर्ग तुल्य वारुणावन्त में पाण्डु की सेवा करते हैं।

53 अनेक सैन्य लेकर राजा स्वर्ग में विराजमान महाराज की अत्यन्त उत्साह से सेवा करते हैं।

54 ब्रह्मा, कार्त्तिकेय, नारद, नन्दी, हनुमान आदि की पाण्डु राजा शुभ क्षण में सेवा करते हैं।

इनके पुत्र, व्यास, विश्वामित्र, परशुराम, भीष्म चार भाई है।

56 इनकी पाण्डु नृपति आराधना करते हैं। सभी पाण्डु की विपत्ति-खण्डन की आकांक्षा करते है।

57 सप्तद्वीप पृथ्वी पर सैन्य स्थापना की है। शब्दभेदी बाण नवखण्ड पृथ्वी पर छोड़ते हैं।

58 जम्बूद्वीप, बारह राष्ट्र और छत्तीस मण्डल में सब समय पड़ोसी सेना सेवा करती है।

59 धृतराष्ट्र हस्तिनापुर मे रहे और भूरिश्रवा को इन्द्रप्रस्थ में स्थापित किया गया।

60 भीष्म यमप्रस्थ में, जयिन्ना राज्य मे पाण्डु और वारुणावन्त में विदुर ने राज्य-भार ग्रहण किया।

61 पाण्डु राजा का भाग्य देखो। भाइयों को राजभार देकर खुद दिग्विजय करते रहते है।

62 शत्रु के दर्प को ध्वस्त करते है। तपस्वी लोगों की रक्षा करते हैं। तीनो लोक मे दैत्य-दानव का उपद्रव नही है।

63 ययाति ने प्रति माद (लगभग एक बीघा) स्वर्णमुद्रा रूप में कर देने की व्यवस्था की थी। किन्तु पाण्डु राजा ने माद के स्थान पर बाटी (लगभग सोलह बीघा) को केन्द्र करके कर की व्यवस्था की थी।

64 जो एक बाटी की खेती करता है वह एक पौटी (लगभग अस्सी सेर) कर देता है। इस प्रकार बारहों मास खेती करके प्रजा सुख मे दिन बिताती है।

65 अनेक धन धान्य और अचल सम्पत्ति के अधिकारी होने से सभी पाण्डु का धन्य धन्य करते है।

पाण्डु का वन में रहना और राज्य का परिचालन

1 तेरा मास पांचवें दिन हस्तिनापुर में प्रविष्ट होकर पाण्डु धीरे धीरे धृतराष्ट्र का दर्शन करने के लिए जाते हैं।

2 धृतराष्ट्र गान्धारी से कह रहे है कि व्यास ने मुझे क्यों पैदा किया?

3 पाण्डुराज ने उस प्रकार घर में सुना। चारों तरफ वही मे सुनते है।

4 गान्धारी ने धृतराष्ट्र से कहा, हे स्वामी! क्यों मन को खिन्न करते हो?

5 धृतराष्ट्र ने कहा- हे गान्धारी! तुम सुनो। विमाता के पुत्र की सम्पत्ति मै देख नही सकता।

6 मै ज्येष्ठ हूं और पाण्डु छोटा भाई है। किन्तु पृथ्वी पर पाण्डु का बल वीर्य प्रकाशित हुआ।

7 उसकी अपार सम्पत्ति अकथनीय है। इसे मैं सह नही पाता, अपितु मेरा मर जाना ही अच्छा है।

8 अच्छा दिन देखकर प्रयाग जाऊँगा और त्रिवेणी संगम मे आत्म-विसर्जन करूंगा।

9-10 क्षत्रिय होकर जो परपीड़ित हो, राजा होकर जो संग्राम मे भय करे, देवता होकर जो दूसरे पर निर्दय

हो, तीर्थ करने के बाद भी जो मायासक्त हो, सुन्दर स्त्री होकर जो विधवा हो, योगी होकर जो इन्द्रिय-निग्रह न कर सके, पण्डित होकर जो उपार्जन न कर सके, महात्माओं के वचनानुसार ऐसा जीवन व्यर्थ है।

13 गान्धारी ने कहा—यह बात युक्तियुक्त है। भाग्य में लिखा कभी अन्यथा नहीं होता।

14 मृत्युमण्डल में सब पुण्यवान नही होते। जो, जो कुछ अर्जन करता है, उसका ही वह भोग करता है।

15 हे स्वामी ! सुकृतवान पुरुष नाना रूप धारण करता है। उसका प्राणनाश नही होता।

16-18 अपंग, कुब्ज, असमर्थ, पंगु, बलवान, खर्व, गेंठा, दीर्घकाय, स्थूलकाय, सुन्दर, वीर, पण्डित, पागल, अव्यवस्थितचित्त, सचेतन, अचेतन—ये सभी प्रकार सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड मे एक ही मनुष्य के है।

19 कुतूहल से वह नाना रूप धारण करके खेलता है। एक क्षण मे गोरा, एक क्षण मे काला और एक क्षण मे श्यामल होकर अवतार लेता है।

20 एक क्षण में लंगड़ा तो दूसरे क्षण मे अन्धा है। नाना वर्ण और रूप मे उसका चार रहता है।

21 वह सुकृत महात्मा जिस समय जो रूप धारण करता है, उसी स्वरूप मे मानव उत्पन्न होता है।

22 हे राजा ! तुम अभिमान छोड़कर चिन्ता मत करो। सुख दुःख को हे स्वामी ! हृदय मे समभाव से ग्रहण करो।

23 दूसरे का वास्य वभव देखकर विकल नही होना चाहिए। सुदशा कुदशा अपना समय के लिए होती है।

24 हे नाथ ! चेतन्य पुरुष का एकात्म करो। पाण्डु को पराया मानकर शरीर त्याग न करो।

25. समस्त ससार को जो समदृष्टि से देखता है वह ससार-सागर पार होकर मुक्ति लाभ करता है।

26 धृतराष्ट्र ने कहा—अरे सगिनी ! तुमने ऐसा कहा किन्तु पर-सम्पत्ति मै नही देख सकता।

27 गान्धारी ने कहा कि ऐसी कथा है। पापी लोगों की अनेक अवस्थायें होती हैं।

28. विचार नायक यमराज है। आकाश मे रहकर विचार करता है किन्तु मर्त्यलोक मे दण्ड देता है।

29 पगु, बधिर, विकलाग, कुब्ज, अन्धा होना—ये सब यम के दण्ड रूप हैं।

30. जन्म से विकलांग लोगों का मन भी विकलांग होता है। मन्द प्रकृति के ये लोग किसी का कुशल नहीं देख सकते।

31. रूखे स्वभाव के ये लोग ईर्ष्या करने वाले होते हैं। खुद कुटिल होते हैं, ये दूसरे की सम्पत्ति नहीं देख सकते हैं।

32 पर-निन्दा, पर-ईर्ष्या और प्रमाद को हे धृतराष्ट्र ! छोड़ो। यह संसार माया चित्रपट की तरह अनित्य है।

33 लोभ, मोह, काम, क्रोध, अहकार और ईर्ष्या को दूर करके चित्त को स्थिर करो।

34 अनेक प्रकार से गान्धारी ने उसको समझाया। किन्तु उसका मन शान्त न नहीं हुआ।

35 धृतराष्ट्र और गान्धारी की इस बातचीत को पाण्डु ने चुपके से सुना।

पाण्डु महाराज का धृतराष्ट्र के साथ साक्षात्कार और माद्री के साथ विवाह

1 सहसा पाण्डुराज स्वामी ने पहुंचकर धृतराष्ट्र के चरणों में प्रणाम किया।

2 राजा को देखकर गान्धारी दूर हट गयी। सजय ने धृतराष्ट्र से कहा—

3 हे धृतराष्ट्र ! सुनो। पाण्डु आये है। तुष्ट मन से कहो, मनोकामना पूरी हो।

4 पाण्डु ने कहा—हे कुरुपति ! तुम सुनो। मैंने किस प्रकार तुम्हारी भक्ति नही की ?

5 तुम्हारी भक्ति मै हमेशा करता हूँ। तुमने अपने चित्त मे मेरे प्रति पाप-भाव धारण किया।

6 स्वामी ! मेरी सम्पत्ति देखकर प्रसन्न नही हुए। उसे सौतेले भाई की सम्पत्ति समझते हो ?

7 अमात्य और पुरोहित के साथ, भूरिश्रवा, शान्तनु और भीष्म महारथी को राजा ने बुलवाया।

8 आज मेरा यह संकल्प हुआ कि धृतराष्ट्र को राज-दण्ड और राज्य-धर्म सब समर्पित किया।

9 इस पंचकटक के तुम स्वामी हो। संसार का पालन करके वसुन्धरा का भोग करो।

10 संजय ने कहा—अन्धा कही राजा होता है ? इससे शत्रु सेना का दर्प क्या ध्वस्त होता है ?

11 पाण्डु ने कहा—मै वन मे रहूँगा। प्रतिदिन मै पचकटक राज्य का भ्रमण करूँगा।

12 धृतराष्ट्र की आज्ञा को मै शिरोधार्य करके दुष्ट, चोर, दानव सबका विनाश करूँगा।

13 सभी मुझसे अधिक भक्ति धृतराष्ट्र से करेगे। यदि अनीति होगी तो मुझसे कहना।

14 धृतराष्ट्र को राज्य देकर पाण्डु राजा कुन्ती क साथ राज्य से बाहर हो गय।

15 नरनाथ सघन वन मे घूमते है। ऊँचे-ऊच वृक्ष अत्यन्त निर्मल दिखाई देते हे।

16 एसे पाण्डु हस्तिनापुर के उत्तर-पूव म घोर वृन्दारक वन म घूमते है।

17 उत्तरगामी यमना के किनारे शतशृग पर्वत पर पाण्डु राजा रहते ह।

18 पार्जण ज्योतिषपुर क राजा भगवान की भार्या मादनावती है।

19 भगवान नृपाल वन म मृगया विनाद करते थ। उनकी दुहिता का नाम माद्री था।

20 वन म घूमते-घूमत पाण्डु से भेट हुई। उन्हे माद्री कन्या का प्रदान किया।

21 बड समारोह क साथ राजा ने कन्या दी। कुन्ती आर माद्री को लेकर पाण्डु शतशृग गिरि पर रहने लग।

22 दोना भार्याओ को लेकर पाण्ड वन म विहार करते है। यमपुर, इन्द्रप्रस्थ हस्तिनापर वाराणा, जयन्ता मे प्रतिदिन भ्रमण करत ह।

23 प्रतिदिन दुष्ट राक्षसा का खदेडकर मारत हे। धृतराष्ट्र को राज्य मे प्रसिद्ध करके खुद दुःख सहते हे।

24 25 सिह शुक्ल-त्रयोदशी रविवार शतभिषा नक्षत्र तरह दण्ड वेला मे तैतिल करण, शूल योग मे मिह सक्रान्ति के बाद उन्तीस दिन बीत गये।

पाण्डु का मृगया और अग्निकार, महर्षि का शाप-प्रदान

1 उस दिन पाण्डु पश्चिम प्रदेश के निविड अरण्य मे मृगया-विलास के लिए प्रविष्ट हुए।

2 शतभिषा नक्षत्र के समाप्त होने के समय भाग्य के अनुसार कर्मार्जित फल से एक दुर्घटना हुई।

3 शतभिषा नक्षत्र के भग्न पाद के समय वन में गये। इसीलिए वे खोजकर भी शिकार न पा सके।

4 अजमिल वन मे भवानी नामक नदी दक्षिण दिशा मे सरस्वती नदी मे गिरती है।

5 उस नदी के पश्चिम कोने मे गगा के किनारे से सात योजन दूर शर-बोधन पर्वत है।

6 शिकार न पाकर महाश्रम के बाद पाण्डु राजा पर्वत के ऊपर पहुँचे।

7 इस समय हरिता नामक मृगी तृषित होकर पानी पीने के लिए नदी के पास आयी।

8 अग्निकार महर्षि ने आकश से दखकर तत्क्षण जाकर मृगी को पकडा।

9 मृगी के साथ वे यति रति-शृगार करत है। गाढ आलिंगन से वह मूर्च्छित हो गयी।

10 ऋषि के महाभार तरगपूर्ण शृगार को न सह सकने के कारण उसने तीव्र स्वर से चीत्कार किया।

11 पाण्डु ने सात योजन दूर से उस चीत्कार को सुना। यह चीत्कार उन्हे गडे के चीत्कार सा लगा।

12 शब्दभेदी महात्मा पाण्डु ने उस शब्द की ओर शस्त्र निक्षेप किया। शून्य मे शस्त्र शब्द की ओर गया। मृगिणी ऋषि की छाती पर गिर पटी।

13 ऋषि की पीठ से होकर हृदय से निकलता हुआ मृगी क हृदय से होकर पीठ म वाण बाहर निकल गया।

14 एक ही वाण स दोनो जोडित हो गये। मृगी को लेकर महामुनि दुलक गय।

15 मृग गिर पडा जानकर पाण्डु दोडे। देखा कि वाण के घात स ऋषि श्रीहत हुए है।

16 सिर पर जटाभार, काषाय वस्त्र और लंगोट, क्षीण तनु पर भृगुटी दृश्यमान हो रही है।

17 जुड़वे वृक्ष की तरह ऋषि मृगी को गोद मे लिये हुए अभिन्न दिखाई देते है।

18 महाराज प्रचण्ड अग्नि की तरह मुनि के तेज को देखकर आश्चर्यचकित हो गये।

19 कुजगढ अधिपति पाण्डु ने मुख पर जल छिड़का।

चेतना पाकर ब्रह्मयति स्वस्थ हुए।

20. पाण्डु ने पूछा—तुम कैसे महात्मा हो ? इतने बडे महामुनि को काम ने कैसे आक्रान्त किया ?

21. शृंगार से आर्त्त होकर किसी नारी को नही पाया। निर्जन स्थान पाकर मृगी के साथ रमण किया।

22 क्रोध से भगवान ने शाप दिया—शृगार के समय मुझ पर शराघात किया।

23 युक्तितः दूसरे का शृगार भग करना उचित नही। लिग भग करने मे ब्रह्महत्या की तरह दोप लगता है।

24 बिना अपराध मथुन काल मे हे पाण्डु ! मुझ पर शराघात किया। तुम्हारे शृगार के समय अकस्मात् अकाल काण्ड पडेगा।

25 स्त्री के साथ रति करते समय तुमको मेरी तरह दण्ड मिले।

26 क्रोध से तपोधन के द्वारा शाप दिये जाने के समय पाण्डु ने पूछा—महात्मा स्थिर होकर तथ्य बताओ।

27 तुम क्यों ऐसे जघन्य हुए ! मृगी के साथ कहाँ मनुष्य का शृगार होता है !

28 ऋषि ने कहा—हे सोमवंशी ! सुनो। बृहस्पति वंश मे पाठ ऋषि की उत्पत्ति है।

29-33 पाठ ऋषि के तनुज अरुण तेज, उसके तनुज काकुस्थ महावीर्य, उसके नन्दन सत्यतपा, उसके नन्दन विधुप विरूपा, उसके नन्दन जलद महर्षि, उनके नन्दन जीमूत-वाहन, उनके नन्दन यमनिक यती, उनके नन्दन प्रजापति मुनि, उस प्रजापति का नन्दन मै अग्निकार बचपन से व्याप्त हूँ।

34 जन्म से ही मैने मा का स्तन पान किये बिना दिन बिताये।

35 जन्म से ही मैने आहार, मैथुन और निद्रा की इच्छा न की।

36 ऐसे ही मेरा सारा जीवन अतिवाहित हुआ। मै सब धर्मो को लेकर तपस्या मे बैठा।

37 जल और वायु के सिवा मेरा कोई दूसरा आहार नही था। निराकार की स्तुति मे लीन होकर मैने षड् ऋतुएँ बिताई।

38 मै एक आसन पर चार युगो तक रहा। चार युग पूर्ण होने पर मै दिन और रात्रि का अनुभव करता था।

39. इस प्रकार मैने तीन मन्वन्तर को अतिवाहित किया। पद्मयोनि ने मुझसे उस मनु का अर्थ पूछा।

40. कलिकाल की जब अनीति हुई, तब मैंने स्वेच्छा से, शरीर का अवसान किया।

41 इस प्रकार मै आकाश लोक को गया। वहाँ काल-विकाल मुझे देखकर भाग गये।

42 दूतो का त्रास देखकर यम ने पूछा—मुझ जैसे अभयदाता के रहते तुम्हें किसका डर है ?

43 विनम्र होकर चित्रगुप्त के दूतों ने यम के सामने प्रणिपात किया।

44 हे त्रैलोक्य के अधिपति जन्तुनाथ ! सुनो। अग्निकार महर्षि सजीवनी पुर का आये है।

45 ऋषि का तेज कालानल की तरह दिखाई देता है। हम किंकरगण बहुत भयभीत है।

46 ये महायोगी पुरुष प्रत्यक्ष ब्रह्मद्विज है। इसलिए हम भय से भाग गये।

47 सजीवनी चक्रवर्ती जन्तुपति ने ऋषि को देखकर खडे होकर विनम्र भक्ति मे पूछा।

48 अहो अग्निकार ! तुमने मनुष्यलोक मे रहकर कैसी चिरन्तन कीर्ति की ?

49 महात्मा कहते है कि अनेक धर्म किये जो ब्राह्मणो के नित्य कर्म है।

50 राजा के लिए अनेक यज्ञ किये और आपद शान्ति के लिए महापातक-खण्डन किया।

51 जिस समय मेघ अनावृष्टि करते थे, उस समय करोडो हाम करके मृत्युलोक मे वृष्टि कराई।

52 ऋषि की बात सुनकर यम ने पूछा—तुम्हारा वंश परम्परा के लिए सन्तान तो है

53 ऋषि ने कहा—मैने विवाह नही किया। अपार काल पर्यन्त शृगार का परित्याग किया।

54 निर्दोष होने के कारण उसने कोई दोष नहीं पाया। सोचते है कि तो भी इसे दण्ड दिया जा सकता है।

55 इतना बडा भिज्ञ महात्मा होकर क्यो ऐसा कार्य किया? सन्तान न होने पर सब धर्म व्यर्थ है।

56 सन्तान उत्पन्न करके नाना धर्म-कर्म करके तृतीय अवस्था मे तपस्वी होना चाहिए।

57. सन्तान के बिना सब धर्म दूर हो जाते है। परम

पण्डित होकर तुमने क्यों नही विचार किया ?

58 यम के वचन से ऋषि ने कहा—मैने चौथेपन मे एक कन्या से विवाह करके शृगार की इच्छा की।

59 उसके साथ अत्यन्त रमण किया किन्तु सब शृगार व्यर्थ हो गये।

60 यम ने कहा—तुम उत्तम ज्ञानी हो। हे महात्मा ! अनुपयुक्त स्थान मे पड़ने से सब धर्म नाश हो जाते है।

61 जब उस कन्या से कोई सन्तान नही हुई, तब तुमने अन्य कन्या से विवाह क्यो नही किया ?

62 ऋषि ने उत्तर दिया—मैने पाच विवाह किये किन्तु किसी मे पुत्र उत्पन्न नहीं हुआ।

63 यमराज ने कहा—चौथेपन मे वीर्य तरल होने से किसी प्रकार से भी सन्तान पैदा नही हुई।

64 मनुष्य पन्द्रह वर्ष तक बालक रहता है। पच्चीस वर्ष मे शृगार इच्छा करता है।

65 पैंतीस वर्ष पर्यन्त सुन्दर रहता है। दर्प से महामत्त होकर किसी की परवाह नही करता है।

66 पैंतीस वर्ष के बाद उस भाव का छेद होता है। उसकी विलक्षण बुद्धि दिखाई देती है और सन्तान की इच्छा करता है।

67 चालीस वर्ष की अवस्था मे तरुण बुद्धि प्रकाशित होती है।

68 धन-सन्तान की अपने आप इच्छा होती है। देव ब्राह्मण, माता पिता की भक्ति होती है।

69 चालीस बीत जाने पर जब पचासवा वर्ष होता है, उस समय वीर्य शक्तिहीन हो जाता है और शरीर आलस्यपूर्ण हो जाता है।

70 साठ वर्ष होने से प्राणी का वीर्य चन्द्र मे मग्न होकर स्थिर हो जाता है।

71 सत्तर वर्ष होने पर मतिभ्रम होता है। वीर्य नष्ट हो जाता है। अब काम-कला नही रहती।

72 अस्सी वर्ष होने पर चित्तभ्रम हो जाता है। उस समय सन्तान चाहने से कैसे मिलेगी ?

73 नब्बे वर्ष मे अपना-पराया नही पहचानता। कुटुम्ब मे भी भ्रम हो जाता है। पास मे बैठे हुए सहोदर को भी नही पहचानता है।

74 सौ वर्ष मे होने पर शिशु की तरह अबोध हो जाता है। उस प्राणी का रति-शृगार कैसे होगा ?

75 हे अग्निकार ! सुनो। फिर मैं तुमसे कहता हूँ कि यह माया-पट कलियुग का है।

76 बिना रस्सी से बँधकर सभी प्राणी नाश को प्राप्त हो जाते है। महात्मा पुरुष होकर भी तुम यह तथ्य न जान सके ?

77 पृथ्वी पर उत्पन्न होने से सन्तान ही मूल है। बिना सन्तान के सभी धर्म निष्फल है।

78 तुम लोगो ने जन्म-मृत्यु का विधान किया। मेरे हाथ मे त्रिगुण रज्जु प्रदान की।

79 हे महर्षि ! युक्ति से पुत्र उत्पन्न नही हुआ। तब हठयोग शास्त्र मे क्यो प्रवेश नही किया ?

80 विश्वामित्र ने षड्कर्म शास्त्र की रचना की है। एक भार्या से पुत्र उत्पन्न न होने से षड्कर्म विधान करना चाहिए।

81 मेरे पास आकर उन्होने कहा—हे यम ! षड्कर्म से उत्पन्न सन्तान को मोक्ष देना।

82-83 विवाहित भार्या से जब सन्तान उत्पन्न नही हो, तब दूतिका भेजकर धन देकर दूसरी फलवती स्त्री के ऋतु-स्नान के दिन रति-शृगार करके पुत्र उत्पन्न करना चाहिए।

84-85 जिस प्रकार कोई वृत्ति न होने पर मनुष्य दूसरे से भूमि-खण्ड खरीदकर शस्य उत्पन्न करता है और उस शस्य का भोग करता है, उसी प्रकार सन्तानहीन लोग इस उपाय से प्राप्त सन्तान का सुख-भोग करते है। विश्वामित्र के शास्त्र मे ऐसी व्यवस्था है।

86 यदि तुम उस उपाय को कर पाते तो मुझे सहज ही जीत पाते।

87 अग्निकार ऋषि ने कहा—मैने अनेक ऐसे भी उपाय किये किन्तु उनसे भी सन्तान उत्पन्न न कर सका।

88 उसे सुनकर, यमराज दु:खी हुए। इतने बड़े महात्मा होने पर भी तुम्हारा नरकवास हुआ।

89 हे महामुनि ! और एक उपाय न कर सके ? धन देकर दूसरे पुत्र का पालन-पोषण न कर सके ?

90 उसका विवाह करने से धर्म के पाँच हिस्से मे एक भाग तुम्हे मिलता और चार भाग उसके जन्मदाता

पिता को मिलता।

91. यदि तुम ऐसा करते तो वह तुम्हारी मुक्ति का कारण होता और तुम्हारे वंश का चिह्न रह जाता।

92. क्या तुम नहीं जानते हो कि तुमसे मैं क्या कहूँगा?

93. ऋषि ने कहा कि मैंने ऐसा ही किया। धन देकर एक पुत्र का यत्नपूर्वक पालन किया।

94. ऐसा मेरा अर्जित कर्म है कि विवाह समय वह पुत्र गिरकर मर गया।

95. ऋषि की बात सुनकर यम विषण्ण हुए और काल और विकाल को बुलाकर कहा—

96. मर्त्यलोक में अब इसके पुत्र और दुहिता नहीं हैं तो इसे कुम्भीपाक नरक में डाल दो।

97. यम की बात सुनकर काल और विकाल ने कालाग्नि होकर ऋषि के केश पकड़े।

98. ऋषि की अवस्था देखकर धर्म देवता ने उच्च स्वर में रुको-रुको पुकारा।

99. ऋषि के केश प्रसन्न निराकार ने छुडाये। हे यमराज ! मेरा एक उपकार करोगे ?

100. यह पण्डित महामुनि कल्प ऋषि हैं। एक बार इस महात्मा का उपकार करो।

101. और एक जन्म के लिए उसको छोड़ो। मर्त्यलोक मे एक पुत्र उत्पन्न करके स्वर्ग को लौटे।

102. यम के आदेश से दण्ड देने वालों को धर्म-देवता ने शान्त कराया।

103. यम ने कहा—पृथ्वी पर जाकर पुत्र पैदा करके हे महात्मा ! तुम शीघ्र लौटो।

104. बन्धन से छूटकर आते हुए ऋषि के पीछे चित्रगुप्त दौड़कर आये और गभराते है।

105. जपतप सब छोड़कर हे ऋषि ! सन्तान उत्पन्न करो।

106. मुनिवर ने कहा—हे पाण्डु ! सुनो। यम की सभा मे मेरी ऐसी गति हुई।

107. मैं धर्म से सन्तान उत्पन्न करने आया हूं। विन्ध्य गिरि पर विश्राम के समय ऐसा सोच रहा था।

108. मनुष्य के साथ मैंने अनेक प्रकार से अपरमित शृंगार किया किन्तु पुत्र उत्पन्न नहीं हुआ।

109. इसी समय हरिता मृगी प्यास के कारण जल पीने आयी।

110. यह मृगी पवित्र जीव है। इसके चर्म पर सदाशिव विराजमान रहते हैं।

111. सन्तानोत्पत्ति की इच्छा से मैंने इसके साथ शृंगार किया।

112. पानी पीकर लौटती हुई मृगी को मैंने शिकारी की भाँति खींचकर पकड़ा।

113. सन्तानोत्पत्ति की इच्छा से मैंने इसके साथ शृंगार किया।

114. हे पंचकटक के नृपति ! वाण को बाहर निकालो। मुझे बहुत दण्ड मिल गया।

115. ऋषि की बात से वाण को महाराज ने पकड़ा और पीठ पर बायें हाथ से दबाकर उसे खींचा।

116. पूरी शक्ति से वाण खींचते समय मुनि भूमि पर गिर कर अचेत हो गये।

117. अग्निकार महर्षि के वीर्य से हरिता मृगी गर्भवती हुई थी।

118. दोनों के आत्मावसान के समय गर्भ से एक पुत्र पृथ्वी पर गिरा।

119. मृग के शरीर और मनुष्य के मस्तक वाले पुत्र को देखकर ऋषि का प्राणान्त हुआ।

120. यम ने उनको देखकर बहुत पूजा की। चन्द्र ने उनको स्वर्ग स्थान में बसाया।

121. जैसे ही ऋषि के वीर्य से पुत्र पैदा हुआ; पाण्डु राजा ने उसे गोद मे उठा लिया।

122. पाण्डु राजा को आकाशवाणी हुई कि पुत्र का नाम मृगार्षि रखो।

123. सूखी लकड़ियों को इकट्ठा करके ऋषि और मृगी दोनों को चिता पर रखकर स्वयं जलाया।

124. मृग-कुमार को लेकर शतशृंग पर्वत पर गये। ब्रह्महत्या दोष के कारण दोनों पत्नियो का मुख नहीं देखा।

125-126. कुन्ती ने पूछा; हे स्वामी ! तुम महाज्ञाता, धार्मिक, विवेकी, पण्डित, सत्यव्रत हो। क्यों अधोमुख होकर बात नहीं करते हो ? हमने क्या द्रोह किया कि हम लोगों का मुख नहीं देखना चाहते हो ?

127. पाण्डु ने कहा—तुम दोनों महाज्ञानी हो। महाब्रह्मत्व

को लेकर तुम्हारी दो वंशों में उत्पत्ति है।

128. हे कुन्ती ! मैंने मृगया विनोद में ब्रह्महत्या करके महा पाप किया है।

129. अग्निकार महर्षि को शृंगार काल में मारा। क्रोध से महात्मा ने प्राण-त्याग करते समय शाप दिया।

130. बिना दोष के हे पाण्डु ! तुमने शृंगार के समय शराघात किया। तुम्हारे शृंगार के समय अकाल बाण लगेगा।

131. मैंने इतनी बड़ी हत्या की। हे कुन्तिभोजकुमारी ! मैं इसीलिए दुःखी होकर यायावर की तरह घूमता हूँ।

132 कुन्ती ने कहा—हे प्राणनाथ ! जो भाग्य में लिखा है, वह अवश्य होगा।

133 हे स्वामी स्वयं जो किया जाता है उसे ही कर्म कहा जाता है।

134 हे स्वामी ! यह पुत्र किसका है ? पाण्डु ने कहा—अग्निकार ऋषि का है।

135 तपस्वी ने अवमान काल में मृग-महर्षि नामक इस पुत्र को मुझे समर्पित किया।

136-137 कुन्ती ने कहा—हे प्राणनाथ ! अग्निकार कैसे महात्मा हैं ! इतने बड़े महर्षि होकर अपने कुकर्म को नहीं सोचा। कोप का स्मरण न करके तुम्हें उल्टे शाप दिया।

138 धर्मार्थ के लिए धृतराष्ट्र को राज्य का समर्पण किया किन्तु यथार्थ मे धर्म का प्रतिफल तुम्हें मिला।

139. अपने कर्म को जानकर पाण्डु मृगया छोड़कर घोर वन में रहने लगे।

140 पाण्डु नृपति ने व्यास को याद किया। महाब्रह्मर्षि तत्काल आ पहुँचे।

141. साठ हजार शिष्यों के साथ व्यास ब्रह्मर्षि शतशृंग पर्वत पर उपस्थित हुए।

142. बन्धुओं के साथ पाण्डु ने प्रणाम किया। व्यास ने आशीर्वाद दिया। बन में तुम्हारे ऊपर विपत्ति न पड़े।

143. आसन और पादासन देकर बार-बार हाथ जोड़कर पाण्डु ने विनय की।

144. श्री व्यास ने पूछा—हे नन्दन ! तुम किस नाराजगी से बन में आये ?

145 इन्द्रप्रस्थ का राज्य हे बेटा ! कैसे छोड़कर चले आये? पाण्डु ने कहा—हे पिता ! धृतराष्ट्र के लिए छोड़ा।

146. अन्ध होकर उसने राजपद की इच्छा की। मैंने कहा, हे भाई ! अपनी मनोकामना का भोग करो।

147. धृतराष्ट्र को राज्य देकर हे तात ! घोर वन में प्रविष्ट हुआ। सर्वदा मैं निविड वन में समय बिता रहा हूँ।

148 निरन्तर भ्रमण करके मैं पंचकटक की सेवा करता हूँ। असुरों को मारकर तपी जनों की रक्षा करता हूँ।

149 व्यास कहते है कि तुम साधु सहोदर हो। इसीलिए धृतराष्ट्र को राज्य सौंपकर वन मे दुरवस्था को प्राप्त हो।

150. पाण्डु ने कहा—हे मुनि ! मेरा कष्ट सुनिये। अग्निकार ऋषि का मैंने प्राणनाश किया।

151 ब्रह्महत्या दोष को मैंने अपने देह में धारण किया। हे ब्रह्मर्षि ! मुझे बताओ कि यह पाप कैसे दूर होगा ?

152 सुवर्ण आसन पर व्यास मुनि विराजमान हुए। व्यास के सम्मुख सभी शिष्य खडे हैं।

153 रत्न के घड़े में जल लेकर नृपति ने मुनि के पाद का प्रक्षालन किया। विनय और भक्तिपूर्वक अनेकविध पूजा की।

154. व्यास ने कहा—हे नृपमणि ! तुम चिन्ता मत करो। अग्निकार महर्षि को तुमने अनजाने में शराघात किया।

155 अनजान लोगों का विशेष दोष नहीं होता। व्यास ने धर्म शास्त्र की बात कहकर पाण्डु को शान्त किया।

156 पूर्वनिर्धारित कर्म के अनुसार अग्निकार ऋषि ने इस गति को प्राप्त किया।

157. पाण्डु ने पूछा—भूत, भविष्य ज्ञाता महाज्ञानी होकर अग्निकार किस पाप से दूषित हुए ?

158. व्यास ने कहा—हे पाण्डु ! सुनो। मैं तुमसे सत्य युग की बात कह रहा हूँ।

159 अपार काल की कथा सावधान होकर सुनो। यह कर्म-कल्प नामक सतयुग की बात है।

160. कुश देश के राजा अनंगसेन की पत्नी रत्नावली थी।

161. राजा होकर वह महाज्ञाता था। साधना करके वह जितेन्द्रिय हुआ। उसके एक ही पत्नी थी।

162 स्वामी ने अपार साधना की, लेकिन उसकी पत्नी अनुराधा नक्षत्र में पैदा हुई थी।

163 जिसका जन्म-योग अनुराधा नक्षत्र होता है वह स्त्री कामुक और परपुरुषगामिनी होती है।

164 पुरुष होने पर वह सर्व-धर्म त्याग करता है। अष्ट-नक्षत्र में पैदा होने के कारण वह काम-कला में कुशल होता है।

165 अश्विनी, रोहिणी, पुष्य, अनुराधा, स्वाति, श्रवण, शतभिषा और रेवती नक्षत्र में पैदा लोग कामुक होते हैं।

166 अष्ट-नक्षत्र में जो स्त्री उत्पन्न होती है, अनवरत उसको काम-पीड़ा होती है और वह परपुरुषगामिनी होती है।

167 इन आठ नक्षत्रों में जो पुरुष और स्त्री पैदा होते हैं, वे अनवरत कामोन्मत्त होकर अनाचार करते हैं।

168 उस कुश दीप का राजा सत्यवादी था किन्तु उसकी पत्नी परपुरुषगामिनी रूप में राज्य में प्रसिद्ध थी।

169 कोई तप-धर्म राजा नहीं छोड़ता था। अपनी एक ही भार्या के साथ वह जितेन्द्रिय था।

170 उस राजा ने और विवाह नहीं किया। एक ही भार्या उसकी मनोहारिणी थी।

171 भार्या को नीतिज्ञ ब्राह्मण के सामने बैठाकर समझवाया कि व्यभिचारिणी स्त्री की मुक्ति नहीं होती।

102 य
रते समय वह हृदय में धारण करती थी, किन्तु राजा
शान्त
ाते ही काम-पीड़ा से पीड़ित होकर बाहर चली
103 यम ने
थी।
महात्मा
प्रकार से नृपति ने उसको दिन-रात समझाया।
104 वन्धन
र्षों तक उसे पुराण-वाक्य सुनाये।
दाड़ा
न्द जाति की वह स्त्री पापाचार करती थी। कभी भी
105
अनीति-प्रकृति को नहीं छोड़ा।
106
175 उसको अनेक भोग-विलास देकर यत्नपूर्वक प्रतिपालन करने पर भी वह जजाली परपुरुष को छोड़कर कहीं रम नहीं पाती थी।

176 मकर-स्नान के लिए समुद्र जाने के समय उसने अग्निकार ऋषि को घोर वन में देखा।

177 उसके साथ में अनेक दासियाँ थीं। इनमें सफाई करने वाली, परिहास करने वाली, पुष्प आहरण करने वाली और वेश-भूषण करने वाली आदि थीं।

178 हे महाराजा ! स्त्री का स्वभाव सुनो। शीघ्र जाकर उसने ऋषि को पकड़ा।

179 मुनि का दण्ड-कमण्डल झटककर गिरा दिया। खींचकर भुजा से भुजा भिड़ाकर मुनि का आलिंगन किया।

180 उसने कहा—हे मुनि ! शीशम वृक्ष के नीचे आओ। मैं राजकन्या हूँ, मुझे सुरति दो।

181 अनेक स्त्रियों के बीच में एक अकेले पुरुष ब्रह्मर्षि विस्मित हुए।

182 क्रोध से महात्मा ने उसे ढकेलकर स्वयं को छुड़ा लिया। विस्मित होकर मुनि ने नारायण ! नारायण ! कहा।

183 मुख पर चुम्बन देकर शर्नक्रिया (शनभर्तरी) ने कहा—सुस्वादु तृप्तिकर भोजन पर भी तुम्हारा गला खुजलाता है ?

184 यद्यपि तुम वास्तव में विप्र हो तो भोजन सुलभ होने पर भी क्या भागते हो ?

185 मैं राजा की भार्या और राजा की कुमारी हूँ। मेरे अंगों में लगकर तुम्हारा पाप दूर हो गया।

186 अग्निकार न कुछ कह सके, न हट सके। उच्च स्वर में चिल्लाये—हे अनगसन ! इसका प्रतिकार करो।

187 शब्दभेदी वह अनगसेन राजा पादुका-मन्त्र औषधि जानने के कारण अन्तर्धान होकर यहाँ पहुँचा।

188 महर्षि को अपनी पत्नी द्वारा पकड़े हुए देखकर नृपति ने क्रोध से होंठ चबाये।

189 महर्षि ने कहा—यह कैसी राक्षसी है ? तुम्हारे रहते हुए यह मुझसे हठ करती है।

190 क्रोध से राजा ने रानी के केश पकड़े और विजय कर्णकटारी से उसे काट दिया।

191 महर्षि महोदधि स्नान के लिए गये और नृपति अपने प्रासाद में प्रविष्ट हुए।

192 यम-धर्म पुराण से विचार हुआ। यम ने कहा कि राजा ने स्त्री-हत्या की।

193 अग्निकार ऋषि के उच्च स्वर से पुकारकर अनुरोध करने पर राजा आकर पहुँचे।

194 यम के विचार से राजा और महर्षि ये दोनों स्त्री-हत्या के दोषी हुए।

195 फिर यम-धर्म पुराण के विचार के अनुसार राजा और

महर्षि को हत्या-दोष नहीं लगा।

196. भार्या होकर जब पर-पुरुषगामिनी हुई तो दोष की मात्रा के अनुसार स्वामी दण्ड क्यों नहीं देगा ?

197. वस्तुतः राजा ने अपनी स्त्री के दोष के लिए दण्ड दिया तो उसे पाप नहीं कहना चाहिए।

198. ऋषि ने उससे राक्षसी समझकर भय किया। उसके ऊपर परपुरुषगमन का दोष पड़ा।

199. ऋषि के साथ रति-शृंगार की इच्छा के अनुक्रम में वह वन में मृगी के रूप में पैदा हुई।

200 अग्निकार ऋषि से जब रति करने की इच्छा की तब मृगी के रूप में वह ऋषि की मनोहारिणी हुई।

201 ऋषि के कारण जब वह युवती मृत हुई तो इस कन्या के लिए अग्निकार ऋषि का नाश हुआ।

202. मृगिणी और ऋषि के शृंगार-समाप्ति के समय पाण्डु ने बाण से मारा।

203. स्त्री-हत्या पाप जो अग्निकार ऋषि का था; वह पाण्डु के शराघात में समाप्त हुआ।

204 व्यास ने कहा—हे महाराज पाण्डु ! सुनो। देवताओं के संचित कर्म के लिए तुम क्यों अपना कर्तव्य छोड़ते हो ?

205 पाण्डु ने कहा मुझे क्रोध में शाप देकर कहा कि शृंगार के समय तुम पर असमय शराघात हो।

206 ऐसा कहकर मुझे शाप दिया। व्यास ने कहा कि तुम्हें बड़ा दुर्धार शाप दिया।

207. व्यास ने कहा कि यह महा कष्टकर हुआ। तपी लोगों का शाप कदापि लौटाया नहीं जा सकता।

208. व्यास ने एकान्त में पाण्डु को बैठाकर कहा—वत्स ! दुर्वासा का महामन्त्र कुन्ती को प्राप्त है।

209. बेटा ! वहुओं से क्रोध न करना। वे अपने-अपने उपाय के अनुसार सन्तान उत्पन्न करें।

210 बेटा ! स्त्रियाँ बड़ी बुद्धिमती होती हैं। अनेक उपाय से वे सन्तान उत्पन्न करती हैं।

पाण्डु को राज्य लौटाने के लिए धृतराष्ट्र का आगमन और शिव-स्तुति

1. अनेक प्रकार से व्यास ने पाण्डु को समझाया और हस्तिनाए न दिये।

2. धृतराष्ट्र नर जाकर पराशर नन्दन मिले।

3 संजय : , स्वामी कुरुनाथ ! व्यास तुम्हारे आगे उप हैं।

4 स्थान र अन्धराज उठे। सत्यवतीनन्दन की पाद-प

5. कृष्ण ाल राजा ने दी। खड़े होकर राज

6 व्यास धृतराष्ट्र ! सुनो। पाण्डु को वन ा।

7 अग्नि, उसने शराघात किया। क्रोध से ऋषि ने ऐ शाप दिया।

8. ब्रह्मर्षि पिता के मुख से यह बात सुनकर अन्धराज ने रथ, गज, अश्व, सैन्य के साथ यात्रा की।

9 सुवर्ण पालकी पर धृतराष्ट्र विराजमान हुए। गान्धारी डोली में चढ़कर बाहर हुई।

10-13 दस लाख रथ, पचास लाख हाथी, सत्तर लाख अश्व और पांच अक्षौहिणी पदाति, पाट-छत्र आलम्ब एक लाख, चामर एक लाख, उदण्ड एक लाख, मयूर कण्ठा एक लाख, शंख वाद्य एक लाख, वीर-तूर एक लाख, निशान एक लाख, एक लाख ढोल के साथ हाथी, घोड़ा, पदाति यात्रा करते हैं।

14. इस प्रकार की सेना लेकर अम्बिका के पुत्र प्रचण्ड तेज से वन में घूमते हैं।

15 योद्धा कानन-वन में दौड़कर जा रहे थे। उस समय कालाग्नि नामक एक नदी मिली।

16 उस नदी के किनारे विश्वनाथ विराजमान हैं। इसीलिए कालाग्नि महातीर्थ है।

17-18 विदुर, संजय धृतराष्ट्र के साथ गंगानन्दन महाबली भीष्म ने तीर्थ में स्नान करके विश्वनाथ की स्तुति की।

19 कालाग्नि महालिंग काशीपति की जय हो। उत्पत्ति और प्रलयकर्त्ता तुम्हारे अलावा दूसरा कोई नहीं है। अन्धक विदारक, त्रिलोचन की जय हो।

20. वृषभ वाहन पर अनवरत भ्रमणकारी, भोले-भाले भैरव रूप में ध्वंस करने वाले हो।

21. लक्ष्मी-पुत्र कामदेव को भस्म करके तुमने उसके पिता को पुत्रहीन कर दिया।

22. निरालम्ब पुरुष होकर कुछ न‌ा ‌ानते हो। नारायण के लिए तुम काल-कूट भक्षी ‌ा।

23. हे स्वामी ! काशीपति तुम्हारी कूट बुद्धि नष्ट हुई। तुम दयासागर नाथ और शृगा' ‌र्गानिधि हो।

24 हे गंगा के स्वामी ‌ि‌ ‌ ' ‌म एक चरण चतुर्भुज, त्रिलोचन, पंच‌ ‌

25. खप्पर और कुठार ल‌ ‌ ‌ाकर डमरू के डिमडिम शब्द के साथ ‌ ‌ ।

26 उन्मत्त चण्डिका और ‌ ‌ ‌ घोर चीत्कार के साथ प्रेत, पिशाच आ‌ ‌ ‌ को लेकर खेलते हो।

27 रक्त-वर्णाभ, सिन्दुरलेपित कापालिक, रक्त-वसन धारी और रक्त मन्दारधारी हो।

28-30 अपूर्व नृत्यकारी, कालातीत कीर्तिमान, वृषभ वाहन, प्रचण्ड तेजस्वी, भ्रमणशील महात्मा, महामत्तकाय, निश्चिन्त पुरुष, परदुःखकातर, सिन्दूरविलेपित, अनाकार रूप, तुम क्षण में वृद्ध और क्षण में कन्दर्प रूप धारण करने वाले हो।

31-36. माता-पिता, भार्या और भगिनी की परवाह न करते हुए भण्ड गीन गाकर, विनायक-विनायक-हेरम्ब- गणपति, नन्दी, महाकाल चण्ड, प्रवण्डसेनापति, जयन्तक, अजयन्तक, जतुमल्ल, क्षेत्रबल और विकृत योगी, नाथ-अवधूत, पिगल-वैरागी सब कादम्वरीपान से मत्त होकर उन्मत्त ताण्डव नृत्य करते हो। नगारा, ढोल, रबाक आदि वाद्य बजाकर त्रिताल नृत्य करते हो। बलि माम वन्य-मास, आग मे भुनी मछली खाकर शौर्यवन्त भोलानाथ के साथ नानारग से केलि करते हो।

37 गिरिजा के बल्लभ, महाभैरव मूर्ति की शरण मे शूद्रमुनि सारलादास हमशा रहते हैं।

38. हे स्वामी ! जब तक चन्द्र-सूर्य रहे तब तक मेरे हृदय में तुम्हारा ध्यान रहे।

39 मे इस महाभारत के आदि पर्व के द्वितीय खण्ड मे अपूर्व रस और भाव का संचार करूँगा।

शतशृंग पर्वत का वर्णन

1. कालाग्नि नाथ की पूजा करके कुरुराज मलय गिरि पर प्रविष्ट हुए।

2. शुद्ध सुवर्णमय शत योजन तक विस्तीर्ण शतशृंग नामक गिरि को देखो।

3 उसके ऊपर रस-कूप में अष्टधातु डालने से विविध रत्न निकलते हैं।

4 श्वेतवृक्ष में धवल पत्र और कनक पुष्प उदित चन्द्रमा की तरह दिखाई देते है।

5. दो शत योजन ऊचे और चार शत योजन तक विस्तीर्ण पर्वत के ऊपर विधाता दक्ष ने यज्ञ किया।

6. उस पर्वत से पाताल लोक का रास्ता है। ईशान शिखर पर चढने से आकाश लोक मे पहुचा जा सकता है।

7 यह जम्बूद्वीप का मध्यस्थल है। इस पर्वत से गगा की पैंतीस धारायें फूटती हैं।

8 उसी मे सारी नदियाँ उत्पन्न होती है। मेरु पर्वत में होती हुई सागर में मिलती है।

9 पर्वत के ऊपर एक सौ शिखर है। ईशान दिशा मे सोने का शृंग है।

10 11. दक्षिण दिशा मे वैदूर्य-शृग, पश्चिम दिशा मे हीरा शृंग, उत्तर में माणिक्य ज्योति का शृंग और वायव्य कोण में मर्कत शृंग प्रकाशित है।

12 नैऋत कोण मे नील शृग और अग्निकोण में अष्टरत्न शृग है।

13 एक-एक शृंग की बारह योजन की भूमि और सो योजन की ऊंचाई है।

14-15 ईशान कोण में दिवाकर, नैऋत कोण में शशि, वायव्य कोण में मेघ, अग्निकोण में नारायण विश्राम करते हैं।

16 ईशान कोण के शृंग से आकाश-पथ है। वायव्य शृग-कोण में विश्वनाथ विराजमान हैं।

17. त्रेता युग मे राम के कार्य हेतु हनुमान ने मेरु के अनुज शतशृंग गिरि को उखाड़ लिया।

18. सुन्दर पर्वत होने के कारण राम ने उस पर दया की। अंगद को कहकर उसे छिपाकर रखवा दिया।

19 स्वामी के आदेश मे अंगद ने उसे फेंक दिया। वह जम्बूद्वीप के मध्य मे जा गिरा।

20 आदि ईशान दिशा में शतशृंग गिरि अलका भुवन से चार गुना सुन्दर है।

21 उस पर्वत से ध्यानपूर्वक देखने से सप्तद्वीप दिखाई देता है। वहाँ पर पाण्डु राजा रहते है।

22 सेवा करने पर वह पर्वत प्रसन्न होता है। उस पर जन्मी सन्तान शौर्यवान और बलवान होती है।

23 धृतराष्ट्र शतशृग पर्वत पर पहुचे और पाण्डु ने कुरुनाथ के दर्शन किये।

24 25 हाथ मे धामटा काठ का धनुष, जिसकी डोरी कटास बॉस के छिलके से बनी है, परशु, वाण से पूर्ण तरकस ओर मयूर पख के आवरण, कण्ठ मे गजा की माला, कटार, मारी के काटे की मेखला, धारण किये हुए रक्त चक्षु पाण्डु धृतराष्ट्र के सामने व्याध के रूप मे उपस्थित है—ऐसा सजय ने निरूपित किया।

27 पाण्डु ने दर्शन करके ज्येष्ठ भ्राता धृतराष्ट्र से अनेक मधुर बात की।

28 धृतराष्ट्र ने कहा—भाई, तुम्हारा परम कल्याण हो, तुम त्रिकालजीवी हो, तुम्हारी आयु, धन, सन्तान सब वर्धित हो, शीघ्र यश मिले।

29 भाई ! मैंने सुना कि तुम्हे वन मे विपत्ति पडी। पराशर नन्दन ने मुझसे ऐसा कहा।

30 मेरे हृदय मे काफी व्याकुलता हुई।

31 हाथ जोड़कर पाण्डु महारथी ने संक्षेप मे सारी बाते बताई।

32 हे भाई ! अग्निकार ऋषि ने मुझे शाप दिया कि शृगार के समय मेरे ऊपर अकाल वाण पड़ेगा।

33 यह सुनकर धृतराष्ट्र अत्यन्त व्याकुल होकर बोले, धर्माश्रय करने वाले को सकट पडता है।

34 हे भाई ! राज्य को लौट चलो। इस घोर वन मे रहना उचित नही है। अरण्य मे अनेक विपत्तिया पड़ती हैं।

35 पाण्डु ने कहा—हे महाज्ञाता नृपति ! तुम इस पर्वत के माहात्म्य के बारे में क्या जानते हो ?

36 स्वामी ! तुम हस्तिनापुर मे रहते हो। उस पंचकटक में तुम दृढकवच समान हो।

37 अत्यन्त विनम्र भाव से पाण्डु नृपति ने उत्साहपूर्वक अपरिमित फल आदि की व्यवस्था करवाई।

38 राजा के साथ जितनी अपार सेना थी, सबने आम, कटहल, केला, अगूर आदि खाये।

39 पाण्डु नृपति ने अनको व्यवस्थायें कीं। सात अक्षौहिणी सेना भोजन प्राप्त कर तृप्त हुई।

40 भोजन करके कुरुनाथ ने मुँह धोया और कर्पूर-ताम्बूल खाया।

41 भीष्म, भूरिश्रवा, सजय, विदुर सब सेना के साथ अपने नगर मे लौट गये।

42 कुछ दूर तक पाण्डु छोड़ने के लिए गये। रतिकाम नामक पर्वत के नीचे से लौट आये।

43 धृतराष्ट्र सेना सहित चल रहे है। हस्तिनापुर मे जाकर प्रविष्ट हुए।

पाण्डु और कुन्ती का आलाप, अगस्त्य का आगमन और उपदेश

1 पाण्डु शतशृग पर्वत पर रहे। एक समय देवी कुन्ती रजस्वला हुई।

2 पॉचवे दिन उसने शुद्ध स्नान किया। रात्रि मे पाण्डु के पास उपस्थित हुई।

3 पाण्डु ने कहा—हे प्राणसखा ! सुनो। मेरा हाथ पकडकर तुम महादुःखी हुई।

4 कुन्ती ने कहा—स्वामी ! विकल न हो। मै रजवती हूँ, मुझे नियन्त्रित करके रखो।

5 उस परम साध्वी, सुज्ञानी भार्या के शरीर को पाण्डु ने खीचकर आलिगन किया।

6 युवती और पति जब एक योग हुए, प्रतापी कामदेव ने कठोरता की।

7 पाण्डु ने जब रति-शृगार की इच्छा की, तब कुन्ती शीघ्र अलग हो गयी।

8 कुन्ती ने पितृ लोगो का स्मरण किया। स्वामी के शाप के कारण मे शृगार से वंचित हुई।

9 हम लोग तुम्हारे चरणो की सेवा कर रहे है। हे महात्मा ! मुझ पर क्रोध न करना।

10. शृगार से वचित होकर सकल्प करके रति की इच्छा

छोड़ दी।

11. उस महासाध्वी ने स्वामी के लिए मन से शृंगार-भाव छोड़कर रति इच्छा नहीं की।

12. कुन्ती ने माद्री को बुलाकर कहा—युवा अवस्था लेकर कब तक बचेंगे ?

13 माद्री ने कहा—तुम चिन्ता और लज्जा मत करो। स्वामी के अर्जित कर्म को भार्या भोगती है।

14. हमने किसका क्या दोष किया और कौन-सा पाप अर्जन किया ? अकारण हमारी तपस्या नष्ट हो गयी।

15 अगस्त्य यह कहते है कि दण्डधारी मुनो। दो नारियाँ अपने कर्म को मानती हुई रहीं।

16 इसके बाद हे नृपराय ! श्री महाभारत सुनकर पाप क्षय करो।

17 पति और पत्नी ने रति-शृंगार का त्याग किया। स्वामी की शय्या पर तीन वर्ष तक नहीं गयीं।

18 शतशृंग पर्वत पर पाण्डु राजा विराजमान है। माद्री और कुन्ती बगल में चवर लेकर खड़ी है।

19 वसन्त ऋतु के वैशाख मास के शुक्ल पक्ष में अगस्त्य ने पाण्डु से भेंट की।

20-22 इस शुभ योग में अगस्त्य महाऋषि चालीस हजार शिष्यों के साथ वहाँ उपस्थित हुए।

23 अगस्त्य को देखकर पाण्डु राजा सानन्द हुए। पादार्घ्य देकर मुनि की पूजा की।

24 अम्बालिका पुत्र ने वसन, कुण्डल और वैजयन्ती की माला दी।

25 मुनि के पदोदक को लेकर पाण्डु ने अपने सिर पर लगाया।

26 कृष्ण मृग की खाल लेकर सभी ऋषि शिष्य बैठे।

27 ब्रह्मचारी कुशल वार्ता पूछते हैं। हे पवकंटक अधिकारी कुशल से तो हो ?

28 मैंने तुम्हारे भ्रातृत्व को जान लिया है। धृतराष्ट्र तुम्हारा अदक्ष और अयोग्य ज्येष्ठ भ्राता है।

29 तुमने अपना स्वार्थ त्याग करके उसे दक्ष बनाया। उसके प्रमादवश तुम वनगामी हुए।

30 यह सब कुछ चला जायेगा केवल तुम्हारी यश-कथा ही रह जायेगी। दयालु शरीर धर्म कैसे छोड़ा सकता है।

31. हे पाण्डु राजा ! तुम प्रत्यक्ष ज्ञानी पुरुष हो। अन्धे को राज्य देकर तुम वन में दुःख भोग रहे हो।

32. हे राजा तुम शत्रु के दर्प का ध्वंस करते हो। संसार जन की रक्षा करके सुख से प्रजा-पालन करते हो।

33 हे पाण्डु तुम्हारा जीवन धन्य है। तुमने राग, मोह, अहंकार को दूर कर दिया।

34 तुमने अक्षम सौतेले भाई को सम्पत्ति दी। सत्य से संसार का पालन करके धर्म को जीत लिया।

35 पाण्डु नृपति ने शत सहस्र दण्ड-प्रणाम करके कहा—हे अगस्त्य ! आपकी कृपा से मेरा सब कुशल है।

36. पाण्डु ने कहा—हे मुनि ! मैंने मन्द कार्य किया। ऋषि और मृगी का संगम संसार में कहीं होता है ?

37 अगस्त्य ने कहा—तपी लोग शक्ति, स्वस्थ शरीर और यौवनावस्था को लेकर घोर वन में रहते हैं।

38. कामदेव पुरुष बत्तीस कला लेकर सबके शरीर में रहता है।

39 त्रैलोक्य में इसको जीतने वाला कोई नहीं है। वह सभी तपस्वियों का नाश करता है।

40 जहाँ धर्म है, वहाँ वह दूनी शक्ति से शर-सन्धान करता है। करोड़ों के बीच में काम को जीतने वाला एक व्यक्ति भी दुर्लभ है।

41 वह काम जब उन्मत्त करता है, तब कौन गुरुजन और कौन मान्य है—इसका विचार नही रहता।

42. वन में खोजकर कहाँ स्त्री पायेंगे ! कोई-कोई हस्त मैथुन करके वीर्यपात करते हैं।

43 पके केले के छिलके को लगाकर कोई-कोई रति करके वीर्यपात करते हैं।

44. कोई माटी में छेद करके उसके भीतर पत्र भरकर महारस गिराते हैं।

45. कोई गाय, भैंस, बकरी, भेड़ के साथ नाना प्रकार से रति-रस केलि करते हैं।

46 इससे तो मृगी जीव पवित्र है। अतृप्त ऋषि इस प्रकार विनष्ट हुआ।

47 पाण्डु ने कहा—अग्निकार ऋषि वन में एक मृगी को लेकर रमण कर रहे थे।

48 शब्द सुनकर मैंने बाणाघात किया। ऋषि और मृगी

दोनों बाण से विद्ध हुए।

49 क्रोध से ऋषि ने मुझे गुरु शाप दिया। शृंगार के समय तुम्हे अकाल काण्ड लगेगा।

50 जन्म निष्फल हुआ और वंश-नाश हुआ। हे अगस्त्य ! इसका क्या प्रतिकार है, मुझे बताइये।

51 अगस्त्य ने कहा—वह मतिभ्रम था। यम के दण्ड से मृगी के साथ मिलित हुआ।

52 हे महाराजा ! तुमने दुरापद शाप पाया। तुम शृंगार रस में लिप्त न हो, नही तो नाश को प्राप्त होगे।

53 कुन्ती, माद्री दोनो रानियो को तुम बुलाकर समझाओ और आदेश दो।

54 जिस तरह से सन्तान उत्पन्न हो सके उसका उपाय तुम दोनो युक्तिया करो।

55 शास्त्र पाठी रोलक मुनि ने दोनो रानियो को सुनाया। हे कुन्तिभोज पुत्री सन्तानोत्पत्ति का उपाय करो।

56 तुम पर रति की इच्छा नही कर सकता परन्तु सन्तान के लिए क्या मनोकामना नहा करती हो ?

57 हे माहेश्वरी ! स्वामी का सकोच मत करो। पुत्र को उत्पन्न करके स्वर्ग प्राप्त करोगी।

58 अगस्त्य ने कहा—हे देवी कुन्ती ! दुर्वासा का महामन्त्र तुम्हारे पास है।

59 मानव की इच्छा करने से तुम असती होगी। इसलिए देवताओ को बुलाकर रति-शृंगार करो।

60 देव बुला लेकर देवता पैदा होते है। दु ख और पाप दूर होगा और धर्म उदित होगा।

61 कुन्ती ने कहा—आप गुरु परम गुरु हो। आपकी आज्ञा का उल्लघन कौन कर सकता है ?

62 अगस्त्य ने कहा—हे बेटी ! पहले से ऐसा ही रिवाज है। तुम अब मन में कुछ बुरा न मानो।

63 64 जब स्वामी के वीर्य से पुत्र उत्पन्न नहीं होता, तो दूसरे पुरुष के साथ समागम करके सन्तान उत्पन्न करना युक्तितः स्त्री का धर्म है। यहाँ तो स्वामी का अभिशाप है। इसमें तुम्हारा क्या दोष है ?

65 तुम्हारे पूर्व वंश मे सन्तानविहीन तुम्हारी सासो ने कैसे सन्तान उत्पन्न की ? क्या तुम जानती हो ?

66 व्यास उनके भूसर थे। उनको लेकर भी शृंगार इच्छा का।

67 अन्ध धृतराष्ट्र, पाण्डु, विदुर तीन भाई उत्पन्न हुए।

68 तुम माँ अन्नपूर्णा ही रहो। अब मैं जा रहा हूँ। समय पर आऊगा। सन्तान होने की सूचना मुझे देना।

69 कुन्ती से कहा—हे बेटी ! मेरी राय मानो। अविवाहित अवस्था मे तो सूर्य के साथ शृंगार की इच्छा की थी।

70 आदित्य के वीर्य से कर्ण उत्पन्न हुआ। तुम्हारे आत्मज को राधा ने पाला।

71 कुन्ती ने कहा- हे महामुनि ! आप कहाँ थे ? मेरी इस महामन्त्र की परीक्षा को आपने कैसे जाना ?

72 अगस्त्य ने कहा—मै भूत भविष्य का ज्ञाता हूँ। पुराण मे सब आगत भविष्य की कथा लिखी है।

73 अभी मै तुम्हे भविष्य की बात कहता हूँ। धर्म-देव से तुम्हे एक पुत्र पैदा होगा।

74 पवन से और इन्द्र देवता से एक-एक पुत्र पैदा होंगे।

75 कर्ण को लेकर तुम्हारे चार पुत्र होगे। युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन नामक तीन पैदा होगे।

76 77 ब्रह्मा युधिष्ठिर, माहेश्वर भीमसेन और विष्णु अर्जुन होगे। ऐसे ब्रह्मा, विष्णु, शिव तीन पुत्र पैदा होगे।

78 माद्री को दया करके हे कुन्तिभोज कुमारी ! दुर्वासा की जप-माला को एक बार देना।

79 इसके दो पुत्र पैदा होगे, जो महिभार का निवारण करके नव सृष्टि करेगे।

80 हे बेटी ! इसी बात को बुरी न समझो। यह अन्यथा नही होगा। यह मेरी शपथ है, मन मे दूसरा कुछ न सोचो।

81 महात्मा अगस्त्य ने सुलक्षणी होने का आशीर्वाद दिया। देवी को मन्त्र से विद्ध करके एक कुश-शय्या दी।

82 इस शय्या पर सोकर दुर्वासा के महामन्त्र से जिसको सकेत करोगी वह अवश्य भेंट करेगा।

83 माद्री को मोहन अंजन देकर कहा कि इसको लेकर तुम अश्विनीकुमार को मोहित करो।

84. ये दोनो संज्ञा के पुत्र सुकुमार और सुन्दर हैं। वे आकाशमण्डल में सूर्य के सामने विहार करते हैं।

85. वे दोनों कुमार तुम्हें काम-भोग करायेंगे। दो पुत्र उत्पन्न होंगे, उनका नाम नकुल और सहदेव रखना।

86 सहदेव नामक तुम्हारा जो पुत्र होगा उसे नौ सृष्टियो का भूत भविष्य दिखाई देगा।

87. वे द्वापर में अनेक पुण्य-धर्म करेंगे और पृथ्वी पर चिरन्तन कीर्ति की प्रतिष्ठा करेंगे।

88 हे माद्री ! तुम कुन्ती के प्रति भक्ति करती चलो। हे बेटी कुन्ती ! इसको दासी समझकर दया करती रहना।

89. अगस्त्य के वचन से उन्हें परम शान्ति मिली। सभी दोषादोष को छोड़कर निश्चिन्त हुई।

90. कुन्ती और माद्री के साथ पाण्डु ने प्रणाम किया। वहा से अगस्त्य महामुनि अन्तधान हुए।

युधिष्ठिर का जन्म

1 पाण्डु ने कहा—द्वितीय ब्रह्मा ने शास्त्र के आधार पर जो कुछ कहा, उसे सुना तो ?

2 कुन्ती ने कहा—हे देव ! अगस्त्य ने ऐसी बात कही जिससे फल प्राप्त होगा।

3. पाण्डु ने कहा—और विलम्ब न करो। पुत्र देखकर मेरे मन में विश्वास उत्पन्न होगा।

4 कुन्ती ने कहा—यदि पुत्र लाभ की इच्छा है तो हमे अच्छी तिथि का निर्णय करना चाहिए।

5 शतशृंग पर्वत पर ऐसा विचार करके पाण्डु रात्रि की गुप्त यात्रा के लिए वन मे निकले।

6 राजा रात्रि में भार्याओं को जान-बूझकर छोड़ देते हैं। वे जैसे चाहे वैसे पुत्र उत्पन्न करें।

7 इस प्रकार मन मे सोचकर पाण्डु गहन वन में घूमते हैं और शिकार खेलते है।

8 वैशाख शुक्ल पक्ष के एक दिन की सात घड़ी रात्रि के

10. शुभयोग मे देवी कुन्ती माद्री को बैठाकर सोचती हैं।

11 अगस्त्य के कथनानुसार एक कुश शय्या बनाई और ऊपर एक झीना वस्त्र बिछा दिया।

12 शाच होने के बाद वेश विभूषित होकर पुष्प पंखुड़ियों को बिछाया और उसके ऊपर कपूर-चूर्ण छिड़क दिया।

13 दुर्वासा की जप माला को देवी ने हाथ में लिया और हृदय में धर्म देवता की स्मृति की।

14. अपने पति के साथ रति नहीं हुई। मैं युवती इसीलिए यह हीन कार्य कर रही हूँ।

15. हे धर्मदेव स्वामी ! मुझे इस कष्ट से बचाओ। भोज कुमारी धर्म-धर्म कहकर स्मरण करती है।

16. स्वामी निरंजन पुरुष का आसन काँप गया। शुक्लाम्बर पुरुष के रूप में शीघ्र दृश्यमान हुए।

17 धर्म-निरंजन आकर कुश शय्या पर विराजमान हुए। कुन्ती ने देखकर विनय भक्ति की।

18. दुर्वासा ऋषि की कृपा से कुन्ती को धर्मदेव मनुष्य की तरह दिखाई दिये।

19. देवी कुन्ती की अत्यन्त पूजा देखकर धर्म देवता परमानन्दित हुए।

20 देखकर कुन्ती ने धीरज धरा। शून्य पुरुष के साथ अत्यन्त प्रीति बढ़ गयी।

21 शृंगार से सन्तुष्ट निरंजन ने उत्सुकतापूर्वक वीर्य-त्याग किया।

22 अढ़ाई पहर रात्रि में अमृत योग में तत्क्षण 'स इन्दु' पुत्र उत्पन्न हुआ।

23 निष्कलंक चन्द्रप्रभ और सूर्य की तरह तेजस्वी, शुक्लाम्बर पुत्र उत्पन्न हुआ।

24 आकाश लोक मे ज्योति प्रस्फुटित हुई। कुन्ती ने पुत्र को गोद में लिया।

25 उसका सुन्दर, निर्मल, निष्कलंक और सुकुमार शरीर शुद्ध स्फटिक की तरह दिखाई दे रहा है।

26. चन्द्र की तरह कपाल, अमूल्य रत्न रेख की तरह ओष्ठ, तिल कुसुम की तरह नासिका, लाल कुमुदिनी की तरह दृष्टि है।

27-36. ललित कर्ण, पक्व बिम्बोष्ठ, वलयित दोनों भुजायें, फूले-फूले गाल, कनक-मृणाल-बाहु, सम्पूर्ण चन्द्र की तरह मुख-कमल, अभय-आकर्षणदायी वक्षस्थल, सिंह कटि, कनक कल्प-वृक्ष की तरह शरीर, प्रलम्बित बाहु, सुशोभित कमल की तरह जंघा जो न तो अधिक छोटी है और न बहुत बड़ी है। लाल फूल की तरह दोनों करतल, निष्कंटक पुष्पित चम्पा के फूल की तरह अंगुलियां, कुंद की पंखुड़ी की तरह विकसित दस नख, पृथ्वी के अलंकार की तरह आजानुलम्बित

बाहु, विक्रमी दोनों घुटनों पर खडा होने से सिंह की शोभा की तरह दिखाई देने वाला, रक्त कुमुदिनी की कान्ति वाले दोनो पैर, मोती की तरह पैर की अँगुलियाँ, दोनो पाँव मे पद्म चिह्न और करतल में शंख-मत्स्य चिह्न विराजित है। जिस महात्मा का शरीर शरदकालीन सूर्य के समान है, वह आकाश से आकर विराजमान हुआ।

37 द्वापर युग के गति-मुक्तिदायी इस पुरुष को प्रत्यक्ष निरंजन ने काल-दर्प ध्वंस करने के लिए उत्पन्न किया।

38 निष्कलंक सूर्यमणि की तरह उदित चन्द्र को [illegible] शून्य पुरुष ने उसके ललाट पर स्थापित किया।

39 उसके हृदय पर कनक-पुष्प की माला विराजमान है और पवित्र पुष्पों को गाल पर स्थापित किया।

40 अनादि ब्रह्म ने उसकी आत्मा को पाप मुक्त करके [illegible], शोभायमान [illegible] और पंचमुद्रा [illegible] किया।

41 [illegible] में [illegible] निरंजन ने [illegible] दिव्य वस्तु प्रदान [illegible]।

42 पुत्र को गोद में लेकर [illegible] ने [illegible] इस मर्त्य भुवन में धर्म [illegible]।

43 इस मर्त्य-स्वर्ग में जब [illegible] तब सब तुम्हारे दास [illegible] और [illegible]।

44 मर्त्यलोक में [illegible] पूजा [illegible] और वे तुम्हारी पादपूजा करेंगे।

45 कोटि तीर्थ-स्नान करने से [illegible] फल प्राप्त होता है, तुम्हारे नाम को लेने से उतना ही फल प्राप्त करेंगे, [illegible] सद्गति प्राप्त कर [illegible]।

46 इस मध्य भुवन में तुम्हीं धर्म दिखाते हो। तुम्हारे दर्शन से लोग एक करोड अश्वमेध यज्ञ का फल प्राप्त करें।

47 इच्छानुसार तुम हमेशा धर्मानुव्रत रहोगे। बेटा! अभी सृष्टि की धर्म से रक्षा करो।

48 ऐसा वर देकर महात्मा स्वामी निरंजन आकाश में अन्तर्धान हो गये।

49 पुत्र को गोद मे लेकर देवी कुन्ती बैठी है। माद्री ने अग्नि स्थापन किया।

50 धर्म को स्मरण करके पुत्र ने रोना आरम्भ किया। विजयकेतन पर्वत पर पाण्डु राजा ने आवाज सुनी।

51 चौदह घडी रात्रि होने पर हाथ में धनुष लेकर पाण्डु आकर पहुँचे।

52 पर्वत के नीचे अम्बालिका के तनय ने प्रवेश किया। अन्धकार को भेद करके पर्वत दिवस की तरह दिखाई देता है।

53 गिरिवर के शिखर पर पाण्डु चढ गये। पुत्र की आवाज सुनकर पत्थर गिरते हैं।

54 स्वर्ग छोडकर चन्द्र देवता क्या पर्वत पर उदित है जिससे रात्रिकाल में भी पर्वत शृंगाम्बर की तरह दिखाई देता है?

55 पाण्डु राजा हर्षित होकर पास पहुँचे। उनकी दोनों आँखों से हर्ष के आँसू बहने लगे।

56 पुत्र को अत्यन्त हर्ष से राजा देखने लगे। माद्री ने कहा- दो! पुत्र के पास मत जाओ।

57 मूल दोष का विचार करके पहले जानना उचित है। यह सुनकर पाण्डु राजा हँसने लगे।

58 [illegible] साक्षात [illegible] है। इस दोष को दूर करने के लिए वह स्वयं परम पण्डित है।

59 ब्राह्मण रूप में देवगुरु बृहस्पति हाथ मे सप्तांग पोथी लेकर खडे हैं।

60 अगस्त्य कहते हैं-वैशम्पायन मनु! सुनो। सोमांश में पाण्डु राजा के धर्म से पुत्र उत्पन्न हुआ।

61 [illegible] बृहस्पति से माहेन्द्र योग में पुत्र का जन्म सुनकर पाण्डु राजा आनन्दित हुए।

[illegible] सोने की थाली में पंच रत्न के साथ अष्टगन्ध दीप में गाय के घी को लेकर राजा माणिक्य अर्घ्य लेकर निर्दिष्ट लग्न में पुत्र को देखने के लिए उपस्थित हुए।

69 बृहस्पति ने कहा कि इसका गण्ड दोष नहीं। इसके मुख का दर्शन करके कोटि पुण्य अर्जन करो।

70 पण्डित के वचन से सानन्द महाराजा जन्म-गृह मे प्रवेश करके आत्मज को देखते हैं।

71 अर्घ्य लेकर राजा जयध्वनि करते है। आकाश मे देव स्त्रियाँ शुभ मुख-ध्वनि करती है।

72 पाण्डु राजा ने पुत्र का मुख देखा। आकाश से सहसा इन्द्र ने पुष्पवृष्टि की।

73 साधु-साधु ध्वनि सुनाई दी। आकाश से देवताओ ने पुष्प-वृष्टि की।

74 पुत्र को देखकर राजा अत्यन्त प्रसन्न हुए। मेरा डूबा हुआ वश धर्म स उदित हुआ।

75 साधु-साधु कुन्ती ! तुम्हारा जीवन धन्य है। दुर्वासा के मन्त्र म मेरा उपकार हुआ।

76 कैसे शुभाश म भक्ति करके ऋषि को तुष्ट किया। तुम्हारी प्रसन्नता म मै स्वर्ग प्राप्त करने के योग्य हुआ।

77 अत्यन्त विनयपूर्वक पाण्डु राजा कुन्ती स बोलते है कि यह पुण्य तुम्हारा है।

78 पाण्डु ने कुन्ती से कहा—इस पुत्र का नाम समार-जनहितकारी रखो।

79 कुन्ती हाथ मे अर्घ्य लेकर नामोच्चार करती है। इस पुत्र का नाम युधिष्ठिर होगा।

80 अत्यन्त आनन्द के साथ भगवद्दर्शन करके कहा कि युधिष्ठिर नाम ससार का हितकारी है।

81 इसके बाद राजा ने पुत्र जन्मोत्सव करवाया। पत्नी मगला की पूजा की।

82 पुत्र पालन करते हुए पाण्डु राजा शतशृग पर्वत पर अनवरत रहते है।

83 रात्रि म पचकटक का भ्रमण करते है। इधर दुष्ट वैरी भी देखते ही नष्ट होते है।

84 गुप्तचर ने हस्तिनापुर म पाण्डु के पुत्र होने की सूचना दी।

85 सुनकर आम्बिकापुत्र आनन्दित हो और पूरे राज्य म उत्सव कराया।

86 कुरु राजा ने नगर म घोषणा की कि सन्तान के लिए उत्सव मनाया जा रहा है और वस्त्र दान दिया।

87 कुरुराज धृतराष्ट्र ने एक सौ रथ को सुसज्जित करके गान्धारी के साथ यात्रा की।

88 शान्तनु, पराशर, भीष्म, भूरिश्रवा और विदुर कुरुराज के साथ गये।

89-90 पाण्डु के पुत्र-जन्म की वार्ता सुनकर वसिष्ठ, मार्कण्डेय, दुर्वासा और साठ हजार शिष्यो के साथ व्यास महर्षि शतशृग पर्वत पर पहुँचे।

92-93 विश्वामित्र, जनक, सुमन्तक, सानक आदि देवर्षि, ब्रह्मर्षि, राजर्षि, बालवटु प्रभृति को लेकर कुन्तिभोज राजा सेना के साथ अत्यन्त समारोह मे शतशृग पर्वत पर पहुँचे।

94 ऋषिगणो को देखकर पाण्डु ने पाद-पूजा की। सबको कृष्णसार मृगचर्म का आसन दिया।

95 गडा जीव मारकर पितृ-श्राद्ध कामना करते है। पुत्र को आशीर्वाद दिलाने की राजा की बडी इच्छा थी।

96 वन फल और कन्दमूल देकर ऋषियो को भोजन कराया।

97 राजा ने समस्त ऋषियो की सम्वर्द्धना की। धृतराष्ट्र की अगवानी के लिए पाण्डु आगे बढे।

98 अनुमान पर्वत पर पाण्डु ने धृतराष्ट्र से भेट करके प्रणाम किया।

99 विदुर ने धृतराष्ट्र से कहा—पाण्डु राजा तुम्हारा दर्शन करते है।

100 सुनकर महाराजा ने शुभ कामना करके कहा- तुम्हारी मनोकामना पूरी हो।

101 सैन्य के साथ कुरुपति उपस्थित होकर महानन्द म पुत्र-सन्मान मानते है।

102 पुत्र को गोद म लेकर गान्धारी ने देखा। इसके बाद धृतराष्ट्र की गोद म रखा।

103 पुत्र को गोद म लेकर सानन्द कुरुपति ने हृदय से लगाया और कहा कि शरीर शीतल हो गया।

104 साध्वी कुन्तिभोजकुमारी तुम धन्य हो धन्य हो। तुमने नाना स उपाय करके वश का उद्धार किया।

105 कुन्तिभोज राजा सैन्य सामन्तो के साथ शतशृग पर्वत पर पहुँचे।

106 दुहिता, जामाता और नाती को देखकर राजा ने धन रत्न देकर बहुत पूजा की।

107 कुन्ती की गोद मे पुत्र को बैठाकर सर्व अलकारो से सुसज्जित कराया।

108 शुभ योग मे क्षीर-उत्सव और अर्घ्यदान किया। समग्र मर्त्य और स्वर्ग आनन्द से उल्लसित हुआ।

109 पाच दिन तक वे शतशृग पर्वत पर रहे। ऋषिगण महानन्द द्वारा कल्याण कामना करते है।

110 हे युधिष्ठिर ! तुम्हारा धर्म वर्द्धित हो। इसी शरीर से तुम स्वर्ग म वसु और दिग्पालो के बीच बैठो।

111. ऐसी मनोकामना सभी महर्षियों ने की। पाण्डु महाराजा इसे सुनकर अत्यन्त प्रसन्न हुए।

112 पाण्डु को पकड़कर धृतराष्ट्र कहते हैं—हे भाई राज्य को लौट चलो। क्या वन में कष्ट नहीं होता ?

113 पाण्डु ने कहा—हे भाई ! मेरी बात सुनो। यह शतशृंग पर्वत अमर लोक की तरह है।

114 तुम्हारा राज्य इससे स्वास्थ्यप्रद नहीं है। इससे सम्पूर्ण तीर्थ निकट में है।

115 तुम्हारा आदेश लेकर मैं इस पर्वत पर रहूँगा। राज्य की रक्षा करूँगा।

116 हे स्वामी ! तुम कुशलपूर्वक रहो। मैं तुम्हारे बाहुबल से शत्रु का विनाश करता हूँ।

117 हे नृपमणि ! तुम सन्तान के लिए इच्छा करो। गान्धारी को पुत्र नहीं होगा—ऐसा मैंने वसिष्ठ से सुना।

118 सभी प्रार्थना देकर पाण्डु राजा ने धृतराष्ट्र की पाद-पूजा की।

अत्यन्त उत्साहपूर्वक कुरुकुल देश के नरपति समर्पित होते हैं।

120 कुछ दूर तक पाण्डु पहुँचाने आये। व्यास के चरण में सिर रखकर प्रणाम करते हैं।

1 कृतार्थ हुए दर्शन कर हे स्वामी ! तुमने रक्षा की। अब धृतराष्ट्र को जिस प्रकार सन्तान पैदा हो, वैसी व्यवस्था करो।

वहाँ से सभी महर्षि अन्तर्धान हो गये। धृतराष्ट्र का पहुँचाकर पाण्डु राजा लौटे।

शतशृंग पर्वत पर राजा पहुँचे। कुन्तिभोज राजा अपने देश को लौटे।

भार्या के साथ पाण्डु रह गये। व्यास मुनि धृतराष्ट्र के साथ हस्तिनापुर गये।

र्योधन प्रभृति का जन्म

1 अत्यन्त विनय-भाव से गान्धारी और धृतराष्ट्र ने व्यास की भक्ति की।

2 पुत्र-दान के लिए नृपति की प्रार्थना सुनकर पण्डित भिज्ञ यती विचार करते हैं।

3. ध्यान करके उस पण्डित ब्रह्मवेत्ता ने जाना कि धृतराष्ट्र के वीर्य से पुत्र उत्पन्न नहीं होगा।

4 महायती कहते हैं—हे महाराज! सुनो! गान्धारी के गर्भ में तुम्हें पुत्र नहीं पैदा होगा।

5 व्यास के वचन से राजा बहुत भयभीत हुए। हे महामुनि ! मुझे वंश-सृष्टि के योग्य बनाओ।

6 व्यास ने कहा—हे बेटा ! सुनो ! सन्तान के लिए महायज्ञ करना होगा।

7 धृतराष्ट्र ने कहा—मैं यज्ञ का तथ्य नहीं जानता हूँ। तुम्हारी आज्ञानुसार मैं सब कुछ सामग्री दूँगा।

8-10 एक शुभ योग में ब्रह्मवर्ती ने यमुना नदी के किनारे यज्ञ का आरम्भ किया।

11 हल लेकर शुभ योग में भूमि का कर्षण किया गया। माघी तिल आदि भूमि में बोई गयी।

12 महारस पाकर पवित्र तिल अंकुरित हुआ। मकर मास के बीच में तिल पककर चिकना गया।

13 शुभ अनुकूल योग में यज्ञशाला का निर्माण किया गया। शुभ मंगल योग में दिग्पाल गणों का वरण किया गया।

14 वसिष्ठ, विश्वामित्र, मार्कण्डेय, अगस्त्य को व्यास ने याज्ञिक रूप में वरण किया।

15 गृत्समद, वामदेव, धौम्य और समस्त बाह्य वरण में याज्ञिक के रूप में नियुक्त हुए।

16 तपस्वी दुर्वासा को ब्रह्मा रूप में वरण किया गया। शास्त्र की विधि अनुसार यज्ञ-कुण्ड को खोदा गया।

17 अनेक ब्राह्मण और शिष्य पहुँचे। शुभ योग में दुर्वासा महायज्ञ में बैठे।

18 अगस्त्य कहते हैं कि हे वैवस्वत मनु ! सुनो। प्रथम महायज्ञ मकर पंचमी के दिन आरम्भ हुआ।

19-20. चन्द्रवार उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र बालकरण सौभाग्य योग में द्वादश समिधा, यव और तिल लेकर विश्वामित्र ने अग्नि का वरण किया।

21-22 एक लाख कॉवरी गाय का घी, अनेक शीतल द्रव्य और मृग तथा कृष्णसार की छाल आदि विभिन्न सामग्री की व्यवस्था करके एक लाख चतुर्वेदी ब्राह्मणों का वरण किया गया।

23. गान्धारसेन की दुहिता गान्धारी के साथ महाराज धृतराष्ट्र उपस्थित हुए।

24. अपने हाथ में कनकांजलि लेकर महायज्ञ कुण्ड में एक सौ आठ बार राजा ने आहुति दी।

25. महारानी अश्वमेध यज्ञ में सौ घृतांजलि और यव, तिल की आहुति देती हैं।

26. तपस्वी महामन्त्र उच्चरित करके पुष्प-दल की वर्षा करते हैं।

27 अनेक पत्र और शीतल द्रव्यों का भोग लगाया जाता है और एक हजार ब्राह्मण घृत-आहुति देते हैं।

28. तपस्वियों ने नित्य कर्म का विधान समाप्त किया। धृतराष्ट्र पञ्च तीर्थ में गमन करते हैं।

29 पञ्चकटक के चतुर्दिक् पञ्च तीर्थ है। उसमें स्नान करके अम्बिका-सुत लौट रहे हैं।

30 अनेक घी की आहुतियों की वर्षा करते हैं। मार्कण्डेय यति अजपा जाप में वरण करते हैं।

31 तपस्वीगण पाँच दिवस तक आहुति दे रहे हैं। अनवरत अग्नि वामावर्त प्रज्वलित हो रही है।

32 व्यास ने कहा—इसमें आहुति देने पर दुहिता मात्र पैदा होगी।

33 धृतराष्ट्र ने कहा—हे मुनि! इससे क्या प्रयोजन है? पुत्र-सन्तान होने से ही वंश की रक्षा होगी।

34 पुनः अग्नि की बहुत स्तुति करते हैं और महामन्त्रोच्चार के द्वारा आहुति देते हैं।

35 जब व्यास महामुनि ने बहुत कष्ट किया, तब अग्नि दक्षिणावर्त होकर प्रज्वलित होती है।

36 कुण्ड के भीतर कनक-रस सिक्त भाण्ड रखा। घी देकर चावल को व्यास मुनि ने गाला।

37 चावल को तलकर व्यास मुनि ने बाहर किया। पुनः उसमें कुशलतापूर्वक स्वच्छ भात बनाया।

38 मार्कण्डेय ने कहा—हे कुरुवीर! सुनो। स्नान करके तुम्हारी भार्या गान्धारी आये।

39 यह सुनकर नित्यकर्म समाप्त करके गान्धारसेन की पुत्री आयी। अमृत योग में विष्णु-मन्त्र का उच्चारण करती हैं।

40 देखा कि एक सौ अन्य पक गया है। मार्कण्डेय ने उसे गिनकर बाहर निकाला।

41. महात्मा कहते हैं—हे बेटी आर्या! आकर वर माँगो। तुम्हारी मनोवांछा पूरी हो।

42. तुम्हारी कल्पित इच्छा पूरी हो। हर्षित होकर वर मागो।

43 पुनः-पुनः विनम्र भक्ति के साथ शत सहस्र दण्डवत् किया।

44 हे ब्रह्मर्षि! यदि मुझ पर सदय हो तो अनुग्रह करके सौ पुत्र दीजिये।

45-46 गान्धारी का वचन सुनकर तपोधन सन्तुष्ट हुए। रत्नभाण्ड से एक सौ भात लाकर गान्धारी से कहा—हे आर्या! इसको खाओ। तुम्हारी वांछा पूर्ण होगी।

47 जिस प्रकार तीन पसर चावल में एक सौ भात तैयार हुआ, उसी प्रकार तुम्हारी इच्छा सिद्ध होगी।

48 हे महासती! इसका ग्रास करो। तुम अनेक पुण्य-अर्जन करने के कारण पुत्रवती होगी।

49 ऋषि की आज्ञा से उसने अन्न ग्रास किया। तब महामुनि ने यज्ञ समाप्त किया।

50 बहुत-सी दान दक्षिणा धृतराष्ट्र ने दी। ऋषियों ने महासन्तुष्ट होकर आशीर्वाद दिया।

51 हे देवी यह कथा चिरकाल तक रहे। तुम्हारे बलवान और भाग्यवान सौ पुत्र पैदा होंगे।

52 समस्त तपोधनियों ने ऐसा वरदान दिया। धृतराष्ट्र ऋषियों से आशीर्वाद प्राप्त कर हर्षित हुए।

53 राजा ने ऋषियों को भक्तिभाव से सन्तुष्ट किया। मुनिगण अपने अपने स्थान को लौटे।

54 राजागण अपने-अपने राज्य को लौटे। धृतराष्ट्र ने अत्यन्त पुण्य-लाभ किया।

55 नृपवर दान से अत्यन्त पुण्यवान हुए। राजा सदा धर्म रक्षक और दयालु रहे।

56. राजा भार्या के साथ धर्म-पुराण सुनते हैं। अनवरत वेद मन्त्रों से देवताओं का वरण करते हैं।

57. राज्य में प्रसन्नतापूर्वक अनेक उत्सव करके सानन्द चित्त से राजा पितृगण और देवताओं को बलि भोज चढ़ाते हैं।

58 ऋषि के महामन्त्र को कौन अन्यथा कर सकता है? महामन्त्र से गान्धारी का गर्भ भारी हुआ।

59 स्वभाव वैविध्य के कारण उसकी विभिन्न चीजों में

रुचि होती है। वह जो माँगती है, उसे देकर नृपति मनोकामना पूरी करता है।

60 ग्रीष्म काल में बैशाख मास में गान्धारी विमान पर चढ़कर गगा के किनारे बैठती है। गर्भ से विकल होकर वह चल नहीं पाती।

62 शत-पुत्र गर्भ से वह महाभारी हुई। सभाल न सकने के कारण वह वमन करने लगी।

63 ऋषि का अन्न अक्षुण्ण था। उसे वमन करके गान्धारी मूर्च्छित हुई।

64 ऋषि के यज्ञ का सचित अम्लान चरु अन्नजल मे पडकर स्वर्ण की तरह दिखाई देता है।

65 गान्धारी मृतवत्-सी पडी थी। गगा स्नान के लिए जाते हुए व्यास से उसकी भेट हुई।

66 देखा कि गान्धारी मूर्च्छित पडी हुई है। कमण्डल से व्यास ब्रह्मचारी ने जल छिडका।

67 महामन्त्र पाकर देवी सचेत हुई। पराशरनन्दन उसको देखकर दुःखी हुए।

68 बड़े कष्ट से आहुति अर्जन की किन्तु तुम्हारा ऐसा दुर्भाग्य है कि सन्तान उत्पन्न नहीं हुई।

69 वस्तुतः इसमें शास्त्र निन्दित होना है, समस्त अन्न को तपोधन ने एकत्रित किया।

70 कमण्डल से जल छिड़ककर मुनि ने उसमें प्राण प्रतिष्ठा की। अमृत दृष्टि से देखकर कहा—उठो, उठो।

71 प्रत्यक्ष नारायण महामुनि के आशीर्वाद से महावीर्यवान शत पुत्र उत्पन्न हुए।

72 मकरध्वज की तरह अत्यन्त सुन्दर बालपुत्र तीनों लोक को मोहित करते हैं।

73 गान्धारी देखकर परम आनन्दित हुई। व्यास ने कहा—हे आर्या ! अपने पुत्रों को सँभालो।

74 गान्धारी के द्वारा शत पुत्रों को विमान पर सुलाने के समय व्यास मुनि वहाँ से अन्तर्धान हो गये।

75 पुत्रों को लेकर देवी अपने भवन में प्रविष्ट हुई। विदुर ने धृतराष्ट्र को यह सूचना दी।

76 हे दण्डधारी ! सावधान होकर सुनो। शतपुत्रों को लेकर गान्धारी उपस्थित हैं।

77 अन्धराजा सुनकर अत्यन्त प्रसन्न हुए। पुत्र को लाकर गोद में रखने के लिए कहा।

78. विदुर ने प्रथम पुत्र को लाकर धृतराष्ट्र की गोद में रखा।

79. कुरुराज प्रथम पुत्र को गोद में लेकर हृदय-चक्षु से अनुभव करके सन्तुष्ट हुए।

80 अन्धराज ने पूछा—यह पुत्र किस लक्षण से युक्त है ? विदुर ने कहा—यह शेषशायी विष्णु से उत्पन्न है।

81 इसके दोनो पैरों मे पद्म चिह्न हैं। करतल मे शंख-पद्म-निधि शोभित है।

82 इसके दाहिने करतल मे यव, और मत्स्य आरोपित है। सुहावनी अगुलियो मे उभय पद्म विद्यमान है।

83 चौरासी लक्षण और चौसठ गुण से युक्त, आकर्षक मूर्ति यह महान् बलवान है।

84 हे स्वामी ! तुम्हारा यह प्रथम पुत्र इस प्रकार के लक्षणों से युक्त है। यह जगमोहन और साक्षात् शेषशायी विष्णु है।

85 अकेले पृथ्वी को अपने अधिकार मे रखेगा। लाखों राजा इसकी सेवा करेंगे।

86 जम्बूद्वीप मे यह एकछत्र राजा होगा। इसके यश से तुम पूजित होगे।

87 सर्वगुण सम्पन्न होकर यह तुम्हारा पुत्र अल्प आयु में सर्व सम्पदा अर्जित करेगा।

88 तीन लोकों में सभी राजाओं को यह अधीनस्थ करेगा। अपने प्रताप से मान-गोविन्द, महावीर विशेषण से ख्यात होगा।

89 यह गुणवन्त, विवेकी, धार्मिक और शत्रु-विध्वंसी होगा। किन्तु इसके प्रमाद से तुम्हारा वंश-नाश होगा।

90 वह अत्यन्त दुष्ट-प्रकृति सम्पन्न और कलह-प्रिय होगा, किन्तु सदा लक्ष्मी करोड़ पदो के साथ इसके कन्धे पर विराजमान रहेगी।

91 तुम्हारा यह पुत्र कुलक्षयी होगा। इसके अहंकार, मदमत्त स्वभाव और असाधुता तथा अशान्त भाव को जगत् नही सहन करेगा।

92 तुम्हारा यह पुत्र कलि अंश में उत्पन्न हुआ। इसीलिए यह जगत् में बहुत अपख्याति और अपकीर्ति अर्जित करेगा।

93 अब तक तुम्हारे पुत्र नहीं था। दुर्वासा के महामन्त्र से तुम्हें सौ पुत्र प्राप्त हुए।

94. हे दण्डधारी क्या तुम एक पुत्र का विर्सजन कर सकते हो ? यदि तुम आज्ञा दो तो उसे मै मार डालूँगा।

95. एक पुत्र का नाश होने से तुम्हारे निन्यानवे पुत्र सकुशल रहेंगे। चिरन्तन पृथ्वी का भोग करोगे। तुम्हें धर्म नहीं छोड़ेगा।

96. धृतराष्ट्र ने कहा–हे विदुर ! सुनो ! मुझे बताओ कि और निन्यानवे पुत्र कहा है ?

97. और एक पुत्र को गोद में रखकर विदुर ने कहा–हे दण्डधारी ! इस पुत्र को लो।

98. दूसरे पुत्र को धृतराष्ट्र ने गोद में रख लिया। वह पर्वत के समान भारी और महाबलवान है।

99 हाथ जोडकर विदुर ने कहा–स्वामी ! यह बहुत बडा अहकारी दुष्ट और दुर्धार है।

100. एक-एक करके विदुर महात्मा सबका लक्षण विचारते है। सभी एक से एक अतुलनीय दुष्ट हैं।

101 ये सभी महादुष्ट है। इनका लक्षण अप्रीतिकर है। अभी आनन्दित होते हो, बाद मे दारुण कष्ट पाओग।

102 विदुर ने कहा कि यह बडे कष्ट की बात है कि गुणवान पुत्र पैदा करने की चेष्टा मे विनाशक पुत्र पैदा हुए।

103. धृतराष्ट्र ने कहा–हे भाई ! तुमने एक पुत्र को विर्सजित करने की बात कही, किन्तु सबको दोषी ठहराया।

104 जब सबको दोषी ठहराया तो क्या किया जा सकता है? कर्म का फल तो भोगना ही पड़ेगा। इसको कौन अन्यथा करेगा ?

105 भाग्य मे जो प्राप्त है उसका कैसे त्याग किया जाय ? ध्यान करके धृतराष्ट्र ने तपस्वी व्यास को याद किया।

106. पराशर-सत्यवतीनन्दन व्यास कुरुनाथ के आगे उपस्थित हुए।

107. सजय ने कहा–हे महाक्षत्रिय धृतराष्ट्र ! पराशरनन्दन उपस्थित है।

108. आसन छोड़कर कुरुवंश नृपति ने व्यास के चरणों में शत-सहस्र दण्ड-प्रणाम किया।

109 सभी पुत्रों को एक ही पलंग पर सुलाकर धृतराष्ट्र ने व्यास के सम्मुख रख दिया।

110. हे व्यास ! तुम्हारे अनुग्रह से मेरे एक सौ पुत्र पैदा हुए। पुत्रों को गोद में लेकर आशीर्वाद दो।

111. विदुर ने प्रथम पुत्र को लेकर व्यास की गोद में रख दिया। महामुनि ने कहा यह बड़ा विलक्षण है।

112. शरीर सहलाते हुए–कहा कि तुम्हारा शरीर वज्र हो। यह मेरा सृजन है–यह कथा प्रसिद्ध है।

113. बालक की दोनों जंघाएँ आपस में सटी थीं। वहाँ हाथ न लगने से दुर्बल रह गयी।

114. दस हजार सिंहो के बराबर पराक्रमी हो। जगज्जयी हो। संग्राम में तुम्हें जीतने वाला कोई न हो।

115 ऐसा एक वर देने के बाद ही रोते हुए बच्चे का दाहिना पर व्यास के हृदय पर लगा।

116 अस्वस्थ होकर ब्रह्मयती गिर गये। उनकी नाक से अपरिमित रक्त बहने लगा।

117 स्वस्थ होकर ब्रह्मवेत्ता बैठे। अभी मैने वर दिया और तुम इतने बलवान हो गये।

118 तुम्हारे चरण से मेरी प्राणान्तक स्थिति हुई। संग्राम के समय तुम्हारा वही चरण टूट जायेगा।

119 तुम्हारा पराक्रम दस हजार सिंह के बराबर है किन्तु एक सिंह के पराक्रम से तुम्हारा नाश होगा।

120 पहले ही दुर्बुद्धि के कारण मन को चिन्तित किया। इसलिए इस पुत्र का नाम दुर्योधन हो।

121 धृतराष्ट्र के सामने संजय ने कहा कि निष्कलंक पुत्र को कलंक लगा।

122 कुरुवीर नृपति सुनकर दुःखी हुए। ध्यान करके दुर्वासा ऋषि को याद किया।

123 दण्ड, कमण्डल, काषाय-कौपीनधारी महात्मा कुरु के पास पहुँचे।

124 संजय ने कहा–हे कुरुपति ! दुर्वासा महायती उपस्थित है।

125 स्थान छोड़कर कुरुराज ने मुनि के पद्मपाद में पूजा अर्घ्य किया।

126 हे दुर्वासा मुनि ! मेरे पुत्रों को आप देखे। आपकी कृपा से मैने इन्हें पाया है।

127. दुर्वासा ने पूछा–हे मुनि व्यास ! प्रसन्नतापूर्वक पुत्रों का नाम क्या रखा ?

128 व्यास ने कहा–दुष्ट बुद्धि जानकर ज्येष्ठ पुत्र का नाम मैने दुर्योधन रखा।

129. दुर्वासा ने द्वितीय पुत्र को गोद में लेकर मुख चूमकर हृदय से लगाया।

130 तपस्वी दुर्वासा ने गोद मे लेकर सोचा और कहा कि सौ सिह का पराक्रम तुम्हें प्राप्त हो।

131 हाथ की मुट्ठी बॉधकर रोते हुए बच्चे की मुट्ठी दुर्वासा की छाती पर लगी।

132 उत्तान होकर महामुनि गिर पडे। एक घडी के बाद सचेत होकर स्वस्थ हुए।

133 मुट्ठी लगने से दु सह आघात पाकर मुनि मूर्छित हुए। इसीलिए उसका नाम दुःशामन रखा।

134 अपनी सर्जना समझकर ऋषि ने स्वेच्छा स उस पर अनुग्रह किया। क्रोध महन न कर सकने के कारण उसे शाप विधान किया।

135 दक्षिण भुजा से मुझ पर प्रहार किया। तुम्हारे मुष्ठाघात से मेरी प्राणान्तक स्थिति हुई।

136 मेरा शाप तुम्हारे लिए अकाट्य रहेगा। महोदर भाई तुम्हारी दाहिनी भुजा उखाड़कर दण्ड देगा।

137 दुर्वासा महर्षि ने ऐसा शाप दिया। इस शाप की बात सुनकर व्यास मन ही मन हसने लगे।

138 सजय ने कहा–हे धृतराष्ट्र ! तुम्हारे पुत्र ऋषियो के कारण कष्ट पा रहे है।

139 उत्पन्न करने के आनन्द म वर इन्हें दिये और फिर क्रोध न रोक पाने के कारण शाप मे पराभूत किया।

140 कर्मानुसार तुम्हे फल प्राप्त हुआ। अब पुत्रो को ऋषियों की गोद मे मत रखो।

141 व्यास न कहा-हे राजा ! दुर्वासा के महामन्त्र से तुम्हे एक सौ पुत्र प्राप्त हुए।

142 सभी बच्चो का नाम द अक्षर मे प्रारम्भ होगा। प्रथम पुत्र का नाम दुर्योधन हुआ।

143 दूसरा पुत्र दु शासन हुआ। शतपुत्रों का नाम इसी प्रकार क्रमानुसार होगा।

144 167 इस प्रकार अन्य पुत्रों का नाम क्रमशः ऐसा हुआ दुर्मन, दुर्बाल, दुर्जन, दुर्वीर, दुरान्तक, दुर्विन्द, दुरन्त, दुःसह, दुराम, दु.सम, दुष्काम, दुर्मौली, दुकुल, दुकर्ण, दुर्हण, दुर्दक्ष, दुर्गम, दुराष्ट्र, दुर्बल, दुःषक, दुर्भार, दुर्भीम, दुर्नाम, दुराण, दुध्वंस, दुसन, दूपण, दुष्ट, दुरान्तक दुर्दण्ड, दुराज, दुर्दान, दुर्भान, दुराख्य, दुरासन, दुशंय, दुसन्तेक, दुस्तर, दुर्वहण, दुर्माल, दुरानन्द, दुर्हहरि, दुर्मर्पण, दुरापद, दुरक, दुर्दास, दुकाल, दुराव, दुरानन, दुर्गत, दुष्पाप, दुरालय, दुर्मति, दुरंग, दुर्जय, दुर्निधि, दुर्धार, दुराकर्ण, दुर्भाप, दुष्कर, दुशिय, दुर्मोह, दुर्भग, दुर्लय, दुर्भय, दुरामय, दुकेतु, दुरायन, दुसिद्धि, दुतनु, दुसिह, दुराशय, दुर्वाह, दुर्निरीक्ष्य, दुर्वह, दुर्मद, दुरात्मा, दुराचार, दुस्तेज, दुरासद, दुर्मक, दुर्मुख, दुर्दान्त, दुशण दुर्बाक, दुर्विगाह, दुर्विनीत, दुराध, दुराक्षक, दुर्राभसन्धि, दुर्नय, दुरूह, दुधध्य, दुर्धर्प, दुर्विमोचन, दुर्भेद्य, दुसाध्य।

168 दुर्वासा ने कहा- हे धृतराष्ट्र ! तुम्हारे सभी पुत्र एक से एक महा बलवान होगे।

169 शौर्यवान पुत्रो को लेकर नरपति ! तुम सुख से राजत्व करो।

170 पाण्डु के अनुग्रह से तुम्हारे राज्य मे अनीति नहीं है। पाण्डु स्वय कष्ट सहकर तुम्हारी शुभचिन्ता करता है।

171 ऐसा समझाकर दुर्वासा तीर्थ करने चले गये। व्यास शतशृग गृह में उपस्थित हुए।

172 राजा पाण्डु ने व्यास के पद्मपाद मे प्रणाम किया। तुम्हारे अनुग्रह से हे स्वामी ! बहुत सम्पत्ति है।

173 हे पितामह ! किस राज्य में थे ? हस्तिनापुर की कुशल वार्ता मुझसे कहो।

174 व्यास ने कहा—दुर्वासा के मन्त्र-बल से गान्धारी को शत पुत्र पैदा हुए।

175 वे कुमार महाबलवान, दुष्ट और जगज्जयी होगे।

176 हे पाण्डु ! अपनी भार्या को समझाओ। गान्धारी के पुत्रो के रहते तुम्हारे पुत्रों को राज्य नहीं मिलेगा।

177 देवताओ म मरुत् बलवान है। उसके वीर्य से हनुमान पैदा हुआ।

178 त्रेता युग में वह महावीर हुआ। पर्वत से समुद्र में एकाएक सेतु बॉध दिया।

179 श्री राम की प्रसन्नता से वह त्रिजीवी हुआ। हे देवी ! पवन के वीर्य से भी एक पुत्र पैदा करो।

180 अमरपति इन्द्र देवता से एक पुत्र पैदा करो।

181. इससे तुम्हारा कार्य पूरा होगा। तुम महाभिज्ञा हो। ऐसा विचार करके काम करो।

भीम का जन्म

1 कुन्ती पुत्र को देखकर अत्यन्त आनन्दित हुई। अत्यन्त स्नेह से युधिष्ठिर का पालन करती है।

2. धर्म-सुत सात वर्ष के हुए। चलने से पैर भूमि स्पर्श नहीं करते थे।

3. एक दिन एक मच्छर ने उसकी देह मे काटा। धीरे से बालक ने उसे उड़ा दिया।

4. एक दिन नीम के पेड से एक छिपकली गिरी। पर्वत के ऊपर पडने से वह आहत हुई।

5 खेलते हुए लक्षणवान युधिष्ठिर ने उसके कान मे फूका।

6 कुन्ती उसे देखकर आश्चर्यचकित हुई। सोचती है कि इस पुत्र से कुछ कार्य नही होगा।

7 शुरू से ही तो गान्धारी ईर्ष्यालु है। फिर इस पुत्र को लेकर क्या कार्य किया जा सकता है।

8 अत्यन्त धार्मिकता मे क्या क्षत्रियपन रह सकता है ? कष्ट से यह पुत्र पैदा किया किन्तु कुछ लाभ नही हुआ।

9 हे धर्म-पुरुष ! मेरा ऐसा कर्म है ? किस पाप क्षण मे मेरा जन्म हुआ ?

10 स्त्री-जन्म पाकर मै असती हुई। यह मेरे कर्म की अगति है।

11 कितने पतियो से मेरे दिन बीतेंगे ! पहले आदित्य, द्वितीय पाण्डु राजा, तृतीय धर्मदेवता ने वीर्य प्रदान किया।

12 हे धर्म देवता ! इतने पर भी मेरा कार्य सिद्ध नही हुआ। इतने बडे राजकुल मे पैदा होकर मैने सारी लज्जा का त्याग किया।

13 हे देव ! संसार मे जन्म लेकर मैने कुछ पुण्य नही किया। यम मुझे कैसे मुक्ति प्रदान करेगा ?

14 क्रोध, मोह और अहंकार होने से अनेक पाप उत्पन्न होते हैं। राजपद पर बैठने मे बड़ा परिताप होता है।

15 इस प्रकार बैठकर विचार करते-करते आदित्य अस्त हो गया और निशा का प्रवेश हुआ।

16 दो पत्नियो और पुत्र को उस वास-स्थान पर छोड़कर पाण्डु ने रात्रि नगर-भ्रमण हेतु घोर वन में प्रवेश किया।

17 माद्री की गोद मे कुन्ती ने पुत्र को दे दिया। माद्री ने लोरी गाकर युधिष्ठिर को सुलाया।

18-20 एक शुभयोग मे एक सुन्दर शय्या का निर्माण करके उस पर देवी कुन्ती दुर्वासा की जपमाली लेकर बैठी।

21 पंचभूत आत्मा मे लीन होकर देवी कुन्ती ने दुर्दान्त पवन देवता को याद किया।

22 ऋषि के महामन्त्र से अमृत पुरुष पवन देवता कुन्ती के शय्या के पास पहुँचे।

23 बायें हाथ मे पाश और दायें हाथ मे गदा देखकर कुन्ती ने पूछा–

24 रक्त वर्ण से तुम्हारा तेज अत्यन्त प्रचण्ड दिखाइ देता है। हे अद्भुत देवता ! कहा से आकर मेरे पास उपस्थित हुए ?

25 शून्य पुरुष कहते है–हे कुन्ती ! तुमने जिसे याद किया, मै वही चेतन-पुरुष पवन देव हू।

26 हे कुन्तिभोजदुलारी ! तुमने मेरी अभिलाषा की। दुर्वासा के मन्त्र के भय से मै अमृत पुरुष तुम्हारे पास उपस्थित हुआ।

27 परिचय जानकर देवी सलज्ज हुई। पवन देवता ने तत्क्षण कुन्ती को गोद मे उठा लिया।

28 इस प्रकार राज-पत्नी विपत्र हुई। माद्री जान-बूझकर हट गयी। निकट मे कोई नही रहा।

29 मरुत देवता के साथ शृगार की इच्छा कुन्ती को हुई। दोनो की मनोकामना से रतिरग बढा।

30 चन्द्र और पवन के साथ पच्चीस प्रकृति के बीच उस अनादि शक्ति ने वलिष्ट देव का रमण-योग किया।

31 चन्द्रयोग मे और विष्णु वायु की प्रसन्नता की वेला मे दुर्दान्त पवन ने महावीर्य का विसर्जन किया।

32 पवन देवता के अमोघ रेत को सहन न कर पाने के कारण कुन्ती मूर्छित हुई।

33 देवी उस महाभाग को सह न सकी। एक आशु पुत्र पैदा हुआ।

35 कुन्ती के गर्भ से एक पुत्र अवतरित हुआ। चार सौ योजन परिव्याप्त शतशृग गिरि थरथरा गया।

36 पुत्र के क्रन्दन से आकाश और सप्त ब्रह्माण्ड कॉप गये। आठ लाख पर्वत के साथ नौ खण्ड मेदिनी

काँप गयी।

37. पुत्र को देखकर पवन देवता सानन्द चित्त से देखते हैं कि भूलोक अपरमित रूप से प्रकम्पित हो रहा है।

38. देवराज, गिरिराज और यमराज के प्रकम्पित होने से पवन देव ने पुत्र का नाम भीमसेन रखा।

39. पुत्र का नामकरण करके पवन देवता लौट गये। कुन्ती पुत्र को देखकर आनन्दित हुई।

40. महाघोर अन्धकार है और मेघ बरस रहा है। कनक रेख बिजली की तरह बगुले की पंक्ति उड़ती हुई दिखाई देती है।

41. पुत्र को लेकर रात्रि मे देवी पर्वत पर बैठी हैं। एक महामत्त व्याघ्र ने आकर गर्जना की।

42. व्याघ्र का गर्जन सुनकर भयभीत कुन्ती पुत्र को शतशृग पर्वत पर पटककर भाग गयी।

43. जो महागिरि चार सौ योजन का है, वह पुत्र के गिरने से रसातल को चला गया।

44. महाभारी पर्वत के रसातल चले जाने से सभी दिग्पाल भयभीत हो गये।

45. पुत्र को नीचे गिराकर कुन्ती भय से भागी और तत्क्षण वृक्ष पर चढ गयी।

46. पर्वत पर पड़ा हुआ बाल शिशु रो रहा है। श्रावण मास के घोर अन्धकार मे पश्चिम वायु के साथ वर्षा हो रही थी।

47. पुत्र उत्तान होकर पड़ा था और केहाँ-केहाँ करके रो रहा था।

48. गर्जन नाद करके वह व्याघ्र दौड़कर आया और शिकार के लिए बच्चे को छाप लिया।

49. पैर हिलाता भीमसेन रो रहा है। उसका पैर व्याघ्र के सिर पर लगा।

50. भीम का दक्षिण पैर व्याघ्र के सिर पर लगते ही उसका सिर सौ टुकड़े हो गया।

51. रुधिर-वृष्टि से व्याघ्र गिर पड़ा। रात बीतने पर सवेरा हुआ। पुत्र रो रहा था।

52. कुन्ती वृक्ष पर बैठी थी। उसी समय, पाण्डु शतशृग पर्वत पर आये।

53. देखा कि सुन्दर शिशु क्रन्दन कर रहा है। पुत्र के पाद तले एक व्याघ्र मरा हुआ पड़ा है।

54. पुनः वह शिशु रोदन करता है। उसका स्वरूप देखकर पाण्डु चकित हुए।

55. चारों दिशाओं में पाण्डु ने देखकर सोचा कि कौन से देवता ने जादू किया है।

56. कौन महात्मा इस पुत्र को छोड गया ? किधर गया, पुत्र अकेला है ?

57. अनंग के समान देह और ब्रह्माण्ड को प्रकाशित करने वाला तेजधारी यह पुत्र किसका है ? ऐसा पाण्डुराज सोचते हैं।

58-59 स्वामी को देखकर कुन्ती निर्भय होकर वृक्ष से उतरी। पाण्डु को देखते-देखते रोते हुए शिशु के वाम पाद का अँगूठा पर्वत के शिखर से टकराया।

60. यह पर्वत अनादि सिद्ध है। शृंग टूटने से अनवरत दूध बहता है।

61. बारह योजन तक प्रसरित और एक सौ योजन की ऊँचाई वाला शृंग वाम पाद का अँगूठा लगने से सौ टुकड़ो मे चूर हो गया।

62. पर्वत क्रोध से प्रज्वलित हुआ और कहा कि तुमने पहले मुझे ही पदाघात किया।

63. व्यथित होकर क्रोध से पर्वत ने कहा कि बचपन से ही तुम्हारा इतना पराक्रम है।

64. तुम मेरे क्रोड मे पैदा हुए हो। हे मरुत कुमार ! तुम्हें मेरा शाप लगे।

65. हे भीम ! तुम युद्ध में पहली बार में ही हारोगे।

66. ऐसा शाप जब गिरिवर ने दिया तो कुन्ती ने आकर बच्चे को पकड़ा।

67. पाण्डु ने पूछा—हे कुन्ती ! यह किसका नन्दन है। इस पुत्र को देखकर मेरा मन आनन्दित हुआ।

68. हे स्वामी ! तुम जिस रात्रि में छोड़कर चले गये थे; उस समय घोर मूर्ति मेघ अन्धकाराच्छन्न करके बरस रहा था।

69. काम के वशीभूत होकर मैंने पवन देवता का स्मरण किया। उस महापुरुष ने आकर मुझे आवृत्त किया।

70. उससे जो पुत्र मुझे प्राप्त हुआ, उसका नाम मरुत्देव ने भीमसेन रखा।

71. पाण्डुराज सुनकर बहुत आनन्दित हुए। उन्होंने कहा कि हे संगिनी ! पुत्र को मेरी गोद में दो।



72 यह कहकर पाण्डुनाथ ने पुत्र को लिया।
73 इस पर्वत ने पुत्र को शाप दिया। देवी ने पर्वत से अत्यन्त विनीत होकर प्रार्थना की।
74 हे महान् पर्वत ! तुमने हमको शरण दी लेकिन पवन कुमार की गलती सह न सके।
75 हम तुम्हारे ऊपर निवास करते हैं। तुम हमारे दस दोषो को सहन करोगे।
76 मैने एक निष्कलक पुत्र पैदा किया। हे महान् पर्वत ! बच्चे के ऊपर क्यो क्रोध किया !
77 तुमने बिना विचारे मेरे पुत्र को शाप दिया। इसलिए तुम्हे लोग काटकर खण्ड-खण्ड करे।
78 जब कुन्ती ने पुन शाप देने की चेष्टा की तो पर्वत ने विनम्र होकर कहा—
79 माँ ! क्रोध से मुझे जो शाप दिया उसमे मेरा अटूट शरीर खण्ड-खण्ड हो जायेगा।
80 फिर भी मुझे शाप देने के लिए तैयार हो। हे माता! रुको-रुको। मै तुमसे प्रसन्न हुआ।
81 82 तुम्हारा यह पुत्र प्रथम युद्ध अवश्य हारेगा। किन्तु दूसरे युद्ध मे जब मुझे याद करेगा, उस समय पवन-जात तुम्हारे पुत्र भीम का पराक्रम होगा।
83 मै जब इसके दक्षिण हाथ पर बैठूँगा, उस समय यह ब्रह्माण्ड शिरोमणि वृकोदर मूर्ति होगा।
84 इस वृकोदर मूर्ति को देखकर ब्रह्मा, विष्णु और महेश भी भयभीत होंगे।
85 तुमने निरजन देवता के साथ क्रीडा की। इसलिए तुम्हारा नाम निरजनी हुआ।
86 हे देवी कुन्ती ! आज रात को पवन के साथ रमण किया। इसलिए तुम्हारा नाम आज से प्रभजनी हुआ।
87 88 सत्य युग के अन्त मे त्रेता युग मे गौतम ऋषि और उनकी भामिनी महासती अहिल्या के घर मे जब अनादि रूप मे पैदा हुई, उस समय माता-पिता ने तुम्हारा नाम प्रभजनी दिया।
89 उस जन्म मे भी तुमने पवन देव के वीर्य को स्वीकार किया। उससे महाबलवान पुत्र हनुमान पैदा हुआ।
90 त्रेता युग मे उत्तक को तुम प्रदान हुई। पुन: पवन से तुम्हारा रतिरग हुआ।
91 उस महावीर्य का भार तुम्ही सह सकती हो। पृथ्वी के लिए तुम महाभार को वहन करती हो।
92 अब कुन्तिभोज के घर में तुम पैदा हुई। पहले ही तुमने दुर्वासा महायती को तुष्ट किया।
93 वे तुमसे दयापूर्वक प्रसन्न हुए। तुमको अजपा महामन्त्र की जपामाली दी।
94 हे पाण्डुराज-वामा ! तुम परम वैष्णवी, अन्नपूर्णा देवी हो। मुझपर दया करो।
95 यह सुनकर सन्तुष्ट कुन्ती ने महागिरिवर कहकर सम्बोधित किया।
96 मेरा शाप तुम्हे अन्यथा नही होगा। छोटे-छोटे टुकडे होकर देवता की मूर्ति होगे।
97 सारा ससार तुम्हारी आराधना करेगा। तुम्हारे स्थान पर देवता बैठेंगे।
98 अगस्त्य कहते है—हे महारथी ! सावधान होकर भीम का बालचरित सुनो।
99 कुन्ती ने भीम को सुलाकर भोजन बनाने का काम पूरा किया।
100 माद्री और कुन्ती गगा स्नान के लिए गयीं। पाण्डु इस समय उद्दालक वन मे थे।
101 102 पाकशाला मे मारुति भीम तत्क्षण प्रविष्ट हुए। भात, तरकारी जितने प्रकार का भोजन था, उसका आधा-आधा भाग शिशु भीम ने खा लिया।
103 भीमसेन लौटकर उसी जगह सो गये। देवी कुन्ती स्नान करके लौट आयी।
104 नित्यकर्म समाप्त करके पाण्डु ने प्रवेश किया और फिर भोजन के स्थान पर पहुचे।
105 कुन्तीदेवी ने भोजनालय मे पहुँचकर देखा कि हाँडी मे आधा-आधा भोजन नही है।
106 लौटकर पाण्डुराजा से कहा कि हे राजा ! आधा भोजन नही है।
107 पाण्डु ने कहा सिद्ध अन्न रखने पर कम हो जाता है।
108 अन्न-व्यजन को आहुति मे डाला। देव और पितृ लोगो को देकर स्वयं भोजन किया।
109 इसी प्रकार शिशु प्रतिदिन भोजन करता था। दिन पर दिन भोजन से प्रीति बढने लगी।
110 धीरे-धीरे उसकी खुराक बढ गयी। इस प्रकार

हाँड़ियों में क्रमशः कम भोजन बचने लगा। ऐसे ही वर्ष बीत गया।

111-113. एक दिन बालक भोजनालय में घुसा। महा आग्रह से उसने सब कुछ खा लिया।

114. खाते-खाते पुत्र ने सब कुछ खा लिया। हाँडी खाली हो गयी।

115. लौटकर वह शय्या पर सो गया। स्नान करके देवी कुन्ती लौटी।

116. पाण्डु अपने आसन पर उपस्थित हुए। कुन्ती पाकशाला में प्रविष्ट हुई।

117. प्रथम हाँड़ी में देखा कि उसमें कुछ भी नहीं है। सारे भोजन को देखकर देवी आश्चर्यचकित हुई।

118. विस्मित होकर पाण्डु राजा के पास पहुँची। पाण्डु ने पूछा—क्या बात है ?

119. कुन्ती ने कहा, हाँड़ियों में कुछ भी खाद्य सामग्री नहीं है।

120. पाण्डु ने उत्तर दिया—हे प्रिय ! तुम धीरज धरो। मैं अनुसन्धान करके इसका मतलब समझूँगा।

121. शीतल शरबत पीकर नृपति का दिन और रात बीत गया।

122. पाण्डु ने कहा—आज बहुत भूख लगी है। शीघ्र दुगुना भोजन बनाओ।

123. कुन्ती और माद्री ने भोजन की व्यवस्था की। किवाड़ बन्द करके वे स्नान के लिए गयीं।

124. अगस्त्य कहते हैं—हे महान व्यक्ति ! शिशु भीमसेन के बालचरित की कौतुक कथा सुनो।

125. शयन स्थान से पेट के बल सरककर पाकशाला में घुसकर भोजन को भीमसेन ने जूठा कर दिया।

126. पाण्डु पर्वत पर छिपकर बैठे थे। हठात् किवाड़ खोलकर घर में घुस आये।

127. जब चुपके-चुपके भोजनशाला में घुसे तो देखा कि भीमसेन ने सारा भोजन खा लिया।

128. पत्तल में भोजन भरकर एक साथ मुँह में घोट लेता है। एक कवल में ही पेट को तृप्त कर लेता है।

129. क्रोध से पाण्डु काट दूँगा—कहकर तलवार खोजने लगे।

130. अस्त्रागार में घुसकर तलवार लाते-लाते बाल भीमसेन बाहर भाग गया।

131. तलवार लेकर राजा पीछे-पीछे दौड़ते हैं। बालक भीमसेन वायु-वेग से भागने लगा।

132. वन, कन्दर, पर्वत, निर्झर आदि से होते हुए महाराज पाण्डु पीछा करते हैं।

133. भीमसेन भाग रहे हैं और पाण्डु पीछा कर रहे हैं। यह देखकर अग्नि देवता ब्राह्मण रूप में पीछे-पीछे दौड़ते हैं।

134. पाण्डु ने कहा कि यह मेरी प्रतिज्ञा है। हे भीम ! आज मैं निश्चय तुम्हारा शिरश्च्छेदन करूँगा।

135. कुन्ती और माद्री दोनों स्नान करके आ रही थीं। दौड़कर दोनों ने पाण्डु को अपनी अंकवार में पकड़ा।

136. क्रोध से राजा ने गाली देकर भार्याओं को ढकेल दिया।

137. विकल होकर कुन्ती ने कहा—इस बच्चे ने अबोधता बस ऐसी भूल की।

138. हे धर्मदेव पाण्डु ! क्यों ऐसा कर रहे हो! महान् गुण से मेरे पुत्र की रक्षा करो।

139. रोता हुआ पुत्र आगे-आगे भागता है और क्रोध से पाण्डु राजा तलवार तानकर पीछा करते हैं।

140. पाण्डु के पीछे एक विचक्षण ब्राह्मण रूप में अग्नि देवता दौड़ते हैं।

141. उनके पीछे कुन्ती और माद्री दौड़ रही हैं।

142. इस प्रकार दौड़ता हुआ भीमसेन सरसठ योजन तक चला गया।

143. सन्ध्या के समय ऊर्ध्वबाहु पर्वत पर भीमसेन उझक कर गिर पड़ा।

144. तीन योजन आयतन विशिष्ट वह प्रचण्ड पर्वत भीमसेन के गिरने पर चूर-चूर हो गया।

145. उस पर्वत के नीचे एक नदी थी। उसमें जाकर बाल-तनय मुँह के बल गिर पड़ा।

146. क्रोध से पाण्डु बालक के ऊपर कूद पड़े। खींचकर बायें हाथ से भीमसेन के केशों को पकड़ा।

147. तलवार लेकर जब पाण्डु काटने जा रहे थे, उस समय वैश्वानर ने तलवार पकड़ ली।

148. क्रोध से पाण्डु ने तलवार छीनते-छीनते कहा—हे ब्राह्मण! छोड़ो। मैं इस दुष्ट बालक को काट डालूँगा।

149. अग्नि ने कहा—हे राजा ! इतना क्रोध क्यों करते हो? यह अबोध बालक है। इसका कितना दोष है ?

150. हे राजा ! तुम श्वास स्थिर करो। बच्चे को छोड़कर स्थिर भाव से बैठो।

151. कुन्ती और माद्री दोनों ने राजा के बायें हाथ को पकड़ा, किन्तु किसी प्रकार भी बालक को छुड़ा न पायीं।

152. वैश्वानर ने कहा—शिशु का क्या दोष है वत्स ? सोचकर मुझे बताओ।

153. पाण्डु ने कहा—हे सुज्ञानी द्विजश्रेष्ठ ! यह मेरे सारे भोजन को जूठा करता चला आ रहा है।

154. भार्याओं ने कहा—हे मुनि ! यह एक वर्ष से भोजन को जूठा करता चला आ रहा है—ऐसा हम जानती हैं।

155. देव, पितृ अतिथि और अग्नि आदि को इसका जूठा हम लोग देते आ रहे हैं।

156. एक वर्ष से इसका यही स्वभाव बन गया है। इस मन्द दुष्ट को हम लोग कैसे रखेंगी ?

157 हे ब्राह्मण ! मैं प्रार्थना करता हूँ कि इसकी रक्षा का अनुरोध मत करो। इसके रहते मेरा कभी भी कल्याण नहीं होगा।

158. महादुष्ट ने मेरी सारी धर्म-क्रिया को तोड़ा। बाल्यकाल में ही यह पेटू हो गया।

159. वैश्वानर ने कहा—हे पाण्डु ! तुम्हारी ऐसी बात ? अति सामान्य दोष के लिए इतना बड़ा दण्ड देते हो!

160 शिशु पुत्र मक्खी के समान है। अज्ञानी और मूर्ख लोग उस पर विचार करते हैं।

161. तुमने जो कहा कि मैं पितृ लोगों को देता हूँ। पितृ लोग उस पर विचार करते हैं।

162. जो लोग गो-हत्या करते या ब्रह्महत्या किये रहते हैं, उन्हें सन्तान होने पर यमराज दण्ड नहीं देता है।

163 हो सकता है अभी अज्ञानता और मूर्खतावश पाप किया किन्तु पुत्र होने के कारण यह तुम्हारा मोक्षदाता है।

164 यम का विचार पुत्र पर आधारित होता है। इसलिए वह पुत्र को दण्ड नहीं दे सकता है।

165. अनेक पुण्य करके भी जब कोई अपुत्रिक मरता है, तो उसे जन्तु स्वामी अनेक भोग भोगाता है।

166. साधु हो या असाधु हो, पुत्र का रहना आवश्यक है।

167. सब समय वंश परम्परा का कारण होता है। हे पाण्डु महिपाल ! तुम इसका विचार करो।

168. शिशु का उच्छिष्ट पाकर पितृगण के मन में आनन्द उत्पन्न होता है।

169. पाण्डु ने कहा—पितृगण तो तृप्त होते हैं, लेकिन मैं तो नित्य इष्ट देवताओं को भी अन्न समर्पित करता हूँ।

170. हे द्विवजर ! वही मेरा धर्म नष्ट हो गया। मुझे छोड़ दो। मैं इसका सिर काट दूँगा।

171. अग्नि ने कहा- हे महावीर ! देवता कहाँ रहते हैं ? अपने शरीर में ही सब देवता रहते हैं।

172 177. पहले सिर के तालु पर ब्रह्मा, ललाट पर नारायण महात्मा, चन्द्र-सूर्य देवता दोनों आखों में, नासिका में महाज्ञानी पवन, दोनों कनपटी मे रुद्र देवता अनुचर-गणों के साथ, दोनों कानो मे चैतन्य, गर्भ में शून्य निरंजन, दोनों जबड़ों के बत्तीस दातों में ब्राह्मणों के साथ वज्र और झंझा, रुधिर सदन मोली में शुक्र-बृहस्पति विराजमान रहते हैं।

178. चन्द्र के समान दोनों होठों पर इन्द्र आसीन होकर उसे देवलोक बनाते हैं।

179. गालों को घेरकर कृतकृतान्तक गणों को जीतने वाले पेंतीस देवता बैठते हैं।

180. सलिल, शैल, सुहावन मर्मार, मन, लय, ज्ञान, बुद्धि कण्ठ में रहते हैं।

181 कण्ठ के नीचे इतने देवता रहते हैं। छाती के बालो में अपरिमित नक्षत्र रहते हैं।

182 द्वादश विश्वदेव हृदय में रहते हैं। सनक, सनातन, दोनों कर-स्थली में रहते हैं।

183 184 दोनों करस्थली में चौदह विद्यायें रहती हैं। आकर्षण, महाबल, साधन, लय, कर्मफल, ज्ञान, बल, शक्ति आदि-सत्ताईस देवता दोनों भुजाओं में रहते हैं।

185. नाभि से ऊपर तालु ब्रह्म द्वार तक तैंतीस कोटि देवगण भोग करते हैं।

186. नाभिमण्डल में पितृ देवत पुरुष घेरकर रहते हैं। संकल्प जल प्रदान करने के बाद वे छोड़कर चले

जाते हैं।

187 तीनों आकाश के मुख्य द्वार से ऊपर की ओर उठती हुई नौ धारायें धातु भेदकर नीचे की ओर बहती है।

188 ऊपर एक धारा बहती है, नीचे एक धारा, सामने एक धारा और एक धारा आकाश में बहती है।

189 पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश पंचधातुओं से द्वादश पुरुष उत्पन्न होता है।

190 काल, काम, अर्थ धर्म और अनुराग ये पांच गण सिद्ध पुरुषों के सखा है

191 दोनों घुटनों से नाभिपर्यन्त पांच सौ योग पुरुष रहते हैं।

192 तुम जो कहते हो कि देवताओं को अन्न देता हूँ। ये सब देवता तो शरीर में ही रहते हैं।

193 पाण्डु ने कहा– भूमि पर पत्र फैलाकर नाम स्मरण करके पानी छिड़कते हैं इसे कौन पाता है?

194 ब्राह्मण ने कहा–मैं तृप्त बनाता हूँ। उस अन्न को और कौन लोग पाते हैं।

195-197 डाकिनी, शाकिनी, आसुरी, क्षपणी, मातृका, राक्षसी, क्षपणी, क्षत्रपाल, उनके पिशाचगणों के लिए प्रति बार खाने के बाद जूठा अन्न पत्र के नीचे जमीन पर गिरा दिया जाता है। इस जूठे को ये अपदेवीर खाते हैं।

198 पत्र आगे के पास पांच असुर रहते हैं। इनके मुट्ठी बाहर रख देने से उनका भोजन होता है।

199 चण्ड, प्रचण्ड, दुर्गम, महाकाल, अनल ये सभी रक्षापाल उस मुट्ठी को खाकर जीते हैं।

200 बाहर अन्न न देकर जो लोग खाते हैं, उनका भोजन असुर-भोजन होता है।

201-202 हिरण्यगर्भ नामक आठ हस्ती पाद अरविन्द में गुप्त रहते है। पाद-प्रक्षालन के जल से ये तृप्त होते हैं। ये सब देवता शरीर में हैं।

203 जीव-जन्तु के रहते ही देवता लोग भोजन पाते हैं। आत्मतृप्त होने से सभी देवता तृप्त होते हैं।

204 पाण्डु ने कहा–ठीक है, देवता तो तृप्त हुए, किन्तु मैं अग्नि में आहुति देता हूँ।

205. अग्नि को अतृप्त करने से पिण्ड नष्ट हो जाता है। ऐसी अनीति करने वाले पुत्र का मुण्ड क्यों नहीं काटूँगा?

206 ब्राह्मण ने कहा–तुम अज्ञानवश गलत सोचते हो। अग्नि देवता सबके गर्भ में रहते हैं।

207 सुअन्न कुअन्न जो कुछ भी खाया जाता है, उसे अग्नि प्रत्यक्ष रूप से दहन करती है।

208 अग्नि देवता उच्छिष्ट नहीं जानते हैं। वे कोटरानल की तरह सब कुछ खा जाते हैं।

209 उच्छिष्ट–अनुच्छिष्ट वे कुछ नहीं जानते हैं। वह दहन-पाप पुण्य सर्वभक्षी है।

210 कहते-कहते क्रोध में महात्मा कहते हैं कि मैं वही देव ब्रह्म अग्नि वैश्वानर हूँ।

211 हे पाण्डु! तुमने तो आज ही देखा। हर वर्ष में ही तुम उच्छिष्ट प्रदान करते हो।

212 समस्त भक्षण करके मैं तृप्त हुआ। युक्तिहीन बच्चों का दोष मानना उचित नहीं है।

213 अग्नि के उत्तर से शान्त होकर पाण्डु राजा ने तत्क्षण आत्मज के केश छोड़ दिये।

214 पाण्डु ने कहा–तुम जब वैश्वानर देव हो तो मुझे अपना स्वरूप दिखाओ।

215 जिस प्रकार मेरे मन में विश्वास हो सके, उसी प्रकार मुझे हे गोस्वामी! अपना स्वरूप दिखाओ।

216 पाण्डु की बात सुनकर वैश्वानर ने कहा–मेरा असली स्वरूप यदि देखने के लिए तुम्हारी श्रद्धा है तो देखो।

217 पाण्डु ने कहा–हे देव! विश्वास के लिए मुझे अपना रूप दिखाओ।

218 पाण्डु के वचन से आनन्दित होकर अग्नि देवता ने अपने शरीर को जगत् व्याप्त किया।

219 महानल ज्योति विकसित हुई। अग्निमूर्ति कोटि तेज से विकसित हुई।

220 महाकालानल शरीर में विकसित हुआ। पाण्डु उसे देखकर भयभीत हुए।

221 भय से नृपमणि दूर हट गये। कुन्ती और माद्री दोनों रानियाँ भाग गयीं।

222 महाभय से पाण्डु भाग गये किन्तु अग्नि देवता के पास भीमसेन है।

223 अनलज्योति का उसे कुछ भी भय नहीं। वह अग्नि

देवता की गोद में है।

224. महाभयभीत होकर राजा भाग गये। दोनों रानियों को लेकर एक योजन की दूरी पर खडे हुए।

225. अग्निदेव की मूर्ति देखकर पाण्डु राजा ने उनकी बहुत स्तुति की।

226-235 अनादि सिद्ध देवता वैश्वानर की जय हो। सकल दहनकारी अनन्त काल जीवी, अनन्त सत्य रूप, अनादि सिद्ध ब्रह्म, दावानल, पिंगल जटासिर, अनलब्रह्म, यज्ञ–पूर्णकामी, ज्वलित अनल, हिन्दोललहरी, महाबली, कोटरानलनाथ, निराकार, ब्रह्म महात्मा, आकाशकर्त्ता, योगानल, बड़वानल, निर्वात वज्रगुणी, पातालानक, महाब्रह्माग्नि, सुरतरंगमुनि, नित्यस्वभावाग्नि, सचर सर्वभक्षी, वैश्वानर देव की जय हो।

236 मै स्वाहा के चरणो में नमस्कार करता हूँ। मैं तुम्हारे चरणो के नीचे शत सहस्र बार दण्ड प्रणाम करता हूँ।

237 हे गोपन पुरुष स्वामी ! तुम सबका प्रतिपालन करते हो। निराकार देव तुम चलाचल हो।

238. तुम द्वादश मास और शरद्, शिशिर, हेमन्त, वसन्त, ग्रीष्म, वर्षा इन छः ऋतुओ के कारण हो।

239 एक ऋतु मे भिन्न-भिन्न रूप धारण करते हो। तुम्हारा उच्छिष्ट भोजन करके सचराचर जीव जीते है।

240 तुम कहाँ नही हो ! गोपन भाव से तुम आहार के ऊपर रूप दिखाते हो।

241 श्वेत राजा के यज्ञ मे बहुत-सा घी खाकर देव ! तुन्दिल होकर तुम्हें मन्दाग्नि रोग हुआ।

242 कौन पुरुष तुम्हारे चिह्न-वर्ण का वर्णन कर सकता है ? एक लय मे ही नव कोटि मेदिनी समाप्त हो जाती है।

243 स्वेदज, अण्डज, उद्भिज, जरायुज–ये चारो प्राणी अग्नि के विना नही रह सकते।

244 हे देव ! तुम भीतर हो और बाहर हो। महानल रूप मे सकल द्रव्य दहन करते हो।

245 जब प्राणी नाना पाप करता है, तब होम करके तुम्हारे ऊपर उन पापो को विसर्जित कर देता है।

246. तुम अभय पुरुष हो। तुम समस्त देवों को अपने शरीर में वहन करते हो। तुम सर्व पाप दहन करते हो।

247 साधु माहेश्वरी दक्ष कुमारी तुम्हारे तेज को शीतल करके तुम्हारी मनोहारी हुई।

248. श्री अग्नि के पाद-पद्म की सेवा करता हूँ। हे स्वामी ! तुम्हारी कृपा से मेरा धर्म वर्द्धित होगा।

249. श्री वैश्वानर अग्नि देवता के चरणों का मैं दास हूँ। शूद्र मुनि सारला दास कहते हैं कि यह मेरा जन्म-जन्म का अभ्यास है।

250 जब पाण्डु राजा ने ऐसी स्तुति की तो अग्नि देवता महातेज त्यागकर शान्त हुए।

251 पाण्डु, कुन्ती और माद्री को पास आते देखकर अग्नि देवता सन्तुष्ट हुए।

252 कुन्ती और माद्री आकर अग्निदेवता के चरणों में प्रणत हुई।

253 भीमसेन को आश्वस्त करते हुए अग्नि देवता ने शान्त चित्त से वर दिया।

254 वैश्वानर ने कहा कि तुम्हारी भोजन से बडी श्रद्धा है। इसीलिए तुम्हारी क्षुधाग्नि कोटरानल की तरह हो।

255 हे भीम ! तुम आहार मे अतृप्त हो। हे पाण्डु ! यह पुत्र तुम्हारे कुल का उद्धार करेगा।

256. पाण्डु ने कहा कि यह तो अभी ही इतना अतृप्त है। यह तो अपरिमित भोजन करेगा; मैं कहाँ से प्रतिदिन दूँगा ?

257 अग्नि देवता ने कहा–मै प्रसन्न हूँ। नित्यप्रति का भोजन बनाना इसे ज्ञात होगा।

258 गोरी, सोरी और नल विधि–तीन प्रकार के पाक में यह सिद्धहस्त होगा।

259. अकटा, अबटा और कच्ची सामग्री पर इसके हाथ लगते ही वे अमृतरसपूर्ण हो जायेंगी।

260 तुम्हारा पुत्र भोजन की अतृप्ति की तरह ही प्रचण्ड युद्ध में भी अतृप्त होगा।

261 हे भीम तुम शृंगार मे भी अतृप्त हो। तुम्हारे वृकोदर मूर्ति के समकक्ष कोई नहीं होगा।

262. अगस्त्य कहते है कि हे वैवस्वत मनु ! सुनो। पाण्डु ने वैश्वानर को प्रणाम किया।

263 वैश्वानार बाल कुमार भीमसेन पर काफी प्रसन्न हुए।

264 वर देकर वैश्वानर अन्तर्धान हो गये। पाण्डु ने वैश्वानर को प्रणाम किया।

265 भीमसेन को पाण्डु राजा ने गोद में ले लिया। उनके पीछे-पीछे दोनो पत्नियाँ आ रही है।

266 शतशृंग पर्वत पर प्रविष्ट हुए और पुत्र तथा भार्याओ के साथ निश्चिन्तता से रहने लगे।

267 269 वैवस्तवत मनु ने अगस्त्य ऋषि से कहा—कुन्ती की कथा तो अति विचित्र है। धर्म देवता और महाबली पवन देवता का उत्पात कुन्ती ने सहन किया। मानवी होकर वह देवताओ को रतिदान करती है। यह तो बड़े आश्चर्य की बात है। हे अगस्त्य इसका भेद मुझे बताओ।

270 अगस्त्य मुनि कहते है—हे मनु पुरुष ! सुनो ! यह अपने पूर्वजन्म मे सत्य युग के अन्त मे अजना थी।

271 उस समय पवन देवता के साथ उसकी रति हुई। उस ईश्वर ने शीघ्र वीर्य प्रदान किया।

272 उसने वीर्य को गर्भ मे धारण करने की इच्छा की। उससे वीर हनुमान पैदा हुए।

273 यह हनुमान त्रेता युग मे महाभक्त हुए। श्री रामचन्द्र ने उनसे स्नेह किया।

274 सत्य युग मे जो अजना रूप मे थी, वह यही राजा कुन्तिभोज के घर मे अवतरित हुई।

275 द्वापर मे पापियो का भार निवारण करने के लिए पवन देवता आकर इसके साथ मिले।

276 उनसे उसने भीमसेन नामक पुत्र पैदा किया। यह अपने युग के पाप भार को रसातल भेज देगा।

277 278 शतशृंग ने कुन्ती की बहुत प्रार्थना की। पाण्डु राजा ने कुन्ती से महाभयभीत होकर कहा—मै अज्ञानी हूँ। तुम अनादि अपर्णा होकर भी इस रूप मे रहती हो। यह मै नहीं जानता हूँ।

279 शतशृंग पर्वत के कहने पर मै जान सका कि तुम महादेवी हो। हे कुन्ती ! आज से मै तुम्हारी सेवा करूँगा।

280 पर्वत कहकर गोपन हुआ। कुन्ती ने विनय-भाव से पवन की सेवा की।

281 मकरध्वज नन्दिनी माद्री बड़े प्रेम से कुन्ती के दोनो लड़के युधिष्ठिर और भीमसेन का पालन करती है।

282 283 भीमसेन के सात वर्ष के हो जाने पर के बाद उसकी दुष्ट प्रकृति को देखकर कुन्ती सोचती है—यह बलवान पुत्र मूर्ख और अपण्डित होगा। धनुर्विद्या मे यह अजय नहीं होगा।

अर्जुन का जन्म

1 2 फाल्गुन मास—पूर्णिमा के बाद कृष्ण पक्ष द्वितीया के बृहस्पतिवार और उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र मे पाण्डु राजा युधिष्ठिर और भीमसेन को लेकर मृगया मे चले गये।

3 मध्यनिशि काल मे कुन्ती श्रीहस्त मे दुर्वासा की जपमाली लेकर शय्या मे उपगत हुई।

4 उसने ध्यानपूर्वक देवराज को याद किया। यह जानकर इन्द्र अनेक अलंकारो से आभूषित हुए।

5 हृदय मे पारिजात पुष्प की माला प्रलम्बित करके किरीट अभिषेक, अलंकार से सुसज्जित हुए।

6 श्री अंगो मे मृगनाभि कस्तूरी का लेपन करके वज्रधारी इन्द्र कुन्ती की शय्या पर उपस्थित हुए।

7 देखकर कुन्ती आनन्दित हुई। तीर्थ-जल लेकर इन्द्र का पाद प्रक्षालन किया।

8 पाद्यार्घ्य देकर कुन्ती अनेक स्तुति करती है। हे सुरनाथ, अमराधिपति तुम्हारी जय हो।

9 अनायास ही तुमने जम्भ दैत्य के दर्प को ध्वस किया। इसीलिए तुमने जम्भभेदी नाम का प्रसन्नता से वहन किया।

10 हाथ मे अभय मुद्गर और वज्रशक्ति लेकर हिरण्य कशयप के नाती का सहज रूप से नाश किया।

11 अजगम, अरूप असि, परशु, और कुठार धारण करके ऐरावत वाहन के ऊपर विराजित हुए।

12 14 हे शचीवल्लभ, अनग काम-मूर्ति, नित्यप्रति चौसठ कोटि विद्याधरियो के अभिलाषी, अमराधिनाथ, अलकापुर रक्षक, अदितिनन्दन, कश्यपनन्दन, तुम्हारे द्वारा अनाकार पुष्प के चिह्नवर्ण से तुम्हारा ललाट सुवर्णमय हो गया।

15 तुम राग रंग ठाकुर, सूर्यवंश के श्रेष्ठ, कोटि भुवन

देखने के लिए सतृष्ण हो।

16. अनेक विलासिनी अनवरत तुम्हारी सेवा करती है। हे कश्यप गोत्री देव ! तुम पूर्णानन्द नायक हो।

17 तुम कोटि भुवन के अनिष्ट को समाप्त करते हो। तुम्हारी आज्ञा से मेघ सचराचर में वृष्टि करता है।

18 हे सदानन्द नाथ ! तुम पाताल के स्तम्भ स्वरूप हो। सतनाग अनन्त तुम्हारा वाहन है।

19 चन्द्र के [illegible] से तुरन्त [illegible] दैत्य का मुण्ड तोड़ दिया। तुम्हारे शस्त्र धारण करने से शत्रु भाग जाते हैं।

20 लोभ से तुमने गौतम की पत्नी का हरण किया। उस महात्मा के शाप से तुम सहस्राक्ष हो।

21 जब मानस [illegible] की [illegible] हुई, तब प्रचण्ड [illegible] से तुरन्त [illegible] का निवारण किया।

22 हे देव ! तुम जल, [illegible], [illegible], निराकृत, [illegible] नाथ और [illegible] हो।

23 सप्त सागर, [illegible], [illegible], [illegible], [illegible] नाथ ! तुम्हारे द्वारा [illegible] है।

24 तुम [illegible], [illegible], [illegible] में [illegible] हो।

25-26 हे वज्रधर, [illegible], [illegible] और [illegible] पुरुष, [illegible] ! [illegible] में [illegible] होकर तुम [illegible] हो।

27 ब्रह्मा से ऊपर तुम्हारा [illegible] है। [illegible] के ऊपर तुम [illegible] इन्द्र हो।

28 [illegible] भाग और [illegible] पर चन्द्रमा [illegible] है।

29 तुम [illegible] और [illegible] वाले [illegible] हो। तुम [illegible] और [illegible] से [illegible] हो।

30 [illegible] सागर के नाथ और [illegible] ! [illegible] में मनुष्य [illegible] में [illegible] मुक्त [illegible] है।

31 यम और चन्द्र तुम्हारी आज्ञा का पालन करते हैं। इसलिए मैं तुम्हारी प्रार्थना करती हूँ।

[illegible] का [illegible] हृदय पर है। इस परमानन्द में [illegible] मांगता [illegible] करते हैं।

32 [illegible] कहते हैं—हे सुरपति मेरी [illegible] सुनो। तुम्हारे द्वारा ही वह जगत्-विख्यात हुआ।

33 इन्द्र देवता की कुन्ती ने पूजा की। हे देवराज ! मैं सम्भोग सम्पद रस माँगती हूँ।

35 कुन्तिभोज की नन्दिनी सार्थक कर्मशीला है। वह अनादि देवी समस्त भार वहन करने वाली है।

36 कुन्ती की स्तुति सुनकर वज्रधारी ने बड़े सन्तोष से आलिंगन-चुम्बन किया।

37 वंश में निष्कलंक और महामन्त्र के कारण निर्दोष कुन्ती के साथ इन्द्र का महानिशि में रमण सम्पन्न हुआ।

38 शतशृंग पर्वत पर गंगा उत्पन्न हुई और पैंतीस [illegible] धाराओं के रूप में पाताल को गई है।

39-44 पावनी, मानिनी, कामिनी, पापनाशिनी गंगा, गोमती, नर्मदा, वैतरणी, मेखला, त्रिपुरा, भालुकी, नेरनी, यमुना, सरस्वती, पातालगामिनी, काशी, काशेरी, [illegible]मेखला, [illegible], गौतमी, नागवर्णी चंचला, [illegible], [illegible] गगनगामिनी, चन्द्रभागा, ब्रह्मपति, नान्दनी, [illegible]माता, तमसा, [illegible], चतुरी, [illegible], [illegible], [illegible]प्रिया, [illegible] पति से प्रवर्तित इन पैंतीस धाराओं में स्थित तीर्थ को त्रिगुणपाद कहा जाता है।

45 गंगा-यमुना और सरस्वती के मिलन स्थान त्रिवेणी के किनारे इन्द्र और कुन्ती का रमण हुआ।

46 उस नदी के किनारे अर्जुन नामक वन है, जहाँ शीतल अमृतमय पवन बहता है।

47-50 वसन्त [illegible] के [illegible] वलिष्ठ योग में कुन्ती के साथ इन्द्र का रति-मिलन हुआ।

51 कुन्ती ने कहा—हे सुरपति ! एक आशु पुत्र उत्पन्न करना।

52-53 पुत्र का भार दर्प में नहीं सह सकूँगी। तुम मण्डलाधिपति और आकाश के अधिकारी, महाबलवान, देवताओं के राजा हो। मैं मानुषी होकर तुम्हारा वीर्य नहीं सह सकती।

54-55 पहले ही कुमारी अवस्था में आदित्य ने मेरे साथ रमण किया। उससे एक आशु पुत्र उत्पन्न हुआ। जन्म से पुत्र न उत्पन्न करने का मेरा स्वभाव बन चुका है। अब किस प्रकार गर्भ का भार सह सकूँगी?

56 सुनकर वरदाता पुरन्दर देवता ने आनन्दपूर्वक कुन्ती

के साथ रमण की इच्छा की।

57. वह विशेषतः प्रौढ़ा कामिनी है। देवराज के साथ क्रीड़ा के रंग-रस में डूब गयी।

58. वह अप्सरा-रमणी रतिशास्त्र में निपुण है। चन्द्रवायु की पहचान करके रमण में आसक्त हुई।

59. अग्नि देवता जैसे प्रचुर घृताहुति से शान्त होते हैं, वैसे ही स्त्रियाँ प्रगाढ़ संभोग से तृप्त होती हैं—यही नारियों का स्वभाव है।

60. मत्त शरीर वाले पुरुष को पाकर रात-दिन उसके केलि-उत्पात सहती हैं।

61. इन्द्र ने मन और चेतना को एकत्रित किया। सांस बन्द करके इच्छा को जाग्रत किया।

62. श्रुति, स्मृति, धृति, शान्ति, सुषुम्ना ये पाँच नाड़ियाँ शरीर के वज्र कवच की तरह हैं।

63. तरल, तारल, इंगला, पिंगला को घेरकर नौ नाड़ियों के मूल में बहत्तर कोठियाँ हैं।

64. इनको एकत्रित करके पंच—सर-भोगी अनंग को परम योगी पुरुष ने दूर कर दिया।

65. अज्ञान को दबाकर एक ब्रह्म को ऊपर की ओर उठाया। संग्राम में बहत्तर क्रीड़ायें कीं।

66. वासव नख-दन्त—शर को छोड़ते हैं। कुन्ती शरीर में न लगने देने के लिए इसको बचाती है।

67. दोनों योद्धाओं के बीच संग्राम में रस-युद्ध बढ़ा। काम तन्त्र में भग-भव की शान्ति नहीं हुई।

68. अदृष्ट बाणों को कन्दर्प छोड़ता है। मदन पीड़ा से भाव-द्वन्द्व चल रहा है।

69. विशेषतः गहन भूमि और अगम्य स्थान है। आकाश में चन्द्रमा विराजमान है।

70. वासन्ती चन्द्रमा से चारों ओर दिन की तरह निर्मल दिखाई देता है।

71. अशान्त संभोग से अतृप्त देवराज ने रात्रि बीतने के समय महावीर्य विसर्जित किया।

72. दोनों का मन परमानन्द से शान्त हुआ। एक सुन्दर आशु पुत्र उत्पन्न हुआ।

73. मातलि के साथ अप्सरायें आकाश से पुष्पक लेकर इन्द्र के साथ मिलीं।

74. देवगण आनन्द से दुन्दुभि बजाते हैं। चौंसठ करोड़ अप्सराओं ने शुभ मुख-ध्वनि की।

75. सभी नारियाँ अम्लान वस्त्र पहनकर पहुँचीं। कोई कुन्ती को कोई पुत्र को सँभालती हैं।

76. सुवासित तप्त जल लेकर पुत्र के अंग को अत्यन्त कोमल जानकर सावधानी से धोती हैं।

77. मधु, घी, काली गाय का दूध लेकर कुमार के अंगों में लेप करती हैं।

78. सुरेश्वर इन्द्र ने श्री हस्त में अर्घ्य लेकर कुमार की पूजा की।

79. रम्भा, उर्वशी, मदना, मेनका, कामसेना, दिव्य नारियों ने पुत्र को शय्या पर सुलाया :

80. नीलकमल के दल की तरह कुमार का शरीर था। विचित्र वेश में उनका रूप कोटि सूर्य के समान सुन्दर था।

81. अति सुन्दर उस अर्जुन नामक वन में वह पुत्र उत्पन्न हुआ।

82. अत्यन्त हर्षित होकर इन्द्र ने अर्जुन वन में पैदा होने के कारण उसका नाम अर्जुन रखा।

83. बृहस्पति ने सप्तांग पंजिका लेकर गणना की। उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र में पुत्र उत्पन्न हुआ है।

84. बृहस्पति ने अत्यन्त सुन्दर और सुष्ठु देखकर कुमार का नाम फाल्गुनी रखा।

85. उत्तरा फाल्गुनी की कन्या राशि में गण्डमूल दोष रहित माहेन्द्र योग में पुत्र की उत्पत्ति हुई—ऐसा कहा जाता है।

86. सर्वगुण-सुलक्षण, सुन्दर, सुरेश्वर का पुत्र इन्द्रासन को सम्पूर्ण रूप से विजय करने वाला है।

87. देवराज के पास जितने अमर अलंकार थे, उन सबसे पुत्र को मण्डित कर वे चल दिये।

88. उर्वशी ने आकर उसे गोद में लिया। रत्नसार युवती ने उसका नाम सव्यसाची रखा।

89. पाण्डु ने सुरनदी के किनारे प्रविष्ट होकर देखा कि कुन्ती की गोद में त्रिभुवन-मोहन पुत्र है।

90. इसे देखकर राजा बहुत प्रसन्न हुए। कुन्ती को बहुत बधाई दी।

91. युधिष्ठिर, भीम और अर्जुन तीन पुत्रों का कुन्ती माद्री के साथ पालन करती हैं।

92 वैवस्वत मनु ने कहा—हे ऋषि अगस्त्य ! सुनो। मेरी एक बात का सन्देह दूर करिये।

93 धर्म देवता के पुत्र का नाम धर्म-युधिष्ठिर क्यों रखा गया ?

94 अगस्त्य ने कहा—हे महाराजा ! सुनो। पहला कर्ण और दूसरा यह पुत्र उत्पन्न हुआ।

95 कुन्ती ने कहा—कर्ण ही मेरा ज्येष्ठ पुत्र था। बालिका वयस में ज्ञानभ्रष्ट होकर उसे गंगा में फेंक दिया।

96 उस पुत्र को कहाँ खोज कर पाऊँगी ? द्वितीय पुत्र ही ज्येष्ठ पुत्र हुआ।

97 यह पुत्र महाज्ञानी और रात-दिन धर्म-कर्म करने वाला है। इसीलिए उसका नाम धर्मदेव युधिष्ठिर रखा गया।

98 कुन्ती देवी को तो तीन पुत्र उत्पन्न हुए। कुन्ती की भक्ति करके माद्री को क्या मिला ?

99 तीन पुत्रों को लेकर कुन्ती सोचती है कि अब पर-पुरुष संभोग का जंजाल और सहा नहीं जा सकता।

100 अपना स्वामी अपनी स्त्री की चिन्ता करता है, किन्तु पर पुरुष के साथ संभोग करने पर बड़ी बुरी अवस्था होती है।

"पुत्र के लिए माद्री द्वारा नारायण का स्मरण और नारायण के अस्वीकार करने पर दुर्वासा का अन्य देवता को स्मरण करने के लिए उपदेश

1 और शृंगार न कर सकने के कारण कुन्ती माद्री को पास बुलाकर सोचती है।

2 माद्री तुम तो मेरी सपत्नी हो किन्तु तुमने दासानुदास होकर मेरी बहुत सेवा की है।

3 तुम मेरी अभिन्न प्राणसंगिनी हो। मेरी सेवा करने पर भी क्या तुम अपुत्रिक रहोगी !

4 कुन्ती ने माद्री को जपमाली देकर कहा कि तुम मनोवांछित दिग्पाल को स्मरण करो।

5 अपनी उपस्थिति में कुन्ती ने माद्री को शय्या निर्माण करने के लिए निर्देश दिया।

6-7 माद्री महादेवी कुमारी है। इसकी माता वलय वसन्ता अप्सरा इन्द्र के क्रोध से अभिशप्त होकर पृथ्वी पर मानवी रूप में उत्पन्न हुई।

8 उसकी दुहिता मदनावती माद्री पाण्डु राजा को प्रदत्त हुई।

9 उसका रूप-गुण कोई बखान नहीं सकता। वह सुन्दरी पृथ्वी की अलंकारस्वरूप है।

10 हाथ से कुन्ती ने जपमाली देकर कहा कि जिसके प्रति तुम्हारी इच्छा हो उसे तुम याद करो।

11 इस प्रकार तैयार करके कुन्ती माद्री को सुज्जित करके शय्या पर छोड़कर चली गयी।

12 माद्री सोचती है कि कुन्ती ने धर्म, पवन और इन्द्र से पुत्र पैदा किया। देवताओं में और कोई बलवान नहीं बचा।

13 आज मैं नारायणदेव का स्मरण करूँगी। विष्णु के वीर्य से मेरा पुत्र उत्पन्न हो।

14 मेरा पुत्र बलवान होकर सप्त ब्रह्माण्ड को एकछत्र करेगा।

15 गान्धारी और कुन्ती के पुत्रों को जीतकर यह मेरा पुत्र एकमात्र भूपति हो।

16 ऐसा सोचकर देवी निर्जन निशाकाल में दुर्वासा के मन्त्रबल से नारायण को स्मरण करती है।

17 गरुड़ वाहन से नारायण ने अन्तरिक्ष से शतशृंग पर्वत पर प्रवेश किया।

18 अनेक वेश भूषित होकर मदनसेन की कुमारी ने नारायण नारायण कहकर अर्घ्य का नीव रखा।

19 इस समय श्रीकृष्ण प्रविष्ट हुए। उनको देखकर माद्री देवी ने आसन का त्याग किया।

20 नारायण ने कहा—हे पाण्डु की रानी ! सुनो। तुम्हारी ज्येष्ठ सपत्नी ने निराकार को उद्बोधित किया।

21 उसके वीर्य से जो पुत्र उत्पन्न हुआ; वह युधिष्ठिर साक्षात् मेरा प्रभु निरंजन देवता है।

22 तुम मेरी प्रत्यक्ष निरंजनी माता हो। महामन्त्र द्वारा पुत्र को क्यों स्मरण किया।

23 ऋषि के महामन्त्र का मैं कैसे उल्लंघन करूँगा ? मेरा ब्रह्माण्ड फोड़कर प्राण विसर्जित किया।

24 माता के साथ पुत्र को काम-मिलन कहाँ होता है ? मुझे तुमने दुःसह संकट में डाल दिया।

25 तुमने क्यों इसका मन में विचार नहीं किया ?

जानबूझकर गुरुपत्नी का कैसे हरण करूँगा ?

26. कुछ विचार न करके हे माहेश्वरी ! ऐसा कर्म क्यों किया!

27. हे महामात्री ! अब क्या सोचती हो ? नारायण की बात सुनकर माद्री आश्चर्यचकित हुई।

28. मेरे कर्म में चक्रपणि ! ऐसा फल फला।

29. आड़ में छिपकर कुन्ती देख रही थी। वह धर्म की बनिता अकस्मात् प्रविष्ट हुई।

30. देखा कि गरुड़ वाहन होकर शंख-चक्र और कोदण्ड धारी नारायण कुछ सोच रहे हैं।

31-32. नारायण की उपस्थिति देखकर कुन्ती आश्चर्यचकित हुई। सुज्ञानी माद्री ने तो देव श्रेष्ठ को प्राप्त किया। उसके वीर्य से उत्पन्न सन्तान नारायण का पुत्र—एक छत्र का राजा होगा।

33. कुन्ती को देखकर देव चक्रधारी नारायण तत्क्षण गरुड़ के पीठ से उतरे।

34. नारायण ने कहा—माँ ! तुमने निरंजन को महामन्त्र से तुष्ट किया। धर्म देवता तुम्हारी गोद में विराजित हुए।

35. देवता गण जिसके चिन्न-वर्ण को भी नहीं पाते, वे देव तुमसे प्रसन्न हुए।

36. मैं तुम्हारा पुत्र और तुम मेरी माँ हो। हे माँ ! तुमने क्यों ऐसा उपाय सोचा ?

37. गुरुपत्नी और शिष्य-पुत्र का मिलन कहाँ होता है ? दुर्वासा का मन्त्र कैसे उल्लंघित किया जा सकता है।

38. हे माहेश्वरी ! तुम इस बात का विचार करो। कुन्ती ने कहा—यह तो विचार नहीं कर पायी।

39. यह कहते समय कुन्ती भयभीत हुई। दूसरी ओर जगन्नाथ प्रीति-मिलन के लिए इन्कार करते हैं।

40. कुन्ती ने कहा—हे दामोदर ! तुम जा सकते हो। हे माद्री ! तुम अन्य देवता का स्मरण करो।

41. गोविन्द ने कहा—हे माँ ! यह तो मेरे लिए बहुत कठिन है। दुर्वासा महामन्त्र से मैं कैसे बचूँगा

42. इसका प्रतिकार वे ऋषि ही जानते हैं। हे माँ कुन्ती ! उनका स्मरण करो।

43. आनन्दित होकर कुन्ती ने ध्यानपूर्वक दुर्वासा को याद किया।

44. दण्ड, कमण्डल, काषाय, कोपीन, शुभ्रवस्त्रधारी और भस्म विलेपित ताम्रवर्ण शरीर वाले ऋषि पहुँचे।

45. दुर्वासा ऋषि ने नारायण को देखा। अर्घ्य लेकर पाण्डु राजा की पटरानी ने पूजा की।

46. दुर्वासा ने कहा—हे बेटी माद्री तुमने बुरा काम किया। नारायण देवता को क्यों याद किया ?

47. दुर्वासा की बात सुनकर दामोदर ने कहा—हे मुनि ! तुम अपनी प्रतिज्ञा का प्रतिकार करो।

48. दुर्वासा ने नारायण की विपत्ति का खण्डन किया। हे माद्री ! अन्य पुरुष पर मन लगाओ।

हरि-अर्जुन साक्षात्कार और कृष्ण के द्वारा विश्वरूप दर्शन

1. दुर्वासा ने कहा—हे कुन्ती ! तुम्हारे पुत्रों को देखूँगा ले आओ।

2. पाण्डु की पटरानी प्रसन्नतापूर्वक युधिष्ठिर, भीम और अर्जुन को ले आयी।

3. पुत्रों को साथ लेकर कुन्ती ने दुर्वासा को शत सहस्र दण्ड प्रणाम किया।

4. दुर्वासा ने कहा—तुम्हारी मनोकांछा पूरी हो। अपनी इच्छानुसार तुम सुखपूर्वक पंच कटक का भोग करो।

5-6. नारायण शुक्लाम्बर निरंजन पुरुष युधिष्ठिर को देखते हैं। शुद्ध स्फटिक के समान धवल शरीर वाले युधिष्ठिर के पद्म पाद में नारायण ने प्रणाम किया।

7. महाधार्मिक विवेकी गुणवान पुरुष ने बिना कुछ कहे अजपा जप से आशीर्वाद दिया।

8. नारायण सोचते हैं—इस महाब्रह्म पुरुष का दर्शन करके मेरा जन्म सार्थक हुआ।

9. अर्जुन को देखकर वे अत्यन्त आनन्दित हुए। हृदय से लगाकर कहा—यह मेरी कला का स्वरूप है।

10. कृष्ण ने अर्जुन के गले में मर्कत मणि प्रलम्बित करके अनेक अलंकारों से आभूषित किया।

11. अत्यन्त सन्तोषपूर्वक नारायण ने अर्जुन को गोद में लेकर उसे द्वितीय कृष्ण नाम दिया

12. श्रीपति ने जब अर्जुन का आलिंगन किया तब दोनों

एकाकर हो गये। उनका स्वरूप पहचाना नहीं जा रहा था।

13. अर्जुन को देखकर देव वनमाली शतशृंग पर्वत पर खेल रहे थे और मथुरा को नहीं लौटे।

14 महारण्य में प्रवेश क्रीड़ा रंग करते हैं। रात में अर्जुन के साथ और दिन में मथुरा में रहते हैं।

15. कृष्ण और अर्जुन दोनों यमुना के किनारे बैठते हैं। दोनों का स्वरूप एक सा होने के कारण पहचाना नहीं जा सकता।

16. क्रीड़ारंग रस में वे हँसते, खेलते, रमते गये। इसी समय व्यास मुनि पहुँचे।

17. व्यास को देखकर कृष्ण और अर्जुन उठे। पाण्डुपुत्र ने शत-सहस्र दण्ड प्रणाम किया।

18. व्यास ने कृष्ण से पूछा—तुम तो काफी दूर हो। शतशृंग पर्वत से मथुरा चार सहस्र योजन दूर है।

19. इतनी दूर रहकर तुम दोनों में इतनी मित्रता कैसे हुई? मनुष्य के साथ नारायण की ऐसी प्रीति कैसे हुई ?

20-21. नारायण कहते हैं—हे व्यास मुनि ! सुनो। कुमुदनी जल में रहती है और चन्द्रमा आकाश में रहता है। दो लाख योजन तो बहुत दूर है। चन्द्रमा ने कैसे कुमुद-बन्धु नाम को धारण किया।

22. जिसका जिससे प्रेम होता है, वह उससे अवश्य मिलता है। चाहे आकाश में हो, चाहे पाताल में हो, रात हो या दिन हो, वह सब समय मिल जाता है।

23. दीप्त सत्य युग में मेरे नारायण अवतार में यह अर्जुन मेरा सखा दामोदर ब्राह्मण था।

24. शुक्लाम्बर सत्य युग में हम वैकुण्ठ में अनाकार विष्णु के द्वार पर जय-विजय रूप में रहते थे।

25. भवानी सत्ययुग में मैं अनन्त था। यह मेरा सखा रुद्र का अवतार था।

26. विधृत सत्य युग में मैं विश्वनाथ था। वहाँ यह मेरा पंचभूत सनक ब्रह्मा था।

27. अभिन्न सत्य युग में मैं अनन्त था। यह मेरा प्राण सखा इन्द्र का अवतार था।

28. हरिमेखला सत्य युग में मैं गरुड़ नारायण था। यह मेरा मित्र श्रीवत्स ब्राह्मण था।

29. मेरे साथ मित्रता होने के कारण इसने गर्व किया और अपने को मुझसे बड़ा समझने लगा।

30. इसकी इस बात से मैंने अत्यन्त क्रोधित होकर इसे अन्ध-अन्धी के घर पैदा कराया।

31. दरिद्र होकर भिक्षा माँगता था। इतना बड़ा दण्ड पाकर भी इसने मेरी उपेक्षा की।

32. एक दिन भीख माँगते नगर में जाते समय मैंने माया से सभी लोगों को छिपा दिया।

33. उड्र, शिवपुर आदि चार नगरों में आर्त्त होकर उसने अपार भ्रमण किया।

34. कहीं जन मानव न देखकर महादुःख से वह आश्रम को लौट आया।

35. जगन्नाथ पाषाण को देखकर उसने क्रोध से बायें पैर से मेरे हृदय पर पदाघात किया।

36. मैं मूर्तिवत् होकर खड़ा हुआ। व्यथा लगी—कहकर मैंने इसके दोनों पैरों को दबाया।

37. हे व्यास ! इसकी मेरे साथ इतनी प्रीति है कि इसके पदचिह्न मेरे हृदय पर देखें आज भी विराजमान हैं।

38. हिरण्य सतयुग में मैं नरसिंह मूर्ति हुआ। यह प्रह्लादरूप में हिरण्य के घर में उत्पन्न हुआ।

39. हिरण्य को विदीर्ण करके मैंने इसे गोद में बैठाया और आकाशमण्डल में चिरन्तन पद पर बैठाया।

40. कुतूहलवशात् स्वेच्छा से पुनः संग्राम किया। शस्त और प्रशस्त होकर अवतरित हुआ।

41. कौतुहलेच्छा से ग्रहों के बीच हम केतु और मंगल होकर परिचित हुए।

42. मैं केतु और यह मंगल है। युग-युग से हम अभिन्न हैं।

43. इस महीमण्डल पर सतयुग में परशुराम अवतार में दोनों जमदग्नि के घर में उत्पन्न हुए।

44. मैं परशुराम और यह नीलराम था। क्षत्रियों का नाश करके अनके धर्मों की रक्षा की।

45. परशुराम अवतार में त्रिकालजीवी हुए। अन्य कला में दशरथ के घर उत्पन्न हुए।

46. मैं श्री राम और यह वीर भरत था। द्वापर युग में अब हम कृष्ण और पार्थ हुए।

47. इस प्रकार हम अनेक अवतारों में रूप ग्रहण करते

चले आ रहे हैं। तुम व्यास, हमको कैसे पृथक करते हो?

48 व्यास ने कहा—हे देव श्रेष्ठ! तुम नारायण हो, इसका मुझे विश्वास दिलाओ।

49 तुम दोनों कृष्ण और अर्जुन रूप में एक ही काया हो। महीभार को दूर करने के लिए तुम्हारी उत्पत्ति हुई।

50 तुम स्वामी! अपना विश्वरूप दिखाओ। यह यदि देख सकूँगा तो निश्चय ही तुम्हारा मित्र होगा।

51 गोविन्द ने कहा—हे फाल्गुनी! क्या किया जाय
अर्जुन ने कहा—वही करें जिससे व्यास मुनि का विश्वास हो।

52 हे देव तुम्हारा विश्वरूप कैसा है? उसे मेरी देखने की इच्छा है।

53 अर्जुन की बात सुनकर स्वामी कमललोचन नारायण ने प्रसन्न होकर विश्वरूप धारण किया।

54 इस रूप के दर्शन से अर्जुन को आनन्द हुआ। ऊर्ध्व भाग में कृष्ण का सिर गगनमण्डल में लग गया।

55 उस नारायण की काया आकाश में विस्तीर्ण हुई। त्रिभुवन माया में स्वर्ग तक सिर ऊँचा हुआ।

56 आकाश में सिर, पाताल में पैर और पृथ्वी पर नाभि मण्डल विराजमान रहा।

57 शून्य मण्डल में तनमण्डल हुआ। ब्रह्माण्ड में स्थान स्थान प्रकाशित हुआ।

58-59 नेत्र चन्द्र और सूर्य हुए। तारागण उनकी रोमावली हुए। चक्रधर स्वामी चतुर्भुज हुए। उनके तेज में पाताल अग्नि विराजित हुई।

60 कपाल मध्य में अगणित विमान हुए। उसमें सभी पर्वत गुप्त हुए।

61 सप्त सागर और सिन्धु महाधार धारण करते रोम में समाहित हुआ।

62 नारायण के करतल में पानी रहने के कारण भुजा को पाणि कहा जाता है।

63 पृथ्वी के चारों ओर परिव्याप्त चौरासी कोटि जीव नारायण के बायें हाथ में रह गये।

64 इस प्रकार का विश्वरूप जगदीश्वर ने धारण किया। एक ही शरीर तीन लोक तक विकसित हुआ।

65 मुनि व्यास अर्जुन का मुँह देखते रहे कि कहीं कृष्ण से अर्जुन दग्ध न हो जाये।

66 ब्रह्मांड देख नहीं सकने पर करस्थली-गंगा में डूब गये।

67 श्वेत राजा यज्ञकाल में अग्निकुण्ड में भस्म हो गये, किन्तु रुद्र देवता उसमें पड़कर शितांशु हो गये।

68 उस भस्म में गिरकर पशुपति रुद्र देवता ने मूर्छित होने के कारण हर नाम वहन किया।

69 नारायण की नाभिभाग में आते आते पवन ने विष्णु बान नाम वहन किया।

70 सब नारायण की काया में डूब गये। विष्णु के आश्रम में समस्त देवता रह गये।

71 अर्जुन बाल-बुद्धि सम्पन्न वृद्ध की तरह हँसने लगा। कहा कि तुम्हारा शरीर इतना ही बड़ा है कि और बढ़ेगा।

72 व्यास सुनकर हँसे। हे नारायण देव! शान्त मूर्ति हो।

73 अर्जुन ने कहा कि इस काया ने तो चार कोटि ब्रह्माण्ड को आक्रान्त किया है। हे देव! अभी और कुछ बाकी है क्या?

74 मैं तुम्हारे उदर में युग-युग से प्रवेश करता हूँ। तुम्हारे इन रोमों में सब समय लीन होता हूँ।

75 तुम्हारी विश्वमूर्ति देखकर मैं भयभीत हुआ, किन्तु कभी मैं कहता कि हे श्रीपति! क्या और बढ़ोगे?

76 व्यास ने कहा—मैं समझता था कि तुम्हारा कोई मित्र नहीं है किन्तु तुम्हारा इतना बड़ा मित्र है—अब समझा—मुझे विश्वास हुआ।

77 व्यास ने कहा—हे अर्जुन! तुम्हारा जीवन साधु है। तुम नारायण के प्रिय प्राणसखा हो।

78 अर्जुन का भय देखकर जनार्दन विश्वरूप छोड़कर सामान्य हो गये।

79 अर्जुन को गोद में लेकर मुनि व्यास कहते हैं— तुम भारत में भारी योद्धा होकर भूभार-निवारण करोगे।

80 शतशृंग पर्वत पर अर्जुन को छोड़कर व्यास तत्क्षण अन्तर्धान हो गये।

81 बालरूप में श्री कृष्ण मथुरा जाकर गोकुल में प्रविष्ट हुए।

नकुल का जन्म

1-3. आश्विन, शुक्ल दशमी, गुरुवार, शरद ऋतु, श्रवण, नक्षत्र, कौलव करण, शूल योग, कन्या संक्रान्ति के पच्चीसवें दिन में पाण्डु ने अन्धकार में वन में प्रवेश किया। माद्री शय्या विधान करके बैठी।

4. माद्री ने कहा—मैंने दुर्वासा के मन्त्र से बिना समझे-बूझे नारायण का स्मरण किया, किन्तु वे मुझे प्राप्त नहीं हुए।

5. मैं सुकुमारी बालिका हूँ। प्रगाढ़ संभोग सह नहीं सकती।

6-7. अदित्य का पुत्र अश्विनीकुमार बड़ा बलवान और भाग्यवान है। श्री हस्त में दुर्वासा की जपमाला लेकर द्वितीय सूर्य को याद किया।

8. वह इन्द्र की तरह सुन्दर लोहिताक्ष रूप अमृतमय पुरुष प्रत्यक्ष कन्दर्प है।

9. कुमार जब शतशृंग पर्वत पर उद्वेग के साथ आये, तब इनके तेज से रात्रि में दिन की तरह दिखाई देता है।

10. उनके शरीर पर अनेक अलंकार और भूषण देखकर माद्री ने कुमार की निर्भयतापूर्वक पूजा की।

11. कुमार के साथ माद्री ने स्वच्छन्द रूप से रसमग्न और तृप्त होकर प्रीति की।

12. परम आनन्द से हास-परिहास, प्रेमालाप और शृंगार विनोद सम्पन्न हुआ।

13. माद्री के रज और अश्विनीकुमार के वीर्य से एक आशु पुत्र उत्पन्न हुआ।

14. कुमार पैदा होने पर अश्विनी ने उसका नाम नकुल रखा।

15. नव-घन-अन्धकार में नदी उत्कूल होकर बह रही थी। इस समय नव कामिनी के साथ नव कुमार का संगम हुआ।

16. नव नदी के उपकूल में पुत्र पैदा होने के कारण महात्मा ने उसका नाम नकुल रखा।

17. वह बाल शिशु अत्यन्त सुकुमार है। उसका तेज लाल अंगारे की तरह प्रस्फुटित है।

18. श्रवण नक्षत्र में अति सुकुमार पुत्र नकुल पैदा हुआ।

19. तब अश्विनीकुमार आकाश में चले गये। माद्री ने अति आनन्द से पुत्र का पालन-पोषण किया।

20. कुन्ती को तीन पुत्र, गान्धारी को शतपुत्र और माद्री को एक पुत्र पैदा हुआ।

21. पाण्डु राजा देखकर आनन्दित हुए। चार पुत्रों को कुन्ती ने आनन्द से पाला।

गान्धारी को पुनः पुत्र-कन्या–उत्पत्ति

1. भाद्र शुक्ल अष्टमी के दिन दुर्वासा महर्षि हस्तिनापुर गये।

2. गान्धारी के यमुना-स्नान करके लौटने के समय दुर्वासा ऋषि यमुना नदी के किनारे उपस्थित हुए।

3. दुर्वासा को देखकर गान्धारी ने प्रणाम किया। ब्रह्मचारी ने उसे आशीर्वाद दिया।

4. गान्धारी ने कहा—तुम प्रत्यक्ष ब्रह्मवेत्ता हो। किस प्रकार कुन्ती ने तुम्हारी भक्ति की ?

5. दुर्वासा ने कहा कि तुम्हारी जब और इच्छा है तो मुझसे वर माँगो। अवश्य प्राप्त होगा।

6. मैं तो महामन्त्र बिना माँगे नहीं दे सकता। तुम्हारी जिसमें रुचि और इच्छा है, उसे माँगो।

7. गान्धारी ने कहा—हे मुनि ! तुम्हारे मन्त्र बल से और कर्म के पुण्य से मैंने शतपुत्र प्राप्त किये।

8. पुत्रों को गोद में लेकर व्यास मुनि ने कहा कि तुम्हारा कोई भी पुत्र सज्जन नहीं है। सब महादुष्ट हैं।

9. हे धृतराष्ट्र-रानी ! तुमने बिना सोचे इच्छा की। तुम्हारा कोई भी पुत्र राज्य के योग्य नहीं होगा।

10. गान्धारी ने कहा मुझ पर कृपा करके इस राजवंश के योग्य एक पुत्र दें।

11. मेरी भक्ति से दया करके मुझे एक पुत्री भी दें।

12. गान्धारी ने यमुना किनारे हठ किया। महात्मा दुर्वासा के मन्त्र बल का चमत्कार देखो।

13. सन्तान पैदा करो—यह कहकर महर्षि ने राम तुलसी के पेड़ से एक पत्र और फूल तोड़ा।

14. हे आर्या ! इसको तुम आप्यान करो। एक पण्डित पुत्र और सुन्दर सुकुमारी कन्या पाओगी।

15. कमण्डल से एक चल्लू पानी मुनि ने दिया। गान्धारी ने प्रसन्नतापूर्वक इसे उदरस्थ किया।

16. ऋषि का महामन्त्र निष्फल नहीं हुआ। एक पुत्र और दुहिता उसके गर्भ में आये।

17 महामन्त्र देकर दुर्वासा चल दिये। गान्धारी का शरीर आलस्यपूर्ण हुआ।

18. धृतराष्ट्र ने गान्धारी के पेट को सहलाकर कहा कि तुम तो गर्भवती हुई।

19. गान्धारी ने कहा कि दुर्वासा ने मुझ पर दया की। ऋषि के मन्त्र से मेरे गर्भ में एक पुत्र और एक कन्या है।

20 सुनकर धृतराष्ट्र दु:खी हुए। अपार कुटुम्ब बहुत कष्टदायी होता है।

21 गान्धारी ने कहा—विशिष्ट जाति का परम पण्डित पुत्र इस बार होगा।

22-23 धनु मास, शुक्ल पक्ष, त्रयोदशी के रविवार, मिथुन मृगशिर नक्षत्र में जब सूर्य मध्य आकाश में है, उस समय शुभ लग्न योग मे एक कुमार उत्पन्न हुआ।

24 गान्धारी ने बत्तीस गुण सम्पन्न सुन्दर पुत्र को देखकर उसका नाम दुर्दक्ष रखा।

25 उसके बाद कन्या पैदा हुई। सुन्दरता देखकर गान्धारी ने उसका नाम दु:शला रखा।

26 दुर्दक्ष और दु:शला दोनों के उत्पन्न होने पर गान्धार सेन की नन्दिनी अत्यन्त प्रसन्न हुई।

27 इस प्रकार धृतराष्ट्र के एक सौ एक पुत्र और दु:शला नामक एक कन्या पैदा हुई।

28 दुर्वासा के मन्त्र से सन्तान उत्पन्न होने के कारण धृतराष्ट्र ने सबका नाम दु अक्षर से शुरू करके रखा।

गान्धारी का अन्धा-पट्टी बाँधना और कुन्ती का हस्तिनापुर गमन

1 अगस्त्य कहते हैं कि हे नरपति ! यहां से दिन रात कथा सुनो।

2. स्वामी का अन्धत्व देखकर गान्धारी ने मन ही मन सोचा।

3. किस पाप से और कर्मफल से मेरा स्वामी राज-सम्पत्ति और सन्तान जन्मोत्सव नहीं देख पाता है।

4 स्वामी की दोनों आँखें जब अन्धी हैं तो मैं पापिनी उसका दुख देखकर क्या करती हूँ ?

5. देवी ने कपालेश्वर तीर्थ में संकल्प किया। स्वामी के दु:ख को न देखने के लिए अन्धी पट्टी बाँध ली।

6 संजय की दुहिता और माधवसेन की मनोहारी राधा कुमारी गान्धारी को बाट दिखाती है।

7 धृतराष्ट्र को संजय महामन्त्री बाट दिखाते हैं। ऐसे हस्तिनापुर का नृपति रहता है।

8 व्यास ने शतशृंग पर्वत पर जाकर कुन्ती, माद्री और पाण्डु के सामने इसे बताया।

9 धृतराष्ट्र के अन्धत्व को न देख सकने के कारण गान्धारी ने स्वयं अन्धी पट्टी बाँध ली।

10 सुनकर पाण्डु ने मन में सोचा और दु:खी हुए।

11 व्यास की बात से पाण्डु अत्यन्त व्याकुल हुए। गान्धारी ने क्यों अन्धी पट्टी बाँधी ?

12 खाने-सोने और चलने में वह सहारा देती थी, उसके ऐसा करने पर स्वामी को बहुत कष्ट हुआ।

13 कुन्ती ने कहा- हे स्वामी ! चलो, हस्तिनापुर जाकर गान्धारी की आंखों से पट्टी खुलवा दें।

14 पाण्डु ने कहा—अन्धे-अन्धी की दुरवस्था मैं देख नहीं सकता।

15 कुन्ती ने कहा—हस्तिनापुर जाकर अनेक प्रकार से गान्धारी को समझाऊँगी।

16 पाण्डु ने कहा—उनके साथ मिलना उचित है। हे वामा ! जाओ ! तैयार होकर जाओ।

17 अपने पुत्रों को लेकर उसके पास जाओ। युधिष्ठिर को देखकर वह आंख की पट्टी खोल देगी।

18 कुन्ती धृतराष्ट्र, गान्धारी और उनके पुत्रों को देखने के लिए हस्तिनापुर जाने की तैयारी कर रही है।

19 कुन्ती ने माद्री को समझाया कि तुम स्वामी की सेवा करती रहो। मैं शीघ्र ही लौट आऊँगी।

20 देखना तुम्हारा यह रूप, सौन्दर्य, गुण और लावण्य देखकर कहीं तुम्हारे पास पाण्डु उपगत न हों।

21 सुनकर भावमयी माद्री हँसी। हे देवी ! इस बात के लिए मैं वज्र कवच के समान हूँ।

22 कुन्ती ने कहा—हे मदना ! तुम देख-रेख करना। इतना समझाकर कुन्ती ने हस्तिनापुर के लिए प्रस्थान

किया।

23. उसके साथ शिवपाद नामक एक शबर एक कांवरी अंगूर का फल लेकर गया।

24 युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल चारों पुत्रों को सर्वांग अलंकार-भूषित किया।

25 वनस्थली में रहने वाले एकडा नामक भेड़े को अर्जुन और नकुल ने वाहन बनाया।

26 दो सफेद अरबी घोड़े पर भीम और युधिष्ठिर ने आरोहण किया।

27 28 एक शुभ योग में पुत्रों के साथ कुन्ती हस्तिनापुर के मार्ग पर पहुंची।

30 कुन्ती ने राधा कन्या को यमुना स्नान करते हुए देखा। कुन्ती को अत्यन्त भक्ति और सम्मान के साथ उसने प्रणाम किया।

31 कुन्ती ने उसे दोनों गले से लगा लिया। बार-बार कुशल वार्ता पूछती है।

32 राधा ने कहा—तुम्हारे चारों पुत्र ना। भ्राता के ऊपर वर्गों में समर्थ है। हे माता ! हम धन्य हैं।

33 कुन्ती ने हर्षित होकर पूछा हे राधा ! तुम्हारे पुत्र पुत्रियां कितनी हैं ?

34 राधा ने कहा—तुम प्राण से भी प्यारी हो। प्रिय लोगों के सामने कैसे झूठ बोला जा सकता है।

35-37 बाईस वर्ष पहले की बात है। यमुना में स्नान करते समय एक पेटिका जल में डूबती उतराती आ रही थी। महातेज के कारण [illegible] अग्नि की तरह दिखाई देती थी। उस मैंने स्नान के समय [illegible] किन्तु अत्यन्त भाग्य होने के कारण [illegible] पकड़ लिया।

38 पाषाण से टकराकर वह दो भागों में फट गया। उससे एक बच्चा बाहर निकला।

39 बालादित्य की तरह वह लोहित आभा था। श्रवण में अमृत कुण्डल और उसका शरीर वज्र कवच से निर्मित था।

40 उसके तालु पर अभेद-कवच मणि विराजित थी। ऐसे एक पुत्र को मैंने पाया।

41 राधा की बात सुनकर माहेश्वरी ने हंसकर पूछा—प्राप्त करके तुमने उसे यत्नपूर्वक पाला ?

42. हे सखि ! दुर्वासा ऋषि ने मुझे कुमारी अवस्था में जपमाली दिया। विद्या परीक्षा के लिए मैंने आदित्य को मन्त्र शक्ति से स्मरण किया।

43 मुझसे दिनकरनाथ ने शृंगार-रति की। उससे एक आशु पुत्र उत्पन्न हुआ। कर्ण के रास्ते पुत्र पैदा हुआ। इसलिए उसका नाम कर्ण रखा।

45 लाज के कारण उसे पिता के घर नहीं ले गयी। पेटिका में भरकर यमुना में फेंक दिया।

46 मेरा सफलता तुम्हारा परम भाग्य हुई। वह मेरा पुत्र तुम्हें प्राप्त हुआ।

47 मेरा ज्येष्ठ पुत्र तुम्हारा प्रिय हुआ। हे राधा ! मुझे कर्ण को लाकर दिखाओ।

48 सजयकुमारी सुनकर प्रसन्न हुई। कुन्ती को देखकर अपने अन्तःपुर को गयी।

49 राधा कर्ण को बुला लायी। कुन्ती ने पूछा—हे बेटा ! मुझे पहचानते हो ?

50 [illegible] कर्ण ने [illegible] सब जानता हूं।

51 [illegible] मन्त्र [illegible] स्मरण किया

52 कुमारी ने तुम्हारे साथ [illegible] संभोग किया। कान के रास्ते में पैदा हुआ।

53 माटी की पेटिका बनाकर मुझे उसमें यत्नपूर्वक रखा। मुझे निराश करके तुमने जल में प्रवाहित कर दिया।

54 जल-प्रवाह में उसे घूमता हुआ मैं [illegible] हजार योजन दूर हस्तिनापुर में आकर लगा।

55 राधा कन्या ने मेरा पालन-पोषण किया। मेरा नाम उन्होंने अपने अनुसार राधेय रखा।

56 धृतराष्ट्र के पुत्र दुर्योधन के साथ मेरी एकात्म अभेद प्रीति है।

57 मेरा ज्येष्ठा नक्षत्र राशि है। गान्धारी का पुत्र भी ज्येष्ठा नक्षत्र राशि में उत्पन्न हुआ।

58 इस प्रकार हम दोनों एक राशि के कारण मित्र हुए। दिन-रात एक दण्ड भी अलग नहीं हो सकते।

59. कुन्ती देवी ने चारों पुत्रों को बुलाकर कहा—बेटा ! कर्ण के चरणों में प्रणाम करो।

60 यह तुम्हारा सहोदर ज्येष्ठ भ्राता है। मैं तुम सबकी गर्भधारिणी मां हूं।

61 माता की बात से नकुल, अर्जुन, भीम और युधिष्ठिर ने कर्ण के चरणों में दण्डवत् किया।

62 ज्येष्ठ भ्राता कर्ण ने बहुत आशीर्वाद दिया। यह देखकर राधा का मन हर्षित हुआ।

63 कर्ण ने माता को प्रणाम करके पूछा कि इन पुत्रों का नाम क्या-क्या है ?

65 माता ने कहा—इस ज्येष्ठ पुत्र का नाम युधिष्ठिर है। कर्ण ने कहा—हे मा ! तुमने अशुद्ध काम किया। द्वितीय पुत्र को कैसे ज्येष्ठ नाम दिया ?

66 हे मा ! मुझे ज्येष्ठपन में तो नहीं रखा। इन पुत्रों के। मैं इन्हें संभालूंगा ?

67 तुमने माता होकर मुझे निराश किया। मैं बालक होकर इसे मान जाऊँगा ?

68 कुन्ती ने कहा तुम दुःखी मत होओ। मेरे साथ चलो, मैं तुम्हारा नाम ज्येष्ठ रखूँगी।

69 इन भाइयों में तुम्हें श्रेष्ठ बनाऊँगी और धृतराष्ट्र से पंचकुल माँगकर तुम्हें राजा बनाऊँगा।

70 तुम्हें ज्येष्ठ नाम उत्साहपूर्वक दूँगी। चारों भाई तुम्हारी सेवा कर रहे होंगे।

71 हे वत्स। हमारे साथ घर चलो। हस्तिनापुर पत्तन पर पाण्डु का दर्शन करोगे।

इसने द्वितीय पुत्र होकर ज्येष्ठ नाम का धारण किया। इसकी हत्या किये बिना तो मेरे ज्येष्ठ भ्रातृत्व में अधिकार नहीं मिलेगा ?

73 इसके रहते मेरी कुछ भी सम्मान नहीं है। यह जब मेरी हत्या करेगा तभी इसका नाम ज्येष्ठ होगा।

74 यह मेरा व्रत है कि इसके साथ मेरी समानता नहीं है।

75 इतना कहकर कर्ण क्रोधित होकर चला गया। एक क्षण के लिए कुन्ती के निकट आकर फिर नहीं आया।

76 पुत्रों को लेकर कुन्ती ने नारायण ! नारायण ! कहा।

कुन्ती का हस्तिनापुर में प्रवेश और गान्धारी से अन्ध- पट्टी छोड़ने के लिए अनुरोध ।

1 ब्रह्मवक्ता कहते हैं कि हे युगधर ! सुनो। कुन्ती धृतराष्ट्र के मन्दिर में प्रविष्ट हुई।

2 संजय ने धृतराष्ट्र को बताया कि कुन्ती चार पुत्रों के साथ उपस्थित है।

3 सुनकर गान्धारी उठी। कुन्ती ने चार पुत्रों के साथ गान्धारी को प्रणाम किया।

4 गान्धारसेन की कुमारी ने बहुत आशीर्वाद दिया। तुम व्रतधारिणी और सुहागिनी सुलक्षिणी हो।

5 पुत्रों को देखकर धृतराष्ट्र प्रसन्न हुए। चारों पुत्र ज्येष्ठ पिता के चरणों में उपगत हुए।

6 संजय ने कहा—हे धृतराष्ट्र ! सुनो। पाण्डु के पुत्रों को अपना पाद पृष्ठ दो।

7 पुत्रों को गोद में बैठाकर अन्ध राजा मन ही मन अत्यन्त प्रसन्न हुए।

8 पुत्रों सहित कुन्ती देवी ने धृतराष्ट्र और गान्धारी के चरणों में प्रणाम किया।

9 परस्पर कुशल-सम्भाषण हुआ। भीम, अर्जुन युधिष्ठिर और नकुल ने गान्धारी को प्रणाम किया।

10 कुन्ती ने कहा—हे बहन ! तुमने जो अन्ध पट्टी धारण की है वह क्या उचित है

11 गान्धारी ने कहा—मेरे स्वामी का जैसा योग है, मैं भार्या होकर उसका ही तो भोग करूँगी।

12 कुन्ती ने कहा—यह तो ठीक नहीं है। तुम पुत्रों की सम्पत्ति को नहीं देख पाओगी ?

13 अत्यन्त दुःख में पुत्रों का अर्जन किया। अब उनका पालन पोषण कौन करेगा ?

14 गान्धारी ने कहा—धृतराष्ट्र के कर्मानुसार वे सब पुष्ट होंगे।

15 स्वामी को जब दृष्टि नहीं है, तो मेरी दृष्टि की क्या आवश्यकता है ? जब स्वामी नहीं देख पाता तो मैं क्या देखूँगा ?

16 तुम मुझसे ऐसी बात मत करो। अभिमान छोड़ दो। मेरे पुत्र की तुम्हीं मां हो।

17 गान्धारी ने किसी का अनुरोध नहीं माना। सुदृढ़ पूर्वक धृतराष्ट्र की मनोहारिणी ने अन्ध-पट्टी धारण कर ली।

18 दुर्योधन और युधिष्ठिर के सहित एक सौ पाँच भाई कुतूहलपूर्वक खेल रहे हैं।

सहदेव का जन्म

1 ब्रह्मवेत्ता कहते है, हे युगेश्वर ! सुनो । माद्री को अकेले छोडकर कुन्ती चली आयी।

2 महारात्रि में वह माद्री पलग पर उत्तान होकर सोई थी।

3. हाथ में दुर्वासा की जपमाली लेकर पचमन से धर्म देवता का स्मरण करती है।

4 यह सब वेश-भूषण और शृगार करके नव वधू की तरह अपने पति के साथ रमण करने की इच्छा करती है।

5 हे महाराज पाण्डु ! तुमने ऐसा कार्य क्या किया कि शृगार रति के समय हृदय मे बाणाघात होने का वर प्राप्त किया ?

6 हाथ मे दुर्वासा की जपमाली लेकर स्वामी के मन्द भाग्य की चिन्ता करती है।

7 जपमाली लेकर पाण्डु का नाम जप करने लगी। पाण्डु नृपति अन्तरिक्ष मे उपस्थित हुए।

8 देखकर माद्री भयभीत हुई। हे स्वामी ! तुम्हारी हमारी प्रतिज्ञा विच्छेद की है।

9 तुम क्या अर्द्धरात्रि मे मेरे पास आये ? तुम्हारा आना देखकर हे स्वामी ! मै भयभीत हुई।

10 पाण्डु ने कहा—दुर्वासा की जपमाली लेकर तुमने मेरा स्मरण किया। इसका मै कैसे उल्लघन कर सकता ?

11 देवता भी जिसका उल्लघन नहीं कर पाते। मै जानता हूँ। मेरी मूर्धा फट जायगी और मै अवश्य प्राण विसर्जित कर दूगा।

12 मेरा मृत्युकाल अवश्य निकट है। मृत्यु के समय पुत्रो के साथ मेरी भेट नही हुई।

13 इस मन्त्र का उल्लघन करके कोई नही बच सकता। शृगार-रति करने पर भी इसी क्षण मर जाऊँगा।

14 अकारण क्या इच्छापूर्वक रमण का त्याग करूगा ? हे सुन्दरी ! तुम्हारी मनोवाछा क्या नही पूरी करूँगा ?

15 माद्री ने कहा—मैने तुम्हारा स्मरण तो नही किया था। आश्चर्य है, हे नृपति ! तुम मुझसे कैसे मिले ?

16 विशेषत यह निर्जन स्थान है। कुन्ती भी नहीं है। माद्री को पाण्डु नृपति ने जोर से पकडा।

17 पलग पर बलपूर्वक बैठाया। शाप का भय छोड़कर स्वामी ने माद्री को गोद मे ले लिया।

18 माद्री ने नारायण को रक्षा करने के लिए स्मरण किया। मै अबला स्त्री मात्र हूँ और यह बलवान पुरुष है।

19 पुरुष के बलात्कार से स्त्री कैसे अपनी रक्षा कर सकती है ? विधाता का तो यही विधान है।

20 माद्री ने धर्म ! धर्म ! पुकारा । पाण्डु ने माद्री को गोद मे लेकर विवस्त्र किया।

21 जहाँ यह पाप है, वही कामदेव की अनीति है। अनग सेनापति ने सब कुछ डुबा दिया।

22 विनाश के समय बुद्धि विपरीत हो जाती है। पाण्डु ने माद्री को बलपूर्वक पकडा।

23 माद्री के साथ हास-उल्लास आदि काम विधान के साथ सभोग आरम्भ हुआ।

24 तीन सौ वर्षो तक पाण्डु राजा का रमण नही हुआ। महायोग से उसने काम का सवरण किया था।

25 अत्यन्त रमण से प्रीति बढ गयी। बहुत शृगार रति होने मे भी वह अतृप्त और अशान्त रहा।

26 28 दैव का विधान कौन टाल सकता है ? जिसे अग्निकार ऋषि ने शाप दिया था, उस अप्रतिम रति के समय आलिगन अवस्था मे आश्चर्यजनक रूप से अकाल बाण लगा।

29 उस ऋषि का शाप अन्यथा नही हुआ। पाण्डु के सभोग के समय अद्भुत बाण लगा।

30 आकाश से राजा की पीठ पर बाण पडा और माद्री के हृदय से होकर बाहर निकल आया।

31 महातेजस्वी, बलवान, अभिशप्त बाण के आश्चर्यजनक आघात से पाण्डु और माद्री का प्राण-हरण हुआ।

32 सम्भोग काल समाप्तप्राय हुआ। वीर्य-प्रदान दोनो के लिए सकट बना।

33 माद्री के गर्भ मे जो वीर्य पडा, वह अमोघ रेत विनष्ट नही हुआ।

34 बाणाघात से माद्री की मृत्यु हुई। एक आशु पुत्र उत्पन्न हुआ।

35 36 अगस्त्य कहते है—हे महाराज ! सुनो। सोम वश के राजा पच कटक अधिपति ने कर्म से जिस विपत्ति

का अर्जन किया, कैसे वह अन्यथा होगा ?

37 अलंघित-कर्म-दोष से पाण्डु का नाश हुआ। कोई पुत्र की देख-रेख करने वाला नहीं रहा।

38 एक पुत्र भूमि पर पडा हुआ दु:ख से रो रहा है।

39 इस समय सवेरा हुआ। दिनकरनाथ ने उदयगिरि की प्रदक्षिणा की।

40 वह त्रैलोक्य ब्रह्माण्ड का पाप-पुण्य, विपत्ति-सम्पत्ति समस्त को देखने वाला दिव्यचक्षु है।

41 सूर्य ने एक लाख योजन से देखा कि माता-पिता एक पुत्र को जन्म देकर मर चुके है।

42 गहन घोर अरण्य मे शतशृंग पर पाण्डु ने प्राणों का त्याग किया।

43-44 उस अपार गहन वन मे व्याघ्र, भालू, गृद्ध, प्रेत आदि असख्य जीव-जन्तु भरे रहते है। ये सब मृत पिण्ड को घेरकर बाल शिशु को खाने की इच्छा करते है।

45 बाल शिशु ने जागकर मुह उठाकर देखा। सभी पिशाच जीव जल गये।

46 कुमार के नेत्र का तेज कालानल की तरह है। शून्य-पुरुष गण आकाश मे नम्र हुए।

47 आकाश मे सकल चिन्ताहारी चिन्तामणि पुरुष गगन विहारी ने देखा।

48-49 अश्विनीकुमार को बुलाकर आदेश दिया—शीघ्र जाकर अपने पुत्र को सभालो। वह पुत्र तुम्हारे लिए आवश्यक होगा।

50 विरचि नारायण की आज्ञा मानकर अश्विनीकुमार तत्क्षण जाकर मिले।

51 देखा कि पुत्र उत्तान होकर पड़ा है। उसे गुणग्राही ने गोद मे लिया।

52 उत्पन्न होते ही पुत्र सभाला नही गया। क्षीर-पान न पाकर पुत्र मर गया।

53 अश्विनीकुमार ने बाल शिशु को गोद मे लिया। देखा कि पुत्र के शरीर मे प्राण नहीं है।

54 महात्मा आदित्य के पुत्र कान मे फूंकते है किन्तु मृत शिशु मे चेतना नही दिखाई देती है।

55 अश्विनीकुमार सोचते है, मैने बुरा काम किया। अकारण आकर मृत-पिण्ड को स्पर्श किया।

56 गगन से कर्तार सूर्य ने मुझे आज्ञा दी कि अपने पुत्र को जाकर सँभालो।

57 आते ही पुत्र का प्राणनाश हुआ। मेरे स्पर्श करते समय उसमे प्राण नही थे।

58 इस मृत पिण्ड को फेंककर बाहर जाने से देवता लोग मुझे देखकर हसेंगे।

59 यह सोचकर उस कुमार महात्मा ने अपने शरीर से अर्द्धात्मा को बाहर किया।

60 उस मृत पिण्ड मे जीव को प्रविष्ट कराया। अश्विनी कुमार ने जीवन-न्यास मन्त्र का पाठ किया।

61 अमृत भाव से देखकर कान मे फूका। उस गतात्मा पुत्र ने आंख खोलकर देखा।

62 अपने से जीव बाहर करके भरने के कारण अश्विनी कुमार ने उसका नाम सहदेव रखा।

63 सन्तुष्ट होकर अश्विनीकुमार ने वर दिया—हे कुमार ! हाथ को देखने पर तुम्हे तीन कोटि ब्रह्माण्ड दिखाई देगा।

64 हे सहदेव ! तुम भूत-भविष्य-ज्ञाता हो। मन्त्री होकर तुम गत-आगत सब जान सकोगे।

65 तुमसे जो गत-आगत की बात पूछेगा, उसे तुम अवश्य भूत-भविष्य की बात बता दोगे।

66 अश्विनीकुमार ने उसे ऐसा वर दिया। महात्मा की प्रसन्नता से वह महाज्ञानी हुआ।

67 कुमार ने विश्वदेवता से अनुरोध किया कि कुन्ती के आने तक पुत्र की देख-रेख करो।

68 सहदेव को विश्वदेवता को देकर अश्विनीकुमार आकाश मे चले गये।

पाण्डु की मृत्यु पर शोक-प्रकाश

1 वैवस्वत मनु ने कहा—हे अगस्त्य मुनि ! कुन्ती हस्तिनापुर में प्रविष्ट हुई।

2 कर्ण के नगर से माता शीघ्र आयी। सजय ने धृतराष्ट्र के आगे यह बात कही।

3 पाण्डु की पटरानी तुमको आशीवाद है कि तुम पुत्रवती और यशवती हो। ऐसा धृतराष्ट्र ने कहा।

4 गान्धारी उनके पास बैठी है। आनन्दित होकर दोनों

कुशल-सम्भाषण करते हैं।

दो-तीन दिन तक कुन्ती रही। दुर्योधन के साथ चारों भाई खेलते रहे।

अगस्त्य ने कहा—हे दण्डधारी ! सुनो । कुन्ती गंगा में स्नान करने के लिए गयी।

अनेक अलंकार धारण करके कुन्ती ने श्री हस्त में दर्पण लेकर अपने रूप का प्रतिविम्ब देखा।

देखा कि सिन्दूर का तिलक विवर्ण हो गया है। इसको देवी ने मन ही मन अपशकुन समझा।

सोचती हुई कुन्ती ने कहा कि मेरा शरीर कैसा दिखाई दे रहा है ? मेरे शरीर में विधवा के लक्षण प्रकटित हो रहे हैं।

10. वन में क्या पाण्डु की विपत्ति पड़ी या कुन्तिभोज राजा को कोई विपत्ति पड़ी।

11. जन्मदाता पिता और स्वामी देवता के जीवन-अवसान से नारी विवर्ण दिखाई देती है।

12. मैं तो पाण्डु को वन में छोड़कर आयी। उन्होंने कहीं माद्री के साथ उत्सुक होकर क्रीड़ा-रमण तो नहीं की ?

13. सच में मेरे स्वामी ने रमण की इच्छा की ? ऋषि का शाप तो मिट नहीं गया था।

14. मैं छोड़कर आयी। अब तो देख नहीं पाऊँगी। अनेक दुःख से दोनों आँखों से आँसू बहने लगे।

15. कुन्ती गान्धारी के पास पहुँची और कहा कि पाण्डु को वन में क्या विपत्ति पड़ी।

16. मैं शीघ्र शतशृंग पर्वत पर जा रही हूँ। कैसे स्वामी का मुख देखूँगी।

17. गान्धारी ने कहा—ऐसा नहीं होगा । पाण्डु नरनाथ त्रैलोक्य में अजेय हैं।

18. शब्दभेदी वह महात्मा त्रैलोक्य का अधिकारी है। तीनों भुवनों में उसके समकक्ष कौन है ?

19. कुन्ती ने कहा—विपत्ति पड़ी। माद्री के साथ पाण्डु विनष्ट हुए।

20. हे गान्धारी ! यह मेरा अनुमान सच है। अब मैं माद्री और पाण्डु को खोजकर क्या पा सकूँगी ?

21. देवी कुन्ती शीघ्र तैयार हुई। धृतराष्ट्र ने विदुर आदि को साथ जाने के लिए आदेश दिया।

22. हे संजय ! भीष्म आदि को साथ लेकर तुम वधू के साथ शतशृंग पर्वत पर जाओ।

23-24. कुन्ती से विचित्र बात धृतराष्ट्र ने कही कि तुम पाण्डु को साथ लेकर लौट आओ। विदुर ने कहा—हे भाभी! तुम्हारे बेटे यहीं रहें। भूरिश्रवा बाद में तुम्हारे पुत्रों को ले जायेंगे।

25. धृतराष्ट्र और गान्धारी के पास बेटों को रखकर कुन्ती ने कहा—पुत्र ! तुम लोग यहीं खेलो। मैं नदी से लौटकर आती हूँ।

26. पका केला, गुड़ मिष्ठान आदि दिव्य पदार्थों को बच्चों के हाथ में देकर उन्हें बहलाया।

27. बेटों को छोड़कर कुन्ती चली गयी। दुर्योधन और दुःशासन आदि के साथ बच्चे खेलते रहे।

28. भीष्म, भूरिश्रवा, संजय, विदुर सभी रथारूढ़ हुए।

29. कुन्ती विमान पर चढ़कर शतशृंग पर्वत का रास्ता दिखाती है।

30. वृन्दारक वन में वह प्रविष्ट हुई। दसों दिशाओं में वन में अशुभता दिखाई दे रही है।

31. हाय ! हाय ! स्वामी ! कहकर कुन्ती रो रही है। इन आँखों से क्या मैं पाण्डु को जीवित देख सकूँगी ?

32-33. शिवपाद नामक शबर जो कुन्ती के साथ गया था, उसकी भार्या पाण्डु राजा की मृत्यु के बाद हस्तिनापुर को जा रही थी।

34. कुन्ती ने पूछा—हे किरातनारी ! पाण्डु और माद्री का शुभ समाचार कहो।

35. पोटोला नामक किरातनी ने कहा कि तुम्हारे पाण्डु और माद्री शतशृंग पर्वत पर अच्छी प्रकार से हैं।

36. कुन्ती सुनकर प्रसन्न हुई। हृदय की विकलता और व्यथा छोड़ दी।

37. शीघ्र पर्वत पर उपस्थित होकर देखा कि पाण्डु और माद्री अचेतन होकर पड़े हैं।

38. माद्री नंगी होकर पलंग पर पड़ी हुई है। कालचक्र के वाणों से दोनों का शरीर विद्ध है।

39. विदुर देखकर मूर्च्छित हुए। विमान से कुन्ती वज्राघात की तरह गिर गयी।

40. हाय ! हाय ! नाथ ! कहकर कुन्ती विलाप करती है। गुणवान नाथ ! क्यों व्रतोलंघन करके विनष्ट हुए।

41. स्वामी को गोद में लेकर हृदय से लगाया और कहा कि शतचन्द्र वदन की विपत्ति मैं यदि स्वयं ले पाती।

42. हे मेरे प्राणबल्लभ ! दुःखिनी के साथी ! मृतपिण्ड को लेकर देवी भूमि पर पछाड़ खाने लगी।

43. हाय ! हाय ! जगत् वन्दन नाथ ! तुमने मेरी कैसी गति की ? गम्भीर समुद्र मे मेरा बडा डुबा दिया।

44. हे प्राणगुरु ! तुमने धर्म से राज्य की रक्षा की ? किन्तु धर्म-अधर्म का विचार न करके पाप किया।

45. मे पापाणी तुम्हे छोड़कर चली गयी। माद्री ने ऐसा अद्‌भुत कर्म किया।

46. हे प्राणनाथ ! हे पचकटक के अधिकारी ! मुझे शाक सागर मे छोडकर चले गये।

47. कुन्ती की गोद से मृत शव को छीनकर भीष्म ने अपनी गोद में ले लिया।

48. भूरिश्रवा ने पाण्डु को गोद म लेकर कहा कि हमारे रहते हे वत्स ! तुम अग्नि मे जलाये जाओगे!

49. तुम जम्बूद्वीप के अलकार थे। तुमको अग्निकार ऋषि ने इस अवस्था मे पहुचाया।

50. इन लोगो का दुःख देखकर विश्वदेव सहदेव को ले आये।

51. विश्वदेव ने उसे कुन्ती की गोद मे रखकर कहा कि यह पाण्डु का पुत्र है और इसका नाम सहदेव है।

52. माद्री के साथ रमण करने के समय यह पुत्र पाण्डु के विनाश काल म उत्पन्न हुआ।

53. अश्विनीकुमार ने मन्त्र फूककर अपना अर्द्ध जीवन देकर इसे पाला है।

54. सत्व को छोड़कर इस पुत्र को जीवन दान किया है। इसलिए इसका नाम सहदेव रखा।

55. सुनकर कुन्ती ने दुःख पर नियन्त्रण किया और पुत्र को प्यार किया।

56. भूरिश्रवा पाण्डु को गोद मे लिये थे। शोकाकुल होकर हृदय से लगाया।

57-58. भूरिश्रवा ओर भीष्म ने दुःख का सबरण किया। कुन्ती ने कहा कि तुम जो चला गया, उसे खोजकर नही पा सकती। पाण्डु को गंगा के किनारे ले जाकर चितारोहण कराया गया।

59. चन्दन, अगरु देवदारु और शाल काष्ठ से चिता बनाई गयी। आग प्रज्ज्वलित होने से तेज विस्तृत हुआ।

60. महामन्त्र वाक्य से अग्नि को दान देकर स्वर्ण और गोधन दान किया।

61. सुवर्ण पलग पर मृतशव सुलाया गया। दोनों ओर से भीष्म और भूरिश्रवा ने पकडा।

62. पाण्डु का मुख देखकर अत्यन्त दुःखी हुए। तुम ब्रह्माण्ड धारण-क्षम होकर भी इतने निराश्रित हुए।

63. पाण्डु नृपति को अग्नि में लिटाकर तीन बार प्रदक्षिणा की।

64. कुन्ती ने माद्री को गोद मे लेकर दूसरी चिता के ऊपर सुलाया।

65. श्मशान भूमि म शिशु सहदेव को लेकर, तिल, कुसुम, घृत के साथ मुखाग्नि दिलवाई।

66. पाण्डु आर माद्री को जलाया गया। पुत्र को लेकर हर्षित होकर पाण्डु के दुख को भुलाया।

67. पाण्डु आर माद्री दोनो के अग्नि-संस्कार के बाद जल डालकर अग्नि शान्त की गयी।

68. श्मशान भूमि से सहदेव और कुन्ती ने लौटकर शीतल द्रव्य को ग्रहण किया।

69. भूरिश्रवा ने कहा—बेटी। शीघ्र चलो। धृतराष्ट्र के पास जाकर प्रेत कर्म किया जायेगा।

70. कुन्ती ने कहा—हे गुरुजन वृन्द ! आप लोग हस्तिनापुर को जाइये। मै शतशृंग पर्वत मे क्यो जाऊगी ?

कुन्ती का शतशृंग पर्वत पर वास और भीष्म द्वारा धृतराष्ट्र को पाण्डु की मृत्यु का संवाद-कथन

1. बेटो को मेरे यहाँ भेज दे। मै क्या गान्धारी के साथ रह सकूगी ?

2. गान्धारी दुष्ट स्वभाव की है। उसके बेटे भी दुराचारी है।

3. मैं उनके पुत्रो को सँभाल नही पाती थी और वे भी मेरे भीम की जिद को सह नही सकतीं।

4. सोदर सोदर म क्या संघर्ष होगा ? बेटो को लेकर मैं यहाँ निश्चिन्ततापूर्वक रहूगी।

5. भीष्म को प्रणाम करके कुन्ती ने कहा—पुत्रों को शीघ्र

यहाँ भेज दें।

6 भीष्म ने कहा—हे बेटी ! ऐसा नही होगा। तुम पाण्डु के तेज से यहाँ निश्चित थीं।

7 पाण्डु त्रैलोक्य मे असम्भव शब्दभेदी थे। उन्होंने दुष्ट राक्षसों और असुरो का शिरश्च्छेदन किया था।

8 इतना बड़ा क्षत्रिय कर्म की दुर्बलता से अभिशाप से मुक्त नही हो सका।

9 निर्दोष होकर पाण्डु मारा गया। हे बेटी ! तुम राज्य को चलो। इस वन मे आग लगे।

10 यह स्थान छोडकर मेरी जाने की इच्छा नही है। तुम मुझे वहाँ ले जाकर रक्षा नही कर सकोगे।

12 इस समय मेरे स्वामी तो नही है। यह पर्वत ही मुझे धारण करके रखा है।

13 मेरे स्वामी का शव यहीं पड़ा रहा। पतकार्य पूरा हुए बिना कैसे जाऊगी।

14 हे देव ! तुम अभी जाओ। पुत्रो को लेकर शीघ्र जाओ।

15 कुन्ती की आज्ञा से भीष्म चल गये।

16 भीष्म, भूरिश्रवा और विदुर के साथ लौट गये है। कुन्ती को वन मे छोड़ आये।

17 हस्तिनापुर मे जाकर भीष्म धृतराष्ट्र के सामने बैठे।

18 सजय ने कहा—हे धृतराष्ट्र। भीष्म महारथी आपके पास पहुँचे।

19 स्थान छोडकर धृतराष्ट्र उठे और भीष्म के चरणो मे सिर रखा।

धृतराष्ट्र का शोक

1 तुम शतशृग पर्वत को गये किन्तु पाण्डु राजा को साथ क्या नही ले आये

2 भीष्म ने कहा—वह वहीं रह गया। ईश्वर ने उसे शतशृग पर्वत पर रहने के लिए ही बनाया।

3 मै इसी समय बच्चो को लेकर शतशृग पर्वत पर लौट जाऊगा।

4 पाण्डुकुमारो ने दुर्योधन के साथ खेलते हुए भीष्म की बात सुनी।

5 समाचार पाकर बच्चे आगे। भीष्म ने देखकर बच्चो को गोद में उठाया।

6 युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन और नकुल को देखकर भीष्म के नेत्रों से आँसू बहने लगे।

7 अनेक प्रकार से धृतराष्ट्र ने पूछा किन्तु अतिशय दु:ख के कारण भीष्म कुछ न कह सके।

8 धृतराष्ट्र ने कहा—हे महागुरु ! क्यों तुम दु:खार्त होकर कुछ नही बोलते ?

9 भीष्म ने कहा—हे राजपुत्र ! बडी अकानीय बात है। तुमसे अकेले मे कहूँगा।

10 11 युधिष्ठिर ने भीष्म की गोद मे बैठकर पूछा कि मेरी माँ यहा कब तक आयेगी ? भीष्म ने कहा कि पीछे आ रही है। पुत्रो को उन्होंने भोजन के लिए भेज दिया।

12 भीष्म ने एकान्त मे धृतराष्ट्र से कहा—हे कुरुनाथ ! पाण्डु पर विपत्ति पड़ी।

13 गान्धारी के अन्ध-पट्टी बाँधने की खबर पाकर कुन्ती पुत्रो को लेकर इधर आयी।

14 माद्री के साथ अपार प्रेम-भाव बढने के कारण पाण्डु रति-शृगार को छोड न सके।

15 16 महानिशि मे दोनो के रतिकाल मे अग्निकार महर्षि के अभिशाप से अन्तरिक्ष से बाणाघात होने से दोनो का शरीर विद्ध हो गया।

17-18 पाण्डु और माद्री के विनाश के समय एक आशु पुत्र पैदा हुआ। अश्विनीकुमार ने उसे प्राणदान देकर उसका नाम सहदेव रखा।

19 हम लोगों ने शतशृग पर्वत पर पहुचकर पाण्डु का ऐसा वियोग देखा।

20 कुमार को विश्वदेव संभाल रहे थे। कुन्ती की गोद में लाकर उन्होंने बाल शिशु को दिया।'

21 कुन्ती को बहुत दुःख हुआ। पाण्डु की अवस्था देखकर किसी को धैर्य नहीं रहा।

22 चिता मे अग्निरोपण करके पाण्डु और माद्री का दहन किया गया।

23 कुन्ती शतश्रृग पर्वत से नही आयी। उसके पुत्रो को लेकर मै यहाँ से जाऊगा।

24 भीष्म के मुख से ऐसी बात सुनकर अन्ध राजा को गम्भीर शोक हुआ।

25 धृतराष्ट्र ने गान्धारी को बुलाकर कहा कि पाण्डु को देखने के लिए पुत्रों को लेकर हम शतश्रृग पर्वत पर जायेगे।

26 स्वामी से गान्धारी ने कहा कि मुझसे छिपाने का क्या कारण है ?

27 पाण्डु को मरे पॉच दिन हो गये। अब हम वहॉ जाकर क्या करेगे ?

28 आशा छोडकर निराश हुए। दुःख के साथ उपवास किया।

29 पुत्रो को न जनाकर गुप्त रूप मे पुरोहितो को बुलाकर प्रेतकर्म किया।

30 हे देव भीष्म ! तुम जाकर कुन्ती और कुमार को ले आओ।

31 गान्धारी ने कहा—मै शतशृग पर्वत पर जाऊॅगी। कुन्ती का दुःख शमित करके उसे साथ लेकर आऊगी

32 लडको का दुःख न देख सकने के कारण धृतराष्ट्र गुप्त रूप से प्रेत कर्म करते है।

गान्धारी का कुन्ती को लाने के लिए शतशृंग पर्वत पर गमन और व्यास को कुन्ती का उपदेश

1-2 इसके बाद हे नृपनाथ ! सुनो। ऐसे ही कुछ दिन बीत गये। धृतराष्ट्र और गान्धारी मन मे विचार करते है। गान्धारी ने हस्तिनापुर से प्रस्थान किया। आगे भीष्म हजार रथ लेकर जाते है।

3-4 गान्धारी एक सहस्र दासियो के साथ कुन्ती को लाने के लिए जाती है।

5 व्यास शतशृग पर्वत पर पहुचे। उन्हे देखकर कुन्ती देवी ने प्रणाम किया।

6 पुत्र को लेकर व्यास की गोद मे दिया। पुत्र को देखकर मुनिवर आनन्दित हुए।

7 हर्षित होकर तपोनिष्ठ ने पुत्र को आशीर्वाद दिया। भूत-भविष्य, गत-आगत दृष्टिगोचर हो।

8 कुन्ती को व्यास ने समझाया—हे बेटी ! पाण्डु के अभाव मे दुखी न हो।

9 हे कुन्ती ! दुःख छोडो। पुत्रो को लेकर सुखपूर्वक राज्य करो।

10 कुन्ती ने कहा—मै प्रयाग जाऊँगी और बट वृक्ष के नीचे प्राण विसर्जन करूंगी।

11 व्यास ने कहा—यह ठीक नही है। आत्मघात से अनेक पाप होते है।

12 पॉच पुत्रो को अपने कर्म से प्राप्त किया। हे बेटी ! ये पचकटक का धर्म से पालन करेगे।

13 हे परम साध्वी कुन्ती ! तुम क्यो दुःखी होती हो ?

14 यह सारा ससार मायाजाल मे फॅसा है। विपरीत मायापाश देव की रचना है।

15 हे देवी कुन्ती ! सुख से दिन बिताओ। तुम्हारे पुत्र ससार मे पाप भार निवारण करेगे।

16 पैदा हुए लोगो की अवश्य मृत्यु होती है। इस प्रकार चार युगो से आना-जाना लगा है।

17 इस प्रकार पथ श्रान्त होकर लोग एक के पीछे एक चल रहे है। आने जाने वाले लोगो को क्या रोका जा सकता है ?

18 तुम देवी कुछ भी भ्रान्ति मत करो। धर्म रहने पर ही सब कुछ पुण्य होता है।

19 हम सब प्रलय काल मे विष्णु के पिजर मे प्रविष्ट हो जाते है। किन्तु कालागित मरण से बहुत भय करते है।

20 जो प्राणी सुख-भोग की इच्छा करते है, उन्हे मृत्यु पास आकर अवश्य समाप्त कर देती है।

21 जो चला जाता है, वह खोजने से नही मिलता है। हे आर्या ! जीवित पुत्रो को अब यत्नपूर्वक सॅभालो।

22 युधिष्ठिर नाम का जो तुम्हारा पुत्र है, वह प्रत्यक्ष निरजन देवता है।

23 भीम का चरित्र अपरिमित है। अर्जुन नारायण का पचभूत है।

24 नकुल नामक पुत्र आकाश मे स्थित अश्विनीकुमार द्वारा सरक्षित है।

25 ये बाल सुत इस प्रकार के लक्षणो से युक्त है। तुम स्त्री होकर इस तथ्य को नही जानती हो।

26 हे बेटी ! जब बच्चे बडे हो जाये तब तीर्थ जाने की इच्छा करना।

27 तुम्हे स्त्री का धर्म प्राप्त हो। पुत्रो को लेकर राज्य-प्राप्ति की चिन्ता करो।

28 ज्ञान से सारी बातो को भूल जाओ। हमको देखकर अपने स्वामी की चिन्ता छोड़ दो।

29. इस प्रकार व्यास ने बहुत समझाया। सेनादल लेकर भीष्म शीघ्र प्रविष्ट हुए।

30 व्यास के चरणो मे सबने प्रणाम किया। व्यास ने सबको शुभाशीर्वाद दिया।

31 उद्दालक पुरोहित होकर वेद वाक्य का उच्चारण करके प्रेतकर्म का विधान करते है।

32 उन्होने श्मशान मे श्राद्ध कर्म किया। ग्यारहवें दिन घृत भोजन किया।

33 घृत लेकर संजय हस्तिनापुर को गये। वहां धृतराष्ट्र ने पुत्रो को बहका रखा था।

34 युधिष्ठिर और दुर्योधन मे आनन्द नहीं थी। खेल रस मे माता-पिता को भूल गये थे।

35 वन मे रहते समय भरी माता नहीं थे। धृतराष्ट्र को देखकर वे आनन्दपूर्वक रहते थे।

36 युधिष्ठिर ने धृतराष्ट्र की गोद मे बैठकर कहा-हे पिता! मुझे आज्ञा दो, मै माता पिता के पास जाऊगा।

37 धृतराष्ट्र ने कहा- हे तनय! तुम्हारे माता पिता यही आ रहे है।

38 गान्धारी उन्हे लेने के लिए गयी है। वन को क्या जाओगे!

39 अपूर्व पदार्थ और समस्त अलंकार पुत्रो को राजदेव ने दिया।

40 धृतराष्ट्र जिस प्रकार सम्भव था उसी प्रकार बहलाने का प्रयास करते है। उनको वस्त्र पहनाये।

41 धृतराष्ट्र धर्मदेव का स्मरण करते है। बाल शिशुओं की ऐसी दशा हुई।

42 प्रजापति ने ऐसा विधान किया। पिता के अभाव मे पुत्र कैसे बचेंगे?

43 धृतराष्ट्र ने कहा—हे देव! तुमने सचराचर का सृजन किया। बिना अपराध के ससार का विनाश क्या करते हो?

44 संसार को इतना कष्ट न दो। क्या तुम लोगो को जन्म देते हो?

45 उत्पन्न किया तो प्राणी को मृत्यु क्यो दी? तुमसे अधिक मित्र कौन है?

46 जब रचा तो उसे चिरन्तन होना चाहिए। महत् लोगों की बात क्यों अन्यथा होती है?

47 यह अद्भुत माया समझ मे नहीं आती। यम का लिखा हुआ तो समझ मे नही आता।

48 बडे-बडे देवताओ ने बडा-बडा काम किया और उसके विनाश का विधान भी किया।

49 कोई नाम मात्र के लिए भी नही बचता। अनजाने में प्राणी क्यों मरते है—ऐसा हम सोचते हैं।

50 अव्यय पुरुष जिसकी सुदृढ रूप मे रचना करता है, कृतान्त पुरुष उसका विनाश करता है।

51 कराल बल्लभ यमराज के पाद-पद्म मे मेरी सेवा है। शूद्रमुनि सारलादास को चिरायुष दो।

धृतराष्ट्र के शोक से युधिष्ठिर का तत्त्व-ज्ञान से सान्त्वना-प्रदान

1 अगस्त्य कहते है कि हे मनु ज्ञाता! सुना। इसके बाद जो घटना घटी।

2 गंवार, मूर्ख और अज्ञानी लोग मृत लोगो के बारे मे चिन्ता करके शोक करते है।

3 युधिष्ठिर कहते है—हे राजदेव! जिसका जितना पुण्य है, उसी के अनुसार वह गति मुक्ति लाभ करता है।

4 पुत्रों को गोद मे लेकर धृतराष्ट्र जब स्मरण करते है, तब अन्धी आँखों से दु:ख के आँसू निकले।

5 युधिष्ठिर ने कहा—हे ज्येष्ठ तात! पृथ्वी के पति होकर क्यो अप्रतिम दु:ख करते हो?

6 युक्तित जब राजा दु:खित होता है, तब उसकी बुद्धि नष्ट हो जाती है और शरीर रुग्ण हो जाता है।

7 अभिषिक्त राजा के भूमि पर अश्रुपात होने से इन्द्र वृष्टि नही करता और पृथ्वी फलदायक नही होती है।

8 नृपति होकर जब दु:खी होता है, तब उसकी सन्तान हानि होती और उसके कन्धे से लक्ष्मी चली जाती है।

9 राजा होकर जब दुःखी होता है, तब अग्नि देवता प्रथम हविर्भाग नही ग्रहण करता है।

10 राजा के धर्म से राज्य बचा रहता है। राजा के दुःख को देखकर सभी व्याकुल होते है।

11 राजा के अतिशय दुःखी होने से उसकी शक्ति क्षीण

होती है और शत्रु नहीं साधित होता है।

12 परराष्ट्र के गुप्तचर राज्य के विलक्षण संवाद को अपने राष्ट्र में भेजते रहते हैं।

13. तुम चक्षुहीन होने पर भी बलवान, पण्डित और भूत-भविष्य-ज्ञाता हो।

14 राजा को मिताहारी होना चाहिए। अनेक भार्याओं के साथ विलास करते हुए भी शृंगार-रति पर संयम करना चाहिए।

15-16 शस्त्र और शास्त्र में जगज्जयी होकर सन्यासिनी के साथ दूसरे राज्य का जीतना उचित है। पात्र मन्त्रियों को उसके आज्ञाधीन होना चाहिए।

17 प्रताप गुण को क्रोधरहित होकर वहन करना चाहिए। युद्ध के बिना परराज्य को ग्रहण करना चाहिए।

18 शस्त्र से दण्डित करने पर भी राजा को पाप नहीं लगता। यही क्षत्रिय कुल का विधान है।

19 इस प्रकार युधिष्ठिर ने धृतराष्ट्र से परामर्शपूर्ण बात कही। यह सुनकर राजा ने कहा—तुम और साथ पत्र

20 बाल्यकाल में ही तुम इतने ज्ञानी हो। बिना पढ़े ही कैसे तुम्हारा पाण्डित्य का विकास हुआ ?

21 युधिष्ठिर का गुण देखकर राजा के मन में ईर्ष्याजनित कलुष पैदा हुआ। अब पुनः मेरे पुत्रों का अस्तित्व क्या रहेगा ?

22 शिशु पुत्र जानकर मैं इसको देखता रहा था, किन्तु अन्त में उसने मुझे तत्त्वज्ञान सिखाया।

23 मन में क्रोध करके धृतराष्ट्र ने कहा—वत्स ! तुम्हारा पिता पाण्डु शतशृंग पर विनाश-प्राप्त हुआ।

24 अजय शब्द सुनकर आगे कहा कि हे वत्स ! थोड़ा-थोड़ा करके इसका आचमन करो।

25 युधिष्ठिर ने कहा—हे तात ! पाण्डु के लिए इतना सन्ताप क्यों कर रहे हो ?

26. पाण्डु पाप करने के कारण अल्पायु में विनाश को प्राप्त हुआ। हम पुत्रों के कृतित्व को वह देख भी न सका।

27 पाण्डु के मरने-जीने से हमें कोई चिन्ता नहीं है। हे ज्येष्ठ पिता ! तुम शुभ और कुशल से रहो।

28 हे तात ! रोगी अपण्डित और अज्ञानी लोग मृत व्यक्ति के लिए शोक करते हैं।

29 उसका पुण्य जब तक था, तब तक उसने भोग किया। उसका पुण्य क्षय होने पर वह विनाश को प्राप्त हुआ।

30 तुम्हारे-हमारे शोक करने से मरे लोगों का क्या लाभ होगा ? अपने कष्ट पाने से क्या पिता को पाओगे ?

31 युधिष्ठिर ने धृतराष्ट्र को समझाया। धृतराष्ट्र ने कहा—तुम पंचकटक को धारण करने वाले हो।

32 इस कुल में तुम महाप्राज्ञ पैदा हुए हो। ऐसा कहकर कुरुराज ने शोक-दुःख का त्याग किया।

33 एक सौ पाँच पुत्रों को लेकर धृतराष्ट्र ने गंगा में स्नान किया। उद्दालक ऋषि ने शत्रु धृतधारण कराया।

कुन्ती द्वारा शतशृंग की स्तुति और हस्तिनापुर गमन

1 अगस्त्य ने कहा—हे मन राम ! सुनो। पुत्रों को देखकर कुन्ती व्याकुल हो गयी।

2 कुन्ती से भरद्वाज ने कहा—हे बेटी ! हस्तिनापुर को चलो।

3 धृतराष्ट्र राजा तुम्हारी बाट जोह रहे हैं। तुम्हारे जाने तक अन्न नहीं ग्रहण करेंगे।

4 शायद तुम मेरी बात नहीं मानोगी इसलिए धृतराष्ट्र ने गान्धारी को भेजा।

5 वे तुम्हारे चारों पुत्र यहीं हैं। हे बेटी ! इस पुत्र को लेकर चलो।

6 गान्धारी ने कुन्ती को आलिंगनबद्ध किया। हे बहन ! हमारे साथ हस्तिनापुर को चलो।

7 कुन्ती ने कहा- तुम दयाशील मन हो। मेरे बेटों को तुम नहीं सम्भाल सकती हो।

8 अभी तो तुम कृपा कर रही हो किन्तु बाद में मुझे सम्भाल नहीं सकोगी—ऐसा कुन्ती ने कहा।

9 वे चारों पुत्र तुम्हारे पास रहें। इस छोटे पुत्र को लेकर मैं यहां रहूंगी।

10 कुन्ती के सामने गान्धारी ने कहा, राज्य छोड़कर वन में क्या दुःख झेलोगी ?

11 इस संसार के दुःख को न देखने के लिए मैंने अन्धी पट्टी बाँधी।

12. हम दोनों अन्ध-अन्धी अचल हो गये। तुम सभी पुत्रों को लेकर यत्नपूर्वक उनका पालन करो।
13. हम अन्धा-अन्धी कितने दिनों तक जीयेंगे ? तुम्हीं पंचराज्य की कर्त्री होगी।
14. एकमात्र पाण्डु को मैं नहीं दे सकूँगी। सभी बेटे तुम्हारे आज्ञाकारी होकर सेवा करते रहेंगे।
15. उठकर गान्धारी ने कुन्ती को गोद में लिया। यदि मैं तुम्हारी विपत्ति को ले पाती—कहकर उसके सिर को सहलाया।
16. गोद में लेकर कुन्ती को रथ पर बैठाया। सहदेव को देवी कुन्ती ने गोद में उठा लिया।
17. शिवपाद नामक शबर को बुलाकर कहा—बेटे ! तुमने पाण्डु की बड़ी सेवा की थी।
18. शतशृंग पर्वत पर तुम निश्चिन्त भाव से राज्य करो। इस धन-दौलत का आनन्दपूर्वक विलास करो।
19. सब क्षेत्रों में तुम्हारा पुरुषार्थ था। इसलिए पाण्डु तुमको जगतहित कहते थे।
20. तुम पाण्डु के इस वनस्थली में एकमात्र सखा थे। तुमने श्रद्धापूर्वक पाण्डु की सेवा की थी।
21. अब यहाँ हे किरात ! तुम महिपाल होकर रहो। चिरकाल हमें स्नेह करना।
22. तुम सब समय मुझे स्नेह करना। यहाँ आने पर मेरे पुत्रों को सँभालना।
23. हे महत् गिरिवर ! मेरे प्रति दया रखो। अपने पाप कर्म से मैं तुम्हारी सेवा नहीं कर पायी।
24. तुम हिमालय के पुत्र, गिरिजा के ज्येष्ठ भ्राता, शरण रक्षण स्वामी, महत् गिरिवर हो।
25. पर्वत की स्तुति करके जाती हुई शाकम्बरी पुनः-पुनः चार योजन तक पीछे उलट-उलट कर देख रही है।
26. भीष्म, भूरिश्रवा, गान्धारी और कुन्ती व्यास की पद-सेवा करके हस्तिनापुर चले।
27. व्यास ने कहा—हे गान्धारी ! देखना कि कुन्ती पाण्डु को याद न करने पावे।
28. यत्नपूर्वक इसका प्रतिपालन करना। तुम महान्, कुलीन और शुद्ध शालीन हो।
29. तुम्हारे भरोसे शतशृंग छोड़ रही है। मैं हस्तिनापुर को बीच-बीच में जाया करूँगा।
30. पराशर-सुत समझाकर लौटे। वे तपोवन्त प्रयाग में पहुँचे।
31. देवी कुन्ती हस्तिनापुर पहुँची। संजय ने धृतराष्ट्र से बताया।
32. हे धृतराष्ट्र ! मैं कुन्ती को लाई। यह कहकर सहदेव को उसके गोद में रखा।
33. हृदय में भरकर अन्धराजा ने कहा—अरे बेटा ! तुम अरक्षित हो गये।
34. सभी पाण्डु के दुःख को भूल गये किन्तु कुन्ती गुरु चिन्ता में मग्न रही।
35. युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव पाँचों भाई एकत्रित हुए।

राजकुमारों की विद्या-शिक्षा के प्रसंग-क्रम में द्रोण का जन्म उपाख्यान

1. अगस्त्य कहते हैं—हे युगपति ! सुनो। कुन्ती पाँचों पुत्रों को पालती हुई रही।
2. काशीपति नामक एक ब्राह्मण सब भाइयों के पाठगुरु हुए।
3. धृतराष्ट्र ने भीष्म से सभी पुत्रों को विद्या सिखाने के लिए आदेश देने को कहा।
4. भाग्यतः तुम विद्यागुरु हुए। प्रसन्न होकर पुत्रों को विद्या सिखाओ।
5. इन्द्रप्रस्थ के पास हिरण्यक वन में एक गोपनीय स्थान में एक अखाड़ा निर्मित किया गया।
6. भीष्म ने अखाड़े के विद्यागुरु होकर विद्या-शिक्षा आरम्भ की।
7. प्रातः और सन्ध्या दोनों वेला अखाड़ा चलता है। दोपहर सभी वीर पाठ पढ़ते हैं।
8-9. वैवस्वत मनु ने ब्रह्मचारी से पूछा—द्रोण क्यों विद्यागुरु हुए ? भरद्वाज के पुत्र कैसे वहाँ मिले ?
10. भरद्वाज के नन्दन गुरु द्रोण ने किस कारण से क्षत्रिय विद्या प्राप्त की ?
11. हे तपोवन्त ! इस प्रसंग को बताओ जिसे सुनकर मेरी भ्रान्ति दूर हो।

12-13. अगस्त्य ऋषि कहते हैं—हे वैवस्वत मनु ! सुनो।

13 कश्यप गोत्री शतमन्यु का पुत्र तारण महर्षि और उसके पुत्र अजमीढ़ थे।

14. अजामिल नन्दन कृतकेशी ने ब्रह्मराक्षस बनकर अनेक जीवों का नाश किया।

15 कृष्णावतार में देवहरि ने उसे मारा। इसका पुत्र सोवीर हुआ।

16 सौवीर के नन्दन नारायण महर्षि स्वयं तपोदन्त पुरुष थे।

17-22 नारायण के नन्दन मदन तपोवन्त और इसके नन्दन ब्रह्मवता, ब्रह्मवेत्ता के नन्दन महर्षि, इसके पुत्र भानुवन्त, इसके नन्दन सुदेव ब्राह्मण, इसके नन्दन मार्कण्डेय, इसके नन्दन तीणतज, इसके नन्दन शान्ति तपना, इसके नन्दन अरुण महर्षि, इसके नन्दन जलद, जलद के नन्दन द्वादश विश्वदेव मृगपाल होकर माधवा की सेवा करते थे।

23 द्वादश विश्वदेव ने रति संयम किया। निवारित होकर भी युवती की उपेक्षा की।

24 वे महायती नपुंसक पुरुष हुए। उन्होंने अनंग का दर्प-भंग करके उसे निराश किया।

25 व्यास ने कहा—अपुत्रिक को सजीवनी पुर जाने से यम दण्ड देता है।

26 इस संसार में अनेक पाप करने पर भी सन्तान होने पर यमराज दण्डित नहीं कर पाता।

27 धर्मदर्शी लोग विचार करके कहते हैं कि इसे दण्ड मत दो। मर्त्यलोक में इसकी सन्तान इसकी सद्गति करेगी।

28 पुत्र जब इसको धर्मपथ दिखायेगा, उस समय इसका माँस काट सकते हो।

29 अपुत्रिक होकर जो प्राणी मरता है, उसको यमराज शीघ्र लाकर दण्ड देता है।

30 पिता के मरते समय एक भी पुत्र रहने पर यमराज पिता को पुत्र के मरण पर्यन्त दण्ड नहीं दे पाता।

31 विश्वदेव ने व्यास पुराण से सुनकर पुत्र पैदा करने की मन में इच्छा की।

32 कामसेना नामक एक अप्सरा ने इन्द्र के साथ केलि क्रीडा की।

33. काम कुतूहल से प्रेमरस पूर्ण होकर उसने इन्द्रदेव के रति-शृंगार की निन्दा की।

34. इन्द्र ने कहा—तुम रमण में मेरे समतुल्य नहीं हो। यह कहकर निर्भय होकर कामिनी ने इन्द्र को नीचे कर दिया।

35 इन्द्र ने ऊपर चढ़कर उसके साथ रमण किया। इन्द्र देवता ने उसको क्षत-विक्षत किया किन्तु उठ नहीं सका।

36 जब वह बालिका काम स्खलित हुई तब अचेत होकर पलंग के नीचे लुढ़क गयी।

37 इन्द्र देवता के शरीर को नख-दन्त के आघात से विदीर्ण किया। सारे शरीर को कंटकित झाड़ी की तरह क्षत-विक्षत किया।

38 काम के समय कुछ भान नहीं हुआ। सम्भोग समाप्त होने के बाद इन्द्र का क्रोध बढ़ गया।

39 मैं रतिशास्त्र में निपुण वेश्याओं को क्षत-विक्षत करता हूँ। मैं नित्य एक हजार विलासिनियों के साथ रमण करता हूँ।

40 सम्भोग काल में मैं तुमसे हार गया। अमर लोक में तुमने पुरुष समाज को लज्जित किया।

41 मेरे शृंगार-रति से तुम तृप्त नहीं हुई। प्रेम बावली होकर तुम पृथ्वी पर घूमो।

42 सम्भोग-अतृप्त होकर लज्जा की उपेक्षा करके तुम मर्त्यलोक में विचरण करो। मर्त्यलोक में अपने स्तन, जंघा और भगद्वार को दिखाओ।

43 तुम नंगी होकर मर्त्यलोक में घूमोगी। सभी तुम्हारे स्तन और जंघा देखकर रति-शृंगार करेंगे।

44 मेरे रति-काल में तुम तृप्त नहीं हुई। तुम मर्त्यलोक में लाख इन्द्रियों का भोग करो।

45 विनीत होकर बाला ने इन्द्र से कहा—हे देवता ! मेरे इस अभिशाप का प्रतिकार करो।

46 स्त्री होकर मैं महागर्विता हुई। तुम्हारी रुचि-अनुसार मैं सेवा न कर सकी।

47 मैं अष्ट अमर नायिकाओं के मध्य एक ही हूँ। कितने समय में मेरा पाप खण्डित होगा।

48 भामिनी होने के कारण इन्द्र ने दया की। त्रेता युग में

तुम अनेक मन्द कार्य करोगी।

49. त्रेता युग में तेरह लाख पैंतालीस सहस्र वर्ष पर्यन्त युगान्त तक तुम्हें विश्व देवता रमण करेंगे।

50. उनके वीर्य से तुम्हें एक पुत्र पैदा होगा। उस पुत्र के दर्शन मात्र से तुम्हें स्वर्ग प्राप्त होगा।

51 इस प्रकार जब सुरेन्द्र ने अभिशाप दिया तभी से वह बावली होकर वन में घूमने लगी।

52 वह त्रिभुवनमोहिनी अपूर्व चपला नित्यप्रति नग्न

53 होकर जंघा और स्तन दिखाती हुई घूमने लगी। विश्व- देवता उसे नित्यप्रति देखते हैं। उसे जो देखता है वही इच्छापूर्वक रति करता है।

54 कामिनी को इन्द्र ने घोर शाप दिया। शाप के प्रभाव से वह बावली हो गयी।

55 57 एक शुभ योग के शुभ याग में उत्तराकुरु तीर्थ में शरीर प्रक्षालन करके वह बावली भ्रमण करती हुई जा रही थी।

58 कनक गिरि के ऊपर वह बाला गयी थी। द्वादश पुरुष उसे देखकर मूर्च्छित हो गये।

59 उन्होंने कहा कि यह तो स्वर्ग की अप्सरा है। अति गर्व के कारण वज्रधारी ने इसे शाप दिया।

60 इसके साथ सभी रमण करें। वह प्रतिक्षण शृंगार का ध्यान रखती है।

61 रति करके सभी एक साथ वीर्यपात करेंगे तो उसमें एक विलक्षण पुत्र उत्पन्न होगा।

62 वन और पर्वत पर युवती निकली है। विश्व देवताओं ने उसके साथ सहसा रमण किया।

63 द्वादश विश्वदेवताओं ने रति करके एक साथ ही भग-द्वार में वीर्यपात किया।

64 द्वादश वीर्य से एक ही गर्भ रहा। एक पुत्र के कारण वह महाभार को प्राप्त हुई।

65 68 महानिशि के एक शुभ योग में एक पुत्र पैदा हुआ। पेट विदीर्ण करके वह महाप्रतापी महाभीष्म रूपी कुमार उछलकर बाहर निकला।

69 बारह मुँह और बारह भुजा वाले उस कुमार का तेज आदित्य का लगा।

70 पुत्र उत्पन्न होते ही माता का विनाश हुआ। विश्वदेव ने उसे गोद में लिया।

71. महायती उसका स्वरूप देखकर सन्तुष्ट हुए। उसके बारह मुँह में सबकी मूर्ति दिखाई दे रही थी।

72. महाभार-प्राप्त माता नष्ट हुई। द्वादश विश्वदेवों का वीर्य उत्सर्ग किया।

73 पुत्र को गोद में लेकर द्वादश विश्वदेव ने प्रसन्नतापूर्वक उसका नाम भार-द्वादश दिया।

74 पुत्र पैदा करके उस बावली ने मृत्युपरान्त अमरलोक में सुरनाथ का दर्शन किया।

75 मघवा ने देखकर प्रसन्नतापूर्वक शापमुक्त किया।

76 विश्वदेव ने यदु महर्षि को बाल शिशु को पालने के लिए समर्पित किया।

द्रोण का जन्म और कृपी के साथ विवाह

1 अगस्त्य कहते हैं कि हे वैवस्वत मनु ! सुनो। इस भार द्वादश को ब्रह्मज्ञान प्राप्त होने लगा।

2 मन्द पाल ऋषि की भार्या भानुमती की नन्दिनी श्रिया सरस्वती थी।

3 भार-द्वादश को वह कन्या प्रदत्त हुई। विवाह-काल में उसने उसके साथ रमण नहीं किया।

4 ब्रह्मऋषि ने तपस्या से सुषुम्ना को ऊर्ध्व करके इन्द्रियों का निग्रह किया।

5 यह श्रिया अनवरत सेवारत रहती थी। इस प्रकार उसने सौ वर्ष तक शृंगार का वर्जन किया।

6 अगस्त्य प्रयाग तीर्थ में पुराण पढ़ रहे हैं कि जितनी भी तपस्या क्यों न हो, सन्तान न होने पर सद्गति नहीं होती।

7 पुराण वचन में ऐसी बात सुनकर सन्तानहीना श्रिया अत्यन्त दुःखी हुई।

8 पुराण सुनते हुए श्रिया ने अगस्त्य से पूछा—हे स्वामी पर-पुरुषगामी होने पर स्त्री को क्या दोष लगता है?

9 अगस्त्य ने कहा—बेटी ! कुछ उपाय है। आठ प्रकार से पुत्र उत्पन्न किया जा सकता है।

10 स्वामी के वीर्य से जब सन्तान उत्पन्न नहीं होती है, तब यज्ञ कराकर सन्तान उत्पन्न किया जाता है।

11 तब भी यदि सन्तान नहीं होती तो तीर्थाटन करके फल प्राप्त करता है।

12. इस प्रकार भी यदि सन्तान उत्पन्न नहीं होती तो उसे सम्पूर्ण रामायण सुननी चाहिए।

13. इतने पर भी सन्तान नहीं होती तो दूसरे व्यक्ति से सन्तान क्रय करके पालन करना चाहिए।

14. तब भी सन्तान न मिले तो व्यभिचारिणी होकर पर-पुरुषगमन करना चाहिए।

15 उसके बाद भी यदि सन्तान न हो तो धर्मार्थ से अपने भानजे का विवाह करना चाहिए।

16 उसके बाद भी सन्तान न हो तो अगस्त्य ने कहा कि पथ पर वृक्ष लगाना चाहिए या कि गहन वन-पथ पर पासारा चलाना चाहिए।

17 आठ प्रकार से सन्तानोत्पत्ति की कथा स्त्रियों को बड़ी दुर्लभ है।

18 इस प्रकार से भी जब सन्तान उत्पन्न नहीं होती तो प्रयाग मे आत्मोत्सर्ग करने से अपुत्रिक दोष से मुक्ति मिलती है।

19 प्रयाग त्रिवेणी मे आत्मोत्सर्ग द्वारा अपुत्रिक दोष-मुक्त होने के कारण यम देवता उसके पास नहीं आ पाते है।

20 अगस्त्य द्वारा कहे गये पुराण वाक्य सुनकर श्रिया सरस्वती दु:ख-विस्मृत हुई।

21 उसी वाछा वट-वृक्ष के नीचे बैठकर उस शुभकेशी ने द्रोण पक्षी को भक्तिपूर्ण भाव से याद किया।

22-24 महामती को एक सौ वर्ष तक ध्यान करते हुए देखकर महामती द्रोण पक्षी ने कहा –हे श्रिया तुम वर मांगो। भरद्वाज की प्रिया ने विनय-भाव से कहा–हे धर्म पक्षी! मुझे कृपया एक भिक्षा पुत्र दो।

25 अत्यन्त निरीह देखकर धर्म पक्षी ने दया की। उसका दु:ख देखकर हृदय में करुणा उत्पन्न हुई।

26 दक्षिण अंग से एक अण्डा देकर धर्म पक्षी ने कहा–हे बेटी ! इसे लेकर यत्न करो।

27 इससे जिस पुत्र की उत्पत्ति होगी वह महाभिज्ञ, बलवान और महाक्षत्रिय होगा।

28. वह श्रिया सरस्वती द्रोण पक्षी का अण्डा प्रयाग तीर्थ में नित्य हाथ में लिये रहती थी।

29 पन्द्रह वर्ष में वह अण्डा फूटा। उससे एक महा ब्रह्मपुत्र पैदा हुआ।

30-31. मनुष्य का शरीर, धर्म-पक्षी का मुख, रक्त ताम्रवर्ण का सूची-मुख ओष्ठ और दो हिलते हुए पंखों की तरह भुजाओं के साथ वह गरुड़ पक्षी की तरह दिखाई देता है।

32 भरद्वाज द्रोण पक्षी की कृपा से प्राप्त इस प्रकार के पुत्र को देखकर सन्तुष्ट हुए।

33. कुमार को तपस्वी ने हाथ में लेकर कहा–इसका नाम द्रोण होगा।

34 अगस्त्य ने कहा–हे वैवस्वत मनु ! वह द्रोण भरद्वाज के पुत्र हुए।

35 अत्यन्त यत्नपूर्वक कुमार का उसने पाला। सात वर्ष में उसका व्रतबन्ध किया।

36 शुक्र ब्रह्म का पुत्र महा तेजस्वी कुश-ब्रह्म प्रजापति गोत्र में उत्पन्न था।

37. कुश-ब्रह्म के पुत्र कृपाचार्य की कृपी नामक भगिनी थी।

38 उस सुन्दर कन्या को देखकर भारद्वाज ने उससे द्रोण का विवाह कराया।

39 कृपी कन्या को लेकर द्रोण बाल्यकाल से ही तीर्थाटन करने लगे।

40-41 चन्द्रभागा तीर्थ मे यमदग्निनन्दन परशुराम से उनकी भेट हुई। उन्होंने द्रोण से पूछा–हे पुत्र ! तुमने वेद का अध्ययन किया है। तुम महामंत्र ॐकार का उच्चारण तो करो। मं परीक्षा करूँगा।

42 भूत-भविष्यनयुक्त यजुर्वेद का उसने उच्चारण किया। महामन्त्र के आतंक से ब्रह्माण्ड कांप गया।

43 परशुराम प्रयाग तीर्थ में थे। उनका आसन कांप गया।

44. महाब्रह्म त्यागी को एक क्षण के लिए भी विश्राम नहीं है। सहस्र धर्मो का आरोपण करके उन्होंने तीर्थाटन शुरू किया।

45 मकर मास मे प्रयाग में दान देकर क्षत्रिय विद्या त्यागकर धर्म मार्ग में प्रवेश किया।

46. द्रोण आकाशगंगा के किनारे भिक्षा-पात्र लेकर धर्म-पालन करते हुए रह रहे थे।

47 दोनों प्राणी नगर में भिक्षा-वृत्ति से गंगा के किनारे जीवन यापन करते है।

द्रोण और द्रुपद का चरित्र

1 सुनो ! पांचाल देश के राजा द्रुपद का शत्रु किरात था।

2 ज्येष्ठ मास के शुक्ल पक्ष मे पंचमी के गुरुवार दिन किरात ने द्रुपद के ऊपर आक्रमण किया।

3 द्रुपद और किरात के बीच भीषण युद्ध हुआ। संग्राम मे अनेक योद्धाओ की मृत्यु हुई।

4 संग्राम मे द्रुपद परास्त हुआ। भग्नदण्ड होकर वह पांचाल नरेश भाग गया।

5 द्रुपद नरेश की पराजय और राज्य-त्याग के पश्चात किरात नृपति ने पांचाल देश पर अधिकार किया।

6 हत राज्य होकर द्रुपद भाग गये। गंगा के किनारे राज्यविहीन होकर रहने लगे।

7 महाभैरवी गंगा नदी के किनारे द्रोण उस समय वहां रह रहे थे।

8 नित्यकर्म समाप्त करके द्रोण तपस्यारत थे। इस समय द्रुपद आकर मिले।

9 द्रुपद ने द्रोण को प्रणाम किया। द्रोण ने उन्हें आशीर्वाद देते हुए कहा—हे राजा तुम्हें विपत्ति न पड़े।

10 तुम किस देश के वीर हो ? राज्य-भार छोड़कर क्या वनवास कर रहे हो ?

11 तुम्हारी काया बत्तीस गुणों से युक्त सुकुमार और सुन्दर है। तुम्हारा सिर आभूषणयुक्त है। अब तुम राज्य-भ्रष्ट दिखाई देते हो।

12 द्रुपद ने कहा—हे ब्रह्मचारी ! मै पांचाल देश का नृपति हूं।

13 मेरे राज्य पर किरात राजा ने आक्रमण करके बलपूर्वक मेरा सिंहासन और राज-भार ले लिया।

14 मै पंचकटक पांचाल का नृपति हूं और मेरा नाम द्रुपद है।

15 द्रोण ने विचार किया और कहा—तुम्हारा मेरा नाम एक अक्षर से शुरू होता है।

16 मेरा नाम द्रोण और तुम्हारा नाम द्रुपद है। हे राजा ! तुम मेरे मित्र हुए।

17 द्रुपद ने कहा—हे देव ! ऐसा कहने के लिए मै सक्षम नहीं हूं क्योंकि तुम तो महाभिज्ञ और महाब्रह्म हो।

18 द्रुपद ने कहा—प्रभु और दास का एक ही नाम होने से क्या उनमें मैत्री होगी ?

19 द्रोण ने कहा—हे मित्र ! तुम क्या पागल हो गये हो ? नाम की मित्रता बड़े भाग्य से मिलती है।

20 तुम्हारी मेरी मित्रता है। यह सुनकर द्रुपद नृपति आनन्दित हुए।

21 द्रोण दान रूप मे अत्यधिक दान पाते थे। संग्रह द्वारा उन्होंने धनार्जन किया।

22 द्रोण की भार्या माहेश्वरी कृपी अटूट विद्या की अधिकारिणी थी।

23 उसके दक्षिण हाथ मे शंख-पद्म निधि थी। इसीलिए दान देने पर उसके धन मे कमी नहीं होती।

24 एक पात्र मे अन्न पकाने से ही एक पूरी सेना को खाने भर का भोजन हो जाता था। कितना भी परोसने पर समाप्त नहीं होता था।

25 वह महासती नित्य सबकी आवश्यकता भर अन्न देती थी।

26 द्रुपद पांचाल देश को भुलाकर सभी स्त्री-पुरुष और बच्चों को लेकर वहां निश्चिन्त भाव से रहने लगे।

27 द्रोण सबको आवश्यकतानुसार अष्ट रत्नो का आभूषण देते हैं।

28 द्रोण की कृपा से द्रुपद चौबीस वर्षो तक निश्चिन्त रूप से वहां रहे।

29 अगस्त्य ने कहा कि हे युगपति ! मैत्री योग से ऐसी प्रीति हुई।

30 किरात राजा पांचाल देश मे रहकर अत्यन्त कुशलतापूर्वक राज्य पालन करता है।

31 उसने अपने राज्य का कार्यभार मन्त्री के ऊपर सौंप दिया था। उसके राज्य पर दरदसेन ने आक्रमण किया।

32 ब्रह्म वैतरणी के किनारे रणस्तम्भ पर्वत के नीचे शत्रुदल उपस्थित है—ऐसा दूत ने निवेदित किया।

33 किरात के सामने दूत ने कहा—अब तुम पांचाल देश मे क्यों रहते हो ?

34 तुम्हारे देश पर दरद सेन ने आक्रमण किया। ऐसे समय में अपने देश को छोड़कर दूसरे देश में सम्पत्ति भोग का अर्थ क्या है ?

35-36 सदा यही शक्ति और आयु नहीं रहेगी। जिसका राज्य है, वह अवश्य ले लेगा। यह बात चिरन्तन है।

37 किरात राजा ने तुला मास के शुक्ल पक्ष मे दशमी के दिन पांचाल राज्य को छोड़ दिया।

38 अपने देश मे लौटकर दरद सेना के साथ अपरमित युद्ध किया।

39 पाचाल देश से राजा के लोगो ने आकर द्रुपद को सूचना दी।

40 हे राजा ! जिस किरात राजा ने हमारे राज्य को अधीन किया था, वह अपने राज्य को लौट गया।

41 हे देव ! हमारे देश को तुरन्त लौट आओ। यह सुनकर द्रुपद आनन्दित हुआ।

42 द्रोण के चरणो मे प्रणाम करके द्रुपद ने कहा कि हे देव त्यागी ! तुम्हारे द्वारा मेरी विपत्ति खण्डित हुई।

43 किरात राजा ने मेरे देश को छोड दिया। हे मित्र ! चलो, हम अपने राज्य मे चलेगे।

44 यह सुनकर द्रोण बहुत आनन्दित हुए। हे नृपमणि ! तुम्हारे धर्म के कारण राज्य प्राप्त हुआ।

45 सम्पत्ति और विपत्ति सामयिक है। प्राणी को सदा विपत्ति नही मिलती।

46 हे मित्र ! तुम अपने राज्य मे जाकर उत्तम विधान से शुभयोग मे राज्य सिहासन पर बैठो।

47 अब तुम जाकर अपने राज्य पर कुशलतापूर्वक शासन करो। प्रजागण तुम्हारा भजन करे और अमात्य सेवा करे।

48 आज्ञानुसार प्रकृति नियोजित होकर चलो। तुम राज्य और सम्पदा का भोग करो।

49 जब तुम मुझे याद करोगे, तब मै तुम्हारे मगलविधान के लिए तुम्हारे राज्य मे प्रवेश करूगा।

50 द्रुपद राजा ने द्रोण को प्रणाम करके कहा कि आपकी कृपा से ही तो सब कुशल है।

51 हे मित्र ! मेरे ऊपर जब इतनी कृपा है तो मेरे साथ चलो। मेरा मन राजस्व मे नहीं वरन् सर्वदा तुममे लगा हुआ है।

52 द्रोण ने कहा कि मुझ पर जोर मत डालो। मै एक सही बात कहूँगा।

53 कृपी आशावती हुई है। चार मास मे उसकी प्रकृति आलस्यपूर्ण हो गयी है।

54 गर्भवती स्त्री को स्थानान्तरित तो नही कर सकता हूँ। हे मित्र ! पत्नी के प्रसवोपरान्त जाऊँगा।

55 मुस्कुराते हुए द्रोण ने कहा—राज्य-भोग मे लिप्त होकर मुझे पहचान सकोगे ना ?

56 द्रुपद ने कहा—जब मुझे धर्म छोडेगा तभी मै ऐसा कर्म करूँगा।

57 उस समय मै तुम्हे नही पहचान सकता और विश्वास नही कर सकता, तब मेरा सचमुच नाश हो जायेगा।

58 द्रोण ने कहा कि तुम मन मे अन्यथा मत लो। तुम्हारी मेरी जन्म-जन्म की ऐसी प्रीति है।

द्रुपद द्वारा द्रोण का अपमान

1 तपोवन्त ने अनेक आशीर्वादो के साथ प्रचुर धन दिया।

2 समदण्ड लेकर द्रुपद ने पाचाल देश मे प्रवेश किया।

3 पाचाल कटक मे अपना महल स्थापित किया। समस्त सामन्त, मन्त्री और परिजनो ने सेवा की।

4 निश्चिन्त होकर द्रुपद ने अनवरत राज्य पालन किया।

5 महाभैरवी गगा के किनारे रहते हुए द्रोण प्रातःकाल कृपी से पुराण कथा कहते है।

6 पत्नी के साथ रहते हुए द्रोण ने गगा के किनारे पुत्र-सन्तानोत्पत्ति के लिए विधिपूर्वक पूजा की।

7-11 मातृ-गण्ड दाप मे पुत्र के उत्पन्न होते ही माता का विनाश हुआ। इसीलिए द्रोण ने पुत्र का नाम अश्वत्थामा रखा।

12 महात्मा अत्यन्त विकल हुए। अति यत्न से पुत्र अश्वत्थामा को पाला।

13 पुत्र-प्रसव करके कृपी नाश को प्राप्त हुई। द्रोण ने घृताहुति देकर भार्या का दहन किया।

14 द्विजवर ने अग्निसस्कार किया। पुत्र के मुँह में पानी का फेन दिया।

15 वन मे अमृता नामक लता है। उसका रस देकर बाल शिशु को जीवित रखा है।

16 मन मे द्रोण ने विचार किया कि मुझ पर विपत्ति पड़ी।

17 मै मित्र द्रुपद के पास इस पुत्र को लेकर जाऊँगा।

उससे एक धेनु गाय माँगकर लाऊँगा।

18 एक आश्रम भी माँगूँगा। पुत्र के बड़ा होने तक आराम से वहाँ रहूँगा।

19. विपत्ति काल मे मित्र ही सहायक होता है। सहोदर के आश्रय मे विपत्ति काल मे रहना उचित नही है।

20 पत्नी-विहीन होने की चिन्ता छोड़कर द्रोण पांचाल राज्य को चल दिये।

21. गोद में पुत्र अश्वत्थामा को लेकर द्रोण ने द्रुपद के राज्य में प्रवेश किया।

22. हाथ मे दण्ड-कमण्डल और पुत्र को लिये हुए द्रोण को सिंहद्वार रक्षकों ने नही पहचाना।

23 अनेक रथ, गज, अश्व आर सैन्य के कोलाहल के आघात से द्रोण निष्प्रभ हो गये।

24 द्रोण ने द्वारपाल की ओर देखकर कहा—तुम राजा के पास जाकर बताओ।

25 मै राजा का मित्र हूँ। मुझे दर्शन करने के लिए राह नो दोग।

26 उसे सुनकर द्वारपाल हँसने लगे आर कहा कि हे अज्ञानी ! पागल ब्राह्मण ! भाग जाओ।

27 तुम दरिद्र परदेशी भिखारी ब्राह्मण हो। तुम राजा को मित्र कहने मे भय नही करते हो ?

28 29 कुछ लोगो ने कहा—हमारे प्रभु जब हतराज्य होकर देशान्तर म थे उस समय शायद मित्रता हुई हो। हे ब्राह्मण ! तुम ठहरो, मे समाचार देता हूँ।

30 रथ, गज, अश्व और सेना के समारोह के निकट तुम बैठो। तुम्हे दर्शन कराऊगा।

31 देवार्चन समाप्त करके राजा भोजनोपरान्त अन्तःपुर में पाक के ऊपर विराजमान थे।

32 इसी समय द्वार नायक ने शीघ्र जाकर सिर पर हाथ रखकर प्रणाम किया।

33 हे पाचालाधिपति देव ! सावधान होकर सुनिये। आपके मित्र आये हुए ह।

34 द्रुपद ने कहा कि मित्र के साथ कितने रथ, अश्व, गज और पदातिक है ?

35 द्वारपाल ने कहा—हे देवराज ! एक दरिद्र ब्राह्मण गोद मे एक शिशु पुत्र लेकर आया ह।

36 गाँजा पीकर मदमत्त अवस्था मे वह सिर को नीचे करके बैठा है।

37 इस समय चर ने यह बात कही। नृपति द्रुपद ने यह सुनकर क्रोध किया।

38 मेरे राज्य में क्या आमात्य-मन्त्री नहीं है कि यह दरिद्र ब्राह्मण मेरा मित्र बनता है ?

39 इतनी बात का भी तुम्हें विचार नही है कि मुझे आकर यह खबर दे रहे हो।

40 महाप्रभुत्ववंश राजा ने कहा—इसके केश पकडकर मेरे निकट से ले जाओ।

41 दूत ने जाकर द्वारपालों को बताया कि राजा अनेक दण्ड देंगे।

42 अपराध के लिए दूत ने अत्यन्त क्रोधित होकर दौडकर द्रोण के केश पकडे।

43 हे दानभक्षी ब्राह्मण ! तुम कौन हो ? तुमने अकारण क्यों अपने को राजा का मित्र बताया ?

44 तुम्हारे लिए हमने बिना दोष के ताड़ना पाई। अपने धर्म के कारण हम इस छोटे से अपराध से बच पाये।

45 किसी ने क्रोध से उसके केश पकडे। किसी ने लात मारी और किसी ने मुक्का तथा कोहनी से आघात किया।

46 कोई मुँह मे कपडा ठूँस रहा है। कोई धूल फेंक रहा है। बच्चा चिल्लाकर रो रहा है।

47 कोई हँसकर गाल पर तमाचा मारता है। कोई पाँव से उसे ढकेल रहा है। कोई घूँसा मारता है।

48 कोई ईंट पत्थर मे पत्थर लेकर मार रहा है। कोई धूल लेकर उसके ऊपर फेंक रहा है।

49 प्रहरी लोग उसे घेरकर मार रहे है। बड़े वेग से नगर से उसे बाहर कर दिया।

50 विकल होकर द्रोण ने पुत्र का हृदय से लगा रखा है। उसके ऊपर पत्थरों की वर्षा हो रही है।

51 अत्यन्त अपमान पाकर वे लौट गये। प्रहरी गण उन्हे नगर से बाहर छोड़कर लौट आये।

52 कोसी नदी के किनारे द्रोण बैठकर सोचते है, अकारण मै मूढ चाण्डाल के पास गया था।

53 हे विधाता ! तुमने ऐसी रचना की कि राजा होने पर लोग इतने घमण्डी हो जाते है।

54 एक क्षण का उपकार मन में रात-दिन रहता है। मैने

तो वन में उसको अत्यन्त यत्नपूर्वक रखा था।

55 मैंने इसको चौबीस वर्षो तक सँभाला। इतने उपकार का परिणाम यही मिला।

56 शास्त्र का विचार मिथ्या हो गया। मेरा धर्म परापकार के कारण नष्ट हुआ।

द्रोण की परशुराम से अस्त्र-प्राप्ति

1 अपने कर्म की निन्दा करके सन्तप्त द्रोण मणिकार्णिका घाट पर केश मुण्डन करने के लिए जा रहे है।

2 जो केश कोटि तीर्थ मे धुला था उसे पापिष्ठ चाण्डालो ने कसकर खींचा।

3 प्रयाग त्रिवेणी मे जाकर स्नान करूगा। वहॉ दु सह पाप का विसर्जन करूँगा।

4 ऐसा सोचकर भरद्वाज सुत अश्वत्थामा को लेकर प्रयाग तीर्थ मे गये।

5 उस महातीर्थ मे परशुराम रह रहे थ। व्याकुल द्रोण ने परशुराम के गृह को देखते हुए वेदोच्चारण किया।

6 यजुर्वेद के पैतीस श्लाको का चुनकर पाठ किया। परशुराम उसे सुनकर स्तम्भित और अवाक् हुए।

7 रुको रुको हे ब्राह्मण ! तुम महा ब्रह्मवेदी हो। इतन बड ब्राह्मण होकर तुम इतने दु खी क्यो हो ?

8 द्रोण ने कहा—हें जमदग्निपुत्र ! सुनो। मै भरद्वाज का नन्दन द्विज गोत्री पाठ-ऋषि हूँ।

9 हे परशुराम ! मे बहुत लाञ्छित हुआ। मेरे मान की रक्षा करके धर्म का उद्धार कर।

10 परशुराम सुनकर आनन्दित हुए। हे द्विज ! तुमने मेरी प्रार्थना की, इसलिए मै प्रतिज्ञा करता हूँ, वर मागो।

11 दक्षिणावर्त्त. शख मे तिल और जल लेकर परशुराम ने द्रोण के हाथ में दिया।

12 परशुराम ऊपर हाथ करके सकल्प के साथ सत्य-सत्य कहकर देते है।

13 नीचे हाथ करके द्रोण ग्रहण करते है। हे द्विजवर ! तुम आवश्यक वर मागा।

14 हे अनल नारायण ! तुम मुझ पर प्रसन्न होकर अपनी सब शस्त्र विद्या दो।

15 परशुराम ने कहा—हे द्विजवर ! तुमने जो मागा, वह मेरी शस्त्र-विद्या और मन्त्र तुम्हें प्राप्त हो।

16 नीचे हाथ पसारकर द्रोण ले रहे हैं। ऊपर हाथ करके परशुराम ने धनुष और तरकस प्रदान किये।

17 21 परशु, मुद्गर, कुठार, शक्ति, भाला, तलवार, कटारी, बाका, वज्र बाण, अग्निवाण, अमोघ शक्ति, कालफास, नागफॉस, ब्रह्म बाण, अग्नि गदा, हिमगदा, गरुण बाण, पन्नगबाण, सूर्यावर्त्तगदा, ब्रह्मगदा, ब्रह्मशक्ति, रुद्रशक्ति, महाकाल शक्ति, मूषल शक्ति, काईसिका शक्ति, सूर्याव्रत शक्ति और अनल शक्ति आदि समस्त शस्त्र ओर शास्त्र प्रसन्न होकर परशुराम ने द्रोण को दिये।

22 परशुराम ने कहा—यह मेरी प्रतिज्ञा है कि बिना साधना के तुम्हे समस्त विद्या प्राप्त हो।

23 परशुराम ने धर्मार्थ समस्त विद्या दान की। द्रुपद को दमित करने के लिए द्रोण ने उसे ग्रहण किया।

24 परशुराम की आज्ञानुसार द्रोण ऋषि बिना साधना के क्षत्रिय हुए।

25 आकर्षण, ग्रन्थि, मुट्ठी, प्रतिज्ञा प्रभृति युद्ध कला को तुष्ट हाकर रेणुनकान्दन ने द्रोण को दिया।

26 परशुराम ने अपनी साधित सारी विद्या को तुष्ट होकर द्रोण को दिया।

27 मेने बहुत काल में जो विद्या सिद्ध की थी, अब बिना साधना के हे ब्राह्मण ! तुमने उसे प्राप्त किया।

28 हे उच्च वर्शीय विद्वान् ब्राह्मण ! तुम्हे सारी विद्या प्राप्त हो।

29 30 परशुराम ने कहा—हे समस्त शास्त्र ! मेरे आदेशानुसार तुम जैसे त्रैलोक्य मे विहार कर रहे थे, उसी प्रकार द्रोण को प्राप्त हो। द्रोण शस्त्र-गुरु के रूप मे जगद्-विख्यात हो।

31 हे द्रोण ! तुम्हे शस्त्र-चालन मन्त्र प्राप्त हो।

32 जगत् मे सभी इसे परशुराम की विद्या कहे। सभी तुम्हारे गुरुपन के प्रति भक्ति रखे।

33 तुम मेरी सारी विद्या लेकर द्रोण गुरु बनो। योद्धा कुल मे सभी तुम्हारी वन्दना करे।

34 द्रोण ने कहा—हे परशुराम ! आप मुझसे प्रसन्न हुए। विनीत होकर मै आपकी वन्दना करता हूँ।

परशुराम-वन्दना

1-2. हे कालान्तक, क्षत्रियवंशध्वंसकारी, महात्मा पुरुष, निर्दयी, पापरहित, शुद्ध स्फटिक तेजपूर्ण, वीर, सुन्दर जगमोहन नाथ ! तुम्हारी जय हो।

3. हे परमब्रह्म पुरुष, विद्वान् ! तुम्हारे दर्शन से पाप दूर होता है और प्रसन्नता से कार्य सिद्ध होता है।

4-10. कृपासागर नाथ, दुःखी और दरिद्र के आश्रय, भू-भारहर्त्ता, पुरुषराज अजपा ध्यानकारी, जम्बू-पटल-रुचिर, युगान्तक पुरुष, सत्य युग भोगी, सात्विक परम योगी, आकर्षक, दयालु, सुविकट दृष्टि, पातक मोचक, विक्रमी, भयंकर, शस्त्र विद्या में सहस्र अर्जुन के दर्प-ध्वंसकारी, सुरदर्पध्वंसी, तीक्ष्ण परशुधारी, आज्ञादाता प्रभु, अजेय, एक वाण से दिग्भंजनकारी, सर्वसर्जनाकारी, कृपासागर, दरिद्र-दुःख विध्वंसी, वांछा सागर नाथ ! मेरी मनोवांछा पूरी करो।

11. हे अत्यन्त भयंकर पुरुष ! पिता की आज्ञा का पालन करते हुए तुमने माता और भाई का वध किया।

12. हे देव ! तुम संसार का समस्त दर्प भंजन करते हो। प्राणोद्धारक नाथ ! तुम दुःसह दर्प का गंजन करते हो।

13. हे अभय सदाशिव, सदानन्द पुरुष ! इस सचराचर पृथ्वी के तुम एक ही देव हो।

14. तुम सबसे शक्तिवान हो। सभी तुम्हारे सामने निष्प्रभ हैं। सप्त ब्रह्माण्ड में तुम्हारे समकक्ष कोई नहीं है।

15-16. हे अनन्त कोटि मूर्ति ! अंशावतार ! परशुराम अवतार में क्षत्रिय विनाशक हे नाथ ! तुमने पिता के लिए क्रोध सहन नहीं किया और तुमने इक्कीस बार क्षत्रियों का विनाश किया।

17. किस योग से तुम्हारा नाम महाभयंकर परशुराम हुआ?

18. हे देव ! तुम्हारे दर्शन से अनेक पातक दूर होते हैं। पाप निवारणकारी देव ! तुम यम का दर्प-भंजन करो।

19-20. जब तक चाँद-सूरज रहेंगे, तब तक परशुराम नाम मेरे हृदय में रहेगा। जन्म-जन्म से मैं पद्मपाद का ध्यान करता हूँ। शूद्रमुनि सारला दास परशुराम की सेवा करता है।

द्रोण का हस्तिना[पु]रागमन

1. अगस्त्य कहते हैं–हे वैवस्वत मनु ! सुनो। भरद्वाज नन्दन ने परशुराम की वन्दना की।
2. जमदग्नि के पुत्र ने समस्त विद्या दी। द्रोण महर्षि के लिए विद्या सार्थक हुई।
3. गुरु द्रोण ने शस्त्रों को लेकर सोचा कि जब मुझे प्राप्त हुए तो इनकी उपयोगिता जानना आवश्यक है।
4. द्रुपद ने मुझे अत्यन्त कष्ट दिया। मेरी अत्यन्त दुर्गति हुई और शरीर-व्यथा मिली।
5. मुझे द्रुपद के साथ संग्राम करना होगा। किन्तु इस बाल-शिशु के रहने पर युद्ध नहीं कर सकूँगा।
6. हस्तिनापुर में कृपाचार्य के घर में पुत्र को छोड़ दूँगा।
7. पुत्र को रखकर आऊँगा और पांचाल देश में द्रुपद के साथ युद्ध करके उसे निराश करूँगा।
8. इतना सोचकर हाथ में धनुष-तरकस और गोद में अश्वत्थामा को लेकर हस्तिनापुर को गये।
9. कृपाचार्य के घर जाकर प्रविष्ट हुए। आचार्य देखकर आश्चर्यचकित हुए।
10. कृपाचार्य ने बहन को न देखकर पूछा कि तुम क्यों कृपी को नहीं लाये ?
11. हे द्रोण ! यह पुत्र किसका है ? तपीपन छोड़कर क्यों धनुप-तूण धारण किया ?
12. कृपाचार्य ने अनेक प्रकार से पूछा। सम्मानपूर्वक पास में आसन पर बैठाया।
13. स्नान कराकर तृप्तिकर भोजन कराया। महायती को आचमन कराकर आसन पर बैठाया।
14. कृपाचार्य ने द्रोण से पूछा कि इन शस्त्रों को तुम्हें किसने दिया ?
15. स्वस्थ होकर प्रसन्नतापूर्वक द्रोण कहते हैं–मुक्ति के कारणस्वरूप इस पुत्र को मैंने प्राप्त किया।
16. हे कृपाचार्य ! मुझ पर विपत्ति पड़ी। इस पुत्र का प्रसव करके कृपी मृत्यु को प्राप्त हुई।
17. कृपाचार्य यह सुनकर विषण्ण हुए। तुम बिना मतलब

ही देश-देशान्तर घूमते रहे।

18. यदि तुम यहाँ निवास करते तो मेरी बहन क्यों मृत्यु को प्राप्त होती ?

19 अपनी भार्या लघुमणि को कृपाचार्य ने द्रोण के सामने अश्वत्थामा को समर्पित किया।

20 इस पुत्र को तुम यत्नपूर्वक पालो। अपने पुत्र से इसको भिन्न मत समझना।

21 इतना सुनकर लघुमणि ने पुत्र को गोद मे लेकर आश्वासनपूर्वक मुख का चुम्बन लिया।

22 सभी शस्त्रो को लेकर द्राण महाक्षत्रिय वन मे नित्यप्रति विद्या-साधना करते है।

23 परशुराम की शिक्षा से शरो को चलाते है। वाणाघात मे सभी जीव गिर पड़ते है।

24 हिरण, कृष्णसार, गेंडा को मारकर कृपाचार्य के घर कबरी मे लादकर लाते है।

25 शिवपुर नगर के कौशिक ब्राह्मण की कन्या द्रोण को प्रदत्त हुई।

26 उस कन्या का नाम हरिना है। वह कुमारी द्रोण की वनिता हुई।

27 फाल्गुन शुक्ल पक्ष के रविवार के षष्टी तिथि मे कृपाचार्य ने तपस्वी द्रोण को बुलाया।

28 चलो वारणावन्त अखाडे मे जाकर हम राजकुमारो का शर-सधान देखेगे।

29 कृपाचार्य और द्राण हस्तिनापुर अखाड़ मे गये। भीष्म पुत्रो को शस्त्र के सूत्र को बताकर सिखाते है।

30 द्रोण और कृपाचार्य दोनो खडे होकर सबकी शर-साधना देखते है।

31 अखाडे मे दुर्योधन ने एक आम की गुठली को मारा। वह गुठली एक कुएँ मे गिर पड़ी।

32 भीष्म के सामने शिष्यो ने जाकर कहा कि गुठली बड़े कुएँ मे गिर पडी।

33 सभी कुएँ के पास इकट्ठे हो गये और देखा कि सात ताड़ गहराई में गुठली पडी हुई है।

34 दुर्योधन ने कहा—उसको कैसे बाहर करेगे ? अपरिमित गहराई मे घुसा नही जा सकता।

35 द्रोण ने कहा कि यह तो सामान्य कुआँ है। दृष्टि विद्या से उसे बाहर निकालना आसान है।

36 दुर्योधन ने कहा कि तुम कहाँ के ब्राह्मण हो ? कह रहे हो तो दृष्टि-विद्या से गुठली को ले आओ।

37 भरद्वाज के तनय ने कृपाचार्य से कहा—थोड़ा-सा जटजीरा का पौधा उखाड़कर ले आओ।

38 कृपाचार्य उसे लेकर आये। द्रोण ने एक जटजीरा का वाण हाथ मे लिया।

39 मन्त्र पढकर उन्होने कुएँ के भीतर मारा। जटजीरा का शर गुठली के ऊपर जाकर लग गया।

40 पुन द्रोण ने दूसरा वाण मारा जो उसके ऊपर जाकर लग गया।

41 फिर और एक वाण मारा। वह दूसरे के ऊपर लग गया।

42 द्रोण की मन्त्र महिमा सभी राजकुमार देखते हैं। वे सात ताड कुएँ के भीतर जटजीरा का वाण छोड़ रहे है।

43 द्रोण जब सबसे ऊपर वाले वाण को ले आये तब गुठली बाहर आ गयी।

44 उन्होने भीष्म के सामने गुठली लाकर डाल दी। इसे देखकर सभी आश्चर्यचकित हुए।

45 जटजीरा वाण से जिस प्रकार गुठली बाहर निकली, किसी को यह विद्या ज्ञात नही थी।

46 हे द्विजवर तुम गुरुश्रेष्ठ हो गये। इस बार तुम्हारी विद्या की परीक्षा की जायेगी।

47 दुर्योधन ने अपने हाथ से नामाकित मुद्रिका को कुएँ में फेंक दिया। कहा कि इस बार तुम्हारे मन्त्र गुण का महत्त्व समझूँगा।

48 द्रोण ने कहा—यह असाध्य नहीं है। यह समुद्र और नदी नही है। यह तो सामान्य कूप मात्र है।

49 गम्भीर प्रतिज्ञा देखकर दुर्योधन सकुचित हो गया। द्रोण ने अपने हाथ से कुश की पवित्री निकाली।

50 पवित्री को कुएँ के भीतर फेका। उससे अँगूठी को चारो ओर से आवृत्त किया।

51 द्रोण ने आओ कहकर पुकारा। पवित्री से लगकर अगूठी बाहर निकली।

52 भीष्म के सामने मुद्रिका डाल दी। भीष्म उसे देखकर आश्चर्यचकित हुए।

53 भीष्म ने पूछा—हे ब्राह्मण ! तुम क्या भरद्वाज के

नन्दन द्रोण हो ?

54. कृपाचार्य ने कहा—यही वे द्रोण हैं जो परशुराम की सारी विद्या जानते हैं।

55. भीष्म ने कहा—हे द्रोण ! इन पुत्रों पर दया करो। विद्यागुरु होकर इनको विद्या सिखाओ।

56. अनेक प्रकार से कृपाचार्य ने समझाया। इसके बाद भरद्वाज पुत्र विद्यागुरु हुए।

57-59. एक शुभ योग में द्रोण ने गणनाथ और अखाड़ा चण्डी की अराधना करके विद्या शिक्षा प्रारम्भ की।

60. सभी वीर प्रातः और सन्ध्या दोनों वेला युद्ध-विद्या की साधना करते हैं और मध्याह्न के समय पाठ पढ़ते हैं।

61. दौड़ना, आक्रमण करना, मल्लविद्या, कलैया मारना, बाना खेलना, भाला चलाना, कुश्ती, समस्त विद्या गुरु से संचय करते हैं।

62. वेद शास्त्र मन्त्र मे निजित किया। इन सब मन्त्रों से शिष्य कुशल हुए।

63-64. युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल, सहदेव और दुर्योधन प्रभृति एक सौ भ्राता, अश्वत्थामा, कर्ण ऐसे एक सौ आठ शिष्यों को द्रोण ने परशुराम की विद्या सिखाई।

65. लक्ष्यभेद पटरे को आकाश में अदृश्य पर्यन्त दूरी में रखा।

66-67. पटरे में इक्कीस छिद्र किये। दुर्योधन जब शर संधान करता है, तो वह छिद्र के पास में ही लगकर रह जाता है या छिद्र की परिधि में लगकर रह जाता है। भीम लक्ष्य छिद्र को न भेद पा अन्य छिद्र को भेदते हैं।

68. दुःशासन किसी भी प्रकार नहीं भेद पाता है। द्रोण सात ताड़ की दूरी पर्यन्त भेद सकते हैं।

69. कर्ण के हाथ में धनुप देने पर वह दो वक्र चन्द्र भेद पाता है।

70. देखकर दुर्योधन हर्षित हुआ। पाण्डवों के मन में आश्चर्यकर भाव पैदा हुआ।

71. अर्जुन के हाथ में गुरु ने धनुप देकर कहा कि हे पार्थ! वक्र चन्द्र को भेदो।

72. गुरु को प्रणाम करके धनुष पर वाण चढ़ाया। अठारह चन्द्र द्वार में वाण चला गया।

73. दुर्योधन देखकर चमत्कृत हुआ। अर्जुन गुरु से भी बड़ा निकला।

74. अश्वत्थामा के हाथ में धनुप देकर पिता ने कहा—हे बाल तनय ! इस छिद्र को भेदो।

75. धनुप पर गुण चढ़ाकर पिता का नाम लेकर शर-संधान करते ही पाँच चन्द्र छिद्रों में घुस गया।

76. द्रोण देखकर आश्चर्यचकित हुए। अर्जुन और कर्ण के समान कोई नहीं है।

77. ढाल, फर्री आदि शस्त्रों से आक्रमण और प्रत्याक्रमण में अर्जुन और कर्ण समान हैं।

78. मल्लविद्या में दुर्योधन के समान भीमसेन पत्थर फेंकते हैं।

79. नकुल और दुःशासन शबरी लेकर फेंकते हैं। नकुल सो मेढ़ पर्यन्त फेंकते हैं।

80. दुःशासन पचपन मेढ़ और अश्वत्थामा पच्यासी मेढ़ पर्यन्त फेंकते हैं।

81. दो सो मेढ़ पर्यन्त अर्जुन और सात सौ मेढ़ पर्यन्त कर्ण फेंकता है।

82. दुर्योधन देखकर कातर हुआ। हे पाण्डु राजा के पुत्र ! तुम धन्य हो।

83. मल्लयुद्ध में सम विद्या-सिद्ध और धनुप वाण की विद्या में सिद्ध हुए।

जरा शबर आख्यान

1. अगस्त्य ने कहा, हे वैवस्वत मनु ! सुनो। अजपति का पुत्र जरा नामक एक किरात था।

2. दो गेंडा लेकर वह बारुणावन्त को प्रसन्नतापूर्वक चला।

3. माथे पर मयूर की पूँछ और कण्ठ में गुंज की माला है। लोहित वर्ण नेत्र और शरीर में लाल धूल लगी है।

4. धामड़ा काठ का धनुष और कटास बाँस के खपची की डोरी है तथा तरकस में लोहे का सुसज्जित बाण भरा है।

5. इसी एक स्वरूप में अजपति के पुत्र ने वारुणावन्त अखाड़े में द्रोण के दर्शन किये।

6. द्रोण गुरु गेंडा देखकर प्रसन्न हुए। जरा शबर ने कहा—आपकी आज्ञा से मैं आपका विद्या-पुत्र होना चाहता हूँ।

7. युधिष्ठिर ने कहा—यह किरात यहाँ रहे। यह वनचर है, इसलिए इसकी यहाँ बहुत आवश्यकता है।

8. धृतराष्ट्र के पुत्र दुर्योधन ने सुनकर क्रोध से कहा, तुम हीन किरात हो। यहाँ से शीघ्र भाग जाओ।

9. अर्जुन ने कहा—ऐसा मत करो। वनचर लोगों से हमारे अनेक कार्य होंगे।

10. गेंडा, हरिण, मृग, कृष्णसार और चमरी गाय आदि जन्तु को शिकार करके वह ले आयेगा।

11. गुरु द्रोण ने उसे रहने की आज्ञा दी। दुर्योधन ने कहा—क्यों अकारण बहका रहे हो ?

12. दुःशासन से कहा कि इसके बाल पकड़कर ले जाओ और अनेक कष्ट देकर वन में छोड़ आओ।

13 दुःशासन सुनकर अधिक क्रोध से उसके बाल पकड़कर उसे एक योजन की दूरी पर छोड़ आया।

14. वह जरा किरात अत्यन्त क्रोधित हुआ। उसने अखाड़ा क्षेत्र से लेकर अपने ग्राम तक वन को काटकर साफ कर दिया।

15 अपने घर के सामने अखाड़ा बनाया। द्वादश योजन दूर रहकर महावीर अस्त्र साधना करता है।

16 द्वादश योजन दूर रहकर अपने द्वार से वह बारुणावन्त अखाड़े को ध्यान कर विद्या साधना करता है।

17. देखो, महामहिम शबर द्वादश योजन पर रहकर कैसे ध्यानपूर्वक देखता है।

18. गुरु द्रोण जैसे पदगति करते हैं, वैसे ही कौरव पदगति का अनुकरण करते हैं।

19. उसी गति का अनुकरण करके शबर समस्त विद्या साधन करके महासिद्ध क्षत्रिय हुआ।

20-21. उसकी प्रिया पत्नी तारा ने विमुख होकर किरात से कहा, हम वनचर लोग वनजीवहारी हैं। मृगया न करके क्यों ऐसे दौड़-दौड़कर मरते हो ?

22. जरा ने कहा—हे सखि ! तुम एक समय इसका महत्त्व अवश्य समझोगी।

23. भार्या ने कहा—इसको क्या बोलते हैं ? उसकी प्रकृति मात्र भी नहीं मैं समझ पायी।

24. हे पामर ! अनर्थक क्यों कष्ट करते हो ? इस साधना का कौन गुरु है ?

25. हे वनचर, मूर्ख पामर ! बिना गुरु के विद्या प्राप्त नहीं होती।

26. भार्या की बात को उसने अत्यन्त हितकारी समझा। उस किरात ने शीघ्र ही मिट्टी का द्रोण बनाया।

27. सिर पर उसने कृष्ण मृग की पूँछ का पंख लगाया। ललाट देश पर गुंजा की माला पहनायी।

28. आँखों में दो स्फटिक स्थापित किये और गले में गुंजा और रुद्राक्ष की माला पहनायी।

29. बायें कन्धे पर गुर्रुवि के तन्तु का उपवीत पहनाया। कुमुद माला का उत्तरीय कन्धे पर लटकाया।

30. चन्दन काष्ठ घिसकर हृदय पर लेप किया। वाम हाथ में धामड़ा काष्ठ का धनुष लटकाया।

31. दाहिने हाथ की तर्जनी अंगुली का निर्देश करते हुए मूर्ति अखाड़े की ओर देख रही है।

32. उस मिट्टी के द्रोण के चरणाम्बुज की सेवा करके आत्मप्रत्ययी किरात सेन ने समस्त विद्या की साधना की।

33. अगस्त्य कहते हैं—हे युगपति ! उसने चौबीस वर्ष तक ऐसी विद्या-साधना की।

34. समस्त विद्या में वह निष्णात और धनुर्विद्या में बलवान हुआ।

युधिष्ठिर आदि की अस्त्र-परीक्षा

1-4. वसन्त ऋतु के एक शुभ दिन का निर्णय करके विद्या-परीक्षा के लिए अनुकूल योग स्थिर किया गया।

5. रात में गुरु अकेले घोर वन में कुण्डली नदी के किनारे प्रविष्ट हुए।

6 एक कोस पर्यन्त वन को काटकर कुण्डला नामक पर्वत देखा।

7. उस पर्वत के अग्र भाग में एक कृष्ण वृक्ष था। वाण से उसका अर्द्धछेदन किया।

8. उस स्तम्भ के ऊपर एक तिनका लगाया। उसके ऊपर एक दुइहा धान को रखा।

9. उसके ऊपर एक रुद्राक्ष रखा। उसके ऊपर एक सरसों

स्थापित की।

10. द्रोण ने राजपुत्रों के अनजाने में ऐसी एक व्यवस्था की।

11 भरद्वाजपुत्र लौट आये और राजपुत्रों को विद्या-परीक्षा के लिए प्रातः ले गये।

12. उस नदी के किनारे खड़े होकर द्रोण ने पहले कर्ण के हाथ में धनुष दिया।

13. कहा कि हे कर्ण ! बाण भरकर निरीक्षण करो कि पर्वत के ऊपर क्या-क्या दिखाई देता है ?

14 कर्ण ने बाण भरकर देखा। दोनों जंघा थरथराकर काँपा।

15-18 डोरी खींचकर वीर कर्ण ने देखा और गुरु की ओर देखकर कहा—बहुत दूर एक पर्वत दिखाई देता है। उसके ऊपर एक स्तम्भ है। स्तम्भ के ऊपर एक तिनका दिखाई देता है। उसके ऊपर दुड़हा धान दिखाई देता है। उस शृग धान के ऊपर एक रुद्राक्ष है। दोनों आँखों से इनके सिवा कुछ और नहीं दिखाई देता है।

19 गुरु द्रोण ने कहा—क्या तुमको सरसों नहीं दिखाई देती ? तुम्हारी तो चार पाद विद्या पूर्ण नहीं हुई।

20 अनंग नामक धनुष को कर्ण के हाथ से लेकर द्रोण ने अश्वत्थामा के हाथ में दिया।

21 25 हे मेरे क्षत्रिय नन्दन ! धनुष पर बाण रखकर निरीक्षण करो। तुम्हे क्या क्या दिखाई देता है, मुझे बताओ। पिता की आज्ञा से धनुष पर बाण रखकर डोरी खीचते हुए पुत्र ने कहा, एक पर्वत दिखाई देता है। उसके ऊपर एक स्तम्भ, उसके ऊपर एक तिनका, उसके ऊपर एक रुद्राक्ष दिखाई देता है। अब मुझे और कुछ नहीं दिखाई देता है।

26 छोड़ो कहकर युधिष्ठिर के हाथ मे धनुष दिया। वे बाण रखकर निरूपण करते है।

27 जिस समय युधिष्ठिर ने धनुष की डोरी खीची, उस समय उनकी दोनो मुट्ठियाँ काँपने लगीं।

28-29 वन के अन्दर एक पर्वत, पर्वत पर एक स्तम्भ, स्तम्भ के ऊपर एक तिनका दिखाई देता है। इसके बाद हे गुरु ! और कुछ भी नहीं दिखाई देता।

30 धनुष छोडो, छोड़ो—ऐसा द्रोण ने कहा। इतने लोगों के रहने पर किसी में भी सम्पूर्ण विद्या नहीं दिखाई देती है।

31. दुर्योधन के हाथ में द्रोण ने धनुष दिया। उसने धनुष पर बाण रखकर निरूपण किया।

32. धनुष खींचकर दुर्योधन ने कहा, अत्यन्त दूरी पर एक धवल पर्वत दिखाई देता है।

33. उसके ऊपर एक स्तम्भ और स्तम्भ के ऊपर एक तिनका किंचित् मात्र दिखाई देता है।

34 हे गुरु ! सुनो। और कुछ भी नहीं दिखाई देता है। द्रोण ने कहा—तुम और कुछ भी नहीं देख सके ?

35. दुर्योधन के हाथ से अनंग धनुष छीनकर दुःशासन के हाथ में दिया।

36-37 हे दुःशासन देखो, क्या-क्या दिखायी देता है? गुरु की आज्ञा से धनुष पर बाण भरकर खींचा और कहा—हे तात् ! वन के अन्दर एक पर्वत दिखाई देता है। उसके पास असंख्य मेघमाला दिखाई देती है।

38 छोड़ो, छोड़ो कहकर दुःशासन से धनुष लेकर गुरु द्रोण ने भीमसेन के हाथ मे दिया।

39 बाण भरकर हे भीम ! निरूपण करो। क्या-क्या दिखाई देता है ? सारी बात कहो।

40-41. भीमसेन् ने कहा—एक शुक्ल पर्वत के ऊपर एक स्तम्भ विद्यमान है। उसके ऊपर एक तिनका है और कुछ नही दिखाई देता।

42 गदा विद्या में निपुण दुर्योधन के सभी भ्राताओं ने इसी प्रकार की बाते कहीं।

43 उनके हाथ से धनुष लेकर कुमार फाल्गुनी को पास बुलाया।

44. अनंग धनुष उसके हाथ में दिया। हे बेटा ! बाण भरकर दृष्टिपात करो।

45-46 बाण भरकर निरूपण करके अर्जुन ने गुरु से कहा—आठ हजार आठ सौ अट्ठाईस पग दूरी पर पर्वत के ऊपर एक वृक्ष का अर्द्धखण्ड दिखाई देता है। उसके ऊपर एक तिनका और उसके ऊपर एक शृंग धान और शृग धान के ऊपर एक रुद्राक्ष और उसके ऊपर एक सरसों है।

49-50 हे गुरु ! आज्ञा दो। मैं किसका शर-सन्धान करूँ स्तम्भ को, तिनके को या शृंग धान को या रुद्राक्ष

को या सरसों को ?

51. द्रोण ने कहा—वत्स ! धनुष छोड़ दो। इस पृथ्वी का भार तुम दूर करोगे।

52. अर्जुन दिव्य शर भरे हुए हैं। सभी राजकुमार घेरकर देख रहे हैं।

53. अर्जुन ने कहा—हे गुरु ! मैंने जब शर भरा है तो अब सन्धान न करने से अपार दोष होगा।

54-55. द्रोण ने कहा—तुम मुट्ठी को दृढ़ करके शर-संधान करो, उससे स्तम्भ, तिनका, धान और रुद्राक्ष निश्चल रहे और उसके ऊपर की सरसों दो खण्ड हो जाय।

56. तुम जब ऐसा शर-सन्धान कर सकोगे, तो तुम जगज्जयी हो सकोगे।

57. द्रोण की बात से फाल्गुनी आनन्दित हुआ। अवलोकन शस्त्र को लेकर हृदय में ध्यान किया।

58 किंचित् पराक्रम से उसने सूत्र शर का संचालन किया। अन्तरिक्ष मे वह सरसों के ऊपर पडा।

59 हे महिपाल ! विद्या का स्वरूप देखो। बाण पड़ने से सरसों दो खण्ड हुआ।

60. खम्भ, खारिका, धान और रुद्राक्ष नही हिला। सरसों दो खण्ड होकर रुद्राक्ष के ऊपर रह गया।

61. द्रोण गुरु ने विद्या को प्रत्यक्ष देखा। आकाश में साधु-साधु ध्वनि सुनाई दी।

62. द्रोण देखकर परम आनन्दित हुए। तुमने परशुराम की विद्या हासिल की।

63 ऐसा सोचकर द्रोण ने कहा—तुम अकेले ही प्रत्यक्ष महिभार का निवारण करोगे।

64. और इन लोगों का क्या प्रयोजन है ? शिष्यो को लेकर द्रोण वारुणावन्त भुवन में लौट आये।

अर्जुन द्वारा कुम्भीर के मुख से द्रोण की रक्षा

1. शिष्य गणों के साथ द्रोण लौटे। आह्निक करने के लिए गंगा को गये।

2. अर्जुन को बुलाकर आज्ञा दी कि तुम मेरे घर जाओ।

3. माथे पर लगाने के लिए तिल की एक खोल ले आओ। तुम्हें मेरी शपथ है कि उस तिल को नीचे नहीं रखोगे।

4. गुरु आज्ञा को शिरोधार्य करके अर्जुन चल दिया। द्रोण ने दुर्योधन को गुप्त रूप से पास बुलाया।

5. मन-भेदी विद्या गुरु द्रोण ने उसे बताई। दुर्योधन बाण भरकर शर-सन्धान की भंगिमा में खड़ा हो गया।

6. मन्त्र सुमिरकर सूत्र-शर का सन्धान किया, किन्तु पत्तों के ऊपर बाण नहीं पड़ा।

7 छोड़ो-छोड़ो कहकर गुरु ने स्वयं धनुष लेकर मन्त्र पढ़कर बाण-संधान किया।

8 वह बाण पत्तों के ऊपर पड़ा। देखते-देखते सभी पत्ते भूमि पर गिर पड़े।

9 वहाँ से द्रोण सत्वर शिष्यो को लेकर नदी के किनारे चले गये।

10. अर्जुन गुरु के घर गया। तिल की खोल लेकर शीघ्र आ रहा है।

11-12. देखा कि बट वृक्ष पर एक भी पत्ता नही है। हृदय में सोचकर जाना कि इसीलिए गुरु ने भेजा और गुप्त मंत्र दुर्योधन से कहा।

13 वीर फाल्गुनी ने हृदय में सोचकर महामन्त्रोच्चारपूर्वक पचबाण सन्धान किया।

14 तिल के खोल को बाण पर रखकर गुरु की आज्ञा शिरोधार्य करके धनुष पर बाण रखकर भंगिमापूर्वक खड़ा हुआ।

15. बाणों को भेजकर उसने वृन्तों को तोड़ दिया।

16 तब तिल के खोल को लेकर तीव्र गति से गुरु के पास पहुँचा।

17 तपस्वी देखकर सन्तुष्ट हुए और उस तिल को अपने माथे पर लगाया।

18. गगा के जल में गुरु अवगाहन करने के लिए प्रविष्ट हुए। कुम्भीर ने उनके पैरों को सख्ती से पकड़ा।

19. यद्यपि स्वयं ही उसे मार सकते थे, फिर भी उन्होंने व्याकुल होकर शिष्यों को पुकारा।

20. डर से सभी भागकर किनारे के ऊपर चले गये। केवल अर्जुन ही गुरु के पास रहा।

21. धनुष पर बाण रखकर छोड़ा। वह कुम्भीर निष्प्राण होकर पड़ गया।

22 किन्तु द्रोण के शरीर पर कोई आघात नहीं लगा। मात्र कुम्भीर ही हत हुआ।

द्रोण का अर्जुन को ब्रह्म-शिरा शर प्रदान

1 राजन् ' सुनो। गुरु ने सन्तुष्ट होकर अर्जुन को ब्रह्म-शिरा-शर प्रदान किया।

2 इस शेर का सामान्य लोगो पर प्रयोग करने से अपने प्राणो का नाश हो जाता है। महावीर लोगो पर प्रयोग करने से वे निश्चय ही विनष्ट होते है।

3 वहा से चलकर गुरु-शिष्य आ रहे है। सभी उस बट वृक्ष के नीचे पहुँचे।

4 देखा कि शाखा मुण्डित हो गयी है। तपि-सत ने मन मे सावस्र जाना।

5 अर्जुन को पुकारकर कहा कि तुमने मरे शपथ का लघन किया है।

6 हाथ जोड़कर अर्जुन ने कहा—आपके वचन मने नही तोडे।

7 मैने तिल खोल को भूमि पर नही रखा। पच वाण सधान करके आकाश म घूमता रहा।

8 सुनकर गुरु सन्तुष्ट हुए। उसको मन छेदन मन्त्र का उपदेश दिया।

9 मुख चुम्बन कर शरीर को सहलाया। इसके बाद अपने घर म प्रविष्ट हुए।

10 शिष्यगण अपने-अपने घर गय। गुरु गृह-कर्म मे व्यस्त हुए।

कौरव और पाण्डवों की अस्त्र-परीक्षा

1 वैवस्त मनु ने अगस्त्य से पूछा—इसके बाद द्रोण ने क्या किया '

2 3 फिर कितने दिन बीत जाने पर द्रोण ने हृदय मे विचार किया—मने गुप्त रूप म असली परीक्षा ली। अब मै सभी के सामने विशेष परीक्षा करूगा।

4 उन शिष्यो को लेकर गुरु चल दिय। राजा के सिहद्वार मे प्रविष्ट हुए।

5 धृतराष्ट्र, कृपाचार्य, सोमदत्त, बाह्लीक और विदुर सभी वहा उपस्थित थ।

6 द्रोण ने भीष्म से कहा—पुत्रों ने बहुत शस्त्र और शास्त्र प्राप्त कर लिये।

7 हमारी विद्या आप लोगो को देखनी चाहिए। सुनकर सभी ने सहमति दी।

8 भीष्म ने विदुर को देखकर कहा कि द्रोण विद्या-परीक्षा की बात कहते हैं।

9 तुम समारोह सभा का आयोजन करो। चरों को बुलाकर नगर में घोषणा करवाओ।,

10 सुनकर तत्क्षण विदुर चले गये। नगर मे घोषणा कराकर सबको एकत्रित किया।

11 दिव्यरत्नयुक्त सुवर्ण-कलश-स्थापन किया गया। मुक्ता का विचित्र सुन्दर तरकस लटकाया गया।

12 एक विचित्र सभा आयोजित हुई। उस सभा मे क्षत्रिय, वेश्य और ब्राह्मण लोग एकत्र हुए।

13 नगर के समस्त नर नारी एकत्र थे। हाथ मे अस्त्र-शस्त्र लेकर सभी कुमार प्रविष्ट हुए।

14 नाना वाद्यों का नाद और शखध्वनि हुइ। कुमारो ने अपने-अपने शस्त्रों को लेकर कौशल-प्रदर्शन किया।

15 सभाजन देखकर चमत्कृत हुए। एक से एक महा तेजस्वी है।

16 विदुर ने धृतराष्ट्र को प्रत्येक के प्रति सन्तोष व्यक्त करते हुए बताया।

17 सभी ने नाना प्रकार से शस्त्र-विद्या का प्रदर्शन किया। नगर मे साधु-साधु अर्जुन कहते हुए एक चीत्कार सुना गया।

18 भीम और दुर्योधन गदा युद्ध करते है। अश्वत्थामा ने जाकर बीच मे विरोध किया।

19 अर्जुन ने धनुष तानकर अग्निवाण मारा। ब्रह्माण्ड में अग्नि प्रज्ज्वलित हुई।

20 पुन: अर्जुन ने वारुणा शर-सन्धान किया। पवनास्त्र के आघात से प्रचण्ड वायु प्रवाहित हुई।

21 पवनास्त्र, मेघास्त्र, विजयास्त्र की माला से इन्द्र के पुत्र ने मेघ के पर्वत का सृजन किया।

22 अन्तर्धान होकर वह शस्त्र चलाता है। क्षण में हाथी पर, क्षण मे अश्व पर और क्षण में रथ पर आरूढ़ होकर शरनिक्षेप करता है।

23 क्षण में अश्व से, क्षण में भूमि से लौह शस्त्र का

प्रयोग करता है।

24. सभा में सभी लोग फाल्गुनी का शर-सन्धान देखकर धन्य-धन्य कहते है।

25 दुर्योधन से अश्वत्थामा को बुलाकर कहा—तुम्हारे पास तो सारी विद्या है।

26 दुर्योधन सौ भाइयो को पास ले आया। दैत्य-विनाश के समय पशुपति जैसा वह दिखाई देता है।

27 इसके बाद कर्ण आकर प्रविष्ट हुआ। उसके शरीर की ज्योति बालार्क की तरह दिखाई देती है।

28 वीर पार्थ ने शर-सन्धान का जितना कौशल दिखाया है, कर्ण ने उसके समान शस्त्र-विद्या का प्रदर्शन किया।

29 दुर्योधन ने यह देखकर उसे आलिंगनबद्ध किया और कहा कि आज से तुम मेरे सखा हो गये।

30 तुम विराट अंग देश राज्य का भोग करोगे। कर्ण ने कहा—हे महिपाल! तुम सुनो।

31 अर्जुन के साथ मेरा युद्ध कराओ। मैं उससे जीत सकता हूँ।

32 कृपाचार्य ने कहा—अर्जुन राजपुत्र है। सारथी का पुत्र होकर तुम्हे इतना गर्व हो रहा है।

33 पहले अपने माता पिता की भाँति कौलिक वृत्ति करो। बाद मे अर्जुन का सामना करना।

34 सुनकर कर्ण के मन मे न्यूनता-बोध उपजा। यह देखकर दुर्योधन ने उसको मर्यादान करते हुए कहा।

35 वीर पुरुष क्या अकुलीन होता है! कर्ण अर्जुन के समकक्ष है।

36 भीमसेन ने कहा—हे सारथि सुत! तुम रथ चालन करो। तुम्हारा युद्ध करना युक्तिसंगत नही है।

37 इसके बाद सभा समाप्त हुई। अपने-अपने स्थान पर सभी लौट गये।

38 द्रोण गुरु अनेक ग्राम, गाय, रत्न और यान प्राप्त करके अपने आवास को लौटे।

39 हे राजन्! सुनो। सभी पुन: विद्याभ्यास कराते है। नगर के लोग मिलकर देखते है।

40. सभी अपने-अपने शक्तिशाली धनुष को लेकर लक्ष्य पर शर-सन्धान करते हैं।

41 धनुष पकड़कर वाण-सन्धान करने मे अश्वत्थामा की भुजा कॉपती है।

42 धनुष पर वाण सन्धान करने से दु:शासन की छाती कॉपती है।

43 शर लगने से युधिष्ठिर का अँगूठा पवन-गति से कॉपता है।

44 भीष्म का सिर और द्रोण की भुजा कॉपती है, किन्तु वासव-पुत्र अर्जुन निष्कप रहता है।

45 सोच-विचार कर द्रोण ने समस्त तथ्य जान लिया कि इसके हाथ से ही सबकी मृत्यु होगी।

46 एकान्त मे बुलाकर अपने पुत्र से द्रोण ने कहा—तुम शीघ्र भाग जाओ। यहाँ रहने पर मरोगे।

47. हे बेटा! अर्जुन जिस प्रकार वाण सन्धान करता है, उस वाण के नोक मे त्रिभुवन दिखाई देता है।

48 ऐसा करके विधाता ने इसकी सृष्टि की। त्रैलोक्य ब्रह्माण्ड मे इसको जीतने वाला कोई नही है।

49 दुर्योधन तुमको अवश्य नही छोड़ेगा। तुम्हारा निश्चय अर्जुन के हाथो वध होगा।

50 फिर द्रोण विद्याओ का दान आरम्भ करते है। द्वार देश मे बाघ मुखी फदा बनाया।

51 पच्चीस हजार शक्ति विशिष्ट मुद्गर को काठ के छिद्र मे डालकर सभी वीर बारी-बारी से खीचते है।

52 पहले दुर्योधन सात हजार शक्ति तक खीचता है। दु:शासन पाच हजार बल पर्यन्त खीचता है।

53 कृपाचार्य चार हजार, भीष्म पैतीस हजार और द्रोण चालीस हजार परिमाप पर्यन्त खीचते है।

54 युधिष्ठिर तीस हजार पर्यन्त और भाकर भीम पचास हजार तक खीचते है।

55 कर्ण नौ हजार शक्ति तक खीचता है। अश्वत्थामा अठहत्तर हजार पर्यन्त खीचता है।

56 सहदेव चार हजार, नकुल पैतीस हजार और दुर्योधन के अन्य भ्राता इसी प्रकार खीचते है।

57 अर्जुन एक लाख भार खीचता है। द्रोण और सभी कुरुवीर देखकर चमत्कृत हुए।

58 द्रोण ने अश्वत्थामा को पास बुलाकर कहा—तुम जीवन रक्षा के लिए शिव की पूजा करो।

59 पुण्यसलिला सरस्वती के किनारे उदय वटवृक्ष के नीचे बेटे! निरंजन की सेवा करो।

60. यदि तुम हस्तिनापुर में रहने की इच्छा करते हो तो अमर वर माँगो।

61. द्रोण की आज्ञा पाकर मामा कृपाचार्य के साथ अश्वत्थामा चल दिया।

62. उसने पुण्यसलिला नदी के किनारे आश्रम बनाकर अजपा ध्यान से परम ब्रह्म को याद किया।

63. प्रति दिन सरस्वती में स्नान करके जाता था। उसने पन्द्रह वर्ष पर्यन्त आहार-त्याग किया।

गान्धारी और कुन्ती का विवाद

1. वैवस्वत मनु कहते हैं, हे अगस्त्य! सुनो। मुझे बड़ा सन्देह है। मैं एक बात पूछूँगा।

2 विद्या-परीक्षा की बात मैंने अच्छी प्रकार से सुनी। इसके बाद क्या कार्य हुआ ?

3. अगस्त्य मुनि कुन्ती और गान्धारी का विवाद-प्रसग महारथी मनु से कहते हैं।

4 5. बसन्त ऋतु के फाल्गुन मास के कृष्ण पक्ष सप्तमी रविवार को गान्धारी और कुन्ती दोनों दयादिन प्रातः स्नान करने के लिए यमुना नदी के किनारे गयीं।

6 सुवर्ण पालकी में अनेक दासियों के साथ गान्धारी चल रही है।

7-8. अगर, चन्दन, कपूर, कस्तूरी, कुशाग्र, गुग्गल आदि विभिन्न नैवेद्य और पखा तथा चामर लेकर विश्वनाथ की भक्ति के लिए युवतियाँ यमुना के किनारे जाती हैं।

9 कुन्ती देवी अकेली ही पुष्प और नैवेद्य लेकर जल्दी-जल्दी चलती है।

10. यमुना के जल में प्रवेश करके नित्यकर्म समाप्ति के बाद रत्नेश्वर मन्दिर में गान्धारी प्रविष्ट हुई।

11. पालकी से उतरकर गान्धारसेन की पुत्री राधा के साथ विश्वनाथ दर्शन करने के लिए जा रही है।

12 इसी समय कुन्तिभोज की दुलारी अर्घ्य-थाली लेकर मन्दिर में प्रवेश करती है।

13 राधा ने गान्धारी को बताया कि कुन्ती ने तुम्हारे साथ ही प्रवेश किया।

14. गान्धारी ने कुन्ती को देखकर कहा—तुम क्यों मन्दिर में आयीं ?

15. पहले से ही यह लिंग मेरा है। तुम्हारा जीवन हीन है। तुम क्यों पूजा करोगी ?

16. जो नारी पतिहीन हो, वह सब कार्य के लिए अशुभ हो जाती है।

17. आरोप-प्रत्यारोप से बहुत कोलाहल मच गया। आपस में टक्कर से धक्का-धक्की मच गयी।

18. दोनों का झगड़ा देखकर विश्वनाथ दोनों दयादिन के बीच उपस्थित हुए।

19. शिव कहते हैं तुम लोग क्यों मरती हो ? हम देवता किसी के भी नहीं हैं।

20. जहाँ भोग पाते हैं वहीं हम रहते हैं। अकारण आपस में तुम लोग क्यों झगड़ा मचा रही हो।

21. देवश्रेष्ठ ने कहा—सबेरे शत सुवर्ण चम्पा के पुष्प लेकर जो पहले पहले पूजा करता है, मैं उसका ही होता हूँ।

22. पूजा न करके दोनों दायादिन अपने आवास को लौट गयीं। कुन्ती ने सोचा कि मैं अब क्या करूँ।

23-24. उसके तो सौ पुत्र हैं, एक-एक पुष्प उनसे माँगने पर उसके सौ पुष्प हो जायेंगे। मेरे तो मात्र पाच ही पुत्र हैं और पचानवे पुष्प कहाँ से मिलेंगे।

25. हे महाराज! सुनो। कुन्ती किवाड़ बन्द करके सो रही है। इसी समय धनुर्जयी अर्जुन उपस्थित हुआ।

26 माता से अर्जुन ने भोजन माँगा। अर्जुन को देखकर कुन्ती ने उठकर उससे कहा—

27. हे बेटा! आज मैं महादेव का दर्शन करने के लिए गयी थी। हे फाल्गुनी! सुनो। गान्धारी ने मुझे बहुत झिड़का।

28. कहा कि चिरकाल से ही ये मेरे देवता हैं। हे पामरी! तुम मन्दिर में क्यों घुसीं।

29. उसकी बातों से मैं अपमानित हुई। उस समय दोनों के बीच में त्रिलोचन आ खड़े हुए।

30. उन्होंने कहा, तुम दोनों दायादिन क्यों कलह करती हो! मेरे मुख से तुम लोग एक बात सुनो।

31. देव ने दो टूक बात कही, जो एक सौ सुवर्ण चम्पा देकर पूजा करेगा, मैं उसका हूँगा।

32. उसके सौ पुत्र हैं। उसे सौ चम्पा मिलेंगे। मेरे पाँच

पुत्र हैं। मुझे तो पाँच ही पुष्प मिलेंगे।

33 पचानवे पुष्प मैं कहा से लाऊँगी? यही बात सोचकर मैंने किवाड़ बन्द किया था।

34 विधाता के लेख से पतिहीना होकर मैं हीन हो गयी।

35 इतना कहकर वह भोज राजा की दुहिता मन में चिन्ता करके विलाप करने लगी।

36 अर्जुन ने कहा—माँ चिन्ता मत करो। सुवर्ण पुष्प के लिए संशय मत करो।

37 शतदल विशिष्ट सुवर्ण चम्पा से मे मन्दिर कल भर दूँगा।

38 अर्जुन की बात सुनकर कुन्ती ने शीघ्र उठकर सुवर्ण थाली में दधि और घी के साथ भात दिया।

39 पाचों वीर अपनी इच्छानुसार स्नान और भोजन करने के बाद सुखपूर्वक सोये।

40 इसके बाद रात बीती और सवेरा हुआ। विमल और सुशीतल वायु बहने लगी।

41 मंगल शंख-ध्वनि से गूंज गये। निद्रा त्यागकर कुन्ती उठीं।

42 देवी ने पुत्र अर्जुन को जगाया। अर्जुन तुरन्त उठकर बैठ गया।

43 सुवर्ण पात्र में पूजा सामग्री लेकर माता पुत्र लिंग के पास चले।

44 यमुना के जल में प्रवेश करके स्नान किया। तर्पण के बाद मन्दिर के भीतर दोनों ने प्रवेश किया।

45 अगर, कस्तूरी, कपूर का आह्लादपूर्वक लेपन करके सिर पर चम्पा, नागेश्वर और बकुल पुष्प चढाया।

46 बहुत प्रकार के शीतल द्रव्य को सामने रखकर देवी विनीत हुई।

47 हाथ जोड़कर अपार स्तुति की। हे उमापति देव, चन्द्रशेखर! तुम्हारी जय हो।

48 हे विश्वेश्वर, कापालिक! सुर, सिद्ध, मुनि तुम्हारे चरणों में प्रणाम करते हैं।

49. साठ हजार वर्ष पर्यन्त घोर युद्ध करके गणनायक की सहायता से तुमने त्रिपुरासुर का वध किया।

50 त्रिपुरारि रूप में लोग तुम्हें जानते हैं। हे काशी के देव! मेरा कष्ट से उद्धार करो।

51. पति के चिर-वियोग से मैं अनाथिनी हो गयी। तुम्हारे पद्म-पाद मे मेरी शत-शत प्रार्थना है।

52 जय-जय पार्वती के पति, देव हर! मुझ निराश्रया का प्रतिकार करो।

53 सारला दास कहते हैं, श्री विश्वनाथ के पादपद्म में मेरा सिर सदा नत है। मैं जन्म-जन्म से उनका भृत्य हूँ।

54 पादार्घ्य देकर मनु महाराज ने अगस्त्य के चरण की दिव्य पूजा की।

55 हे देव अर्जुन तो सुवर्णेश्वर लिंग के पास गया। इसके बाद फिर वहा क्या हुआ ?

56 हे राजन्! सुनो। पार्थ ने एक प्रचण्ड बावल शर छोड़ा। आँवला फल का सिर फूटकर दो खण्ड हो गया।

57 पुन: दृढ मुष्टि से एक बावल शर छोडा। कुबेर की पद्मनिधि स्थली को काट दिया।

58 पुनः वीर ने जलधर वाण मारा। पानी के साथ पद्म की वर्षा हुई।

59 उस आँवले के सिर से शत-पंखुड़ी विशिष्ट अष्ट रत्न जड़ित सुवर्ण पुष्प कूरा-कूरा होकर गिरने लगा।

60 हे राजा! सुनो। गान्धारी बहुत प्रतिज्ञा करके गयी थी। पुत्रों के पास बैठकर हाथ फैलाकर अनुरोध करती है—

61-62 हे मानगोविन्द, दुर्योधन! यमुना के किनारे जो सुवर्ण लिंग है, उसका दर्शन करने के लिए मै कल गयी थी। कुन्ती भी वहा गयी थी।

63 हम दोनों में कलह हुआ। मैंने कहा—यह तुम्हारा क्या प्रपंच है।

64 चिरकाल से ही यह लिंग मेरा है। तुम क्यों इसके पास आई हो .. ऐसा मेने कहा।

65 इस प्रकार चीत्कार सुनकर विश्वनाथ लिंग से निकलकर उपस्थित हुए।

66 हम दोनों के सामने खड़े होकर उमापति ने परमार्थ वचन कहे।

67-68 विश्वनाथ ने कहा—रात बीतने पर कल प्रातः जो सौ सुवर्ण चम्पा-पुष्प लेकर मेरी पूजा करेगा, मैं सदा उसका ही रहूँगा।

69 तुम लोग मेरे शतपुत्र हो। इस कार्य में मेरी सहायता

करो।

70. मानगोविन्द सुनकर परम आनन्दित हुआ। इसके बाद शतभ्राता आनन्द से शतचम्पा लेकर लौटे।

71-72. सबेरे गान्धारी सुवर्णेश्वर मन्दिर में उपस्थित हुई। उसके साथ सौ दासियाँ हैं। देवी यमुना के किनारे पहुँची।

73. स्नान करके देवी देव-दर्शन के लिए आयी। देखा कि सुवर्ण-पुष्प स्तूपाकार होकर पड़े हैं।

74. उसे देखकर गान्धारी दुःखी हुई। देवालय को देखकर वह शीघ्र लौट गयी।

75 लौटकर वह महल में आई। उसके चित्त में सरसता नहीं है। वह उदास थी।

76 गान्धारी प्रशंसापूर्वक कहती है कि कुन्ती! तुम धन्य हो। हे साध्वी ! तुम शुभ लक्षणी पुत्रों को पैदा करके धन्य हो।

77 तुम्हारा पुत्र फाल्गुनी धन्य है। गान्धारी ने ऐसी प्रशंसा की।

78 ऐसा सोचकर वह गान्धारी मन मे विकार लेकर आश्चर्यचकित हुई।

79 इसके बाद दिव्य रस सुनो, जिसको अगस्त्य ने कहा।

80 देवताओं ने स्तुति करके कहा कि हे पार्थ! कुन्ती देवी को तुष्ट करने के कारण तुम्हारी जय हो।

81. सुरपुर मे जयध्वनि सुनाई दी। देवताओं ने अर्जुन का धनजय नाम रखा।

82 धन से तुष्ट करके धनजय नाम पाया। अगस्त्य मुनि ने कहा—हे वैवस्वत मनु! सुनो।

83 धनुधारी अर्जुन ने तो पद्मनिधि को काट दिया था। पुनः वह कैसे निधि बनी।

84 हे तपस्वी ! इसका भेद मुझे बताओ। अगस्त्य से मनु ने पूछा।

85-86 देवताओं ने अर्जुन की प्रार्थना की। तुमने जो सुवर्णलिंग को दिया, उस रत्न को हे धनुर्धर! लौटा दो। कुबेर भुवन को तहस-नहस मत करो।

87. देवताओं के अनुरोध से भूमि से शर-सन्धान किया। रत्ननिधि को कुबेर-भण्डार में लौटा दिया।

88-89. पद्मनिधि महाकल्पकोष के रूप में प्रसिद्ध है। अधोमुखी वाण पवन-जात है। वह निधि के स्थली में जड़ित है।

90. वह लौटकर पद्मनिधि में प्रविष्ट हुआ। हे नृपवर! तुमने अर्जुन की महिमा सुनी।

91. अर्जुन की देव-दुलर्भ कथा को सुनकर महाज्ञानी मनु परम आनन्दित हुए।

एकलव्य उपाख्यान

1. इसके बाद द्रोण ने शिष्यों को पुकारकर कहा—हे पुत्रो! तुम लोग मृगया-विनोद के लिए जाओ।

2. अश्वत्थामा के प्रसवोपरान्त मेरी पत्नी कृपी मृत हुई। आज उसका श्राद्ध दिन आ गया है।

3. हे पुत्रो! वन में जाकर एक गेंडा मारकर ले आओ। गुरु के आदेश से सभी शिष्य चलते हैं।

4 पश्चिम दिशा में भीम और अर्जुन, दक्षिण दिशा मे वीर कर्ण, उत्तर दिशा में शत भ्राताओ के साथ दुर्योधन चलता है।

5 कुमार घूमते है और मृगों को खेदते है। गेंडा जीव को खोजते समय छोटे-छोटे जीवो को भी नही छोडते है।

6 दक्षिण दिशा में खोजकर भी कर्ण ने गेडा जीव नही पाया। उसने एक कॉवरी मृगों को लेकर गुरु के दर्शन किये।

7. पश्चिम कोशल में भीम और अर्जुन गये थे। पॉचवें दिन दो गेडे लेकर उन्होने गुरु के दर्शन किये।

8 उत्तर दिशा में दुर्योधन और उसके सौ भाई जाकर अनेक वन-पर्वत पर जीवों को खेदते हैं।

9 गहन अटवी में गेंडा को खोजते हैं। दुर्दण्ड होकर वन मे विहार करते हैं।

10 मणिनाग नामक पर्वत था। उसके नीचे एक जलघाट था।

11. उसी जल घाट के पास वे सब सजग होकर प्रतीक्षा में बैठे हैं।

12. उसी के पास जार शबर का घर था। उस जार की भार्या श्रिया ने स्वामी से कहा कि घर की ओर ध्यान रखना।

13. स्नान करके मैं एक घड़ा पानी ले आऊँगी। मेरे जाने तक द्वार देश पर ध्यान रखना।

14 स्वामी से कहकर शबरी चली। सरोवर में प्रवेश कर घड़े में पानी भरा।

15 घड़े को किनारे पर रखकर स्नान समाप्त किया। ऊपर आकर पत्र-परिधान किया।

16 सिर पर पानी के घड़े को रखकर गति से लौट रही थी।

17 दूर से मूर्ख दुःशासन ने उसे देखा। खीचकर उसे दोनो भुजाओं में जोर से दाब दिया।

18 श्रिया ने पीछे मुड़कर देखा। सोचने लगी कि सुन्दर तरुण यह किसका लडका है?

20 हे स्वामी! रक्षा करो-कहकर उसने चीत्कार किया। न जाने कहाँ के दुष्ट लोग मेरे साथ वलात्कार कर रहे है?

21 उच्च स्वर मे पत्नी के रोने का चीत्कार अखाडे से जरा शबर ने सुना।

22 हाथ में धनुष लेकर किरात बाहर निकलकर कुरुवीरो के पास दौडकर पहुचा।

23 महाविकट भैरवी मूर्ति होकर किरात ने पुकारा—तुम नहीं जानते कि तुम कहाँ हो?

24 सुनकर महावीर दुःशासन प्रचण्ड मूर्ति हुआ। उद्देश्य करके कहा—रे शबर! तुम मरोगे।

25 वनचर होकर क्यो तुम्हारी इतनी सुन्दर घरनी है। राजा के अभिषेक मे वह पटरानी होने के योग्य है।

26 हम लोग पृथ्वी के अधिपति सामर्थ्यशी है। इसके लिए तुम्हारा प्राण-नाश होगा।

27 दुर्भार वचन सुनकर उस जरा व्याध ने धनुप को खीचकर वाण चढाया।

28 एक वाण गुरु का नाम स्मरण करके भूमि पर मारा। द्रोण गुरु को याद करके माथे पर धूल लगायी।

29 एक सौ एक कुरुवीरो को सौ-सौ वाण मारे।

30 अन्धाधुन्ध महामन्त्र से जब वाण संधान किया, एक-एक के हृदय में सो-सौ वाण पड़े।

31 सिर गिर गये और शरीर में अस्त्र घुस गये। कुरुवीरों के पतन से रक्त की नदी बहने लगी।

32 भार्या को लेकर वीर जरा शबर अपने घर मे प्रविष्ट हुआ।

33. द्रोण बाट जोह रहे हैं कि दुर्योधन बारह दिन हुए, नहीं आया।

34 गुरु द्रोण अपने साथ भीम, कर्ण, अर्जुन को लेकर मार्ग दिखाते हुए अगवानी के लिए जा रहे हैं।

35 सरोवर के किनारे पहुँचे। देखा कि सभी कुरुवीर गिरे पडे हैं।

36 प्रचण्ड आँधी आने पर जैसे वृक्ष धराशायी हो जाते है, वैसे ही सभी कुरुवीर दिखाई पड़ रहे थे।

37 हृदय में बाण घुसकर पीठ से बाहर निकल गया है। महाप्रतापी वीर भूमि पर लोटे हुए पडे हैं।

38 भीमसेन दौडकर गया और दूर से देखकर चिल्लाया—हे गुरु! सभी शराधात से धराशायी है।

39 40 भरद्वारज के नन्दन ने देखकर सोचा और अर्जुन से कहा, यह तो मेरी विद्या है। हे फाल्गुनी! देखो इस वन मे कोन दूसरा व्यक्ति है जिसने परशुराम की विद्या को प्राप्त किया है।

41 दूसरे को यह विद्या गोचर नही होती। वह कौनसा प्रसिद्ध मनुष्य है जिसे यह विद्या गोचर है!

42 गुरु के आदेश से अर्जुन वन में खोजता है। देखा कि एक गहन वन मे शबर का घर है।

43 किरात अखाडे में लक्ष्य पटरे में वाण मार रहा है। अर्जुन को देखकर वह तत्क्षण बाहर निकला।

44 हाथ में वामड़ा काठ का धनुष, कटास बॉस की डोरी, कटि मे मेखला और कठार, तरकस मे बॉस के वाण धारण किये था।

45 वह जल्दी-जल्दी कौन-कौन चिल्लाता हुआ अर्जुन के ऊपर बढा चला रहा था।

46 जरा चिल्लाकर कहता है कि तुम किसके पास आये हो ? तुम्हे मारकर वनदेवी को बलि चढा दूँगा।

48 अर्जुन ने पूछा—हे किरात! सुनो। इन मेरे भाइयों को किसने शराघात किया ?

49. अर्जुन की बात सुनकर जरा शबर ने प्रचण्ड क्रोध से धनुप पर वाण चढाया।

50 खीचकर शर छोड़ते हुए फाल्गुनी ने देखा और शबर पर दिव्य शस्त्र प्रहार किया।

51 वाण से वाण टकराकर चूर हो जाते हैं।

52 चाप पर एक सौ वाण चढ़ाकर महावीर जरा ने अर्जुन के ऊपर क्रोध से प्रहार किया।

53. अर्जुन ने सौ वाणों को छोड़कर समस्त वाणों को काट दिया।

54 किरात और अर्जुन सामना-सामनी कर रहे है। शस्त्र-सघात से मेदिनी काँप गयी।

55 धनुष की खींची हुई टकार तीनो लोक मे सुनाई दी।

56 द्रोण शस्त्रों की ध्वनि सुनकर कर्ण ओर भीम को लेकर शीघ्र दौडे।

57 गुरु ने देखा कि अर्जुन ओर किरात के समर मे जरा अर्जुन को एक लाख वाण मार रहा है।

58 परस्पर आमने-सामने के युद्ध मे जिस समय काई पीछे नही हट रहा था, उसी समय द्रोण वहॉ पहुॅचे।

59 द्रोण ने पुकारा—हे बेटा! रुको-रुका, किससे तुमने इस विद्या की साधना की ?

60 तुम किसके शिष्य हो और तुम्हारा गुरु कोन है? जिसकी विद्या साधना स तुम इतना प्रचण्ड युद्ध कर रहे हो?

61 किरात ने कहा—ह ब्राह्मण! मेरे विद्या-गुरु स्वय द्रोण हे।

62 किरात की बात सुनकर गुरु स्तम्भिन हो गय। उन्होंने कहा, मै वही द्रोण यहॉ विद्यमान हू।

63 द्रोण कहते हैं—तुम्हारा गुरु कहॉ है? मुझे दिखाओ तो तुम किसकी सेवा करते हो?

64 अपने अखाडे की ओर वह द्रोण को ले गया। मिट्टी के द्रोण को दिखाया।

65 यह मेरे सिद्ध गुरु द्रोण है। इनकी सेवा करके मेंने सर्वविद्या-लाभ किया हे।

66 गुरु ने कहा कि तुमने कैसे सिद्ध किया? बिना देखे, बिना सुने कैसे इस विद्या को प्राप्त किया?

67 मेरे मन्त्र के प्रभाव से तुमने मारा।

68 किरात ने कहा—मे वारुणावन्त गया था। मैने गुरु द्रोण से विद्या सिखाने के लिए अनुरोध किया।

69 युधिष्ठिर नामक एक व्यक्ति ने मुझ पर दया की थी। किन्तु दुर्योधन नामक अन्य व्यक्ति ने मुझे भगा दिया।

70 अपमानित होकर मै लौट आया और वारुणावन्त स यहॉ तक वन को काटकर साफ कर दिया।

71 मेंने घर के सामने अखाडा बनाकर द्रोण की मृत्तिकामूर्ति स्तम्भ पर स्थापित की।

72 इसी स्थान से मैं वारुणावन्त अखाड़े को देखता हूँ। बारह योजन पर्यन्त दृष्टिपात करता रहता हूँ।

73 जिस प्रकार द्रोण पद-संचालन करते हे उसी प्रकार मै यहॉ उसकी साधन करता हूँ।

74 द्रोण गुरु ने सुनकर परम आनन्द से जरा को लाकर अपने पास बैठाया।

75 म वही द्रोण गुरु हूँ। ये अर्जुन और कर्ण हैं। तुमने जिसको शराघात किया वह दुर्योधन है।

76 ऐसी बात सुनकर वीर जरा ने गुरु के पाद-पद्म मे प्रणिपात किया।

77 द्रोण ने कहा—हे बेटा! तुम मेरे विद्या-पुत्र हो और जिनको तुमने मारा हे वे भी मेरे विद्या-पुत्र है।

78 बेटा! मे तुम्हारी विद्या की परीक्षा करूँगा। ये मेरे पुत्र केसे जीवित होग? यही मे जानना चाहता हूँ।

79 जरा को लेकर वे समर भूमि को गये। जरा ने कहा—हे गुरु! अब मे सबको जिला दूगा।

80 धनुप पर जीवनन्यास शर रखकर वाणवृष्टि की। सभी धृतराष्ट्र-पुत्र मूर्च्छा छोडकर उठ गये।

81 सबने द्रोण के पद्म-पाद मे प्रणाम करके कहा कि शबर के शराघात से हमारा प्राण-त्याग हुआ।

82 आपके समान गुरु की सेवा करके हमने विद्या-साधना की, किन्तु सामान्य किरात के साथ युद्ध मे हम पराभूत हुए।

83 हे गुरु द्रोण ! हमको परशुराम की विद्या पूर्ण रूप मे नहीं सिखाई। इसलिए अर्थवती नही हुई।

84 हमारे जीवन को धिक्कार हे। हमारी क्षत्रिय वृत्ति से क्या लाभ है? निर्लज्ज होकर कैसे लोगो को मुँह दिखायेगे।

85 द्रोण ने कहा कि तुम लोग मन मे कुछ मत सोचो। यह किरात मेरा विद्या-पुत्र है।

86 एक ही विद्या से दोनों भाई ध्वस्त हो गये। एक ही परिवार के सहोदरो में सामना-सामनी हो गयी।

87 ऐसा अभिमान करना उचित नहीं है। यह तो मेरा विद्या-पुत्र है।

88 बहुत पहले गेडा लेकर अखाडे पर गया था। तुमने अपमानित करके इसको बाहर निकाल दिया।

89. द्रोण की बात से दुर्योधन परम शान्त हुआ। द्रोण ने कहा कि हे जरा! तुम वन में निर्भय रहो।

90. वारुणावन्त से अखाड़ा तोड़कर हम हस्तिनापुर चले जायेंगे।

91. हमारे आशीर्वाद से तुम्हें सब कुछ प्राप्त हो। समर में तुझे जीतने वाला कोई न हो।

92. आनन्दित होकर किरात ने गुरु के चरणों में प्रणाम करके कहा कि हे गुरु ! मुझसे दक्षिणा माँगो। मैं इसी क्षण दे दूँगा।

93. गुरु द्रोण सुनकर आनन्दित हुए। युक्तितः गुरु-दक्षिणा देना शिष्य का कर्तव्य है।

94. संकल्प करने पर ही मैं तुमसे दक्षिणा माँगूगा। युग-युग तक मेरी प्रसिद्ध रहेगी।

95. जरा ने कहा—हे स्वामी! मैंने संकल्प किया। माँगो। माँगने पर मैं सिर-कमल भी दे दूँगा।

96. गुरु ने कहा—हे बेटा! जब तुमने प्रतिज्ञा की है तो मुझे दाहिने हाथ का अँगूठा काटकर दे दो।

97. गुरु ने अँगूठे को खींचकर पकड़ा। वाण मारने के समय हाथ में खिंचाव की शक्ति नहीं रहेगी।

98. तुम चार अंगुलियों से वाण-संचार करोगे। इसे देने से मेरी गुरु-दक्षिणा पूरी हो जायेगी।

99. जरा ने कहा—हे गुरु! तुमने मुझसे भय किया। उन लोगों का उद्धार करने के लिए मुझे अकर्मण्य बना दिया।

100. वारुणावन्त में मेरा जिस प्रकार अपमान हुआ था उसे मैंने हृदय में पाल रखा था।

101. मैंने दुर्योधन के वंश और कुरु सेना का ध्वंस करने की प्रतिज्ञा की थी।

102. हे गुरु! तुमने ऐसा जानकर इनकी रक्षा की। तुमने परम महात्मा होकर भी सन्देह के कारण ऐसी व्यवस्था की।

103. यह कहकर उसने अपने अँगूठे को काट दिया। उसे देखकर गुरु का मन प्रसन्न हुआ।

104. जरा को कल्याणपूर्वक आश्वस्त करके उन्होंने वारुणावन्त में अपने आश्रम को पुत्रों के साथ प्रत्यावर्तन किया।

105. महात्मा हस्तिनापुर में प्रविष्ट हुए। पुनः चार वर्षों तक अपने कर्म में लगे रहे।

अर्जुन की अस्त्र-कुशलता और द्रोण से वर-प्राप्ति

1. सुनो हे राजा! जिस दिन विद्या-परीक्षा हुई, उस दिन से कौरवों के मन में इर्ष्या पैदा हुई।

2. दुर्योधन मुख्यतः सोचता है कि हमारे ऊपर गुरु का सद्भाव नहीं है।

3. द्रोण हमारे विद्यागुरु हैं, किन्तु केवल अर्जुन को ही उन्होंने शस्त्र-विद्या सिखाई।

4. हम एक सौ-एक भाई विद्या में सिद्ध नहीं हुए। द्रोण के समान गुरु को पाकर भी विद्या नहीं पायी।

5. इस प्रकार सोचकर कर्ण, दुर्योधन और दुःशासन आदि के नेतृत्व में धृतराष्ट्र के पुत्रों ने गुरु द्रोणाचार्य से निवेदन किया।

6. हे गुरु! आप सकल वेद-शास्त्र में निर्जित हैं। परशुराम की विद्या के प्रभाव से आप त्रैलोक्य विजयी हैं।

7. आपके मन में हम लोगों के प्रति शुद्ध भाव नहीं है। हे स्वामी! आप अकेले अर्जुन को ही सिखाते हैं।

8. आप जैसे गुरु की सेवा करके भी हम लोग विद्या-लाभ में असफल हुए।

9. द्रोण ने कहा कि यह मेरा दुर्भाग्य है कि तुम्हें मेरा विद्या सिखाना निरर्थक हुआ।

10. तुम लोगों को मैंने शुद्ध चित्त से विद्या सिखायी। मैं स्वयं अस्त्र-शस्त्र संचालन का प्रयोग करके दिखाता था।

11. हाथ पकड़कर प्रत्येक को सिखाता हूँ किन्तु तुम लोगों ने अहंकारपूर्वक उसे नहीं सीखा।

12. जब मैं तुम लोगों को विद्या सिखाता हूँ, उस समय अर्जुन बिना पूछे देखकर सीखता है।

13. द्रोण मुनि ने कहा—फाल्गुनी जैसा शर-सन्धान करता है, वैसा मुझे भी ज्ञात नहीं है।

14. परशुराम की विद्या अर्जुन ने देखकर प्राप्त कर ली।

15. दुर्योधन ने कहा कि आपने शुद्ध चित्त से वीर पार्थ को सब कुछ सिखाया।

16. दुर्योधन की बात से द्रोण चुप हो गये। सभी कुरुवीरों ने अर्जुन से इर्ष्या की।

17. इसके बाद हे वैवस्वत मनु! विद्या की महिमा सुनो।

18. एक दिन द्रोण ने एक उपाय किया। सभी पुत्रों को

लेकर यमुना स्नान के लिए गये।

19. मार्ग में एक सुन्दर साल का वृक्ष देखकर द्रोण ने कहा कि यहाँ परीक्षा करूँगा।

20 अर्जुन से कहा कि बेटा! तुम लौटकर कृपाचार्य के घर से स्नान की साम्रगी ले आओ।

21 तिल, आँवला और तैलादि अन्यान्य प्रमाधन मामग्री बिना भूमि पर रखे मेरे पास ले आओ।

22 गुरु के वचन से अर्जुन चल दिया। गुरु द्रोण वृक्ष के नीचे पहुँचे।

23-24 दुर्योधन के दोनो हाथो को दबाकर गुरू ने पकडा ओर मुष्टि, ग्रन्थि और दृष्टि को दृढ करके उसको ध नुप और तरकस पकडाया।

25 कर्तरी वाण को डोरी पर चढाकर दुर्योधन का एक दृष्टि वाण-सन्धान करने के लिए कहा।

26 दुर्योधन ने सुनकर पत्तों का छेदन किया। इससे कुरुवीरो का पचमन आनन्दित हुआ।

27 शिष्यो को लेकर मुनि यमुना के किनारे पहुचे। तैलादि सिर प्रसाधन लेकर अर्जुन उस वृक्ष के नीचे पहुचा।

28 अजुन वृक्ष को देखकर आश्चर्यचकित हुआ कि वृक्ष मे एक भी पत्ता नही है।

29 अर्जुन ने देखा कि द्रोण के पद-गति का चिह्न पडा है। उसने सोचा कि उन्होने कुरुपति को गुप्त विद्या सिखायी है।

30 अजुन ने उसी प्रकार पद-गति की ओर भूमि पर पचवाण मारा।

31 उसके ऊपर स्नान-सामग्री का रखकर अवलोकन वाण का सन्धान किया।

32 सभी वृन्तों को काटकर स्नान-सामग्री का लेकर वह मन-मदी चल पडा।

33 गुरु के पास जाकर उसने स्नान-सामग्री दी। उन्होने सुगन्धित तेल सिर पर लगाया।

34 यमुना नदी मे द्रोण घुमे। समस्त शिष्य भी भीतर घुसे।

35-36 स्नान करते समय एक कुम्भीर ने आकर द्रोण गुरु को पकड लिया। सभी शिष्य डरकर भाग गये। कुम्भीर गुरु को वसीटकर कर ले जा रहा है।

37. जल से द्रोण गुरु बाहर नहीं निकल पा रहे हैं। रक्षा करो—कहकर वे शिष्यों को पुकारते हैं।

38 भीमसेन देखकर भी जल में कूदा। जकड़कर कुम्भीर को पकड़ा।

39. खीचने से कुम्भीर मर गया। द्रोण गुरु ने कहा—हे भीमसेन! तुम धन्य हो।

40 तुमने अब मुझे जीवन दान दिया। क्या देकर मै तुम्हारे मन को तुष्ट करूंगा।

41 मै तुमको प्रसन्न होकर गदा-विद्या प्रदान करूँगा। मेरी गदा-विद्या से तुम सकल भुवन को जीतोगे।

42 बलराम की गदा-विद्या जगत्-प्रसिद्ध हे। तुम्हारी गदा-विद्या भी ऐसे ही प्रसिद्ध हो।

43 अटूट गदा-विद्या द्रोण ने भीमसेन को देकर कहा—तुम त्रैलोक्य मे विख्यात हो।

44 गदा-विद्या पाकर भीमसेन प्रसन्न हुए। पुत्रो को लेकर द्रोण ने गमन किया।

45-46 लौटकर गुरु उसी पेड के नीचे पहुँचे। दुर्योधन ने उस साल वृक्ष को देखकर पूछा—मेने तो सभी पत्तो को काटा था, किन्तु वृन्तो को किसने काट दिया ?

47 द्रोण कहते है—हे अजुन! यह तो तुम्हारे वाण जेसा दिखाई देता हे।

48 अर्जुन ने कहा—मै कृपाचार्य के घर गया। वहाँ से स्नान सामग्री लेकर शीघ्र लोट आया।

49 आँख उटाकर मेने वृक्ष के ऊपर देखा और देखा कि पत्ते नीचे पडे हे।

50 गुरु की पद-गति को निरीक्षणपूर्वक मैने देखा। उसी प्रकार गति करके मैने बावल शर को शीघ्र छोडा।

51 सभी वृन्तो को काटकर गिरा दिया। यह सुनकर द्रोण मुनि स्तम्भित हुए।

52 दुर्योधन की ओर देखकर गुरु द्रोण कहते है। अर्जुन ने यह विद्या कहाँ से सीखी?

53 तुम लोग तो हर समय कहते हो और मैं शिष्य रूपी पुत्र होने के कारण सह लेता हूँ।

54 अर्जुन की ओर देखकर गुरु द्रोण ने कहा—इस महिभार को दूर करने के लिए ही तुम्हारा जन्म हुआ है।

55 दुःशासन ने कहा—हे गुरु! अर्जुन ने आपकी आज्ञा

का उल्लंघन किया। स्नान सामग्री को उसने भूमि पर रखा है।

56. दुःशासन के कहने पर अर्जुन ने कहा—हे गुरु द्रोण! मैंने भूमि पर पंचवाणों को मारा।

57. उन्हीं के ऊपर स्नान की सामग्री को रखकर बावल शर से सभी वृन्तों का छेदन किया।

58 गुरु की आज्ञा जो शिष्य नहीं मानता, उसको विद्या अप्राप्त होती है और वह सहज ही नष्ट हो जाता है।

59 द्रोण ने देखा कि वाण का मुख भूमि पर चिह्नित है। कुरुवीर देखकर चकित हुए।

60 पवमन से परम आनन्दित होकर द्रोण ने कहा कि तुम्हें सकल विद्या प्राप्त हो।

61 सन्तुष्ट होकर अर्जुन को द्रोण ने वर दिया और पुत्रों को लेकर इन्द्रप्रस्थ को गये।

62 लक्ष्य-स्थल बनाकर शर-सन्धान करते हैं। उसी दिन से हाथ का कौशल सीखते हैं।

63 अर्जुन का वाण-सन्धान देखकर कुरुवीरों का हृदय काँप जाता है।

64 ब्रह्मवेत्ता पण्डित अगस्त्य कहते हैं और वैवस्वत मनु इस अमृत कथा को सुनते हैं।

65 हे जंखेरपुरवासिनी सिद्ध सारला देवी तुम्हें नमस्कार हो। तुम्हारे द्वारा कलिकाल का पातक ध्वस्त होता है।

66 तुम ब्रह्मज्ञानी, अनादि अपर्णा, हे सारला गोस्वामिनी! मैंने जो कुछ नहीं देखा और सुना था, उसे भी लिखने की शक्ति तुमने दी।

67 जन्म-जन्मान्तर से मैं शास्त्रवादी नही हूं। पण्डित जनों के बीच मैं कभी नहीं गया।

68. उस सिद्ध देवी ने मुझसे प्रसन्न होकर अकल्पनीय श्री महाभारत लिखने के लिए आदेश दिया।

69 जंखेरपुरवासिनी, कृपाजल नन्दिनी के आदेश से मैं शूद्रमुनि हुआ।

70 उस सिद्ध देवी के चरण में मेरी सेवा अर्पित है। शूद्रमुनि सारला दास को गति-मुक्ति दो।

द्रोण के आदेश से कुरु-पाण्डवों द्वारा द्रुपद का बन्धन

1-4. एक दिन गुरु द्रोण अखाड़े में बैठे थे। भाइयों के साथ दुर्योधन सामने खड़ा है।

5. द्रोण ने कहा—हे बेटा! मैं तीर्थवासी हूँ, किन्तु तुम लोगों को शिक्षा देने के लिए मैं कुछ दिन अटक गया।

6. ऋषि, विप्र महात्मा और ब्रह्मचारी धर्माचरण करने के लिये पद-यात्रा करते हैं।

7 तुम लोग परम कल्याण और कुशल से रहो। मैं अपने धर्मार्थ तीर्थयात्रा करूँगा।

8. दुर्योधन, दुःशासन और वीर कर्ण को एकान्त में द्रोण ने समझाया।

9. यद्यपि मैंने तुम्हें विद्या सिखाई है, तथापि तुम लोग भीम और अर्जुन के साथ विवादी मत होना।

10. तुम लोग एक और अभिन्न सहोदर हो। पाण्डवों के समान युधिष्ठिर की भक्ति करना।

11. युधिष्ठिर से कभी भी विमुख मत होना। तभी सब समय यह श्री और सम्पत्ति रहेगी।

12 दुर्योधन ने दोनों हाथ जोड़कर कहा, आपने हमें दीर्घकाल तक विद्या सिखाई।

13. आपकी जो इच्छा हो, मुझसे गुरु-दक्षिणा माँगो। मैं आपको दूँगा।

14. इस प्रकार बहुत दिन बीत गये। सभी भाइयों को दुर्योधन ने बुलाकर पूछा।

15-16. हे गुरु! अपनी इच्छानुसार गुरु-दक्षिणा माँगो। गुरु दक्षिणा न देकर जो विद्या साधन करते हैं, उन्हें विद्या सिद्ध नहीं होती।

17. गुरु ने कहा—हे दुर्योधन! तुमने जो कहा, वह बात सत्य है।

18. मैंने नीचे हाथ करके परशुराम से दान ग्रहण किया। अब मैं कैसे दूसरों से दान माँगूगा।

19. इच्छागुरु शिक्षागुरु शास्त्रगुरु और दीक्षागुरु कभी भी ये लोग प्रतिदान नहीं लेते।

20. हमारा धन और भूमिदान से कोई मतलब नहीं है। यदि मुझे दक्षिणा देनी है तो दृढ़ चित्त से संकल्प

करो।

21. दुर्योधन ने कहा—आप जो कुछ भी माँगेंगे, मैं उसे अवश्य दूँगा। यह मेरा तीन बार सत्य है।

22. द्रोण ने कहा—हे बेटा! मैं माँगता हूँ कि दुप्रद राजा को मेरे पास पकड़कर ले आओ।

23. मैं तुम्हारा गुरु और तुम मेरे प्रिय पुत्र हो। इतना देने से मेरी गुरु-दक्षिणा हो जायेगी।

24. सुनकर दुर्योधन क्रोध से प्रचण्ड होकर कहता है कि द्रुपद देश को जाने के लिए सैन्य वाहिनी सुसज्जित करो।

25. रथ, गज, अश्व और पदाति सैनिक सुसज्जित हैं। ढोल, दमामा और भेरी अपरिमित रूप में बज रही हैं।

26. गज तुरंग को रथ में जोता गया। वेगवान घोड़ों पर चढ़कर अश्वारोही सैनिक विहार करते हैं।

27. वीरवाद्य, दमामा, विजयघोष बज रहा है। ग्यारह अक्षैहिणी सेना सजी है।

28. दण्ड-सज्जा देखकर फाल्गुनी हँसता है। द्रोण पूछते हैं कि क्या तुम्हारे मनोनुकूल नहीं हुआ।

29. अर्जुन ने कहा—हे गुरु! मैं इसलिए हँसा कि क्षार द्रुपद के लिए इतनी बड़ी सैन्य सज्जा की क्या जरूरत थी?

30. कोई भी जाकर उसे पकड़कर ला सकता है। छोटी सी बात के लिए इतनी बड़ी सेना क्यों सजती है?

31. दुर्योधन ने कहा—तुम तो जन्म से ही दृष्ट हो। जितनी प्रतिज्ञा करते हो सबमें अतिरंजना ही रहती है।

32. ब्राह्मण गुरु होने के कारण इन्होंने सह लिया। भाग्यवर होने के कारण तुम्हारा विनाश नहीं हुआ।

33. ऐसे गुरु के सामने तुम अहंकारपूर्ण बात करते हो। अल्पज्ञानी होकर तुम अपार प्रतिज्ञा करते हो।

34. पांचाल देश का नृपति चक्रवर्ती, महाविवेकी, धार्मिक और शक्तिशाली है।

35. उनके एक पद्म रथ, नौ सागर हाथी, चार परायुध अश्व, और नौ अक्षौहिणी पदाति हैं।

36. चार हजार राज्यों के राजा उस अकेले राजा की सेवा करते हैं। उसको तुम अकेले पकड़ लाओगे?

37. अर्जुन ने कहा—यह मेरी बात निरर्थक नहीं है। गुरु का वचन ही प्रमाण है।

38-39. हे दुर्योधन! गुरु का आज्ञा-वचन सारतत्त्व है। द्रोण यदि मुझे आज्ञा देंगे तो मैं द्रुपद क्षार को एक क्षण में ला दूँगा।

40. दुर्योधन ने कहा—अब जाओ तो द्रुपद को लाने से ही तुम्हारी बात सत्य प्रमाणित होगी।

41. द्रोण ने अजंगम धनुष और अक्षय तूणीर को श्रीहस्त में लेकर अर्जुन को दिया।

42. गुरु के पाद-पद्म में शत-सहस्र दण्ड-प्रणाम करके अकेला अर्जुन गुरु-आज्ञा से चलता है।

43. द्रोण ने कहा—हे बेटा! तुम जगज्जयी हो। स्वर्ग, मर्त्य और पाताल लोक में तुम्हें कोई जीतने वाला न हो।

44. गुरु की आज्ञानुसार वह जगज्जयी, सुन्दर, गरिष्ठप्रतिज्ञ, द्वितीय कृष्ण चल रहा है।

45. वन और नगर को जीतते हुए वह पांचाल देश की कृष्णवेणी नदी के किनारे पहुँचा।

46. राज्य के पास मलयगिरि पर वह धनुर्धारी उपस्थित हुआ।

47-48. सिर पर रत्न मणिमय मुकुट और कर्ण में कुण्डल शोभित वीर, सुन्दर और चारुप्रभा युक्त अर्जुन का लक्षण और गुण देखकर गुप्तचर ने पूछा—तुम किस राजा के पुत्र हो ?

49. अर्जुन कहता है कि अपने राजा द्रुपद से कहो—मैं उसका शत्रु संग्राम करने के लिए आया हूँ।

50. तुम राजा के पास शीघ्र जाकर कहो कि सैन्यदल लेकर मेरे साथ युद्ध करने के लिए आवें।

51. श्रीमान् लोगों की आज्ञा भ्रष्ट नहीं होती। दर्शन करने से आनन्द से पेट भर जाता है।

52. राजदण्ड को वहन करके अकेले ही जाने वाले अर्जुन की बात को किसी ने अस्वीकार नहीं किया।

53. देवार्चन के बाद राजा के दरबार में उपस्थित होने के समय मन्त्री और अमात्य पास में बैठकर सेवा कर रहे हैं।

54. गुप्तचर हाथ जोड़कर कहता है—हे राजन्! सावधान होकर एक असम्भव कथा सुनो।

55. गुप्तचर राजाओं के दिव्यचक्षु के समान होते हैं। शुभ-अशुभ बात कहने पर मन्त्री उस पर विचार देता हैं।

56-57. हे देव ! एक हाथ में धनुष और दूसरे हाथ में एक वाण लेकर गगन से अवतीर्ण विद्याधर की तरह एक व्यक्ति कहता है कि अपने राजा को सूचित करो कि सैन्यदल लेकर मेरे साथ संग्राम करे।

58. द्रुपद ने करुणाकर मन्त्री को बुलाकर कहा कि वह कौन है? तुम पता लगाकर आओ।

59. राजा की आज्ञा पाकर वह मन्त्री एक अहिव्रत योद्धा को लेकर चल दिया।

60 राजपथ को घेरकर मत्तनाग की तरह चिल्लाते हुए वे जा रहे हैं।

61 पकडो-पकड़ो, मारो-मारो का घोर रव सुनाई दे रहा है। बाल सूर्य की तरह उनके अस्त्र चमकते हैं।

62 पर्वत पर बैठा अर्जुन देखता है। दस दल सेनाओ को अर्जुन ने दस वाण-संघात किया।

63 प्रत्येक दल में दस सहस्र मत्त गज जा रहे थे। दस वाणों से एक अहिव्रत हाथियों का पतन हुआ।

64 वाण सिर मे लगकर पीछे से निकल जाता है। हाथी के ऊपर से योद्धा मूर्च्छित होकर लुढ़क गये।

65 राजा के आगे जाकर दूतों ने कहा। सेना लेकर द्रुपद स्वय वहाँ आया।

66 एक पद्म रथ, बत्तीस पद्म हाथी, अस्सी सागर घोडे ओर मात अक्षौहिणी पदाति लेकर द्रुपद जा रहे है।

67 सभी योद्धा सिहनाद करके दौड़ते है। सात योजन तक सेना भरी हुई है।

68 पर्वत के ऊपर बैठा अर्जुन सोचता है कि हे द्रुपद! तुम्हारा जीवन धन्य है और तुम्हारी सम्पत्ति साधु है।

69 गुरु ने तुम्हें मारने की आज्ञा नही दी है। बिना अपराध इसको मैं क्यों मारूँगा।

70. यह युक्तितः गुरु का मित्र है। गुरु-मित्र का मैं कैसे नाश करूँगा।

71. गुरु द्रोण ने मुझसे सद्भावपूर्ण व्यवहार करने के लिए कहा है। उस वीर ने तरकस से एक मन-भेदी वाण छोड़ा। अनेक वाण एक साथ ही लगे।,

72. द्रुपद की सेना पर उसने मोहिनी वाण छोड़ा। अनेक वाण एक साथ ही लगे।

73 रथों पर हजार वाण, गजों पर पाँच सौ, अश्व पर ढाई सौ, पदाति पर एक सौ वाण पड़े।

74. अर्जुन के इतने वाण भेदने से सात योजन पर्यन्त भूमि आच्छादित करके सेना गिर पड़ी।

75. सेना के साथ मोह से अचेत हुए द्रुपद राजा को फाल्गुनी ने जाकर पकड़ा।

76. द्रुपद ने पूछा—तुम कैसे पुरुष हो? त्रिभुवन में ऐसा साहसी कोई नहीं है।

77 अर्जुन ने कहा—मैं कुन्ती का पुत्र हूँ और द्रोण गुरु से अपरिमित विद्या सीखी है।

78 उन्होंने गुरु-दक्षिणा स्वरूप मुझसे द्रुपद राजा को लाने के लिए कहा।

79 उनकी आज्ञा से मैं यहाँ आया और तुम्हारी सेना का निपात किया।

80 अर्जुन ने कहा –हे द्रुपद! तुम कुछ बुरा न मानना। मैं द्रोण का शिष्य तुम्हें लेने आया हूँ।

81. मेरे रहते तुम पर कोई विपत्ति नहीं पड़ेगी। तुम मन में कुछ सन्देह मत करो।

82 द्रुपद ने कहा—मैंने द्रोण से द्रोह किया है। हे अर्जुन! तुम मुझे शरण दो।

83 अर्जुन ने कहा कि मैं तुम्हें एक दण्ड दूँगा क्योंकि गुरु की आज्ञा शिष्य के लिए पालनीय है।

84 एक डोरी लेकर मैं तुम्हें बाँधूँगा। हे तात' इस पर तुम क्रोध मत करना।

85 दण्ड देखकर द्रोण तुम पर दया करेंगे। वे चिर क्रोधी नहीं, महाशान्त ब्राह्मण हैं।

86. द्रुपद ने कहा—जब ऐसी प्रतिज्ञा है तो मैं तुम्हारी बात की कैसे अवज्ञा करूँगा।

87. आगे द्रुपद और पीछे-पीछे वीर फाल्गुनी नौ दिन में तीन सौ योजन तक पहुँच गये।

88. वारुणावन्त अखाड़े के पास द्रुपद को पाट-डोरी से बाध दिया।

89 उसके केश और वस्त्रों को धूलधूसरित और अस्त-व्यस्त करके गुरु के पास ले गया।

90. बायें हाथ से द्रुपद के केश पकड़कर बन्धन-युक्त द्रुपद को अखाड़े में घुसाया।

91. गुरु पलंग के ऊपर सो रहे हैं। द्रुपद को लेकर अर्जुन नीचे खड़ा है।

92. गुरु की निद्रा मैं तोडूँगा? यह सोचकर पाँवदाने के

पावे में द्रुपद को बाँध दिया।

93. मैं युधिष्ठिर देव के पास जा रहा हूँ। हे राजा! तुम यहाँ गिरकर रोते रहो।

94. द्रोण गुरु महाभिज्ञ ब्राह्मण हैं। तुम्हारी अवस्था देखकर वे तुम पर दया करेंगे।

95. अकेले होकर हे द्रुपद! तुम भाग मत जाना। तुम जितनी भी दूर होगे, मैं वाण मारकर तुम्हारा शिरच्छेदन करूँगा।

96. मैं अभी भीष्म, विदुर, युधिष्ठिर को बुलाकर ला रहा हूँ। सबसे विनय करके मैं तुमको मुक्त कर दूँगा।

97 अर्जुन बाहर चला गया। मन म सोचा कि एक बात तो भूल ही गया।

98 द्रुपद की सेना तो मूर्छित होकर पडी होगी। वह क्या आकर मेरे साथ युद्ध कर सकेगी?

99. वह सेना तो शत्रु नही है किन्तु द्रोण ने द्रुपद के किंचित् दोष से ऐसी आज्ञा दी।

100. इसी समय एक जीवन-न्यास शर को लेकर अर्जुन ने कहा कि द्रुपद की सेना को जीवन-दान दो।

101. आज्ञानुसार उस वाण ने तीन सौ योजन की दूरी पर पहुँचकर सबको जीवन-दान दिया।

102 लौटकर वह वाण अर्जुन के तरकस मे घुसा। स्वर्गवासी देवताओं ने साधु-साधु कहा।

103 द्रुपद की सेना सचेत होकर उठी। राजा को बन्दी बनाया कहकर शोर-गुल मचाया।

104 अपने-अपने घर जाकर सभी ने रोदन किया। समय का फेर समझकर सभी शान्त हो गये।

105 इसके बाद अर्जुन ने जाकर भीष्म, युधिष्ठिर, विदुर और संजय आदि को एकत्रित किया।

106 बेचारे द्रुपद को मं पकड़कर लाया हूँ। आप सभी गुरु से कहकर उसे मुक्त करा देना।

107-108. इसी समय कर्ण, दुर्योधन, दुःशासन सौ भाइयों के साथ अखाड़े में आये। देखा कि श्रीहीन होकर नृपति द्रुपद बँधे हैं।

109. दौड़कर दुर्योधन शीघ्र उसके केश पकड़कर मारते हुए द्रुपद को अनेक कष्ट देने लगा।

110 मूर्ख, दुष्ट, दुर्भार दुर्योधन ने वाण से द्रुपद के सिर का सात भागों में मुण्डन किया।

111. पीछे हाथ बाँधकर घूँसा और लातें मारीं। नृप विलाप करके चिल्लाते हैं कि हे अर्जुन रक्षा करो।

112. शोरगुल सुनकर द्रोण उठे। देखा कि द्रुपद के केश और वस्त्र अस्त-व्यस्त हैं।

113. द्रोण ने कहा—हे दुर्योधन! रुको-रुको। यह मेरा मित्र द्रुपद है।

114. पलंग पर बैठे हुए द्रुपद की अवस्था देखी। हाय! हाय! मित्र! कहकर आलिंगन किया।

116 पगड़ी, अलंकार, अक्षत देकर द्रोण ने कहा कि हे मित्र! तुम अपने घर जाओ।

द्रुपद की तपस्या

1 द्रुपद छूटते ही विकल होकर भाग गया। हिमालय पर्वत के नीचे बहती हुई काशी नदी के पास पहुँचा।

2 लज्जा के कारण द्रुपद अपने राज्य को न जाकर गोरी के इस तपस्थान पर पहुँचा।

3 इस प्रकार की दुरवस्था प्राप्त करके राज्य को कैसे लौटूँगा? और मन्त्री अमात्य को कैसे मुँह दिखलाऊँगा।

4 जीवन की आशा छोड़कर राग, मोह, हिंसा से रहित होकर तपस्वी रूप मे राजा घोर तपस्या मे रत हुआ।

5 महात्मा पचभूत को निमज्जित करके रुद्र देवता का अजपा जाप ध्यान करता है।

6-8 अनाक्षर नाथ, कृपासिन्धु, अन्धकर विदारण, चन्द्रमौलि, कामदेव-दर्प-भंगकारी, सदानन्द पुरुष, सदाशिव, अणाकार पुरुष, दिव्याग तुमने ब्रह्म शक्ति से अनग का दहन किया।

9 तुम आदि ईशान नाथ और जगत् गुरु हो। तुम इस कलिकाल को ध्वस्त करने की चिन्ता करते हो।

10-11. हे स्वामी पंचानन, सुरपावक, गंगाधर, शैलजा बल्लभ, पिनाकी, तुम्हारा महारुद्र मन्त्र संसार का सार है।

12. कालानल सर्प तुम्हारा अलंकार है। कटि और मेखला में अनन्त भुजग हैं।

13. हे काम-पतन-नाथ! संसार धर्म छोड़कर ध्यानावस्थित अवस्था में तुम योग में तल्लीन हुए।

14. इस सचराचर जीव-जन्तु, कीट-पतंगों की सृष्टि की। उल्लंग होकर भी तुम त्रिलाक के स्वामी हुए।

15. तुम्हारे हाथ में पिनाक, सारंग, खट्वांग और डमरू के नाद से विपत्ति दूर हो जाती है।

16-17. हे प्रतिज्ञा-सार्थक नाथ, दक्ष-यज्ञ-विध्वंसक आदि ईशान, त्रिलोचन, विरूपाक्ष! तुम्हें नमस्कार है।

18. हे करुणाकर नाथ, त्रैलोक्य चिन्तामणि, कोटि युग तुम्हारा निमिष मात्र है।

19. हे स्वामी नीलकण्ठ! तुम्हारे श्री चरणों में नमस्कार करता हूँ। मुझे कैलाश के सिंहद्वार पर रहने के लिए आज्ञा दो।

20. हे गिरिजावल्लभ! मैं तुम्हारे श्री चरणों का नित्य दास हूं। काल दण्ड-पाश से मेरी रक्षा करो।

21. श्री महेश्वर रूप को शत-सहस्र दण्ड प्रणाम हो। शास्त्र योग में शूद्र कवि सारला दास कहते हैं।

अर्जुन की प्रतिज्ञा

1. पुराण के आधार पर अगस्त्य वैवस्त मनु के सामने अर्जुन की महिमा बताते है।

2. पत्नी द्वारा भोजन बनाने के बाद द्रोण स्नान करने के लिए आ रहे है।-

3. सुरभि नदी में स्नान करने के लिए जाते समय द्रोण ने दूर से एक इमली का वृक्ष देखा।

4-5. वृक्षराज के पत्ते खट्टे होने के कारण कर्तरि वाण छोड़कर गिरा दिया।

6. उसी समय अर्जुन आकर गुरु के घर में प्रविष्ट हुआ।

7. अर्जुन ने पूछा कि गुरु कहां गये ? गुरु-पत्नी ने कहा, भोजन प्रस्तुत करने का आदेश देकर वे स्नान करने के लिए गये।

8. यह सुनकर वीर अर्जुन ने उसी रास्ते से गमन किया और वृक्ष की अवस्था देखी।

9. चैत मास न होने पर भी कैसे पतझड़ हुआ ? यह सोचकर वह वृक्ष के पास पहुँचा।

10. वाण के कटे हुए पत्रों को देखकर उसने सोचा कि यह द्रोण का कार्य है।

11. इस प्रचण्ड धूप में वृक्ष का दहन देखकर उसका हृदय बहुत दुःखी हुआ।

12. एक पवन शर को डोरी पर रखकर पत्रों को उड़ाकर अपने-अपने स्थान पर जोड़ दिया।

13. मन्त्र बल से सूखे पत्तों को जीवित कर सबको हरा कर दिया।

14. इतना कार्य करके वह लौट आया और अपने घर में जाकर प्रविष्ट हुआ।

15. गुरु ने स्नान-तर्पण शीघ्र समाप्त करके लौटते समय रास्ते में उस वृक्ष को देखा।

16. सिर उठाकर देखा कि मैं तो पत्तों को गिराकर झंखाड़ करके गया था। यह कार्य किसने किया ? मैं तो उससे पराजित हुआ।

17. यह सोचकर द्रोण शीघ्र घर आकर भोजन पर बैठे।

18. पूछा कि हरिता ! यहां कौन आया था ? उसने कहा कि यहाँ अर्जुन आया था।

19. सोचकर बोले कि इस छेदन का कारण मैं कल अर्जुन से पूछूगा।

20. रात्रि बीतने पर सूर्य उदित हुआ। सभी अखाड़े में एकत्रित हुए।

21. गुरु ने पूछा—हे अर्जुन ! तुम मेरे घर गये थे और मुझे ढूढने के उद्देश्य से मेरे पीछे-पीछे गये।

22. उस वृक्षराज के साथ तुमने क्या किया ? कुरुवीरों ने गुरु के मुख से ऐसा सुना।

23. बेटा ! समस्त पत्रों को मन्त्र बल से मैं तो तोड़ गया था। किसने सूखे हुए पत्तो को हरा करके पवन शर से वृक्ष में जोड़ दिया।

24. ऐसा सुनकर कुरुवीरों की वही आस्था हुई जैसी तेल-पात्र में कीड़े की होती है।

25. हे बेटा ! तुम्हारे उत्थान से परिवार में अवश्य कलह होगा। दुर्योधन और युधिष्ठिर में अवश्य संग्राम होगा।

26. इतनी बात सुनकर दुर्योधन के मन में गम्भीर चिन्ता हुई किन्तु उसने बाहर प्रसन्नता का भाव प्रकट किया।

द्रोण का प्रयाग गमन, अश्वत्थामा और कृपाचार्य की तपस्या और कौरवों द्वारा उनका प्रत्यावर्तन

1. पुराण संयोग से अगस्त्य मुनि कथा कहते हैं और

वैवस्वत मनु श्रद्धापूर्वक सुनते हैं।
2. श्री महाभारत के आदि पर्व की कथा संसार के लिए अर्थ और गति देने वाली है।
3. इस ग्रन्थ को सुनने से यश, श्री, आयु बढ़ती है और शत्रु का क्षय तथा अनिष्ट का दर्प लोप होता है।
4. द्रोण गुरु और कौरवों की शक्ति-कौशल देखकर बलराम ने नारायण से कहा—
5 हे भाई ! चलो हस्तिनापुर के अखाड़े में देखें कि वे कैसे शस्त्र-साधना करते हैं ?
6. तालध्वज रथ पर बलदेव और नन्दीघोष रथ पर श्रीकृष्ण बैठे।
7 तालध्वज रथ को सुबल सारथी और नन्दी घोष रथ को दारुक ने शीघ्र चलाया।
8.-9. वसन्त ऋतु के फाल्गुन मास के एक शुभ योग में कृष्ण और बलराम वारणावन्त को चलते हैं।
10. द्रोण प्रयाग महातीर्थ में गये थे। उन्हें लाने के लिए एक सौ भाई गये।
11 द्रोण को अजगपाद वन मे छोड़कर वे कृपाचार्य और अश्वत्थामा की तपस्थली पर पहुँचे।
12 अश्वत्थामा को देखा कि वह चौदह वर्ष से एक आसन पर निश्चल नयन से बैठा है।
13 वह मन में किसी की याद नहीं करता। ध्यानावस्थित अवस्था मे शून्य मे लय होकर आकाश में देखता है।
14 अणाकार बोध और ब्रह्मज्ञान की साधना करता है। इस प्रकार एकाग्रचित्त होकर चौदह वर्ष बीत गये।
15 श्वास का निरोध करके वायु को ऊपर उठाता है। द्वादश इन्द्रियों को एकीभूत करता है।
16 बीस अंगुल सुषुम्ना नाडी में श्वास ले जाने से निद्रा और आलस्य नहीं आता।
17 पंचमन को सुषुम्ना नाड़ी से त्रिकुटी के रास्ते ऊपर उठाया। ज्वालानल को ब्रह्म पटल पर पहुँचाया।
18 बहत्तर मुद्राओं को एकत्रित करके धातु को दृढ़ करके महानिद्रा को तोड़ दिया।
19 निद्रापुरुष काल रूप में सबका नाश करता है।
20 पवन नौ द्वार से ऊपर उठाकर सुषुम्ना नाड़ी में अवरुद्ध है।
21 नौ द्वार निरोध करके वह महात्मा बैठा है। शून्य शब्द की सीमा को देखकर भी नहीं देखता है।
22. जिह्वा को घण्टी के नीचे उलटकर अमृतपान किया करता है।
23. वह सात्विक पुरुष काल से निर्भय है। मायारहित पुरुष शून्य को चाहता है।
24 पवन नहीं, पंचशाखा नहीं, अंग नहीं और पथ-रेखा नहीं है।
25. प्रसन्नता और अप्रसन्नता नहीं, इन्द्रिय का गोपन करके कामना का निग्रह किया।
26 जब अणाकार का निष्काम जप किया तो निराकार आसन छोड़कर उठे।
27. आकाश से अश्वत्थामा वर माँगो की आवाज सुनाई दी।
28 हे स्वामी ! तुम्हारा शरीर नहीं दिखाई देता और कोकिल के समान मधुर ध्वनि सुनाई दे रही है।
29 तुम किस भुवन की इच्छा करते हो ? अपनी इच्छा के अनुसार वर माँगो।
30 अश्वत्थामा ने कहा कि मैं इस धरती पर पैदा हुआ। इस पृथ्वी के रहने तक मैं यहीं रहूँगा।
31. काल और काम मुझे वशीभूत न करें। निद्रा नयन को पीड़ित न करे। ऐसा वर मुझे दो। देव-शून्य ने तथास्तु कहा।
32. कृपाचार्य ने वर माँगा कि इस पृथ्वी के रहने तक मै अमर रहूँ।
33. शून्य पुरुष ने कहा कि मेरे वर से त्रिकालजीवी हो।
34. हाथ जोड़कर अश्वत्थामा कहता है—हे महात्मा मुझे एक और वर दो।
35. हस्तिनापुर में रहने की मेरी इच्छा है। मैं ब्रह्म शर से भी विनष्ट न होऊँ।
36 देवशून्य ने अस्तु कहा। ब्रह्म वेद और शस्त्र विद्या से तुम महाज्ञानी हो।
37. इस समय कुरुवीरों ने जाकर देखा कि अचेतन होकर दोनों भूमि पर पड़े हैं।
38 अश्वात्थामा और कृपाचार्य अनाहार के कारण बलहीन होकर उठ-बैठ नहीं सकते हैं।
39 दुःशासन ने अश्वात्थामा को गोद में पकड़कर कन्धे पर उठाया।

40 दुर्योधन ने कृपाचार्य को पकड़कर कन्धे पर बैठाया।

41. वारुणावन्त अखाड़े में लेकर आते हुए कौस्तुभ पर्वत पर बलराम और कृष्ण से भेंट हुई।

42 युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, सहदेव, नकुल ओर बलदेव के चरणों में प्रणाम किया।

43. कृष्ण ने युधिष्ठिर को नमस्कार किया। धर्मराज ने उन्हें आशीर्वाद दिया।

41. बलराम और कृष्ण को किसी भी कुरुवीर ने नमस्कार नही किया और अनेक अपमानजनक वाते कहीं।

15 वारुणावन्त में जाकर प्रविष्ट हुए। अश्वत्थामा और कृपाचार्य को अनेकशः बधाई दी।

16 सभी ने वहाँ पहुँचकर स्नान और भोजन किया। कृष्ण ने कुन्ती के घर में भोजन किया।

17 बलराम सर्प-मुकुट धारण किये हुए हे। वे सब समय पवन-आहार द्वारा जीते है।

बलराम द्वारा दुर्योधन को गदा-विद्या का शिक्षण

1 बलराम ने कहा कि तुम्हारे विद्यागुरु द्रोण ने कौन-कौन सी विद्या सिखाई है ? मै परीक्षा करना चाहता हूँ।

2 सभी धनुप और शस्त्र विद्या देखी। बलराम ने कहा किसी को गदा-विद्या सिद्ध नही हुई।

3 बलराम ने अपना गदा लेकर आकर्षण गति की।

4 उठकर शून्य पवन मे गदा को घुमाया। देव ने अपनी मुट्ठी मे गदा का आकर्षण किया।

5 दुर्योधन ने विनय भाव से प्रणाम करके कहा—हे स्वामी ! मुझे यह गदा-विद्या सिखाइये।

6. बलराम ने कहा—हमारा अखाड़ा रैवतक पर्वत पर है। जिसको जरूरत हो वह नित्य वहाँ जाये।

7 अर्जुन ने कहा—हे स्वामी ! द्रोण हमारे गुरु है। उनकी विद्या को छोड़कर मुझे अन्य विद्या की जरूरत नही हे।

8 एक ही गुरु से अनेक विद्यायें सीखी जाती हैं, जैसे एक ही महौषधि से अनेक रोग नष्ट हो जाते हैं।

9 अपार औषधि से रोगी नही बचता। अधिक भोजन से योगी का नाश हो जाता है।

10 अपार कुटुम्ब से अपार दुःख होता है। अपार दान ग्रहण से ब्राह्मण का नाश हो जाता है।

11. अपार बुद्धि से कार्य नष्ट हो जाता है। अपार मत से मनुष्य स्वयं विनष्ट हो जाता है।

12. अपार स्त्री-प्रसंग और अपार शृंगार-रति से आयु क्षीण हो जाती है।

13. अनेक लोगों से चूहा नहीं मारा जा सकता। अनेक तीर्थाटन करने से परदेशी हो जाना पड़ता है।

14 अपार ईर्ष्या से शरीर का पतन होता है। अपार लोभ से मंगल-नाश होता है।

15 अर्जुन ने सभी अतिवादों का उदाहरण दिया। अपार से अपार युगान्तक कथा को उसने सुनाया।

16 ऐसी बात सुनकर दुर्योधन ने कहा—तुम्हारे न जाने से हमारा क्या हुआ ?

17 हम लोग जाकर गदा-विद्या सीखेगे। यह सुनकर योग-सिद्ध बलराम परम सन्तुष्ट हुए।

18 बलराम और कृष्ण लौटकर अपने राज्य को गये। हस्तिनापुर मे कुरुवीर रह गये।

19 दुर्योधन नित्य रैवतक पर्वत पर बलराम से गदा-विद्या सीखने के लिए जाता है।

20 बलराम से उसने गदा-विद्या सीखी। सो भाइयों ने ग्रन्थि और मुष्टि-कौशल जाना।

भानुमती विवाह

1 हे राजन् ! दक्षिण कोशल मे विजयनगर नामक राज्य है। भूमन्यु उसका राजा था।

2 उसकी भार्या का नाम भुवनावती और लडकी का नाम भानुमती था।

3 वह पुण्यवती वेद-शास्त्र मे प्रवीण, महाज्ञानी और परम सुन्दरी है।

4 माता का स्तनपान किया। दूध से ही जीती है, अन्न नहीं खाती।

5 वह देवांग वसन पहनती है। शास्त्र न पढ़कर नित्य शास्त्र का व्याख्यान देती है।

6. कोकिल स्वर में दिव्य रस का भाषण करती है। ऐसी विलक्षण सुन्दरी स्वर्ग राज्य में भी नहीं है।

7 भूमन्यु ने कहा कि स्त्री जाति के कारण मुझे तुम्हें किसी को प्रदान करना होगा।

8. बात सुनकर भानुमती ने कहा—मैं महासती हूँ। तुम मेरी चिन्ता मत करो।

9. हम चारों कन्याएँ आकाश की देवी हैं। द्वापर युग में पृथ्वी पर आकर पैदा हुई हैं।

10-11. सत्ययुग में रति, अहल्या, दयमन्ती, वेदमती, त्रेता युग में सीता, तारा, सावित्री, इन्दुमती और द्वापर में रेवती, रुक्मिणी, भानुमती, द्रौपदी रूप में हम चार बहनों के रूप में पैदा हुई।

12. हे पिता ! तुम मुझसे दुःखी मत होना। हम मरकर भी नहीं मरतीं। हम लोग लीला से पैदा हो जाती हैं।

13. हे पिता ! जब मेरी इच्छा होगी, मैं अपनी अभिलाषा तुमसे बताऊँगी।

14. इस बात के बाद एक सौ चौंसठ वर्ष बीत गये।

15. बालिका भाव से कुमारी खेल रही है। फिर भूमन्यु ने दुहिता से पूछा—

16. हे बेटी ! किसी को प्रदान करने के लिए तुम मुझे आज्ञा नहीं दोगी?

17. भानुमती ने कहा—हे पिता ! जब तुम्हें इतना दुःख है तो राजाओं को बुलाकर स्वयंवर कराओ।

18. दुहिता के स्वीकार करने पर भूमन्यु ने कहा कि हे बेटी ! मैं तो धनवान राजा नहीं हूँ।

19. पृथ्वी पर एक लाख राजा हैं। स्वयंवर करने से सभी राजा आयेंगे।

20. जिसको नहीं बुलाऊँगा वही अनिमन्त्रित हो जायेगा। इससे धर्म-नाश होगा और मेरा कार्य व्यर्थ होगा।

21. सतयुग में जमदग्नि ने यज्ञ में सबका वरण किया किन्तु सहस्रार्जुन का वरण नहीं किया।

22. यज्ञ के समय उसने अकेले यज्ञस्थान पर आक्रमण किया। शस्त्र आघात से सभी राजा भाग गये।

23. जमदग्नि का शिरश्छेदन करके यज्ञ को तोड़ दिया और सब कुछ लूट लिया।

24. सब लोगों को बुलाकर स्वयंवर करने पर कोई काम नहीं बनेगा, वरन् अपना ही विनाश होगा।

25. भानुमती ने कहा—स्वयंवर यज्ञ करके किसी भी एक व्यक्ति को वरण न करने से धर्म का नाश होता है।

26. भूमन्यु ने कहा—हे बेटी ! मैं तो धनहीन हूँ। इतने राजाओं की सेना को मैं कैसे भोजन दूँगा।

27. भानुमती ने कहा—हे पिता ! तुम धन की चिन्ता मत करो। मैं तुम्हें धन और अन्न दूँगी।

28. भूमन्यु ने कहा—मैं इस पर विश्वास करूँगा ? परीक्षा लेकर ही सन्तुष्ट होऊँगा।

29. हे तात ! तुम एक बड़ा पात्र बनवाओ। मेरा मन्त्रपूत जल उसमें भरकर खौलाओ।

30. वह भोजन पकाने से अमृत-रस-पूर्ण होगा। तुम अपनी सेना को इच्छानुसार परोसो।

31. लाख राजाओं की जितनी सेना है वे अपनी इच्छानुसार भोजन करें।

32. परीक्षा के लिए देवी ने मन्त्र-जल दिया। भूमन्यु ने लेकर स्वयं भोजन बनाना आरम्भ किया।

33. वास्तव में अमृतरस पूर्ण पाक हुआ। सभी सेना को परोसने पर भी समाप्त नहीं हुआ।

34. राजा की ग्यारह अक्षौहिणी सेना थी। एक बार के भोजन बनाने से किसी को कमी नहीं हुई।

35. भूमन्यु ने कहा—बेटी ! यह तो बड़ा दुर्लभ है। पृथ्वी पर ऐसा कोई नहीं है।

36. किसके आशीर्वाद से तुम ऐसी अन्नपूर्णा हुई ? किस पुण्यबल से तुमको ऐसी शक्ति मिली ?

37-39. दुहिता ने कहा, रेवती, रुक्मिणी, भानुमती, द्रौपदी, अरुन्धती, अंजना, कमला आदि हम सात बहनें ब्रह्मा की भार्या सावित्री की परिवारी हैं। उस ब्राह्मणी की प्रसन्नता से हमें पाक-विद्या प्राप्त है।

40. भूमन्यु ने कहा—बेटी ! तुमने अन्न दिया, किन्तु धन न होने पर सतत दान सम्भव नहीं है।

41. भानुमती ने कहा—हे पिता ! तुम धन की चिन्ता मत करो। जितने धन की आवश्यकता होगी, मैं दूँगी।

42. भूमन्यु ने कहा—मुझे परीक्षा दो। परीक्षा देने पर स्वयंवर के लिए इसी समय अनुमति दूँगा।

43. भानुमती ने कहा—पिता ! इस प्रस्तर-खण्ड को मेरे पास लाओ।

44. सात जोड़े लोग ढोकर पत्थर को भानुमती के सामने ले आये।

45. भानुमती ने दाहिना हाथ पाषाण पर रगड़ा। वह अग्नि से भी उज्ज्वल रत्न हो गया।

46. भूमन्यु नृपति देखकर आश्चर्यचकित हुए। हे बेटी !

तुम प्रत्यक्ष लक्ष्मी होकर उत्पन्न हुईं।

47 भानुमती ने कहा—पिता! जन्म-जन्म से मेरी यह सिद्धि है। मेरे दोनों हाथों में शंख-पद्म निधि चिह्न हैं।

48 लाल रंग के पत्थर को स्पर्श करने से मैं जैसी इच्छा करूँगी वैसा ही रत्न तैयार हो जायेगा।

49-50 कन्या मास, शुक्ल पक्ष, दशमी तिथि, शरदोत्सव के अन्त में अपराजिता पर्व, गुरुवार श्रवण नक्षत्र में भूमन्यु नृपति ने स्वयंवर व्यवस्था का शुभारम्भ किया।

तत्क्षण अपने मन्त्री शुभक को बुलाकर राजा ने स्वयंवर के लिए राजाओं को निमन्त्रित करने के लिए

शुभक मन्त्री सुनकर तत्पर हुआ और चारों ओर दूतों को भेजा।

भानुमती के चित्र पट बनाये। विभिन्न राजाओं को भी दिखाने के लिए निर्देश दिया।

मन्त्री के आदेश से सभी दूत गये और निमन्त्रित करने के लिए शास्त्र बता दिये।

राजाओं को अंकित चित्र पट दिखाकर भानुमती के स्वयंवर के लिए निमन्त्रित करते हैं।

भूमन्यु भानुमती के निकट प्रस्तर-खण्ड लाते हैं। उसका हाथ लगने से वे सब रत्न हो जाते हैं।

इस प्रकार राजा के पास अनेक रत्न हो गये। प्रासाद और भण्डार में रखने के लिए जगह न रही।

विश्वकर्मा को बुलाकर रत्न जड़कर एक छाया-मण्डप निर्मित कराने का आदेश दिया।

छाया-मण्डप शुभ योग में बनाया गया। राजा ने शीघ्रता से अतिथिशाला का निर्माण करवाया।

60 अश्वशाला, गजशाला नदी के किनारे बनाई गयी। प्रत्येक घर के ऊपर स्वर्ण कलश की स्थापना की गयी।

61 पताका फर्र-फर्र उड़ती है। प्रत्येक द्वार देश पर कदली का तोरण बनाया गया है।

62 भूमन्यु राजा के नगर में अस्सी पद्म भवन हैं। विजय समारोह में उसने उन सबको अलकृत किया।

63 भूमन्यु का नगर अलकापुरी की तरह दीप्त होकर इन्द्र के वारस्वती नगर की तरह दिखाई देता है।

64 अक्षत पाकर राजा गण आ रहे हैं। सभी विजयनगर की राजपुरी में पहुँचे।

65 भूमन्यु राजा पादासन और पादार्घ्य देकर सभी राजाओं की पाद-पूजा करते है।

66-75 कलिंग, उत्कल, बंग, तेलंग, खंजन, तिहुती, विदेश, गौर देश, महातृण, भोज, मन्दार, कावेरी कामाक्षा, मंगला, नेपाल, बेलाल, क्षीरण, खेचर, भूपाल, मालव, गुर्जर, महाराष्ट्र, मगध, मत्स्य, गुजरात, काशी, कौशिक, कान्यकुब्ज, उज्जैनी, पारिजात, कन्नौज, क्षेत्र, विक्षेत्र, गान्धार, नील, अनिल, नेपाल, शाखामण्डल, भापा मण्डल, वज्रगिरि मण्डल, शोणित मण्डल, कनक मण्डल, मरुमण्डल, मलय मण्डल, मन्दरमण्डल, पद्म मण्डल, कोशल मण्डल, आजनगर मण्डल, अमर मण्डल, कुजगलमण्डल, वारुणा मण्डल, इन्द्रप्रस्थ मण्डल, प्रभृति राज्यों से राजा गण आये।

76 ऐसे राम- जम्बूद्वीप को ययाति ने बारह राष्ट्र और बत्तीस मण्डल में विभाजित किया था।

77-80 वीरमल्ल, सिद्धमल्ल, विराष्ट्र, नलन्धर राष्ट्र, भानु राष्ट्र, अयोध्या विन्ध्यमाल, सिंह राष्ट्र, पश्चिमा भीमराष्ट्र, दक्षिण उड्ड राष्ट्र, मधुवन, कनक माराष्ट्र, इस प्रकार के बारह राष्ट्रों का विधान करके सब राष्ट्र- पतियों को नियुक्त किया था।

81-85 कामपुर नगरी, उज्जान, पाटला, आजुन, काची, रुद्र, लाल, बन्धानल, विजया, कराट, चंद, माहेन्द्र, निलन, मन्दारवन, पद्मदल, विराग, गुर, वज्रधात, जम्बू, भोज, अनुभव आदि इन सब नगरों के नृपतिगण भूमन्यु के राज्य में उपस्थित हुए।

86-92 दक्षिण में महोदधि कोशल, पश्चिम सौराष्ट्र कोशल, भग्वन कोशल, कावेरी कोशल, अरविन्द कोशल, विन्ध्यमाल कोशल, उत्तर कोशल, मच्छदेश कोशल, मेरु कोशल, कुसुम, मन्यानिल, भानुमती, उदयगिरि, जलतरंग, फाल्गुन, अजंग, चुड़ंग, स्थल रंग, फल्गु, अन्नता, ऐसे विभिन्न कोशलाधिपति अपने दण्ड-छत्र और सैन्यवाहिनी लेकर प्रविष्ट हुए।

93 उत्तर, दक्षिण, पूर्व, पश्चिम चारों दिशाओं से राजागण आ रहे हैं।

94. सभी राजा शुभ वर-वेष में उपस्थित हैं। राजा सबकी समान भाव से पूजा करते हैं।

95. सभी नृपतियों को स्वर्ण सिंहासन और हाथ में रत्नमाला देकर राजा सम्मान करता है।

96-97. पश्चिम से पचास हजार से दो कम, उत्तर में चालीस हजार से एक कम, पूर्व से सात हजार से एक कम, दक्षिण से तीन हजार राजा आकर बैठे हैं।

98. इस प्रकार एक लाख से चार कम राजा भानुमती के देश में आकर पहुँचे।

99-102. ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, दैत्य, दानव, राक्षस, पिशाच, कन्ध, मल्हार, किरात, बर्बर, गन्धर्व, यक्ष, किन्नर, भूपाली, वास्वती, कन्नौजी, महाराष्ट्री, तेलंग, महाभाषी, उड्र, खंजनी, प्रभृति, अठारह वर्ग के राजा सैन्य, अश्व, रथ, गज को लेकर समारोह में उपस्थित हैं।

103. देखकर भूमन्यु राजा ने प्रसन्नतापूर्वक सभी राजाओं को वरण-रत्नमाला दी।

104. अतिथिशाला के रसोइये अनेक प्रकार का भोजन बनाते हैं। नित्यकर्म समाप्त करके सभी नृपति भोजन करते हैं।

105. राजाओं की स्वागत सम्वर्द्धना समाप्त करके भूमन्यु स्वयं भानुमती के पास पहुँचे।

106. विनम्र भाव से राजा कहते हैं–हे बेटी ! तुम्हारी आज्ञा से मैंने सभी राजाओं को बुलाया।

107. विचारपूर्वक कहो कि कौनसी व्यवस्था की जायेगी ? एक माला लेकर अपनी इच्छानुसार वर का वरण करो।

108. राजागण अत्यन्त समारोह के साथ आये हैं। उनमें से विलक्षण रूप देखकर तुम वर का वरण करोगी।

109. भानुमती ने कहा–हे पिता ! अपनी बुद्धि से विचार करो कि किस राजा के हाथ में शंख पद्म निधि है।

110. उस राजा को मुझे प्रदान करो। भूमन्यु ने कहा कि मैं कैसे जानूँगा ?

111. हे बेटी ! तुम स्वयं जाकर राजाओं का चिह्न-वर्ण देखो। तुम परम माहेश्वरी हो। तुम्हें सब कुछ दृश्यमान है।

112. दुहिता की बात सुनकर भूमन्यु पच्चीस पुत्रों को लेकर सभी के बीच में उपस्थित हुए।

113-117. कन्या शुक्ल दशमी, भृगुवार श्रवण नक्षत्र में चातुर्मास के बीच राजाओं ने स्वयंवर के लिए प्रस्थान किया। भूमन्यु के निर्धारित अमृत योग में सभा में उपस्थित हुए।

118. श्री हस्त में अर्घ्य और पंचामृत लेकर भूमन्यु राजा ने राजाओं का अभिषेक किया।

119-120. वसन, कुण्डल, रत्नामाल देकर सभी राजाओं को वरभेष में सुसज्जित करवाया। सिर पर मुकुट, हृदय पर कुसुम की माला धारण कराई और शरीर पर कुंकुम लेपन किया। ऐसा करके महिपाल ने सबका वरण किया।

121-122. सभी के बीच में दक्षिण कोशलाधिपति ने उपस्थित होकर सभी राजाओं को पुनः-पुनः शत-सहस्र प्रणिपात किया। मैंने जिसके लिए स्वयंवर की व्यवस्था की उसको ध्यानपूर्वक देखो।

123. मेरी पुत्री का नाम भानुमती है। उसके लिए मैंने स्वयंवर में सबको निमन्त्रित किया।

124-125. एक कमल के लिए एक लाख भ्रमर की तरह मेरी एक दुहिता के लिए आप लोग चार कम एक लाख राजा आये हुए हैं।

126. तुम्हारी इच्छा से वह प्राप्त नहीं होगी। वह अपनी इच्छानुसार वर का वरण करेगी।

127. जिसको चाहेगी माला देकर उसकी प्राणप्रिया होगी।

128. इस बात के लिए आप लोग परस्पर संघर्ष नहीं करेंगे। एक लाख राजाओं के लिए मेरी तो एक ही पुत्री है।

129. माला डालकर, वह सुन्दरी जिसका हाथ पकड़ेगी, वही उसका स्वामी होगा।

130. हे राजा गण ! इस प्रकार तुम लोग संकल्प करो। तुम्हारे अभियान करने पर कन्या को सभा में लाना उचित नहीं होगा।

131. राजाओं ने कहा–यह तो यथार्थ की बात है। हम सभी राजा अज्ञानी नहीं हैं। यहाँ दुष्ट राजा भी अनेक हैं। कुछ शक्तिमान और प्रलापी राजा

भी हैं।

133. छोटे-छोटे लोगों का स्वभाव नीच है। समय पर वे सहन नहीं करेंगे तो विकट संघर्ष होगा।

134. राजाओं की बात सुनकर नृपति ने कहा कि मेरे जानने में क्या इतना बड़ा प्रमाद होगा—

135-136. बाणा, बज्रनाभ, कालदमन, मेरुसूल, सम्बर, जातुधान, प्रभृति ने कहा कि हे राजा, तुम मत सोचो। स्वयंवर- व्यवस्था में तो ऐसी विधि है।

137. निमन्त्रण करने पर तो अवश्य जाना होता है किन्तु एक कन्या क्या सबको प्राप्त होगी ?

138. आरम्भ से ही विश्वनाथ की सेवा जिसने की है, उसका पुण्य क्या सभी लोग पायेंगे ?

140. सभी राजा तो एक ही गोत्र के हैं। एक के कन्या पाने पर हम सभी सन्तुष्ट होंगे।

141. हे राजा ! तुम्हारे मन मे इस प्रकार की भ्रान्ति नही आनी चाहिए। सभा में दुहिता को ले आओ।

142. तुम्हारी कन्या का वर्ण चिह्न कैसा है—देखा जाय। स्वयंवरी कन्या का मुख देखने पर दुष्कांति दूर हो जाती है।

143. राजाओं से दृढ सकल्प कराकर राजा ने अपने भवन में प्रवेश किया।

144. कन्या को अनेक वस्त्राभूषित अष्ट रत्न खचित पालकी पर द्वारा वरन का आधार डालकर लाते हैं।

145. एक लाख दासिया दोनों तरफ चॉमर डुलाती है। एक लाख दण्डधारिणी और एक लाख पात्र-छत्र धारण करने वाली दासियां साथ साथ चल रही हैं।

146. एक लाख आगे-पीछे जो शंख बजाते हैं और एक अतिरिक्त दस हजार दासियां पीछे-पीछे चलती हैं।

147. कामिनियाँ सुवर्ण अर्घ्य लेकर मंगल-ध्वनि करती हुई असम्भाल होकर दौड़ती हैं।

148. सहस्र बनितायें आगे नृत्य करती हैं। स्वयवर सभा में विलासिनियाँ उपस्थित हैं।

149. स्वयंवर के बीच में मण्डप के ऊपर सुवर्ण खटोलना पर कन्या शरदकाल के आदित्य की तरह ज्योति बिखेरती है।

150. सभामध्य से जरासन्ध ने कहा—पूर्णिमा के चन्द्र की तरह यह अमूल्य रूप-वर्ण धारिणी है।

151. पालकी से वह कन्या उतरी, जिसका प्राणबन्धु पन्नगा नारायण है।

152. जरासन्ध की बात सुनकर प्रमाणित करती हुई वह नन्दिनी सभा में आकर अपने पैरों पर खड़ी हुई।

153. राजागण निष्कलंक चन्द्रमा की ज्योति देखते हैं। काम-चेष्टा से सभी राजा मूर्छित-से हो जाते हैं।

154. साधु-साधु साध्वी ! यह प्रत्यक्ष अन्नपूर्णा और देव भोग्या है। हम लोग बेमतलब आये हैं।

155. जरासन्ध नृपति सोचते हैं कि इस सभा में इसके योग्य वर नहीं है।

156. प्रत्यक्ष दिग्पाल ही जब यहां उपस्थित होंगे तब भानुमती उनकी बल्लभा होगी।

157. मेरे विचार से यहां कुछ काम नहीं है। हम लोग दोषी होकर लज्जित होंगे।

158. चन्द्रमा क्या नक्षत्रों की इच्छा करता है ? लगता है राजाओं को देखकर सुन्दरी उदास हुई।

159. दुहिता के सामने राजा भूमन्यु कहते हैं कि तुम्हारी आज्ञानुसार स्वयंवर किया।

160. इस सूर्य के नीचे जितने धार्मिक, उच्चवंशीय, विवेकी, कुलशील हैं, सब यहीं उपस्थित हैं।

161. अपनी इच्छानुसार जिस किसी का वरण करो।

162. पिता की बात सुनकर भानुमती ने कहा कि पूछो कौन सा राजा शंख-पद्म-निधि धारण करता है।

163. दुहिता की बात से नरपति विनम्रतापूर्वक हाथ जोड़कर राजाओं से कहता है—

164. मुझे और कोई बात नहीं कहनी है। मेरी कन्या ने एक नियम चुना है।

165. जिसके हाथ में शंखनिधि और पद्मनिधि है, मेरी कन्या उसको ही वरण करेगी।

166. राजा की बात सुनकर जरासन्ध ने कहा—अकेले रामचन्द्र ही शंख-पद्मनिधि वहन करते थे।

167. मानव जन्म में इतना बड़ा लक्षण कहाँ है ? शंखनिधि, पद्मनिधि तो केवल नारायण ही वहन करते हैं।

168. जरासन्ध की बात सुनकर काशीश्वर ने कहा—हे मगध अधिपति ! तुमने मूर्खतावश ऐसा कहा।

169. शख-पद्मनिधि जिसके हाथ में नहीं है, उसका सिर

कैसे अभिषिक्त होगा ?

170 विष्णु का अंश न रहने पर कोई पृथ्वी का पति नही हो सकता। विष्णु की कला नही होने पर क्या राजा का अभिषेक हो सकता है ?

171 हे मूर्ख स्वभाव भूमन्यु ! तुम कुछ नही जानते हो। शंख पद्मनिधि तो सबके हाथ मे है।

172 काशीश्वर की बात से भूमन्यु राजा चिढ गये। उन्होंने कहा—बेटी ! जब अपनी इच्छा से वर पायी तो ?

173 हे बेटी ! स्वयंवर मे जितने राजा उपस्थित हैं, उन सबके हाथ में शंख-पद्मनिधि है।

174 भानुमती ने कहा—हे पिता ! प्रमाण प्राप्त करो। यह मणिगठित पत्थर लेकर सभी राजाओं के हाथों में दो।

175 जिसका हाथ लगने से यह रत्न हो जाय, उसी को हे पिता ! मुझे प्रदान करो। वही मेरा उपयुक्त वल्लभ होगा।

176 भानुमती ने जब ऐसी निष्ठुर बात कही, भूमन्यु नृपति मणिगठित पत्थर को ले गये।

177 परीक्षा के लिए राजा ने अंग, शाल्व, दमघोष, दन्तवक्र, काशीश्वर, आदि सभी राजाओं के हाथ मे दिया।

178 एक लाख राजाओं के हाथ में देने से भी पाषाण परिवर्तित नहीं हुआ।

179 चिह्न नहीं है—कहकर भानुमती ने निन्दा की। कहा कि हे पिता ! इस स्वयंवर में मेरा पति नहीं है।

180 मुझे तो अपनी इच्छानुसार वर नहीं मिला। हे पिता ! तुम मेरे लिए ही चिन्तित हुए।

181 नृपति सभा मे खड़ा होकर कहता है—मेरी दुहिता की इच्छा पूरी नहीं हुई।

182 तुम राजा गण मुझ पर अनुग्रह करके अपने-अपने राज्य को लौट जाओ।

183 सुनकर राजागण ऐसे विषण्ण हुए जैसे नमक डालने पर जोंक संकोचित हो जाता है।

184 सज्जन राजाओं ने जाने की इच्छा की किन्तु दुष्ट राजाओं ने बुरी इच्छा की।

185 बोले कि जब कन्या हमको प्रदान ही नही करना तब क्यों वर वेश विधान करके हमे लज्जित किया।

186 कोई बोलता है कि नृपति का मुण्ड काटकर बलपूर्वक कन्या को लेकर चले जायेंगे।

187. ऐसे कुछ दुर्बुद्धि लोग इसी प्रकार का विचार करते हैं। उन्होंने धर्म छोड़कर अन्यायपूर्ण आचरण किया।

188 पकड़ो-पकडो, मारो-मारो का उच्च स्वर मचा। कलह के शब्दों से चारो ओर हल-चल मच गयी।

189 इसी समय धृतराष्ट्र के पुत्र रैवतक पर्वत पर अखाड़े मे बलराम के साथ थे।

190 191 बलराम ने कहा—हे दुर्योधन ! सुनो। दक्षिण कोशल राजा भूमन्यु अपनी दुहिता भानुमती के लिए स्वयंवर कर रहा है।

192 दुर्योधन ने कर्ण का हाथ पकडकर कहा कि चलो स्वयंवर का विधान देखेंगे।

193 अगस्त्य मुनि कहते हैं—हे वैवस्वत मनु ! राजा दुर्योधन स्वयंवर की ओर चल दिया।

194 शोरगुल सुनकर राजकुमार अनेक शस्त्र लेकर दौड़ते हैं।

195 भानुमती के राज्य मे महा शोर-गुल मचा है। घोर शब्द-चीत्कार।

196 197 दुष्टबुद्धि द्वारा बलपूर्वक कन्या को लेने के लिए कुछ राजा चेष्टा करते हैं। इस समय नृपति को धृतराष्ट्र के पुत्रों ने आच्छादित कर लिया। राजाओं की दुर्बुद्धि देखकर आदित्य पुत्र महाबली कर्ण ने धनुष पकड़ा।

198 कौन बलपूर्वक कन्या लेगा ? किसका इतना दर्प है? कर्ण की बात सुनकर सभी राजा ऐसे भयभीत हुए, जैसे गरुड़ को देखकर काला नाग भय करता है।

199 वह धनुर्धर महावीर मेरु पर्वत के समान अभिमानी है। अभेद्य कवच और वज्र शिरस्त्राण धारण किये था।

200 हाथियों का झुण्ड देखकर जैसे सिंह गर्जन करके दौड़ता है, उसी प्रकार कर्ण की मूर्ति देखकर राजाओं का दर्प चूर्ण हुआ।

201 रहो-रहो कहकर कालदमन और जरा एक लाख योद्धा लेकर दौड़ते है।

202 द्रोण की विद्या से कर्ण अमित बली, निर्भीक क्षत्रियवर और सुन्दर रणजीत है।

203 शक्ति वाण छोडकर जरासन्ध को मारा। सभी

राजाओं को एक हजार तेज वाण लगे।

204. भगधेश्वर रथभग्न होकर गिर पड़ा। दस हजार रथियो का उसके साथ पतन हुआ।

205. जरा की दुरवस्था देखकर कालदमन भाग गया। कर्ण ने अकेले एक लाख राजाओं का दर्प चूर्ण किया।

206. कर्ण अविच्छिन्न भाव से शर-संघात करता है। सेना में सुनाई पडता है कि कर्ण ! तुम्हारा जीवन धन्य है।

207 कर्ण का बल-वीर्य देखकर भूमन्यु पचीस पुत्रों को लेकर कर्ण के साथ मिलकर बाणसंघात करता है।

208 दुर्योधन, दुःशासन आदि एक सौ एक भाई गदा, कुन्त, धनुष-बाण लेकर युद्ध करते हैं।

209 बुद्धिमान राजा पहले से ही चले गये। मात्र चार हजार राजाओं ने द्वन्द्व किया।

210 कर्ण की महिमा देवताओं को भी अगोचर है। उसके सामने दुरान्तक कोई वीर नहीं रहा। सभी भाग गये।

211 सभी राजा रण भग्न होकर भाग गये। क्षत्रिय चूडामणि ने भूमन्यु का आवृत्त किया।

212 भूमन्यु राजा देखकर प्रशंसा करते हैं। हे बेटा ! तुम धन्य हो। तुम किसके पुत्र हो ?

213 हे दयासागर ! पर दुःख दुःखी ! शरण पंजर ! हे बेटे ! तुमने मेरे समान असहाय का उद्धार किया।

214 भूमन्यु नृपति अपनी कन्या से पूछता है कि तुम्हें कर्ण को वरण करना उचित है तो !

215 मेरे डूबते हुए राज्य का अनायास ही उद्धार किया। सूर्य के नीचे इसके समान योद्धा नहीं है।

216 धर्म से प्रेरित होकर शीघ्र ही मेरी रक्षा की। तुम्हें इसको प्रदान करने में मेरा धर्म अर्जित होगा।

217. पिता की दृढ़, निष्ठुर और विनम्र बात सुनकर राजकन्या सहमत हुई।

218. श्रीकर में सुन्दरी शुद्ध शालीन नीलोत्पल माला लेकर कर्ण के सामने उपस्थित हुई।'

219-220. कर्ण ने कहा—मुझे मत वरण करो। उसने स्वय भानुमती का हाथ पकड़कर उस कन्या को दुर्योधन के सामने खडा कराया और कहा कि यह कुरुवीर नाथ हैं। इन्हें माला देकर वरण करो।

221 दुर्योधन ने कहा—हे मित्र ! इस कन्या ने तुम्हारी इच्छा की। अपनी भार्या को मुझे क्यों देना चाहते हो ?

222 कर्ण ने कहा—तुम मेरे परम गुरु हो। तुम्हारे रहते कन्या मुझे कैसे वरण करेगी ?

223 हे मित्र ! इसके हाथ में शंख और पद्म निधि है। तुम्हारे हाथ में भी शंख-पद्म निधि है।

224 तुम सोमवंश के अधिपति मान-चक्रवर्ती हो और वह मूर्धना अभिषिक्ता भानुमती है।

225 तुम्हारे रहते इस दक्षिण कोशल के राजा भूमन्यु की कन्या क्या मेरी होगी ?

226 राजा की कन्या राजा की ही वल्लभा होगी। यह अनादि अपर्णा माहेश्वरी साध्वी तुम्हारे योग्य है।

227 जिसके हाथ में अव्यय पद्मनिधि है, उसको मैं कैसे प्राप्त कर सकूँगा।

228 भीतर से आनन्दित होते हुए भी दुर्योधन बाहर से मना कर रहा था। कर्ण के दृढ़ वचन से उसने सहमति दी।

229 दुर्योधन के हाथ में अक्षय निधि देखकर उस शशिमुखी ने अत्यन्त प्रसन्नतापूर्वक वरण किया।

230 हे पण्डित लोगों ! कर्ण की महानता देखो। अपनी प्राप्य दुल्हन को दूसरे को समर्पित किया।

231 जहाँ सद्भाव होता है, वहाँ ऐसी ही प्रीति होती है। शुद्ध भावना वाले कर्ण और दुर्योधन की आत्मा एक है।

232 कर्ण की बात से बाला ने जब वरण किया, उस समय गणिकाओं ने मंगल-ध्वनि की।

233 दुर्योधन का भूमन्यु ने आलिंगन किया। इसके बाद वर-वेष में सुसज्जित किया।

234-236 स्वयंवर की वार्ता सुनकर व्यास, पाराशर, दुर्वासा, मार्कण्डेय आदि मुनि भूमन्यु के भवन में प्रविष्ट हुए। भूमन्यु ने उनकी पूजा की। दुर्योधन, दुःशासन और कर्ण आदि वीर गण वेदव्यास के चरणों में विनीत हुए।

237 व्यास ने कहा—हे राजा भूमन्यु ! ये सब कुमार मेरे पुत्र हैं।

238. यह पंचराज्य का राजा सोमवंशी, निर्मल, निष्कलंक और निर्दोष है।

239. यह जम्बूद्वीप पृथ्वी को धारण करने वाला है। अब तुम अपने भाग्य का चमत्कार समझो।

240. व्यास के मुख से ऐसी बात सुनकर भूमन्यु ने कहा कि हे देव ! मैंने समझकर ही स्वयंवर किया।

241.-242. राजाओं को मेरी कन्या भानुमती ने वरण नहीं किया। उसने कहा कि जिसके हाथ में शंख-पद्मनिधि है और जिसका हाथ लगने से पाषाण स्वर्ण हो जाता है। वह मेरा पति और मैं उसकी पत्नी हूँ।

243 इतना गुणवान कोई नहीं मिला। मुझे मारकर उसे बलपूर्वक ले जाने राजाओं ने इच्छा की।

244. मेरा धर्म उदित हुआ। अकस्मात् इन सबों ने आकर मेरी रक्षा की।

245. व्यास ने कहा—प्रजापति ने जिसकी सृष्टि की है वह किसी समय अन्यथा नहीं होगा।

246. हे राजा ! तुम यह नहीं जानते हो। यह बहुत प्राचीन काल की कथा है। सावधान होकर सुनो—मैं शास्त्र की व्याख्या करता हूँ।

247. आकाश और पृथ्वी के मध्य शून्य स्थान पर देवतागण सर्वदा जन्म ग्रहण करते है।

248. दुर्योधन नामक जो राजकुमार है, वह प्रत्यक्ष पन्नगा नारायण का अवतार है।

249 पन्नगबन्ध नामक एक वैकुण्ठ है। वहाँ पन्नग विष्णु का आसन है।

250. उस निराकार का वर्ण शुद्ध स्फटिक का है। उसके शरीर में दिन-रात प्रवेश नहीं करता।

251. शुभ सतयुग में शूद्र नामक ब्रह्मा ने पन्नगा विष्णु का ध्यान किया।

252.-253. स्वर्ग, मर्त्य, पाताल, सुतल, रसातल, अतितल, भेद करके भूतल में हे भूमन्यु तुम राजा हो। जन्म-जन्म से भानुमती तुम्हारी दुहिता है।

254. देवतागणों की इच्छा से तुमने सुन्दरी भानुमती को पन्नगा नारायण को दिया।

255. हे भूमन्यु ! पृथ्वी पर तुम्हारी कन्या ने एक लाख वर्ष तक नारायण को याद करके चिन्तन किया।

256. भानुमती की अष्टांग साधना देखकर निराकर प्रसन्न होकर स्वयं उसके वर हुए।

257. प्रसन्न होकर उस परम योगी ने कहा कि तुम जन्म-जन्म में मेरी बल्लभा होकर भोग करोगी।

258. उस भानु कमला को लेकर नारायण बैकुण्ठ पुर गये। वहाँ योग पुरुषों के बीच में समय बिताया।

259. वह शूद्रक ब्रह्मा शरद बैकुण्ठ को गया। पन्नगा विष्णु के रूप का सात मन्वन्तर तक चिन्तन किया।

260 इतनी कठोर तपस्या करके भी उसने समाधि नहीं पायी। परम आदि नारायण रूप को उसने भी याद किया।

261-262. कठोर तपस्या देखकर निराकर ने सोचा और भानु कमला को बुलाकर कहा—मुझे देखने के लिए शूद्रक ब्रह्म ध्यान करता है। वर-कामना करके वह पृथ्वी लोक को जायेगा।

263 यहाँ रहने पर कल्प-कल्प बीत जायेगा। कौन फिर नव सृष्टि का विधान करेगा ।

264. इसीलिए मैं उसे दिखाई नहीं दिया। क्रोध से वह सिर कमल को समर्पित करके मुझे खोजता है।

265. भानुमती कमला ने कहा—हे अनादि ! क्या यहा की सम्पत्ति आकाश लोक से भी श्रेष्ट है।

266. पन्नग ने कहा—इसे स्वर्ग और मर्त्य दोनों भुवन म देवता और मनुष्य विलासपूर्वक भोग करते हैं।

267 समय पर मृत्यु प्राप्त होती है। यमराज के दण्ड मे सभी निहित होते हैं।

268 जो सुख भोग और कौतुक चाहता है, वह स्वग और मर्त्य लोक की इच्छा करता है।

269. जो यम के दण्ड से भय करता है, वह इस भुवन में मेरे विघ्न की चिन्ता करता है।

270 हे प्रिया ! तुम मेरे आदेश से उस ब्रह्म के सामने खड़ी हो।

271. तुम्हें देखकर उसका तप-धर्म छूट जायेगा। कठोर तप करके वह मेरा भजन न कर सके।

272. मदन को साथ लेकर बसन्त तुम्हारे साथ रहेगा। हे भूमन्यु ! ऐसी पूर्वकथा सुनो।

273. उस पन्नग नारायण के आदेश से वह अनके

वेश-भूषित होकर ब्रह्मा के पास गयी।

274. श्रीकर में अर्घ्य लेकर माहेश्वरी शूद्रक के सामने उपस्थित हुई।

275. ब्रह्मा के मस्तक पर एक अर्घ्य दिया और परमार्थ से मंगल-ध्वनि की।

276. उस शुद्ध अपर्णा की मंगल-ध्वनि उसके गर्भ में घुसी। कामदेव ने ब्रह्मा को मदन शर मारा।

277. उसका रेत विसर्जित हुआ और महातप टूट गया। वेदवर ने मोहिनी स्वरूप देखा।

278. ध्यान से उसने विष्णु नाथ की माया जान ली। वह अनादि सिद्ध पुरुष क्रोध-प्रज्ज्वलित हुआ।

279. घोर कष्ट से मैंने सात मन्वन्तर पर्यन्त तपस्या की। हे निर्दयी पन्नग विष्णु ! मुझसे प्रसन्न नहीं हुए।

280-281. इतनी तपस्या से हे विष्णु ! जब मुझपर प्रसन्न न होकर समाधि का स्वरूप नहीं दिखाया तो तुम मर्त्यलोक में मनुष्य रूप में पैदा हो। सभी तुमको बिना जप और तप के देखें।

282. हे भानु कमला ! तुमने आकर मेरी तपस्या को तोड़ा। तुम मनुष्य रूप में पृथ्वी पर जन्म लो।

283. यदि दुःखार्जित तप सत्य है, तो तुम पति-पत्नी नर-योनि में उत्पन्न हो।

284. तप-धर्म छोड़कर जब उसने क्रोध को ग्रहण किया, तब क्रोध, मोह और ईर्ष्या से धर्म का नाश हुआ।

285. नारायण ने शूद्रक ब्रह्मा के सामने प्रकट होकर कहा कि तुमने क्यों मुझपर क्रोध किया ?

286. क्रोध से ब्रह्मा ने कहा कि तुम जब मुझे दिखाई नहीं हुए तो धृतराष्ट्र-पत्नी की कोख में जन्म लेकर•मानवों के बीच विचरण करो।

287. यह भानुमती भूमन्यु की कन्या हो और तुम्हें प्रतिदिन प्रदान हो।

288. अनवरत तुम नित्य वर-वेश में रहो। माता-पिता के साथ किसी भी गुरुजन को नमस्कार नहीं करोगे।

289. जिसको तुम हाथ उठाकर नमस्कार करोगे—वह देवता होने पर भी अवश्य जल जायेगा।

290-291. यह सुनकर पन्नगा नारायण ने कहा, मैं जब मर्त्यलोक में जन्म लूँगा तो अनर्घ्य रत्न मुकुट मेरे सिर पर रहेगा।

292. मेरे चारों ओर कमला रहेंगी। भूख, मोह और क्लान्ति मुझे न हो।

293. यह भानु कमला मर्त्यलोक में भानुमती होगी और मैं मान गोविन्द नाम से उसका पति हूँगा।

294. अष्टम दिन बाला के साथ मेरा अष्टमंगला होगा। हे ब्रह्मा ! मेरी इतनी बात का पालन करो।

295. व्यास ने कहा—हे भूमन्यु ! यह धृतराष्ट्र का पुत्र पन्नगा विष्णु का रूप है।

296. भानु कमला अनादि कमलिनी हैं। वह पन्नगा नारायण की जन्म-जन्म की धारणी है।

297. जिस समय यह भानुमती उसे प्रदान होगी, उस समय वह मानगोविन्द मान चक्रवर्ती होगा।

298. शूद्रक ब्रह्मा के वचन मानकर बाला आठवें दिन अष्टमंगला करेगी।

299. महिभार दूर होने तक ये हमेशा वर-कन्या होते रहेंगे।

300. अगस्त्य मुनि कहते हैं—हे वैवस्वत मनु ! व्यास ने दोनों कुलों का संशय दूर किया।

301. भानुमती को दुर्योधन को प्रदान करो। इस अनादि अपर्णा को क्यों दूसरे को वरण कराने की इच्छा करते हो ?

302. तुम तो पृथ्वी के अधिपति हो। यहाँ उत्पन्न होने से सबको भ्रम होता है।

303. भूमन्यु व्यास की बात से आनन्दित हुए। भानुमती का विवाह-विधान कराया।

304. नगर में अनेक मंगल उत्सव हुए। विवाह के लिए राजा ने समस्त सामग्री संचित की थी।

305-306. दुर्योधन शशधर गोत्र का है और भूमन्यु उद्दालक गोत्र का है। उद्दालक गोत्र के पुरोहित ने प्रसन्नता पूर्वक विवाह करवाया।

307. भूमन्यु की गोद में भानुमती और व्यास की गोद में दुर्योधन बैठा।

308. उद्दालक पुरोहित सोमवंशी विवाह-सम्पादन में कुल-गोत्र, देश काल का गोत्रोच्चार करते हैं।

309. संकल्प वाक्य से वरण को स्वीकार करके समारोह-पूर्वक विवाह में कन्यादान किया।

310. राजा के हाथ में दक्षिणावर्त शंख में जल और तिल देकर पुरोहित कुश-हस्त करवाते हैं।

311 हे राजा ! कन्यादान के बाद अपनी शक्ति के अनुसार दक्षिणा दो।

312. शंख में जल-तिल लेकर भूमन्यु ने बछड़े के साथ एक पद्म गायें दी।

313. चार लाख पवन से भी तेज और उत्कृष्ट घोड़े दिये।

314 एक लाख चामर के साथ हाथी दिये। एक लाख श्वेत वर्ण की हस्तिनियां दी।

315 अष्ट रत्नों का सप्त भण्डार दिया। गणिकाओं के साथ एक लाख दासियां दीं।

316 एक लाख पाट-छत्र, दो लाख उष्णक और चार सौ पारिखण्ड राज्य देकर जनार्दन दी।

317. राजा ने अनेक आलम्ब, चामर दिये। अनेक वीरवाद्य समारोह में बज रहे हैं।

318 चार चार घोड़ों से जुते दस हजार स्वर्णांकित रथ दिये।

319 अत्यन्त समारोह के साथ दहेज की सामग्री को समर्पित किया।

320 भूमन्यु ने कन्यादान किया। इसके पश्चात् और भानुमती ने लाजाहुति समाप्त की।

321 वर-कन्या ने व्रत धारण किया। मुनि जनों ने आशीर्वाद दिया।

322 हे शुभ लक्षणी ! तुम चिरसौभाग्यवती हो- यह कहकर सौभाग्यवती स्त्रियां वन्दना करती हैं।

323 विवाह के बाद मण्डप में जाकर यथाविधि भोजन करते हैं।

324 विवाह के मंगल गान से शोभित वे आठ दिन तक वहीं रहे।

325. हे वैवस्वत मनु ! सुनो। इसके बाद विवाह समाप्त करके दुर्योधन चलता है।

326 रथ, गज, अश्व और पदाति सेना के साथ कुरुवीर हस्तिनापुर को चल रहा है।

327 कुंजगढ देश में जाकर प्रविष्ट हुए। भीष्म और विदुर ने जाकर धृतराष्ट्र को बताया।

328 हे देव ! सावधानचित्त होकर सुनो, संजय ने कहा— तुम्हारे पुत्र बड़े समारोह के साथ चले आ रहे हैं।

329.-331. दक्षिण कोशल के राजा भूमन्यु ने अत्यन्त दहेज के साथ अपनी कन्या भानुमती को दुर्योधन को प्रदान किया है।

विरूपाक्ष के साथ युद्ध

1 तीन योजन में परिव्याप्त होकर सेना चल रही है। प्रथम दिन में अनेक पथों का अतिक्रमण किया।

2 सौ भाइयों के साथ दुर्योधन के हस्तिनापुर लौटने के समय आकाश में रथ पर चढ़कर वीर राक्षस विरूपाक्ष भ्रमण कर रहा था।

3-5 ब्रह्मा के वर से वह अतुलनीय वीर था जिसके धनुष पकड़ने से ब्रह्मा भी काँप जाता है। वीरवाद्य सुनकर उसने आकाश से देखा।

6-7 विजया सारथी से पूछा कि अद्भुत रूप से वन में वीर वाद्य बजता है। कौन राजा रथ चलाकर आता है? किसका इतना दर्प है?

8 इसे सुनकर सारथी पृथ्वी पर देखता है किन्तु पृथ्वी पर कुरुवीर की सेना नहीं दिखाई देती है।

9 विजया सारथी ने कहा हे देव ! ऐसा राजा तो पृथ्वी पर सुलभ है।

10 विरूपाक्ष ने सुनकर क्रोध में आदेश दिया कि मेरा रथ उस वन में ले चलो।

11 वह रथ में एक हजार सिंह जोतकर तीन खण्ड में तीनों लोक घूमता है।

12 तत्क्षण सारथी ने रथ को हांका। मानों राहु पूर्ण चन्द्र को ग्रास करने के लिए चल रहा हो।

13-15 लोहे के उस रथ की लम्बाई और चौड़ाई एक अयुत है। वह इन्द्ररथ के समान अष्ट रत्न-गुच्छ शोभित है। उसके ऊपर पताका फहरा रही है। चक्र का शब्द मेघ के गर्जन के समान हो रहा है।

16 अद्भुत शब्द सुनकर कुरुवीर की सेना कोलाहल के साथ ऊपर देखती है।

17 मिथुन मास में जैसे बादल दीखते हैं, वैसे ही रथ श्यामवर्ण दिखाई देता है।

18 उसके बीच विद्युत की आभा की तरह लम्बमान अष्ट रत्नों से तेज विकसित होता है।

19 देखकर कुरुसेना नहीं समझ सकी। किसी ने कहा कि यह अमर अधिकारी वासव है।

20 किसी ने कहा कि यह अगार पन्नग-गन्धर्व रथ पर चढ़कर पृथ्वी पर घूमता है।

21 सुनकर कर्ण ने कहा कि यह अगार-पन्नग है, अन्य कोई नही।

22 मान गोविन्द के विवाह की सम्पन्नता जानकर आकाश मे इन्द्र उत्सव मना रहा है।

23 अर्जुन के पद मे वह पिता होगा। इसलिए वह सुरराज अवश्य ही देखने के लिए आता है।

.1 अश्वत्थामा ने कहा—इसके ऐरावत तो नही है तो वह कैसे मचला होगा ? कर्ण तुम क्या पागल हो गये हो ?

., वज्र के समान घनघोर शब्द सुनाई दे रहा है। जान पड़ता है कि स्वर्ग मानो पृथ्वी पर गिरता चला आ रहा है

27 स्तम्भित मना आगे नहीं बढ़ पा रही है। दुर्योधन ने दुःशासन से कहा—कैसी बात है ? तथ्य का अनुसंधान करो। सुनकर दुःशासन सिर झुकाकर उठा।

२८-२९ हे हे ! का चीत्कार करके क्रोध से उठा और अश्वत्थामा के पास पहुँचा। उसने कहा—तुम अभय क्षत्रिय हो। तुम पहले अगसर हो।

.0 कौन सा शब्द आकाश से सुनाई दिया ? क्या तुम्हारा रथ भय से स्थिर हो गया

3.-32 कर्ण से दुःशासन कहता है कि आकाश से एक रथ खिसककर आ रहा है। वह मेरु तुल्य दिखाई देता है, जिसे देखकर कुरुसेना भय-त्रस्त हो गयी है।

33-34 इस समय विरूपाक्ष वीर ने लोहे के धनुष को बाये हाथ मे पकड़कर एक योजन के ऊपर से जलधार की तरह शर-सन्धान किया।

35 तरकस से तीक्ष्ण नोक वाला वाण निकालकर मारा। रथी, हाथी, और पदाति छिटककर गिर पड़े।

36 अद्भुत वीर को देखकर अश्वत्थामा और कर्ण ने धनुष को चढ़ाकर शर-सन्धान किया।

37 आकाश मे वाण एक साथ खिसकता है। किसी प्रकार उस वाण का प्रतिरोध नहीं किया जा सकता है।

38 मुख उठाकर देखने से ललाट पर शर पडता है। कर्ण के देखते हुए सेना का ध्वस हुआ।

39-40 पृथ्वी पर अजग वन को आते-जाते विरूपाक्ष ने एक करोड योद्धाओ को धूल की तरह करके यमपुर भेजा।

41 सारथी से कहा कि शत्रु के सम्मुख मेरे रथ को चलाओ।

42 सुनकर विजया ने यान चलाया। अगली पंक्ति मे कर्ण के साथ भेंट हुई।

43 कर्ण का रथ पर्वत सदृश है। उसके हाथ का धनुष इन्द्रधनुष-सदृश है।

44 उसका अभेद कवच, वज्र शिरस्त्राण और अमृत कुण्डल देखकर लोहिनाक्ष पुत्र विरूपाक्ष सोचता है।

45 इसका इतना लक्षण है। कौन सा दिग्पाल पृथ्वी पर घूमता है ?

46 ऐसा सोचकर कर्ण का मुख देखकर कर्ण से पूछता है—तुम किस देश के राजा हो ?

47 किसके भरोसे वीरवाद्य बजाकर सैन्य वाहिनी लेकर तुम देश भ्रमण कर रहे हो ?

48 आज तुम्हारा अहकार देखूँगा। ब्रह्मा, विष्णु या माहेश्वर देखता हूँ कौन आज तुम्हारी रक्षा करता है।

49 ऐसी कथा सुनकर दुःशासन ने महाक्रोध से गदा प्रहार किया।

50 लोहे के रथ पर लगकर गदा चूर हो गयी। इसके बाद उसने खड्ग लेकर बहुत देर तक प्रहार किया।

51 रथ मे तीक्ष्ण तलवार लगने से वह सौ खण्डो मे टूट गयी।

52 यह देखकर अश्वत्थामा के साथ कर्ण ने क्रोध किया।

53 इन्द्रधनुष के समान धनुष लेकर दोनो वीर दैत्य के ऊपर शर-वृष्टि करते है।

54 एक निमिष मे उन वीरो ने लाख वाण मारकर पृथ्वी को वाणो से अवरुद्ध किया।

55 असुर देखकर कोपानल हुआ। तरकस से कालानल शर बाहर निकाला।

56 वाण को कानो तक खीचकर वाणो का नाश करने के लिए तेजी से छोडा।

57. तत्क्षण उस वाण ने अन्तरिक्ष में जाकर अपनी अग्नि से वाणों का दहन किया।

58. वह वाण दुःशासन के ऊपर पड़ा। सिंहनाद करके वह वीर गिर गया।

59 यह देखकर कर्ण अवाक् हो गया। एक पर्वताशर को चुनकर छोडा।

60. विरूपाक्ष असुर ने वज्राशर छोड़कर वज्राघात से गिरिराज का छेदन किया।

61 पुनः कर्ण ने मेघशर छोड़ा जिसका असुर ने पवनशर से निवारण किया।

62 अश्वत्थामा ने दृढतापूर्वक अग्निवाण मारा। असुर ने उसका जलधारा शर से निवारण किया।

63 पन्नगा शर अश्वात्थमा ने छोडा। वह सर्प लेकर स्वर्ग-मर्त्य-पाताल मे घूम रहा ह।

64 लोहिक्षात सुत ने उसे देखकर गरुडशर से उसका निवारण किया।

65 वाण छोडते-छोडते दोनो वीर खिन्न हो गये। सोचते है कि दानव ने हमे हैरान कर दिया।

66 ऐसा सोचकर वे शीघ्र शर-सन्धान करते है किन्तु असुर उनको सहज ही खण्डित कर देता है।

67 महाबली कर्ण ने महाभीष्म रूप से डोरी पर आद्रावली तीन वाण चढाये।

68 असुर के ऊपर क्रोध मे मारे। वाण महादैत्य के ऊपर पडे।

69 वज्र कवच फोड़कर वाण शरीर मे घुसा। दानव के गर्जन से ब्रह्माण्ड कॉप गया।

70 विरूपाक्ष ने व्यथा पाकर क्रोध स भैरव मूसल पकडा।

71 पहली बार मूसल उठाकर मारा। कर्ण का सारथी रथ के साथ धूल हो गया।

72 पीछे मुडकर कर्ण के भागने के समय असुर कुलो के राहु ने पीछे से मूसल प्रहार किया।

73 उस मूसल के आघात से कर्ण खून की उल्टी करके भूमि पर अचेत होकर गिर पडा।

74. अश्वत्थामा ने देखकर अपने रथ से उठकर असुर के ऊपर देव वाण मारा।

75 वज्र कवच को न भेद सकने के कारण वह वाण मुरक गया। उसने अश्वत्थामा को भैरवी मूसल से पीटा।

76 अनादि के वर से अक्षय और त्रिकालजीवी होने के कारण मूसल प्रहार से उसका कुछ नहीं हुआ।

77. असुर ने हुंकार करके तीन बार जोर से पीटा। अश्व-सारथी के साथ रथ को चूर्ण किया।

78 तब भी अश्वात्थामा का कुछ नहीं हुआ। सोचा कि इसके लिए कुछ और उपाय करना होगा।

79 इस प्रकार सोचकर अश्वत्थामा का चरण पकड़कर अपने लोहमय रथ पर पटक दिया।

80 लौहमय रथ पर गिरने के कारण अश्वात्थामा मूर्च्छित हो गया।

81 असुर ने विजया सारथी को आदेश दिया कि रथ-दण्ड पर इसको बाध दो।

82 सारथी ने रथ-दण्ड के ऊपर रखकर उसके हाथ और पैरो को दृढता से बॉधा।

83 जब तीनो वीर मृत हुए तब वह राजा की सेना के बीच शूल लेकर घुसा।

84 कदली वृक्ष जैसे वाताघात से टूट जाता है उसी प्रकार सेना उसके शूल से धाराशायी हो गयी।

85 सत्तानवे भाइयो से परिवृत्त होकर दुर्योधन बीच मे आ रहा है।

86 दूत ने कहा–हे कुरुपति ! दुःशासन, कर्ण और अश्वात्थामा मारे गये।

87 अकस्मात् एक असुर ने आकर बहुत-सी सेना को यमपुर भेजा।

88 अश्वत्थामा और कर्ण बहुत युद्ध करके भी भाग्य की दुर्बलता से जीत न सके।

89 दुःशासन और कर्ण भूमि पर पडे है और अश्वात्थामा को रथ पर दृढता से बॉध रखा है।

90 दुर्योधन सुनकर भूमि पर गिरा। भानुमती ने श्रीकर से पकडकर उसे उठाया।

91 मुख पर जल छिडककर उसे सचेत किया। धीर वचन से स्वामी से कहा–

92 93 अकस्मात् शत्रु के उदित होने से लाख राजाओ को मारने वाले कर्ण, अश्वात्थामा, दुःशासन और सैन्यगण का नाश देखकर वह महा दुःखी हुई।

94. मैने जान लिया कि उसके सामने ब्रह्मादि देवता भी नही टिक सकते। हे स्वामी ! भाइयों को लेकर पीछे

भाग चलो।

95. हे स्वामी ! मैं तुम्हारे चरणों में विनयपूर्वक प्रार्थना करती हूँ। उसके साथ युद्ध में शरीर मत खोओ।

96. सुनकर कुरुपति कहता है—क्षत्रिय होकर मैं पीछे लौटूँगा ?

97-98. मेरे प्राणसखा कर्ण, दुःशासन, अश्वत्थामा और सैन्य वाहिनी का पतन हुआ। इसके पश्चात् भी हे प्रिया ! मेरे जीवित रहने का क्या अर्थ है ?

99. इसी समय असुर रथ पर चढ़कर आगे बढ़ता है और सब कुछ ध्वस्त करता है।

100. वन में बहेलियों को देखकर जैसे मृग भागते हैं वैसे ही इस देवदुर्लभ युद्ध को देखकर सभी भागते हैं।

101. शूल लेकर चीत्कारपूर्वक असुरराज मारता है। रथी और पदातिक रक्ताक्त होकर गिर पड़े।

102 भानुमती को छोड़कर दुर्योधन सत्तानवे भाइयों के साथ क्रोध से दौड़ता है।

103 गदा से पीटने पर उसके शरीर में लगने पर भी कुछ भी नहीं हुआ।

104 गान्धारी-पुत्र की गदा व्यर्थ हो गयी। वह सिंह के सामने मत्त हस्ती की तरह निरुपाय रह गया।

105 दैत्य ने भैरवी शूल को जोर से मारा। सत्तानवे भाई मूर्च्छित होकर गिर पड़े।

106 सेना को मारकर उसने ढेर का ढेर बना दिया। योजन पर्यन्त शवों का पहाड़ हो गया।

107. भूमन्यु राजा ने जितनी सेना दी थी, उस सबको विरूपाक्ष ने मार दिया।

108 दुर्योधन की सेना को भी निःशेष कर दिया। एक भी नहीं बचा।

109. इनको मारकर उसने रथ के ऊपर देखा कि वहाँ एक अपूर्व सुन्दरी है।

110 सहस्र पार्वती क्या उसके रूप के समान होंगी ? भानुमती ऐसी ही रूपवती है।

111. सोचता है, मेरा जीवन धन्य है। निश्चय ही मैंने स्त्री रत्न को प्राप्त किया।

112. ऐसा सोचकर उसने ध्यानपूर्वक भानुमती के रूप को देखा। मन ही मन उसकी याद करता है।

113. धन्य-धन्य हे सुन्दरी ! तुम्हारा अंग धन्य है। तुम्हें देखकर अनंग संसार छोड़ देगा।

114. वह ब्रह्मा धन्य है जिसने संसार की चिन्ता छोड़कर एक कल्प तक तुम्हारे रूप को गढ़ा है।

115. चन्द्रवदन पर मैं न्यौछावर हो जाऊँगा। तुम किस राजा की प्यारी पुत्री हो ?

116. धन्य-धन्य सुन्दरी ! तुम्हारा वर्ण धन्य है। पाद की अंगुलियाँ जया फूल की कली की तरह हैं।

117. तुम्हारा सुन्दर शोभित पाद का नख कन्दर्प पुरुष की काम रेखा की तरह है।

118 आलता लगे हुए पैर की तरह तुम्हारा पैर शोभित है। उसे देखकर काम और कहीं नहीं जायेगा।

119. तुम्हारी दोनों जँघायें उलटे कदली-काण्ड की तरह दिखाई देती हैं। सिंह की कटि की तरह भाँति तुम्हारी क्षीण कटि है।

120. तुम्हारा स्तन श्रीफल की तरह है। उसमें मानो अमृत भरकर रखा है।

121 दोनों हाथ हाथी की सूण्ड की तरह दिखाई देते हैं। मानो कुसम वाण को लेकर कन्दर्प को मारते हैं।

122. तुम्हारा कण्ठ कम्बुग्रीव की तरह दीखता है। सुरंग अधरबिम्ब फल की भाँति है।

123. भ्रूलता इन्द्रधनुष की तरह और वदन चन्द्रमा की तरह है। रोमावली कुंचित है।

124 स्वामी के दुःख से रोम मूल से प्रस्वेद निकल रहा है। मानो चन्द्रवदना विगलित होकर पूंजीभूत हो गयी है।

125. अष्ट-रत्नजड़ित अलंकार से युक्त होकर भानुमती सर्वांग सुन्दरी दीखती है।

126-127 सूर्यास्त होने में तीन दण्ड बाकी रहने पर सबको मारकर भानुमती के पास गया। उस रूप को देखते-देखते एक रात्रि और एक दिन बीत गया तथापि भानुमती के रूप का वर्णन नहीं कर सका।

128. देव संयोग से इस प्रकार की कन्या का मैं निर्द्वन्द्व भाव से भोग करूँगा।

129-130 ऐसा सोचकर विरूपाक्ष ने दिन-रात बिता दिया। इसी समय ब्रह्मा के पुत्र नारद प्रयाग गये थे।

131. तीर्थ-कार्य समाप्त करके मन-दण्ड पर चढ़कर वे

हस्तिनापुर की ओर होकर बढ़ रहे है।
132 ब्रह्मा के पुत्र देखकर सोचते हैं कि मेरु तुल्य रथ दिखाई देते हैं।
133 यह देखकर वे कुछ नहीं समझ सके। ध्यान से उन्होने जाना।
134 हस्तिनापुर का मान चक्रवर्ती ने भानुमत राज्य से भानुमती को प्राप्त किया।
135 सेना लेकर हस्तिनापुर आते हुए लोहिताक्ष के पुत्र ने उनका विनाश किया।
136 मैं युधिष्ठिर के सामने जाकर यह कहूँगा। यह सोचकर तपस्वी शीघ्र चल दिये।
137 युधिष्ठिर वारुणावन्त में थे। तपोनिष्ठ जाकर प्रविष्ट हुए।
138 भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव आदि पाण्डवगण एक साथ बैठे है।
139 नारद को दूर से आते देखकर युधिष्ठिर ने उनको आसन पर बैठाया और पूजा की।
140-141 प्रणिपत्य होकर वे चरणो में लोट गये। मुनिवर प्रसन्न होकर अशीर्वाद देते है। धन, श्री आयु, सब वर्धित हो। मै प्रयाग तीर्थ गया
142 था। पथ में आते समय अजगपाद वन मे समस्त कुरु सेना को मरा देखा।
143 हे युधिष्ठिर इसका विचार कर कार्य करो। यह कहकर मुनि अन्तर्धान हो गये।
144 सुनकर युधिष्ठिर एक ओर ढुलक गये। उन्हे गोद मे भीम महाबली ने पकड़ा।
145 मुख पर सहदेव ने जल छिड़का। धीरे-धीरे पार्थ पखा झलते है।
146 एक घडी मे देव ने चेतना प्राप्त की और शोक से भूमि पर लोटने लगे।
147 हाय! हाय! मानगोविन्द! कहकर शोक किया। आज से मेरा अन्ध राजा अनाथ हुआ।
148 तुम्हारे हाथ मे हे भाई! पद्मनिधि था। विधाता की क्रूरता से सब कुछ खो दिया।
149 मूर्खता बस हे भाई! कहाँ कलह किया? समदण्ड के साथ अपना भी नाश किया।
150 युधिष्ठिर की बात से भीम प्रणाम करके कहता है, हे देव स्वामी! अकारण क्यों दुख करते हो?
151 वे मूर्ख पापिष्ठ और प्रमादी हैं। हमारे हित के लिए उनका किसी दूसरे ने वध किया।
152 हे देव! इसके लिए दुःख मत करो। चलो, हस्तिनापुर को शीघ्र जायेंगे।
153 युधिष्ठिर कहते हैं कि हस्तिनापुर जाने से धृतराष्ट्र का दुःख देखकर क्या मेरा जीवन रहेगा?
154 नकुल ने कहा—स्वामी! जो मर गया, वह गया। खोजने से क्या हम उन्हे पायेगे।
155 156 युधिष्ठिर कहते है—ऐसा नहीं होता। गान्धारी के शत् पुत्र जब नही जीयेगे तो समझो अपने भाइयो के साथ मैं भी मर गया।
157 वे कहाँ मरे पडे है? मुझे दिखाओ। उनको देखते ही मै अवश्य आत्मा छोडूँगा।
158 सहदेव की ओर देखकर पूछते है—तुम तो भूत, भविष्य, आगत और विगत की बात जानते हो।
159 मुझे विश्वास दिलाते हुए कहो। कुरुस्वामी क्यो अकारण मरा?
160 किसी के साथ उसने विवाद किया? कौन इतना वलिष्ठ है, जिसने उसका वध किया?
161 युधिष्ठिर की बात से मन्त्री चूड़ामणि हाथ जोडकर मृदु वचन बोलता है—
162 हे स्वामी! सावधान होकर सुनो, जिस कारण गान्धारी के पुत्र मरे।
163 199 सहदेव ने आदि से अन्त तक भानुमती के विवाह की कथा सुनाई और मानगोविन्द की मृत्यु की बात बताई।
200 अब युवती के रूप से मोहग्रस्त असुर उसे अपने नगर को ले जाने की सोचता है।
201 यह सुनकर युधिष्ठिर व्याकुल हुए। भीम सुनकर क्रुद्ध हुआ।
202. युधिष्ठिर ने कहा कि हे धनजय! सुनो। सोमवंश के लिए यह बड़ा कलंक होगा।
203 यद्यपि कौरव हमारी अवमानना करते हैं फिर भी उन दुष्टों का दोष नहीं लेता हूँ।
204 कौरव जब हमें झिड़कारते हैं तो धर्म देवता उन्हे दण्ड देता है।

205 धर्म रहने पर लोग दुस्तर समुद्र पार कर जाते है। धर्महीन होने पर ही कौरवो ने प्राण खोये है।

206 कैसे कहाँ वे पडे है—ऐसा सोचते हुए युधिष्ठिर के वचन से चारो भाई निकलते है।

207 सहदेव को युधिष्ठिर कहते है कि हे मन्त्रिवर ! तुम आगे बढकर राह दिखाओ।

208 सहदेव सुनकर आगे होते है। युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन और नकुल उसके पीछे-पीछे दौडते है।

209 पाण्डव पवन वेग से दौडते है। सहदेव की ओर देखकर युधिष्ठिर पुन पूछते है—

210 किस वंश मे उस असुर का जन्म है? किसकी सेवा करके उसने यह वर पाया?

211 कुरुवीर को मारने मे समर्थ वह असुर किस देश मे रहता है?

212 213 हे मन्त्रिवर ! मुझे संक्षेप मे बताओ। माद्री के पुत्र ने आदेश पाकर कहा—सावधान होकर असुर का आद्य जन्म वृत्तान्त सुनो— जिससे वह असुर शक्तिशाली हुआ।

214 सतयुग के अन्त मे शिवान्तक काल हुआ। प्रलयान्तक काल मे सब कुछ समुद्रमग्न हुआ।

215 निरंजन नाथ ने योगबल से शयन किया। अनादि महादेवी वासुदेवी की गोद मे सोये।

216 नारायण ने नाक से रस फेंका। तत्क्षण उससे दो राक्षस उत्पन्न हुए।

217 मधु-कैटभ नामक दो राक्षस आकाश मे आकर लोगो को खेदते है।

218 नारायण के सिर पर परम वैष्णवी वासुदेवी कृष्ण को लेकर बैठी है।

219 अनन्त कोटि ब्रह्माण्ड अगाध जल मे डूबा हुआ है। किन्तु उन दानो दैत्यो के पर भी नहीं भीगे।

220 अत्यन्त सुन्दर धवलांगी को देखकर दोनो वीरो ने उससे रति-शृंगार माँगा।

221 सरस्वती ने कहा—हे नारायण ! ये दोनो मेरी अभिलाषा करते है।

222 नारायण ने सुनकर योगशक्ति छोडी। उनकी पुतलियाँ कालानल की तरह चक्कर काटती है।

223 अनादि श्रीहरि चक्र-सुदर्शन लेकर जब आक्रमण करने के लिए आते है तभी मधु-कैटभ ने हाथ फैलाया।

224 हे देव ! न जानकर हमने द्रोह किया। उसके अनुरूप हे स्वामी ! हमे दण्ड दीजिये।

225 भक्ति दिखाकर वर माँगा कि हे स्वामी ! हमे वहाँ मारो जहाँ जल भी न हो।

226 नारायण ने सुनकर वीर तनु धारण किया। दोनो जंघाओ से दोनो राक्षसो को चापा।

227 गदा से कूटकर उनके माँस का लोथडा बनाया। जलादिक क्रिया करके नारायण स्वामी ने पृथ्वी को बनाया।

228 सहदेव ने कहा—हे धर्मपुत्र ! उस मेदासुर का अच्युत ने मर्दन किया।

229 उस मेदासुर का मर्दन करके जल मे फेंकने से उसका खण्ड अस्थि पंजर मात्र बच गया।

230 नीचे फेंकने से एक बिम्ब बना। इसीलिए अनादि ने उसका नाम अनन्त बिम्ब रखा।

231 उसके ऊपर मांस का लोथडा पडने से विष्णु ने उसका नाम मेदिनी किया।

232 233 सहदेव कहते है—हे धर्मपुत्र ! असुर मांस से मेदिनी हुई। यह असुर वंश इसीलिए बढ पाया।

234 मध्याकार नामक असुर-गोत्र वंश मे त्रिहोत्र नामक पुत्र पैदा हुआ।

235 240 त्रिहोत्र का पुत्र जम्बू दैत्य, उसका पुत्र जपासुर, उसका पुत्र दयासुर, उसका पुत्र अंगिरा, उसका पुत्र मय, उसका पुत्र लोहासुर, उसका पुत्र विताक्ष, उसका पुत्र शूलिक, उसका पुत्र वज्रनाभ, उसका पुत्र सौदास उसका पुत्र जलतरंग हुआ।

241 वह जल तरंग ब्रह्माण्ड मे घूमा। पाताल मे अनन्त बिम्बों की खोज की।

242 असुर वहाँ नगर बनाकर रहने लगा। उसने सहस्र बार अमरलोक पर आक्रमण किया।

243 देवगण डर से स्वर्ग को छोडकर भागते है। वह स्वर्ग की सम्पत्ति को लूटकर लाता है।

244 जलतरंग का पुत्र वीर मेधा आकाश के प्रति आसक्त हुआ।

245 मेधासुर के नन्दन, कृतकेशी ने संसार का दहन

करके सभी ऋषियों का विनाश किया।

246. कृतकेशी के पुत्र महामूर्ख जटासुर ने सभी धर्मों को नष्ट किया।

247. कृतकेशी का पुत्र लोहिताक्ष सूर्य के वर से महाप्रतापी वीर हुआ।

248. उसने स्वर्ग पर बार-बार आक्रमण किया। डर से शचीपति ने स्वर्ग को छोड़ दिया।

249. लूटकर बहुत सा धन ले आया। इस पापिष्ठ का मन देवस्त्रियों के प्रति आसक्त हुआ।

250. वज्रधर के स्वर्ग छोड़कर जाने से असुरों ने स्वर्ग, मर्त्य और पाताल का पालन किया।

251-253. एक दिन लोहिताक्ष ने मेरु पर आक्रमण करने के लिए यात्रा की। वह सोचता है, आज उसे उखाड़कर फेंक दूँगा।

254. इस प्रकार वह मेरु पर पहुँचा। उस असुर के हुंकार- नाद से पृथ्वी उछल पड़ी।

255. मेरु तीन बार झकझोरने से हिल गया। पृथ्वी के टलमला जाने से उसके गुरुत्व का ह्रास हुआ।

256. विकल होकर मेरु ने असुर से कहा कि तुम मेरा क्यों ध्वंस करते हो ?

257. मैं तो तुम्हारा वैरी नहीं हूँ। निश्चल होकर मैं वसुन्धरा पर बैठा हूँ।

258. हे महादैत्य ! मुझ पर क्यों क्रोध करते हो ? तुम्हारे सामने बिल्कुल सामान्य हूँ, गुरु क्यों हूँगा!

259. मेरु की कातर विनम्र बात सुनकर असुर-कुल-चूड़ामणि शान्त हुआ।

260. कहा कि जब मैं तुम्हें नहीं उखाड़ूँगा तो तुम मुझे क्या दोगे; जिससे मैं लौट जाऊँ ?

261. मेरु ने कहा—तुम्हारी जैसी इच्छा हो, माँगो। तुम्हारी मनोवांछा पूरी हो।

262. लोहिताक्ष ने कहा कि तुम प्रतिज्ञा करो, तब मैं विचार करके माँगूँगा।

263. सुनकर हिमाद्रि ने सत्य-सत्य कहा। तुम जो कुछ माँगोगे, मैं अवश्य दूँगा।

264. सुनकर लोहिताक्ष ने कहा कि सत्य है तो मुझे अपनी लड़की सरिता दोगे ?

265. सत्यप्रतिज्ञ मेरु ने अपनी लड़की सरिता लोहिताक्ष को दी।

266. कन्या को लेकर असुर शीघ्र लौटा। उस दिन से मेरु को अत्यन्त श्रद्धा करने लगा।

267. अतल गह्वर में विहार करते हुए असुर के कुछ दिन बीत गये।

268. सरिता के साथ प्रीतिवश होकर वह पुनः स्वर्ग पर आक्रमण करने के लिए नहीं जाता है।

269. स्वर्ग में देवता निश्चिन्त होकर रहे और उन्होंने मेरु की प्रशंसा की।

270. इसके बाद हे देव ! सुनो। ऐसा चलते-चलते सहदेव कह रहा है।

271-274. एक शुभ योग में सरिता के गर्भ में एक महा उग्र तेजस्वी प्रचण्ड कालानल की तरह सन्तान उत्पन्न हुई। दिनोंदिन वह प्रचण्ड असुर बढ़ने लगा।

275-276. लोहिताक्ष ने अपने पुत्र का नाम विरूपाक्ष रखा, क्योंकि वह भयंकर रूप वाला था।

277-278. कुछ दिन बाद सरिता ने कहा कि हे पुत्र! तुम विधाता की तपस्या करो जिसकी प्रसन्नता से ज़रा और मृत्यु नहीं होगी। सावित्री देवी के स्वामी ऐसे वर देने वाले हैं।

279. विरूपाक्ष सहमत होकर तपस्या करने के लिए अतल गह्वर से निकला।

280. देखा कि अतीव सुन्दर पृथ्वी ग्राम, नगर, नद-नदी और उपवन से शोभित है।

281-282. राक्षस ने महाघोर वन में प्रवेश किया। वह हटकेश्वर देश को जीतकर तुंगभद्रा वन के अत्यन्त परिमल परिवेश में निश्चल आसन में बैठा।

283. सोलह डमरू का ज्ञान तत्त्व ग्रहण करके निराहार होकर उसने ब्रह्मा की तपस्या की।

284. नौ सहस्र वर्ष पर्यन्त असुर ने ब्रह्मा का ध्यान करके घोर तपस्या की।

285. वह अग्नि प्रचण्ड प्रज्वलित करके अपने शरीर से माँस काटकर अग्नि में आहुति देता है।

286. अग्नि में देने से अंग पुनः बन जाते हैं। वह घी के साथ अपना माँस काटकर हव्य कुण्ड में डालता है।

287. इस प्रकार निराहार होकर वह दैत्य नौ हजार वर्ष तक तपस्या करता है।

288. इतने कष्ट पर भी ब्रह्मा का रूप नहीं देख सका। पुनः असुर ने अपने शरीर को तपा दिया।

289 इक्कीस सहस्र वर्ष तक अग्नि से देह को तपा-तपा कर अन्त में अग्नि में प्रविष्ट होकर अपने को आहुति के रूप में समर्पित किया।

290 अनल के भीतर शरीर को निवेशित करने पर भी वह पितामह की माया से दग्ध नहीं हुआ।

291 अग्नि अपने तेज से जलती है। दुरापद कष्ट से अपने जीवन का परित्याग करना चाहा।

292 महाकष्ट देखकर सूर्य आदि देवता भयभीत हुए। वे ब्रह्मा के पास गये।

293-295 इन्द्र, चन्द्र, पवन, बृहस्पति, सूर्य, नलकुबेर, वरुण, नैऋतग्रहगण, सप्त देवलोक और वसुधा के साथ सभी देवगण चिन्तामग्न होकर यशोवन्ती भुवन में विराजमान वेदवर के स्थान के नीचे खड़े हुए।

296-297 विनयपूर्वक शत-सहस्र प्रणाम करते हुए देवताओं से पद्मयोनि स्वयं सम्भाषण करते है।

298 हे देवगण ! शोकाकुल होकर कपाल पर हाथ रखे क्यों आये हो ?

299 बृहस्पति ने कहा—तुम जगत के बन्धु, कृपाजल-सिन्धु और सृष्टिकर्त्ता हो।

300 लोहिताक्ष पुत्र वीर विरूपाक्ष एक लय में तुम्हारा अपार ध्यान कर रहा है।

301-302 वह असुर पता नहीं किसके ऐश्वर्य को छीन लेगा। चतुर्वदन ने यह सुनकर कहा कि मैं उसको अवश्य वर दूँगा। हे देवगण ! तुम लोग अपने-अपने घर लौट जाओ।

303. देवतागण अपने स्थान को लौट आये। ब्रह्मा मराल वाहन पर विराजित हुए।

304. विरूपाक्ष के पास जाकर पहुँचे। कमण्डल से धीरे-धीरे जल छिड़का।

305. गर्त से शतगुन होकर वह बाहर निकला। ब्रह्मा ने उससे वर माँगने के लिए कहा।

306. हाथ जोड़कर सरिता-तनय ने कहा—हे स्वामी ! वेदवर! मैं अक्षय होना चाहता हूँ।

307-308. पितामह ने एवमस्तु कहा। असुर ने कहा—हे स्वामी वेदवर ! मेरा शरीर वज्र हो। देवासुर और नर से मैं न मरूँ। देवास्त्र मेरे शरीर में न घुसे।

309 मेरा रथ, स्वर्ग, मर्त्य और पाताल में निर्द्वन्द्व भ्रमण कर सके। संग्राम मे कोई सामना न कर सके।

310-312 वेदवर ने तथास्तु कहा। हाथ जोड़कर असुर ने कहा—हे पितामह ! तुमने तो मुझे अभय वर दिया। अब मेरा मृत्यु भेद बताइये।

313 कुशकेतु ब्रह्मा ने कहा—इस मर्त्य-भुवन मे पंचइन्द्र जन्मेंगे। पाण्डव फाल्गुनी तुम्हारा हन्तारक होगा।

314-315 असुर कुलपति सोचता है कि एक इन्द्र तो स्वर्ग का अधिपति है। एक साथ पंच इन्द्र कैसे जन्म लेंगे? मेरा यह अभय वर पाना धन्य है।

316 इस प्रकार सोचकर दानव ने कहा—हे विरंचि ! मैं अमृतलिंगी होऊँ।

317 पंच इन्द्र मुझे काटेंगे, तब मेरा सिर बार-बार लग जाये।

318 अमृत-लिंग मेरे नाभि पद्म मे रहेगा। उसके रहने पर मेरी मृत्यु न हो।

319 वेदवर अस्तु कहकर अन्तर्धान हो गये।

320 उस दिन से राक्षस ने दिग्विजय करके अनेक राजाओं को जीता।

321 ब्रह्मा के वर से वह असुर महावीर है। युद्ध में हरि-हर भी उसके समक्ष नहीं हैं।

322-323 भानुमती को रथ पर बैठाकर वह पाताल लोक को जायेगा। उसके अन्धकारपूर्ण जलमय कुण्डली लोक में ब्रह्मा-विष्णु मिलकर भी घुस नहीं सकेंगे।

324 सुनकर युधिष्ठिर ने भीम को सामने से दैत्य को घेरने का आदेश दिया।

325 सुनकर भीम तेजी से दौड़ते हुए अजगपाद वन में प्रविष्ट हुए।

326 देखा कि कुरुवीर मरे पड़े हैं और रथ पर द्रोण का पुत्र बँधा है।

327. अश्वत्थामा ने बँधे-बँधे ही चेतना लाभ की ओर देखा कि भीम आ रहा है।

328. दारुण राक्षस ने ऐसी सख्ती से बाँधा है कि वह

हाथ-पैर नही हिला सकता।

३२९ रथ के पास भीम ने पहुँचकर विजया सारथी को शीघ्र पकड़ा।

३३० उठाकर रथ के चक्के पर पटक दिया। टकराकर सारथी नीचे पड़ा।

३३१ ३३२ भीम अश्वत्थामा के पास जाकर उसे पहचानकर धिक्कारा। खड्ग से बन्धन को काट दिया और उसकी बाहु को पकड़कर नीचे फेंक दिया।

३३३ वज्र के समान गदा रथ पर मारकर धुरी, चक्का और अश्व-रथ सबका चूर्ण किया।

३३४ तब भी भानुमती के रथ में मदासक्त विरूपाक्ष कुछ भी न जान सका।

३३५ स्वामी और सेना के अभाव से भानुमती रो रही है।

३३६ ३३७ उसका दुःख कहा नहीं जा सकता। सोचती है, मेरे पिता ने एक लाख राजाओं का वरण किया था। शंख पद्म चिह्न न पाकर मेरे पिता के सामने सबको अस्वीकार किया था।

३३८ मेरे पिता ने सबके राजाओं से कहा कि पर्वत-चिह्न न होने के कारण मेरी पुत्री ने मना किया।

३३९ सज्जन राजा गण लौट गए। और दुष्ट राजाओं ने युद्ध आरम्भ किया।

३४० हे स्वामी ! अकस्मात् तुम आविर्भूत हुए। वीर कर्ण ने अकेले ही लाख राजाओं को जीता।

३४१ इस प्रकार, दुर्धार कामरूपी दैत्य से हे स्वामी ! तुम हार गए।

३४२ आशा दिखाकर निराश कर गये। इतना मैंने कहा फिर भी मेरी बात नहीं मानी।

३४३ मैं सुन्दर सुलक्षण नायिका हूँ। मुझे वृक्ष पर चढ़ाकर साढ़ी हटा दी।

३४४ तुम अनन्त सुन्दर स्वामी हो। तुम्हारे शरीर में शंख-पद्मादि चिह्न हैं।

३४५ तुम्हारा कृत्य मैं नहीं जानती हूँ। पूर्व जन्म में मैंने उमापति को नहीं पूजा था ?

३४६ स्वामी का गुणगान मैं कैसे करूँगी ? निश्चल ही मैं जलती हुई आग में कूद जाऊँगी।

३४७ असुर के भय से नीचे नहीं आती है। रथ के ऊपर वह गुणगान करती हुई विलाप करती है।

३४८ ३४९ कर्ण महाबली ने विरूपाक्ष के आघात से मृत्यु प्राप्त की थी। रात्रि के बाद पुनः सूर्योदय हुआ।

३५० कर्ण वीर आदित्य का पुत्र है। सूर्य ने उसके कर्ण मे अमृत कुण्डल दिया था।

३५१. उस कुण्डल के रहते उसकी मृत्यु नहीं हो सकती। सूर्य की किरण पड़ने से उससे अमृत झरता है।

३५२ शीतल रश्मि के कारण वह अमृत हुआ था। रवि उदित होने से अमृत स्रवित हुआ।

३५३ मुख मे प्रवेश करने से कर्ण ने चेतना-प्राप्त की, किन्तु भयभीत होकर नहीं उठा।

३५४ इस समय पवन-नन्दन ने असुर का रथ भग्न करके सिंह गर्जना की।

३५५ जब कर्ण ने वृकोदर की गर्जना सुनी तो उसे ऐसा लगा मानो चातक को आकाश का पानी मिल गया हो।

३५६ पर्वत के समान दो गदा हाथ में लेकर वह महाबली भीम राक्षस की ओर दौड़ता है।

३५७ आँख मलकर कर्ण जल्दी से उठा। उसे देखकर भीम मुस्कराया।

३५८ अश्वत्थामा और कर्ण को लेकर भीम ने राक्षस के ऊपर आक्रमण किया।

३५९ रथ के नीचे वह दानव खड़ा था। सिंह-गर्जन सुनकर उसने पीछे की ओर देखा।

३६० ३६१ मेरु तुल्य काय भीमसेन पर्वत तुल्य दो गदा लेकर दौड़ता हुआ आ रहा है। उसके दायें-बायें कर्ण और अश्वत्थामा है। रे-रे के शब्द से मही उछल पड़ी।

३६२ इन्द्र की तरह धनुष लेकर दो विक्रम केशरी भीम के साथ दौड़ते है।

३६३ असुर के आघात से मरकर जीये थे। भीम का बल पाकर दोनों वीर उठकर दौड़े।

३६४ ३६५ असुर के सामने पहुँचे। असुर को देखकर भीमसेन कहता है—आज विधाता ने तुम्हे मृत्यु दी है। सजीवनी नाथ ने तुम्हारी भाग्यलिपि मिटा दी।

३६६. ऐसा कहते समय असुर ने देखा कि उसके रथ पर

उसका सारथी नहीं है।

367 उल्टी रीति देखकर असुर ने कहा कि कौन ऐसा महावीर है जिसने मेरे रथ को तोड़ दिया ?

368 देखा कि सामने विद्याधर की तरह शोभित तीन लोग खड़े हैं।

369-370 कहा—हे मानव ! तुम्हारा काल पूरा हो गया है। इतनी बड़ी सेना को मारकर घेरा डाल दिया। मेरे सामने पड़ने पर तुम क्या जीवन पा सकोगे ?

371 ऐसा कहकर उस पापी असुर ने भीमसेन के शरीर पर शूल से प्रहार किया।

372 शूल के पड़ते ही भीम ने बायें अंग को आगे बढ़ा दिया। शूल लगकर टूट गया।

373-374 भीम ने बावन-बावन भार की गदा लेकर [illegible] असुर पर प्रहार किया। कालान्तक गदा पड़ने से भी उसका कुछ नहीं हुआ।

375 कर्ण और अश्वत्थामा ने [illegible] दस्तापूरा [illegible] सन्धान किया।

376 असुर ने प्रतिकार [illegible] निवारण किया।

377 गुरुपुत्र ने [illegible] अग्निबाण मारा। जलधारा शर से उसका [illegible] निवारण किया।

378-379 कर्ण ने [illegible] [illegible] असुर ने [illegible] मारा। पवन के [illegible] गया।

380 गुरुपुत्र अश्वत्थामा ने [illegible] बाण मारा। असुर ने [illegible] सामान्य बाण से निवारण किया।

381 क्रोध से कर्ण वीर ने [illegible] बाण मारा। असुर ने गरुड़ बाण से उसका निवारण किया।

382 असुर ने कहा—हे मानव ! तुम्हारा काल पूरा हो गया। शूल लेकर [illegible] शाली गर्जता हुआ आ रहा है।

383 असुर दौड़ता हुआ जा रहा है और उधर से बावन-बावन भार की गदा लेकर पवन-सुत दौड़ता हुआ आ रहा है।

384 असुर और भीमसेन की मुठभेड़ हुई मानों ऐरावत और मेरु पर्वत की टक्कर हो।

385 शूल से असुर ने मारा। भीमसेन ने बायें अंग पर रोक लिया।

386 शूल लगते ही भीमसेन ने गर्जना की। उसने गदा घुमाकर जोर से मारा।

387 वह गदा असुर के शरीर पर लगी। वह एक क्षण के लिए मूर्च्छित हुआ।

388 चेतना पाकर शीघ्र उठा। देखा कि तीनों लोग उसके सामने खड़े हैं।

389 अगस्त्य महामुनि कहते हैं कि हे राजन् ! इस समय युधिष्ठिर, अर्जुन, नकुल और सहदेव भी पहुँच गये।

390 अजगपाद वन की आग देखकर युधिष्ठिर विधाता को याद करके शोकमग्न हुए।

391 युधिष्ठिर अर्जुन को सम्बोधित करते हुए कहते हैं हे भाई ! [illegible] के सौ पुत्र मरे पड़े हैं।

392 भाइयों का वध मैं कैसे भूल पाऊँगा ? [illegible] देखते देखते [illegible] विनष्ट हुए।

393 हमारा यह [illegible] और शरीर जल जाये, क्योंकि हमारे [illegible] भाइयों का युद्ध में पतन हुआ।

394 युधिष्ठिर के शोक का वर्णन नहीं किया जा सकता। नाना भाई युधिष्ठिर को सान्त्वना देते हैं।

395 वहाँ असुर के साथ तीनों युद्ध कर रहे हैं। उनकी [illegible]

396 असुर के पास चारों भाई उपस्थित हुए। भीम, अश्वत्थामा और कर्ण देखकर हर्षित हुए।

397 युधिष्ठिर ने कर्ण को प्रणाम और अश्वत्थामा को [illegible] नमस्कार किया।

398 अर्जुन से युधिष्ठिर कहते हैं—हे भाई किरीटी ! असुर का वध लो।

399 युधिष्ठिर की आज्ञा से अर्जुन, भीमसेन और असुर के [illegible] युद्ध स्थान की ओर दौड़े।

400 गाण्डीव धनुष लेकर अर्जुन असुर के पास पहुँचा।

401 वीर फाल्गुनी ने असुर को देखकर प्रज्वलित होकर अग्निवर्णी बाण चढ़ाया।

402 वीर फाल्गुनी ने शर को तैयार करके कहा—हे बाण ! शीघ्र असुर का प्राण लो।

403 शर तानकर छोड़ दिया। असुर के शरीर में लगकर गिर गया।

404. अट्टहास करके दैत्य हँसता है। हे मनुष्य ! क्या तुम मुझको जीत सकते हो ?

405-406 लोहे की धनुष से विरूपाक्ष ने अर्जुन के ऊपर चार करोड़ वाण मारे। अर्जुन ने सामान्य वाण से उसका छेदन करके एक हथौड़ा शर छोड़ा।

407 टकराते ही वह असुर भूमि पर गिर गया। पुनः चेतना पाकर वह उठा।

408 एक वज्र मुद्गर लेकर असुर ने आघात किया। अर्जुन ने वज्रशर लेकर उसका छेदन किया।

409-410 अर्जुन ने क्रोधपूर्वक असुर के ऊपर कोटि अर्बुद वाण मारा। विरूपाक्ष असुर ने उसका दूर से निवारण किया।

411 अर्जुन ने मर्मभेदी वाण को छोड़कर कहा कि विरूपाक्ष असुर का विनाश कर डाला।

412 वाण को खींचकर अर्जुन ने छोड़ दिया। अमोघ वाण से असुर लुढ़क गया।

413-414 एक क्षण में चेतना पाकर असुर अर्जुन को देखकर क्रोधित हुआ। शूल घुमाते हुए शीघ्र अर्जुन के पास पहुँचा।

415 पुकारता है—हे मानव ! तुम्हारा काल पूरा हुआ। सर्प-मन्त्र न जानकर काल सर्प के मुँह में अँगुली डालता है।

416-417 है, हे मानव ! तुम किस जाति के हो ? मैं तृण की तरह तुम्हारा शरीर काट दूँगा। तुम अपने माता-पिता और इष्ट देवता को याद करो।

418 दौड़कर उसने शूल से अर्जुन के ऊपर आघात किया। अर्जुन ने वज्रवाण से उसका प्रतिकार किया।

419 वीर ने जोर से अर्द्धचन्द्रवाण मारकर असुर के सिर को काट दिया।

420 कन्धे से एक और मुण्ड पैदा हुआ। अट्टहास करके दैत्यपति हँसता है।

421 असुर को हँसते देखकर अर्जुन कोपानल से प्रज्ज्वलित हुआ तरकस से महाकाल वाण को निकाला।

422 देखकर असुर ने वैष्णव चक्र हाथ में लिया। वैष्णव चक्र से असुर महाकाल वाण का छेदन कर सकता है—ऐसा सोचकर अर्जुन ने महाकाल वाण नहीं छोड़ा।

423-424 देखकर अर्जुन सोचता है कि यह निशाचर बड़ा ही दुर्धार है।

425 क्षिणाक्षीण शर को मारकर असुर ने स्वर्ग, मर्त्य और पाताल लोक को अन्धकारपूर्ण कर दिया।

426 अर्जुन ने असुर के मायायुद्ध को समझकर तिमिर-विदारण शर को छोड़ा।

427 तत्क्षण तिमिर फाड़कर सूर्य उगा। दशों दिशाओं में रणभूमि निर्मल दिखाई देने लगी।

428 अर्जुन ने एक कुहुक वाण मारा जिससे सचराचर भुवन कुहरे से ढक गया।

429-430 प्रत्युत्तर में असुर ने पवन शर मारा। पवन के आघात से कुहरा फट गया और शर-पथ दिखाई देने लगा।

431 असुर ने नारायण शर मारा। अर्जुन ने रुद्रशर से उसका निवारण किया।

432 असुर ने पर्वत शर मारा। अर्जुन ने वज्रशर से निवारण किया।

433-434 अर्जुन ने असुर के कपाल पर एक लाख, कण्ठ पर एक सौ और नाभिमण्डल पर एक अर्बुद शक्तिशाली वाण मारे।

435-437 प्रति अस्त्र करके असुर ने अर्जुन के वाणों का दूर से निवारण किया। इसके बाद असुर ने तरकस से नागपाश वाण निकाला और कहा कि इस मानव का प्राण तुम शीघ्र लो।

438 आज्ञा पाकर नागपाश वाण गर्जन करते हुए चले।

439 नाग बल ने सचराचर को आच्छादित किया। यह देखकर देवतागण विकल हुए।

440-441 कर्ण चिल्लाता है हे सव्यसाची ! तुम शीघ्र गरुड़ शर मारो। अर्जुन ने गरुड़ वाण मारा जिसे देखकर नाग डर से भाग गये।

442 अर्जुन सोचता है कि यह सामान्य नहीं है। इसको जीतने का मैं पात्र नहीं हूँ।

443 यह सोचकर अर्जुन ने चुने हुए एक अर्बुद वाण मारे।

444 विरूपाक्ष ने दूर से ही सहज रूप में उनका छेदन

किया।

445. ब्रह्मवेत्ता कहते हैं–हे राजन् ! तीन दिन और तीन रात्रि तक अपरिमित युद्ध हुआ।

446. सहदेव की ओर देखकर युधिष्ठिर पूछते हैं– असुर का विनाश कैसे होगा ?

447-449. युधिष्ठिर की आज्ञा से मन्त्री चूड़ामणि ने कर पल्लव को देखा और कहा कि असुर के नाभि देश में एक अमृतलिंग है। जब अग्निवाण नाभि में लगेगा, तभी असुर का विनाश होगा।

450-451. अर्जुन ने उसके बाद पाशुपत वाण मारे, पुनः मस्तक का अर्द्ध चन्द्र वाण से काटता। ये तीनों वाण शीघ्र मारकर अर्जुन ने असुर का प्राण हरण किया।

452. मन्त्री से यह सन्देश सुनकर पंचभ्राता हर्षित हुए।

453-454. अश्वत्थामा ने कहा–हे वीर पार्थ ! इस दैत्य को शीघ्र निहत करो। सुनकर अर्जुन महाक्रुद्ध हुआ, जैसे पूंछ पर लात रखने से सर्प गरजता है।

455-457. अर्जुन ने कालानल, पाशुपत और अर्द्ध चन्द्र बाणों को गाण्डीव पर चढ़ाया। इस समय वह शंख-चक्र-गदाधारी नारायण की तरह लग रहा है।

458. विश्वरूप में अर्जुन के वाण खींचने के समय लगा कि उसके वाणों के नोंक में सातों समुद्र समाहित हो गये।

459. इन्द्रादि देवता देखकर भयभीत हुए। दिन रहते सूर्य अस्त हो गया।

460. डर से वासुकि ने सिर नहीं उठाया। अर्जुन ने तानकर तीक्ष्ण वाण मारा।

461-462. शर का गर्जन अयुत बज्राघात की तरह हुआ। हुताशन शर नाभि देश में, पाशुपत शर छाती पर और अर्द्धचन्द्र वाण कण्ठ में लगा।

463. महाग्नि वाण ने नाभि में घुसकर महान्दोलित किया।

464. अमृतलिंग अग्नि के तेज से शून्य में उड़ गया।

465. अर्द्धचन्द्र वाण ने कण्ठ को पूर्णरूपेण काट दिया। तत्क्षण उसका सिर छिन्न हुआ।

466-467. पाशुपत उसके हृदय में पड़ा और दो भागों में फट जाने पर असुर गिर पड़ा। उसके सिंह-नाद से तीनों लोक काँप गया।

468-470. असुर का विनाश देखकर सभी अर्जुन की प्रशंसा करते हैं। स्वर्ग से युद्ध देखने वाले देवता गण अर्जुन के ऊपर फूलों की वर्षा करते हैं।

471. युधिष्ठिर अर्जुन से कहते हैं–हे अर्जुन ! शत भ्राताओं को जीवित करने का उपाय करो।

472. युधिष्ठिर दुःखी होकर कहते हैं–यदि तुम ऐसा नहीं करोगे तो मैं नहीं बचूँगा।

473-475. युधिष्ठिर को दुःखपूर्ण बात सुनकर अर्जुन मन में इन्द्र का ध्यान करता है। हे देव शिरोमणि वज्रधर ! प्रार्थना करता हूं। हे अमराधिपति पिता ! अमृत लेकर उपस्थित हो।

476. अर्जुन ने जब अनेक स्तुतियाँ कीं, तब मघवा ने ध्यान से जाना।

477. इन्द्र ने सारथी को आदेश दिया–हे मातलि ! शीघ्र रथ को सुसज्जित करो।

478. मातलि ने रथ को सज्जित करके पुरन्दर के सामने खड़ा किया।

479. विद्याधरों ने सुसज्जित होकर देवराज की विजय-यात्रा में दुंदुभी बजाई।

480. इन्द्र तैंतीस कोटि देवताओं को लेकर भुजंगपाद वन में प्रविष्ट हुए।

481. देवताओं को देखकर युधिष्ठिर ने आसन-त्याग किया। सहस्राक्ष रथ से उतरे।

482. युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन नकुल और सहदेव आदि सब पाण्डवों ने इन्द्र को नमस्कार किया।

483-487. इन्द्र ने पूछा, हे बेटा ! मुझे क्यों याद किया ? युधिष्ठिर ने कहा, हे पिता ! मेरा संकट काल है। मेरे भानगोविन्द सहित शत सहोदर भाई भानुमत राज्य से भानुमती को लेकर सैन्य-वाहिनी के साथ अपने राज्य को लौट रहे थे। विरूपाक्ष राक्षस ने उन सबका वध किया। तुम्हारे अनुग्रह से पार्थ ने संग्राम में राक्षस को मारा। हे पिता ! मेरे सौ भाइयों को कृपया जिला दो।

488-489. इन्द्र ने प्रसन्न होकर अर्जुन के हाथ में अमृत वाण दिया। कहा कि हे फाल्गुनी ! इस वाण को सेना के ऊपर मारो। सभी तत्क्षण जी जायेंगे।

490. अर्जुन ने शर को गाण्डीव पर रखा और मृत सेना पर शर-सन्धान किया।

491. मानगोविन्द आदि अट्ठानवे भाई अमृत शर लगने से उठ खड़े हुए।

492-493 उसकी मृत सेना शीघ्र उठ पड़ी। मान चक्रवर्ती कर्ण से पूछता है कि हे मित्र ! मेरी सेनाओं की क्यों मृत्यु हुई थी। कर्ण ने कि कहा कि असुर ने मारा।

494-495 सभी को मारकर भानुमती को लेकर जाते समय पाण्डवगण इस वनस्थली में हठात् आ गये। इतने बड़े असुर का अर्जुन ने वध किया और अमृत शर मारकर तुम लोगों को जिलाया।

496 मानगोविन्द सुनकर मौन रहा और पाण्डवों से कुछ भी नहीं पूछा।

497 दुःशासन आदि उसकी सभी सेना एक घड़ी में ही जी उठी।

498 दुर्योधन ने रथ पर बैठकर सेना को चलने का आदेश दिया।

499. राजा की आज्ञा से सारी सेना दमामा और दुंदुभी बजाती हुई चल रही है।

500. भानुमती को लेकर मूर्ख स्वभाव वाला मन्दगति कुरुपति चल रहा है।

501 युधिष्ठिर से कुछ नहीं कहा और पाण्डवों को देखकर उसके मन में ग्लानि का भाव आया।

502 जब मानपाल ने हस्तिनापुर में प्रवेश किया, वैसे ही इन्द्रादि देवता स्वर्ग लोक को चले गये।

503 अपमानित होकर पाँच पाण्डवों ने वारणावन्त की ओर प्रयाण किया।

504-506 धृतराष्ट्र के सामने संजय ने कहा—हे धृतराष्ट्र ! भानुमत राज्य से भानुमती से विवाह करके समारोह पूर्वक दुर्योधन सेना के साथ आ रहा था। उसकी विरूपाक्ष के साथ अजगपाद वन में भेंट हुई।

507-510 कर्ण, दुर्योधन समेत सभी सेना को मारकर राक्षस भानुमती को ले लेना चाहता था। इस समय देवर्षि नारद अजंगपाद वन से होकर प्रयाग से आ रहे थे। वहाँ मृत शवों के ढेर को देखकर उन्होंने युधिष्ठिर को सूचित किया।

511. युधिष्ठिर ने भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव को लेकर संग्राम किया।

512. सहदेव ने उसका मृत्यु-भेद बताया और अर्जुन ने उसे मारा।

513. सव्यसाची ने एक अमृत बाण मारा। अमृत-आहार से सौ भाई जी उठे।

514. तुम्हारा बेटे दुर्योधन ने उन्हें देखकर अपमानित किया। युधिष्ठिर आदि वारुणावन्त को चल दिये।

515. धृतराष्ट्र सुनकर एक साथ दुःखी और आनन्दित हुआ।

516 विदुर को पुत्रों के आगमन के कारण उत्सव मनाने के लिए कहा।

भानुमतनी के साथ दुर्योधन का हस्तिनापुर प्रवेश

1 राजा की आज्ञा पाकर विदुर ने राज्य में आनन्दोत्सव कराया।

2 हाट, बाट, दाण्ड सब परिष्कार किया गया। सभी घरों पर सुवर्ण-कलश बैठाये गये।

3 बहुत से पुरजन मिलकर दौड़ते हैं। सबके मन में अत्यन्त आनन्द और हर्ष है।

4 भीम और युधिष्ठिर सेना लेकर समारोहपूर्वक भव्य संवर्धना के लिए जा रहे हैं।

5 धर्मदेव इन्द्रप्रस्थ पहुँचे। उन्हें देखकर भीष्म अत्यन्त प्रसन्न हुए।

6-7 दुर्योधन श्वेत हस्ती के ऊपर विराजमान है। उसकी गोद में सर्वालंकारभूषिता भानुमती है। ऐसा लगता है, मानो समुद्र-मथन के बाद नारायण लक्ष्मी को लेकर वैकुण्ठ लोक आ रहे हैं।

8-9 दुर्योधन के साथ भानुमती को देखकर ऐसा लगता है, मानो चन्द्रमा के साथ रोहिणी, शिव के साथ उमा, और कन्दर्प के साथ रति बैठी हो।

10. गगन को उछालते हुए अनेक वीर-वाद्य बज रहे हैं। गणिकायें आनन्द से शुभ ध्वनि करती हैं।

11 शंख-ध्वनि बारम्बार हो रही है। तुतुही बजाकर मंगल गान हो रहा है।

12 अश्वारोही सेना अश्वों के साथ बिहार कर रही है।

परशु, असि, भाला और बर्छा घुमा रही है।

13 इस प्रकार शोभा-यात्रा में सेना भीड़ के साथ मार्ग पर आ रही है।

14 कहते हैं, अभी हस्तिनापुर शोभित हुआ। पाण्डु के वनवास के दिन से ऐसा यहाँ नहीं देखा था।

15 इसको देखकर ऑख की दरिद्रता छूट गयी। अब से राज्य अत्यन्त सुखी होगा।

16. राज्य के लोग अत्यन्त आनन्दित हुए। गणेश को याद करके सेना राज्य में प्रविष्ट हुई।

17 गान्धारी ने अनेक सुलक्षिणियों के साथ अर्घ्य लेकर शुभार्चन किया।

18 भानुमती की भुजा पकड़कर दुर्योधन हाथी से उतरा। धृतराष्ट्र और गान्धारी आस्थान विशेष पर उपस्थित हैं।

19-20 दुर्योधन ने कहा—हे माँ ! पिता धृतराष्ट्र तो जन्म से ही अन्धे हैं। ऑख रहते हुए तुम क्यों अन्धी हुई ! हे माँ ! मेरी बात मानकर अन्ध-पट्टी खोल दो।

21 गर्भ मे धारण करके मुझे पैदा किया। हे मा ! आंख रहते मेरी इतनी बड़ी सम्पत्ति को कैसे नही देखोगी ?

22 स्वामी की सहानुभूति मे अब इस बात को आगे मत बढ़ाओ। अन्ध-पट्टी खोलकर मेरी सम्पत्ति को देखो।

23-24 भानुमत देश के राजा भूमन्यु नृपति ने अपनी कन्या भानुमती के लिए एक लाख राजाओं को बुलाकर स्वयंवर किया। इस पृथ्वी पर इसके योग्य वर नहीं मिला।

25-26 दुष्ट राजा इसे बलपूर्वक लेना चाहते थे। अकेले कर्ण ने संग्राम करके सभी राजाओं को जीता और सुन्दरी भानुमती को शक्ति से छुड़ा लिया।

27 भूमन्यु कर्ण को कन्या प्रदान कर रहा था किन्तु कर्ण ने स्वयं न स्वीकार करके अनुग्रहपूर्वक मुझे दिला दिया।

28 यह त्रैलोक्यमोहिनी रूपवती है। इसके दोनों हाथों मे शखनिधि और पद्मनिधि हैं।

29 इसका हाथ पाषाण पर लगने से पाषाण रत्न हो जाता है। इतनी बड़ी सम्पत्ति को हे माँ ! क्यों नही देखोगी?

30 एक क्षण के लिए अन्ध-पट्टी को खोलकर मुझे अर्घ्य दो। इसके बाद तुम जोर से बाँध सकती हो।

31. गान्धारी ने कहा कि वर्तमान में तो सम्पत्ति देख लूँगी, किन्तु बाद मे विपत्ति आने पर उसे कैसे देख सकूँगी?

32 हे बेटा ! तुम इसे सम्पत्ति समझते हो, लेकिन यह भी चिरकाल तक नही रहेगी।

33 जन्मकाल से ही बेटा ! मै तुम्हारी दुष्ट प्रकृति देख रही हूँ। तुम्हारे विषय मे जितनी बाते सुनती हूँ, सब अनीतिपूर्ण होती है।

34 विदुर की यह परमार्थ वाणी सुनकर मैने अन्ध-पट्टी बॉध ली है।

35 सम्पत्ति और विपत्ति आती जाती रहती है। हे मेरे बेटे ! सुनो। इसीलिए मै तुम्हारा मुख नही देखूँगी।

36 तुम्हारी यह सम्पत्ति चिरकाल तक नही रहेगी। मुझे समय के साथ हर्ष और विषाद के चक्र में न फसाओ।

37 गान्धारी ने जब दो टूक बात कही, तब दुर्योधन माता की बात सुनकर क्रोधित हुआ।

38 कुन्ती ने आशीर्वाद दिया। भानुमती को लेकर चन्द्र शाल्म कक्ष मे ले गयी।

39 सजय ने धृतराष्ट्र के पास जाकर कहा कि दुर्योधन भानुमती को लेकर अपने कक्ष में उपस्थित है।

40 हे राजा ! तुम्हारे पुत्र ने बडी सम्पत्ति अर्जित की है। राज्य मे प्रवेश करते समय शची-इन्द्र की तरह दिखाई देते है।

41-42 इसके बाद हे मनु महाराज ! श्री महाभारत सुनकर पाप क्षय करो। अगस्त्य कहते हैं कि हस्तिनापुर में अनेक उत्सव हुए।

43-44 इसके बाद क्या हुआ ? कैसे व्यास सरोवर का निर्माण हुआ ? इसे सक्षेप में बताओ, जिसे सुनकर मुझे ज्ञान-लाभ होगा।

45 हस्तिनापुर के ईशान कोण मे व्यास-सरोवर का निर्माण किया गया।

46 नब्बे भाग लम्बाई और बत्तीस भाग चौड़ाई में चारों ओर अपरमित पत्थर जुड़वाये गये।

47 हर, ब्रह्मा, विष्णु तीनो स्तम्भ हुए। चन्द्र-सूर्य कला-खण्ड और अश्विनी कुमार मेरुदण्ड हुए।

48. अस्सी कोटि गन्धर्व ठाट हुए। यदि वे ऋषि के वचन की अवज्ञा करेंगे तो उनका हृदय फट जायेगा।

49. अग्नि, वरुण, कुबेर और सत्ताईस नक्षत्र सब ओरी हुए।

50. चारों मेंव चारों घाट हुए। काँस वन में शिव की विभूति विकसित हो रही है।

51. ऊपर सुदर्शन चक्र घूमता है। दुष्ट जन को देखते ही उसका सिर फट जाता है।

52 असख्य लोगों को आश्रय देता है, किन्तु बलपूर्वक प्रवेश करने वाले का प्राण नाश होता है।

53 एक एकड़ के परिमाण में बेड़ा बनाया। व्यास देव ने अपने बैठने का स्थान बनाया।

54. संजय धृतराष्ट्र के सामने कहते हैं कि स्वयं व्यास ने व्यास सरोवर बनाया।

55 सनुकर धृतराष्ट्र हर्षित हुआ और मन्त्री से पूछा कि इससे क्या होगा ?

56 संजय ने उस कथा को छिपाकर उस वात को नही कहा। अपरिमत कार्य-विधान का कारण नही बताया।

57. सहदेव ने युधिष्टिर से छिपाकर कह दिया और दुर्योधन की कुशल-वार्ता भी बताई।

58. हस्तिनापुर के लोग देखकर आश्चर्यचकित हुए। इसकी क्या आवश्यकता है—विदुर ने सजय से पूछा।

59 कपट के साथ संजय कहते हैं कि व्यास सरोवर में घुसने से शत्रु से रक्षा मिलती है।

60 61 कुछ दिन के बाद व्यास, संजय और वासुदेव सहदेव को बेटा कह गुप्त रूप मे कहते हैं कि बेटा ! तुम इस गुप्त बात को कही मत कहना। व्यास ने वासुदेव से अत्यन्त विनय की।

62 हे केशी दैत्य ध्वसकारी, दुष्ट निवारक, सन्त पालक प्रभु ! तुम्हें पहचानने वाला कोई नही है।

63 पृथ्वी पर दशरथ के घर पैदा होकर ऋषियों की रक्षा की।

64 हे अपार, दुर्ध्वस नाथ, गति मुक्तिदाता ! तुम्हारे बाहुबल से ऋषियों की सेवा हुई।

65 हे भगवान ! तुम श्वेत, पीत, लोहित, कुंकुम, नील, स्फटिक आदि वर्ण के हो। कैसे मैं तुम्हारे रूप का वर्णन करूँ ?

66. हे मुक्ति गति दाता, यदुकुलनन्दन ! तुम देवकी की गोद में सम्भूत हो। हे देव ! यह व्यास-सरोवर तुम्हारी प्रसन्नता के लिए है। तुम सन्तुष्ट होकर सुदर्शन चक्र दो।

68. वासुदेव ने सन्तुष्ट होकर अस्तु कहा। शत्रु पक्ष का जो भी व्यक्ति उसमें घुसेगा, उसका प्राण-नाश होगा।

69. वासुदेव को प्रसन्न करके व्यास गंगा के किनारे पहुँचे।

70. वासुदेव और संजय अपने-अपने आवास को चल दिये। सहदेव युधिष्ठिर के पास पहुचे।

71 देवधर्म पूछते हैं—तुम कहाँ थे ? संजय और वासुदेव के साथ मैं व्यास-सरोवर देख रहा था।

72 धर्मदेव युधिष्ठिर पूछते हैं कि उससे क्या होगा। बहुत दिनों के बाद वह दुर्योधन की रक्षा के योग्य होगा।

73. इन दोनों वंशों में महाभारत युद्ध होगा। इसको छिपाकर रखो।

74 सभी काल का बोध करते हुए अपने-अपने मार्ग पर रहे।

कुरू-पाडण्वों का कबड्डी खेल

1 अगस्त्य वैवस्वत मनु से कहते है कि हस्तिनापुर मे अनेक उत्सव हुए।

2 भीष्म की आज्ञा से एक सौ आठ कुमार महाप्रेम-भाव से अखाडे में खेल-कूद करते है।

3. बलराम से गदा विद्या सीखकर दुर्योधन और सौ भाई किसी को नही गिनते है।

4 अखाडे में रोज गदायुद्ध करते हुए भीम और दु.शासन में अप्रीति हुई।

5 कर्ण ओर अर्जुन के बीच मनोमालिन्य हुआ। युधिष्ठिर का दुर्योधन सम्मान नहीं करता।

6 गज अश्व पर चढ़कर हंगिड़ी पोलो खेल खेलते है। शतरंज और न्याय बल खेल खेलते हैं।

7. पादचालन, दौड़ना आदि खेल सभी कुमार खेलते हैं।

8. इन्द्र प्रशस्त, अखाड़े में क्रीड़ा-कौतुक के लिए कबड्डी खेल खेलते हैं।

9 दुर्योधन और युधिष्ठिर मूल खिलाड़ी हुए और भीम तथा दु:शासन द्वितीय खिलाड़ी हुए।

10. कर्ण और अर्जुन बीच भाग में गये। कर्ण दुर्योधन के पक्ष में और अर्जुन युधिष्ठिर के पक्ष में गया।

11 13. दुःशासन और कर्ण दुर्योधन के पक्ष में गये। सहदेव और शल्य की जोड़ी में से सहदेव युधिष्ठिर के पास और शल्य दुर्योधन के पास गया। नकुल और अश्वत्थामा की जोड़ी से युधिष्ठिर के भाग्य में नकुल और दुर्योधन के भाग्य में अश्वत्थामा पड़ा।

14. इस प्रकार बराबर की जोड़ी बनी। दुःशासन ने कहा– भीम तुम बैठो।

15-16 दुःशासन के वचन से भीमसेन हँसा। तुम सौ भाई एक तरफ रहो। हमें एक को भी देने की जरूरत नही।

18 शल्य, कृपाचार्य, अश्वत्थामा सहित तुम एक सौ पाँच एक पक्ष में रहो। हम पांच भाई दूसरे पक्ष में रहेंगे। देखूंगा कि कौन सा पक्ष हारता या जीतता है।

19 भीमसेन की बात से दुर्योधन सहमत हुआ। पश्चिम भाग में एक सौ पाँच भाई रहे।

20 पूर्वभाग में युधिष्ठिर आदि पाँच भाई रहे। बीच में रेखा देकर दो खम्भे गाड़ दिये गये।

21 ईशान कोण में युधिष्ठिर और पश्चिम कोण में दुर्योधन आमने-सामने रहे। खेल-रस में झगड़ा बढ़ गया।

22 पहले दुःशासन खेलने गया। युधिष्ठिर पवन से भी तेज गति से भागने लगे।

23 जैसे वनचर हरिणी को दौड़ाता है, उसी प्रकार दुःशासन युधिष्ठिर को साँस बाँधकर दौड़ाता है।

24 ? रेकार करके तेजी से दौड़कर युधिष्ठिर को कूदकर मारा।

25 अस्वस्थ होकर दुःशासन की चपेट से युधिष्ठिर गिर पड़े। उनकी नाक से रक्त की धारा बहने लगी।

26 मारकर दुःशासन लौटा। अरे-अरे ! कहकर भीमसेन उल्टी दिशा में दौड़ा।

27 मध्य रास्ते में दुःशासन को मारा। एक प्रहार से दुःशासन की छाती को तोड़ दिया।

28 दुर्योधन जब भागा, तब भीमसेन उसके पीछे-पीछे दौड़ता है। एक चपेट से दुर्योधन गिर पड़ा।

29. दुर्जय, दुर्बाल, दुराष्ट्रक आदि भाइयों में घुसकर किसी को हाथ से और किसी को पाँव से मारना आरम्भ किया।

30. सौ भाइयो को सौ आघातों से मारा। कर्ण भी भीम के आघात से गिर पड़ा।

31. सौ भाइयों को सौ लात मारीं। शरीर के आघात से सबकी छाती टूट गयी।

32 दौड़कर अश्वत्थामा की छाती पर आघात किया। कुरु-कुमार मूर्च्छागत हुआ।

33. शल्य कृष्णसार मृग की तरह दौड़कर भागते हैं। साँस बाँधकर भीम ने उन पर आक्रमण किया।

34. कूदकर शल्य के सिर पर आक्रमण किया। गाढ़ प्रहार से शल्य छाती दबाकर गिर पड़े।

35. बायाँ पैर पीठ के बीच में और दायाँ पैर शल्य के माथे पर पड़ा।

36 मुण्ड फटने से गहन रक्त की धार बही। विक्रम सिंह की भंगिमा से भीमसेन लौटता है।

37 सभी कुरुवीर अस्वस्थ होकर गिर पड़े। अश्वात्थामा, शल्य और कर्ण किसी को चेतना नहीं है।

38 ब्रह्मवेत्ता महामुनि अगस्त्य कहते हैं–शुरू में इसी से कुरु-पाण्डवों के बीच शत्रुता उत्पन्न हुई।

39 धृतराष्ट्र के सामने संजय ने कहा–खेल के विनोद में तुम्हारे पुत्र आहत हुए।

40 अकेले ही भीमसेन ने कबड्डी के खेल में सबको मार दिया।

41 भीष्म और संजय जाकर पुत्रों को सचेतन करके ले आये।

42 धृतराष्ट्र ने रेवती के प्राण-बन्धु बलराम को याद किया। हे कामपाल ! अमर वरदाता ! चन्द्र की तरह तेजस्वी ! तुम्हारी जय हो।

43 शुद्ध स्फटिक के समान तुम्हारा शरीर है। अणाकार पुरुष तुम धन्य सिद्ध हो।

44 45 अदृष्ट महेश्वर, धवल वर्णी, जिसके अपूर्ण वचन अभय और अव्यक्त हैं। एक ही आसन में जिसका कोटि कल्प बीत गया। उसका कपाल देश महा दर्पवान सर्प द्वारा अलंकृत है।

46. अचेतन पुरुष तुमने योग-चिन्तन प्राप्त किया। तुम यम का दर्पनाश करते हो।

46. असम्भव पुरुष तुम गति मुक्तिदाता हो। तुम कालान्तक पुरुष और योग-सिद्ध हो।

47-51 हे श्वेत, शख, पीले और लोहित वस्त्रधारी, कुंकुम नील कलेवर, सिर पर सप्त सर्पधारी, योग-भोग-शोक से जिसको भय नहीं, अजपाजप लय से श्वास निरोध करने वाले, निश्चल आसन वाले, सम्पूर्ण भुवन के सर्व-निधि, सर्व सोदर-बन्धु, दर्शन-कार्य सिद्धि दाता, हे सुन्दर लीलायति आँख वाले ! तुम्हारे प्रसन्न होने से वैकुण्ठ मिलता है।

52-53 उत्तराकुर तीर्थ में महायोग के समय मन्ताप करने से सुधा रस झरता है। श्रीभुज मे समथ मूसल विराजमान है। तुम्हारे दर्शन से समस्त प्रानग्रन्थ दहन हो जाता है।

54-55 अम्बा, कदम्बा, प्रणम्बा असुर का विनाश करने वाले हे रेवतीरमण ! अभय योग सिद्ध ! सुर सिद्ध मुनि तुम्हारे चरणों की वन्दना करते हैं। तुम उनको परम प्रसन्नता से अभय वर देते हो। हे अनादि परम योगी ! तुमने कालानल को ग्रस्त कर दिया। तुमने कलिकाल भय के उप या भास करने की इच्छा की।

57 हे भक्ति मुक्ति नाथ ! कामपाल ! तुम्हारे चरणों मे शतबार विनीत हो रहा हूँ। मै तुम्हारी शरण की इच्छा करता हूँ।

58 तुम रेवतीरमण, हलायुधपाणि अनन्त कोटि ब्रह्माण्ड के शिरोमणि हो।

59 लोभ मोह, क्रोध इच्छा आदि भवाग्निपूर्ण ससार को पार करने की मै इच्छा करता हूँ।

60 हे-केशी-निवारण नाथ ! तुम्हारे चरणों मे मै नमस्कार करता हूँ। हे स्वामी ! इस भवसागर से मेरा उद्धार करो।

61 श्री नीलाम्बर नाथ के पाद तले शतसहस्र दण्ड-प्रणाम करके सब समय शूद्र भोनि सारला दास प्रार्थना करता है।

कुन्ती के साथ पाण्डवों की इन्द्रप्रस्थ में अवस्थिति

1-2 कुरुपति धृतराष्ट्र ने बलराम को तुष्ट करने के लिए अनेक स्तुतियाँ कीं। धृतराष्ट्र ने जब ध्यान से चिन्तन किया तो कामपाल का आसन काँप गया।

3 हस्तिनापुर में देव बलराम उपस्थित हुए। संजय ने धृतराष्ट्र से यह बात बताई।

4. कुरुपति आसन छोड़कर उठे। बलराम के चरणों मे दण्ड प्रणाम किया।

5 अत्यन्त दुखित होकर धृतराष्ट्र ने कहा—हे देव कामपाल! मेरे पुत्रों का कष्ट देखो।

6 जिसके लिए मुझे सन्देह था, आज देखा कि उस भीमसेन ने क्रीड़ा-विनोद में मेरे सभी पुत्रों को मारा।

7 बलराम ने कहा—तुम चिन्ता मत करो। खेल व कौतुक में ऐसा होता है।

8 मेरी विद्या से शक्तिशाली होकर गदायुद्ध में जगज्जयी होंगे।

9 धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों के मस्तक पर बलराम ने हाथ रखकर कहा—आज से ये सब मेरे पुत्र हुए।

10 तुम इन सबकी चिन्ता मत करो। इनकी सारी बात का दायित्व मै लेता हूँ।

11 बलराम की बात से धृतराष्ट्र ने तुष्ट होकर चिन्ता छोड़ दी।

12 इसके बाद कामपाल द्वारका लोक मे प्रविष्ट हुए। उनसे जनार्दन ने पूछा—

13 कामपाल धृतराष्ट्र की सारी बात करते है। सवेदना के साथ खेल की बात बताई।

14 बलराम अर्जुन के साथ वासुदेव की प्रीति नहीं जानते थे। इसीलिए दुर्योधन का पक्ष लेते हुए बात की।

15 धृतराष्ट्र के पुत्रों के सिर पर हाथ रखकर मन्त्र विद्या सिखाया और उनको सुरक्षित किया।

16 पाण्डु के पुत्रो से उन्हें भय था, किन्तु अकेला दुर्योधन उन सबको जीत लेगा।

17 यह पाच पाण्डवों को मारकर पचकटक का राजा होगा। ऐसे गान्धारी के पुत्रों को मैने तैयार किया है।

18 बलराम के मुख से ऐसी बाते सुनकर चक्रपाणि हृदय मे विचार करते है।

19 गरुड की पीठ पर बैठकर हरि इन्द्रप्रस्थ नगरी में प्रविष्ट हुए।

20 इन्द्रप्रस्थ नामक एक पर्वत के ऊपर नारायण रात्रि-काल मे उपस्थित हुए।

21. श्रीकृष्ण ने अर्जुन को ध्यानपूर्वक याद किया और वह वहाँ पहुँचा।

22. देखा कि श्रीकृष्ण गरुड़ की पीठ पर विराजमान हैं। अर्जुन ने शत-सहस्र दण्ड-प्रणाम किया।

23. अर्जुन को आलिंगन करके श्रीकृष्ण ने कुशल-वार्ता पूछी।

24. कबड्डी खेल में क्या हुआ ? कुरुवीर कैसे भीमसेन के क्रोध से धराशायी हुए ?

25. अर्जुन ने कहा—हे देव ! पहले दुःशासन ने खेलाया। उसने युधिष्ठिर को मारकर घायल कर दिया।

26. उससे क्रोधित होकर भीमसेन ने एक ही साँस में ही सबको मारा।

27. अभिमानवश धृतराष्ट्र ने बलराम को याद किया और वे हस्तिनापुर में प्रविष्ट हुए।

28. नीलाम्बर ने अनेक प्रतिज्ञा करके उनके मस्तक पर हाथ रखकर कहा कि आज से ये सब मेरे पुत्र हैं।

29. श्री हरि ने कहा कि धृतराष्ट्र ने बलराम को केन्द्र करके अनिष्ट की शुरुआत की। निश्चय ही तुम्हारे साथ बड़ा द्वन्द्व होगा।

30. आज से तुम लोग धृतराष्ट्र, कर्ण, अश्वत्थामा, शल्य और दुर्योधन पर विश्वास न करना।

31. अर्जुन ने कहा कि स्वामी ! जब तुम्हें हमारी इतनी चिन्ता है तो लाख बलराम होने पर भी हमको नहीं जीत सकते।

32. अर्जुन की प्रतिज्ञा देखकर कृष्ण प्रसन्न हुए। हे अर्जुन! तुम्हारी प्रतिज्ञा सार्थक है। मैं तुम्हारे बल-वीर्य को समझ गया।

33. भोजन और शयन में तुम लोग विश्वास मत करना। शत्रु की दृष्टि बुद्धि से अत्यन्त क्षति होगी।

34. युधिष्ठिर, भीम, नकुल और सहदेव को समझाकर और किसी कौशल से कुरुओं से दूर हो जाओ कहकर...

35. नरायण आकाश में चल दिये। अर्जुन ने भेंट करके युधिष्ठिर को बताया।

36. युधिष्ठिर ने कहा—वे जगतमोहन हैं। वे सभी पाप-पुण्य का विचार जानते हैं।

37. हम तो धृतराष्ट्र की भक्ति करते हैं। वे हम पर कैसे आनभाव धारण कर सकेंगे ?

38. जिस प्राणी के हृदय में कपट होता है, उसके पाप से उसकी ही हानि होती है।

39. हे भाई ! धर्म का हृदय में आश्रय करके रहो। धर्म होने पर पाप नहीं लगता।

40. अजातशत्रु और कोपहीन युधिष्ठिर ने परमार्थ कथा कहकर अर्जुन को शान्त किया।

41. पुत्रों को बैठाकर धृतराष्ट्र ने कहा कि भीमसेन के प्रति संदिग्ध होकर मेरे मन में बहुत कष्ट है।

42. संजय ने कहा—जब हृदय में विभेद सृजन किया, तब पाण्डु के पुत्रों को तुम कैसे सँभालोगे ?

43. जिन प्राणियों के प्रति तुम्हारा सन्देह हुआ, उन पर विश्वास करके उन्हें पास कैसे रखोगे ?

44. संजय की बात सुनकर कुरुपति ने अर्द्धरात्रि में एकान्त स्थान पर विदुर को बुलाया।

45. हे भाई ! तुम परम पण्डित और महाज्ञाता हो। भीमसेन की बात को तुम कैसा सोचते हो ?

46. विदुर ने कहा हे स्वामी ! बाल्यकाल में अज्ञानतावश खेल-खेल में बालकों के बीच प्रीति-अप्रीति होती ही रहती है।

47. हे स्वामी ! इसके लिए मन में क्यों चिन्ता करते हो ! तुम्हें छोड़कर उनका बाप कौन है ?

48. धृतराष्ट्र ने कहा कि मैं जब उनको प्यार करूँगा तो भीम के जीवित रहते मेरे पुत्रों का कल्याण नहीं होगा।

49. विदुर ने कहा कि जब मन में सन्देह पैदा कर लिया तो उन पाँचों को साथ छुड़ाकर दूर कर दो।

50. विदुर की बात सुनकर धृतराष्ट्र ने कहा कि तुमने उचित बात कही।

51. हस्तिनापुर राज्य के सीमान्त प्रदेश में इन्द्रप्रस्थ नगर में कुरुवीरों ने एक भवन बनाया।

52. अखाड़े में जाकर भीमसेन विक्रम मूर्ति होकर गदा घुमाता है।

53-54. एक योजन आयत और सौ लट्ठा ऊँचा कुरुवीर नामक एक पर्वत था। गदा घुमाने के समय न सँभाल सकने के कारण पर्वत के ऊपर प्रहार किया।

55. बावन-बावन भार लोहे की दोनों गदाओं के आघात से वह पर्वत चूर्ण हो गया।

56 कुरुवीर देखकर भयभीत हुए। भीष्म ने जाकर धृतराष्ट्र के पास यह कहा।

57 हे कुरुपति ! तुम सावधान होकर सुनो। इसी क्षण मैने

58 भीम की महिमा देखी। तुम तो कुरुवीर पर्वत को अच्छी तरह जानते हो। इसी पर्वत को भीम ने गदा से चूर कर दिया।

59 बचपन मे ही उसकी इतनी महिमा है। वह पवन-नन्दन भीम जगत् का दर्प-मर्दन करेगा।

60 अपने पुत्रो को सभालकर रखो। भीम के साथ कोई शत्रुता न करे।

61 हँसी से जिस पर वह प्रहार करेगा तब वह चरम आघात होगा। क्रोध स जब प्रहार करेगा तो कोई नही बचेगा।

62 भीष्म की बात सुनकर धृतराष्ट्र को महाचिन्ता हुई। देवी कुन्ती ने किस क्षण उसे पैदा किया ?

63 इसी समय पाण्डु के पुत्रो ने धृतराष्ट्र के चरणो मे प्रणिपात किया।

64 सजय ने कहा—हे कुरुपति ! युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन आदि आकर आपके चरणो म प्रणाम करते है।

65 कुरुवीर ने उनको आर्शीवाद दिया ओर पास बेठने के लिए आज्ञा दी।

66 बटे ! तुम पाँचो भाई तो इन्द्रप्रस्थ मे रहते हो। भीम की वात दुर्योधन एक क्षण के लिए भी सहन नही करता।

67 मानगोविन्द होने के कारण वह अनवरत वर-भेष धारण करता है। दुष्कर्म करके वह अपने आप मे स्वय को वडा समझता है।

68 मानगोविन्द किंचित् अभिमान नही सह सकता। उसने बिना तपस्या क इतनी बडी सम्पत्ति का अजन किया।

69 तुम्हारा भाई भीम वडा दुष्ट ह। एक जगह रहने स और द्वन्द्व उत्पन्न होगा।

70 युधिष्ठिर ने कहा कि हे पिता ! यह बात युक्तियुक्त है। आपकी आज्ञा से हम लोग इन्द्रप्रस्थ मे ही रहेगे।

71 इसी समय भीम ने अखाडे मे घुसकर पृथ्वी पर तानकर गदा मारी।

72-73. पृथ्वी देवी ने भयभीत होकर विनय भाव से कहा कि मेरे ऊपर इतने जोर से गदा पीटने पर मैं रसातल को चली जाऊँगी।

74. पृथ्वी की व्याकुलता देखकर उसने गदा को समेट लिया। पुनः गदा को घुमाकर आनन्द से दौड़ता है।

75 वन, पर्वत, पठार और गुफाएँ उसकी मूर्ति देखकर भय से कॉप गये। शून्य पुरुष आसन छोड़कर भागने लगे।

76 श्रेष्ठ गदा घुमाकर उसने विक्रम रूप धारण किया। गदा तानकर आकाश की ओर देखा।

77 अधर पुष्ट करके ओठो मे दॉत दबाकर खडा हुआ। यम देवता भयत्रस्त हो गये।

78 79 भीम ने कहा—इस महाभार गदा को पृथ्वी, पर्वत, देव और असुर कोई नही सह सके। धृतराष्ट्र के सो पुत्र मेरे गदा को सह सकेगे ? उनके लिए ही म सदा गदा वहन करता हूँ।

80 भीमसेन को गदा चलाते हुए देखकर कुरुवीरो ने ऊँची कूद के लिए लता-रस्सी बॉधी। •

81 84 पहले दुर्योधन पचास गज-हाथ कूदा। युधिष्ठिर बीस गज-हाथ कूदे। दु शासन पैसठ गज-हाथ, नकुल बीस गज-हाथ, कर्ण नब्बे गज-हाथ, अश्वत्थामा पचीस गज-हाथ, शल्य पचपन गज-हाथ, सहदेव पैतीस गज-हाथ कूदे।

85 86 दुर्योधन के सौ भाई इसी प्रकार कूदे। द्रोण पचपन गज-हाथ कूदे। अर्जुन का सौ गज-हाथ कूदना देखकर दुर्योधन चमत्कृत हो गया ।

87 बोला कि अर्जुन गुरु से भी बडा हुआ। मन मे सोचा कि इसका बल और वीर्य बहुत अधिक है।

88 इसके बाद भीमसेन एक सौ पचहत्तर गज-हाथ कूदकर खड़ा हुआ।

89 इस प्रकार की बात शल्य ने कुरुनाथ से कही। कुरुनाथ कहता है कि भीम महाबलशाली है।

90-91 गदा घुमाकर भीम ने महामूर्ति धारण करके गान्धारी के सौ पुत्रो से गदा तानकर कहा—त्रैलोक्य में इस गदा को दूसरे लोग नही सह सकते। मैं कौरवो के लिए इस गदा भार को वहन करूँगा।

92. धृतराष्ट्र ने कहा—हे बेटा ! युधिष्ठिर सुना तो ?

भीम का स्वभाव बड़ा खराब है।

93. इस प्रतिज्ञा के समय मेरे पुत्र यदि होते तो सौ भाई मिलकर भीम को अवश्य मारते।

94. कुन्ती ने कहा कि भीष्म ने ही मेरी क्षति की। शतशृंग पर्वत से मुझे अकारण ही ले आये।

95. पुत्रों को साथ लेकर अभिमानपूर्वक कुन्ती इन्द्रप्रस्थ को लौटकर वहीं रहने लगी।

96-97. पुत्रों को बैठाकर कुन्ती ने भीम को समझाया—हे बेटा! तुमने इतनी दुष्ट बुद्धि का आचरण किया। तुम्हारे कारण ही सब कार्य नष्ट हो रहा है।

98. कुरुपति ने हम लोगों के ऊपर अत्यन्त दया की थी। केवल तुम्हारे प्रमाद से उनके मन में विकृत आयी।

99. भीमसेन कुन्ती की बात केवल सुनता है किन्तु बधिर की तरह अनसुना करके परवाह नहीं करता है।

100. ब्राह्म मुहूर्त में स्नान और नित्यकर्म समाप्त करके धृतराष्ट्र के दर्शन के लिए युधिष्ठिर आदि जाते हैं।

101. माता गान्धारी को नमस्कार करते हैं। धृतराष्ट्र कहते हैं, बेटे ! जाओ सभा में बैठो।

102. सभा में पाँचों भाई प्रवेश करते हैं। दुर्योधन मण्डप में बैठा है।

103. सौ कुरुवीर भाइयों के साथ भीष्म, भूरिश्रवा, शल्य, कृप, कर्ण, विदुर आदि प्रविष्ट हुए।

104. अश्वत्थामा आदि सभी बैठे हैं किन्तु युधिष्ठिर आदि पाँच भाई सभा में खड़े हैं।

105. भीष्म, भूरिश्रवा और शल्य को नमस्कार करके पाचों पाण्डव काँख में हाथ डालकर सभा में खड़े रहे।

106-108. दुर्योधन ने युधिष्ठिर से कहा कि हे धर्मपुत्र ! बैठो। भीमसेन को कहा—हे पवन-पुत्र ! बैठो। अर्जुन को कहा—हे वासव-पुत्र ! बैठो। नकुल और सहदेव को कहा—हे अश्विनीकुमार के पुत्र ! बैठो। ऐसा उपहास-पूर्वक कहा।

109. आज्ञानुसार पंचवीर बैठे। एक प्रहर के बाद सभा समाप्त हुई।

110. पाँचों भाई इन्द्रप्रस्थ भवन की ओर चल दिये। भीमसेन ने जाकर कुन्ती से पूछा—

111. हे माँ ! दुर्योधन सभा में अनुचित बात कहता है। पाँचों के पिता का नाम भिन्न-भिन्न कहता है।

112. कुन्ती ने उत्तर दिया—हे बेटा भीम ! तुम नहीं जानते हो। पिता का नाम उच्चरित होने से पुत्र का अनेक धर्म होता है।

113. कुन्ती ने ज्ञानी की तरह समझाया। माता की बात से भीमसेन चुप हो गये।

114. पुनः हस्तिनापुर जाकर धृतराष्ट्र और गान्धारी का दर्शन करते हैं।

115. धृतराष्ट्र पुत्रों को शुभाशीर्वाद देते हैं। दया भाव से सभा में बैठने के लिए कहते हैं।

116. पिता की आज्ञा पुत्र के लिए अलंघित मानकर पाँचों भाई सभा में प्रविष्ट हुए।

117. भीष्म, भूरिश्रवा, शल्य को नमस्कार करके विनीत होकर हाथ बटोरकर खड़े हुए।

118-119. दुर्योधन ने कहा—हे धर्म-सुत, हे पवन-नन्दन, हे वासव-नन्दन, हे अश्विनी कुमार पुत्रो बैठो।

120. दुर्योधन की आज्ञा से अभिमानपूर्वक पाँचों भाई सभा में बैठे।

121. एक प्रहर समय के बाद सभा समाप्त हुई। दुर्योधन अपने भवन को चला।

122. युधिष्ठिर आदि इन्द्रप्रस्थ को जाकर स्नान-भोजन आदि नित्य-कर्म करते हैं।

123. इसी प्रकार प्रतिदिन वे यातायात करते हैं और दुर्योधन प्रतिदिन ऐसा ही बोलता है।

124. अजातशत्रु युधिष्ठिर को क्रोध नहीं आता है। महाक्रोध से भीमसेन घोर दुःखी हुआ।

125. कुन्ती के चरणों में गिरकर भीम कहता है कि हे मा ! मैं दुर्योधन की कूट बात नहीं सह सकता हूँ।

126-127. कुन्ती ने कहा कि तुम बहुत दुष्ट हो। अनवरत क्यों द्वन्द्व की चिन्ता करते हो ? पिता के पुण्य से पुत्र बढ़ता है। पिता की बात से पुत्र को चिरकाल आयु मिलती है।

128. कुन्ती के मुख की ओर देखकर भीमसेन क्रोध से

कहता है कि वह पाँचों भाइयो के लिए पॉच पिताओ का नाम लेता है।

129 कुन्ती ने कहा कि हे मन्दबुद्धि ! तुम नही जानते हो। मेरे स्वामी पॉच देवताओ की एक ही आत्मा है।

130 भीमसेन ने कहा—हमे तुमने कैसे जन्म दिया ? पाण्डु का नाम सभा में नहीं लिया जाता है।

131 कुन्ती ने कहा कि पाण्डु मनुष्य थे। उनके शरीर मे सभी देवकला विद्यमान थी।

132 बेटा ! दुर्योधन अच्छी बात कहता है। उससे मन मे विकृति न लाना।

133 ऐसा समझाकर कुन्ती ने भीम को शान्त किया। पुन पाण्डव प्रतिदिन हस्तिनापुर को जाते रहते है।

134-135 धृतराष्ट्र गान्धारी को पुन नमस्कार करके आज्ञानुसार सभा कक्ष मे प्रवेश करते है। दुर्योधन पाँचो के लिए पाच पिताओ का नाम लेता है।

136 इससे युधिष्ठिर, अर्जुन, नकुल और सहदेव के मन मे विकृति का भाव नहीं आता है।

137 भीमसेन मन मे ग्रहण करके बडा लज्जित हुआ। सोचा कि यह बात मै नही सह सकूँगा वरन् शरीर त्याग दूगा।

138-142 एक दिन हस्तिनापुर की सभा मे पूर्ववत् घटना घटी। कुरुवीरो ने उपहास किया। भीमसेन ने सोचा कि मा कुन्ती हमारे उपहास का कारण है। माता के अनाचार से पुत्रो पर कलक हुआ। इतनी बडी सभा मे दूसरे लोगो ने हमारा उपहास किया। वश मे पुत्र नही होना अच्छा है किन्तु गर्भधारी माँ अनाचारी नही होनी चाहिए।

143 युधिष्ठिर लज्जित होकर इन्द्रप्रस्थ मे प्रविष्ट हुए।

144 भीमसेन ने किसी से कुछ नही कहा। अपने घर मे किवाड बन्द करके सो गया।

145 उसने स्नान भोजन कुछ नही किया। कटु वचन सुनकर वह मृत्यु का ध्यान कर रहा है।

146 जब भोजन का समय हुआ, तब देवी कुन्ती भीमसेन को खोजती है।

147 हे बेटा ! वृकोदर ! सूर्यास्त हो रहा है, उठो। स्नान करके भोजन करने चलो।

148 भीमसेन डण्डा लगाकर किवाड़ को सख्ती से बन्द करके सो रहा है। कुन्ती की बात वह नहीं सुनता है।

149 अरे-अरे ! भीम! कहकर माँ चीत्कार करती है। घोर शब्द सुनकर युधिष्ठिर पहुँचे।

150 युधिष्ठिर कहते हैं—हे भाई भीमसेन उठो। किसके प्रति तुम्हारे मन मे इतना क्रोध है ?

151 क्यों शरीर को इतना कष्ट देते हो ? तुम तो बार-बार खाकर भी सन्तुष्ट नही होते हो !

152 एक बार मे साठ पउटी लगभग पॉच कुन्टल अन्न खाने से भी तुम्हे तृप्ति नही होती। तुम्हारे भोजन का आनन्द देखकर हम आनन्दित होते है।

153 हे भाई ! जब सूर्यास्त के पूर्व भोजन करोगे तो तुम्हारे पेट मे अन्न पच जायेगा।

154 चन्द्रोदय होने से भोजन करने से अग्नि मन्द होती है।

155 मारुति ने किसी की बात नही सुनी। दिन डूब गया और रात्रि हो गयी।

156 युधिष्ठिर अर्जुन की ओर देखकर बोले कि भीम के न खाने पर किसी का भोजन नही हो पाया।

157 अर्जुन ने ध्यानपूर्वक जगन्नाथ को याद किया। गरुड के वाहन से अच्युत आकर उपस्थित हुए।

158 खगेश्वर की पीठ से दामोदर ने उतरकर युधिष्ठिर को नमस्कार किया।

159 युधिष्ठिर ने श्रीकृष्ण के माथे पर दोनो हाथ रखे और कहा—हे देव ! भीम के चरित्र को समझो।

160 किवाड बन्द करके वह विचित्र रूप मे सो गया है। हम पाँचो भाई निराश हो गये है।

161 बचपन से ही हम लोगो का भाग्य मन्द है। हम लोग जन्म से ही भोग-सुख से वचित रहे।

162 पिता पाण्डु को हम अच्छी प्रकार देख भी नही सके। धृतराष्ट्र के मन मे अन्तर आ गया है।

163 हमको हस्तिनापुर से बाहर कर दिया और हम इन्द्रप्रस्थ के घोर वन मे प्रविष्ट हुए।

164 इतने कष्ट पाने पर भी इसका यह हाल है कि किवाड बन्द करके सो रहा है। हम लोग बहुत दु:खी हुए।

165 गोविन्द ने कहा—हे भीम ! उठो-उठो ! मुझे बताओ कि तुम्हे क्या हुआ है ?

166 भीमसेन ने कहा—हे वासुदेव ! हस्तिनापुर की सभा मे

बहुत अपमानित हुआ।

167 सभा मे दुर्योधन हम पाँचो के पाँच पिता कहता है। उसने उपहास करके कहा कि तुम्हारी मा कुन्ती को धिक्कार है।

168 यह बात मै कभी भी नहीं सह सकता। मै शरीर-त्याग करूँगा।

169 कूट वचन सहन करना ब्रह्महत्या दोष की तरह है। हे श्री हरि ! मुझ पर अनुग्रह करो।

170 धृतराष्ट्र युधिष्ठिर के लिए काशी देखता है। वह प्रतिदिन उसके दर्शन के बिना भोजन नहीं करता है

171 वह अन्धा फिर भी हमको अपमानित करने के लिए दुर्योधन को सभा मे भेजता है। यह नारायण मेरा अपमान कैसे सहता है मेरा कभी मारा गया प्राण भी नहीं रहता है।

172 मेरा मारने करने से ना मे भाग्य पूरा हुआ शत्रु और महारथियों के साथ मारा ना मार पाऊँगा।

173 क्षत्रिय कुल मे पैदा होकर भी यह महापापी है। अब भी हमेशा शान्त रहता है।

भीमसेन की बात सुनकर अच्युत ने कहा—और गोलोक। हे भीम ! मै तुम्हारा अर्थ बताता हूँ।

174 ऊपर भीम ने नारायण। भीमसेन और नामदेव एकान्त मे मिले।

177 नारायण ने कहा—वह जब तुम्हें कूट वचन कहता है, तब तुम क्या कूट वचन उसे नहीं कह सकते ?

178 हे कालिन्दी नाथ ! मै तो कटु वचन नहीं जानता हूँ। अब मै क्या कहूँगा ?

179 गोविन्द कहते है कि इस बात को तुम हृदय मे रखो।

180 वह जब तुम्हे पराजित करेगा तो तुम उसकी बात मत सहना और कहना, हे गोलक पुत्र ! मै बैठ रहा हूँ।

183 ऐसी बात जब दुर्योधन सुनेगा, तब वह सभा मे उल्टे लज्जित होगा।

दुर्योधन का अपमान और पाषाण-गृह निर्माण

1 ऐसी बुद्धि जब अच्युत ने बताई तो हर क्षण भीम गोलक-पुत्र, गोलक पुत्र घोखता है।

2 यह बताकर नारायण अन्तर्धान हुए। भीम स्नान और भोजन के समय भी गोलक पुत्र, गोलक-पुत्र कहकर याद करता है।

3 क्रोध से अत्यन्त भोजन करता चला जा रहा है। हर्षित होकर इस समय गोलक पुत्र, गोलक पुत्र कहता है।

4 आचमन करके स्नान के स्थान पर मन ही मन गोलक पुत्र, गोलक-पुत्र याद करता है।

5 जब तीन पहर रात्रि बीत गयी चौथे पहर मे भीम को निद्रा न लग सकी।

6 उसी क्षण भूल गया। बाद मे उठकर शयन मन्दिर के बाहर चक्कर लगाता है।

7 हाय ! हाय ! मेरा पद कहाँ चला गया ? यह कहकर खोजते समय सहदेव के साथ टकरा गया।

8 सहदेव उठकर बैठे और पूछा कि क्या खोज रहे हो? भीमसेन ने कहा कि वासुदेव ने कौन-सा नाम बताया था ?

9 सहदेव ने बताया कि उन्होंने गोलक पुत्र कहा था। भीम ने कहा, मेरा निस्तार हुआ। मै अपना खोया हुआ पा गया।

10 मन ही मन वह गोलक पुत्र कहता रहा था। रात बीत गयी। भीमसेन उठा।

11 शीघ्र ही उसने प्रसन्न होकर स्नान किया। हृदय मे गोलक-पुत्र, गोलक पुत्र घोख रहा है।

12 महाहर्षित होकर वह युधिष्ठिर से कहता है कि हे स्वामी ! चलो, धृतराष्ट्र को देखने के लिए जायेंगे।

13 वे तो हमारे विश्वनाथ देवता है। हम लोग तो देवता और पितृगण को छोड़कर धृतराष्ट्र के भक्त हुए है।

14 युधिष्ठिर हस्तिनापुर को जाते है। भीम गोलक-पुत्र, गोलक-पुत्र कहते हुए आगे-आगे चल रहा है।

15 युधिष्ठिर कहते है, अरे क्या-क्या बुरी बात कहते हो? फिर मेरे भाइयो के साथ झगडा लगाओगे क्या?

16 17 प्रतिदिन धृतराष्ट्र के दर्शन के लिए जाते

समय युधिष्ठिर, उसके पीछे अर्जुन, उसके पीछे नकुल और सहदेव जाया करते थे। सबके पीछे भीमसेन चुपचाप चलता था।

18 उस दिन आगे होकर भीमसेन जल्दी-जल्दी चल रहा है। वह उन्माद से युधिष्ठिर को दो कोस दूर छोडकर चल रहा है।

19 उलटकर भीमसेन देखता है कि युधिष्ठिर अत्यन्त पीछे है।

20 भीमसेन को देखकर युधिष्ठिर ने कहा—आज तो तुम बड़े वेग से जा रहे हो ?

21 भीमसेन ने कहा—तुम यदि क्रोध करोगे तो मै आगे न जाकर पीछे पीछे हो जाऊँगा।

22 सबके पीछे चलता हुआ भीमसेन क्रोध से गोलक-पुत्र गोलक-पुत्र कहता है।

23 धृतराष्ट्र के भवन में प्रविष्ट होकर अन्ध राजा को प्रणाम किया।

24 धृतराष्ट्र ने आसन पर बैठने का आदेश दिया। युधिष्ठिर दुर्योधन के पास बैठे।

25 धर्म-सुत बैठो—ऐसा गम्भीर ने कहा। अक्रोपी युधिष्ठिर जाकर सभा में बैठे।

26 अर्जुन से कहा कि हे इन्द्र पुत्र बैठो। आज्ञानुसार वीर पार्थ जाकर बैठा।

27 गान्धारी ने नकुल सहदेव को हे अश्विनीकुमार पुत्रो बैठो कहकर—आदेश दिया।

28 नकुल सहदेव के सभा में बैठने पर पीछे से भीम जाकर पहुँचा।

29 दुर्योधन ने कहा हे पवनपुत्र ! बैठो। भीमसेन ने हँसकर कहा—हे गोलक पुत्र बैठ रहा हूँ।

30 भीष्म और भूरिश्रवा ताली बजाकर हँसे। कहा कि हे भीम ! ऐसी रम्य कथा तुम्हे कहाँ से प्राप्त हुई?

31 इस बात को सुनकर कुरुपति आत्मावगृत होकर चारों ओर देखने लगा।

32 वहाँ सोचकर मानगोविन्द लज्जित हुआ। महावीर ने अधोमुख होकर कपाल पर हाथ रखा।

33 तत्क्षण सिंहासन से कुरुपति कूद पड़ा। अभिमान के साथ चला गया।

34 भीतर कोपभवन में प्रविष्ट होकर द्वार बन्द कर लिया। सब कुछ भूलकर सो गया।

35 रसोइया भोजन के समय द्वार पर खडा होकर मानगोविन्द को खोज रहा है।

36 संजय, विदुर, भीष्म, भूरिश्रवा सबने जाकर भेंट की।

37 हे मान चक्रवर्ती ! किवाड खोलो। किस कारण तुम्हारा मन विकृत हुआ ?

38 हे बेटा ! उठो। सूर्य रहते-रहते भोजन करो। तब भी उसे दृढ देखकर धृतराष्ट्र उपस्थित हुए।

39 पिता पुकारते है—हे कुरुपति ! उठो। हे मानगोविन्द चक्रवर्ती उठो।

40 किसलिए किवाड बन्द किये ? तुम तो पचकटक के पालनकर्ता हो।

41 महावीर कर्ण द्वार से पुकारकर कहता है—हे मित्र ! किसलिए तुम्हे इतना क्रोध है ?

42 राजा ने किसी का उत्तर नही दिया। स्वयं गान्धारी आकर पहुँची।

43 गान्धारी ने कहा—हे बेटा ! उठो। तुम तो पचकटक के महिपाल हो।

44 तुम्हारी तरह भिन्न क्या पागल होना है ? सभी तो मूर्ख है। तुम्ही तो बुद्धिमान हो।

45 हे बेटा ! तुम्हारी मूर्खता से राज्य बह गया। तुम्हारे विचार से जो योग्य नही होता, उसका तुम नाश करते हो।

46 कुबुद्धि और कुशय्या से लक्ष्मी की हानि होती है। अभय पुरुष होकर तुम्हारा किसके प्रति इतना अभिमान है ?

47 मूर्ख लोगो की ऐसी दशा होती है। क्षत्रियो को ऐसी बात शोभा नही देती।

48 माता गान्धारी ने बहुत समझाकर कहा कि तुम तो सारे ससार के राजा हो।

49 दुर्योधन ने कहा—हे माता ! तुमसे विश्वासपूर्वक कहता हूँ। भीम ने मुझे सभा के बीच मे अपमानित किया।

50 हृदय का पाप मन जानता है और पुत्र का बाप मा ही जानती है।

51 गान्धारी ने कहा कि तुमने बुरा काम किया। अपनी बुराई से समस्त कार्य को नष्ट किया।

52 युधिष्ठिर वस्तुत तुम्हारा ज्येष्ठ भ्राता है, किन्तु तुम

उसे नित्य कहते हो हे धर्म-सुत ! बैठो।

53. वे क्या तुम्हारे पाँचों भाई नहीं हैं। अपनों का छिद्र स्वयं नहीं छिपाना चाहिए ?

54 पाण्डु और धृतराष्ट्र क्या भिन्न हैं ? युधिष्ठिर के अपमान से तुम्हें लाज नहीं आती ?

55. युक्तितः तुमने ही सहोदरों को अपमानित किया। कालवशात् पाप ने आकर तुमको दूषित किया।

56 दुर्योधन ने कहा—मेरे पिता है और तुम उच्च वंशी गान्धारसेन की दुहिता हो।

57. मेरे पिता धृतराष्ट्र हैं और माता गान्धारी के होने पर भी भीम ने अमर्यादित भाव से गोलक-पुत्र कहा।

58 यह सुनकर भीष्म और भूरिश्रवा हँसने लगे। मन लज्जा और अपमान पाया।

59 गान्धारी ने कहा—तुम मेरे पण्डित पुत्र होकर भी पाण्डवों का बहुत अपमान किया।

60 अपने शरीर के घाव के कीड़े को न देखकर तुम नाक दाबकर दूसर के शरीर के कीड़े को देखते हो।

61 दुर्योधन ने कहा—पहले गोलक-पुत्र कथा का अर्थ क्या है ? मुझे बताओ।

62 गान्धारी ने कहा—बेटा ! पहले भोजन करो। पीछे मैं इसका अर्थ बताऊँगी।

63 दुर्योधन ने कहा—जब ऐसा कलंक है तो उसे क्यो छिपाती हो ? अभी बताओ।

64 उसका अर्थ समझने पर ही हे मा ! मै उठकर भोजन करूँगा।

65 गान्धारी ने कहा—हे बेटा ! पूर्व कथा सुनो। गान्धारसेन राजा मेरे पिता है।

67 ज्येष्ठ मास की अमावस्या के कृत्तिका नक्षत्र में मै पैदा हुई थी। इसीलिए मैं अमावस्यी और ब्रह्मभुरी हुई। अतः भय से कोई मुझे प्रदान नहीं हुआ।

68. मेरे पिता ने दूर के राजाओ का वरण किया। मेरे नाम से वरण करने पर बाईस राजा मर गये।

69 व्यास को बुलाकर गान्धारसेन ने पूछा। व्यास ने कहा, इसको पहले गोलक वृक्ष को प्रदान करो।

70. पिता के ऑगन में एक गोलक वृक्ष सिंहोर-वृक्ष था। गान्धारसेन ने व्यास को ले जाकर उसे दिखाया।

71. व्यास ने स्वयं मुझे कन्या-वेश और गोलक वृक्ष को वर-वेश में सुसज्जित किया।

72 व्यास ने मेरे दाहिने हाथ को वृक्ष की डाल में बाँधकर मुझे प्रदान कराया।

73 व्यास ने कुश से बाँध दिया। शंख में जल और तिल रखकर गान्धारसेन अर्घ्य दिया।

74 मेरा हाथ उसके साथ लगा। तत्क्षण वह गोलक महावृक्ष मर गया।

75 तुम्हारे ब्रह्मासुर पिता को कोई कन्या नहीं प्रदान कर रहा था। उनके वरण की इच्छा से एक सौ आठ कन्याएं मर गयी।

76 स्वयं व्यास ने रहकर यह विधान किया। धृतराष्ट्र को लाकर मुझे प्रदान किया।

77 ऐसी गुप्त बात व्यास और वासुदेव को छोड़कर कोई नहीं जानता।

78 तुम जिसको खोज रहे थे, वही मिला। दूसरे का दोष देखने में अपने ही दोष का रहस्य प्रकट हो गया।

79 भीम ने जो कहा वह सत्य है। यह सुनकर गान्धारी-नन्दन विषण्ण हुआ।

80 भीम ने ऐसा रहस्य कैसे जाना। न जानकर मैने अपनी सीमा का उल्लंघन किया।

81 भीम जब नित्यप्रति इस प्रकार की बात कहता रहेगा तो मै सभा में कैसे बैठ सकूँगा ?

82 पामर गान्धारसेन ने क्यों ऐसा कार्य किया कि विधवा कन्या को मेरे पिता को दिया।

83 हे माता ! ऐसे पाप-क्षण में जब तुम पैदा हुई तो पिता के घर मे क्यो नही मर गयी।

84 यह कहकर भाग्य को याद करके वीर उठा और स्नान तथा नित्य कर्मादि समाप्त किया।

85 महावीर भोजन पर बैठा किन्तु उस दिन से सभा में आना बन्द कर दिया।

86 यह देखकर युधिष्ठिर ने भीमसेन से कहा कि दुर्योधन को क्यों अनीति कथा कही ?

87 भीमसेन ने कहा कि उसने तो हम लोगों का सब दिन अपमान किया। हम लोगो ने सदा बहुत सहन किया।

88 हम पाँचों के पिता का नाम सभा में वह लेता था। सभी कुरु और हमारा उपहास करते थे।

89. युधिष्ठिर ने कहा कि उसका पिता धृतराष्ट्र और माता

गान्धारी है। क्यों बिना सोचे उसे गोलक-पुत्र कहा ?

90. भीमसेन ने कहा—वह यदि गोलक-पुत्र नहीं है तो क्यों चिढ़ता है।

91. युधिष्ठिर सुनकर स्तब्ध हो गये। भीमसेन मन ही मन तुष्ट हुआ।

92. युधिष्ठिर रोज की तरह इन्द्रप्रस्थ लौटते हैं। पुनः प्रतिदिन आकर धृतराष्ट्र के चरणों की सेवा करते हैं।

दुर्योधन का पाषाण-गृह निर्माण

1. उस दिन से सभागार में सभा नहीं बैठती है। सभी राजपुरुष अपने-अपने भवन में रहते हैं।

2. मान चक्रवर्ती कूट-कपट पूर्ण क्षत्रिय है। वह बुद्धिमान, भाग्यवान और चतुर चक्रवर्ती है।

3. लौहगिरि नामक एक पर्वत था। उसका विस्तार और उच्चता एक कोस तक थी।

4-5. सभी शिल्पियों को बुलाकर उनके हाथ में पगड़ी, रत्न और अलंकार आदि देकर उन्हें रात्रि में पर्वत पर नियोजित किया। कहा कि इस पूरे पर्वत को भीतर से खोलकर घर बना दो।

6. यत्नपूर्वक गुफा की तरह बनाकर उसमें मात्र एक ही द्वार लगा देना।

7. इसको घर की तरह बनाना। धृतराष्ट्र के पुत्र ने यही आज्ञा दी।

8-9. उसका विस्तार एक योजन और ऊँचाई दो योजन होगी। उसमें एक वज्र किवाड़ लगाना जो बाहर से बन्द करने से भीतर से न खुले।

10. प्रत्येक शिल्पी को पाँच गांव और मासिक वेतन एक माढ़ वजन सोना देता था।

11. एक सौ पांच शिल्पी वज्र की तरह पत्थर काटकर निर्माण-कार्य करते हैं।

12-13. बारह वर्ष में उसकी रचना हुई। सौभाग्य नदी के किनारे सौभद्र वन में अरविन्द लौहगिरि है। वहां दुर्योधन ने उपाय से पत्थर का घर बनवाया।

14. रचनाकार्य जब समाप्त हो गया, तब भीतर मूर्ति-निर्माण और चित्रांकन द्वारा उसे सजाया।

15. ऐसा प्रासाद उसने गुप्त रूप से बनवाया जिसे कोई नहीं जानता था। एक दिन दुर्योधन ने माता से यह बात कही।

16-17. हे महासती माता ! मुझे गान्धारसेन के राज्य में जाने की आज्ञा दो। देखूँगा कि मेरे नाना कितने ऐश्वर्य में रहते हैं और कैसे राज्य की जन-प्रजा का पालन करते हैं।

18. पिछली बात भूलकर गान्धारी ने जाने की आज्ञा दी।

19-20. दुःशासन, दुर्जय, कर्ण, शल्य, कृपाचार्य, अश्वत्थामा के साथ सैन्य को लेकर गान्धार सेन राज्य को दुर्योधन शीघ्रता से जा रहा है।

21. वे रात-दिन प्रयाण करते हैं। हस्तिनापुर से गान्धारसेन राज्य पन्द्रह सौ योजन था।

22. पन्द्रह दिन में प्रसन्नतापूर्वक राज्य में प्रविष्ट हुए।

23. गान्धारसेन खबर पाकर शीघ्र सेना के साथ अगुआनी करने के लिए आ रहे हैं।

24. वैदूर्य पर्वत पर भेंटा-भेंटी हुई। गान्धारसेन ने कुशल-वार्ता पूछी।

25. दुर्योधन ने कहा—हे नाना ! सेना को छोड़कर चलो। हमारी-तुम्हारी एकान्त में कुछ बात होगी।

26-27. नाती-नाना दोनों पर्वत पर जाकर बैठे। कहा कि तुम अभिजात और चक्रवर्ती राजा हो। मैं युधिष्ठिर का जंजाल सहन नहीं कर सकता। इसीलिए तुम्हारे साथ परामर्श करने के लिए आया हूँ।

28. भीमसेन ने मुझे बहुत अपमानित किया। मैं कैसे उसका प्राण लूँगा ?

29. गान्धारसेन ने जमीन छूकर दोनों हाथों से कानों को ढक लिया। बेटा ! जो बात तुमने कही वह दुःसाध्य और दुर्निरीक्ष्य है।

30. प्राण और बल से तुम उसके समान नहीं हो। वह देवकला को लेकर प्रत्यक्ष अवतारी है।

31. धर्म के वीर्य से उत्पन्न युधिष्ठिर करवट बदलने से नव सृष्टि उलट सकता है।

32. पवन के वीर्य से उत्पन्न भीमसेन के हाथ में गदा लेने से देवराज भयभीत होता है।

33. वह भीम महा बलवान और सार्थक प्रतिज्ञ है। छः लाख योजन दूर रहकर भी यमराज उससे भय करता है।

44 वासव का नन्दन फाल्गुनी एक बाण से त्रैलोक्य जीत सकता है।

नकुल नामक उसका भाई है, वह आकाश ... [illegible] ...कुमार का पुत्र है।

उसका अनुज सहदेव भूत भविष्य ... [illegible] ... मरी बात सुनो। ... [illegible] ... के साथ द्वन्द्व मत ... [illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

इसको ... [illegible] ... किवाड़ बन्द कर दूगा।

गान्धारसेन ... [illegible] ... तुम ... बुद्धि म भी ... हो।

52 तुम्हारे ... यह निर्मित हुआ ... इन्द्रपुरी की ... है।

तुम ... [illegible] ... यह ... दुर्योधन

बाहर आया और उसने किवाड़ बन्द कर दिया।

गान्धारसेन ने कहा—बेटा ! किवाड़ खोलो। तुम तो ... [illegible] ... दृश्य है।

56 दुर्योधन ने कहा—हे गान्धारसेन ! सुनो। तुम मेरे परम शत्रु हो।

तुमने अपना ... [illegible] ... मेरे पिता से ... [illegible] ... बनाया।

[illegible] ... वह मर गया।

[illegible]

... महात्मा ... [illegible] ... नहीं किया ... [illegible] ... रहो।

तुम्हारे ... [illegible] ... तुम्हें मारकर ... [illegible]

[illegible] ... निर्मित है।

[illegible] ... हूं। ... [illegible] ... बाद ... [illegible]

[illegible] ... करती है।

[illegible] ... के पास ... [illegible]

... मेरे पिता ... [illegible] ... दिया ... [illegible]

गान्धारसेन ... [illegible] ... किया ... [illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

माता के आदेश ... [illegible] ... नित्य ... अन्न देने ... [illegible]

... भोजन ... [illegible] ... पत्थर की ... से बढ़ा दिया जाता है।

गान्धारसेन ... [illegible] ... मरने से मनुष्य की ... [illegible]

73. सभी दाहिना हाथ फैलाते हैं और ज्येष्ठ पुत्र शकुनि सबको बाँटकर भोजन देता है।

74. प्रत्येक को पसर-पसर भर अन्न मिलता है। एक घड़ा पानी से सबको एक-एक चुल्लू पानी मिलता है।

75. इस प्रकार कुरुपति प्रतिदिन दे रहा है। उपाय करके शकुनि उससे कुछ बचाकर रख दिया करता था।

76. वह अपने को बचाने के लिए कुछ भात चिपटाकर दीवाल में चिपटा देता था।

77. अगस्त्य कहते हैं—हे युगधर ! सुनो। छः महीने तक एक कँवरी करके अन्न दिया।

78. छः मास के बाद एक उपाय उसे सूझी। कवरी का एक पल्ला भोजन देने के लिए रसोइयों को आदेश दिया।

79. ज्येष्ठ मास के शुक्ल पक्ष के चतुर्थी के दिन से आधा कँवरी अन्न रसोइया देता है।

80. सभी व्याकुल होकर उसे खाते हैं। अन्त में एक थाली ही अन्न देने लगा।

81. उसे देखकर गान्धारसेन नृपति कहता है कि हे बेटे ! दुर्योधन बिना दोष ही सबका नाश कर रहा है।

82. एक सौ सत्तानवे लोगों को एक थाली अन्न देता है। इतना भोजन करके कैसे बचेंगे ?

83. दुर्योधन के हम लोग तो शत्रु नहीं हैं। वह बिना अपराध के क्यों हम लोगों का विनाश करता है?

84-85. यह मेरे वंश का अकारण नाश करता है। इसी प्रकार जो इसके वंश का नाश करके पितृ-कर्म कर सके वही इस थाली के अन्न को खाये।

86. गान्धारसेन राजा की ऐसी बात सुनकर ज्येष्ठ पुत्र शकुनि ने दृढ़ बात कही।

87. तुमने जैसी आज्ञा दी है। मैं ही दुर्योधन के वंश का नाश करवा सकूँगा।

88. गान्धारसेन ने कहा—तुम एक थाली अन्न खाओ और सबकी आयु लेकर मंगलपूर्वक जीवित रहो।

89. उस थाली का अन्न शकुनि खाता है। सभी मर गये।

90. एक सौ पंचानवे लोगों का जीवन समाप्त हुआ। शकुनि को लेकर गान्धारसेन बचा रहा।

91. गान्धारसेन ने कहा—हे शकुनि ! तुम मेरे महाज्ञानी ज्येष्ठ पुत्र हो।

92. हे पुत्र ! मैंने तुम्हारी रक्षा की। तुम कैसे दुर्योधन के वंश का नाश करोगे ?

93. शकुनि ने कहा—हे पिता ! मेरे पास बुद्धि है। अब तुम कार्य-सिद्धि हेतु उपाय बताओ।

94. तुम तो जा रहे हो। जाते समय कुछ उपाय बताओ। मैं उसे तुम्हारी आज्ञा मानकर हृदय में धारण करूँगा।

95-96. गान्धारसेन ने कहा, हे मेरे पुत्र ! सुनो। जब मैं मृत्यु को प्राप्त हूँगा, तब तुम मेरे दाहिने हाथ की हड्डी कुरुपति के अनजाने में यत्नपूर्वक छिपाकर रखना।

97-98. दाहिने हाथ की दो हड्डियों से दो पाशे की डण्डी

98. बनाना। बायें हाथ की हड्डी से पाशे की तीस गोटियाँ यत्नपूर्वक बनाओगे।

99. दुर्योधन तुम्हें अवश्य बड़ा आदमी बनायेगा। तुम महामन्त्री के रूप में राजा के पास बैठोगे।

100. बेटा ! तुम तो उसका विनाश नहीं कर सकोगे। दुर्योधन के साथ पाण्डवों को जुआ खेलाओगे।

101. तुम अपने कूट-कपटपूर्ण पाशे फेंककर खेलोगे। तुम्हारी इच्छानुसार दाँव पड़ेगा।

102. युधिष्ठिर को हराकर दुर्योधन को जिताओगे। पाशा खेलाकर पाण्डवों का राज्य-सिंहासन छीन लोगे।

103. दुर्योधन को पाण्डवों की आत्मा और शरीर तक को जितवा देना। पाण्डवों को सभा में नीचे बैठवा देना।

104. कुरुराजा समारोह के साथ सिंहासन पर बैठे होंगे। पाण्डवों की पत्नी को केश पकड़कर सभा के बीच मँगवाओगे।

105. महासभा बीच उसको मरवाओगे। इस बात को भीम हृदय में अंकित करके रखेगा।

106. इसका क्रोध लेकर भीमसेन युद्ध में दुर्योधन के वंश का नाश करेगा।

107. हे बेटा ! भानजों को मरवाकर तुम वहाँ कभी नहीं रहोगे। तुम सहदेव के हाथ से रण-यज्ञ में आहुत होगे।

108. मैं तुमसे कहता हूँ। पाण्डव जल, स्थल और अग्नि में किसी भी प्रकार नहीं मरेंगे।

109. शकुनि ने कहा कि हे पिता ! तुमने जो बात कही वह देवों के लिए भी अशक्य है।

110 तुम्हारे इन हाथों ने कहाँ इतने पुण्य किये थे ? मुझे विश्वास दिलाते हुए बताओ।

111 गान्धारसेन ने कहा कि यह त्रेता युग की कथा है। मैं शस्त्र और शास्त्र मे पण्डित था।

112 पाशा खेलकर मै सर्वदा हारता था। गगा की सेवा मने पाशे के अभिमान से की।

113 पन्द्रह वर्ष तक मने घोर तपस्या करके गगा का स्वरूप देखा।

114 [illegible] तीर्थ म [illegible] न मुझपर प्रसन्न होकर कहा—हे गान्धारसेन ! मुझसे वर मागो।

115 मन कहा—हे माता आदिनारी ! मुझ पर दया करके अपनी विजयपाशा की सामग्री दो।

116 पाशे म कोई मुझे जीतने वाला नहीं होगा। प्रसन्नतापूर्वक मुझे माता ने पाशे की सामग्री दी।

117 विजय-पाशा सामग्री को लेकर [illegible] गगा ने कहा कि यह तुम्हारे पास तीन वर्ष तक रहेगा।

[illegible]

[illegible] राजाओं का मन पाशे मे [illegible]।

[illegible] पाशे के भय म [illegible] नहीं [illegible]।

[illegible]

[illegible]

124 गगा ने कहा—तुम जिस हाथ से पाशा [illegible] उस हाथ की [illegible] तुम्हारी मृत्यु के बाद [illegible] को प्राप्त होगा।

125 दाहिने हाथ की अगुली से दो पाशे की डण्डी और बाये हाथ की अगुली से पाशे की तीन गोटी बनाना।

126 तुम्हारे वश मे जो कोई भी जीवित रहेगा, उसको जीतने वाला तीनों भुवनों मे कोई नहीं रहेगा।

127 गगा की प्रसन्नता से वेदा ! कभी अन्यथा नहीं होगी। यह कहते-कहते गान्धारसेन ने प्राण त्याग दिये।

128 उसकी बात सुनकर कुमार शकुनि ने हाथ की अंगुलियों की हड्डी को यत्नपूर्वक रख लिया।

129 एक सौ छानवे लोगों ने प्राण त्याग किया। एकमात्र शकुनि ही जीवित रहा।

130 कुरुपति जो एक थाली भोजन देता था, अन्त मे उस मूर्ख ने कुछ भी नहीं दिया।

131 दीवाल में छिपाकर जो अन्न शकुनि ने रखा था, उसे प्रतिदिन खाकर प्राण की रक्षा करने लगा।

शकुनि का मन्त्रित्व-लाभ

[illegible] अगस्त्य के चरणों की पूजा की।

गान्धारसेन के वश को [illegible] करके कुरुपति ने [illegible]।

[illegible]

[illegible] कुछ दिन [illegible] पादुका धारण करके [illegible] पर पहुँचा।

[illegible] फल [illegible]।

10 [illegible]

11 विधाता की रचना से जब बीज वृक्ष बन जायगा, तो समुद्र की मात्रा तक जल बरसने मे भी उसका कुछ भी नहीं होगा।

12 वृक्ष की ओर देखकर मन ही मन विचार करके कुरुपति ने कहा कि यह कितना बड़ा वृक्ष है।

13 हे विधाता ! तुम्हारा प्रभुत्व धन्य है। कितने रूपों में

तुमने इतनी चीजो का निर्माण क्यों किया ?

14 वृक्षों का राजा जो स्थावर है, उसका बीज मेरे मूत्र की
धार मे बह गया।

15 नीचे और ऊपर वृक्ष को देखकर राजा कुरुपति मन ही मन विचार करके हँसा।

16 जब वह गान्धारीनन्दन हँसा, उसे देखकर दासी भी प्रसन्न मन से हँसी।

17 [illegible] पूछा कि [illegible] हँसी ?

18 [illegible]

19 दासी ने कहा– [illegible] मैं भी उसी कारण हँसने लगी।

20 राजा ने कहा कि [illegible]

21 [illegible]

22 राजा ने [illegible]

23 [illegible]

24 [illegible]

25 [illegible]

26 [illegible]

27-28 [illegible]

29 उस दिन [illegible] वन्दीशाला के पास पहुँची।

30 [illegible] भोजन जल्दी लो।

31 [illegible] तुमसे [illegible] नाक-कान काटेगा।

32 भीतर से शकुनि ने कहा–किस दोष के चलते राजा तुम्हारा नाश करेगा ?

33-35 दासी ने कहा, हे देव ! मैं कुछ नहीं जानती हूँ। नित्य-कर्म हेतु गान्धारी पुत्र वट-वृक्ष के नीचे उपस्थित हुआ। अपने मूत्र की धार को बहते हुए देखकर वह मन्द-मन्द हँसा। नीचे देखकर उसने आंखें मूंद लीं। ऊपर वृक्ष की ओर देखकर फिर हँसा।

36 राजा को हँसते देखकर मैं भी हँसने लगी। सुनकर राजा ने पूछा कि क्यों हँसी ?

37 हाथ जोड़कर मैंने कहा, मैं कुछ नहीं जानती हूँ। तुम जिस लिए हँसे, मैं उसी लिए हँसी।

38 राजा ने कहा, मेरे मन की बात कहो, नहीं तो मैं तुम्हें प्राण से मार डालूंगा।

39 इस प्रकार दण्डधारी ने मुझे आदेश दिया। [illegible] मार डालूंगा।

40 शकुनि ने कहा [illegible] चिन्ता मत करो। मैं [illegible] की अन्तर्गत बात कह सकूंगा।

41 मेरे [illegible] राजा [illegible] फल नहीं जानेगा।

42-43 जिस समय राजा तुमसे बात पूछेगा, उस समय तुम कहोगी कुरुकुल नाथ ! सुनो। जिस समय तुमने वट वृक्ष के नीचे मूत्र-त्याग किया, उस समय वट के बीज ऊपर आकर बहने लगे।

44 बीज और वृक्ष को देखकर विधाता की विधान सोचकर हे राजा ! तुम हँसने लगे।

45 शकुनि से इन तथ्य विचार को प्राप्त करके दासी प्रसन्न मन से राजा के सामने उपस्थित हुई।

46 सवेरे उठकर दण्डधारी ने दासी से पूछा। वह दासी भय मुक्त होकर कहती है।

47 हे दण्डधारी ! जब तुम वट वृक्ष के नीचे थे, उस समय मैं रत्न-कलसी में जल लेकर खड़ी थी।

48 तुम्हारे मूत्र मे वटबीज के बहने से वृक्ष की ओर नीचे देखकर हे कुरुनाथ ! तुम हँसे।

49 दासी ने जब अन्तर्गत बात कही, उसे सुनकर कुरुनाथ आश्चर्यचकित हुआ।

50. दासी की ओर देखकर क्षणभर मौन रहा और मन ही मन कुरुस्वामी ने सोचा।

51-53. सामान्य दासी की इतनी बुद्धि नहीं हो सकती। निश्चय ही किसी व्यक्ति ने इसे बताया जो भूत-भविष्य और वर्तमान सिद्ध है। दासी की ओर देखकर कुरुवीर ने कहा—यह तुम्हारा कौशल कदापि नहीं है। कहाँ किस पण्डित ने तुम्हें बताया ?

54. बहुत धन, रत्न और अलंकार तुझे दूँगा और तेरा जितना भी दोष है, उसे क्षमा कर दूँगा।

55-56. दासी ने कहा, हे कुरुनाथ ! तुमने जिसे पत्थर-घर में रखा है, जिसे मैं नित्य अन्न-जल देती हूँ; उसी ने तुम्हारे हृदय के विचार को बताया।

57. सुनकर राजा बहुत हर्षित हुआ। दासी को बहुत धन-रत्न से मण्डित किया।

58. सिंहासन पर बैठकर एकान्त में उसने सोचा कि यही मेरे शत्रु को कौशलपूर्वक मारने वाला है।

59. यह भूत, भविष्य और वर्तमान की कथा जानता है। यही मेरी सभा में मन्त्रित्व के योग्य है।

60-62. सभी सभाजन को साथ लेकर तेरह महीने के बाद कुरुपति वहाँ उपस्थित हुआ। मान चक्रवर्ती ने द्वार खुलवाया।

63. द्वार पर खड़ा होकर कुरुपति पुकारता है—कौन जीवित है ?

64. भोजन से खिन्न शकुनि ने क्रोध से कहा—बिना कारण हे नृपमणि ! तुमने मेरे वंश का नाश किया।

65. मेरे एक सौ छियानवे लोगों को हे नृपवर ! तुमने मारा। अकेली मेरी निर्लज्ज आत्मा ही बच गयी।

66. इनकी अवस्था को देखकर मैं क्यों नहीं मरा ? मेरे जीवन को धिक्कार है। मेरे मांस को गिद्ध खायें।

67. कर्म की निन्दा करते हुए शकुनि अत्यन्त दुखित होता है। उसके हृदय में व्याकुलता और राजा के प्रति क्रोध है।

68. दुर्योधन ने दुःशासन और दुर्जय को आज्ञा दी कि भीतर घुसकर उसे मेरे सामने ले आओ।

69. आज्ञानुसार दोनों वीर भीतर घुसे और शकुनि को गोद में लेकर आते हैं।

70. वह शकुनि अन्दर से बाहर आया। दुर्योधन ने कहा कि हे मामा ! तुम्हारा जीवन धन्य है।

71. कनक-रत्न कलश में जल भरकर सामने खड़ा होकर स्नान करवाया।

72. उसके बालों में अनेक सुगन्धित द्रव्य लगाकर सामने खड़ा होकर उसे स्नान करवाया।

73. अनेक कुसुमों से उसके बालों को सुसज्जित करके अष्ट रत्न निर्मित अलंकारों से शरीर को अलंकृत कराया।

74. स्वयं दुर्योधन ने शकुनि के शरीर में चन्दन, कस्तूरी और चतुस्सम का लेपन किया।

75. श्रीहस्त में पगड़ी देकर दुर्योधन ने कहा—हे मामा ! तुम इस पंचकटक में सार्वभौम महामन्त्री हुए।

76-77. हे मन्त्रिवर ! तुम्हारे पिता, सहोदर और बान्धव विनष्ट हुए। मात्र उन्हें ही मैं तुम्हें नहीं दे सकता किन्तु इन्द्रप्रस्थ, यमप्रस्थ, हस्तिनापुर, जयन्ता, बारुणा इन पाँच राज्यों को दे सकता हूँ।

78. तुम्हीं मेरे परिचालक राजा हो। इस पंचकटक में तुम्हारा आदेश मान्य होगा।

79. उसके दोनों पार्श्व में आलम्ब दण्ड-छत्र उठा हुआ है। सामने सोने से बँधे लाखों शंख बजते हैं।

80. दोनों ओर एक लाख चामर और व्यजन डुलाया जा रहा है। बायें और दायें दस लाख रथी परिवेष्टित हैं।

81. आगे पाँच लाख महामत्त गज और पीछे पाँच नियुत तेज घोड़े सुसज्जित हैं।

82. शकुनि को इस प्रकार ऐश्वर्यमण्डित करके दुर्योधन गान्धारी के पास ले गया।

83. संजय ने कहा कि हे गान्धारसेन-दुहिता ! शकुनि नामक तुम्हारा भाई जीवित है।

84. दुर्योधन ने शकुनि को बहु पुरुषार्थ विमण्डित किया। वह गान्धारसेन का पुत्र द्वितीय इन्द्र की तरह दिखाई देता है।

85. गान्धारी ने कहा कि सभी विनष्ट हो गये। तुम एक ही पापी ने जीवन की क्यों आशा की ?

86. मैं अब तुम्हारे दुष्ट स्वभाव को समझी। तुम दुर्योधन का वंश नाश करने के लिए ही अकेले बचे रहे।

87. हे कुरुराज देव ! मेरी बात सुनो। शकुनि की बात को हे बेटा ! सद्भावपूर्ण मत मानना।

88 महासती ने कहा कि तुमने जिसका वंशनाश किया, उसे ही मन्त्री बनाया। अब में दोनों कुल को नही पाऊँगी।

89. पितृकुल और स्वामीकुल दोनो अवश्य विनष्ट हो जायेगा। जहाँ पाप है, वहा अवश्य विनाश है।

90. गान्धारी ने यथार्थ बात कही लेकिन मूर्ख दुर्योधन ने उसे कान से नही सुना।

91 क्रोध से राजा ने गान्धारसेन को मारा। पाण्डव के प्रति क्रोध से वह सब कुछ भूल गया।

92 कर्ण, शकुनि, अश्वत्थामा और कृपाचार्य को एकान्त मे लेकर राजा सोच रहा है।

93 विदुर ने युधिष्ठिर से कहा—हे बेटा ! दुर्योधन तुम पर अत्यन्त क्रुद्ध है।

94 हे बेटा ! इस बात को तुम अच्छा प्रकार विचारो। कुरुमणि तुम्हें अनेक विपत्तियो मे डालने की चिन्ता करेगा।

95 तुम्हारे ऊपर होने वाले क्रोध से ही इसने गान्धारसेन के वंश का नाश किया। भागरथात शकुनि महामन्त्री हुआ है।

96 अवश्य वह तुम्हारा अनिष्ट मानेगा किन्तु तुम मामसेन का जिस किसी प्रकार से समादर करना।

97 युधिष्ठिर ने विदुर से पूछा कि दुर्योधन मुझ पर इतना क्रोध करता है क्या?

98 यद्यपि कुरुराज मेरे ऊपर विरक्त होगा किन्तु तुम मुझ पर सदय होकर रहना।

99 जब विदुर और युधिष्ठिर भी पक्ष मे रहा, तब दोनो लोक और ब्रह्माण्ड मे भी सम्मान प्राप्त करेगा

जातु गृह का निर्माण और भीम का विष लड्डू भक्षण

1-2 अगस्त्य कहते है—हे राजन मन ! धृतराष्ट्र का पुत्र वारुणावन्त में बैठकर कर्ण, शकुनि और अश्वत्थामा के साथ कूट-कोशल की चिन्ता करता है।

३ तुला मास कृष्ण पक्ष की द्वितीया तिथि को वन मे बैठकर मानवक्रमती सोचता है।

4-5 पुरोचन नामक एक ब्राह्मण वन मे अकेले रहता है। अष्ट वसु का एक वसु पाप योग से पूर्व अभिशाप हेतु वन-कन्दर-देश मे घूमता है।

6 पूर्व कर्म के अनुसार पर्वत पर बैठे हुए पुरोचन पण्डित के सामने दुर्योधन आदि जाकर उपस्थित हुए।

7 धार्मिक, विवेकी, वेदशास्त्र, निष्णात वह महान् ब्राह्मण वेद-अध्ययन करता है।

8 कर्ण ने पूछा—तुम कहाँ के पण्डित हो ? वनस्थली मे निर्भय होकर भ्रमण करते हो।

9 बाघ, भालू से तुम्हें क्या भय नही है ? इस घोर वन मे क्या अकेले घूमते हो ?

10 पुरोचन ने कहा—तुम लोग कहाँ के राजा हो ? तुम लोग हृतराज्य की तरह चिन्तित दिखाई देते हो।

11 कर्ण ने कहा कि हे द्विजवर ! तुम सुनो। ये पंचकटक के अधिपति दुर्योधन है।

12 इनका सबसे बडा कष्ट शत्रु का उपद्रव है। शत्रु के उपद्रव हेतु राजा अनेक दुःख पाता है।

13-14 हे विचक्षण, विवेकी और धार्मिक महात्मा ! उनके कितना बडा शत्रु है जिससे तुम्हें इतना भय है ? उसके कितने रथ, गज और पदाति है ? दुर्योधन ने उत्तर दिया मात्र पाच पुत्र और विधवा मा।

15 पुरोचन ने कहा कि इतने सामान्य शत्रु को आक्रमण करके नही मार पाये ?

16. दुर्योधन ने कहा कि वे युद्ध मे सबसे बलवान और पराक्रम मे सिंह के समान है। पराक्रम मे हम लोग उनके समकक्ष नही है।

17-18 पुरोचन ने कहा—मेरे पास, उनके विनाश का उपाय है। इस प्रकार के शत्रु से तुम्हें ऐसा डर है। मै जो कहूंगा, उसे करना।

19 उनके लिए तुम एक ही गाव देना। मुझे लाख, गाय का घी और पुआल जैसी ज्वलनशील वस्तुए देना।

20 मै कपट से जातुगृह का निर्माण करूंगा जो लाख, गाय के घी और पुआल से बना होगा।

21 पाण्डवो को उस घर में लाकर रखाओगे और रात मे सोते समय जला दूंगा।

22 जातुगृह मे पाँचो वीर मरेगे। तुम पंचकटक के एकान्त चक्रवर्ती राजा होगे।

23 कुरुपति सुनकर परम आनन्दित हुआ। ब्राह्मण को अत्यन्त प्रेमपूर्वक सम्मानित किया।

24 कहा कि यह वारुणावन्त कटक मेरे राज्य में है। तुम्हारी आज्ञा से हे द्विज मैंने इसे छोड़ा।

25 अनेक रत्न देकर उसे गौरवान्वित किया। उसे प्राण से भी अधिक प्यार दिया।

26 लाख, गाय का घी और पुआल को मिलाकर एक कूट कपट गृह बनाया।

27 ऊपर से विचित्र कलाकृतियों का निर्माण करके अष्ट रत्न मुक्ता लटकाया।

28 दिवाल, छत और द्वार को लाख, गाय के घी और पुआल से जोड़कर किया।

29 भीतर से मसान और ऊपर से विचित्र कलाकृतियों से पूर्ण मणिरत्न झलक रहे हैं और उनमें पताका लग रही है।

30 ब्राह्मण ने पांच मास में गृह-निर्माण करके ऊपर स्वर्ण कलश स्थापित किया।

31 धृतराष्ट्र ने युधिष्ठिर को बुलाकर कहा कि बेटा! हस्तिनापुर में तुम्हारा रहना उचित नहीं है।

32 हे बेटा! भीम और दुर्योधन का क्रोध बहुत अधिक हो चुका है। तुम यहां मत रहो नहीं तो संग्राम हो जायगा।

33 तुम लोगों को मैंने वारुणावन्त कटक दान दिया। तुम पांचों भाई सुख से उस राज्य का सुख भोग करो।

34 युधिष्ठिर ने कहा—हम लोग परम सुख से रह रहे हैं। शतशृंग पर्वत पर ही हमारा जन्म और विकास हुआ।

35 तुम्हारी यह आज्ञा हम पांचों भाई शिरोधार्य करते हैं। हे पिता! वारुणावन्त राज्य में हम निश्चिन्त रहेंगे।

36 धृतराष्ट्र की आज्ञा मानकर एक शुभ लग्न का विचार किया गया।

37 40 उस शुभ लग्न में युधिष्ठिर ने भीम, अर्जुन, नकुल, सहदेव और कुन्ती को लेकर वारुणावन्त के लिए प्रस्थान किया।

41 युधिष्ठिर वारुणावन्त नगर में प्रविष्ट हुए। जतु गृह के द्वार देश में पाँचो भाई उपस्थित हुए।

42 देखते हैं कि भवन अत्यन्त सुन्दर है उस पर स्वर्ण-कलश चमचमा रहा है।

43 चारों ओर विस्तृत पासाद में सात कक्ष का निर्माण किया गया है प्रचुर मणि माणिक्य से खचित है।

44 ऊपर सुवर्ण-पत्र का छाजन है। मर्कत, शुद्ध नीलकान्तमणि और गजदन्त सुशोभित है।

45 शिरोभाग पर पुंजीभूत माणिक्य प्रभातकालीन बाल-आदित्य के तेज को म्लान करता है।

46 शिरोभाग पर अष्ट रत्न-निर्मित शिल्प कला को देखकर भीम अत्यन्त उत्सुक हुआ।

47 48 भीमसेन से युधिष्ठिर ने कहा—हे भाई! तुम भीतर जाकर उसके स्वरूप का विचार करके आओ।

49 युधिष्ठिर की आज्ञा से भीम तत्क्षण जातुगृह के भीतर घुसा।

50 कनक पत्र में विविध प्रकार के रत्न जड़ित है। मानो लक्ष्मी इस समग्र में विराजमान हो।

51 भीमसेन ने कहा—हे स्वामी राजदेव! मानगोविन्द ने किस कारण हम लोगों पर इतनी दया की?

52 मैं इस भवन को देखकर आश्चर्यचकित हुआ। इस भूमण्डल पर ऐसा कभी नहीं देखा।

53 धृतराष्ट्र के पुत्रों के ऊपर मेरा क्रोध था किन्तु इस दिव्य भवन को देखकर सब भूल गया।

54 युधिष्ठिर ने कहा—वह मूढ़ प्राणी है। अच्छी बात वह कभी नहीं सुनता।

55 तब स्वयं प्रविष्ट हो तो पांचों वीर ने उसके सौन्दर्य का अनुभव किया।

56 चन्द्रशाला पर से मण्डप गृह है। इसके मध्य दक्षिण दिशा में नाना विविध रत्नखचित सिंहासन है।

57 सिंहासन निर्माण देखकर वे अत्यन्त प्रसन्न हुए और सोचते हैं कि यह साक्षात् अमरलोक के विश्वेश्वर का आगमन है।

58 ऊपर स्वर्ण-पत्र में अष्ट-रत्न मणि संचित है किन्तु भीतर लाख, गाय का घी और पुआल भरा है।

59 देखते हैं कि सुसज्जा अत्यन्त मूल्यवान है। कुबेर की अलकापुरी इसके समतुल्य नहीं है।

60 देव-भुवन की तरह प्रत्यक्ष निर्मल है। युधिष्ठिर देखकर परमानन्दित हुए।

61 62 युधिष्ठिर ने कहा—हम तो पाँच भाई और हमारी माँ

उपस्थित हैं। दुर्योधन ने ऐसा नगर निर्मित किया। किसके विचार से यह कैसा लगता है, बताओ ?

63. माँ ने कहा—बेटा ! बड़ा सुन्दर नगर है। दुर्योधन ने बड़े सद्भाव से इसका निर्माण किया।

64. उसके हृदय मे हम लोगो के प्रति पाप नहीं है। मानगोविन्द ने बडी श्रद्धा से इसका निर्माण किया।

65. भीमसेन ने कहा—यह अत्यन्त सुन्दरपुरी है। गजदण्ड धारी ने अत्यन्त प्रेम भाव से इसका निर्माण किया है।

66 अब मैंने दुर्योधन के निष्कलंक हृदय को पहचाना। कुरुनाथ ने सहोदर भाव का पोषण किया।

67 अर्जुन ने कहा—हे देव ! दुर्योधन अच्छा है। प्रीति-वर्तन के कारण वह हम लोगो के समतुल्य हो गया।

68 हे देव ! सहोदरपन और कैसे जाना जा सकता है, जबकि वह हृदय से भलाई चाहता है।

69 जो व्यक्ति अश्रद्धा को श्रद्धा मे परिणत करता है, उसे सज्जन पुरुषो मे गिना जा सकता है।

70 यदि कोई हमारे धन, प्राण और भार्या की सुरक्षा की भावना रखता हो तो सहोदरपन और कैसे जाना जा सकता है ?

71 नकुल ने कहा कि देव ! उसका हृदय निष्कलंक है। इसीलिए उसने हम लोगो को इसे प्रदान किया।

72 वह महाधार्मिक और विवेकी एवं सहृदय है। हम लोगो को सम्भालकर उसने धर्म का काम किया।

73 सहदेव ने कहा कि हे देव ! यह पुरी अत्यन्त सुसज्जित है। यह कैसा निर्मित, अत्यन्त विस्तृत एवं चित्रांकित है।

74 दुर्योधन की हमारे ऊपर ऐसी सहृदयता क्यों है ? हे देव ! मेरा हार्दिक अनुभव है कि इसमे कोई कपट का आवरण है।

75 युधिष्ठिर ने सहदेव को गोद मे लेकर कहा—हे भाई ! तुम्हारी कृपा से मै वास्तविक कारण जान सकता हूँ।

76. युधिष्ठिर ने सहदेव को एकान्त मे ले जाकर पूछा—हे सहदेव ! इसमे क्या कपट है। बताओ।

77 सहदेव ने कहा—हे धर्मराज ! यह पुरोचन नामक ब्राह्मण की योजना है।

78 लाख, गाय का घी और पुआल आदि ज्वलनशील पदार्थ भरकर इस घर का निर्माण किया गया है।

79. दिवाल, ठाट आदि लाख, गाय का घी और तेल-निमज्जित है।

80. सोते समय इसमे आग लगाने की कुरुनाथ ने योजना की है।

81. युधिष्ठिर मन ही मन धर्म-धर्म कहते हैं। हे भाई ! यह बात गोपनीय रखो जिससे भीम न जान सके।

82 जानने पर इसी क्षण वह द्वन्द्व-युद्ध करेगा और क्रोध से दुर्योधन के सौ भाइयों को मार डालेगा।

83. धृतराष्ट्र के सभी पुत्रों को मार डालेगा और अन्ध राजा अनाथ हो जायेगा।

84 हे बेटा ! उसने बिना समझे-बूझे कपट किया। यहाँ हम लोग कैसे धर्म का उल्लंघन कर सकेंगे ?

85 युधिष्ठिर की बात सुनकर सहदेव चुप हो गये। वारणावन्त मे सामाजिक बन्धन मे आबद्ध होकर रहने लगे।

86 चार विटप वन मे घुसकर खेलते और विहार करते है। खदेड़कर बराह, हिरन और कृष्ण सार मृग आदि वनचरो को मारते हैं।

87 कौतूहल से शिकार करके कूदते उछलते है। लगता है सिंह निर्भय होकर वन मे खेल रहा हो।

88 हिरण, कृष्णसार और गेंडा पशुओं को लेकर प्रात पखवारे धृतराष्ट्र के पास जाते है।

89 पुरोचन को बुलाकर दुर्योधन पूछता है पाण्डवो की मृत्यु का विधान है तो ?

90 पुरोचन ने कहा कि मैं गंगा-कूल का सर्वविद्या निपुण अर्थवेदी ब्राह्मण हूँ।

91 जिस किसी प्रकार मे तुम्हारे शत्रुओ का विनाश करूँगा। उसमे तुम्हारा कोई अधर्म नही है।

92 मै अब विष को संग्रह करने की व्यवस्था करूँगा। भीम को भावपूर्वक परोस कर खिलाऊगा।

93 दुर्योधन सुनकर हर्षित हुआ और कहा कि हे ब्राह्मण! शीघ्र ही व्यवस्था करो।

94 यथार्थ रूप मे पहले यह काम करो। बाद मे मै तुम्हारी मन्त्रणा से राज्य-संचालन करूँगा।

95-96. इसके बाद संजय, विदुर, भूरिश्रवा, भीष्म, कर्ण, अश्वत्थमा, शल्य, शकुनि और कृपाचार्य आदि को बैठाकर धृतराष्ट्र विचार कर रहा है कि अन्धा होने

के कारण मैं राज्य के लिए अयोग्य हूँ।

97 व्यास और दुर्वासा के आशीर्वाद से मैने दुर्दान्त क्षत्रिय पुत्रो को पाया है।

98 मैं एक पुत्र का राज्याभिषेक करना चाहता हूँ। आप लोग धर्मपूर्वक विचार करके मुझे बताइए।

99 इस पंच राज्य मे कौन महाराजा होने के योग्य है, आप लोग भय और सकोच को छोडकर इसका निर्णय करे।

100-101 सुनकर सभी योद्धा चुप हो गये। भूरिश्रवा ने कहा कि जब तुमने धर्म की दुहाई देकर दृढतापूर्वक पूछा तो हे राजा ! तुम पुन विचार करके हम पर क्रोध मत करना।

102 धृतराष्ट्र ने कहा कि कुछ भी क्रोध नही होगा। बहुत विचारपूर्वक जो भी निर्णय हो–उसे कहे।

103 आह ! सबसे बराबर ज्येष्ठ समदर्शी भूरिश्रवा कहते है कि मेरे विचार से युधिष्ठिर को राज्य देना उचित है।

104 जिसकी बात सभी मानते हो, उसे ही सुनिश्चित राज्यभार देना चाहिए।

105 हे कुरुनाथ ! जब मुझसे पूछ रहे हो तो मेरा विचार ऐसा ही है।

106 युधिष्ठिर के रहते दुर्योधन राजा नही हो सकता, क्योंकि समाज युधिष्ठिर का श्रद्धा करता है।

107 जो अल्प दोष मे ही अधिक प्रेम करता है, वह दुर्धार स्वरूप है। उसे कैसे राजा बनाया जा सकता है।

108 संकल्प और दर्प से यदि तुम दुर्योधन को राजा बनाते हो तो अनेक देशो को वह तोड देगा और जन-प्रजा भाग जायेगी।

109 ज्येष्ठ पुत्र के रहते कनिष्ठ पुत्र राजा नही होता। क्या वह युधिष्ठिर अयोग्य पुत्र है कि पिता होकर तुम उसे वंचित करोगे ?

110 युधिष्ठिर को राज्य देने मे साम्राज्य मे एकता स्थापित होगी। निर्द्वन्द्व होकर सहज रूप मे तुम्हारे दिन बीतेंगे।

111 हे धृतराष्ट्र ! तुम चाहो तो हमारे उपदेश को अस्वीकार कर सकते हो किन्तु वह स्वय अपनी योग्यता से राज-छत्र धारण कर सकता है।

112 एक ही राज मे दो शासक होने से अनेक द्वन्द्व होगा और दिन अच्छी तरह नहीं बीतेंगे।

113 तुम्हे जब भीष्म ने राजपद दिया, तब कालदमन ने बलपूर्वक तुम्हारा राज्य छीन लिया।

114 तुम भागकर शतशृग पर्वत पर छुक गये। कालदमन ने तुम्हारे पच प्रशस्थ राज्य पर अधिकार कर लिया।

115 उस समय पाण्डु तपस्या मे लीन थे। उस कालदमन ने उसी समय राज्य का सुख भोग किया।

116 पाण्डु का पन्द्रह वर्ष का तप समाप्त हुआ तो उसने ब्रह्मा को सन्तुष्ट करके अनेक विद्या अर्जित की।

117 कालदमन के साथ घोर युद्ध करके पाण्डु ने तेतीस दिन म उसे जीत लिया।

118 चौबीस अक्षौहिणी कालदमन की सेना पाण्डु के शरावात से मुण्ड-रहित हुई।

119 जो पाच पीढियो से राज्य करता चला आ रहा था, पाण्डु के प्रतिघात से उसका वश नाश हुआ।

120 तुमको हस्तिनापुर मे सम्पूर्ण सम्पत्ति देकर सिंहासनासीन किया। स्वय वन मे चला गया।

121 यह पच राज्य पाण्डु का अर्जन है। उसके पुत्र को यह राज्य दिया जाना चाहिए।

122 हे राजा ! तुम अभी इस बात को गोपनीय रख सकते हो, किन्तु वे तो सब कुछ जानते है।

123 युधिष्ठिर के रहते तुम्हारे पुत्र को राज्य का भार प्राप्त नही हो सकता। लेकिन तुम चाहो तो धर्म की बात करके युधिष्ठिर को नियन्त्रित कर सकते हो।

124 विदुर ने कहा कि हो सकेगा तो युधिष्ठिर शान्त हो जायेगा किन्तु भीम और अर्जुन कैसे तृप्त होगे ?

125-126 शकुनि ने कहा कि मेरी राय है कि यदि पाण्डु के पाँचो पुत्रो को दुर्योधन मारकर समाप्त कर देगा तभी वह इस राज्य का राजा होकर सुखपूर्वक राज्य और जन-प्रजा का भोग कर सकता है।

127 धर्म ! धर्म ! कहते हुए सभी सभा से उठ गये।

दुर्योधन सबको मारने का उपाय करता है।

128. कर्ण, दुःशासन आदि सौ भाइयों के साथ दुर्योधन शकुनि और पुरोचन को लेकर कपट आचरण करता है।

129. सभी विचार करके विष-लड्डू की व्यवस्था करते हैं। असत्य को अपनाकर धर्म का त्याग किया।

130. राजा धृतराष्ट्र मन में सोचते हैं कि अब क्या उपाय किया जाय ?

131-132. इसके बाद पंचवीर पाण्डु-पुत्र मृगया-विनोद के लिए घूमते हैं। घोर वन में एक गैंडे को मारने पर युधिष्ठिर ने भीम

133 से कहा कि अपूर्व पदार्थ है, इसे हस्तिनापुर ले जाकर राजा धृतराष्ट्र को दे आओ।

134 युधिष्ठिर की बात सुनकर पवनसुत गैंडे को लेकर हस्तिनापुर आये।

135. इस समय क्षत्रिय महात्मा धृतराष्ट्र संजय, विदुर, कृपाचार्य और अश्वत्थामा के साथ विचार-विमर्श कर रहे है।

136. धृतराष्ट्र ने कहा—आप लोग क्यो प्रतिरोध करते है? त्रेता युग मे दशरथ ने कैसे किया ?

137 श्रीरामचन्द्र ज्येष्ठ पुत्र थे, किन्तु उन्हें छोडकर भरत को राज्य दिया।

138 विदुर ने कहा कि खल-वचन से उन्होंने ऐसा किया। भरत राजा भी नहीं हुए और स्वयं विनाश प्राप्त हुए।

139 विदुर ने कहा कि तुम इस प्रकार न सोचो। मन्दबुद्धि से तुम पुत्रों के बीच विभेद-सृष्टि कर रहे हो।

140 स्वय कष्ट से मरोगे और वंश का नाश होगा। हे भाई! तुम्हारी बुद्धि से ऐसा ही होगा।

141. जब इस प्रकार की बात चल रही थी, उसी समय भीमसेन ने एक गैंडा लेकर प्रवेश किया।

142 विदुर ने कहा—हे भाई ! क्यों ध्यान नही देते हो? भीमसेन एक गैंडा लेकर आपके दर्शन करने आया है।

143 वे कहते हैं—ये पुत्र तुम्हारी इतनी भक्ति करते हैं, फिर भी तुम इनके प्रति मन में पाप का भाव कैसे लाते हो ?

144. जो भक्त लोगों के प्रति पाप भाव रखते हैं, वे सर्वदा पाप में डूबकर स्वयं विनष्ट होते हैं।

145 जब यह बात झूठी हो जायेगी तो लोग इस संसार मे कैसे बचेंगे ?

146 पूर्व जन्म के पाप से तो अन्धे हुए। पुनः इस जन्म मे दूसरों के अनिष्ट की चिन्ता करते हो।

147. ऐसा पाप कर्म करने से ऊपर तुम्हारी सद्गति नही होगी। यमराज का दण्ड तुम्हारे लिए नरक ही है।

148. विदुर की बात सुनकर धृतराष्ट्र सिर धुनते हुए उठा। एक तलवार लेकर विदुर को काटने के लिए टूट पड़ा।

149 अश्वत्थामा और कृपाचार्य ने गोद मे पकड लिया। हे राजा ! रुको-रुको। इतना क्रोध क्यो करते हो ?

150 विदुर उठकर अपने स्थान पर गये। कहा कि तुम्हारे मन्द ज्ञान ने वंश का नाश किया।

151 धृतराष्ट्र ने भीमसेन को गोद मे लेकर उसका मुख चुम्बन करके कहा—

152 हे पुत्र ! तुम जाकर युधिष्ठिर से कहो कि विदुर भाइयों के बीच मे विभेद-सृष्टि करता है।

153 उसकी बात पर कोई विश्वास न करना। क्षार-क्षार करके सबका विनाश करेगा।

154. दुर्योधन को बुलाकर धृतराष्ट्र ने कहा कि भीमसेन को लेकर सभी भाई भोजन करो।

155 पिता की आज्ञा से दुर्योधन भीम को गोद में लेकर तालाब में घुसा और शीघ्र ही स्नान समाप्त किया।

156 थाली लगाकर पुरोचन ने बुलाया। दुर्योधन भीम के पास बैठा।

157. पवन-नन्दन को बीच मे बैठाकर उसके दायें दुर्योधन और बायें दुःशासन बैठा।

158 रत्न-घड़े में सुवासित जल दिया। सामने सोने की थाली रख दी।

159 विप्र सुवर्ण पात्र लेकर भोजन परसता है। वह अज्ञानी विप्र इस समय भीम के अनिष्ट की चिन्ता करता है।

160 भीमसेन सब भोजन में अतृप्त रहता है। यहाँ वह आत्म-विस्मृत होकर भोजन करता रहा।

161 धतूर, गाँजा और शर्करा मछली में मिलाकर यत्नपूर्वक भोजन पकाया गया।

162 ऊपर जो अच्छा था उसे दुर्योधन को दिया। नीचे के विषयुक्त भोजन को भीमसेन को दिया।

163 उसे मधुर स्वाद से भीमसेन खाता है। जायफल का विष मिलाकर शर्बत दिया।

164 दुर्योधन ने कहा कि मुझे प्यास नही है। यह कहकर भीमसेन की ओर बढा दिया।

165 वह पाण्डव-पुत्र आराम से पीने लगा। मधुर आहार के साथ विष दुगुना चढ गया।

166 विष मिले खाये को एक पात्र मे भरकर भीमसेन को दिया।

167 खाँड और शर्करा से मिश्रित उसे भीमसेन आनन्द पूर्वक खाने लगा।

168 इसके बाद अन्त मे दस हजार लड्डू भोजन के चाव को बढाने के लिए परसे गये।

169 अपूर्व स्वादिष्ट लड्डुओं को देखकर वह एक-एक करके खाने लगा।

170 गाजे का फल, धतूरे का फल और सिघाडे के जाति का विष मिलाकर फलरस बना दिया गया।

171 काल सर्प के विष से युक्त लड्डू खाने से वृकोदर मरने लगा।

172 विष के लगने से वह अचेत हो गया। मधुर रस के प्रभाव मे वह विष सारे शरीर मे व्याप्त हो गया।

173 खाते-खाते भीमसेन लुढक गया। वही लेटकर वह अचेत हो गया।

174 समस्त अग अचल हो गया और श्वास-वायु ने अवरुद्ध होकर इस पचभूत शरीर को छोड दिया।

175 पश्चिम दिशा मे सूर्यास्त हुआ और इसके बाद क्रमश अर्द्ध रात्रि हो गयी।

176 इस समय दु शासन, दुर्जय, दुर्विन्द और दुराष्ट्र ने भीम को पकडकर नदी के घाट पर डाल दिया।

77 178 यमुना नदी मे नागिनियाँ रहती थी। इस जल मे नागिनियाँ इसे खा जाये—कहकर भीमसेन को बाधकर उन लोगो ने जल मे फेक दिया। कुरुवीरो की आपदा आज से समाप्त हो जाये।

179 इस प्रकार भीम को फेंककर चारो भाई आये। कुरुपति भीम के विनाश से सन्तुष्ट हुआ।

180 अगस्त्य कहते हैं,—हे वैवस्वत मनु ! धर्म रहने मनुष्य के पास पाप नही आता।

181 अनन्त नाग की कन्या बेलाबाली एक पद्म नागिनियों को लेकर जल-क्रीडा कर रही थी।

182 शिशिर ऋतु मे पद्म खिला था। इस समय नागिनयों को लेकर वह क्रीडारत हुई।

183 नागिन ने कहा कि यह तो बड़ा अपूर्व पदार्थ है। शिशिर काल मे वसन्त का पल्लवन हुआ।

184 कल तो इस जल मे कुछ भी नही था। आज अद्भुत रूप मे कमल विकसित हुए है।

185 देखती है कि एक अपूर्व पदार्थ बह रहा है। पास जाकर देखा कि एक सुन्दर व्यक्ति का शव पडा हुआ है।

186 उसका शरीर अत्यन्त सुन्दर और सुकुमार है। रात्रि काल मे वह शरद-चन्द्रमा की तरह दिखाई देता है।

187 देखकर बेलाबाली ने उसे गोद मे उठा लिया और कहा कि यह पुरुष मेरे हृदय का इच्छित है।

188 गोद मे लेकर सुन्दरी जल मे डुबाकर पाताल लोक में ले गयी।

189 अनन्त नागराज के सामने उपस्थित किया। उसने सोचा कि दिग्पाल के आत्मज की तरह यह कौन है ?

190 अमृत रस लाकर वृकोदर के मुँह मे डाल दिया। नौ हजार नाग के बल के समान भीम का बल हो गया।

191 स्वस्थ होकर भीमसेन चारो ओर देखता है। देखता है कि परिमित जल लोक है।

192 चारो ओर देखकर वह सोचता है कि मै अन्धकार जल पुरी मे आ पडा हूँ।

193 मुझे यहाँ कौन कपट करके ले आया ? अगाध जल-लोक से मै किस राह जाऊँगा ?

194 यहाँ से जाने का कोई पथ नही है। इस अन्धकार जलपुरी मे इन नागिनियो को मारकर ही मै जा सकता हू।

195 फिर सोचता है कि इनके साथ सद्भाव रखने मे मेरी प्रीति बढेगी और इसी मे मेरी सद्गति होगी।

196 भीमसेन ने कहा कि हे नागिन ! मै मनुष्य हूँ। मुझे यहाँ कौन ले आया ?

197-198 भीमसेन की बात सुनकर अनन्त की दुलारी बेलाबाली ने उसे गोद मे लेकर कहा—हम जल-लोकवासी अनन्त नाग की कन्या सन्ध्याबाली, बेलाबाली, विन्ध्याबाली और उदासी है।

199 ये चार कन्याएँ हम अत्यन्त दुलारी है और चार सौ योजन व्यापी यमुना के गम्भीर जल मे क्रीडा करती है।

200 क्रीडा रग के समय हम लोग तुमसे मिले। तुम एक शव होकर ऊपर ऊभचुभ कर रहे थे।

201 दुर्योधन ने कूट-कपट करके तुम्हे विप-लड्डू भाजन के समय खिलाया।

202 लोभ के वशीभूत होकर तुम उन्हे खाकर अचेत हुए। कुरुवीरो ने तुम्हे अगाध जल मे फेक दिया।

203 क्रीडा रग के समय हम लोग तुमसे मिली। पाताल लोक मे अनन्त नागराज के सामने तुम्हे लाई।

204 हमारे पिता ने अमृत पिलाकर तुम्हे जिलाया। अब तुम हमे मारने की चिन्ता करते हो ?

205 दूसरे का उपकार करने से क्या अपना नाश किया जाता है ? नीच लोगो का उपकार करना उचित नही है।

206 नागिन की बात से भीमसेन परम शान्त हुआ। क्रोध छोड़कर प्रेम बढाया।

207 अनन्त भीमसेन के पास आए। पवन-नन्दन को देखकर उनका मन आनन्दित हुआ।

208 हे बेटा ! तुम साक्षात् महाबली हो। मै अपनी कन्या बेलाबाली को तुम्हे प्रदान करूगा।

209 भीमसेन ने कहा कि तुम्हारा जो विचार है, मै क्या उसको अस्वीकार कर सकता हूँ ?

210 बिना माँगी दी हुई कन्या और अन्न की उपेक्षा करने से धर्म का नाश होता है।

211 अमृत योग मे नागराज ने स्वीकार करके बेलाबाली कन्या भीमसेन को प्रदान की।

212 अनन्त नाग राजा ने कन्यादान के बाद उत्सवपूर्वक भीमसेन की पूजा की।

213 नागिन पुरुष वशीकरण विद्या जानती थी। उसके प्रेम मे भीमसेन वशीभूत हुआ।

214 अन्नत ने कहा कि मै और अपूर्व चीज क्या दूँगा ? दहेज में अमृत-कुम्भ दिया।

215 भीमसेन सोचता है—इसको कहाँ रखूँगा ? इसको पी लूँगा जिससे मेरा शरीर तृप्त होगा।

216 नौ साँस में नौ कुण्ड अमृत पी लिया। इसमे उसका बल नौ हजार नागों के बराबर हो गया।

217 एक तो पवन-सुत महाबली था, दूसरे अमृत पीकर अकूत बलशाली हुआ।

218 पाताल मे नागिन के साथ रग-रस में लीन होकर वीर रहने लगा। सुरति के मोहपाश से भाइयो को भूल गया।

219-220 युधिष्ठिर अर्जुन को बुलाकर पूछते है कि भीम गेंदा लेकर हस्तिनापुर गया। आज नौ दिन हो गये किन्तु वह नही लौटा। उसने हमे हम लोगो को छोड दिया।

221 कुन्ती ने कहा कि वह दुर्योधन का सग पाकर खेल- कूद मे लिप्त होकर वहा रह गया।

222 कुन्ती की बात के बाद भी छ दिन बीत गये। सोलहवे दिन तक कोई खबर नही मिली।

223 भीमसेन को खोजते हुए युधिष्ठिर और अर्जुन हस्तिनापुर मे प्रविष्ट हुए।

224 धृतराष्ट्र के चरणो मे प्रणाम करके पूछा कि हे स्वामी ! भीम जो आया था, वह कहा है ?

225 धृतराष्ट्र ने कहा कि वह जिस दिन यहाँ आया, गेडा देकर बिना भोजन किये यहा से चला गया।

226 वह यहा नही रहा। तत्क्षण चला गया। यह सुनकर धर्मसुत आश्चर्यचकित हुए।

227 वे दुर्योधन, दु शासन, शकुनि, कृपाचार्य और कर्ण से एक-एक करके पूछते है कि भीम को देखा है?

228 सभी ने कहा कि हमने तो नही देखा। वे पचकटक मे महादु खी होकर खोजने लगे।

229 कुन्ती के आगे चारों भाइयो ने कहा कि भीम को खोजकर पचकटक मे नही पा सके।

230 इस प्रकार पाण्डव व्याकुल हो रहे हैं। सबके नेत्रो से आँसू बह रहे है।

231 अगस्त्य कहते है—हे वैवस्वत मनु ! धृतराष्ट्र की कुबुद्धि से पाण्डवों को विपत्ति मिली।

232. सुनकर कुन्ती दुःखी हुई। हम लोगो को छोड़कर

हमारे दुःख का साथी कहाँ गया ?

233. युधिष्ठिर ने कहा—हे माता ! तुम विषण्ण न हो। भीमसेन को यदि न पायेंगे तो जीवन दान कर देंगे।

234. कुन्ती ने कहा—वन, पर्वत और कन्दराओं तथा देशों में खोजो। एक साथ खोजो, जिससे राक्षस कुछ न कर सके।

पाण्डवासुर-वध

1. अहो ! अन्धक वंश में पण्डुवती के गर्भ से व्रज राक्षस वीर पाण्डवासुर का जन्म हुआ।
2. अन्धक के पुत्र महावीर पाण्डवा ने हस्तिनापुर पर आक्रमण करने के लिए प्रयाण किया।
3. उस असुर के साथ सेना नहीं है किन्तु वह संग्राम में ब्रह्मा और रुद्र को भी जीत सकता है।
4. बायें हाथ में शूल और दाहिने हाथ में कृपाण लेकर वह सकल भुवन को जीत सकता है।
5. वह महाबली दानव संग्राम में निर्भय है। उसने जाँघ का रक्त दान करके भद्रकाली को प्रसन्न किया।
6. प्रसन्न होकर उस महादेवी ने उसे वरदान दिया। भगवती के वरदान से वह दानव त्रिकालजीवी हुआ।
7. उस पाण्डवासुर ने हस्तिनापुर की ओर युद्ध-यात्रा की। उसके शरीर में शस्त्र नहीं घुसता। वह वज्र कवच से युक्त था।
8. रास्ते में जितने जीव-जन्तु देखता उन्हें खाकर भी उसकी भूख नहीं मिटती।
9. हस्तिनापुर में उसने अनेक उपद्रव किये। यह वार्ता सुनकर धृतराष्ट्र के कुमार दौड़े।
10. रैवतक अखाड़े में सभी बलराम के साथ थे। निदाघ वन में पाण्डवासुर को देखे।
11. कर्ण ने कहा—कि यह तो राक्षस शत्रु है। तपोवन-भग्न करके वह ऋषियों का विनाश करेगा।
12. दुर्योधन ने कहा, इसको घेरकर पकड़ो। इस तपोवन-द्रोही निशाचर को मारेंगे।
13. इतना विचार करके क्रोध से उसे घेर लिया। नरजन्तु देखकर वह राक्षस उन्मुक्त हुआ।
14. कुरुवर ने गदा और मूसल को घुमाकर प्रहार किया। असुर के शरीर पर लगकर वह गदावर धूल हो गया।
15. गदावर के टूटने से वे दुःखी हुए। सभी कुरुवीर निराश होकर संकुचित हो गये।
16. देखकर पाण्डवासुर अत्यन्त क्रुद्ध हुआ। उसने वज्र मूसल से प्रहार किया।
17. कर्ण, दुर्योधन, दुःशासन, दुर्जय, अश्वत्थामा आदि असुर के शस्त्राघात से गिर पड़े।
18. स्तब्ध होकर व्याकुल कुरुवीर भागने लगे। सबको दौड़ाकर उसने वज्रमूसल से प्रहार किया।
19. उस असुर ने गान्धारी के सौ पुत्र और कर्ण, अश्वत्थामा आदि को मारा।
20. सबके केशों को उसने एक साथ पकड़ लिया और दोनों भुजाओं में उठाकर वारुणावन्त पर्वत पर ले आया।
21. कहा कि देव ने मुझे अच्छा भोजन दिया। इस पर्वत पर बैठकर खाऊँगा।
22. भीमसेन को न देखकर खीजते हुए युधिष्ठिर सहित चारों भाई इसी वारुणावन्त में पहुँचे।
23. वह राक्षस पर्वत पर मृतपिण्डों को रखकर नदी में स्नान के लिये उतरा।
24. युधिष्ठिर ने धृतराष्ट्र के पुत्रों को देखा। युधिष्ठिर देव भय से चिन्तित हुए।
25. वे धर्मसुत भीम को याद कर रहे हैं। हे भाई ! अनाथ के नाथ तुम कहाँ छिपे हो ?
26. हे भाई ! किस राक्षस ने मेरे भाइयों का नाश किया। इतना दुःख पाकर क्या हम लोग जी सकते हैं ?
27. महादुःख से जब युधिष्ठिर ने स्मरण किया, तब पाताल लोक में भीम का आसन काँप गया।
28. वृकोदर कहता है कि हे बेलाबाली ! मुझे न देखकर मेरे भाई व्याकुल हैं।
29. मेरी माता जातगुरु हैं और हे प्राणसंगिनी ! तुम मेरी आत्मागुरु हो।
30. भाइयों और माता का मैं जाकर दर्शन करूँगा और शीघ्र तुम्हारे पास लौट आऊँगा।
31. बेलाबाली ने कहा—प्राणनाथ ! तुम अपने भाइयों को क्या नहीं देखोगे ?
32. तुम्हारा वीर्य मेरे उदर में पड़ा है। मेरा उदर धीरे-धीरे

भारी हो रहा है।

33. हे स्वामी ! तुम इस बात को मत भूलना। पीछे फिर न कहना कि तुम असती हो।

34. भीमसेन ने कहा कि अवश्य पुत्र होगा। उसका नाम तुम बली बेलाल रखना।

35 मै महाबली हूँ और तुम बलाबाली हो। हे नागकन्या ! हम दोनों का नाम मिलाकर उसका नाम रखना।

36 नागिनी को समझाकर वृकोदर चल दिया। नागिन की माया से इस प्रकार बाहर हुआ।

37 स्नान करके पाण्डवासुर मृत पिण्डो के पास आ रहा है।

38 युधिष्ठिर, अर्जुन, नकुल और सहदेव चारो भाइयो ने आगे बढकर असुर को रोका।

39 देखकर दानव एक मूसल घुमाता हुआ पर्वत के ऊपर दौडता हुआ आ रहा है।

40 यह देखकर अर्जुन ने हावोडा नामक शर सन्धान किया। तेजी मे वह दानव के ऊपर पडा।

41 हावोडा शराघात से उसका शरीर क्षत-विक्षत हुआ। प्रबल धारा से रुधिर वर्षण होने लगा।

42 पुन वह दुर्दान्त असुर ने उठकर प्रचण्ड क्रोध से अर्जुन को शूल से पीटा।

43 फिर अर्जुन के ऊपर वज्र मुद्गर से प्रहार किया। दो शस्त्रो के आघात से मुरपुर काप उठा।

44 ऐसे महासंग्राम चलने के समय भीमसेन हठात् प्रविष्ट हुआ।

45 उसे देखकर युधिष्ठिर परम आनन्दित हुए। कहा—हे भाई ! धृतराष्ट्र के पुत्रो की यह दुर्दशा देखो।

46 हे भाई ! रथतक पवन पर आते हुए कौरवो को पाण्डवासुर ने मारा।

47 आहार करने जाते हुए असुर से हम लोगो की मुठभेड हुई। अनेक युद्ध करके उसे जीत न सके।

48 भीमसेन ने कहा कि हे देव ! इस बात को और नही बढाओ। तुम जल्दी से छोड दो। कौरवो को असुर खा ले।

49 अपने शत्रु को दूसरा ही मारता है। यह तो हमारा परम हितकर कार्य है।

50 एक गेडा लेकर हे देव ! जिस दिन मै गया था उस दिन दुर्योधन और दुःशासन ने मुझे भोजन के लिए बैठाया।

51 महारस पाक मे कपटपूर्वक विष मिलाकर मुझे परसा।

52. विष खाकर जब मै ढुलक गया, तब नागिन मुझे खा जाय—सोचकर अगाध जल मे मुझे बहा दिया।

53 हे स्वामी ! अनन्तनाग की कन्या बेलाबाली नागिनियो को लेकर केलिक्रीडा के समय मुझे देखकर पाताल भुवन को ले गयी। अमृत देकर मुझे ठीक उसी समय पर जिला दिया।

54 अनन्त राजा ने अपनी कुमारी का विवाह मुझसे किया। नागकुमारी ने मेरी बहुत भक्ति की।

56 तुमने जब स्मरण किया, तब मेरा आसन कॉप गया। नागिन के महामन्त्र से मै एक सास मे यहा आ पहुँचा।

57 हे देव ! हम लोगो को तो इन शत्रुओं का विनाश करना ही था। ईश्वर ने स्वय इनका नाश किया। हे राजा इनका शोक छोड दो।

58 हे देव ! कौरवो को छोड दो जिससे पाण्डवासुर खा ले। चिरकाल के लिए हमारा कण्टक दूर हो जाय।

59 दुर्योधन यहा से प्राण पाकर जायेगा, तब हम लोग अनेक दुःख पायेगे। हमारा राज्य प्राप्त नही होगा।

60 युधिष्ठिर ने कहा कि हे भाई ! दुर्योधन पर क्रोध न करो। देव ने उसे उसके अनुरूप दण्ड दिया।

61 हम लोगो के प्रति जिसने अपने मन मे पाप की भावना रखी, हे भाई प्रत्यक्ष देखो उसका फल उसे तत्क्षण मिला।

62 हे भाई ! जो प्राणी अपकारी और परहिंसक होता है। उसको स्वय दण्ड न देने से भी ईश्वर उसे दण्ड देता है।

63 चारो युग मे धर्म से ही प्राणी का विकास होता है। धर्म ही सचराचर का पालन करता है।

64 धर्म रहने पर प्राणी का अनिष्ट नही होता। आपत्ति-विपत्ति में धर्म ही प्राणी की रक्षा करता है।

65 हे भाई ! इस अनित्य ससार मे कोई किसी का नही होता। यह ससार पानी के बुदबुदे की तरह नष्ट हो जाता है।

66 हे मेरे भीम ! तुम अधर्मी मत होओ। मृतपिण्ड

जिलाने से तुम्हारा धर्म उदित होगा।

67 अधर्मी लोगों के प्रति हमें धर्माचरण करना चाहिए। वे अपने पाप से विनष्ट हो जायेंगे और हम लोग धर्म से उत्तीर्ण होंगे।

68 हे भाई! धृतराष्ट्र के पुत्र हमारे भाई है। इनका उद्धार करो। तीन लोक मे हमारा धर्म बढेगा।

69 हे भाई! तुम मुझे अपनी विपत्ति दे दो। दुर्योधन के प्रति क्रोध का त्याग करके तुम असुर का वध करो।

70 हम लोगो को देखते-देखते जब दुर्योधन का नाश होगा तो हमारे अन्ध राजा अनाथ हो जायगे।

71 हे भाई! जब कौरव इस घटना से मरेंगे तो मै क्या दुर्योधन के बिना जी सकता हूँ?

72 युधिष्ठिर के मुह से कठोर वचन सुनकर वीर सिर धुनकर असुर के ऊपर टूट पड़ा।

73 वृकोदर को देखकर पाण्डवासुर ने जल्दी से उसके बाये अग को मूसल से पीटा।

74 वज्र मूसल लगकर चूर हो गया। असिवर लेकर असुर फिर दौड़ा।

75 खड्ग प्रहार के समय मारुति दौड़ा और तत्क्षण असुर के हाथ से खड्ग छीन लिया।

76 उस तलवार को ऊपर उठाकर भीम ने असुर के ऊपर प्रहार किया। उससे असुर का दाहिना हाथ कट गया।

77 पुन दूसरे प्रहार से असुर का बाया हाथ कट गया।

78 फिर एक बार क्रोधित होकर प्रहार किया। इससे तालु से पद तक दो टुकड हो गये।

79 पहले भद्रकाली ने उसको वरदान दिया था कि तुम्हारे शरीर को वज्र शल्य और खड्ग नही काट सकते।

80 उसके हाथ मे एक खड्ग और एक शूल देकर कहा कि इन दोनो के हाथ मे रहते तीनो लोक मे तुम्हे जीतने वाला कोई नही हो सकता।

81 तुम्हारा ही शस्त्र छोडकर यदि कोई तुम्हे मारेगा, तभी तुम्हारे शरीर का पतन होगा।

82 भद्रकाली की बात अन्यथा नही हुई। अपनी ही तलवार से वह राक्षस स्वय मारा गया।

83-87 हे सुरवर सुन्दर श्रीराम! तुम्हे नमस्कार हो। तुम इच्छाकुर, वश मण्डन, गुणधाम, रघुनाथ, अम्लान, सूर्यवशी, कौणप-बल-ध्वसी, कोदण्ड दीक्षा गुरु, रावण-दर्पहारी, वारानिधि बन्धकारी, हरिवत्स प्राणबन्धु, अधारण-पुरुष उद्धारण, पवित्र पूर्णेन्दु! तुम्हारी कृपा से हे नाथ! स्थावर, जगम, कीट-पतग आदि सभी का व्रत सिद्ध होता है।

88-91 कौशिक की प्रसन्नता के लिए ताडका का वध करने वाले, जनक ऋषि के घर शिव-धनुष तोडने वाले, अभय भुवन बैकुण्ठपुर वासी, अपने बाण से असुर दर्प को ध्वस करने वाले, अनन्त दुर्गम जल मे राह बनाने वाले, अहल्या के दुख को दूर करके स्वर्ग दिलाने वाले, हे श्री भगवान सूर्यवशी नारायण! मै तुम्हारा चरणाश्रित हूँ। मेरा उद्धार करो।

92 जब मै श्री राम को दोनो आखो से देख सकता तो मै सारे जीवन भर स्नान और भोजन का त्याग कर देता।

93 हे अभय पादपद्म की पाषाण रेखा! इस ससार के अन्ध-पटल से मुझे मुक्ति का रास्ता दिखाओ।

94 जिसको न मैने आख से देखा और न कान से सुना, उसे मै ज्ञान की साधना से शब्द ब्रह्म के पीछे दौड रहा हूँ।

95 हे श्री जानकीवल्लभ! अपने चरणो के दास शूद्र मुनि सारलादास को बैकुण्ठ मे वास दो।

जातु-गृह—दाह की मन्त्रणा

1 अगस्त्य कहते है कि हे युगपति! सुनो। इस महाभारत का अमृतरस इच्छानुसार मन को तृप्ति देने वाला है।

2 पाण्डवासुर का जब पाण्डवो ने वध किया तभी से वे पॉचो पाण्डव नाम को वहन किये।

3 धातुवाद पुरुष शून्य देव ने कहा—आज से तुम लोगो का नाम पचपाण्डव हो।

4 अचेत होकर जो कुरुवीर पडे थे, अर्जुन के जीवन न्यास शर से उन्हे जीवन प्राप्त हुआ।

5 भीमसेन ने कहा कि तुम लोगो ने अहंकार-प्रदर्शन किया। मुझे कपटतापूर्वक विष के लड्डू खिलाये।

6 तुम्हारे लिए हम लोगो ने पाण्डवासुर का विनाश

किया। इसीलिए स्वर्गवासियों ने हम लोगों का नाम पाण्डव रखा।

7. कुरुवीर अपमानित होकर चलते हैं। इस प्रकार हस्तिनापुर पहुँचे।

8. संजय ने कहा—हे अम्बिकासुत ! अपने पुत्रों का विपरीत समाचार सुनो।

9. बलराम के पास जाते हुए तुम्हारे पुत्रों को पाण्डवासुर ने वन में देखा।

10-11 महान चीत्कारपूर्वक संग्राम करके सबको मार डाला। आग में जलाकर खा डालने की इच्छा करने के समय पाण्डु के पुत्र वहाँ पहुँचे। भीम ने असुर को मारने के लिए दृढ प्रतिज्ञा की।

12 असुर को मारकर जब अपनी प्रतिज्ञा को सफल किया तब आकाश में पचपाण्डव की आवाज गूँजी।

13 संजय के कहने के समय दुर्योधन प्रविष्ट हुआ। कर्ण ने धृतराष्ट्र के सामने सारी बातें कह सुनाई।

14 शकुनि ने कहा—हे कुरुपति ! विष के लड्डू खाकर भी भीम ने पचा लिए।

15 हे कुरुपति ! निश्चय ही तुम्हारे वंश का नाश होगा। पाण्डवों के रहते तुम्हारे पुत्रों का जीवन नहीं रहेगा।

16 वह अम्बिका पुत्र सुनकर विषादग्रस्त हुआ। और कहा कि अगाध समुद्र में मेरा बेटा डूब गया।

17 शकुनि ने कहा कि हे राजेश्वर ! जिससे पाण्डवों का नाश हो वही उपाय करो।

18 पाण्डव वारुणावन्त प्रस्थ में हैं और यहाँ कुरुनाथ ऐसा विचार कर रहा है।

19 युधिष्ठिर ने एकान्त में वासुदेव का स्मरण किया। उनके स्मरण करते ही वासुदेव गरुड पर आसीन होकर वहाँ पहुँचे।

20 अर्द्धरात्रि में शकुनि ने वासुदेव से सहदेव मन्त्री के साथ भेंट की।

21 तीनों लोग एक साथ मिलकर विचार करते हैं। शकुनि ने कहा कि तुम लोगों के लिए कुरुपति ने जातुगृह का निर्माण किया है।

22 सहदेव ने कहा—हे मामा ! किसे रखने के लिए जातुगृह का निर्माण किया गया है ?

23 गोविन्द ने कहा—हे दोनों मन्त्री ! सुनो। युधिष्ठिर के सामने यह प्रसंग बतायेंगे।

24 शकुनि कहता है कि वासुदेव ! धर्मसुत के सामने कहने से क्या होगा ?

25. युधिष्ठिर को अर्द्धरात्रि में बुलाकर सारा वृत्तान्त कहते हैं।

26 27. धर्मनन्दन वासुदेव से कहते हैं कि पुरोचन ब्राह्मण जातुगृह का शीघ्र ही दहन करेगा; किन्तु तुम्हारे सहायक होने से कोई क्या कर सकता है ? इस सारे संकट में तुम्हीं रक्षा कर सकते हो।

28 व्यास, वासुदेव और विदुर के साथ रहने पर मुझे पृथ्वी पर कौन जीत सकता है?

29 एकान्त में सहदेव को बुलाकर वासुदेव ने कहा कि रात्रि में भीमसेन का पहरा देने के लिए कहना।

30 इतना कहकर वासुदेव और शकुनि अन्तर्धान हुए। हरि-हरि कहकर पाण्डव अपने आवास को लौटे।

31 कुरुपति ने पुरोचन को बुलाकर कहा कि हे ब्राह्मण ! तुम पाण्डवों के पास जाओ।

32 33 रसोइया बनकर तुम उनका भोजन बनाना और विष परोसकर पाण्डवों का नाश करना। जब पाण्डव रात्रि में सो जायेंगे, तब तुम जातु गृह में आग लगा देना।

दुर्योधन की आज्ञा से पुरोचन का वारुणावन्त गमन

1 3 राजा की आज्ञा से पुरोचन वारुणावन्त को शीघ्र चल पड़ा। आषाढ महीने में पूर्णिमा के दिन उत्तराषाढ नक्षत्र और धनु लग्न की एक अशुभ बेला में पुरोचन वारुणावन्त मे जाकर युधिष्ठिर के पास पहुँचा।

4. ब्राह्मण को देखकर देवी कुन्ती पूछती है कि हे ब्राह्मण! किस काम से यहाँ आये हो ?

5 6 ब्राह्मण ने कहा—हे कुन्तिभोजकुमारी ! तुम भोजन बनाने में कष्ट पा रही हो। मैं रसोइया ब्राह्मण भोजन बनाने की विधि जानता हूँ। भोजन बनाकर मैं प्रतिदिन देता रहूँगा।

7. पुरोचन ने कहा कि राजा धृतराष्ट्र अनवरत तुम लोगों की चिन्ता करता है।

8. उसे अपने पुत्रों की चिन्ता नहीं है। हमेशा पाँच पुत्रों की चिन्ता करता है।

9-10 पुरोचन की बात सुनकर युधिष्ठिर ने सहदेव को एकान्त में बुलाकर पूछा— हे भाई ! तुम तो विचक्षण हो। सारी बातें तुम्हें विदित हैं। ब्राह्मण का चरित्र तुम्हें कैसा लगता है ?

11-12 सहदेव ने कहा, हे देव ! उत्तर कोशल में ज्ञानपुर नगर है। वहाँ गंगा के किनारे नौ हजार साठ घर बसे हुए हैं। वहाँ के सभी लोग कुज्ञानी और मनुष्य का विनाश करने वाले हैं।

13 यह उस ब्राह्मण बस्ती का मुखिया अज्ञानी और पाप-प्रकृति का है।

14 यह गाड़िया गोरखपुरी ब्राह्मण अत्यन्त कुपथगामी है। उसने जौ, गाय का घी, पुआल और तेल मिलाकर घर तैयार किया।

15 भीमसेन को इसने विष के लड्डू दिये थे। अब हम लोगों को विषाक्त भोजन देकर मारेगा।

16 युधिष्ठिर ने कहा कि हे सहदेव ! चुप रहो। भीमसेन जानने पर इसका नाश कर देगा।

17 सज्जन हो या दुर्जन हो, यह ब्राह्मण तो है। यह अथर्ववेदी ब्राह्मण के लक्षण को धारण करता है।

18 अपने ही पाप से इसका नाश हो जाय। ब्रह्म-हत्या-दोष हम पर न लगे।

19 मेरी शपथ है। हे भाई ! इस बात को अपने पेट में पचाकर रखना। भीम के आगे कभी प्रकट मत करना।

20 युधिष्ठिर ने कहा, हे ब्राह्मण ! तुम्हें पिता ने बुलाकर यहाँ भेजा।

21 हम लोग शुरू में ही शतशृंग पर्वत पर पैदा हुए। वन-फूल खाकर वनस्थली में जीते रहे।

22 वन में रहने के कारण ही हमारी वही प्रकृति रह गयी। अन्न और व्यंजन से हमारी तृप्ति नहीं होती।

23. पिता ने जब तुम्हें भेजा तो हमारे साथ रहो। हमारी इच्छा होने पर भोजन बनाकर हमें देना।

विदुर का जातुगृह द्वार में प्रवेश

पुरोचन युधिष्ठिर के साथ रहने लगा। उसके हृदय में पाप था पर बाहर से प्रेम-प्रदर्शन करने लगा।

2 3 कुम्भ मास शुक्ल पक्ष की त्रयोदशी तिथि गुरुवार के दिन पुष्य नक्षत्र के रात्रिकाल में विदुर आकर जातुगृह के द्वार पर उपस्थित हुए।

4 युधिष्ठिर को नींद से जगाकर वह पण्डित महाभिज्ञ पास बैठाकर सारी बातें बताता है।

5 बेटा ! धृतराष्ट्र का चरित्र तुम समझते हो ? दुर्योधन का अभिषेक कराने के लिए वह प्रयत्न कर रहा है।

6 हम लोगों को पास बैठाकर उसने परामर्श किया था। भीष्म ने कहा कि युधिष्ठिर के रहने पर दुर्योधन राज्य का अधिकारी नहीं है।

7 उसे सुनकर अन्धराजा क्रोधित हुआ और तुम्हारे अनिष्ट की चिन्ता करने लगा।

8 यह गोखुरा ब्राह्मण महान् दुष्ट है। इस पापिष्ठ ने भीम को विष-लड्डू खिलाये।

9 धर्म से ही तुम्हारा अनुज बच गया। ये सब बातें याद करके अपने मन में समझो।

10. पुरोचन ने कपटपूर्वक गाय का घी, तेल, पुआल और लाख मिलाकर इस गृह का निर्माण किया।

11 इसके बनाये हुए भोजन को कभी मत खाना क्योंकि यह विष मिला हुआ होगा।

12 हे बेटा ! जब तुम लोग रात में सो जाओगे, तब यह इस गृह को जला देगा।

13 जातुगृह में कभी भी आग न रहने पाये। ऐसा सोचकर कार्य करना।

14 वह बाप होकर भी तुम्हारे प्रति पाप की चिन्ता करता है। उस समय से पूर्व तुम लोग गुप्त रूप से भाग जाना।

15 कौन कैसा विचार कर रहा है—इस सन्दर्भ में तुम लोग गहराई से सोचना। मेरे मन में हमेशा तुम लोगों की ही चिन्ता रहती है।

16 इतना कहकर विदुर चले गये। वहाँ जाकर धृतराष्ट्र को प्रणाम किया।

17. कुरुपति ने कल्याण-कामना की और उसे आसन दिया।

18. युधिष्ठिर देव ने भीम को बुलाकर कहा कि तुम रात में सोने की इच्छा मत करना।

19. यह वनस्थली दैत्य-दानव की भूमि है। व्याघ्र, भालू और मत्त हाथी यहाँ विश्राम करते हैं।

20. दिन में भीमसेन घोर वन मे दोडता रहता है। जीवो को मारकर सब दिन खाता है।

21. दिन मे भूख के ममय वह कन्दमूल ओर अगूर खाता है। रात्रि में जातुगृह म घूमता रहता है।

22. पाताल लाक मे भीममेन बेलाबाली मे मिला था। उससे बेलाबली नामक एक पुत्र उत्पन्न हुआ था।

23 वह अत्यन्त सुन्दर और बलवान था। वह अनन्त का नाती अनक शास्त्रो म निर्जीन था।

24 25 ऋपभ मास, शुक्ल पक्ष, दशमी सोमवार के हस्तकन्या नक्षत्र मे पुरोचन ब्राह्मण न हस्तिनापुर म जाकर दुर्योधन राजा स सारा बातं बताइ।

26 पाण्डवो को भाजन बनाने की जरूरत नही है। व वनचर की तरह कन्दमूल फल ही खाते है।

27 हे दव ! जातुगृह का अग्निरहित कर रखा है। घोर वन मे अग्नि खाजने से भी नही मिलती है।

28 यदि पास मे कोई घर होता तो खोजकर अग्नि पा जाता ।

29 शकुनि न कहा कि मेरा कहा मानो। वहा हम लोग शस्त्र-निर्माणशाला बनायेंगे।

30 वहा लाहार कवच तैयार कर रहे होंगे। खोजने पर आग मिल जायेगी।

31 जिस समय रात म व सो जाये, उस समय लोहशाला स आग ल जाकर जला देना।

32 शकुनि की बात सुनकर मानगोविन्द ने दक्ष लोहारो को बुलाकर आज्ञा दी।

33 अच्छी पगडी और अनक रत्न उपहारस्वरूप दिये। वारुणावन्त मे रहकर हजारो शस्त्र निर्माण शाला के निर्माण का आदेश दिया।

34 वनस्थली म नदी क पास अगार जलान के लिए अनेक लकडियाँ मिलगी।

35 मेरे भाई पाण्डव वही रहते है। तुम लोग उनकी सहायता करन रहना।

36 लोहारो को लेकर स्वय महामन्त्री शकुनि वारुणावन्त मे प्रविष्ट हुए।

37 जातुगृह की प्राचीर क चारो ओर शिविर बनाया गया। युधिष्ठिर शकुनि के पास पहुँचे।

38 मामा कहकर युधिष्ठिर ने प्रणाम किया और पूछा कि क्या योजना है?

39 शकुनि ने कहा—हे धर्मसुत ! सावधान होकर सुनो। मैं तुमसे सच कहता हूँ।

40 पुरोचन ब्राह्मण ने जाकर धृतराष्ट्र से कहा कि महाघोर वन में तुम्हारे पुत्र अकेले रहते हैं।

41 सुनकर दुर्योधन ने शीघ्र तुम लोगो का साथ देने के लिए लोह-शास्त्रशाला बनाने की योजना बनाई।

42 शकुनि ने पाण्डवो से कहा कि तुम लोग घोर वन मे निर्भय होकर रहो।

43 रात-दिन वे बढई निर्माण करते रहेगे। पन्द्रह महोने मे सब कार्य पूरा होगा।

44 45 प्रत्येक घर बारह लट्ठे की नाप मे निर्मित होने लगा। इस प्रकार लोहार और बढई के प्रयत्न से हजार कक्ष का घर तैयार हो गया।

46 हे बेटा ! मेने कहकर पुरोचन को तुम्हारे साथ रखा।

47 युधिष्ठिर ने कहा कि तुम पण्डित, महाभिज्ञ, धार्मिक, विवेकी और वेदशास्त्रविद् हो।

48 तुम्हारे जानने से कोई पाप हो सकता है ? सर्वथा धर्म ही सहायक होगा।

49 द्विजवर युधिष्ठिर के साथ रहने लगा और बढई निर्माणशाला की रचना करने लगे।

शस्त्र-निर्माण शाला का निर्माण

1 2 सिह मास, शुक्ल त्रयोदशी, रविवार को धनिष्ठा नक्षत्र के कुम्भ राशि मे विदुर महात्मा अर्द्ध रात्रि मे वारुणावन्त में प्रविष्ट हुए। भीमसेन को पर्वत के नीचे देखकर कहा।

3 युधिष्ठिर को मेरे पास बुलाओ। आज्ञा पाकर भीमसेन चल दिया।

4 युधिष्ठिर और अर्जुन को लेकर वृकोदर ने सुरनदी के किनारे विदुर से भेट की।

5 विदुर ने कहा—हे युधिष्ठिर ! धृतराष्ट्र अनवरत तुम्हारे अनिष्ट की चिन्ता करता रहता है।

6. शस्त्र-निर्माणशाला और शिल्पियों को तुम्हारे पास

रखने का मतलब तुम समझते हो ?

7-8 युधिष्ठिर ने कहा—हे तात ! मै अकेला था। इसलिए दैत्य-दानवों का मुझे भय था। शकुनि की कृपा से मैं अब अनेक साथी पाकर निर्भय हो गया।

9 जो मेरे पिता धृतराष्ट्र हैं, वे वश मे श्रेष्ठ है और सबकी चिन्ता उनको रहती है।

10 मेने दीर्घकाल इस घोर वन में बिताया। धृतराष्ट्र के आशीर्वाद से मैं अनेक अनिष्टो मे बच सका।

11 विदुर ने कहा कि तुम कभी भी धर्म नही छोडोगे। धृतराष्ट्र की प्रकृति तुम्हारे लिए ऐसी नहीं है।

12 जिस प्रकार तुम पाँचो भाइयो का नाश होगा, वही चिन्ता वह बराबर करता है।

13 तुम हृदय से कह रहे हो कि धृतराष्ट्र मेरे पिता है। धर्मदेवता किस प्रकार उसे सह लेंगे।

14 हे बेटा ! जब पुरोचन तुम्हारे पास आग न पा सका तब वह शस्त्र-निर्माणशाला का यत्नपूर्वक निर्माण करवाने लगा।

15 इसीलिए यह शस्त्र-निर्माणशाला निर्मित है कि पुरोचन रात्रि मे इससे आग लेकर तुम्हारा घर जला सके।

16 हे बेटा ! ऐसा ही धृतराष्ट्र का मनोविचार है। बेटा ! ऐसी व्यवस्था है। सावधान होकर रहो।

17 युधिष्ठिर ने कहा—हे तात ! तुम यदि हमारी ऐसी चिन्ता करते हो तो त्रिलोक मे कौन हमारा अनिष्ट-विधाता हो सकता है ?

18 कहकर विदुर अपने आवास को लौटे। युधिष्ठिर वारुणावत्त भुवन मे प्रविष्ट हुए।

19 हाथ मे तलवार लेकर विदुर हस्तिनापुर मे पथ-पथ पर घूमते हैं।

20 आधी रात को हस्तिनापुर मे अकेले भ्रमण करते समय उन्होंने एक रो-रोकर घूमते हुए मनुष्य को देखा जो कमर मे लँगोट पहने हुए था।

22 उसके नयन मे अजन और उसका मस्तक केशहीन है। वस्त्र- विहीन होने के कारण वह वीभत्स दिखाई दे रहा है।

23 निशापति विदुर को देखकर वह छिप गया। दौडकर विदुर ने उसका हाथ पकड लिया।

24 विदुर ने कहा तुम नहीं जानते कि किसके पास हो ? बीभत्स अवस्था में तुम हीन जाति के मालूम होते हो।

25 इस हस्तिनापुर मे ऐसे लोगो को तो नहीं देखा। इस प्रकार की दरिद्रता तुम्हे कैसे प्राप्त हुई ?

26 इसका कारण मुझे बताओ। झूठ बोलने पर मैं तुम्हारा प्राणनाश कर दूँगा।

खनिकार तस्कर वृत्तान्त

1 विदुर के पूछने पर उस तस्कर ने कहा—हे दण्डधर ! मै जिस जाति का हूँ उसे सुनो।

2 में युक्तित तस्कर हूँ। विदुर ने कहा—तस्कर कौन जाति है ?

3 मैं हीन जाति और चोर हूँ। मेरा घर और ठिकाना नही। चोरी की वृत्ति पर ही जीता हूँ।

4 पुन: विदुर पूछते हैं—कैसे परधन की चोरी करते हो?

5 सेंध खोलकर हे देव ! भीतर घुसता हूँ। रात्रि में दूसर का धन चुराकर ले जाता हूँ।

6 विदुर ने पूछा—लोग तो द्वार बन्द करके सोते रहते है। कैसे अन्त:पुर मे प्रवेश करते हो ?

7 तस्कर ने कहा—हे स्वामी ! सुनो। नारायण ने चारों ओर चौरासी लाख जन्तुओं की रचना की है।

8 चोर नामक एक जाति की भी रचना की। लक्षणा दण्ड नामक एक शस्त्र का सृजन किया।

9 इसके द्वारा निशा रात्रि मे सेंध काटकर अन्दर घुसने से कोई नहीं जान पाता है।

10 विदुर ने कहा—उसका स्वरूप मुझे बताओ। किस समय किसके द्वारा तुम लोग लक्षणा शस्त्र बनाते हो।

11-12 खनिकार कहता है—हे स्वामी ! तुलामास, कृष्णपक्ष, अमावस्या की चण्डी पूजा के दिन विशाखा नक्षत्र में लक्षणा निर्मित होता हे।

13 इसी दिन भिनसार को जब कोई नारी रोती है, वही समय चौर्य-विद्या के लिए शुभ और अनुकूल होता है।

14 जिस लोहार की राशि कृत्तिका होती है, अमावस्या

राशि में उसी का वरण किया जाता है।

15. प्रातः स्नान करके एक काला वस्त्र पहनकर बायें हाथ में किसी मरी स्त्री की चूड़ी पहनी जाती है।

16. रात्रि होने पर लौहशाय की पूजा करके नयी अग्नि लौह-प्रस्तर से तैयार करते हैं।

17. तीन प्रहर रात्रि होने पर काले बकरे की बलि चढ़ाकर चौरिणी देवी को रक्त-भात देते हैं।

18. हे देव ! नारी की प्रथम क्रन्दन ध्वनि-सुनने के समय अग्नि के भीतर उस लोहे को डाला जाता है।

19. योग से लोहार तीन धार वाला यह लक्षणा-शस्त्र बनाता है।

20. हे देव विदुर ! सावधान होकर सुनो। स्वयं देव जनार्दन ने इसकी रचना की है।

21. गोपपुर में जन्में रमाकनागे वनमाली ने चन्द्रावलि के साथ विलास किया।

22. राधा के साथ हरि की अतिशय प्रीति थी। ग्वाला चन्द्रसेन हरि को राधा के पास नहीं आने देता था।

23. राधा को अपने अन्तःपुर में सुला देता था और अनेक यत्नों से द्वार बन्द कर देता था।

24. मदनार्त्त होकर देव वनमाली राधा के लिए छिप-छिपकर रात्रि में घूमते थे।

25. सात द्वार के भीतर चन्द्रसेन राधिका को लेकर सोता था। स्वामी रात्रि में घर में प्रवेश का कोई रास्ता न पा सके।

26. मदन-आर्त से अशांत होकर और क्रोध से किवाड़ को ललाट से ठेलने लगे।

27. किवाड़ के एक काँटे के लगने से ललाट फूट गया और खून बहने लगा।

28. पितामह को बड़ी चिन्ता हुई। वे तत्क्षण नारायण से प्रसन्न हुए।

29. बहते हुए रक्त को हरि पोंछकर फेंकते है। कटाक्ष मन्त्र से ब्रह्मा घाव को फूँकते हैं।

30. ऐसे वेदपति ने नारायण के रक्त को बन्द करके नारायण के पास पहुँचे।

31. ब्रह्मा ने कहा—हे देव ! इतने वियोगी हो गये। गोप द्वारा एक वयस्क युवती के निरोधन होने पर विकल हो गये।

32. हे वनमाली ! यह लौह-शस्त्र मैं तुम्हें देता हूँ। इस संध काटकर तुम भीतर घुसो।

33. यह शस्त्र लेकर अच्युत ने तत्क्षण गोपाल क पाषाण-दीवाल को काट दिया।

34. ब्रह्मा की माया से किसी को कुछ सुनाई नहीं दिया संध काटकर वनमाली भीतर पहुँचे।

35. राधिका को काम-शर की पीड़ा लगी हुई है। उस केशव के रति-शृंगार का ध्यान किया।

36. ब्रह्मा ने जो अंजन-विद्या दी थी, उसे लगाकर हरि न चारों ओर देखा।

37. अन्धकार घर में सूर्योदय हुआ जैसे लग रहा है जिससे घर आलोकमय दिन की तरह लग रहा है।

38. ब्रह्मा ने एक और विद्या निद्रा-धूलि के रूप म नारायण के हाथ में दी।

39. उसे लेकर गोपाल के ऊपर छींट दिया। वह अचेत होकर सो गया।

40. राधा का हाथ पकड़कर नारायण ने उठाया। व चन्द्रावलि राधा शीघ्र उठी।

41. राधा का हाथ पकड़कर अन्तःपुर में जाकर वासुदेव न प्रसन्नतापूर्वक क्रीड़ा रंग किया।

42. रस-स्खलित होने पर उत्तेजना समाप्त हो गई। पुन उसी रास्ते से श्रीरंग बाहर हो गये।

43. केशव ने कहा कि इसी बिम्ब छिद्र से कार्य सिद्ध हुआ। इसी से हरदम कार्य-सिद्धि होती रहेगी।

44. इसी प्रकार नारायण ने एक लाख बार रति-शृंगा किया। इसीलिए इसका नाम लक्षणा रखा।

45. इस विद्या से कन्हाई ने अनेक कार्य सिद्ध किये। मुझे उन्होंने सिद्धिदायी अंजन-काजल और निद्राचूर्ण लक्षण शास्त्र के साथ दिया।

46. विदुर ने कहा कि बड़ा ही उत्तम प्रस्ताव है। तुम्हा साथ केशव का इतना प्रेम क्यों है ?

47-48. वह खल्यकार विनीत होकर कहता है कि गोपपुर मे वासुदेव का रंगावतार हुआ था। राधा के पास जब रति-शृंगार नहीं पाये, तो पास से ही सरह सुन्दरी दूती को बुलाया।

49. वह अमर सुन्दरी स्वर्ग की दूती थी। इसके मूल मे चौंसठ करोड़ अप्सराओं का भोग निहित था।

50-51. वह सरह सुन्दरी स्तम्भन, मोहन, वस्य, उच्चाटन, गुटिका, अंजन, धरण-धारण सभी विद्याओं को जानती थी। इसके भाव, रस और वचन से पाषाण भी विगलित हो जाता है।

52. नन्द के बेटे कन्हाई की सभी निन्दा करते थे। उसी सरह सुन्दरी दूतिका की बात से सभी बस में हो गये।

53-54. बैशाख मास, शुक्ल पक्ष, चतुर्थी रोहिणी और मृगशिरा नक्षत्र में राधा घर में अकेली थी। उसकी सास अपनी लड़की की ससुराल में पुत्र की बधाई देने के लिए गई थी।

55. मथुरा नगर में वसन्तोत्सव के लिए सभी गोपाल दही, दूध, घृत, मलाई लेकर कंस के पास गये।

56. जब गोपी माँ चली गयी, तब घर में शून्य हो गया। इस अवसर पर राधिका ने सरह सुन्दरी दूती को बुलाया।

57. राधिका ने अपना सारे अलंकार उतारकर सरह सुन्दरी को सुसज्जित किया।

58-59. अपना आलेख, तिलक और वस्त्र पहनाकर जूड़े में फूल लगा दिया। उसके अंग में कस्तूरी और चन्दन का लेप किया। अपना पान खिलाकर अधर को सुरंग किया।

60. कहा कि हे संगिनी ! इसी समय जाकर नन्द के पुत्र कन्हाई को ले आओ।

61. अपना नूपुर निकालकर दूतिका के पाँव में पहना दिया। राधिका की आज्ञा से सरह सुन्दरी चल देती है।

62. राधिका के लिए देव मधुहरणकारी माधवी लता के नीचे बाट जोह रहे थे।

63. क्षणभर यमुना के किनारे तो क्षणभर कदम्ब वृक्ष पर चढ़ते हैं। पर दारा शृंगार के लिए हरि को इस प्रकार का कष्ट था।

64. कृष्ण इस प्रकार पथ-अनुसरण कर रहे थे। इसी समय दूतिका-गमन पथ से नूपुर की ध्वनि सुनाई दी।

65. झटके से कदम्ब के वृक्ष से कृष्ण कूद पड़े। तरंगायित नेत्रों से हरि बार-बार देखने लगे।

66. कृष्ण का शरीर मदन-रस में डूबा हुआ है। इस समय सुन्दर आभरणमय दूतिका को देखा।

67. देव मधुहारी ने कामार्त्त होकर राधिका के भ्रम से दूतिका को गोद में लेकर आलिंगन किया।

68. मदनार्त्त होकर देव ने बिना कुछ पूछे दूतिका के पहने वस्त्र को खोलकर फेंक दिया।

69. गहन घोर वन में विशेष कुंज लता है। वसन्त ऋतु का मलयानिल मदन को दौड़ा रहा है।

70. वसन्त कोकिल उस ऋतु में कूक रही है। कामदेव के वाणाघात से कामतत्त्व दग्ध होता है।

71. कामदेव ने इस प्रकार का भ्रम उत्पन्न किया। परमज्ञानी नाथ भी सद्भाव में न रह सके।

72. राधिका का भेष-अलंकार देखकर राधिका ही समझकर दूती के साथ रमण किया।

73. शृंगार रस में आकण्ठ डूबकर ज्ञानशून्य हो गये। मुख का चुम्बन लेकर वे वक्षस्थल से भिड़ गये।

74. मदनार्त्त कृष्ण असंयत होकर मुख से मुख लगाकर भी नहीं पहचान पा सके।

75. दूतिका कही जाने वाली जो दूती युवती है, उसकी उम्र का पृथ्वी पर कोई नहीं है।

76. उसके केश शुभ्र हो गये थे और शरीर एकदम गलित एवं स्खलित हो गया था। तेंदू काठ की तरह वह बीभत्स दिखाई देती है।

77. वह अत्यन्त स्थूल काय और लम्बे हाथ-पाँव वाली है। उसके साथ हरि ने शृंगार रस क्रीड़ा की।

78. अत्यन्त आरत से हरि का शरीर निमज्जित हो गया। दूतिका के पके केश श्वेत सेवली फूल की तरह दिखाई दिये।

79. हास्य, लास्य, रतिरंग में शृंगाररस भाव से नख और दन्त आघात से शरीर को विदीर्ण किया।

80. वलपुरुष के साथ वृद्धा स्त्री का प्रेमभाव चल रहा है। उत्साहित होकर वह वृद्धा चाटुकारिता की बात सहती है।

81. हृदय को हृदय से लगाकर मुख से मुख का चुम्बन देते हैं और प्रेम से कहते हैं कि हे प्रिये ! मेरे जीवन की रक्षा करो।

82. वह शृंगार रंजित सार्थक पुरुष हैं। दूती भी अनेक काल की वृद्धा वनिता है।

83. बहुत दिनों के बाद सरह सुन्दरी रति शृंगार में एक बालक-पुरुष को प्राप्त हुई।

84. राधिका जानकर हरि ने निश्चिन्त भाव से शृंगार किया। शृंगार के बाद दूतिका अचेत हो गई।

85. जिस समय रस स्खलित हुआ, काम-भ्रष्ट होते ही उत्तेजना समाप्त हो गयी।

86. उसे छोड़कर हरि शृंगार से मुक्त होकर बैठे। इस समय सचेतन दूतिका का वर्ण-चिह्न सावधान चित्त होकर देखा।

87. नाक पर हाथ रखकर जनार्दन हँसने लगे। पचमन को भूल गये। वस्त्र पहनने की भी याद नहीं रही।

88. जब केशव अपना सिर झुकाकर बैठे तब दूती असंवृत होकर भाग गयी।

89. अपने वस्त्र को न पहचानकर जल्दी-जल्दी में कन्हाई का वस्त्र पहनकर भाग गयी।

90. हरि दुःख से न तो वस्त्र पहनते हैं और न केश बाँधते हैं। सोचते हैं कि राधिका को छोड़कर दूतिका के साथ रतिरंग किया।

91. यह काम की अनीति है जिसने इतना बड़ा पाप किया। मेरे जैसे लोगों को ऐसा दण्ड दिया।

92. किसके कहने पर मैंने इतना बड़ा काम किया। मनुष्यों की तो अत्यन्त बुरी अवस्था होगी।

93-94. मैंने जो किया उसका अनुसरण संसार करेगा। वयस्क लोगों के साथ वृद्ध वयस्का को मैं समझ न सका। महाभार काम में खड़े-खड़े डूब गया।

95. कितने काल की महानारी के साथ काम ने मुझे फँसाया।

96. वह कहीं राधिका के निकट जाकर न कहे। नहीं तो वह मेरा उपहास करेगी।

97. हे सरस्वती ! तुम दुहिता के कण्ठ में आसीन हो। यह बात दूतिका राधिका के आगे न कहे।

98. पुनः सोचते हैं कि स्त्रियों को बड़ा गर्व होता है। पर-पुरुष शृंगार को कैसे दूसरे से कहेंगी।

99. यदि यह राधिका के सामने कहेगी तो राधिका उसे सुनकर महाक्रोधित होगी।

100. ऐसा सोचकर देव हरि उठे ! वस्त्र उठाकर देखा कि यह दूती की छोड़ी हुई साड़ी है।

101. उसे देखकर स्वामी का मन दुगुना दुःखी हुआ। बात सोचकर उन्हें पुनः हँसी आयी।

102. हे अनंग ! तुमने ऐसी अवस्था की। जगत्चन्द्र पुरुष को भी इस अवस्था में ला दिया।

103. पर-दारा शृंगार अब और न हो। उसे आग लगे। जो पर-दारा की इच्छा करे, वह मर जाय।

104. पर-दारा हरण से मेरी यह अवस्था हुई। किस रस के लिए मैंने इतना बड़ा काम किया।

105. पर-दारा भोग से अमृत का स्वाद मिलता है—ऐसा कहा जाता है। अब मैंने जाना कि पर-दारा कितना प्रमाद है!

106. नारायण ने इस प्रकार दुःखी होकर कहा कि संसार के लोग पर-दारा-गमन न करें।

107. कामिनी, कामसेना, कुमारी, कामाक्षी ने स्त्री कुल को कामुकता दी है।

108-109. कमलाक्षी, पिंगला, बगला, मातंगी, अभया, कलुपनाशिनी, कमलांशी, विमला, विजया, कामाक्षी देवी को हे नर ! याद करो। काम-कष्ट दूर हो जायेगा। स्वपत्नी में इच्छा रखो ताकि दाम्पत्य जीवन का पतन न हो।

110. काम सागर में अगाध महाजल है। किसी को उसका स्थल और किनारा दिखाई नहीं देता है।

111. जगमोहन पुरुष का इतना बड़ा गर्व भी चूर्ण हो गया। पर-दारा-भोग सकल पाप का मूल है।

112. क्षणमात्र के लिए पर-दारा रतिरंग होता है किन्तु क्षण भर के बाद सर्वभंग हो जाता है।

113. कामाक्षी कामसेना के चरणों की नित्य सेवा है। पर-दारा की ओर मेरा मन आकृष्ट न हो।

114. पर-दारा भोग का कष्ट ऐसा ही है। हे पर-दुःखकातर तुम सबकी माँ हो।

115. तुम्हारी आज्ञा से मैं शूद्र मुनि ने सब कुछ कहा। इस बात से मतिभ्रम से मुझे कोई अन्यथा न समझे।

116. हे सिंहवाहिनी ! तुम प्रत्यक्ष हिंगुला हो। हे सिद्ध सारला देवी ! इस संसार के लोगों को अभयदान करो।

117. मैं सारलादास नामक तुम्हारा पुत्र हूँ। मैं जो इच्छा

करता हूँ, वह मुझे अवश्य मिलेगा।

श्री हरि की बाल-लीला और खनिका का विवर निर्माण

1 वेवस्वत मनु ने अगस्त्य से पूछा—बडे रमपूर्ण चरित्र का वर्णन किया।

2 दूती का छोडा हुआ वस्त्र नारायण ने देखा। पहले अपना समझकर हाथ में लिया।

3 इसके बाद दु:खी मन से भूमि पर फेंक दिया। जगत् स्वामी ने कौन-सा वस्त्र पहना ?

4 अगस्त्य ने कहा—हे वैवस्वत मनु ! वस्त्र फेककर ऋषि केश नगे होकर बैठे।

दवहरि ने एक वांस ताडा और उसे दो भागों में फाड दिया।

6 एक सुन्दर और कोमल छिलका बाहर निकाला। उसस नारी कमर मे बाधकर काछ बनाया।

7 वास स बना एक वस्त्र कमर मे वाधा। पुन वैवस्वत मनु न अगस्त्य स पूछा—

8 हे मुनि ! सरह सुन्दरी दूतिका तो राधिका के पास गयी। उसने राधिका को क्या उत्तर दिया ?

9 आलेख और तिलक लगाकर राधा बैठी है। वासुदेव की प्रतीक्षा मे वह अभिसारिका बनी हुई है।

10 उसके सामने सरह सुन्दरी दूती प्रविष्ट हुई। पसीने से वह लथपथ हुई है। मन दु:खी और काला हो गया।

11 सरह सुन्दरी से राधिका पूछती है कि केशव को साथ न लाकर तुम अकेली कैसे आयी ?

12 दूती ने कहा कि तुम्हारे प्रेम का जितना वेग है, उतना तुम्हारे प्रति उसका अनुराग नही है।

13 राधिका ने कहा—हे आर्या ! यह तुम्हारा अधर चुम्बित हुआ जैसा दिखाई दे रहा है !

14 दूतिका ने कहा—हे सखी ! तुम्हारे लिए मुझे अत्यन्त चाटुकारिता करनी पडी।

15 अनेक चाटुवाक्य कहते-कहते मेरा कण्ठ सूख गया और मेरा अधर विरस हो गया।

16 चाटुवाक्य अनेक रग चढाकर कहा, किन्तु अन्त मे समझी कि वह तुम्हारी कभी याद नहीं करता।

17. राधिका ने कहा—मैने बड़े सुन्दर ढंग से जूड़ा बाँधा था, लेकिन वह खुलकर मेरे मुँह पर क्यों बिखर पड़ा है ?

18-19. दूतिका ने कहा कि हे राधिका ! जब इस बात से काम नहीं बना, तब मैंने अपार दैत्य-प्रदर्शन किया और उसके चरणों पर गिरकर देर तक सोई रही। इसी से मेरा जूड़ा खुलकर मेरे कपाल पर गिर पड़ा।

20-21 राधा ने कहा कि तुम्हारे गले में मैंने रत्नमाला पहनायी। अब वह पीछे कैसे चली गयी ? आगे की ओर गाँठ ओर पीछे की ओर लटकन कैसे चला गया? तुम इतनी विह्वल कैसे हो गयीं ?

22 दूती ने कहा—जब मैं चरणो पर सोयी उस समय रत्नमाला की ग्रन्थि खुल जाने से नीचे गिर पड़ी।

23 व्याकुल होकर मैने गाँठ को पकड़कर लटकन को उलट दिया। गाठ को हाथ मे जोर से पकड़कर रखा।

24 यह तो ठीक है, पर तुम्हारी पीठ पर धूल क्यों लगी है?

25 जिस समय मे चरण पकड़कर सोयी थी उस समय हे सखी ! उसने मुझे लात मारकर ढकेल दिया और मैं उतान गिर गयी।

26 इसीलिए मेरी पीठ पर धूल लगी। तुम्हारे लिए ही मैने इतना कष्ट और अपमान सहा।

27 राधिका ने कहा—हे आर्या ! यह तुम्हारा शरीर नख दन्त-क्षत की तरह क्यो विदीर्ण हो गया है ?

28 दूती ने कहा—बहुत समय तक मैं उसके चरण पकडकर दण्डवत पडी रही।

29 मै कण्टक लता मे जाकर मुँह के बल गिर पड़ी। काँटे लगने से मेरा शरीर क्षत-विक्षत हुआ।

30 राधिका ने कहा—मैने तो तुम्हें अपना झीना वस्त्र पहनाया। तुम कैसे एक पुरुष का वस्त्र पहनकर लौटीं?

31-32 दूतिका ने कहा—मैंने तो अत्यन्त विनयपूर्वक निवेदन किया। इतना कष्ट देखकर वह अन्त में आने के लिए राजी हुआ। आज रात में तुम्हारे पास आने को सहमत हुआ।

33. मैने कहा, जब तुम रात को जाओगे तो मेरे हाथ राधा को संकेत भेजो।

34. तुम्हारा संकेत देखकर चन्द्रमुखी राधा के मन में विश्वास उत्पन्न हो।
35. कृष्ण ने कहा कि हे दूती ! इन पहने हुए वस्त्रों के सिवा मेरे पास कोई संकेत नहीं।
36. मैंने कहा कि तुम राधिका की साड़ी पहनकर उसके बदले में मुझे अपना वस्त्र दे दो।
37. तुम्हारी साड़ी का नाम सुनते ही वह प्रसन्न हो गया। उस साड़ी को जगन्नाथ ने पहन लिया।
38. उसका पहना हुआ वस्त्र मैंने पहन लिया। विश्वास हेतु मैं ऐसा संकेत लायी।
39. सुनकर राधिका परम प्रसन्न हुई। मेरे लिए आर्या तुमने बहुत कष्ट पाया।
40. राधिका अत्यन्त व्याकुल हुई। कुमारी बाला को दूतिका ने इस प्रकार ठग लिया।
41. तस्कर ने कहा, हे देव विदुर ! इस प्रकार नारायण ने दूतिका के साथ रमण किया।
42. सरह सुन्दरी के गर्भ में वासुदेव का वीर्य पड़ा। नौ महीने में मैं उसके पुत्र रूप मे पैदा हुआ।
43. सरह सुन्दरी ने कहा कि यह तुम्हारे वीर्य से उत्पन्न पुत्र तुम्हारी सेवा करता रहेगा।
44. दूतिका के गर्भ से पैदा होने के कारण हरि ने मेरा नाम खल्यकार रखा।
45-47. ब्रह्मा द्वारा प्रदत्त लक्षणा शास्त्र को श्री कृष्ण ने मेरे हाथ में दिया। मुझसे कहा कि तुम एक काम करो। कदम्ब के नीचे से राधिका के घर के भीतर एक योजन की दूरी तक एक विवर खोदकर सुरंग बनाओ जो राधिका के पलंग के नीचे खुले।
48. नारायण की आज्ञा से मैंने विवर खोदा। अठारह दिन में वह राधिका के घर तक पहुँचा।
49 तीन ताड़ के बराबर चौड़े और एक ताड़ के बराबर ऊँचे पत्थर से राधिका विवर-द्वार को ढककर रखती है।
50. रात होने पर ग्वाल को सुलाकर राधिका विवर में प्रवेश कर कदम्ब वृक्ष के पास जाया करती है।
51. वह चन्द्रावती इच्छानुसार शृंगार-सुख देती है और रात रहते ही गोपाल के पास जाकर सो जाया करती है।
52. हे विदुर ! मेरा यह चरित्र तुम सुनो। मैं खल्यकार नामक तस्कर हूँ।
53. यह सुनकर विदुर परमार्थ की बात सोचते हैं। यह मेरे पुत्रों के लिए हितकर होगा।
54. विदुर ने कहा—हे महाबली ! तुम कितनी लम्बी सुरंग खोद सकते हो ?
55. खल्यकार ने कहा—जिसका जितना दूर का काम होता है; मैं उतनी दूर का काम सम्पादित कर लेता हूँ।
56. सुनकर विदुर बड़े प्रसन्न हुए और उस तस्कर को साथ लेकर अपनी योजना में चले।
57. तुम जब मुझसे चोर के रूप में मिले तो तुम पुनः किस प्रकार चोरी कर सकते हो ?
58. हस्तिनापुर में विदुर के दो अधिकार हैं। पहला नगर की रक्षा और दूसरा भण्डार की रक्षा।
59. रात में विदुर ने खल्यकार को साथ लेकर भण्डार से उसे एक कँवरी रत्न दिया।
60. तुम हस्तिनापुर में विलासपूर्वक रहो। अब फिर हस्तिनापुर में चोरी न करना।
61. धन-रत्न आदि अपने घर में गाड़कर रख दिया और निरन्तर विदुर के पीछे-पीछे घूमने लगा।
62. एक दिन तस्कर ने हाथ जोड़कर कहा कि आप मेरा पालन करते हैं तो मैं आपका क्या उपकार कर सकता हूँ?
63. विदुर ने कहा कि तुम्हारे द्वारा मेरे अनेक कार्य होने वाले हैं इसीलिए तुम्हें पाल रहा हूँ।
64. खल्यकार ने कहा—मैं किस प्रकार तुम्हारे प्रयोजन में आऊँगा ? मुझे आज्ञा दें। मैं इसी क्षण उसे पूरा करूँगा।
65-66. विदुर ने कहा—तुम मेरी बात को छिपा सको, किसी के आगे न बताओ तो मैं तुम्हें बता सकता हूँ। खल्यकार ने कहा कि मैं ऐसा नहीं हूँ।
67-68. मीन मास, कृष्ण पक्ष की द्वितीय भृगुवार शुक्रवार को हस्त नक्षत्र के शेष भाग में विदुर खल्यकार को साथ लेकर सुर नदी के किनारे पहुँचे।
69. टेढ़े-मेढ़े रास्ते से घुमा-फिराकर उसे जातुगृह में पहुँचाया।
70. सुरनदी के किनारे से जातुगृह ग्यारह योजन है। हे बेटा ! वहाँ तक एक सुरंग का निर्माण करना।
71 खल्यकार ने कहा—तुम चिन्ता मत करो। इसे मैं कर

सकता हूँ।

72. नारायण को याद करके उसने शुभारम्भ किया। त्रिषिरा पर्वत के नीचे से सुरंग खोदना आरम्भ किया।

73-74. विदुर ने कहा, द्वापर युग में जितने ऊँचे मन्दिर होते हैं। उसी पैमाने में आठ हजार आठ सौ अट्ठाईस हाथ ऊँची और इतनी ही विस्तृत सुरंग खोदना। ताकि खड़ा होकर एक आदमी आसानी से आ जा सके।

75 तस्कर ने कहा कि तुम्हारी जितनी आवश्यकता होगी, मैं उससे भी विस्तृत कर सकता हूँ।

76 खल्वकार को सुरंग कार्य में लगाकर विदुर स्वयं उसे रात्रि में अन्न-जल देते है।

77 78 मकर मास शुक्ल पक्ष, पूर्णिमा के मंगलवार दिन पूर्व फाल्गुनी नक्षत्र मे हरि और बलराम दोनों भाई हस्तिनापुर मे कुरुनाथ के सामने उपस्थित हुए।

79 विदुर ने रामकृष्ण दोनो को देखकर दैन्य और विनयपूर्वक पूजा की।

80 स्थान से उठकर देव जा रहे हैं। विदुर उनके पीछे-पीछे चल रहे है।

81 देव बलराम शीघ्र ही आगे बढ़ गये। एकान्त मे कृष्ण ने विदुर से कहा—

82 धृतराष्ट्र पाण्डवो का अनिष्ट सोचता है। तुम्हारी कृपा से ही वे पार होगे।

83. विदुर ने कहा कि मुझसे इतनी बड़ी बात मत कहो। हे स्वामी ! तुम्हे पाण्डवों की बहुत चिन्ता करनी है।

84. दुर्योधन ने कपटपूर्वक वारुणावन्त क्षेत्र में शस्त्र निर्माण-शाला बनायी है। पुरोचन के हाथ से वह जातुगृह को जलवायेगा।

85 खल्वकार नामक एक तस्कर को लगाकर मै एक सुरंग का निर्माण करवा रहा हूं।

86 जब रात्रि में यह पुरोचन जातुगृह को जला देगा, तब पाण्डव सुरंग से बाहर निकल जायेगे।

87. नारायण ने कहा कि वह चोर खल्वकार सरह सुन्दरी का पुत्र मेरा ही आत्मज है।

88 मैंने ही उसे चौर्य-विद्या सिखायी है। यह सत्य है कि वह सुरंग खोद सकता है।

89-90. विदुर ने कहा, हे स्वामी ! खल्वकार ने एक बात कही है। वह जो सुरंग खोदेगा उसकी अपरिमित मिट्टी को वह कैसे सँभालेगा।

91. हे दामोदर ! वह खोदने में समर्थ है, परन्तु मिट्टी कैसे हटायेगा ?

92. विदुर की बात सुनकर कृष्ण मन ही मन सोचने लगे।

93. इसके पश्चात् विश्वमूर्ति होकर दोनों भुजाओं से दो पुरुष उत्पन्न किये।

94. छाया-माया नामक दोनों वीरों को बुलाकर दामोदर ने आज्ञा दी।

95 तुम दोनों सुर नदी के किनारे जाकर खल्वकार के बायें-दायें लगे रहना।

96. वह जितनी मिट्टी खोदेगा; उसे तुम दोनों खा लेना।

97 उनके उदर में कोटराग्नि स्थापित की। जिससे मिट्टी उदर मे पड़ने पर भस्म हो जाय।

98. नारायण की आज्ञा से वे दोनों वीर खल्वकार के सहायक हुए और मृत्तिका दहन की।

99. तस्कर खोद रहा है और दोनों दक्ष पुरुष मिट्टी खा रहे हैं। इन तीनों ने इस प्रकार सुरंग तैयार की।

विदुर का वारुणावन्त-गमन

1 2. श्रवण-शुक्ल पक्ष चतुर्दशी के भृगुवार शुक्रवार उत्तराषाढ़ नक्षत्र को विदुर ढाई पहर रात्रि में जातुगृह के द्वार पर पहुँचे।

3. बावन-बावन भार की गदा लेकर भीम रात्रि-काल में जातुगृह के चारों ओर घूमता था।

4. विदुर को देखकर भीम ने कौन-कौन कहकर पुकारा। तुम्हारे कार्य से मैं आया हूँ—कहकर वे पास पहुँचे।

5 विदुर को भीमसेन ने नमस्कार किया। विदुर ने कहा कि बेटा ! तुम चुपके से युधिष्ठिर को बुला लाओ।

6. चुपचाप युधिष्ठिर को ले आये। युधिष्ठिर को देखकर विनीत हुए।

7. विदुर ने कहा, मन में ध्यान रखो कि जातुगृह में नीचे एक सुरंग खुदेगी।

8. खल्वकार तस्कर को गौरवान्वित करना। उसकी कृपा से तुम लोग गुप्त रूप से पार हो जाओगे।

9. कौरवों तुम लोगों को अत्यन्त अपमानित करेंगे। समय से पार हो जाना ही अच्छा है।

10. तुम लोगों के सहायक जगन्नाथ हैं। तुम लोग कुछ समय वन में दुःखपूर्वक बिताओ।

11. माता के साथ पाँचों भाई एकात्म होकर रहना और अपने-पराये का भाव न रखना।

12. वन में माता की सेवा करते हुए पाँचों भाई समय बिताओ।

13. इतना कहकर विदुर ने पुनः परामर्श दिया कि पुरोचन के हाथ की कोई चीज मत खाना।

14. युधिष्ठिर ने कहा—तुम्हीं हमारे पिता और धर्म-देवता हो।

15. अपनी बात कहकर विदुर गहन वन में सुरनदी के किनारे त्रिपिरा पर्वत पर पहुँचे।

16-17. महानिशाकाल में सुरंग में प्रविष्ट होकर देखा कि वह सुरंग अत्यन्त विस्तृत और नौ ताड़ के बराबर है। एक वर्ष में बीस कोस लम्बी हो गयी है।

18. तस्कर को अनेक धन-रत्न देकर कहा कि तुम्हारा उपकार मैं कैसे भूलूँगा ?

19. इतना कहकर विदुर बाहर निकले। सुरनदी के किनारे नाविक कैवर्त्त को देखा।

20. नाविक किनारे नाव लगाकर बैठता है। रात्रि में आने वाले को पार कर देता है।

21. विदुर ने कहा कि तुम कौन हो ? इस अरण्य नदी के किनारे रात में क्यों बैठे हो ?

22. हे देव ! मैं निषाद कैवर्त्त हूँ। नौका में बैठकर लोगों को नदी पार कराता हूँ।

23. दो-चार पैसे में जीवन-निर्वाह करता हूँ।

24-25. विदुर ने कहा कि इस मानगोविन्द के राज्य में सब लोग ऐश्वर्यपूर्वक रहते हैं। तुम्हारे समान दुःखी यहाँ कोई नहीं है। तुम जलचर होकर कितने दिन बचोगे ?

26. हे कैवर्त्त ! तुम नौका को डुबोकर आओ। जिससे यहाँ लोगों का यातायात बन्द हो जाय।

27. नाविक ने विदुर के आदेश से नौका डुबा दी। उसे साथ लेकर विदुर चल दिये।

28. भण्डार खोलकर उसे अनेक धन-रत्न दिये। अपने घर में उसे छिपाकर रखा।

29. विदुर की प्रसन्नता से उसका कष्ट दूर हुआ। एक दिन नाविक ने विदुर से पूछा—

30. आपने मुझे इतना धन-भण्डार खोलकर दिया। मैं क्षार- हीन हूँ। मुझमें ऐसा क्या गुण है जो मैं आपका कोई उपकार कर सकूँगा।

31. विदुर ने कहा, तुम महान् हो। तुमसे मेरा बहुत प्रयोजन है।

32. कैवर्त्त का हाथ पकड़कर रात में सुरनदी के किनारे ले आये और सुरंग के पास खड़े हुए।

33. विदुर ने कहा कि तुम यहाँ जागते हुए बैठे रहना किन्तु नदी में नौका को पानी में डुबोकर रखना।

34. रात में नौका को पानी से निकालकर सुरंग के द्वार पर रख देना। सुरंग से आने वाले को पार करा देना।

35. सुरनदी के पश्चिम किनारे पर पार करके मुझसे संवाद कहना ।

36. विदुर की आज्ञा से वह नाविक नौका लेकर सुरनदी के किनारे जागते हुए बैठा रहा करता था।

37. दिन में नौका डुबाकर घर में जाकर रहता और रात में पानी से निकालकर सुरंगद्वार पर खेकर ले जाता था।

38. खल्वकार तस्कर ने ग्यारह वर्ष में सुरंग का निर्माण किया।

39-40. मीन मास, शुक्ल पक्ष, दशमी मंगलवार, अश्लेषा नक्षत्र, मघा सिंह राशि सुकर्मा योग, वाणिज्य करण मे रात्रि नौ घड़ी पर जातुगृह के उत्तर कोने में सुरंग का द्वार खुला।

41. उसी स्थान पर वीर अर्जुन सोया था। झटपट वह शंकित होकर उठ पड़ा।

42. कौन-कौन चिल्लाकर उसने टटोलते हुए क्रोध से बायें हाथ से तस्कर के केश पकड़े।

43. तस्कर ने कहा, हे वीर पार्थ ! मुझे छोड़ दो। विदुर की आज्ञा से मैंने तुम्हारा हितकर कार्य किया है।

44. ऐसी बात सुनकर अर्जुन ने तस्कर के केश तत्क्षण छोड़ दिये।

45. आश्वासन देकर इन्द्र के पुत्र ने उसे पास बैठाकर

जल्दी से सारी बातें पूछीं।

46. पास बैठकर चौर्य कहता है कि हे अर्जुन ! तुम लोग इस सुरंग के द्वारा बाहर निकल जाओगे।

47. विदुर की आज्ञा से बहुत-सा धन लेकर मैंने बारह वर्षो में इस सुरंग का निर्माण किया है।

48 अर्जुन ने युधिष्ठिर को जगाया। युधिष्ठिर ने भीमसेन को पुकारा।

49 इस सुरंग के भीतर हे भीम ! जाकर घुसो। देखो कितनी चौड़ी, कितनी लम्बी और कितनी ऊँची है ?

50 इस सुरंग से हम लोग जा सकते हैं क्या ? आज्ञा पाकर भीमसेन महारात्रि में चल दिया।

51 बावन-बावन भार के दो गदे लेकर उत्सुकतापूर्वक भीमसने जा रहा है।

52 दोनों हाथ ऊपर उठाकर गया। आकाश की तरह ऊँचा होकर जाने पर भी कहीं स्पर्श नहीं हुआ।

53 ग्यारह योजन सुरंग मे दौड़ता हुआ भीमसेन सुर नदी के किनारे पहुँचा।

54 लौटते समय भीमसेन दोनो हाथो को दायें-बायें फैलाकर आया। दोनों ओर उसके दोनो हाथ नहीं लगे।

55 भीमसेन सोचता है कि यदि यहाँ युद्ध करना पड़े तो दोनों भुजाओं को घुमाने का यहाँ स्थान तो होगा।

56 दोनो हाथो से गदा घुमाकर वीर ने देखा कि उस पाताल-सुरंग में गदा कहीं टकरायी नहीं।

57 भयंकर रूप धारण करके वृकोदर चला। जातुगृह मे जाकर युधिष्ठिर को बताया।

58. हे देव ! इस तस्कर की बात आश्चर्यजनक है। यह असम्भव बलवान है। देवता भी इतने समर्थ नही हो सकते।

59 इस प्रकार की सुरंग इस तस्कर ने बनायी, हे देव ! मर्त्य और स्वर्ग का अन्तर नही मालूम होता है।

60 युधिष्ठिर ने सुनकर परम प्रसन्नतापूर्वक जातुगृह में जितना धन-रत्न था उसे तस्कर को दिया।

61. हे खल्वकार ! हमारे लिए तुमने जितना कष्ट उठाया, धर्म से राज्य पाने पर मैं तुम्हारा उतना ही उपकार करूँगा।

62. तस्कर ने कहा—हे देव ! महात्मा विदुर के रहते तुम्हें सहज ही पंचकटक राज्य प्राप्त होगा।

63. नामगिरि नामक एक पर्वत को लेकर भीम ने सुरंग-द्वार को ढक दिया।

64. खल्वकार विदुर के पास गया। बोला, पाण्डवों ने सुरंग का परीक्षण कर लिया है।

65. यह सुनकर विदुर ने आनन्दित होकर खल्वकार को बहुत धन-रत्न दिया।

66 उसी रात्रि तस्कर को साथ लेकर विदुर जातुगृह में प्रविष्ट हुए।

67 जातुगृह में प्रविष्ट होकर धर्मराज युधिष्ठिर से भेंट की।

68 बोले, मैं तो संदिग्ध था। हे पुत्रो ! समय रहते विपत्ति-मुक्त हो जाओ।

69 हे पुत्र ! ऐसे रहो जिससे तुम लोगों को दूसरे लोग न पहचानें। कुछ वर्ष अगम्य घोर अरण्य में तुम लोग अज्ञातवास करो।

70 देखना कि इस घटना को धृतराष्ट्र हृदय में किस प्रकार सोचता है ? प्रसन्न होता है या दुःखी।

71 तुम पाँचों भाई आयुष्मान होओ। कई वर्षों तक तुम लोगों के साथ भेंट नहीं होगी।

72 मेरी आयु लेकर जीओ। वन में शत्रु के मिलने पर उसके दर्प का भंजन करोगे।

73 यह कहकर भीम को पास बुलाया और कहा कि कष्ट सहकर भी शरीर को स्वस्थ रखना।

74. हे बेटे ! वन में प्रविष्ट होने पर अनेक कष्ट होंगे और शरीर-रक्षा के लिए भिक्षा भी माँगनी पड़ेगी।

75 इन कर्मो की विपत्ति थोड़ी दिन की है। वहाँ से लौटने पर तो राज्य और सम्पत्ति प्राप्त होगी।

76. इतना समझाकर विदुर चले गये। खल्वकार तस्कर भी उनके साथ चला।

जातुगृह-दाह और भीम का अग्निस्तव

1. पाण्डवों के जातुगृह में रहते ही विदुर हस्तिनापुर में प्रविष्ट हुए।
2. विदुर ने द्वारिका जाकर समस्त संवाद वासुदेव को सुनाया।
3. हे स्वामी ! मुझे जो करना था मैंने किया। अब

तुम्हारी बुद्धि से वे जातुगृह पार करें।

4-5. श्रावण शुक्ल त्रयोदशी सोमवार मूल नक्षत्र में विदुर पूछते हैं—हे हरि ! अब क्या किया जाये जिससे पाण्डवों को पार कर दिया जाय।

6. सुरंग के पथ से बाहर जाने की अपनी बुद्धि बताओ।

7. श्री हरि विदुर से कहते हैं कि इस सन्दर्भ में एक उपाय है।

8. मेघों को बुलाकर नारायण ने वारुणावन्त में घोर वर्षा करने का आदेश दिया।

9. नारायण की आज्ञा से मेघ मूसलाधार वर्षा करने लगे।

10. अनुभव वन में अजराक नामक किरात अपनी जयन्ता नामक पत्नी और पाँच पुत्रों के साथ रहता था।

11-12. वज्रघात उसके घर पर हुआ जिससे अज शबर का नाश हुआ। उसका आश्रम जल जाने से पाँच पुत्रों को लेकर जयन्ता भाग गयी।

13. जातुगृह की दीवाल के पास आकर खड़ी हुई। भीमसेन ने पूछा, तुम क्यों आ रही हो ?

14. कुन्ती ने देखकर पूछा कि हे महात्मनी ! तुम कौन हो, आओ।

15-16. मैं वनेचर किरात-पत्नी हूँ। मेरे पाँच पुत्र हैं। मेरा स्वामी वज्रपात से विनष्ट हुआ। हे माता ! रहने के लिए थोड़ा-सा स्थान दो।

17. इन तुम्हारे बाल शिशुओं का नाम क्या है और तुम्हारा नाम क्या है ? बताओ—कुन्ती ने पूछा।

18. शवरणी ने कहा—हे गोस्वामिनी ! मेरा नाम जयन्ता शवरणी है।

19 कुन्ती ने कहा कि तुम भीतर आकर रहो। तुम्हारे और मेरे नाम अक्षर में काफी समानता है और तुम मेरी समवयस्का हो।

20. मेरे भी पाँच पुत्र हैं और तुम्हारे भी पाँच पुत्र। हे सखी ! तुम भीतर प्रवेश करो।

21. हे भीम ! द्वार छोड़ो जिससे यह प्रवेश करे। माता की आज्ञा से भीम ने द्वार छोड़ा।

22. अन्तःपुर में प्रविष्ट होकर शबरणी बैठ गयी। कुन्ती ने उसे एक शय्या लाकर दी।

23. वन में अनेक कष्ट भोगकर वे आये थे। यहाँ आराम पाकर निद्रा मग्न हुए।

24. युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव कुन्ती को लेकर भीतर प्रविष्ट हुए।

25. युधिष्ठिर ने कहा—यह उपयुक्त समय है, हम लोग जातुगृह से पार हो जायेंगे।

26. सुरंग के मुख से पहाड़ को हटाकर उसके भीतर घुसे। कुन्ती को भीमसेन ने सिर पर उठाया।

27. दायें कन्धे पर युधिष्ठिर, बायें कन्धे पर अर्जुन, दोनों काँख में नकुल और सहदेव को लिया।

28. बावन-बावन भार की दोनों गदाओं को हाथ में लेकर पवन-सुत भीमसेन सुरंग मार्ग से पवन गति से चला।

29. सुरनदी के किनारे ले जाकर पाँचों को बैठाया। रात्रि में ही जातुगृह को लौट आया।

30. विवर द्वार से भीतर प्रविष्ट होकर शस्त्र-निर्माणशाला से अग्नि लाकर जातुगृह को बायें हाथ से जला दिया।

31. भीमसेन ने पुरोचन पण्डा को जगाया और कहा कि तुमने पाण्डवों को मारने की प्रतिज्ञा की थी।

32. हे द्विजवर ! अब तुम्हारी प्रतिज्ञा सत्य हुई। पाण्डवों को मारकर कुरुवीरों को राज्य दो।

33. कपटपूर्वक जातुगृह का तुमने निर्माण किया। भोजन पर बैठाकर मुझे विष खिलाया।

34. इस प्रकार भीमसेन ने पुरोचन की भर्त्सना की। तुमने जातुगृह में क्यों आग लगा दी ?

35. कपटपूर्वक जातु लाख, पुआल, तेल और गाय का घी मिलाकर इस गृह का निर्माण किया।

36. जब जातुगृह में मशाल लगाया, उस सयम वह प्रखर कालाग्नि की तरह जलने लगा।

37. हे ब्राह्मण ! बाहर भाग जाओ। कहाँ से आग लाकर तुमने इसे जलाया ?

38. इसी क्षण हम लोग जल मरेंगे। आग बढ़ती चली आ रही है।

39. शीघ्र ही आग भीम और ब्राह्मण दोनों के हाथ में लगी। ब्राह्मण मुख के बल गिर पड़ा।

40. भीम के भागने के समय उसकी देह में अग्नि की ज्वाला लगी। उस परम योगी भीम ने अनेक प्रकार स्तुति की।

41. अग्निदेव कहते हैं हे भीमसेन ! रुको-रुको। मेरे हाथ

से बचकर कहाँ जाओगे ? विस्मित होकर भीमसेन वहीं खड़ा होकर स्तुति करता है।

12-52. हे वैश्वानर ! दोहरावतार, घोर पाप-दहनकारी, गुप्तदेव, भोजन-प्रमत्त, अनर्गल सिद्ध, कालानल, प्रसन्न पिंगल, महारुद्रमूर्ति, कोटानल ज्योति, दक्ष-शून्य पुरुष, सर्व अभक्ष्य-भक्ष्य, साक्षात् माता-पिता, प्रसन्न वरदाता, सुरसिद्ध महाब्रह्म, अभय स्वामी, महाग्रह्म तेजस्वी, मूर्खदर्प-भंजनकारी, अनन्त मूर्ति और स्वाहा वल्लभ हे देव ! तुम्हारी जय हो, जय हो। शूद्रमुनि सारलादास की तुम्हारे प्रति भक्ति और विनय-भावना है।

53. भीमसेन ने वैश्वानर देव की स्तुति करते हुए कहा—हे स्वामी ! विपत्तिकाल मे मुझे जंजाल में मत डालो।

54. हे स्वामी ! इस बार मेरी रक्षा करो। मै अपने समान तुम्हें एक सौ लोगों का दूँगा।

55. ऐसी स्तुति करके वृकोदर शीघ्र ही पाताल बिम्ब में घुस गया।

56. द्वार पर पर्वत रखकर शीघ्र ही भीमसेन युधिष्ठिर के पास दौड़कर पहुँचा।

57. जातुगृह से अनेक धन-रत्न साथ ले आया था। युधिष्ठिर ने पूछा, यह सब लाकर क्या करोगे ?

कुम्भीर-दैत्य-वध

1. इस प्रकार वीर सुरंग-द्वार पर बैठकर सोच रहे है। इसी समय कैवर्त्त नाव लेकर आ पहुचा।

2. उसे देखकर वे सुरग मे छिप गये। कैवर्त्त ने पुकारा, हे स्वामी ! रुको।

3. विदुर महात्मा ने मुझे अनेक धन-रत्न दिये। नौ वर्षो तक अनिद्रित होकर रातभर प्रतीक्षा करता रहा।

4. विदुर के वचन से मुझे यह विदित था कि पाँचो भाई सुरंग से निकलेंगे।

5. कैवर्त्त की बात सुनकर वे आनन्दित और परम सन्तुष्ट हुए।

6. नौका में बैठाकर हे स्वामी ! मैं तुम लोगों को शीघ्र ही पार करा दूँगा। इस जगह पर यातायात नहीं है।

7-8. नौका पर पहले देवी कुन्ती, फिर युधिष्ठिर, तीसरे वीर पार्थ, चौथे नकुल-सहदेव और सबसे पीछे भीमसेन बैठा।

9. भीमसेन का भार नौका न सह सकी। भड़भड़ करके नौका डूब गयी।

10. भीम शीघ्र ही नौका से कूद पड़ा। बायें हाथ पर नौका को ऊपर उठा लिया।

11. पानी निकालकर पुनः नौका पर बैठा। भीमसेन के भार को नौका सहज रूप से सह न सकी।

12. हाथ जोडकर नाविक कहता है कि हे भीमसेन ठाकुर! नौका के बड़े सिरे पर बैठो।

13. हम छः लोग छोटे सिरे की ओर बैठेंगे। देवी कुन्ती पुत्रों को लेकर छोटे सिरे पर बैठीं।

14. भीमसेन बडे सिर पर जाकर बैठा। महाभार के कारण नौका पीछे की ओर उलट पडी।

15. पुनः भीमसेन नाव से कूद पडा और हाथ से उसे सभाल लिया।

16. महा वर्षाकाल सावन के महीने में नदी भरी हुई है। दोनो किनारे दिखाई नही देते।

17. नदी अनेक ताड़ वृक्ष से गहरी है। स्थल नहीं मिलता। युधिष्ठिर देव मन में अत्यन्त व्याकुल होकर सोचते हैं।

18. सहदेव की मुख की ओर देखकर युधिष्ठिर पूछते हैं—हे भाई ! नाव भार नहीं सह सकती। कैसे पार होंगे ?

19. सहदेव ने कहा—भीमसेन को आज्ञा दीजिए कि वह नदी के भीतर दोनों गदा फेंक दे।

20. जल के भीतर वह पडी रहें। लौटने के समय उन्हें हम निकाल लेंगे।

21 22. एक तो बलवान है, दूसरे दोनों हाथों में पर्वत की तरह बावन-बावन भार की दो गदा हैं। सामान्य नाव उस भार को कैसे सह सकती है ? इस प्रकार की वृकोदर मूर्ति संसार में असम्भव है।

23. सहदेव के परामर्श के अनुसार युधिष्ठिर की आज्ञा से भीमसेन ने दोनों गदाएँ सुरनदी के भीतर छोड़ दीं।

24. छोटे सिरे पर पाँच लोग और बड़े सिरे पर वृकोदर बैठा। नाविक जोर से खेने लगा।

25. नदी में नाव के चलने से जल के उछाल की आवाज को सुनकर यम की तरह जल-प्रभा कुम्भीर बाहर आया।

26. पैंतीस ताड़ के बराबर गहरे जल को मुख फैलाकर कुम्भीर ने आन्दोलित किया।

27. भयंकर रूप में दो-दो करके चीत्कार करता है। उसके प्रताप से नौका उथल-पुथल हो जाती है।

28. युधिष्ठिर ने पूछा—यह क्या बात है ? हाथ जोड़कर कैवर्त्त कहता है—

29. स्वामी ! चार युग हुए, कुम्भीर यहीं रहता है। इसे जो मिलता है उसे आत्मसात् कर लेता है।

30. स्वामी ! नौ युग से यह पथ बन्द है। यह जल-प्रभासुर इसीलिए सूना है।

31. किसी एक को न पाने पर यह जल-आन्दोलित करके नौका को डुबो देगा और सभी को खा जायेगा।

32. युधिष्ठिर ने भीमसेन के मुख की ओर देखकर कहा—भाई ! इस समय दुर्गह कष्ट हम लोगों पर पड़ा।

33. तुम मेरे, पण्डित, दक्ष और प्रिय सहोदर हो। एक के लिए सब क्या मरेंगे ? एक को चुनो।

34-35. वृकोदर ने कहा कि हे देव ! सहदेव सबसे छोटा है। यह अज्ञान बालक है। यह कुछ नहीं बोलेगा। चौदह भुवन की बातें इसके गर्भ में रहती हैं। सब कुछ जानकर यह मूर्ख पापिष्ठ सहदेव कुछ नहीं बताता है।

36. मेरे विचार से तो सहदेव को ही दे देना चाहिए। हम सब भले पार हो जायें।

37. युधिष्ठिर ने कहा कि यह माता-पिता की मृत्यु के बाद पाण्डु के बीज से पैदा हुआ।

38. दुर्योधन पर-पुत्र कहकर हम लोगों को राज्य का भाग नहीं देगा। एकमात्र सहदेव ही राज्य पाने का कारण हो सकता है।

39. और विशेषता है कि भूत, भविष्यत, गत और आगत सब कुछ जानता है।

40. इस प्रकार के चतुर भाई को किस प्रकार दूँगा। राज्य चलाने के लिए यह मन्त्रणा दान में समर्थ होगा।

41. सहदेव को छोड़कर अन्य किसी को चुनो। भीमसेन ने हाथ जोड़कर कहा।

42. स्वामी ! नकुल अत्यन्त सुकुमार है। एक मक्खी बैठने पर शरीर पर सैकड़ों बार चन्दन-लेप करता है।

43. हंस के पर समान कोमल शय्या पर कपूर के छींटे कर सोने पर भी उसे नींद नहीं आती।

44. वन में हम लोग इतना द्रव्य कहाँ से पाएँगे ? यह सुख-भोग का बाट जोहता हुआ अवश्य ही वन मे मारा जायेगा।

45. हे स्वामी ! मेरी बात मानो तो नकुल को देकर चलें, पार हो जावें।

46. युधिष्ठिर भीमसेन की बात सुनकर विस्मित हो गए। कहा कि हे भाई ! सौतेले भाई को हम कैसे देंगे ?

47. हे भाई ! जिसका रक्षक आकाश में है, उसका नाश हम कैसे कर सकते हैं ?

48. अन्य किसी का नाम सोचकर बताओ। हाथ जोड़कर भीमसेन ने कहा।

49. स्वामी ! यह फाल्गुनी बड़ा ही पापिष्ठ और मूर्ख है। शरणार्थी शत्रु पर यह शस्त्र-प्रहार नहीं करता।

50. निश्चय ही दुर्योधन के साथ हमारा संग्राम होगा। रथहीन और शस्त्रहीन होते ही शत्रु को यह निश्चय ही छोड़ देगा।

51. इससे पापी और कोई नहीं है। शत्रु को यह सहोदर की तरह पालता है।

52. क्षत्रिय होकर दयाशील होने पर क्या राज्य प्राप्त होगा? इतने मन्द व्यक्ति का रहना ठीक नहीं है।

53. युद्ध के समय यह कलंकी न रहे। इसीलिए कुम्भीर दैत्य को खाने के लिए अर्जुन को दिया जाना चाहिए।

54. युधिष्ठिर ने अर्जुन को आलिंगन में लिया और कहा कि इसे जंघा पर बैठाकर नारायण ने इसका नाम कृष्ण दिया।

55. हे भाई ! उसका पिता स्वर्ग-देवों का अधिपति और अमरपुर नाथ मघवा हैं।

56. जब हम लोग अर्जुन को इसे देंगे तो इन्द्र और कृष्ण के क्रोध से कैसे बचेंगे ?

57. विद्या सिखाते समय द्रोण गुरु ने बताया कि अर्जुन त्रैलोक्य जीतने में समर्थ है।

58. इसको यत्नपूर्वक पालो। इसी के द्वारा निश्चय ही राज्य प्राप्त करोगे।

59. इस प्रकार द्रोणाचार्य ने मुझसे कहा। गुरु की बात का मैं कैसे उल्लंघन करूँगा ?

60. इसीलिए मैं अर्जुन को नहीं दे सकता हूँ। हे भाई ! इन तीनों के अतिरिक्त किसी अन्य को चुनो।

61. भीमसेन ने कहा—इन तीनों लोगों के न जाने पर तुम तो जाओगे नहीं और मैं तुम्हारे आदेश से जा नहीं सकता।

62. स्वामी ! कुन्ती वृद्धा माँ है। पाण्डु की कृपा से अनेक भोग किये हैं।

63. वन में इसको लेकर हम कैसे सुख पायेंगे ? अधिक उम्र होने के कारण वन में कष्ट पाकर यह मर जायेगी।

64. इसके रहते हम लोगों को मरना क्या उचित होगा ? कारण, पुत्र के अभाव से इसे बहुत दुःख होगा।

65. यह चल नहीं सकती, वरन् हम लोगों को विपत्ति में डालेगी। कुम्भीर दैत्य को कुन्ती दे दी जाय क्या ?

66. भीमसेन की बात से युधिष्ठिर व्याकुल हुए। हे भीम! मैंने जान लिया कि तुम बड़े मूर्ख हो।

67-68. हे भाई ! गर्भधारी माता ने हमारे मुख में दूध दिया। अपनी आत्मा से उत्पन्न करके हम लोगों को पाला। उसके रहते हुए हम लोगों का अत्यन्त धर्म होगा। हे भीम ! उसे कैसे दैत्य को देना चाहते हो ?

69. भीमसेन ने कहा, हम सभी सहोदर हैं। हम सभी भाइयों के एक ही माता-पिता हैं।

70. हम लोगों के अतिरिक्त इस नाविक को देकर हम लोग पार हो जायें।

71. भीमसेन की बात सुनकर, देव युधिष्ठिर दुःखी हुए। पुनः दूसरे क्षण हँस पड़े।

72. हे भाई ! हम लोगों के लिए नौ वर्ष तक अनिद्रित होकर यह निषाद बाट जोहता रहा।

73. गृहवास त्यागकर यह ताप, शीत और वर्षा में अन्धकाराच्छन्न घाट पर इन्तजार करता रहा।

74. हे भीम ! तुम पाप-पुण्य का कुछ विचार नहीं करते हो। वह जो उपकारी है, उसे मार्ग में मारते हो।

75-76. माता की ओर देखकर युधिष्ठिर ने कहा—हे माँ! तुम्हारे तीन पुत्र हैं। नकुल-सहदेव को छोड़कर अपने तीनों पुत्रों में से किसी एक को विचार करके दो।

77. कुन्ती ने कहा—भीम दुष्ट है। बुराई के अलावा इसका कोई काम नहीं है।

78. इसी के चलते हम लोगों से धृतराष्ट्र का मनमुटाव हुआ। गुरुजनों का गौरव नहीं मानता। यह सदा का दुष्ट है।

79. साठ पउटी (मन) परिमाण खाने पर इसको एक बार भी नहीं अटता है। पेट भरने पर यह महाकष्ट पाता है।

80. भिक्षा माँगने के लिए यह कभी भी नहीं जायेगा। इसकी आँख में अल्प सामान नहीं जँचेगा।

81. कोई व्यक्ति इसे यदि चले जाने के लिए कह देगा तो यह उसका छप्पर उखाड़कर सबको मार डालेगा।

82. इतना दुष्ट हम लोगों के साथ न रहे। अब भीम को दे दिया जाये। इसको जलप्रभा खा जाये।

83. युधिष्ठिर और माँ के ऐसा सोचते समय भीमसेन ने उनका विचार समझ लिया।

84. कहा कि तुम दोनों मुझे देने के लिए सोचते हो। मैंने तुम्हारे मन की बात जान ली।

85. युधिष्ठिर ने कहा—भाई ! तुम्हें कैसे दूँगा ? जलप्रभा मुझे खाये। मैं जल में कूदूँगा।

86. इन लोगों को साथ लेकर भाई तुम सुखपूर्वक भ्रमण करो। मैं जलप्रभा के मुख का आहार होऊँगा।

87. इतना कहकर, युधिष्ठिर के कूदने के समय भीमसेन ने कहा, हे स्वामी ! रुको-रुको।

88. तुम कैसे जाओगे ? मैं जाऊँगा और जलप्रभा के मुख का आहार बनूँगा।

89. मैं अपनी आँख से तुम्हारे जैसे भाई को कहाँ देखूँगा ? भीम की दोनों आँखों से झरझर आँसू बहने लगे।

90. भीम नदी में कूद पड़ा और जलप्रभा ने उसे निष्ठुर भाव से खींचकर दबाया।

91. कुम्भीर ने दोनों हाथों से पकड़कर उसे ऊपर को फेंक दिया। पतंग की तरह भीम उसके पेट में चला गया।

92. कुम्भीर का पेट पाताल के विवर की तरह लगता था। उसके पेट में पवन-तनय प्रविष्ट हैं।

93. इसके बाद नाव खेकर नाविक ले गया। चारों भाई और माँ नाव से किनारे उतरे।

94. युधिष्ठिर भीम को न देखकर अत्यन्त दुःखी हुए। उनकी दोनों आँखों से निरन्तर आँसू बहने लगे।

95. नकुल, सहदेव और अर्जुन विषण्ण होकर भूमि पर लोटने लगे।

96. अत्यन्त व्याकुल होकर युधिष्ठिर कहते हैं, अरे अरे ! मेरे बलवान भाई ! तुम कहाँ गये!

97. हे भीम ! तुम्हारे बिना मैं कहाँ जाऊँगा ? अब कौन मुझे राह दिखायेगा ?

98. मन्दाग्नि होने से जैसे मनुष्य निर्बल हो जाता है, उसी प्रकार कुम्भीर के सामने तुम निर्बल हो गये। अब मुझे जन्मान्ध की तरह दशों दिशाएँ अन्धकारमय दीखती है।

99 शत्रु तुम्हारा पराक्रम देखकर भयभीत था। तुम्हारे बिना मैं निःसहाय हो गया।

100. कुन्ती ने कहा, हे पुत्र ! क्यों इतना शोक करते हो ? रात बीतने पर सभी लोग जानेंगे।

101. खोये हुए व्यक्ति का बाट जोहते हुए क्या हम बैठे रहेंगे ?

102. मरा हुआ नहीं लौटता है। जला हुआ बीज कभी नहीं अंकुरित होता।

103 नरसिंह को याद करके देवी कुन्ती चारों पुत्रों का हाथ पकड़कर गहन वन में प्रविष्ट हुई।

104. इस घटना से भाई ओर मा के विचार जानने के लिए भीम कुम्भीर के उदर में चुपचाप बैठा रहा।

105. जब वे निराश होकर वन में चले गये, तब भीम ने कुम्भीर के पेट में भयानक रूप धारण किया।

106 महाबली ने वृकोदर रूप धारण किया। उसका शरीर नौ ताड़ के बराबर ऊंचा हुआ।

107 कुम्भीर का पेट पांच ताड़ के बराबर ऊँचा था। महाभार पाकर उसका पेट फट गया।

108. कुम्भीर को मारकर उसके चर्म को कवच की तरह कन्धे पर रखकर भीम जगन्नाथ को याद करते हुए बाहर आया।

109. नौका को लेकर नाविक लौट रहा था। उसे देखकर भीम ने क्रोध से एक थप्पड़ मारा।

110. तुम उन लोगों के विचार में सम्पृक्त थे। मुझे देने के लिए जब उन लोगों ने कहा, तो तुम उससे सहमत हुए।

111. क्रोध से आज मैं तुम्हारा मुण्ड तोड़ देता और तुम्हारी नाव को सौ खण्ड कर देता।

112. विदुर के कारण तुम्हारे प्राण बच गये। यह बात तुम किसी से न कहकर गुप्त रखोगे।

113. केवल तुम विदुर के सामने कहना। अन्य किसी के जानने पर तुम सपरिवार मरोगे।

114. भय से नाविक ने कहा, मेरे प्राण की रक्षा करो। मैं तुम्हारी शरण में हूँ।

115. मैं सत्य कहता हूँ। कभी किसी से नहीं कहूँगा। यह कहकर नौका खेकर चल दिया।

116. कुपित होकर वह घोर वन में दौड़ता है। उसके उद्दाम पदाघात से पृथ्वी काँप रही है।

117. युधिष्ठिर ने कहा, माँ हमारा मुण्ड अब गिरेगा। कोई राक्षस हम लोगों को देखकर पीछे से दौड़ा आ रहा है।

118. हे मेरे भाई ! मैं क्यों नहीं मरा ? तुम्हें मरवाकर मेरा सम्पूर्ण विनाश हुआ।

119. कुन्ती ने कहा, हे युधिष्ठिर ! तुम चिन्ता मत करो। यह दानव नहीं है। तुम्हारा भाई भीमसेन है।

120. युधिष्ठिर ने कहा, हे माँ। तुम इतनी निर्दयी हो। स्त्री होकर भी तुम्हारा हृदय पाषाण की तरह है।

121. गर्भधारी होकर तुमने पुत्र को मरवाया। तुम्हारा हृदय व्यथित नहीं हुआ ?

122. कुन्ती ने कहा, तुम कुछ भी भ्रान्ति न करो। कुम्भीर दैत्य को मारकर तुम्हारा भाई आ रहा है।

123. इस प्रकार युधिष्ठिर के विचार करते समय वीर भीम उनके सामने उपस्थित हुआ।

124. कुन्ती के चरणों में भीम ने प्रणाम किया। युधिष्ठिर ने भीम का आलिंगन किया।

125. हे भाई ! हम लोगों के देखते कुम्भीर ने तुम्हें निगला। हे भाई ! तुम कैसे बाहर निकले ?

126. भीमसेन ने कहा, देव ! मैं उसके उदर में था। उदर-विदीर्ण करके बाहर निकला।

127. भीम प्रसन्नतापूर्वक कहते हुए पवन-गति से चलने लगा।

128. एक कदम में सौ हाथ चल रहा है। उसके टकराने से वृक्ष और पर्वत चूर हो जाते हैं।

129. कुन्ती नहीं चल पा रही है। वह अलग होकर बैठ गयी। युधिष्ठिर ने कहा कि हे भीम ! रुको-रुको। माँ नहीं चल पा रही है।

130. भीमसेन ने कहा, माँ क्या कर रही हो ? दुर्योधन के

शिकारी बराबर घूम रहे हैं।

11 कुन्ती को भीम ने गोद में पकडा और हाथ से सिर पर बैठाया।

12 दाये कन्धे पर युधिष्ठिर, बाये कन्धे पर अर्जुन और दोनो काँख मे नकुल सहदेव को बैठाया।

13 पवन-वेग से भीम जा रहा है। एक घडी मे बीस योजन चला जाता है।

14 वन के जीव-जन्तु भय से भागने लगे। कौतूहल मे भीमसेन प्रसन्नतापूर्वक गेंडा और जगली भैसा को पकडता है।

15 वैवस्वत मनु ने अगस्त्य से पूछा—जातुगृह मे पुरोचन कहाँ गया ?

16 शबरणी के पाच पुत्रो का क्या हुआ हे तपस्वी ! मुझसे सक्षेप मे बताओ।

17 अगस्त्य ने उत्तर दिया—हे महामनु ! पवन तनय ने जातुगृह को जला दिया।

18 अग्नि के तेज मे जलकर पुरोचन परा मरा।

19 अचेतना शबरणी महानिद्रा मे सोते हुए पाचो पुत्रो के साथ उस रात दग्ध हुई।

20 शबरणी और उसके पाच पुत्रो के साथ पुरोचन पापी मारा गया।

21 ये सारा लोग अग्नि के प्रभाव से जातुगृह मे विनष्ट हुए।

शबरणी के पॉच पुत्रों का पूर्ववृत्तान्त

1 वैवस्वत मनु ने अगस्त्य से पूछा। हे कुम्भ ऋषि के पुत्र ! तुमने बडी दुर्लभ बात कही।

2 इन्होने पूर्व जन्म मे कौन से पाप किये थे जिससे बिना दोष और बिना कारण जल गये ?

3 हे पण्डित भिक्षु यती ! यह बताओ जिसे सुनकर मेरे मन की भ्रान्ति दूर हो।

4 अगस्त्य कहते हे—सावधान होकर सुनो। पूर्वकृत्य के कारण शबरणी के पॉचों पुत्र अग्नि मे जले।

5 विन्ध्यकल्प देश का भोजवंशी राजा गाधी था।

6 उस गाधी का नन्दन विश्वामित्र राजा अपने को इन्द्र समझता था।

7 समस्त दिशाओ मे प्रवेश करके दिग्विजय करता था। अनेक राक्षसो को आक्रमण करके मारता था।

8 उसके एक पद्म रथारोही, दो पद्म गजारोही, चार सागर अश्वारोही और सात अक्षौहिणी पदाति सेना थी।

9 इतने को लेकर राजा दिग्विजय करता था। वन-अरण्य मे खेदकर दैत्यों को मारता था।

10 मकर शुक्ल पक्ष नवमी तिथि को राजा विश्वामित्र ने दिग्विजय हेतु प्रस्थान किया।

11 अरण्य मे राजा दैत्यो को खेदता था। अन्न-जल के बिना स्नान करके दशमी-एकादशी को दौडाकर पकडता था।

12 तीन दिन उपवास करके दिग्भ्रमित होकर राजा वसिष्ठ के आश्रम मे पहुचा।

13 उसे देखकर वसिष्ठ ने अर्घ्य देकर अभ्यर्थना की। पूछा कि हे महाराजा ! अत्यन्त श्रान्त होकर कहाँ थे ?

14 राजा ने कहा कि असुरो के उपद्रव के कारण वनवास करके मैने अनेक असुर और पिशाचो को मारा।

15 अशक्त होकर सैन्यदल नही चल सकता। तीन दिन से अन्न-जल नही मिला।

16 वसिष्ठ ने कहा हे विश्वामित्र राजा ! सुनो। मेरे पास कुछ भात पत्ते मे बाधकर रखा है।

17 हे राजा ! तुम चार चावल खाकर जाओ। विश्वामित्र ने कहा कि मै तो सात अक्षौहिणी सेना के साथ हू।

18 वसिष्ठ ने कहा, हे विश्वामित्र ! सेना को लेकर भोजन पर बैठो जितना चावल है उसे सभी बाटकर खाओ।

19 शालपत्र नीचे बिछाने के लिए वसिष्ठ ने कहा। सब लोग एक-एक दोना बना ले।

20 सुमन्त्र से कहा तुम गाय को दुहो। तरकारी नही है। इसलिए दोने मे दूध दिया जायेगा।

21 वसिष्ठ की पत्नी अरुन्धती ने एक हाँडी मे चावल पकाया।

22 विश्वामित्र सात अक्षौहिणी सेना को लेकर तीन योजन तक बैठे।

23 अरुन्धती सब कुछ लाकर ढालती है और वसिष्ठ के पचास हजार शिष्य उसे ले जाकर परोसते है।

24 एक हाडी भात और एक गाय के दूध मे जिसको

जितनी इच्छा थी, उतना खाया।

25. दोपहर में राजा ने भोजन किया। सूर्यास्त होने पर भोजन समाप्त हुआ।

26. सभी सेना भोजन करके तृप्त हुई। आचमन समाप्त करके नरपति आसन पर बैठे।

27 विश्वामित्र ने कहा, हे मुनि ! यह आश्चर्यजनक बात देखकर मुझे सन्देह हुआ।

28 एक गाय का दूध और एक हांडी का भात मेरी बलवान सात अक्षौहिणी सेना को अट गया।

29 वसिष्ठ का उत्तर सुनकर विश्वामित्र राजा ने पूछा, और भी भात बचा है ?

30-31 विश्वामित्र ने कहा, हे तपोनिष्ठ ! मुझे अपनी गाय दे दो। मैं तुमको एक हजार गाय दूंगा। वसिष्ठ ने कहा, इस भगवती की रक्षा के लिए मेरे पास आदमी कहां है

32 एक ही कामधेनु है। चार स्थान पर एक मन्वन्तर तक दुही जा सकती है।

33 तुम महागर्वित और ज्ञानी राजा हो। ब्राह्मण की गाय तुम कैसे छीनोगे ?

34-35 विश्वामित्र सुनकर चुप हो गये, किन्तु दुष्ट जनों ने राजा को बताया। चलो हम लोग वन में छिप जाएं। रात के समय गाय हांककर ले जायेंगे।

36 दुष्टजनों की बात सुनकर विश्वामित्र ने कहा, मैं यहां ऋषि के साथ बातचीत कर रहा हूं और तुम लोग उधर गाय को हांक ले जाओ।

37 राजा की आज्ञा से दुष्ट और जाकर [illegible] नदी के किनारे गाय से मिले।

38 इन महारथियों ने हांकने के लिए जैसे ही विचार किया, वैसे ही जगतमाता ने इन दुष्टों को देखकर क्रोध किया।

39 उस देवी गाय ने क्रोध में खुर जमीन खोदते हुए लात मारी। यह देखकर [illegible] ने हाथ में लाठी पकड़ ली।

40 गोमाता ने यह देखकर आग से प्रहार किया जिससे अश्व और योद्धा घायल होकर नदी में भागने लगे।

41 जो हजार योद्धा गाय को घेरे हुए थे, उनको क्रोध से महादेवी ने दौड़ाकर मारा।

42 ऋषि ने जब माँगने पर गाय नहीं दी तो विश्वामित्र ने सेना लेकर आक्रमण किया।

43 देखा कि सभी योद्धा धराशायी हो गये हैं। गो-माता सुखपूर्वक नदी में जल पी रही हैं।

44 विश्वामित्र ने उसे देखकर सैनिकों को इसे हाँकने का आदेश दिया।

45 राजा की आज्ञा से महा बलशाली अश्वारोही और गजारोही योद्धा दौड़ पड़े।

46 लाख परिधि में उन लोगों ने गाय को घेर लिया। सेना को देखकर गो-माता का क्रोध बढ़ा।

47 उसके दोनों सींग परशु और तीक्ष्ण कटारी हो गयीं। उसका निःश्वास उनचास पवन होकर बहने लगा।

48 उसके पैर तीक्ष्ण असि हो गये। पीठ पर चर्म वज्र-कवच की तरह हो गया।

49 रोम अति तीक्ष्ण बाण हो गये। झाड़ते ही सेना के शरीर पर बरस पड़े।

50 आहत होकर सैन्यदल निस्तेज होकर गिर पड़े। मानो यम देवता ने सब लोगों की जीवन कुण्डली को फाड़ दिया।

51 पूरी सेना ने चेतना पाकर क्रोध से धनुष और बाण लेकर प्रहार किया।

52 बाण गाय के वज्र कवच जैसे शरीर पर पड़कर उछल जाते हैं।

53 अति क्रोध से देवी ने निःश्वास छोड़ा। उससे विश्वामित्र की सेना काफी दूर उड़कर गिर पड़ी।

54 उनचास मूर्ति से पवन बहने लगा। पता नहीं कौन कहां पृथ्वी पर जा गिरा ?

55 विश्वामित्र की सात अक्षौहिणी सेना एक ही गो-माता के क्रोध से विनष्ट हुई।

56 सेना विरहित होकर राजा तेरह लोगों के साथ भारद्वाज आश्रम में प्रविष्ट हुआ।

57 भारद्वाज ने पूछा, हे विश्वामित्र ! तुम्हारी सेना कहाँ है? सैन्यरहित होकर हे राजा ! तुम तो राजा जैसे नहीं दिखाई देते हो।

58. हे राजा ! किसके साथ तुम्हारा संघर्ष हुआ। तुम तो सारे भुवन का दमन कर सकते हो।

59 विश्वामित्र ने वसिष्ठ की बात कही। लोभ से मैं

उनकी गोमाता को छीनकर ले आ रहा था।

60 अनेक राजाओं को मैने युद्द मे जीता था किन्तु गो-माता ने मेरी सारी सेना को मार डाला।

61 हे महाज्ञानी मेरा राज-बल कुछ नहीं है। केवल धर्म-बल ही अपार बल है।

62 मेरा राज जल जावे। उससे मेरा प्रयोजन नहीं। यह कहकर उसने राज्य की लालसा छोड दी।

वसिष्ठ का अष्ट वसुओं के प्रति अभिशाप

1 सब कुछ छोडकर राजा ने तप की इच्छा की। राजा ने धर्म मे प्रवेश करके देव-पद की अभिलाषा की।

2 विश्वामित्र घोर तपस्या मे बैठे। शून्य भेद करके शब्द चिन्तन मे तल्लीन हुए।

3 नौ हजार वर्ष तक लगातार चूर्ण खाते रहे। शून्य पुरुष ने आकर दर्शन दिया।

4 विश्वामित्र ने [illegible] वसिष्ठ की कामधेनु गाय लाकर भेज [illegible]।

5 राजा [illegible] की बात सुनकर [illegible] पहुंच और वसिष्ठ की गाय को देखा।

6 निशाकर [illegible] चोर की तरह प्रविष्ट हुआ। [illegible] मे गाय को [illegible]।

7 गाय को हांककर वन मे ले गया। [illegible] ने घर मे गाय को नहीं देखा।

8 [illegible] के लिए [illegible] और [illegible] देखा कि गाय नहीं है।

9 [illegible] अष्टवसुओं ने [illegible]।

10 अष्टवसुओं ने महामन्त्र पढकर धूल फेंकी। गाय अपने आप पीछे-पीछे चलने लगी।

11 गाय को ले जाकर द्रुमन पर्वत पर बाँध दिया। एक गेंडा को मारकर आनन्दपूर्वक खाया।

12. गाय को वसिष्ठ ऋषि खोजते-खोजते द्रुमन पर्वत पर उससे मिले।

13 दौडकर ब्रह्मचारी ने पास पहुंचकर आश्वासनपूर्वक गाय को सहलाया और रस्सी को खोला।

14 पर्वत के ऊपर से दौडकर ऊमावसु आया। वसिष्ठ के ऊपर यष्टि और परशु से आघात किया।

15 लाठी के आघात से महाव्यथा पाकर मुनि ने क्रोध से कहा, तुम नपुसक हो जाओ।

16 तुम मर्त्य लोक मे गगा के पेट से पैदा हो और अपुत्रिक होकर महाभारत मे निहत हो।

17 विषम शाप पाकर ऊमावसु चला गया। अन्त मे गगा पुत्र भीष्म हुआ।

18 19 वसिष्ठ गाय को हांककर ले जा रहे है। अनिल वसु ने दौडकर वसिष्ठ को लाठी घुमाकर मारा। वशिष्ठ ने कहा कि तुम अन्धे हो जाओ।

20 उस महात्मा का अभिशाप मिट न सका। अनिल वसु तत्क्षण अन्धा हो गया।

21 अनिल वसु ने वसिष्ठ से कहा, विश्वामित्र की आज्ञा से हम लोगों को दारुण कष्ट मिला।

22 मेरी कष्ट-मुक्ति का उपाय बताओ। वसिष्ठ ने कहा— तुम इसी वन मे पड़े रहो।

23 द्वापर युग मे इस वन मे धर्म युधिष्ठिर आयेंगे। उनको देखकर तुम्हारा अन्ध पटल खुल जायेगा।

24 प्रभास वसु अपरिमित क्रोध से गाय ले जाते हुए वसिष्ठ की ओर दौड़ा।

25 गाय को पकड़कर वसिष्ठ को ढकेल दिया और गाली देते हुए वसिष्ठ को डण्डे से पीटा।

26 क्रोध से मुनि विप्र ने उसे शाप दिया। कहा कि तुम परोपकारी होकर जन्म[illegible] मे [illegible] हो।

27 पुन गाय लेकर तपोधन को जाते देख और पाँचों वसु [illegible] होकर दौड़े।

28 एक-एक लाठी लेकर क्रोध मे वसिष्ठ के ऊपर घुमाकर प्रहार किया।

29 वसिष्ठ मुह के बल भूमि पर गिर पड़े। वसिष्ठ पच वसु गाय लेकर जा रहे हैं।

30 सचेष्ट होकर वसिष्ठ ने क्रोध से वसुओं को शाप दिया—

31 तुम पांचो गगा के पुत्र होओ और जन्म के दिन ही तुम्हारा शिरच्छेद हो।

32 शाप देते ही पच वसु दूर हट गये। कहा—हे वसिष्ठ। न जानते हुए तुम्हारी गाय की चोरी की।

33 माता के हाथ से हम लोगों का शिरच्छेद होगा।

हे तपस्वी ! हमारे मुक्ति का उपाय बताओ।

34. वसिष्ठ ने कहा, तुम लोगों ने मेरी गाय को चुराया। दो जन्म में तुम्हारी मुक्ति होगी।

35. बाल्यकाल में गंगा के हाथ से शिरच्छेद होगा। पुनः शबरणी की गोद में जन्म लोगे।

36. अज किरात तुम्हारा बाप होगा और उसके ऊपर निर्घात वज्र पड़ेगा।

37. तुम्हारी माँ तुम लोगों को लेकर भागेगी और वारुणावन्त के जातुगृह में आश्रय लेगी।

38. उसी रात को जातुगृह जलेगा और तुम पाँचों भाई भी जल जाओगे।

39. अरे अष्ट वसुओ ! तुम लोगों ने मेरी गाय चुराई। इसलिए चारों युगों तक तुम लोगों का नाम गायचोर रहे।

40 अगस्त्य कहते हैं, हे महाधार्मिक मनु ! अनेक कथायें हैं, कहने से समाप्त नहीं होंगी।

41. वसिष्ठ के शाप से अष्ट वसुओं में से छः वसुओं ने अपने शरीर को भस्म किया।

42-43 शुद्धांग, साध्यांग, भिज्ञ, भाग्यवत, सर्वज्ञ, प्राज्ञ इन छः वसुओं में से पाँच शबरणी के पुत्र और प्राज्ञ प्रत्येक वसु पुरोचन पण्डा के रूप में दग्ध हुआ।

44. अनिल वसु अन्धा होकर वन में पड़ा है, जो युधिष्ठिर के दर्शन से मुक्त होगा।

45. उमा वसु महा तेजस्वी गंगापुत्र भीष्म के रूप में युधिष्ठिर के लिए महाभारत युद्ध में शरशय्या ग्रहण करेगा।

46. ये अष्टवसु गौ चोर हैं। ये पाण्डवों के लिए शरीर का ध्वंस करेंगे।

47. वसिष्ठ के शाप से ये मुक्त हुए। युधिष्ठिर के कार्य से इनका कल्याण होगा।

48. मनु कल्पराजा सुनकर प्रसन्न हुए। अगस्त्य के चरणों में अर्घ्य देकर पूजा की।

49. हे परम पण्डित अगस्त्य ! तुम साधु महात्मा हो। महाभारत का अमृत-रस सुनकर मैंने परमगति प्राप्त की।

50. मनु ने कहा—ये सभी दग्ध हुए। गुप्त रूप से पाण्डव गहन वन में गये।

51. कुरुपति ने यह समाचार पाया तो सभा में क्या-क्या कहा ? हे यती ! मुझे बताओ।

पाण्डवों की मृत्यु सुनकर धृतराष्ट्र का शोक और प्रेत-क्रिया साधन

1-2. कुम्भ ऋषि के पुत्र अगस्त्य कहते हैं—हे वैवस्वत मनु ! कलिकाल के ध्वंस के लिए निशाकाल में जातुगृह दग्ध हुआ। शस्त्र-निर्माण-शाला के लोग भाग गये।

3. समारोहपूर्वक कुरुपति अपने सिंहासन पर बैठे हैं। हाथ जोड़कर चर समाचार देते हैं।

4. हे स्वामी ! पाण्डव जातुगृह में थे। आज रात में वे सभी जल गये।

5. पुरोचन पण्डा उनके साथ-साथ था। वह भी जल गया।

6. ऐसी बात सुनकर मानचक्रवर्ती राजा कुरुपति मूर्च्छित होकर गिर पड़ा।

7. दुःशासन से लेकर दुर्जय तक सौ भाई अस्त्र-शस्त्र फेंक कर मूर्च्छित हो गये।

8. भूरिश्रवा, भीष्म, महारथी शल्य, कृप, शकुनि, संजय सभी ने सुना।

9. भीतर धृतराष्ट्र समाचार पाकर वज्राहत की तरह अचेत हो गये।

10. अपने सम्मान और सम्मान बोध से विरहित होकर राजा निश्चल और अचेत हो गये। ऐसा लगता था मानो उनका प्राण चला गया हो।

11. स्वामी को गान्धारी ने गोद में पकड़ा। दासी ने मुख पर पानी छिड़का।

12 मन्त्रिवर संजय ने उनको गोद में पकड़ा। कुरुराज को चेतना नहीं है। केश और वस्त्र अस्त-व्यस्त हो गये हैं।

13. हाय ! हाय ! पुत्र कहकर धृतराष्ट्र रोता है। इसी अवस्था में ब्रह्मा ने मुझे पुत्र-शोक दिया।

14. पाण्डु के न रहने पर मैंने पुत्रों का पालन-पोषण किया। यहाँ संघर्ष और कलह होगा, मानकर मैंने उन्हें अन्य स्थान पर रख दिया था।

15-18. हे बेटे युधिष्ठिर ! तुम जगत मोहन, जगत, तारन,

अनाथबन्धु और दुःखियों के साथी, अजातशत्रु, सर्वज्ञ ओर धर्मनिष्ठ थे। हे मेर बेटे ! अर्जुन और भीम तुम लोग बलवान, शक्तिशाली, धार्मिक, बुद्धिमान, परोपकारी, अभयदाता, रणजीत, अनाथनाथ, और अन्धे की लकडी थे। मैं तो जन्मान्ध था ही, दूसरे यह दुगुना दु ख प्राप्त हुआ।

19 हे बेटा ! पाण्डवासुर को मारकर तुमने कुरुवश का उद्धार किया। इसीलिए त्रिदश देवताओं ने तुम्हे पाण्डव नाम दिया।

20 हाय ! हाय ! बेटे ! तुम लोगो ने मेरी क्या दशा कर दी ? गम्भीर समुद्र मे मेरी नौका डुबो दी।

21 मेरे प्राण के पचभूत की तरह मेरे दुःख के साथी मेरे पाचो बेटे ! यदि मै तुम्हारे दु ख को स्वय धारण कर सकता !

22 तुम लोगो को देवताओ ने जन्म दिया था। किस पाप पाप से मेरा इतना बडा धर्म नष्ट हो गया।

23 हे मेरे बेटे फाल्गुनी अर्जुन ! कृष्ण ने तुम्हे अपनी गोद मे लेकर द्वितीय कृष्ण नाम दिया था।

24 बेटा ! मै कैसा हीन जीव हूँ कि मेरे ऊपर दु ख के ऊपर दु ख पड रहा है। मै चाण्डाल किनका मुँह देखकर बचूँगा ?

25 हे पुत्रो ! बचपन छोडकर तुम लोग युवक हुए थे। अब दोनो कुलो को डुबोकर कहा चले गये ?

26 धृतराष्ट्र की पटरानी गान्धारी रोती है। वज्राहत की तरह देवी भूमि पर गिर पडती है।

27 वज्राघात से मेरा शरीर विदीर्ण हो रहा है। इस शरीर को मै केसे धारणा कर सकती हूँ ? यह मेरा शरीर जल जाय।

28 किसी के दुःख को न देखने के लिए ही अन्ध-पटल बाँधी थी, किन्तु मेरा कष्ट के ऊपर कष्ट नही गया।

29 हे ! हे ! मेरे बेटे नकुल, सहदेव ! तुम लोग सुलक्षण, सुबुद्धि और अमृतरम-भाव-पूर्ण थे।

30 हे बेटे ! चलते समय मेरी पंचकटक पुरी ,शोभायमान होती थी। सिंहासन ऐसे शोभायमान होता था, मानो विष्णु विराजमान हो।

31 हे बेटे ! विपत्ति के डर से तुम लोगों को छिपाया था किन्तु मेरी हीन बुद्धि से तुम लोगों का सम्पूर्ण विनाश हुआ।

32. हे बेटे ! तुम लोगों के आगे हम लोगों को मरना चाहिए था। मेरे प्राण कितने निर्लज्ज हैं कि पुत्र-शोक से भी नहीं निकलते।

33 माता-पिता के रहते ही पुत्रों का विनाश हुआ। हे देव पुरुष ! यह कैसा विधान है ?

34 हे कुन्ती ! तुम मेरे प्राण की सखी थीं। तुम अपने पुत्रों से अधिक मेरे पुत्रों को मानती थीं।

35 हम लोग तो अन्धा-अन्धी होकर बैठे। तुम्हीं इस पचकटक की साम्राज्ञी थी।

36 अपनी इतनी सम्पदा किसे समर्पित कर दी ? तुम कर्म की विपत्ति रेखा को मिटा न सकी।

37 टटोलते हुए अन्धी बाहर आती है और सोचती है कि इस अगाध जल मे अपन को डुबो दे।

38 कौन मुझे जातुगृह का रास्ता दिखाकर वहाँ ले जायेगा? अन्धा-अन्धी दोनों बेटो के साथ जल मरते।

39 दुर्योधन ने कहा कि दुःख से पागल मत हो। दग्ध शरीर खोजने से कहाँ मिलेगा ?

40 41 हे पिता ! तुम उनके गुण जानते हो। पाण्डव दैत्य ने हम लोगो को मारा। सब लोगों को खाने के लिए नदी मे घुसकर स्नान कर रहा था। इसी समय कुन्ती पुत्र वहाँ पहुँचे।

42 हे पिता ! मैने उन लोगो के साथ अनेक पाप किये है। उस बात को स्वीकार न करने पर शरीर को बहुत कष्ट होगा।

43 युद्ध मे पाण्डवासुर को मारा और अमृत देकर हम लोगो को जिलाया।

44 जो व्यक्ति किये हुए उपकार को नही याद करता, वह नरक का भागीदार होता है।

45 मेर सहोदर मेरे ऐसे हितैषी थे। हे पिता ! उनकी मृत्यु के पाप का फल मेरे ऊपर पड़ा।

46. जराशवर ने हम लोगों को बचपन में मारा। द्रोणाचार्य के रहते ही उन लोगों ने मेरा उद्धार किया।

47. ये बाते कह-कहकर दुर्योधन भूमि पर लोट गया। धृतराष्ट्र और दुर्योधन दुःख से नीचे छटपटाकर लोटते हैं।

48. सौ भाइयों का दुःख क्या कहा जा सकता है। मानो

सभी के शरीर पर निर्घात वाण पड़ रहा हो।

49. पाण्डवों के बिना मेरे जीवन का क्या अर्थ है ? यदि कोई विष ला दे तो मैं इसी समय खा लूँगा।

50. अर्जुन का कष्ट देखकर मेरा शरीर गल जाय। तुम्हारे बिना हे भाई ! मैं निराश्रित हुआ।

51. दशों दिशाओं में अन्धकार व्याप्त हुआ। मानो शरद चन्द्रमा को राहु ने ग्रस लिया हो।

52. दुर्योधन गिर और छाती को पत्थर पर मारने लगा। गंगापुत्र भीष्म ने उसे गोद में पकड़ लिया।

53 भूरिश्रवा दुःशासन को और संजय धृतराष्ट्र को पकड़े हुए हैं।

54 राधा गान्धारसन दुहिता को पकड़े हुए हैं।

55 प्रशान्तचित्त विदुर महात्मा कहते हैं—हे दुर्योधन ! बिना कारण तुम दुःखी मन हो।

56. तुम्हारे दुःखी होने से मेरा शरीर इसे सह नहीं सकता। पाण्डव तुम्हारे विनष्ट होने से क्या लौट आयेंगे ?

57. क्या पाण्डवों के लिए सभी मरेंगे ? यदि किसी में सामर्थ्य होता तो युधिष्ठिर को जिलाकर ले आता।

58 सभी मिलकर अपार दुःख करते हैं। असंख्य लोगों की क्रन्दन-ध्वनि से ब्रह्माण्ड उछल पड़ता है।

59. चरों ने समस्त राज्य में सूचना दी कि वारणावन्त के जातुगृह में पाण्डव दग्ध हुए।

60. द्रोणाचार्य त्रिपुरान्तक पर्वत पर थे। तप-धर्म की उपेक्षा करके तीव्र गति से आ रहे हैं।

61 हस्तिनापुर में प्रविष्ट होकर भारद्वाज के पुत्र विदुर से पूछते हैं।

62 सभी की दोनों आँखें आँसुओं के कारण अन्धी हो गया है। द्रोणाचार्य गुरु को कोई नहीं पहचान सका।

63. द्रोणाचार्य विदुर से एकान्त में पूछते हैं कि तुम्हारे रहते पाण्डवों का कैसे नाश हुआ ?

64. विदुर ने कहा, जब भीम और दुःशासन में अप्रेम हुआ। पुत्रों को लेकर देवी कुन्ती चलीं गयीं।

65. वारुणावन्त में आनन्दपूर्वक रहने लगे किन्तु दुर्भाग्य-वशात् विपत्ति पड़ी।

66. विदुर के निराश वचन सुनकर द्रोणाचार्य अर्जुन को याद करते हुए शरीर को व्यर्थ समझने लगे।

67. दौड़कर अश्वत्थामा ने पकड़ा और कहा हे पिता ! तुम आत्मविस्मृत न हो।

68. विदुर ने कहा कि सभी स्थिर होकर रहो। कोई पाण्डित्यपूर्ण बात नहीं कर रहा है।

69. संसार से भागने वालों के लिए विकल होने की क्या आवश्यकता ? दूत भेजा जा सकता है या स्वयं खोजा जा सकता है ?

70. जो लोग प्राण छोड़कर शव होकर पड़े हैं, दिव्य औषधि लाकर क्या उनका उपचार किया जा सकता है?

71. सबके शरीर को अग्नि ने दग्ध किया। काल प्राप्त होने के कारण काया भस्म हुई।

72. दहन-पान पुरुष अग्नि ने उन्हें स्वयं आहार बनाया। इसलिए दुःख करने की क्या आवश्यकता है ?

73. हे करुनाथ ! शोक छोड़ो। मैं तुम्हें क्या समझाऊँ तुम क्या कोई मूर्ख हो ?

74 दुःख, मोह और चिन्ता हे बेटा ! छोड़ो। क्या संसार रुक जायेगा या चलता रहेगा ?

75 काल नामक जो पुरुष है वह निर्दयी और निरपेक्ष है। उस पर किसी का बस नहीं होता।

76 उसे जानने के लिए यहाँ कौन समर्थ है ? क्या विश्वामित्र ने विशाल राज्य और सिंहासन छोड़ा ?

77. उस सुखयोगी ने सारा सुख छोड़ दिया। संसार का सारा जंजाल छोड़कर वे योगी हो गये।

78. सहोदर के निधन से अत्यन्त कष्ट हो रहा है। यहाँ कौन अमर है ? हम सभी लोग कल मरेंगे।

79. ओह ! पाण्डव बड़े भाग्यवान और पुण्य शरीर थे। किसी का दुःख न देखने के लिए पहले ही धर्मपथ पर चले गये।

80. कोई आगे और कोई पीछे जाता है। जाने वाले गति के सामने क्यों अवरोध खड़ा करते हो ?

81 पहले दुःख छोड़कर दृढ़ होओ। परलोकगामी लोगों के लिए इतना दुःख करना उचित नहीं है।

82. हरि और बलराम रैवत पर्वत पर विराजमान हैं। इन्द्र-उत्सव के लिए सभी यादव वहाँ व्यवस्था कर रहे हैं।

83. इसी समय चर गण मिले। उग्रसेन के स्थान पर समाचार दिया।

84. कुन्ती सहित पाँचों पाण्डव जातुगृह में रह रहे थे। वहीं सभी दग्ध हुए।

85. दूत से ऐसी वार्ता सुनकर उग्रसेन ने देव चक्रपाणि को बताया।

86 देव ने यह विपरीत वार्ता सुनी कि जातुगृह मे कुन्ती और पाण्डवों का विनाश हुआ।

87 सुनकर चक्रपाणि चकित हुए। छद्म रूप में भूमि पर लोटकर रोने लगे।

88 जब श्री पुरुषोत्तम अपार दुःख करने लगे तब बलराम उस नारायण को शान्त कराने लगे।

89 बलराम और वासुदेव अत्यन्त व्याकुल है। पुनः-पुनः देवराम पाल निश्चेष्ट होते हैं।

90 हाय ! हाय ! युधिष्ठिर ! बिना दोष के ही तुम भाग्य की बिडम्बना से विनष्ट हुए। ऐसा बलराम ने कहा।

91 सभी पाण्डव जब विनाश को प्राप्त हुए तो निश्चय ही धृतराष्ट्र कष्ट पायेगे।

92 बलराम कृष्ण से कहते है कि धृतराष्ट्र के पास दर्शन के लिए जाना चाहिए क्या ?

93 दारुक और सात्यकि को बुलाकर देवराज ने तालध्वज और नन्दीघोष रथ को सुसज्जित करने के लिए आदेश दिया।

94 नारायण की आज्ञा से दोनो सारथी अनेक रत्न रथ पर मण्डित करते हैं।

95 दारुक तालध्वज रथ को एक लाख स्वर्णमण्डित श्वेत चाबर से सुसज्जित करता है।

96 दाडिम पताका चारो ओर विलम्बित है। सा-सा माणिक्य और मोतियो की मालायें लटक रही हैं।

97 नेत, पताका और चिराल हवा में उड़ रहे हैं। चारो कोनों में रत्नखचित साडियाँ अवलम्बित हैं।

98. अष्ट रत्नों से विमण्डित सुवर्ण दण्ड उठे हुए हैं। वैदूर्य और नीलमणि से चारो दिशायें झलमला रही हैं।

99. हजार-हजार झीने वस्त्र हीरा और कनक से जड़ित हैं। पाँच-पाँच लडियों में गजमुक्ता की मालायें लटक रही हैं।

100. उसके साथ मर्कत मणि पंक्ति-पंक्ति में लगी हुई है। रत्नपट्टी के ऊपर माणिक्य का दर्पण जड़ित है।

101 सौ मुक्ता के बीच माणिक्य का पुंज लगाया गया है। मानो यह प्रभातकालीन तरुण सूर्य के तेज को मलिन कर रहा है।

102. रथ के चारों ओर सोने के घंटे हैं। उनकी ध्वनि से रत्न का शिखर आन्दोलित होता है।

103 रत्नखचित साड़ी के ऊपर शुक्ल और रत्नवर्ण रेशम-वस्त्र लगाया गया है। गजबन्धों को ऊपर से स्थापित किया गया है।

104. तालध्वज रथ पर दस हजार-सुवर्ण मालायें आलम्बित हैं। यह अमर-सभागृह की तरह लगता है।

105. रथ के चारो पीठों पर हीराखचित सुवर्ण का बाण खचित है। इनके हीरे प्रभातकालीन सूर्य की तरह झलमला रहे हैं।

106 तालध्वज रथ की ऐसी शोभा इन्द्र की आभा की तरह दिखाई देती है। ऐसा लगता है कि यह कुबेर का भुवन है।

107 श्वेत, अनन्त, गोक्षुर और शार्दूल नामक कल्पिक जातीय महावेगवान घोड़े योजित है।

108 एक ही निमिष में तीनों लोकों को पार कर सकते हैं। ये कामरूपी अश्व महायज्ञ से सम्भूत हैं।

109 उनके पास पवन से भी वेगवान सौ-सौ चोखार घोड़े योजित है।

110 इन अश्वों को लेकर दारुक सारथी ने रथ मे योजित किया। बाज पक्षी की तरह ये वेग से गगन-मार्ग में दौड रहे हैं।

111 तालध्वज रथ पर बलराम बैठे हैं। उनके श्री भुज में सुनन्द मूसल विराजमान है।

112 शिर पर सप्त फणधारी भुजंग मुकुट शोभायमान है। वे रेवतीवल्लभ हलधर अपनी प्रतिज्ञा में समर्थ हैं।

113. शिर पर मागटीका, कटि में करधनी है। ये लोहित वर्ण नेत्र वाले स्वामी नीलवस्त्र परिहित है।

114 भुजंगमण्डित स्वामी शुभ अनुकूल योग में यात्रा आरम्भ की।

115. दारुक द्वारा मण्डित रथ पर अनेक शृंगारपूर्वक श्रीकृष्ण विराजमान हुए।

116. श्वेत, गोक्षुर, शंख और कामपाल नामक जल और अग्नि को अतिक्रमण करने वाले घोड़े योजित हैं।

117. अत्यन्त हर्षित जगमोहन स्वामी के श्रीभुज में शंख,

चक्र, सारंग धनु और कौमुदी गदा विराजमान है।

118. घोड़े पवन की भाँति वेग से दौड़ते हैं। यह देखकर सूर्य अत्यन्त आनन्दित हुए।

119. दोनों सारथी रथ को हाँकते हैं। हस्तिनापुर में कृष्ण और बलराम उपस्थित हुए।

120. वहाँ अमंगल-भुवन श्रीहीन दिखाई दे रहा है। कुरुवीर युद्ध-क्षेत्र में आहत सैन्य दल की तरह छिन्न-भिन्न पड़े हैं।

121. श्रीखण्ड चन्दन लेपित मानगोविन्द का शरीर महादुःख से धूलधूसरित दिखाई दे रहा है।

122. संजय ने कहा—हे धृतराष्ट्र ! आपके सामने राम और कृष्ण उपस्थित हैं।

124. धृतराष्ट्र शोकपूर्ण होकर कहता है—हे स्वामी ! विधाता ने मुझे ऐसी विपत्ति दी।

125-126. भीम और दुःशासन जब आपस में विरोधी हुए तब मैंने एकान्त में युधिष्ठिर को बुलाकर परामर्श दिया कि एक जगह रहने पर संघर्ष होगा। अतः भाइयों को लेकर वारुणावन्त में रहो।

127. गुरुजनों की बात का उल्लंघन न करके युधिष्ठिर आदि मेरे पाँच पुत्र वरुणावन्त में रहने लगे।

128-129. हे देव ! गत रात्रि मुझ पर विपत्ति पड़ी। शस्त्र-निर्माण शाला से अग्नि पड़ने के कारण भवन दग्ध हुआ जिससे कुन्ती सहित मेरे पाँचों पुत्रों का विनाश हुआ।

130. विनाश-काल में विपरीत बुद्धि होती है। विपत्तिपूर्ण कर्म के कारण मुझ अन्धे को एक और दुःख प्राप्त हुआ।

131. कहते-कहते धृतराष्ट्र मूर्च्छित हुए। उनको जगन्नाथ ने पकड़ लिया।

132. हे जगजन-बन्धु, जगजन-हितकारी ! किस पाप से मुझ पर इतनी विपत्ति पड़ी !

133. बलराम की ओर देखकर निस्तेज दुर्योधन कहता है कि हे स्वामी ! मैं सहोदर की रक्षा न कर सका।

134. श्री हरि ने कहा—हे कुरुपति ! दुर्भाग्यवशात् तुमने इस प्रकार किया।

135. बलराम ने पूछा कि पाण्डव कहाँ दग्ध हुए ? चलो देखा जाय।

136. राम की बात से कुरुसेना तैयार हुई। अत्यन्त कोलाहल मच गया।

137. जातुगृह देखने के लिए सेना जा रही है। अग्नि महातेज से प्रज्वलित हो रही है।

138. विदुर से एकान्त में जनार्दन पूछते हैं कि पाण्डवों की घटना का सत्य क्या है ?

139. विदुर ने कहा—देव ! वे पार होकर अरण्य में प्रविष्ट हो गये हैं। इन सबको ज्ञात नहीं है।

140. हे नाथ नारायण ! तुमने अनुचित कार्य किया। जातुगृह दिखाने के लिए इन लोगों को यहाँ क्यों लाये?

141. यहाँ शवरणी और उसके पाँच पुत्र दग्ध हो रहे हैं। अपनी आँखों से देखते ही ये पहचान लेंगे।

142. विदुर की बात से श्रीहरि भयभीत हो गये। अग्नि-दहन-स्थान पर सुदर्शन चक्र भेजा।

143. अग्नि दूने वेग से जलने लगी जिससे कौरव शव न पहनचान सकें। वासुदेव की लीला कौन जान सकता है ?

144. वे मायाधर हैं। कूटनीति से पृथ्वी का भार निवारण करने के लिए महामाया की रचना करते हैं।

145. श्रीहरि ने कहा, हे कुरुपति ! मृतपिण्ड की गन्ध से शरीर की हानि होती है।

146-147. सभी वीर दूर से देख रहे हैं कि छः पिण्ड जल रहे हैं। हाय ! हाय ! देव भीष्म, द्रोण, कर्ण, भूरिश्रवा, शल्य, अश्वत्थामा आदि समस्त क्षत्रियों के साथ कुरुपति स्वामी भूमि पर गिर पड़े।

148. पाण्डवों के अभाव में वज्राहत की तरह दुर्योधन के सौ भाई भूमि पर गिर पड़े।

149. राम और कृष्ण सब लोगों को सान्त्वना देते हैं। गोविन्द कहते हैं कि दुःख शान्त करो।

150. हे धृतराष्ट्र ! दुःख शान्त करो। तुम्हें बहुत दुःख भोगना है।

151. हे धृतराष्ट ! तुमने अपार परिवार अर्जित किया है, किन्तु मेरे विचार से तुम्हें अनेक कष्ट मिलेंगे।

152. धृतराष्ट्र और दुर्योधन के शान्त होने के बाद सभी हस्तिनापुर को चले।

153. संसार धर्म में जितनी प्रेत-कर्म की विधि थी, उसे

राजा ने सम्पादित किया।

154. कुरुवीर प्रेम-कर्म कर रहे हैं। इस समय यदुनन्दन कुरुराज के प्रासाद में रहे।

155. नौ दिन तक अनेक दान किये। दशा-श्राद्ध समापन करके एकादश पिण्ड का विधान किया।

156. होम कर्म करके घृतपाक बनाते हैं। स्नान करके शुद्ध होकर भोजन करते हैं।

शक्राजित वध

1 अगस्त्य कहने है—हे वैवस्तव मनु ' सुनो। श्रीपति द्वारका से हस्तिनापुर आये।

2 शतधनु, अनाधृष्ट और कृतवर्मा नामक तीनों पापात्माओ ने रात म सोचा।

3 कृतवर्मा ने कहा, हे शतधनु और अनाधृष्ट ! तुम लोगों ने शक्राजित राजा की बुराई देख तो ली है।

4 अपनी दुहिता शक्रवती को मुझे देने का वचन दिया था।

5. प्रसेनजित के लिए उसने हरि को निन्दित किया था। डर से उसने हरि को सत्यभामा प्रदान की।

6 उसने इस विषय मे मुझे अपमानित किया। क्या भोजवंशी होकर भी हम चुप हो जाये।

7 कृतवर्मा की बात सुनकर शतधनु कहता है कि क्षत्रिय लोग ऐसे अपमान से उन्मत्त होते हैं।

8. बचपन से ही उसने मुझे सत्यभामा को देने के लिए प्रतिज्ञा की थी।

9. डर से कन्या को वासुदेव को प्रदान करके शक्राजित ने हम लोगों को अपमानित किया।

10 अनाधृष्ट ने उसकी बात सुनकर कहा कि शक्राजित से बड़ा पापी कौन है ?

11. बाल्यकाल से ही मुझे गोद मे बैठाकर सत्यभामा को देने का वचन दिया था।

12. समय आने पर कन्या को हरि को दे दिया। इतना अपमान कौन सह सकता है ?

13. हरि को आधार बनाकर उसने ऐसा कार्य किया। अब क्या जगन्नाथ उसकी रक्षा कर सकते हैं ?

14. कृतवर्मा ने कहा, उनसे कौन समर्थ होगा ? शक्राजित को मारने से हम लोगों का सब अपमान दूर हो जायेगा।

15. हाथ जोड़कर अनाधृष्ट बोलता है कि तुम्हारी आज्ञा होने से मैं इसी समय उसका प्राण ले लूँगा।

16 शतधनु और अनाधृष्ट एवं कृतवर्मा गुप्त रूप से शक्राजित के मन्दिर मे प्रविष्ट हुए।

17. पापिष्ठ अनाधृष्ट हाथ में तलवार लेकर शक्राजित के शयनगृह में पहुँचा।

18 वह विष्णु की पुरी है जो अभय भुवन माना जाता है, जिसमें किसी के घर में किवाड़ नहीं लगती।

19 वह द्वारका नगरी त्रैलोक्य में अजेय है। उसमें काल का दण्ड भी नहीं घुरता।

20 अनाधृष्ट रात्रि मे प्रविष्ट हुआ। उस समय शक्राजित पंलग पर गाढ़ी नींद में सो रहा था।

21 हाथ में विजयकर्ण कटार लेकर अढ़ाई पहर रात में उसके पास पहुंचा।

22 रत्नजटित पलंग पर रेशमी सुकोमल शय्या बिछी हुई है। सुवर्ण की जंजीर में हजारों मणियों की बत्तियाँ लटक रही हैं।

23. पलंग के नीचे एक सहस्र पूर्ण युवा सुन्दरी विलासिनी सोई हैं जो अप्सरावृन्द की तरह लगती हैं।

24 झीने वस्त्र का चँदोवा टँगा हुआ है। उसमें मुक्ता की मालायें लटक रही हैं।

25. मर्कत के साथ मुक्ता की मालायें सात-सात के गुच्छे में लगी हैं। विभिन्न जगहों पर पर मोती के गुच्छे लगे हैं।

26. उसका भवन द्वितीय अमरलोक लग रहा है। फिर भी देवलोक उसके समान नहीं है।

27 गोविन्द जिसके जामाता हैं, उसका भवन निश्चय भय-शून्य और परमानन्दमय है।

28. द्वितीय इन्द्र की तरह सुन्दर और बलिष्ठ शक्राजित दिखाई दे रहा है।

29. हैहय वश का वह नृपमणि उत्तान होकर सोया था। उसके हृदय पर सीमान्तक मणि शोभायमान है।

30. ऊर्ध्ववाहु करके विजय कटार से निष्ठुर भाव से शक्राजित पर प्रहार किया।

31. उस महाप्रतापी दुर्दण्ड अनाधृष्ट ने शक्राजित नृपति

को दो खण्डों में काट दिया।

33. पलंग पर उसे काटकर सीमान्तक मणि चुरा ली।

34. महानिशा में वह बाहर आया। अनाधृष्ट, शतधनु और कृतवर्मा एक साथ बैठे।

34. अपने परम विश्वासी अक्रूर के पास आकर वे लोग मिले।

35. अक्रूर के सामने ये सारी बातें बतायीं कि आज रात्रि में हमने शक्राजित को मार डाला।

36. अक्रूर ने कहा कि क्रोध न सँभालकर तुम लोगों ने मन्द कार्य किया। पहले मुझसे क्यों नहीं बताया !

37. देव जनार्दन इसे अवश्य जानेंगे। पाप की बात कभी छिपती नहीं।

38. तुम तीनों ने विनाश-बुद्धि में प्रवेश किया। विनाशकाल में इस रोग से तुम लोग आक्रान्त हुए।

39. चौदह भुवन जिसके गर्भस्थ है। सत्यभामा उसी वासुदेव की पंचभूत है।

40. नये श्वसुर और नयी भार्या के प्रेम के कारण अवश्य ही देवराज तुम लोगों पर क्रोध करेंगे।

41. अक्रूर ने कहा, हे अम्बिका-पुत्र ! तुम लोग द्वारिका में न रहो। यहाँ से शीघ्र ही भाग जाओ।

42. क्यों बिना विचारे सीमान्तक मणि ले आये। तुम्हारे हाथ में प्रत्यक्ष प्रमाण रह गया।

43 विशेषतः तुम दोषी हो और दूसरे प्रमाण है। अतः वासुदेव के क्रोध से तुम्हारी कोई रक्षा नहीं कर सकता।

44. अक्रूर से स्पष्ट बात सुनकर उसके हाथ पर सीमान्तक मणि रख दी।

45. वे शतधनु और अनाधृष्ट के महाभय के कारण विपत्ति जनक द्वारिका भुवन से तत्काल चले गये।

46. इसके बाद रात्रि शेष हुई। शक्राजित की पत्नी जाग गयी।

47. देखा कि नृपमणि दो खण्ड होकर पड़े हुए हैं। कोलाहल के साथ सुन्दरियां उच्च स्वर से चीत्कार करने लगीं।

48. सभी स्त्रियाँ हाय ! हाय ! स्वामी ! कहकर रुदन करने लगीं। उच्च स्वर में क्रन्दन-रव सुना गया।

49. शक्राजित्त के घर में कोलाहल सुनकर अनेक यदुवीर दौड़े।

50. यदुवंश, भोजवंश और वृष्णिवंश आदि चौबीस योजन के लोग आकर भर गये।

51. पिता की मृत्यु सुनकर नारायण की भार्या अन्तःपुर से बाहर निकली।

52. हाय ! हाय ! पिता ! कहकर विपर्यस्त केश-वस्त्र से उच्च स्वर में रोदन करती हुई व्याकुल होकर दौड़ती है।

53. वह महासती पिता के भवन में प्रविष्ट हुई। इस प्रकार प्रत्यक्ष पिता के दण्ड को देखा।

54. तनु और भानु दोनों पटरानियाँ स्वामी को अपनी गोद में पकड़े हुए हैं।

55. सबका शरीर रक्तरंजित है। सभी दस हजार युवतियां रक्तरंजित हैं।

56. सत्यभामा पिता की मृत्यु देखकर सबकी ओर देखकर कोपाविष्टा हुई।

57. मेरे पिता ने क्या दोष किया था ? बिना दोष उसका कैसे विनाश हुआ ?

58. प्रचण्ड रूप में सुदर्शन चक्र आकाश में घूम रहा है। मक्खियाँ और तृण पड़ने पर शतखण्ड हो जाते हैं।

59. जिस पुरी में यम का कालदण्ड नहीं घुसता है, वहाँ मेरे पिता का विनाश करने का किसका साहस हुआ ?

60. किसी ने मेरे पिता की षड्यन्त्रपूर्वक हत्या की। उसने किसका क्या बिगाड़ा था !

61. गोस्वामिनी के मुख से यह बात सुनकर सभी भयभीत और चिन्तित हुए।

62. भय के कारण कोई उनके पास नहीं रहा। उन लोगों ने सोचा जगन्माता ठकुरानी क्यों हम लोगों को अपयात लगाती हैं ?

63. जिसके जामाता स्वयं देव जनार्दन हैं, उसे विपत्ति में डालने का किसका साहस हो सकता है ?

64. शक्राजित के अभाव से उग्रसेन के साथ नन्द, उपनन्द और वासुदेव सभी रोते हैं।

65. त्रैलोक्य में जिसका अपरिमित यश है, उसे यहाँ विपत्ति में डालने का किसमें साहस है ?

66. शीघ्र ही सत्यभामा पुष्पक विमान को स्वयं तैयार करके द्वारिकापुरी से बाहर हुई।

सोचती हैं कि क्या मेरे पिता का निधन वासुदेव के कारण हुआ ?

68. प्रसेनजित द्वारा निन्दा करने के कारण ही तो उसने क्रोध को न भुलाकर इस विपत्ति को घटाया ?

69. इसका कारण जानने के लिए देवी पुष्पक विमान पर बैठकर द्वारिका से बाहर गयीं।

70. देवी आकाश-मार्ग से हस्तिनापुर को गयीं। पिता को याद करके उच्च स्वर से रुदन करती हुई जा रही हैं।

71. सत्यभामा को जाते हुए देखकर प्रद्युम्न, शाम्ब और गद सोचते हैं कि द्वारिका में बहुत विपत्ति पड़ेगी।

72. आगे-आगे देवी उच्च स्वर में रुदन करती हुई जा रही हैं और पीछे-पीछे तीनों कुमार दौड़ रहे हैं।

73. दुःखी होकर ये तीनों कुमार अनुसरण कर रहे हैं। इस प्रकार देवी कुंजगल देश में प्रविष्ट हुईं।

74-75. धृतराष्ट्र से प्रेत-कर्म कराकर परमार्थ कथा द्वारा उन्हें दुःख-विस्मृत कराकर कृष्ण और बलराम नन्दीघोष और तालध्वज रथ पर चढ़कर सवेरे हस्तिनापुर से बाहर हुए।

76-77. तालध्वज रथारोही बलराम और नन्दीघोष रथारोही कृष्ण को पहुँचाने के लिए एक सौ बीस योजन तक आकर दुर्योधन इन्द्रप्रस्थ से लौटा।

78. गोविन्द ने कहा, हे भाई ! अब शोक मत करो। अब तुम खोजकर पाण्डवों को कहाँ पाओगे ?

79. नाश हुए व्यक्ति की चिन्ता करने से अपना ही शरीर क्षीण हो जाता है। तुम अब पंचकटक के अधिकारी हो।

80. दुर्योधन ने कहा कि हे वासुदेव ! मैं पाण्डवों को भूल गया। हे नारायण ! तुम मुझ पर अनुग्रह रखना।

81. यह कहकर कुरुस्वामी लौटता है और नारायण रथ से चले जाते हैं।

82. वासुदेव कुजंगल देश की ओर चलते हैं। देखते हैं कि एक विमान आकाश में आ रहा है।

83. दारुक ने कहा—हे देव कामपाल ! क्या अमर भुवन छोड़कर देव इन्द्र आ रहे हैं ?

84. पुष्पक विमान को देखकर गोविन्द अनुमान करते हैं कि आकाश का अतिक्रमण करके एक स्त्री आ रही है।

85. देव हलपति देखककर कहते हैं, लगता है कि यह विमान द्वारिका से आ रहा है।

86. दूर से ही देवी ने नन्दी घोष और तालध्वज रथ को देखा। पिता शक्राजित का नाम लेकर वह उच्च स्वर में रोने लगीं।

87. विमान से सामने मिलते ही देवी मूर्च्छित होकर दुलक पड़ी।

88. दारुक सारथी ने तालध्वज को रोका। देवराज कृष्ण रथ से कूद पड़े।

89. नारायण ने सत्यभामा को गोद में पकड़ लिया। इसे देखकर हलपति आश्चर्यचकित हुए।

90. गोविन्द कहते हैं कि हे शरदचन्द्रमुखी ! किसलिए हे सखी ! तुम दुःखी हुई ?

91. तुम्हारा सम्पूर्ण चन्द्रमुख क्यों मलिन है ? तुम्हारा विमल मुख उदास क्यों है ?

92. मेरी प्राणवल्लभा, मेरे हृदय की पंचभूत ! तुम्हारा दुःख देखकर मेरा शरीर चूर्ण हो रहा है।

93. सत्यभामा ने कहा, हे देव ! तुमने क्यों ऐसा कपट किया ? इधर आप आये और उधर मेरे पिता को मरवाया।

94. अज्ञानवश मेरे पिता ने तुम्हारी निन्दा की। पश्चात् मुझे समर्पित करके तुम्हारी शरण में आया।

95. हे देवहरि ! तुमने विश्वासघात किया। शरणागत का नाश करने से रौरव नरक मिलता है।

96. उस सुरखा ने जब ऐसी निष्ठुर बात कही, तब राम और कृष्ण कुछ न समझकर आश्चर्यचकित हुए।

97. श्रीकृष्ण कहते हैं, हे सखि ! क्रोध शान्त करो। स्पष्ट बताओ कि क्या हुआ ?

98. इसी समय प्रद्युम्न, शाम्ब और गद ने राम कृष्ण के कमल-चरणों में शत-शहस्र दण्ड-प्रणाम किया।

99. श्री हरि पूछते हैं कि हे मीनकेतन ! सुनो । शक्राजित राजा की क्या बात है ?

100. प्रद्युम्न ने उत्तर दिया—हे जगन्नाथ ! आज रात में शक्राजित राजा का विनाश हुआ।

101. किसी दुरात्मा ने रात में घर में घुसकर शक्राजित को दो टुकड़ों में काट दिया।

102. प्रद्युम्न के कहते ही जगन्नाथ आत्मविस्मृत हो गये।

किसके द्वारा मेरी द्वारिका में ऐसी घटना घटी!

103. शक्राजित नृपति ने किसका क्या अपराध किया ? किस पाप के कारण उसे इतना बड़ा दण्ड मिला ?

104. हे सत्यभामा ! दुःख न करके मेरी बात सुनो। मैं अवश्य ही तुम्हारे पिता का प्रतिशोध लूँगा।

105. बिना कारण जिसने तुम्हारे पिता की हत्या की, क्या वह वंशसहित द्वारिका में रह पायेगा ?

106. देवहरि ने सत्यभामा को सान्त्वना दी। शीघ्रता से द्वारिकापुरी को आये।

107. द्वारिकापुरी में दुष्टजन सत्यभामा के हस्तिनापुर गमन के बारे मे सोच रहे हैं।

108. अक्रूर शतधनु को बुलाकर कहता है–द्वारिका में रहते वासुदेव निश्चय ही जान लेंगे।

109. वासुदेव अवश्य ही सत्यभामा के कहने पर तुम्हें खोजेंगे। हे शतधनु ! तुम द्वारिका भुवन में न रहो।

110. सत्यभामा का क्रोध शान्त होने के समय को सूचित करके मैं तुम्हें बुला लूँगा।

111. अक्रूर की बात सुनकर वृद्धधनु का पुत्र शतधनु द्वारिका से बाहर हो गया।

112. वह द्वारिका से घोर रात्रि में प्राण बचाने के लिए गहन वन में ढुक गया।

113. सत्यभामा को लेकर यदुपति द्वारिका भुवन में प्रविष्ट हुए।

114. वासुदेव ने शक्राजति के भवन में प्रविष्ट होकर देखा कि सभी नारियाँ गिरकर रो रही हैं।

115. जगन्नाथ को देखकर दाँत में तृण लेकर स्त्रियाँ उनके सामने गिरकर सिर पीटकर रोने लगीं।

116. इस संसार में शक्राजित ने क्या अपराध किया ? तुम्हारे देखते तो उनका कोई दोष नहीं था।

117. कृष्ण ने सबकी व्याकुलता देखने के बाद देखा कि शक्राजित का शरीर दो खण्ड होकर पड़ा है।

118. क्रोध से स्वामी ने कालानल का तेज विकसित किया और बलराम से पूछा कि कौन इस घटना का दोषी है?

119. जिस द्वारिका में यमदण्ड भी नहीं पहुँचता उस मेरी नगरी का कौन शत्रु हुआ ?

120. बलराम ने समर्थजित को बुलाकर पिता का दाह-संस्कार करने को कहा।

121. अभी उसे खोजकर कहाँ पाओगे ? बाद में उस शत्रु का अनुसन्धान किया जायेगा।

122. गोबिन्द सबको सान्त्वना देते हैं। उनकी बात से सभी लोग शान्त हुए।

123. दिव्य पलंग पर उसे रखा गया। ब्राह्मण को प्रेत-परिग्रह के लिए बुलाया गया।

124. शक्राजित के शव को पलंग पर सुलाकर श्मशान-भूमि पर पहुँचाया।

125. मृतात्मा को चिता पर आरोपित करके उसके पुत्र ने मुखाग्नि दी।

126. श्मशान पर दाह-संस्कार के बाद प्रतिदिन प्रेतकर्म किया जाता था।

127. एकादशवें दिन हवि पाक खाकर शुद्ध हुए। घृत-पारण करके ब्राह्मणों ने शुद्ध कराया।

शक्राजित के पूर्व पुरुष का वृत्तान्त

1. वैवस्वत मनु ने अगस्त्य से पूछा–शक्राजित के पूर्व जन्म का गोत्र ब्रह्मज्ञान से बताइये।

2. हे कुम्भ ऋषि के पुत्र ! संक्षेप में मुझसे बताओ कि शक्राजित किस वंश का राजा था।

3. अगस्त्य कहते हैं कि उसके वंश में सूर राजा था। उसका पुत्र शम्भु राजा हुआ।

4-6. शम्भु का पुत्र पुरजित, उसका पुत्र धर्मक्षेत्र, उसका पुत्र जयवन्त, उसका पुत्र यज्ञनिक, उसका पुत्र लीलाजित, उसका पुत्र भिज्ञवन्त था।

7. पूर्व दिशा में स्थित सुकान्ति नगर के राजा भिज्ञवन्त की महिमा सुनो।

8. पाँच हजार ब्राह्मणों का गाँव बसाया जहाँ वेद विद्या सम्पन्न ब्राह्मण रहते थे।

9. शशिक नाम का एक ब्राह्मण था। उसकी भार्या का नाम श्रीवन्ती था।

10. एक समय शशिक ब्राह्मण के परलोकवासी होने पर उसकी पत्नी बाल-विधवा हुई।

11. कुछ दिन के बाद वह कुमार्गी हुई। उस देश के व्यवसायी पुत्र के साथ गुप्त रमण करके एक दुहिता

को जन्म दिया।

12. उस दुहिता को लेकर गाँव के बाहर रात में फेंक दिया। सिर और पेट में दर्द कहकर घर में छलपर्यूक पड़ी रही।

13. रात बीतने पर जम्बुकी सियार ने रोती हुई बच्ची को देखा।

14. वह लड़की सूर्य की किरण की तरह अत्यन्त सुन्दर थी। लगता था कि वह उषाकालीन सूर्य हो।

15. उस बच्ची को लेकर जम्बुकी ने अपनी वनस्थली में रखा।

16 अनेक वृक्षों से दूध लाकर उसके मुख में डालती थी।

17 रात में गाँव में घुसकर छिपाकर माड़ ले जाती और कुमारी के मुँह में डाल देती थी।

18 इस प्रकार करके बच्ची को एक वर्ष तक बढाया। इसके बाद जामुन, बड़हल और जंगली बेर खिलाकर उसे पालती रही।

19 विभिन्न ऋतुओ के विभिन्न फल लाकर बालिका को खाने के लिए देती थी।

20 गन्ना, खीरा और कटहल आदि सुन्दर पदार्थो को लाकर उसे देती थी।

21 उसे खाकर नूतन रति की तरह बढ़ते हुए उसे देखकर सियार और सियारनी हर्षित होते हैं।

22. जब वह सात वर्ष की हुई, तब उसे अन्न, व्यंजन और वस्त्र लाकर देते हैं।

23 इस प्रकार सियार से पाली जाती हुई वह गगन-मण्डल में सूर्य की तरह दिखाई देने लगी।

24 एक दिन दोनों प्राणियों के रहने पर वह रूपवती बालिका बिल से बाहर निकली।

25. मन में सोचती है कि वृद्ध सियारनी के घर में बढ़ी। किन्तु मैं इसके गर्भ से पैदा नहीं हुई।

26. प्राणप्रिय मानकर ये मेरा पालन-पोषण करते रहे। यही दोनों वस्तुतः मेरे माता-पिता हैं।

27. गगन में स्थित सूर्य उसके रूप को देखकर सोचते हैं कि हे सुन्दरी नवयुवती ! तुम धन्य हो।

28. तुम्हारा शरीर पुष्प की तरह दिखाई दे रहा है। चामर की तरह तुम्हारे केश को देखकर भ्रमर भी लज्जित हो रहे हैं।

29. तुम्हारे कर्ण काम के कमान की तरह दिखाई दे रहे हैं। विस्तृत उदर में गहरी नाभि पद्म-पत्र पर जल-बिन्दु की तरह है।

30. उस पद्मिनी जाति की रूपवती नायिका को देखकर मुनिजन मोहित हो जायेंगे।

31. वह सुन्दरी दिन दूनी बढ रही है। सियार से सियारिन यह बात कहती है।

32. हम लोग पशु जाति के हैं—यह जानकर कौन हमारी दुहिता को ग्रहण करेगा ?

33. सियार कहता है कि हे संगिनी ! इसके भाग्य में ब्रह्मा-विष्णु ने जो लिखा है वही मिलेगा।

34 इसके कुछ दिन बाद विदर्भ का राजा अपनी सेना के साथ वन में शिकार करने के लिए आया।

35 राजधानी से सोलह सामन्त और बहत्तर परिचारकों को साथ लेकर राजा आया।

36 कुछ दूरी पर राजा सिहोर के वृक्ष के नीचे घोड़ा रोककर उतरा।

37 लोगों का कोलाहल सुनकर वह बाला बिल में घुस गयी। पुनः राजा उसे न देख सका।

38 किसी को बिना बताये राजा अपने हृदय में रखकर उसे वनों और पहाड़ों में खोजता है।

39 शिकार खेलकर उस दिन राजा लौट गया। बाद में छः महीने तक उस स्थान पर पहरा देता रहा।

40. एक दिन कषाय वस्त्र पहनकर राजा विक्षिप्त मन से वन में घूम रहा था।

41. उसे देखकर राजा जब दौड़ता तब उसे न पाता। किसी भी मनुष्य को देखकर वह कहाँ गयी—ऐसा पूछता।

42. जन-मनुष्य-शून्य अगम्य अरण्य में गुप्त गुफा में जाकर वह सोचता है।

43-44. प्रतिदिन वह राजा लौट आता। अन्य एक दिन वह छद्म वेश में वन में गया।

45. चोर की तरह पेड़ पर राजा सजग होकर बैठ रहा। इसी समय रत्न-सार युवती बिल से बाहर निकली।

46. उसके रूप-लावण्य को देखकर राजा सोचता है कि यह किसी की दुहिता है या वनदेवी है।

47. कुछ समय पश्चात् सियार दम्पती खाने के लिए खीरा

और कटहल लेकर आया।

48. दुहिता के हाथ में कुछ दिया और कुछ स्वयं खाकर शेष बिल में रख दिया।

49. कुछ देर के बाद राजा वृक्ष से उतरा। इस सियार दम्पती की ही यह दुहिता है—ऐसा राजा ने सोचा।

50. इनसे माँगना उचित होगा। पशु जाति में इसका विवाह नहीं हो सकता।

51. इतना सोचकर राजा पास आया। सियार-सियारिन भय से बिल में घुस गये।

52. यह सतयुग का प्रमाण है कि जानवर भी मुनष्य की तरह व्यवहार करते थे।

53. राजा कहते हैं कि हे जम्बुकी ! यह अपनी दुहिता हमें दोगे ?

54. सियार ने कहा—स्वामी ! मेरी कन्या से कैसे विवाहित होंगे ? मेरी कन्या से विवाह करने से बहुत लज्जा पाओगे।

55. यह विधाता का विधान है कि मनुष्य के दो पैर और हम पशुओं के चार पैर हैं।

56. यह सुनकर राजा मुस्कुराये। तुम अपनी दुहिता मुझे दो—ऐसा कहा।

57. राजा की बात वह ठुकरा न सका। दुहिता को देने के लिए सहमत हुआ।

58. किस दिन विवाह करेंगे ? ऐसा विचार करके कहो तभी मैं वन से जाऊँगा।

59. मकर मास, शुक्ल पक्ष, पंचमी बृहस्पतिवार को विवाह का लग्न विचारा गया।

60. राजा कहते हैं कि अपनी इस दुहिता को मेरे नगर में पहुँचा दो।

61. यह सुनकर सियार कहता है कि वहाँ ले जाने पर मेरे वंश का असम्मान होगा।

62. यहाँ आकर तुम विवाह करना। यह सुनकर राजा ने सद्भावपूर्वक कहा—

63. मेरे आने पर सैन्य बल भी आयेगा। इतने लोगों को अन्न-भोजन दोगे ?

64. जम्बुकी ने सुनकर कहा—किसी ने तो मुझे वृत्ति नहीं दी किन्तु मैं अपनी सामर्थ्य के अनुसार सब कुछ करूँगी।

65. यह बात सुनकर राजा लौट गया। मकर शुक्ल पंचमी को विवाह आरम्भ हुआ।

66. सोलह सामन्त, बहत्तर परिचारक विप्रों को लेकर पंचस्वर में वाद्य बजाते हुए राजा बाहर हुआ।

67. राजा के राजकर्म के अनुसार विधान करके वहाँ शीघ्र पहुँचे।

68. एक प्रहर रात्रि में विवाह आरम्भ होकर कुम्भ लग्न में समाप्त हुआ।

69. विवाह होने के बाद दहेज देने के समय ब्राह्मणों ने कहा कि तुम कौन-सी दक्षिणा दोगे, उसे दो।

70. जम्बुकी ने कहा—हे राजा ! यह तुम्हारा राज्य पच्चीस हजार योजन है।

71. इसमें से उर्वर भूमि तुम्हारी है, बंजर भूमि मेरी है।

72. उसे तुम्हें मैंने प्रतिज्ञापूर्वक दिया। हे दण्डधारी ! इसे जोतकर भोग करो।

73. हाथ पकड़कर कन्या को समर्पित किया। कहा कि इसके दसों दोष क्षमा कर देना।

74. हिंडोले पर बैठकर राजा-रानी राज्य को लौटे। चन्द्र-रोहिणी की तरह वे शोभायमान हुए।

75. पृथ्वी की दक्षिणा देकर शृगाल बाहर हुआ। उस भूमि का उसने जल और आहार ग्रहण नहीं किया।

76. आठ दिन पर्यन्त उस भूमि पर चलता रहा किन्तु क्षुधा तथा प्यास होने पर भी अन्न-जल नहीं लिया।

77. उसकी प्रतिज्ञा देखकर इन्द्र ने जल बरसाया। भूमि का पानी न पीकर उसने शरीर का जल-पान किया।

78. उस राजा की सीमा से वह बाहर हो गया। इस प्रकार की प्रतिज्ञा अन्य लोग पालन नहीं कर पाते।

79-80. उस भिज्ञजित का पुत्र गुणजित, उसका पुत्र शक्राजित, उसका पुत्र समर्थक, उसका सत्यनिक है जो वासुदेव का साला है।

मधुवन वृत्तान्त और किन्नर दैत्य का वध

1. अगस्त्य कहते हैं कि हे महत् मनु ! सुनो। श्री महाभारत का पुरोवाच कहो।

2. वैवस्वत मनु ने अगस्त्य से पूछा कि गहन वन में पाण्डवों ने क्या किया ?

3 अगस्त्य कहते हैं कि युगपति ! दुर्योधन पाण्डवों से निश्चिन्त हो गया।

4. पाण्डव गहन वन में प्रविष्ट हुए। निर्झर, नदी और पर्वतपूर्ण वन में रात दिन चल रहे हैं।

5 युधिष्ठिर ने रात बीतने पर भीम से कहा कि नित्यक्रिया के लिए जल-घाट का सन्धान करो।

6 स्वामी की आज्ञा से मारुति चल रहा है। घोर अरण्य में खोजता फिर रहा है।

7. गहन वन में दौड़कर चारों ओर देखकर भी उसे कहीं जल-घाट नहीं मिला।

8 दिनकर डेढ़ प्रहर ऊपर चढ़ आया। भीम सरयू नदी के किनारे पहुँचा।

9 नदी के किनारे एक मधुवन देखा। वहाँ भूमि पर पके हुए फल गिरे हुए थे।

10 आम, कटहल, केला और नारियल आदि वृक्षों की शाखायें फल से युक्त होकर भूमि पर लोट रही हैं।

11 भीमसेन ने मुधवन मे घुसकर पेटभर भोजन किया।

12 एक कँवरी फल युधिष्ठिर के पास ले जाने की इच्छा की।

13 सरयू नदी में प्रवेश करके उस वीर ने स्नान किया। भोजन की तन्द्रा के कारण उसे नींद ने घेर लिया।

14 फलभार को सिर पर रखकर वीर अचेतन निद्रा में सो गया।

15 मनु ने अगस्त्य से पूछा, हे मुनिवर ! वह मधुवन किसका है?

16 हे मनु ! तुमने यदि पूछा तो सुनो। वह किन्नर नामक असुर राजा का उद्यान है।

17-18 कुम्भीर और किन्नर दोनों भाई हैं। इस मधुवन उद्यान का मालिक किन्नर का छोटा भाई है जिसे भीम ने सुरनदी में मार डाला।

19 उस दैत्य राजा के मधुवन में असुर के भय से कोई नहीं प्रवेश करता है।

20. उसी उद्यान में घुसकर भीम निःशंक और निश्चिन्त होकर सो रहा है।

21 भोजन के समय असुर मधुवन में प्रवेश करके घूम रहा है।

22. मनुष्य की गन्ध पाकर वह आनन्द से खोजने लगा।

23. जाकर सरयू नदी के किनारे देखा कि वृकोदर अचेत होकर सो रहा है।

24. उसका शरीर कामदेव की तरह शोभित हो रहा है। उसे देखकर दैत्य राजा आह्लादित हुआ।

25 कहा कि आज मेरा दिन बड़ा अच्छा है। इच्छापूर्वक मनुष्य का भोजन करूँगा।

26 नदी में घुसकर स्नान किया और भीम के पास आकर क्रोध से चीत्कार किया।

27-28 अचेत निद्रा में मग्न भीम के पास इस प्रकार चीत्कार किया कि मानो उससे शिविर भी टूटकर गि॰ पड़ेगा।

29. निद्रामग्न भीम कुछ न जान सका। पुनः असुर ने भीमसेन के पास शोर किया।

30 फिर भी उसकी निद्रा नहीं टूटी। एक शालका वृक्ष लेकर असुर ने उसके ऊपर प्रहार किया।

31 वृक्ष टूटकर शतखण्ड हो गया फिर भी भीम की नींद नही टूटी।

32 पुनः उसने एक पर्वत घुमाकर भीमसेन के बायें अंग पर प्रहार किया।

33 भीमसेन के बाये अग से टकराकर पर्वत चूर हो गया। चौंककर भीमसेन रे-रे करते हुए उठा।

34. असुर से उसने पूछा, हे पामर, मूर्ख, अज्ञानी ! तुम कौन हो ?

35 दूसरे की नीद तोडना उचित नहीं है। परनिद्रा तोड़ने से अपने पुत्र के शिरच्छेदन का दोष लगता है।

36 असुर ने कहा कि यह मेरा अभय भुवन है। तुम मनुष्य होकर यहाँ कैसे प्रविष्ट हुए ?

37. हे मानव ! तुम अपने इष्ट देवता को याद करो। यमराज ने तुम्हारी कुण्डली पूरी कर दी।

38 तुम हे मानव ! मेरा भोजन हो। तुमने आज मेरे सामने आकर अपना जीवन खो दिया।

39 असुर की प्रतिज्ञा सुनकर भीम ने क्रोध से घोर गर्जन किया।

40-41. अपनी बायीं भुजा में दुर्वार असुर को पकड़कर खींचा। कालान्तक महायोद्धा पाण्डव सुन्दर भीमसेन को भी असुर ने पकड़कर नीचे पटक दिया।

42. भीमसेन शतशृंग के अभिशाप के कारण पहली बार

हार गया।

43. द्वितीय युद्ध में भीमसेन ने शीघ्र उठकर असुर को उलट दिया।

44-45. सत्ययुग में जैसे हिमालय अपनी विस्तृति से मन्दर पर्वत पर दबाकर बैठा, उसी प्रकार भीमसेन असुर के वक्षस्थल पर दबाकर बैठा और एक मुठिका का प्रहार किया।

46. वज्र पड़ने पर जैसे पर्वत टूट जाता है उसी प्रकार भीमसेन के मुठिकाघात से असुर गर्जन करके गिर पड़ा।

47. वृकोदर ने पुनः एक प्रहार किया। असुर का सिर सौ टुकड़ों में चूर्ण हो गया।

48. जब किन्नर दैत्य को भीम ने मारा, उस समय आकाश से साधु-साधु की ध्वनि सुनी गयी।

49. पृथ्वी देवी ने भीम की अनेकशः स्तुति करके कहा कि तुम्हारी कृपा से मेरा भार हल्का हुआ।

50. तुम शरण-रक्षक, जगत्श्रेष्ठ, सार्थकप्रतिज्ञ, क्षत्रियवर और महावीर हो।

51. कुम्भीर दैत्य को मारने के कारण तुम्हारे बाहुबल से गंगा का भार दूर हुआ।

52. हे विशाल शरीरधारी, शरणरक्षक, वीरश्रेष्ठ और प्रतिज्ञापालक ! तुम्हारा जीवन साधु है।

53. वसुधा ने ऐसी स्तुति की। तुम पुरुष-श्रेष्ठ और तुम वचन-सिद्ध हो।

54. इसी हिडिम्बक वन में हिडिम्ब का वध करो। तुम्हारी दया से ऋषिगण निस्तार पावें।

55. आकाश से तुम्हें देवताओं का ओदश हुआ है। इन चारों दैत्यों के वध के लिए तुम्हें वन में भेजा है।

56-57 किन्नर दैत्य का नाश करके भीमसेन फलभार को कन्धे पर लेकर एक पत्ते की कलशी में जल लेकर पवन गति से लौट रहा है।

58. युधिष्ठिर भीम की बाट जोह रहे हैं। उन्होंने अर्जुन से कहा, हे भाई ! तुम थोड़ी दूर तक देखने जाओ।

59. भीम तो गया किन्तु इतनी देर तक नहीं लौटा। उसे वन में कौन सी विपत्ति पड़ी।

60. इस महाघोर गहन अटवी में किस दानव ने उसे अवरुद्ध किया।

61. स्वामी की आज्ञा शिरोधार्य करके भीम का अनुसरण करने के लिए अर्जुन चल रहा है।

62. करुणाकर नामक एक पर्वत के पास अर्जुन भीम से मिला।

63. भीमसेन के चरणों में अर्जुन ने शत-सहस्र प्रणाम करके पूछा, हे देव स्वामी ! इतना अपार विलम्ब क्यों किया?

64-65. भीमसेन अर्जुन की ओर देखकर हँसा और कहा कि कुम्भीर दैत्य के अनुज किन्नर दैत्य ने मधुवन उद्यान में मेरा विरोध किया। वह असुरराज महाबलवान और महायोद्धा था।

66. उसके और मेरे बीच महान् संघर्ष हुआ। मैंने उसका वध किया।

67. इसीलिए हे अर्जुन बिलम्ब हुआ। बिना विपत्ति के यहाँ पका फलभार लेकर आया हूँ।

68. भीम और अर्जुन दोनों बातचीत करते हुए युधिष्ठिर के सामने उपस्थित हुए।

69. युधिष्ठिर जल से स्नान करते हैं। अर्जुन उनसे असुर वध की वार्त्ता कर रहा है।

70. इसे सुनकर युधिष्ठिर बहुत दुःखी हुए। हे भाई ! असुर के साथ अकेले कैसे युद्ध किया ?

71. हे भाई ! सखा सहोदर तुम्हारे साथ कोई नहीं था। दूसरी बार तुम इतना साहस न करना।

72. भीमसेन ने कहा, स्वामी ! मैं प्रयत्न करके नहीं खोजता हूँ, किन्तु मिलने पर नहीं छोड़ता हूँ। यही मेरी प्रतिज्ञा है।

73. स्नान, तर्पण, पूजा आदि समाप्त करके धर्मराज फलाहार पर बैठ गये।

74. भोजन समाप्त करके आचमन किया और भोजन की तन्द्रा के कारण शयन किया।

75. एक ही फलभार से वे लोग तीन दिन आहार करते रहे। वे उसी वनस्थली में पाँच दिन तक पड़े रहे।

76. उस वनस्थली से घोर वन का अतिक्रमण करते हुए यमुना नदी से निकली सर्पिणी नामक नदी के किनारे पहुँचे।

77. उस नदी के किनारे वीरभोज पर्वत पर रहने लगे।

78. घोर वन में खोजकर भी खाद्य फल नहीं मिला। वहाँ

केवल अखाद्य फल ही लटक रहे थे।

79-81 तुला मास, शुक्ल पक्ष, चतुर्दशी, रविवार, अश्विनी नक्षत्र, ततुल्लीय करण, बरीयान योग वृश्चिक सक्रान्ति के पचीसवें दिन पाण्डवों ने सर्पिणी नदी के किनारे कन्दमूल न पाकर बिना खाये समय बिताया।

82 वहॉ बाघ, भालू और मदमत्त हाथी अपरिमित जन्तु रहते थे।

83 व पृथ्वी का कार्य करने के लिए अखाद्य फल खाते थे। स्वयं दु:ख सहकर धर्म की स्थापना करते है।

84 वे महावीर बहुत दूर मृग खेदते है गेडा और हिरण आदि मारकर सूर्य पाक करके खाते हे।

85 लम्बे-लम्बे शाल वृक्ष आकाश को छू रहे है। वे लोग अत्यन्त श्रद्धा से वन मे बिहार कर रहे है।

86 नगर से दूर जहॉ जन-मानव का गमनागमन नही है, वहॉ पॉचो पाण्डव आनन्दपूर्वक रह रहे थे।

87 उस वन मे खाद्य फल न होने पर भी अगरु चन्दन आदि वृक्ष अपरिमित मात्रा मे हैं।

88-90 दैत्य-दानव-विहीन इस निर्मल स्थान पर पर्णशाला बनाकर आन्नपूर्वक पॉचो पाण्डव तीन दिन तक रहे।

हिडिम्ब का वध और घटोत्कच का जन्म-वृत्तान्त

1-2 वैशाख शुक्ल पूर्णिमा अनुराधा नक्षत्र के वृहस्पितवार को पॉचा भाई पुण्यतोया सरस्वती नदी के किनार पवित्र स्नान करने के लिए गये।

3 उस सरस्वती नदी के पुण्य जल मे स्नान करके पिण्ड दान किया और वहॉ पॉच दिन तक रह गये।

4 वहॉ से घोर वन से होते हुए हिडिम्बक वन मे पहुचे।

5 हिरण्यकेशी नामक नदी थी जो आकाश-गंगा से निकलकर सागर सगम मे मिलती थी।

6 उस नदी के किनारे वे पॉचो वीर पहुँचे। दुर्भाग्यवशात वे वन में विचर रहे हैं।

7 देखते हैं कि हिडिम्बक वन बडा विशाल है। विना वसन्त के ही वहाँ वसन्त है और पके हुए फलो से भरा हुआ है।

8 आम, कटहल, केला, नारियल, जामुन, जम्बीर, नीबू, ताड़, तमाल और अनार के फल फले हुए हैं।

9. बिना बसन्त में ही बसन्त खोजने पर वहाँ मिलता है। जिस सम्पत्ति की मन में वहाँ इच्छा करिये वही मिल जायेगी।

10. यह विशाल वन पाँच योजन तक विस्तृत है जिसके दोनों ओर नदी की लहरें टकराती रहती हैं।

11 पाँचो लोग वन देखकर आनन्द से उछल पडे। घूमकर अगूर का फल खाते हैं।

12 फल खाते ही भूख की आग समाप्त हुई। मलय पवन के चलने से नींद आ गयी।

13 युधिष्ठिर ने कहा कि हे भीमसेन ! मुझे नीद आ रही है। अपनी जघा पर सिर रख लो।

14 भीमसेन की जघा पर सिर रखकर चारो भाई काशी नदी के किनारे सो गये।

15 निद्रा के आलस्य से कुन्ती देवी सो गयी। आहारतुष्टि और महाश्रम के कारण गाढी निद्रा आ गयी।

16 बहुत आहार से बहुत नीद आती है। इस समय आत्मा अगोचर हो जाती है और पचमुद्रा टूट जाती है।

17 अचेतन होकर पाण्डव सो गये। कुश-शय्या पर शाल पत्र बिछाकर धर्मराज सो गये।

18. भीमसेन सबके सिर के पास बैठकर पहरा दे रहा है। इस प्रकार आदित्य का अस्तकाल आ गया।

19 देखकर मारुति दु:ख कर रहा है कि हम लोगो को जन्म देकर माता कुन्ती इतना कष्ट भोग रही है।

20-21 कुन्तिभोज की दुलारी, सोमवशी पाण्डु राजा की पटरानी हो। धर्मदेवता, पवन और इन्द्रदेवता तुम्हारे पति है। हमारे जीवन रहते हे माता ! तुम इतना दण्ड भोग रही हो।

22 क्षत्रिय कुल मे जन्म लेकर बल और दर्प होने पर भी हम लोग सामान्य और हीन है। हमारे ऐसे जीवन को धिक्कार है।

23 हे स्वामी युधिष्ठिर ! तुम साक्षात् धर्मराज हो जिसके चरणों की नारायण वन्दना करते हैं।

24-25 हे धर्मदेवता युधिष्ठिर ! तुम अजातशत्रु हो। तुम्हारे करवट लेने से भी सृष्टि पलट जाती हैं। रेशमी वस्त्र से मण्डित शय्या पर सोने वाले हे देव ! यहाँ तुम्हें कैसे नींद आई ?

26. अर्जुन के मुख को देखकर भीमसेन सोचता है कि हे भाई ! तुम इन्द्र के पुत्र और वासुदेव से अभिन्न हो।

27. श्री पुरुषोत्तम नारायण ने तुम्हें गोद में बैठाकर द्वितीय कृष्ण नाम दिया।

28. महिमण्डल में तुमसे बलवान क्षत्रिय नहीं है। तुम इन्द्र की तरह सुन्दर और त्रैलोक्यविजयी हो।

29. किसके भय से हे भाई तुम्हें दण्ड मिला। युधिष्ठिर के कार्य से हमारी इतनी दुर्गति हो रही है।

30. नकुल के मुँह को देखकर भीमसेन कहता है कि हे भाई ! शरदकालीन पूर्ण चन्द्र की तरह तुम्हारा मुख विकसित है।

31. तुम अत्यन्त सुकुमार हो। स्वर्गपुर में सभी तुम्हें अश्विनीनन्दन के रूप में जानते हैं।

32 तुम्हारे मुख में आकाश का विस्तार है। किस दोष के कारण हे भाई ! तुम्हें इतना दुःख मिल रहा है !

33. तुम्हारी देह पर एक मक्खी बैठने पर तुम सौ बार चन्दन का लेप करते थे।

34 सेमर की रूई के ऊपर रेशमी वस्त्र की कोमल शय्या पर भी तुम्हें नींद नहीं आती थी।

35-36. रेशमी वस्त्र की शय्या पर पुष्प की पंखुड़ियाँ बिछाकर उस पर कर्पूर छिड़ककर सोने पर तुम्हें नींद नहीं आती थी। इस शालपत्र की शय्या पर कैसे आराम से सो गये ?

37-38 हे गन्धी चूणामणि सहदेव ! हाथ देखकर ही तुम चौदह भुवन की वार्त्ता जान लेते हो। भूत, भविष्य, वर्तमान, गत, आगत तुम्हें सब दृश्य है। हम लोगों के साथ हे भाई ! तुमने इतना कष्ट पाया।

39 हे भाइयों ! तुम लोगों की हीन आस्था देखकर मेरे दोनों नेत्र क्यों नहीं जल जाते हैं ?

40. इस त्रैलोक्य में हमें किसका भय है। मैं अकेले ही समस्त कुरु सेना को मार सकता हूं।

41. हे स्वामी ! वचन से दरिद्र होने के कारण तुम विनाश को प्राप्त हो रहे हो। सम्पत्ति होने पर भी विपत्ति में भ्रमण कर रहे हो।

42. ऐसा विचार करके भीम खेद कर रहा है। हिरण्य पर्वत पर रहते हुए असुर हिडम्बिक ने इस बात को सुना।

43-44. हिडिम्बा नामक अपनी छोटी बहन को बुलाकर उस मूर्ख अज्ञानी असुर ने कहा कि आज मेरी जिह्वा से लार टपक रही है। सौभाग्यवशात् इस वन में आज मनुष्य प्रविष्ट हुआ है।

45. इसी क्षण शीघ्र जाओ। भोज्य मनुष्य को मेरे पास ले आओ।

46. भाई के वचन से हिडिम्बा ने निर्जन घोर वन में जाकर देखा।

47. देखा कि पवन-तनय बैठा है जो अनंग की तरह सुन्दर दिखाई दे रहा है।

48. उसे देखकर दानवी कामवाण से आहत हुई। धर्म ! धर्म ! स्मरण करती हुई मदमत्त हो गयी।

49. मदन से आक्रान्त होकर उसने आसुरी रूप त्याग दिया। अब वह रति की तरह सुन्दरी हो गयी।

50. वह अति सुन्दरी मानिनी मानरूपी मदन के शराघात से मदमत्त हो गयी।

51. भीमसेन के चरणों में प्रणाम करके कहा कि स्वामी ! मेरा काम-सागर के जल से उद्धार करो।

52. उसके वचन से भीमसेन आश्चर्यचकित हुआ। हे माँ ! देव-स्त्री की तरह तुम दिखाई देती हो। तुम्हारा भुवन कहाँ है ?

53. तुम्हारे शरीर पर अनेक आभरण भूषण हैं। तुम प्रत्यक्ष स्वर्ग की रम्भा की तरह दिखाई दे रही हो।

54. क्या तुम सदाशिव की भार्या पार्वती हो या पद्म वन छोड़कर आई हुई लक्ष्मी हो।

55. मैं महादुःखी मानव हूँ। हे शरद-चन्द्रमुखी सुन्दरी तुम क्यों मेरी इच्छा कर रही हो ?

56. तुमको कामदेव की तरह सुन्दर वर चाहिए। मेरी इस अवस्था में तुम क्यों आसक्त हो ?

57. हे परम सुन्दरी ! तुम यदि शृंगार की इच्छा करो तो इन्द्र तुम्हारे योग्य हैं।

58. मेरी इच्छा छोड़कर तुम चली जाओ। इस दुःखकाल में तुमने क्यों मेरी आशा बढ़ायी ?

59. भीमसेन और हिडिम्बा की बातचीत वहाँ हो रही है। इधर हिडिम्बक हिडिम्बा की बाट जोहते-जोहते खिन्न हुआ।

60. भीमसेन ने पूछा तुम किसके पास रहती हो ? तुम्हारा

स्वामी कौन है और तुम किसकी युवती हो ?

61. तुम्हारा जीवन क्यों निष्फल हुआ ? अपने स्वामी को छोड़कर क्यों पर पुरुष की इच्छा कर रही हो ?

62. हिडिम्वा ने कहा, हे मेरे प्राणपति ! निदाघ कुल में हिरण्य दैत्य की उत्पत्ति हुई थी।

63-68. जयासुर का बेटा महाघोर, उसका नन्दन रुद्रमाली, उसका नन्दन विन्ध्यमाली, उसका नन्दन केतुमाली, उसका नन्दन पलम्ब, उसका नन्दन अम्ब, उसका नन्दन निर्वाच, उसका नन्दन वज्रकवच, उसके चार पुत्र उत्पन्न हुए। वज्रकवच ने उनका नाम कुम्भीर, किन्नर, वक और हिडिम्बक रखा।

69. वह कुम्भीर सुरनदी में और किन्नर दारुन मधुवन उद्यान में है।

70. हिडिम्बक राक्षस इस हिडिम्बक वन में और वक राक्षस एकचक्रा नगर में रहता है।

71. इन चारों भाइयों में मैं अकेली बहन हूँ। हे वीरमणि ! मेरा नाम हिडिम्बा है।

72. मुझे दैत्य ने किसी को प्रदान नहीं किया। इस यौवन काल में मैं अविवाहित और विरहिणी होकर रह गयी।

73. इतने दिनों के पश्चात् स्वामी ! मैंने तुम्हें प्राप्त किया। इस असुरभोग्या भूमि पर तुम लोग कैसे घुसे ?

74. हिडिम्ब दैत्य ने मुझे तुम लोगों को पकड़कर ले जाने के लिए भेजा है।

75. तुम नर मानुष हमारे भक्ष्य हो। मैं तुम लोगों को आकाशमार्ग से पकड़कर ले जाने के लिए आयी थी।

76. तुम्हारा रूप देखकर मैं मदनार्त्ता हुई। भाई का भय छोड़कर मैं निर्लज्ज हुई।

77. सोदर को छोड़कर मैंने कामेच्छा की। मैं तुम्हें ही माँगती हूँ। प्रसन्न होकर मेरी इच्छा पूरी करो।

78. इस समय हिडिम्बक हिडिम्बा का विलम्ब देखकर क्रुद्ध होकर दौड़ता है।

79. वह कालान्तक असुर प्रतिज्ञा-समर्थ है। आकाशमण्डल में उसका सिर छू रहा है।

80. बायें हाथ में पर्वत और दाहिने हाथ में वृक्ष लेकर अभय मन्दर गिरि की तरह आकाश से उड़कर आ रहा है।

81. रूखे केशों से भैरव की तरह दिखाई देता है। दोनों भुजायें शून्य दिशा मण्डल की तरह दिखाई देती हैं।

82. दोनों आँखें ताम्रचक्र की तरह दिखाई दे रही हैं। दूर से ही हिडिम्बा ने उसे देख लिया।

83. उसकी जिम्वा लहलहा रही है और दाँत विकट हैं। खाँखर पेट वाला वह रे-रे का शब्द करता आ रहा है।

84. अरे-अरे कहकर असुर दौड़कर आ रहा है। हिडिम्बा ने कहा हे, स्वामी ! शीघ्र भाग जाओ।

85. महाबलिष्ठ हिडिम्बक आ रहा है जिसके भय से इन्द्र भी आसन छोड देता है।

86. अमरलोक पर पाँच बार आक्रमण किया। वज्र लेकर इन्द्र ने उसकी छाती को पीटा।

87. एक कोटि किरण की शक्ति से सम्पन्न वज्र के आघात को इस महावीर ने सह लिया।

88. संग्राम में उसके समकक्ष कोई नहीं है। इस असुर की देह वज्र से निर्मित है।

89. हे स्वामी ! यह मेरी अत्यन्त स्पष्ट बात सुनो। तुम्हारे भागने के लिए कोई मार्ग नहीं है।

90. एक पद में एक कोस चला जाता है। यह कामरूपी असुर पृथ्वी का अतिक्रमण कर सकता है।

91. असुर पाँच योजन निकट आ गया। तुम छः लोग भाग नहीं सकते।

92. मेरे कन्धे पर तुम सब बैठ जाओ। मैं तुम लोगों को आकाश-मार्ग से अवश्य ले जा सकती हूँ।

93. भीमसेन ने कहा, मैं तुम्हारे मन की बात जान गया। कन्धे पर बैठाकर तुम सबको घोंट जाओगी।

94. हिडिम्बा ने कहा, जब तुमने मुझ पर अविश्वास किया तब मैं अलंघित प्रतिज्ञा करती हुई तीन बार सत्य ! सत्य ! सत्य कह रही हूँ।

95. यदि हे स्वामी ! तुम्हारे पास पराक्रम हो तो असुर के साथ संग्राम करो।

96. यद्यपि हिडिम्बक मेरा भाई है, फिर भी उसके डर से मुझे वर नहीं मिलता।

97. तुम मेरे प्रियतम स्वामी हो। तुम्हारे कारण ही मेरी काम-पीड़ा बढ़ी। तुम और मैं एक ही हूँ। हममें प्रीति-अभेद है।

98. मैं उसका मृत्युभेद तुम्हें बताती हूँ, जहाँ मारने से असुर का वध होगा।
99. भीमसेन ने कहा कि हे प्रिये ! मुझसे कहो। मैं तीन बार प्रतिज्ञा करता हूँ कि तुम मेरी भार्या हुईं।
100. स्वामी विश्वनाथ की नौ सहस्र वर्ष तक तपस्या करके असुर ने उन्हें तुष्ट किया। उसने वर माँगा कि मैं विश्वरूप धारण करके त्रैलोक्य में व्याप्त हो सकूँ।
101. देवता, मानव और दानव में कोई भी सप्त ब्रह्माण्ड में मेरा समकक्ष न हो।
102. हे विश्वरूप ! यदि तुम मुझसे प्रसन्न हो तो मेरा शरीर वज्रकवच हो जाय और वज्र का आघात मुझ पर व्यर्थ हो जाय।
103. अवढरदानी शिव ने वज्र का महारस हिडिम्ब के शरीर पर ढाल दिया।
104. वह गहरी नाभि में नहीं पड़ सका किन्तु सारा शरीर वज्र हो गया।
105. हे स्वामी ! संग्राम के समय इसे याद रखना। गहरी नाभि में बर्छे से प्रहार करना।
106. उससे वह दैत्य शत्रु मारा जायेगा। दूसरे युद्ध में त्रैलोक्य में कोई भी उसके समान नहीं है।
107. हिरण्यक पर्वत पर उसकी मृत्यु शक्ति है। स्वर्गलोक पर आक्रमण के समय उस शक्ति को हाथ में लेता है।
108. भीमसेन ने कहा कि तुम वह शक्ति मेरे पास लाओ। मैं इसी समय तुम्हारे निष्ठाभाव को समझ लूँगा।
109. इस बात पर असुरी ने प्रेरित होकर अपनी एक भुजा फैला दी।
110. वह हिरण्यक गिरि पाँच योजन दूर था। हिडिम्बा की भुजा वहाँ तक पहुँच गयी।
111. भीमसेन के देखते-देखते बायें हाथ से शक्ति लाकर उसने भीमसेन के हाथ पर समर्पित कर दी।
112. भीमसेन ने कहा, तुम हाथ में लिये रहना। युद्ध में संकट आने पर मुझे दे देना।
113. मेरे भाई और माँ निद्रा से अचेत हैं। निद्रा भग्न करने से अपरमित दोष होगा।
114. इन पाँचों का दायित्व तुम पर है। मैं इसी क्षण संग्राम में उस दैत्य को मारूँगा।
115. हे हिडिम्बा ! मैं तुमसे एक और प्रतिश्रुति चाहता हूँ कि तुम अपने भाई का कष्ट देखकर मुझ पर क्रोध मत करना।
116. हिडिम्ब ने कहा कि तुम्हारा जो शत्रु है, वह मेरा भी शत्रु है। तुम उसे शीघ्र ही मार डालो।
117. पाण्डवों के सिर को जंघा से हटाकर भीमसेन ने गर्जन किया।
118. असुर जितनी अपनी काया विस्तार करता है भीम भी उतनी काया विस्तार करता है।
119. दोनों हाथों में वृक्ष उखाड़कर उठा लिया। इस समय भीम राहु की तरह दिखाई देता है।
120. हिडिम्बक और भीम दोनों एक समान हो गये। दानव दाहिने हाथ में एक पर्वत लेकर घुमा रहा है।
121. घुमाकर उसने भीमसेन के मस्तक पर मारा।
122. गिरिवर पड़कर शतखण्ड हो गया। भीमसेन के शरीर पर धूल हो गयी।
123. दैत्य ने भीमसेन को साधु-साधु कहते हुए ढकेल दिया।
124. असुर ने चिल्लाकर कहा—अरे हिडिम्बा परपुरुष को देखकर तुमने अपने सहोदर को छोड़ दिया।
125. आज मैं इसका रक्तपान करके आनन्द लूँगा और पीछे से तुम्हारा मुण्ड काटकर बलि दूँगा।
126. असुर ने ऐसी भयंकर प्रतिज्ञा की। हिडिम्बा ने कहा, हे भाई ! पहले इससे पार हो लो।
127. क्रोध से असुर ने भयानक रूप धारण किया। दोनों भुजाओं को दो योजन तक फैलाया।
128. झटित उसने दो पर्वत उखाड़ लिये। भीमसेन के सिर पर उनसे प्रहार किया।
129. पवनसुत ने बायें हाथ से रोक लिया जिससे दोनों पर्वत टकराकर चूर हो गये।
130. पुनः भीमसेन ने दो शाल वृक्ष लेकर असुर को मारे जो उसके शरीर पर पड़कर चूर हो गये।
131. हिडिम्बक ने कहा, तुम मेरे खाद्य हो। सामान्य मनुष्य होकर तुममें इतना दर्प कैसे है ?
132. भीमसेन ने कहा कि तुम यह नहीं जानते हो कि मेरे हाथ से तुम्हारी मृत्यु होगी।
133. उस दुर्वार दैत्य ने ऐसी बात सुनकर क्रोध से भीमसेन

पर वज्रमुष्टिका का प्रहार किया।

134. क्रोध से भीम ने दो मुक्के मारे। विशाल शरीर से प्रस्वेद प्रवाहित होने लगा।

135. क्रोध से दैत्यराज ने भीम को दोनों भुजाओं से दबाया।

136. महादैत्य असुर ने पैरों से पैरों को छान लिया। पवन-सुत ने असुर को ठेलकर गिरा दिया।

137. भीम ने असुर की छाती पर बैठकर होंठ काटकर दो मुक्के मारे।

138 असुर ने हुंकार करके अपने बाहुबल से भीम को उलट कर गिरा दिया।

139. भीमसेन को पटककर हिडिम्बक ने भीमसेन के मुण्ड पर वज्रमुठिका मारी।

140 आकाश में जैसे वज्रपात होता है उसी प्रकार भीम प्रतिज्ञापूर्वक गड़गड़ाकर उठा।

141 पुनः असुर को उलटकर भीम उसकी छाती पर बैठा। उसके शरीर से पसीना वहता चला जा रहा है।

142 पुनः असुर भीम को उलटकर उसकी छाती पर बैठा।

143 भीमसेन को हिडिम्बक ने उठाकर पटक दिया जिससे पर्वत-भूमि और वन सब टूटकर धूल हो गये।

144 भीमसेन ने खींचकर असुर को पकड़कर दोनों भुजाओं से उसकी छाती को दबाया।

145 मल्लयुद्ध में धरते हैं , गिरते हैं, लुढ़कते हैं। युद्ध में कोई किसी से कम नहीं है।

146 हिडिम्बक और भीम में संग्राम बढ़ता गया। दस योजन पर्यन्त वनस्थल चूर्ण हो गया।

147 दोनों का शरीर रक्तरंजित हो गया।। आपस में लिपटे हुए वे, लिपटे हुए दो सर्पो की तरह दिखाई देते हैं।

148. दो यमज वृक्षों की तरह उन्हें अलग नहीं किया जा सकता। प्रत्येक रोम मूल से रक्त प्रवाहित हो रहा है।

149. दोनों का शरीर इस प्रकार जड़ित हो गया कि वे एक शरीर की तरह दिखाई दे रहे हैं।

150. संग्राम की घोर मुद्रा से ब्रह्माण्ड कॉप रहा है तथापि पाण्डवों की नींद नहीं टूटी।

151. लुढ़कते-लुढ़कते वे पन्द्रह योजन तक चले गये। हिडिम्बा अदृश्य होकर यह देखती है।

152. हिडिम्बा ने कहा, हे माँ ! उठो। तुम्हारे बेटे के ऊपर विपत्ति पड़ी है।

153. युधिष्ठिर शीघ्र उठ पड़े। भीम को न देखकर नकुल और सहदेव रोने लगे।

154. हिडिम्बा कहती है कि तुम ऐसी नींद में मग्न हुई कि तुम्हारे पुत्र को मेरा भाई हिडम्बक पकड़ ले गया।

155. युधिष्ठिर और अर्जुन आदि पाण्डव दौड़ रहे हैं। पीछे-पीछे रोती हुई कुन्ती दौड़ रही है।

156. हाथ में शक्ति को लेकर हिडिम्बा क्रोध से आकाश में दौड़ रही है।

157. हिडिम्बक देखकर आनन्दित हुआ। शक्ति लाओ कहकर उसने हाथ बढ़ाया।

158 असुरी को देखकर भीमसेन ने हाथ बढ़ाया। उसने उसके हाथ पर शक्ति रख दी।

159. भीमसेन के हाथ में शक्ति देखकर असुर की आत्मा बेचैन हो गयी।

160. जब असुर खिन्न हो गया तब भीम उसकी छाती पर बैठ गया।

161 भीम ने बायें हाथ से छाती दबाकर नाभिमण्डल में उस बर्छे का प्रहार किया।

162. बर्छा नाभिमण्डल में घुसकर पीठ से निकल गया और एक योजन पृथ्वी के भीतर भी घुस गया।

163 शलू मारकर भीमसेन उसकी छाती पर वैसे ही बैठा रहा जैसे हिरण्यकश्यप को विदीर्ण करते समय नृसिंह बैठे थे।

164. युधिष्ठिर भीम की मूर्ति को देखकर भयाक्रान्त हुए। भय के कारण कोई पास नहीं जा सका।

165. हिडिम्बा ने कहा कि हे माता ! तुम चिन्ता मत करो। तुम्हारे पुत्र ने हिडिम्बक का वध किया।

166. असुर के प्राण त्याग करने पर भीम शान्त मूर्ति हुआ। इसके बाद चारों पाण्डव उसके पास पहुँचे।

167. भीमसेन ने माता के चरणों में प्रणाम किया। युधिष्ठिर ने आलिंगन में लेकर मुख-चुम्बन किया।

168. भाई ! तुम्हारी विपत्ति मुझे लगे। मुझसे बिना बताये इतनी बड़ी विपत्ति में कैसे घुसे ?

170. कुन्ती के पैर पकड़कर हिडिम्बा ने प्रणाम किया। उसे देखकर भीम बहुत प्रशंसा करने लगा।

171. दानवी होकर भी तुम्हारी इतनी महानता है। अपने

सहोदर को छोड़कर हम लोगों की रक्षा की।

172. कुन्ती ने कहा, मैं सन्तुष्ट हूँ। तुम्हारी जो इच्छा होगी मैं प्रतिज्ञापूर्वक दूँगी।

173. हिडिम्बा ने कहा कि तुम्हारे इस पुत्र को देखकर मैं मदनाक्रान्त हुई।

174. मदन-शर से पीड़ित होकर इसके लिए मैंने सहोदर को छोड़ दिया।

175. स्त्री का जीवन बड़ा कठिन होता है। तुम आदेश दो कि तुम्हारा यह पुत्र मेरा स्वामी हो।

176. कुन्ती ने कहा कि मेरा ज्येष्ठ पुत्र यहीं है। तुम क्यों इसकी इच्छा नहीं करतीं ?

177. हिडिम्बा ने कहा कि जिसके प्रति जिसका प्रेम होता है वह उसे ही चाहता है। ब्रह्मा का विधान अन्यथा नहीं होता।

178. सत्ययुग में देव और असुरों ने समुद्र-मन्थन किया किन्तु कृष्ण के लिए कमला की उत्पत्ति हुई।

179. उस आदि नारी ने अपनी इच्छा से ब्रह्मा, रुद्र और इन्द्र के रहते नारायण का वरण किया।

180. हम कामवती हैं। इच्छा के अनुकूल हम ईप्सित पुरुष को वरमाला देती हैं।

181. हिडिम्बा ने कहा, हे भीम ! क्यों सोचते हो ? मैं तुम्हारी पत्नी हूँ और तुम मेरे पति हो।

182. युधिष्ठिर ने कहा कि हे भाई ! दूसरी बात न सोचो। पहले से ही इस भामिनी ने तुम्हारी कामना की।

183. यह महाचंचला है और तुम महाबलिष्ठ हो। इसका और तुम्हारा सुसंयोग होगा।

184. सोमवंशी यजुर्वेदी होते हैं। ये मूलतः पाठऋषि 'शुक्राचार्य' से उत्पन्न ब्रह्मगोत्री हैं।

185. आयुर्वेद में ये निजित हैं। अजपा गायत्री का ये जप करते हैं और मन्त्रसिद्ध होते हैं।

186. गुप्त रूप से गन्धर्व विवाह का विधान है। यह कहकर आदिदेव भीम को हिडिम्बा को प्रदान करते हैं।

187. पवन देवता वेदध्वनि कर रहे हैं। कामिनी हिडिम्बा का विवाह कराया।

188. अग्नि देवता ने होम कर्म किया। दोनों ने घृत पारण किया।

189. भीमसेन ने कुमारी को स्वीकार करके हिडिम्बक वन को दहेज के रूप में प्राप्त किया।

190-192. पुण्यतोया नदी के किनारे हिरण्य पर्वत के ऊपर भीमसेन ने हिडिम्बा के साथ एक शुभ योग में शृंगार किया।

193-194. वह पर्वत सुन्दर और अत्यन्त निर्मल है। आम, कटहल, केला, अनार और नारियल, तेन्दुपाल, कैथा, बेल, मकोइया, वृन्दाहल आदि फल सब समय फलते और पकते हैं। वहाँ बिना बसन्त के भी बसन्त रहता है।

195. सबकी मनोवान्छा पूरी होती है। चिर बसन्त पवन से यह भूमि सिद्ध और चैतन्यमय है।

196. कनक गिरि पर्वत के नीचे पुण्यतोया सरस्वती नदी प्रवाहित है हिरण्येश्वर लिंग की उत्पत्ति उसके जल से हुई है।

197. ऐसे वन और पवित्र तथा शुद्ध स्थान पर दस हजार योजन तक जन-जन्तु का यातयात नहीं है।

198. हिडिम्बक दस योजन पर्यन्त दौड़ता फिरता था। अतः उसके भय से किसी का यातायान नहीं होता था।

199. शतशृंग से यह निर्विघ्न और निर्मल स्थान हे। देव. स्वामी क्रीड़ा और कौतूहल के साथ यहाँ रहे।

200. गेंडा, वन महिष, हिरण, बारहसिंहा आदि जन्तुओं का आनन्द से शिकार करते हैं।

201. पाण्डुनन्दन आराम से सात वर्ष तक हिडिम्बक वन में रह गये।

202. भीम और हिडिम्बा में बहुत प्रेम था। रस और आनन्द कौतूहल से वे मत्त होकर रहते थे।

203-204. कन्या शुक्ल पूर्णिमा के दिन रात्रि अढ़ाई प्रहर में हिडिम्बिकी के साथ वृकोदार ने रति-संयोग आरम्भ किया।

205. सात वर्ष तक नित्य ही केलि-क्रीड़ा करते रहे। उस सिद्ध पुरुष का वीर्य-स्खलन नहीं हुआ।

206. चन्द्र पवन को एकत्र करके सुषुम्ना में मन को डुबाकर काम-निमज्जित हुए।

207. काम को सूर्य के साथ मिलाकर आक्रमण-प्रत्याक्रमण के द्वारा वीर्य का संयम करते हैं।

208. पवन ने प्रतिकूल गति से आकाश द्वार का भेद

किया। काम व्याधि के मुक्त होने से शान्ति आयी।

209. पंचभूत आत्मा को कामजित संयमित पुरुष ने अन्यत्र अवस्थित किया।

210. इतने प्रकार से उसने शृंगार-युद्ध की इच्छा की। सात वर्ष तक उसका वीर्य-स्खलन नही हुआ।

211 212 शरद पूर्णिमा की रात्रि में शृगारमत्त होने से उसका तेज विकसित हुआ और उसने महावीर्य स्खलित कर राते-क्रिया समाप्त की।

213 हिडिम्बा के उदर में महारेत विसर्जित किया किन्तु वह गर्भ को भीतर सँभाल न सकी।

214 वीर्य को न सँभाल पाने के कारण बाला अचेत हो गयी। वह वीर्य अरक्षित होकर बाहर निकल गया।

215 वह अमोघ रेत नष्ट नही हुआ। उससे चन्द्र की तरह एक आशुपुत्र उत्पन्न हुआ।

216 गर्भ से वीर्य के कनक गिरि पर गिरते ही जगत मे घट-घट शब्द सुना गया।

217 जैसे आकाश से वसुन्धरा पर जल की धारा पड़ती है, उसी प्रकार शब्द हुआ।

218 उस शब्द से वाणी विकसित हुई। केतु का तेज लेकर आशुपुत्र पैदा हुआ।

219 रव से आकाश के दिग्पाल काप उठे। कनक गिरि पर भीम कुछ दूरी पर बैठे हे।

220 कुन्ती ने महाबलवान पर्वत के समान पुत्र को जाकर पकड़ा।

221 देवी गोद मे पुत्र को सम्भाल न सकी। वह दुलककर कनक गिरि पर गिर पडा।

222 कुन्ती की गोद से गिरते ही ग्यारह याजन आयतन का पर्वत रसातल को चला गया।

223 भीम ने स्वय गोद में उठाया। कुन्ती न उसका नाम घटोत्कच रखा।

224. हिडिम्बक वन के प्रति पाण्डवों का लोभ-मोह बढ़ गया। वहाँ वे निश्चिन्त होकर रहने लगे।

225. उस वन में पर्णकुटी का निर्माण करके पाण्डव आनन्द करते हैं।

अर्जुन के द्वारा कपिला बध और उसका पाप-खण्डन

1-4. एक दिन शुभ योग में युधिष्ठिर शाल वृक्ष के नीचे बैठाकर अर्जुन से कहते हैं–

5 हम लोग पिता से उत्पन्न होने के कारण पितृकर्म के लिये उत्तरदायी हैं। हमें श्राद्द कर्म करना चाहिए।

6 युधिष्ठिर की आज्ञा से वीर धनंजय कन्धे पर गाण्डीव रखकर वन मे जाता है।

7 उसके हाथ में गाण्डीव का वाण शोभित है। वह मन्द गति से चल रहा है।

8 हिरण्यगिरि नामक एक पर्वत पर वह वासव-सुत पहुँचा।

9 हाथ मे शर-सन्धान करके चतुर्दिक् निरूपण कर रहा है जिसे देखकर जीवगण प्राण-भय से भाग गये।

10 वीर फाल्गुनी गेंडा न देखकर कृष्णावेणी पर्वत पर पहुँचा।

11 गेंडा न पाकर वीर अर्जुन इधर-उधर दौडा रहा है।

12 विस्मित होकर अर्जुन वहाँ से चलकर महेन्द्रतनया नदी के किनारे पहुँचा।

13 वह दक्षिण वाहिनी नदी पवित्र महानदी है। वहाँ बैठकर उसने मन्त्र-साधना की।

14. उस सिद्ध वन में वह महापर्वत स्थित है। सरस्वती नदी दक्षिण दिशा में इसका भेदन करती है।

15 उस नदी मे सव्यसाची ने पानी पीकर मुख-प्रक्षालन किया।

16 महेन्द्र नामक पर्वत पर वीर पार्थ चढ़ गया।

17 पूर्व को मुँह करके वह देखता है कि समुद्र में महा नदी मिल रही है।

18 महापर्वत सगम तीर्थ को देखकर वह वीर दक्षिणी तट की ओर देख रहा है।

19 कपिला गो माता वहाँ चर रही है। वीरमणि उसे देखकर प्रसन्नचित्त हुआ।

20 वह सोचता है कि यह गेंडा के सिवा कोई अन्य जीव नही है।

21 उस वीर ने एक क्षिप्र शर लेकर धनुष पर चढ़ाया।

22 उस जीव को मारने की आज्ञा दी। उसकी आज्ञानुसार वाण आकाशगामी हुआ।

23. आज्ञानुसार जाकर वाण तत्क्षण कपिला के पास

24. कपिला को देखकर वाण मन में सोचता है कि इसका प्राण मैं कैसे लूँगा?

25. गोहत्या और स्त्री-हत्या करने से पार नहीं मिलता। इसको मारना उचित नहीं है।

26. हे वीर पार्थ ! कितना क्रोध करके मुझे पठाया। मैं कैसे इस पर आघात करूँगा।

27. कुछ दूरी पर वह वाण बैठ गया। तीनों ब्रह्माण्ड में वह दिव्य वाण हुआ।

28-29. वाण के न जाने पर फाल्गुनी महा कुपित हुआ। पुनः धनुष पर दिव्य शर चढ़ाया और कहा कि तुम जाकर शीघ्र उस जीव को मारो।

30. पार्थ की आज्ञा से दिव्य शर चला और कपिला के शरीर में तुरन्त जाकर पड़ा।

31. लगते ही कपिला दो खण्ड हो गयी। सप्त ब्रह्माण्ड तक शब्द सुना गया।

32. प्राण लेकर दिव्य शर सोचता है कि कपिला का बध करके तीनों लोक में पार नहीं है।

33. महादेव ने गोहत्या की थी। उससे वे आज तक मुक्त नहीं हुए।

34. वाराणसी मणिकर्णिका तीर्थ में स्नान करके भी ईश्वर मुक्त नहीं हुए। बाद में विनाश को प्राप्त हुए।

35. ईश्वर ने भैरव रूप प्राप्त किया। मैं तो तीनों लोक में पार नहीं हूँगा।

36. इतना कहकर वाण हत्या दोप से चिन्तित होकर भूमि पर बैठ गया।

37. वाण के न लौटने पर वीर पार्थ ने हाथ में वावल शर को पकड़ा।

38. वीर अर्जुन वाण को समझा रहा है कि मेरी आज्ञा-पालन में तुम विमुख मत होना।

39. धनुष पर बैठाकर उसने विश्वासपूर्वक कहा कि जीव को तुम शीघ्र ले आओ।

40. क्षणभर में ही मेरे पास ले आओ नहीं तो मैं तुम्हें अग्नि दण्ड दूँगा।

41. क्रोध से पूर्ण वह तेज गति से चल रहा है। कपिला के ऊपर गरजकर गिर पड़ा।

42. यह प्रचण्ड वाण गोमुण्ड को लेकर आया।

43. आते ही मुण्ड के भीतर का मज्जा खिसककर गिर पड़ा। वहाँ पवित्रेश्वर नामक महालिंग हो गया।

44. जितनी दूरी तक पृथ्वी पर रक्तपात हुआ, वह सब लिंगपुंज हुआ।

45. शव को लेकर जब पार्थ के पास पहुँचा तो इसको देखकर पार्थ दुःखी हुआ।

46. कपिला का मुण्ड लेकर वीर पार्थ मन में बार-बार सोचता है।

47. आज मैंने कपिला का वध किया। यह कहकर उसे मालती लता के ऊपर स्थापित किया।

48. पंचात्मा में प्रविष्ट होकर वीर पार्थ सोचता है कि अकारण गो-वध करके मैंने इतना बड़ा पाप किया।

49. देव पुरन्दर मुझसे क्या कहेंगे ? देव चक्रधर भी मेरा मुख नहीं देखेंगे।

50. देवगण मुझसे क्या कहेंगे ? मैं किसी का मख नही देख सकूँगा।

51. अर्जुन मन ही मन सोचता है कि मैं युधिष्ठिर का मुख कैसे देखूँगा !

52. पुनः ऐसे ही सोचते हुए अर्जुन युधिष्ठिर के पास पहुँचा।

53. वृक्ष की आड़ में मुख नीचे करके कहता है कि मैं तुम्हें कैसे मुँह दिखाऊँ ?

54. युधिष्ठिर ने पूछा कि तुमने क्या किया ? किस कारण तुम मुँह छिपा रहे हो ?

55. युधिष्ठिर ने सहदेव की ओर देखकर पूछा कि मेरे भाई ने वन में क्या दोप किया ?

56. मैंने गेंडा के लिए उसे भेजा था। मुझसे विचार करके कारण बताओ।

57. फाल्गुनी मेरा प्राणप्रिय है। इसके द्वारा पृथ्वी का उद्धार होगा।

58. किस कारण वह मेरी ओर मुँह उठाकर नहीं देख रहा है ? सहदेव ने विचार करने के लिए कुण्डली-अंकन किया।

59. सहदेव हाथ जोड़कर कहता है कि तुम एकाग्रचित्त होकर सुनो।

60. तुम्हारे आदेश से फाल्गुनी गेंडा लाने के लिए दिन-रात

वन में घूमता रहा।

61. उसे देखकर गेंडा बहुत दूर भाग गये। डर से वन, गिरि और कन्दर में छिप गये।

62. गेंडा न पाकर वह घोर वन में घूमता रहा। उसकी आँखों में गेंडा जीव न दिखाई दिया।

63. क्षुधार्त्त होकर पर्वत पर चढकर पूर्व दिशा मे देखा।

64 चरती हुई कपिला को देखकर उसने गंडा समझा।

65. गेंडा जीव समझकर उसने दिव्य शर मारा। वाण कपिला के ऊपर पडा।

66 कपिला का मुण्ड देखकर वीर पार्थ चकित हुआ और मन मे दुःखी होकर जगन्नाथ को याद करने लगा।

67 लज्जा के कारण तुम्हारा मुख नही देखता है। गोहन्या करने पर कहीं बैठने का स्थान नही होता।

68 सहदेव मे पूछा कि क्या किया जाय ? कैसे यह पाप-खण्डन होगा ?

69 सहदेव ने कहा कि देवताओं के एकत्र होने पर भी क्या यह पाप खण्डित होगा ?

70. युधिष्ठिर ने कहा, हे पार्थ ! तुम हरि का स्मरण करो। वही तुम्हारा पाप-खण्डन करेगे।

71 युधिष्ठिर की आज्ञा से वीर धनुर्धर ने एकचित्त से कृष्ण का ध्यान किया।

72 73 चन्द्रशिला के ऊपर देव चक्रधर सत्यभामा को लेकर बैठे थे। आसन काँपने से देव हरि ने सब कुछ समझ लिया। गरुड़ को तत्क्षण याद किया।

74 सत्यभामा ने कहा कि हे देव ! मुझे क्यों छोड़ दिया ? मुझसे कौन सी भूल हुई ?

75. केशव ने कहा, हे प्राणप्रिये ! मुझे अर्जुन ने याद किया है।

76 सत्यभामा ने कहा कि पाण्डव तो लाक्षागृह मे मर गये। हे नाथ ! वे पुनः कैसे बचकर लौट आये ?

77 हे यदुनाथ ! क्या दिवास्वप्न देख रहे हो ? पाण्डवों को मरे आज छः वर्ष हो गये।

78. क्यों उन्मत्त होकर ऐसा कर रहे हो ? हे जगन्नाथ ! इसका रहस्य मुझे बताओ।

79. माधव कहते हैं, हे प्राणसखि ! मेरे रहते पाण्डवों का विनाश सम्भव नहीं।

80. प्राणसखि ! मैं तुमसे कहता हूँ। पाण्डवों के मरने पर तुम मुझे कैसे देख सकती हो ?

81 वे पाण्डव प्रत्यक्ष देवहरि हैं। संसार का भार दूर करने के लिए ही भारत में इन्होंने अवतार लिया है।

82 गोविन्द ने कहा हे शक्रावती ! यह बात कहीं न फूटने पाये।

83 पक्षीवर रम्यक द्वीप में था। कृष्ण के याद करने पर तीव्र गति से आया।

84 पक्षीवर के वायु आघात से गिरिवर काँप गये और वृक्ष आदि चूर हो गये।

85. खगेश्वर ने द्वारिका में पहुँचकर शत-सहस्र बार कृष्ण के चरणों मे प्रणाम किया।

86 हे दैत्यारि ! किसलिए मुझे याद किया ? कौन सा असाध्य कार्य है ? उसके लिए मुझे आज्ञा दीजिये।

87 कृष्ण ने कहा कि घोर अरण्य से होकर युधिष्ठिर को देखने के लिए जायेंगे।

88 देवहरि गरुड़ की पीठ पर एक घड़ी में हिडिम्बक पुरी में पहुँचे।

89 जितनी दूरी से युधिष्ठिर का आसन दिखाई दिया, वहीं से भगवान गरुड़-पृष्ठ से उतरे।

90 देवहरि ने युधिष्ठिर के चरणों में प्रणाम किया। युधिष्ठिर ने उठकर जगन्नाथ को गोद में लिया।

91 युधिष्ठिर ने कहा, हे देव स्वामी ! गेंडा लाने के लिए जाकर वीर पार्थ ने कपिला का वध किया।

92 नारायण सुनकर दुःखी हुए। अर्जुन का मुख देखकर देव ने उत्तर दिया—

93 अनजाने मे हे प्राणप्रिय ! तुमने दोष किया। इससे उद्धार का उपाय मुझे भी अगोचर है।

94 देवहरि ने ब्रह्मा का ध्यान किया। ब्रह्मा हंस पर बैठे।

95. उनके साथ ब्रह्म ऋषि और साठ हजार शिष्यगण हैं।

96. कन्धे पर जनेऊ, हाथ में कुश की पवित्री, छाता, चद्दर और पोथी धारण किये हुए अन्तरिक्ष लोक से उतर रहे हैं।

97. देवहरि के स्थान पर विधाता उपस्थित हुए।

98. उन्हें देखकर देवहरि कृतकृत्य हुए। युधिष्ठिर जाकर चरणों में प्रणाम करते हैं।

99. देव विधाता को बैठने के लिए आसन देकर युधिष्ठिर ने स्वागत किया।

100. अर्जुन की कथा संक्षेप में कहते हैं। हे देव ! इसके प्रायश्चित का कोई उपाय है ?

101. ब्रह्मा ने कहा कि देवताओं का स्मरण करो। चक्रध ार तुम्हारे पाप का खण्डन करेंगे।

102. विधाता की बात से देव दैत्यारि ने सौरभ पात्र में जल लेकर देवताओं को याद किया।

103. नारायण के स्मरण से देव शिव वृषभ पर आसीन हुए।

104. हाथ में त्रिशूल धरे, ललाट पर चन्दन लेपे, कमर में बाघ की छाल पहनकर आ रहे हैं।

105. उनका शरीर शुद्ध स्फटिक की तरह शोभायमान है। डमरू बजाकर त्रिनेत्र उपस्थित हुए।

106. चौदह कोटि शिवगण और नन्दिकेश्वर के साथ ध ूर्जटी आये।

107. विघ्नेश्वर चूहे पर और कार्तिकेय मयूर पर बैठकर आये।

108. इस प्रकार ईश्वर हिडिम्बक वन में उपस्थित हुए। उन्हें देखकर युधिष्ठिर ने पूजा की।

109. विश्वनाथ के चरणों में प्रणाम करके जगन्नाथ अर्जुन की बात कहते हैं।

110. देवहर गजानन और कार्तिकेय के साथ पूजित हुए।

111. युधिष्ठिर द्वारा कार्तिकेय की पूजा के समय सिंह के ऊपर बैठकर दुर्गा पहुँचीं।

112-113. हिडिम्बक वन में माहेश्वरी हाथ में खप्पर और कटारी लेकर उपस्थित हुईं जिन्हें देखकर युधिष्ठिर ने पूजा की।

114. भद्रकाली युधिष्ठिर को आशीर्वचन देती हैं कि तुम मर्त्यलोक में राजा होकर सत्य-पालन करो।

115. युधिष्ठिर ने कहा, हे देवी ! दोष को क्षमा करो। इस हत्या-दोष से हे माँ ! तुम्हीं पार कराओ।

116. दुर्गा ने कहा, तुम्हारी साध पूरी कराऊँगी। इस मर्त्यलोक में तुम तो साधु पुरुष हो।

117. दुर्गा हिडिम्बक वन में रहीं। पवन मृगवाहन से उपस्थित हुए।

118. अपने साथ उनवास पवन लेकर विधाता के पास पहुँचे।

119. सप्तरत्न लेकर कुबेर महात्मा उपस्थित हुए।

120. ऐरावत के कन्धे पर बैठकर देव इन्द्र चौंसठ कोटि विद्याधर देवताओं को लेकर उपस्थित हुए।

121. पुरन्दर के अस्सी लाख वीर अपने-अपने वाहन से जा रहे हैं।

122. जयमुनि, चित्रसेन और सब ब्राह्मण सेना के अग्र भाग में हैं।

123. देवपुरुष के साथ राहु-केतु समेत नव ग्रह उपस्थित हुए।

124. वायु, वरुण आदि दस दिग्पाल अपने-अपने वाहन से आये।

125. चन्द्र देवता आदि सत्ताईस लाख देवता उपस्थित हुए।

126. रवि, शुक्र, बुद्ध, शनि आदि देवताओं के मण्डल में सम्मलित हुए।

127. सनक, सनातन, उग्रमहादेव केशव के पास पहुँचे।

128. वेदव्यास कोटि मुनियों को साथ लेकर देव युधिष्ठिर के पास उपस्थित हुए।

129. एक लाख चेलों को लेकर पौलस्त्य और एक कोटि चेलों को लेकर मारकण्डेय महामुनि प्रविष्ट हुए।

130. देव ऋषि, ब्रह्मर्षि और राजर्षि गण यमदग्नि के पास बैठे।

131 कृष्ण ने इन्द्र की ओर देखकर कहा, हे सुरनाथ ! सुधर्म सभा को बुलाओ।

132. जगन्नाथ की आज्ञा से इन्द्र ने शीघ्र देवसभा बैठायी।

133. सभी देवताओं के स्थान ग्रहण करने के बाद इन्द्र ने पुष्पवृष्टि की।

134. विलासिनियाँ पूर्ण हर्ष के साथ नृत्य-रंग करती हैं। गन्धर्वगण विभिन्न भंगी में नृत्य करते हैं।

135. ब्रह्मानन्दन ने वीणा हाथ में ली। देवगण नृत्य में मत्त हुए।

136. इसी समय सभा में युधिष्ठिर आकर खड़े हुए और प्रणाम किया।

137. देव शिव ने कहा--उठो। तुम्हारी इच्छा पूर्ण हो।

138. युधिष्ठिर ने कहा, हे पिता ! अर्जुन ने कपिला का वध किया। इसीलिए मैं आशंकित हूँ।

139. इन्द्र, गोविन्द, ब्रह्मा, हरि और हर सबका मैंने वरण किया।

140. कृष्ण ने कहा, पृथ्वी का भार दूर करने के लिए मैं

और पार्थ उत्पन्न हुए।

141. सभी लोग कृष्ण और अर्जुन को एक ही समझते हैं। यदि वह पापी है तो मैं कैसे निष्पापी हूँ ?

142-143. हे स्रष्टा ! तुमने जब अर्जुन के ऊपर पाप-दोष आरोपित किया तो हम दोनों मर्त्यलोक में क्यों रहेंगे ?

144. संग्राम-भूमि में गो-ब्राह्मण सबका पतन होता है। हे ब्रह्मा ! क्या तुम उसका दोष-विचार करोगे ?

145. इसने तो बिना देखे ही जीव पर आघात किया। हे विधाता ! क्या इस कष्ट से पार नहीं करोगे ?

146. अर्जुन पर पाप-दोष आरोपित करने पर पृथ्वी का भार कैसे दूर होगा ? कृष्ण ने कहा।

147. इन्द्र ने कहा, कृष्ण और अर्जुन एकात्मा होकर हे ब्रह्मा! तुम्हारे शरीर से उत्पन्न हुए।

148. ब्रह्मा का रुधिर और ईश्वर की विभूति, विष्णु की देह और इन्द्र की शक्ति से ये निर्मित हैं।

149. इन्द्र ने कहा कि यह मेरा पुत्र है। हे ब्रह्मा ! इसे मुक्त कर दो।

150. विष्णु और इन्द्र जिसके लिए विनीत अनुरोध कर रहे है, उसे हत्या-दोष क्यों है ?

151. विधाता ने नारद को आज्ञा दी कि व्यास को बैठाकर यज्ञ आरम्भ करो।

152. नारद ने नारायण के सामने कहा कि हे नरपति ! यज्ञ को आरम्भ करो।

153. युधिष्ठिर ने कृष्ण की अत्यन्त प्रार्थना की। तुम्हारे कारण सब अनिष्ट-खण्डन होता है।

154. हे नाथ ! तुम्हारे अतिरिक्त हमारा कोई मित्र नहीं है। यज्ञ की सामग्री हम कहाँ से पाएँगे ?

155. देवहरि ने नारद को बुलाकर कहा कि अपनी शक्ति के अनुसार रत्नाकर के भुवन से यज्ञ की सामग्री ले आओ।

156. मायाधर की माया से नारद रत्नाकर भुवन से सब कुछ पा गये।

157. देव हरि ने विश्वकर्मा को यज्ञशाला बनाने का आदेश दिया।

158. जगन्नाथ की आज्ञा से शिल्पी ने शीघ्र जाकर क्षणभर में यज्ञशाला का निर्माण किया।

159. देवर्षि गण ने यज्ञशाला में बैठकर अग्नि की स्थापना की।

160. गाय का घी, जल और तिल लेकर आहुति करने के लिए विश्वामित्र का वरण किया गया।

161. मुक्तिधर को लेकर यज्ञ में आरोपित किया। ईश्वर देवता पास में उपस्थित हुए।

162. पवन देवता, मुनि व्यास और भारद्वाज पाप-शान्ति मन्त्र का पाठ करते हैं।

163. अगस्त्य मुक्ति गायत्री पढ़ते हैं और तपधारी वसिष्ठ अजपा जाप करते हैं।

164. अर्जुन को बुलाकर यज्ञ-भूमि में बैठाकर मुक्ति-मन्त्र से अभिमन्त्रित तीर्थजल से स्नान कराया।

165. सभी ऋषि अजपा गायत्री पढ़ते हैं। स्वयं वेदेश्वर गो हत्या-दोष न लगे—ऐसा कहते हैं।

166. सभी देवता जय-जय ध्वनि के साथ अर्जुन के सिर पर पंचामृत छिड़कते हैं।

167. एक कोटि तीर्थजल लेकर पुष्कर आये और अर्जुन के सिर पर ढालकर अभिषेक किया।

168. अप्सरायें मंगल-ध्वनि और कामिनियाँ उलू ध्वनि करती हैं।

169. कामिनियाँ सुस्वर में नृत्य-गीत करती हैं। चण्डमुनि के पुत्र मंगल पाठ करते हैं।

170. गोमती नदी में स्नान कराकर अर्जुन को रेशमी वस्त्र पहनाया। इसके बाद देव सभा में बैठाया गया।

171. इस प्रकार पार्थ की मुक्ति हुई। मर्कतेश्वर लिंग पृथ्वी पर स्थापित हुआ।

172. मुण्ड पर मालती लिंग को स्थापित करने से वह पृथ्वी पर गोकर्णेश्वर रूप में प्रसिद्ध हुआ।

173. ऋषिगण ने अनेक कल्याण वचन कहकर पाप-ध्वंस किया।

174. युधिष्ठिर की ओर देखकर कृष्ण ने कहा, तुम्हारे शरीर पर पाप नहीं लगेगा।

175. वर्तमान पाप-पुण्य की बात छोड़कर तुम लोग यहाँ से चल दो। देवताओं का दर्शन करके तुम्हारा शरीर निर्मल हो गया।

176. नारायण का वचन सुनकर पाण्डव चल दिये। नारायण की प्रसन्नता से पाप-दहन हुआ।

177. जगन्नाथ ने कहा कि यदि शरीर में पाप रहता तो तुम्हारे लिए दोनों द्वार बन्द हो जाते।

178. पाण्डवों की ओर देखकर नारायण ने हर्षित होकर कहा कि अब तुम्हारा शरीर निष्कलंक हुआ।

179. अब मैं पार्थ को लेकर पृथ्वी का भार हरण करूँगा।

180. हे धर्मराज ! तुम मुझ पर कृपा करना। मेरी सेवा तुम्हारे चरणों में समर्पित है।

181. युधिष्ठिर ने कहा, हे स्वामी ! तुम्हारे आश्रय से हम पाँचों पाण्डुपुत्र सत्याचार करके रह रहे हैं।

182. हे वासुदेव ! कौरवों के कपट आचरण से तुम्हारे द्वारा हमारा उद्धार हुआ।

183. कपट से उन्होंने भीम को विष-लड्डू दिये और नागिन के खाने के लिए जल में फेंक दिया।

184. वारुणावन्त में कपटपूर्वक गाय का घी और पुआल से एक भवन का निर्माण किया।

185. हे हरि ! तुम्हारे अनुग्रह से उससे भी पार हुए। इस द्वापर युग में हम लोग तुम्हारी शरण में हैं।

186. गोहत्या और ब्रह्महत्या आदि पाप तुम्हारी शरण में आने से खण्डित होता है।

187. हे महादेव ! सर्वदा दया रखना। हे विश्ववासी ! मुझसे हमेशा अविच्छिन्न रहना।

188. तुम्हें जो एक बार आँखों से देखता है, उसके कोटि जन्मों के पाप दूर हो जाते हैं।

189. तुम्हारा दर्शन करते ही शरीर में किंचित् पाप नहीं रहता। तुम्हारा मुँह देखने से स्वर्गपुर का वास मिलता है।

190-191. सदाशिव नाथ प्रत्यक्ष खड़े होकर कहते हैं कि इन्द्र तुम्हारे राज्य पर हमेशा वृष्टि करेगा। यह मेरी बात पृथ्वी पर चिरन्तन रहेगी।

192-193. इन्द्र, गोविन्द, ब्रह्मा, युधिष्ठिर सहित पाँच भाई और तैंतीस कोटि देवताओं ने एक-एक लिंग की स्थापना करके शिव की पूजा की।

194. एक-एक बालुका लिंग पर बेलपत्र रखकर पूजा करने से महादेव प्रकट हुए।

195-197. इन्द्र ने जिसकी पूजा की वह इन्द्रेश्वर, यम ने जिसकी पूजा की उसका नाम यमेश्वर, ब्रह्मा ने जिसकी पूजा की उसका नाम ब्रह्मेश्वर, चन्द्र ने जिसकी पूजा की उसका नाम चन्द्रेश्वर, वरुण ने जिसकी पूजा की उसका नाम वरुणेश्वर, कुबेर ने जिसकी पूजा की उसका नाम कुबेरेश्वर हुआ।

198. तैंतीस कोटि देवताओं ने पूजा की जिससे उनका नाम उन्हीं तैंतीस कोटि देवताओं के आधार पर रखा गया। संक्षेप में मैंने कुछ-कुछ नाम बता दिये।

199. पाँचों पाण्डवों ने एक-एक लिंग की पूजा की। उनके नाम के आधार पर धर्मेश्वर, भीमेश्वर, अर्जुनेश्वर, नकुलेश्वर और सहदेवेश्वर पृथ्वी पर स्थापित हुए।

200. कुन्ती ने जिसकी पूजा की उसका नाम कुन्तेश्वर हुआ। ब्रह्मा ने कुन्तीपुत्रों को आशीष दिया।

201. व्यास ने कहा कि यह पापमुक्ति का तीर्थ है। यहाँ सुरनाथ पुष्प-वृष्टि करते रहेंगे।

202. नित्य इन्द्र देवता वर्षा करेंगे जिससे शिव देवता का शरीर शीतल रहेगा।

203. ब्रह्मा ने व्यास की ओर देखकर पूछा कि यहाँ रहकर कौन पूजा करेगा ?

204. व्यास महर्षि ने सहदेव की ओर देखकर कहा कि हे पुत्र ! चारों ओर खोजकर देखो।

205. व्यास की आज्ञा से सहदेव मन्त्रिवर चला। जंगली कन्दमूल आदि को खोदने में लगे हुए एक शबर को देखा।

206. शबर को लेकर मन्त्रिवर शीघ्रतापूर्वक चला। शीघ्र ही व्यास के सामने उसे उपस्थित किया।

207. कृष्ण ने कहा—हे शबर ! जल, पुष्प-पत्र लेकर हर की पूजा करो।

208-209 नदी तट से वह मछली मारता और घोंघे की माँस खाता। उसे लेकर वीर सभा में उपस्थित हुआ। युधिष्ठिर देखकर हँसने लगे।

210. व्यास ने कहा, हे नाथ ! तुम तो सभी के शरीर में विराजमान हो। तुम्हीं बताओ कि इसको लाना अनीतिकर है ? और किसको लाया जा सकता है?

211. छप्पन कोटि जीव-जन्तुओं को एक ही प्राण देकर क्यों ऐसा विधान किया था ?

212. सहदेव ने कहा यह जाति से 'बाऊरी' हरिजन है। ये घोघा और सीपी का आहार करके जीते हैं।

213. कृष्ण ने कहा इसने शबर भाव को ग्रहण किया। इसलिए इसके शरीर से सारा पाप दूर हो गया।

214. इस नर रूपी नारायण का मर्त्यलोक में अवतार हुआ है। यह जीवनभर सबको समान भाव से सन्तुष्ट करता रहेगा।

215 हे ब्रह्मा ! इसे उपवीत प्रदान करो। युग-युग तक इसकी बात पुराण मे रहे।

216 स्वयं वेदव्यास ने गुरुच लता के धागे से एक उपवीत बनाकर उसके गले में डाल दिया।

217 तीर्थजल से मुनिवर ने अभिसिचित करके कहा कि आज से तुम कालिन्दी विप्रवर हुए।

218 बाऊरी शासन के रूप मे यह प्रसिद्ध हो। यह सभी बात युग-युग तक रहे।

219 बाऊरी जनों को लाकर एक गाँव बसाया। उसी मे उसका नाम बाऊरी शासन हुआ।

220 देवताओं की उपस्थिति में ताम्रपत्र लिखा गया कि इसका जो अपहरण करेगा उसे दोष लगेगा।

221 यह कथा युग-युग तक पुराण मे बनी रहे। जब तक यह कथा रहेगी, तब तक सबका दोष हरण होगा।

222 ऐसा ताम्रपत्र महाजन को देकर सभी देवता अपने-अपने स्थान को गये।

223. पाण्डव हिरण्यक वन में रह गये। दूसरे दिन महेन्द्र पर्वत पर गमन करते हैं।

224. कुन्ती सहित पाँचों पाण्डव गोकर्णेश्वर महादेव का दर्शन करते हैं।

225. मत्स्य कुण्ड-जल प्रपात मे घुसकर स्नान किया। इसके बाद महेन्द्र गिरि पर सदानन्द के दर्शन करते है।

226. विश्वनाथ वहां अपने स्वरूप में खड़े है। ऐसा लगता है कि चन्द्रकिरण की आभा प्रज्वलित हो रही हो।

227. पाण्डु-आत्मजों ने पंच रत्न प्रदान करके पूजा की। स्वर्ग से इन्द्र ने पुष्प की वर्षा की।

228. एकात्म होकर एक लय से विश्वनाथ देव की स्तुति करते हैं।

229-249. हे त्र्यम्बक, शूलहस्ता, सदाशिव अभय वर दाता! तुम्हारी जय हो। तुम सदाशिव, कपिल स्वर्गवासी, सदानन्द, त्रिपुर दर्प-ध्वंसकारी, मति भोटा, आनन्द-मति-मुक्त हृदय, दक्ष-यज्ञ-भंजनकारी, योगीजन-मनरंजक, कपिलासवासी, अन्धक-दर्प-ध्वंसी आदि निरंजन आदि ईशान, रावण-वरदाता, पंचवक्त्र-त्राता अनादि पचमुख, शशिरेख, भक्तवत्सल, भक्त-भोक्ता, स्रष्टा, पालनकर्ता, अभयकाल, रक्षक, पार्वती-प्राणनाथ, शशि-गंगाभालविराजित, सृष्टिउद्धारक, पापखण्डन, देवराज, अनादि आत्मज, रेख-अरेख, कालगरलभक्षी, करुणाकर, जगज्जनमोक्षा, अनादि विश्ववासी, ब्रह्मराशि, संसारजीवनदाता, लोहित पिंगल देव, लॉगट नाम धारी, सुख-दुःख समदर्शी, मम दुःख उद्धारक, भक्त-अनुमत, धतूरा पुष्प-मालाधारी, शूलपाणि, ब्रह्मज्ञानी हो।

250 तुम्हारा भक्त शूद्रमुनि सारला दास हे महादेव ! तुम्हारा जयगान करता है।

251 इस प्रकार युधिष्ठिर ने अनेकशः स्तुति की। धूर्जटी प्रसन्न होकर अपने रूप मे प्रकट हुए।

252 युधिष्ठिर ने शत बार प्रणाम करके कहा, हे स्वामी! तुम्हारी प्रसन्नता से मैं मुक्त हुआ।

253 हर ने कहा कि तुम्हारा समस्त जन्मों का पाप दूर हो जाय। समस्त विपत्ति खण्डित होकर तुम्हारा राज्य प्राप्त हो।

254. शिव वर देकर अन्तरिक्ष में चले गये। पाण्डुपुत्र महेन्द्र गिरि के शिखर पर रह गये।

दुर्योधन का अभिषेक और कर्ण-महिमा वर्णन

1 हे युगपति ! महाभारत के इस आदि पर्व की नीति और रीति सुनो।

2 पाण्डवों के निधन-समाचार से धृतराष्ट्र दो वर्ष तक कष्ट पाता रहा।

3-4. सभी भ्रान्तियों की उपेक्षा करके धृतराष्ट्र पुत्रों को भूल गये। भीष्म और भूरिश्रवा, द्रोण, कर्ण, शल्य, शकुनि मन्त्री को लेकर मन्त्रणा करता है।

5-6. सभा में धृतराष्ट्र ने कहा, हे मेरे सभी कुटुम्बी, सहोदर और बन्धुओ ! मैं चक्षुहीन राज्य के योग्य नहीं हूँ। यदि तुम लोगों का विचार हो तो मैं दुर्योधन को राज्य दे दूँ।

7. भीष्म ने कहा कि वही भाग्यवान है। वह श्रीमान, वीरवर, अभय और बलवान है।

8. जिसके हाथ और पाद में पद्‌मचिह्न है, उसके कन्धे से कभी भी लक्ष्मी नहीं उतरती।

9. धृतराष्ट्र ने एक गुणदेव नामक ज्योतिषी को बुलाकर पूछा।

10 गुणदेव ने एक शुभ दिन बताया जिस दिन श्रीराम का अयोध्या में अभिषेक हुआ था।

11-13 धनु शुक्ल पूर्णिमा, पुष्य नक्षत्र, वृहस्पतिवार तैतिल करण, आयुष्मान योग, कर्कट गृह में चन्द्रवास के दिन श्रीराम का अभिषेक हुआ था। इसीलिए वह दिन निर्दोष माना जाता है।

14 गुरु पुष्य अनुकूल अमृत योग में उसने शुभ दिन का निर्णय किया।

15 अभिषेक की सारी तैयारी करके राज्य में उत्सव मनाया गया।

16 ब्राह्मणों का वरण करके अनेक दान दिये। विपत्ति शान्ति के निमित्त चण्डिका स्तोत्र का पाठ किया गया।

17 सोने से पाँच शाखा का दण्ड और देववरण प्रतिमा तथा हीरे की कटोरी बनाई गयी।

18 देवताओं की तृप्ति हेतु महामन्त्री शकुनि ने शीतल द्रव्य का आयोजन किया।

19. बड़े चमत्कारपूर्ण देवाग वसन से एक श्वेत हस्ती और एक पटु अश्व को सुसज्जित किया गया।

20-21 वसिष्ठ, विश्वामित्र, वामदेव, मार्कण्डेय, बाल्मीकि, व्यासदेव, अगस्त्य, जनक, सनक आदि समस्त ऋषि हस्तिनापुर में प्रविष्ट हुए।

22. पञ्चकटक में राजा की आज्ञा अनुसार दुर्योधन विधि-विधान से अभिषिक्त हुआ।

23. कोटि तीर्थ के अधिपति पुष्कर के पुण्य जल से दुर्योधन के मस्तक का अभिषेक हुआ।

24 घृत योग से हवि की आहुति दी गयी। भानुमती को लेकर राजा उपस्थित था।

25. पुरोहितों ने पंचामृत पदार्थ लाकर दिया।

26. दाहिने पार्श्व में कनक दण्ड लेकर शकुनि मंगल पाठ कर रहा है।

27-28. बायें पार्श्व में कर्ण, अश्वत्थामा, द्रोण, शल्य, वाल्मीकि, कृप, भूरिश्रवा चामर डुला रहे हैं और बालायें मंगल-ध्वनि कर रही हैं।

29 चारों ओर एक लाख पाटछत्र, एक लाख आलम्ब और पाँच लाख ऊद्‌दण्ड विराजमान हैं।

30. वीर वाद्य बजते हैं और सेना सुसज्जित है। शुभ ध्वनि से पृथ्वी काँप रही है।

31 एक कोटि सुवर्णमण्डित शंख आगे बज रहे हैं। एक लाख विलासिनियाँ मंगल गान करती हैं।

32 कुरुपति राज्य में अभिषिक्त होकर पंचकटक मे घूमता है।

33 शची के इन्द्र की तरह भानुमती के साथ दुर्योधन प्रतीत होता है और मन्त्रीगण अमरवृन्द की तरह शोभायमान होते हैं।

34. अनेक राज्यों से राजा आकर पहुँचे। सेनाओं के समावेश से अत्यन्त भीड़-भाड़ हो गयी।

35. पात्र, अमात्य और योद्धाओं को पगड़ी आदि अनेक उपहार देने से भण्डार खाली हो गया।

36 अनेक अलंकारों से आभूषित होकर दुर्योधन अलकानाथ की तरह दिखाई दे रहा है।

37 नरपति दुर्योधन सिंहासन पर विराजमान हुआ। नियुक्त अधिकारियों ने शासन-व्यवस्था का विधान किया।

38. विभिन्न आमात्यों पारिदण्ड और समदण्ड आदि सैन्यवाहिनी का दायित्व दिया गया।

39-40. दुर्योधन ने कर की ऐसी व्यवस्था की थी कि कृषि उपयोगी भूमि से उत्पन्न अन्न का एक चौथाई भाग लगान के रूप में राज्य को देना होगा। बीस बीघे बाग-बगीचा और आवासी जमीन के लिए एक रत्ती श्रीराम स्वर्ण मुद्रा देने का विधान था।

41. अपने हाथ से पच्चीस हाथ नापकर एक बाँस का लट्ठा बनाया।

42. चारागृह और खोर के लिए एक माढ़ 'आधा तोले स्वर्ण मुद्रा' कर की व्यवस्था की गयी थी।

43 राजा के कृषिकर्मियां को शस्यागार से वेतन देने की व्यवस्था की गयी।

44 बारह राष्ट्र और छत्तीस मण्डल में जितने देवता थे उनकी सार्वकालिक पूजा की व्यवस्था की गयी।

45 देवताओं के लिए जमीन दान की गयी। ययाति के पांजी विधान के अनुकूल सारी व्यवस्था की गयी।

46. इसके बाद अपने भवन में प्रविष्ट हुआ। ऋषियो की पत्नियों ने उसके सिर पर अर्घ्य दिया।

47 विधानपूर्वक भोजन पर बैठे और अग्नि, भूत तथा द्विजों को अन्न की बलि दी।

48 अपने पितृ लोगों को अन्न देकर पानी छिडककर नृपति ने भोजन किया।

49 रसोइये अमृत रस पाक बनाकर परोसते हैं। राजा भोजन समाप्त करके आचमन के पश्चात् मन्दिर मे प्रविष्ट हुआ।

50 छत्रशाला मे पात्र मन्त्रीगण इच्छानुसार सुख से भोजन करते है।

51 कुरु राजा ने कर्ण को पगडी दी। हे मित्र ! तुम मेरी ओर से शत्रु का निधन करके दिग्विजय करना।

52 मै राजा हूँ और तुम मेरे सेनापति हो। यह सचराचर पृथ्वी तुम्हे समर्पित है।

53 राजा की आज्ञा से वह महावीर कर्ण पृथ्वी का महाभार वहन करता है।

54 वह पराक्रमी पदाक्षेपी पॉच कदम में ही पचकटक को लॉघकर वारुणावन्त मे पहुँचा।

55 जिस स्थान पर जोर से कूदकर पदाघात करता, वहॉ वसुधा के मुख से झरझर रक्त स्रवित होता है।

56. पृथ्वी देवी ने कर्ण की स्तुति करके कहा कि हे बेटा! धीरे से कूदो।

57. कर्ण ने कहा कि यदि तुम मुझे प्रतिदिन सौ भार स्वर्ण देती रहोगी तो मैं जोर से पदाघात नहीं करूँगा।

59. देवी पृथ्वी भय से सहमत हुई। यदि तुम स्थिर भाव से गमन करोगे तो मैं सौ भार स्वर्ण रोज देती रहूँगी। वसुधा की यह बात सुनकर महामत्त कर्ण धीरे-धीरे चलने लगा।

61. वसुधा के मुख से महारस लेकर पारस पत्थर पर डालता है। वह पारस पत्थर लगाने से वारुणावन्त पर्वत से एक सौ भार स्वर्ण रोज निकलता है।

62. "उजान वंश" का अजपति किरात वारुणावन्त पर्वत से सौ भार सुवर्ण को ढोकर लाता है।

63. कर्ण की आवास भूमि मिथिला है। दुर्योधन ने स्नेह से उसे अंग राज्य दिया।

64 वहाँ नित्य सौ भार स्वर्ण पहुँचता है। उससे पच्चीस भार स्वर्ण रोज कर्ण राजा को देता है।

65 67 इससे धृतराष्ट्र को एक भार, गान्धारी को एक भार, सजय को एक भार, भूरिश्रवा को एक भार, भीष्म को एक भार, द्रोण को दो भार, अन्तःपुर में भानुमती को तीन भार, अश्वत्थामा को एक भार, कृप को एक भार और विदुर को दो भार करके नित्य देता है।

68 राजा के सौ छोटे भाइयों को नित्य पच्चीस भार देता है।

69 राजा की बहन दुःशला को एक भार देता है।

70 राजा दुर्योधन के समस्त सेवकों को पाँच भार देता है।

71 जो किरात ढोकर लाता है, उसको एक भार देता है।

72 कर्ण वीर नित्यकर्म और स्नान के समय तीन अंजुरी स्वर्ण गंगा को समर्पित करता है।

73. और एक भार आकाश में लुटा देता था। जो जितना पाता उठाकर ले जाता।

74 दो भार पृथ्वी के ऊपर छींट देता है। गरीब पारिवारिक जनो के माँगने पर बिना किसी को निराश किये दो भार देता है।

75 चौवन भार जो बचता उससे एक भार को अपने भण्डार में भेजता था।

76. वह महाक्षत्रिय कर्ण शेष तिरपन भार को नित्य सात घड़ी तक बैठकर दान दे देता।

77 अगस्त्य वैवस्वत मनु से कहते हैं कि चारों युगों में कर्ण की महिमा विख्यात हुई।

78-80 कंचन देश के राजा अनंगसेन राजा की भार्या तुलसी थी। उस पतिव्रता स्त्री की कन्या का नाम ऋतुवती था। कर्ण की जगत्प्रसिद्धि को सुनकर अनंगसेन नृपति ने उसे अपनी कन्या को प्रदान

किया।

81. ऋतुवती का पति जगत् वन्दनीय अंग देश का राजा कुन्ती का पुत्र है।

दुःशासन प्रभृति भाइयों का विवाह

1-2. वैवस्वत मनु ने अगस्त्य से कहा कि दुर्योधन का विवाह तो भानुमती से हुआ। शेष सौ भाइयों का विवाह किससे हुआ ? हे महात्मा ! मुझे संक्षेप में बताओ।

3-4. पवित्र हैहय वंशीय वृन्दारक देश के राजा वीरबाहु ने अपनी कन्या हंसावली को दुःशासन को प्रदान किया।

5-54. कृपाण देश के राजा सूर्यसेन ने कन्या सूर्यावती को दुर्जय को, कर्नाटक देश के राजा अनन्त ने कन्या अनन्तवती को दुरिन्द को, मानभंग देश के राजा केशव ने कन्या कमला को दुकर्ण को, उजाण देश के राजा कर्ण केसर ने चन्द्रावती कन्या को, दुराकर्ण को, पद्मदल देश के राजा पद्म केसरी ने पद्मावती कन्या को दुर्नाम को, माधव देश के राजा सौभरि ने सत्या कन्या को दुर्भानु को, मलय देश के राजा बसन्तसेन ने बसन्तवती कन्या को दुरान्तक को, अनुहर देश के राजा पद्मसेन ने नीला कन्या को दुराष्टक को, वज्रगिरि देश के राजा बामदेव ने मोहिनी कन्या को दुर्दाल को, चण्डीहर देश के राजा कृतकेशी ने सौदासी कन्या को दुकाल को, मगध देश के राजा अद्रमित ने सन्ध्या कन्या को दुर्मन को, अनुभव देश के राजा दरदसेन ने जरता कन्या को दुर्वीर को, सुरसिद्ध देश के राजा सुरपति ने हरावती कन्या को दुदास को, मधुवन देश के राजा कैटभसेन ने जनिता कन्या को दुकेश को, निर्झर देश के राजा गणपति ने चन्द्रकान्ती कन्या को दुष्काम को, विन्ध्यागिरि देश के राजा विन्ध्यमाली ने रत्नावली कन्या को दुसेक को, मण्डल देश के राजा मण्डल चक्रवर्ती ने तारावती कन्या को दुसाम को, बेलाल देश के राजा बेलाल केसरी ने बेलावती कन्या को दुइन्द्र को, भोट देश के राजा उदयभानु ने मानिनी कन्या को दुराष्ट्र को, मालती देश के राजा मानकेतु ने मालती कन्या को दुःपय को, अरणि देश के राजा प्रचण्ड मल्ल ने अबाहुल कन्या को दुसन को, तारण देश के राजा तारण ने इच्छावती कन्या को दुर्जय को, मल्हार देश के राजा मल्हारसेन ने सारमती कन्या को दुर्दण्ड को, मेरुदेश के राजा मेरुशूल ने चंचला कन्या को दुर्बाल को, वैश्वानर देश के राजा अनलसेन ने बल्लभा कन्या को दुर्जय को, मालव देश के राजा कृतवर्मा ने दुहिता कन्या को दुरापद को, नील देश के राजा नीलसेन ने नीलावती कन्या को दुसम को, चकोर देश के राजा चन्द्रकान्त ने चन्द्रावती कन्या को दुर्दान्त को, नैरुत देश के राजा मरुतसेन ने माधवी कन्या को दुकेश को, डाहात्य देश के राजा कृतकेशी ने शुभकेशी कन्या को दुतनु को, कामरूप देश के राजा कामपाल ने बालावती कन्या को दुध्वंस को, स्कन्ध देश के राजा त्रिगर्त ने त्रिवंचा कन्या को दुर्दन्न को, कन्नौज देश के राजा बनमाली ने पुष्पमाली कन्या को दुराध को, बंगाल देश के राजा सदाशिव ने मदनावती कन्या को दुष्प्रभ को, साल्व देश के राजा शाल्व ने शाल्ववती कन्या को दुब्रह्म को, भीमावर देश के राजा मान अर्जुन ने अनुपमा कन्या को दुर्महा को, खांजन्य देश के राजा ऊर्ध्ववाहु ने सुमति कन्या को दुर्बाहु को, त्रिहुत देश के राजा वैदूर्यसेन ने विशाखा कन्या को दुरानन को, मानदेश के राजा मानचक्रवर्ती ने मालावती कन्या को दुकेतु को, शरद देश के राजा शरदंजन ने कांचनी कन्या को दुष्ट को, महाराष्ट्र के राजा सुमन्तक ने सुमन्ता कन्या को दुर्वाक को, वीर देश के राजा वीरबाहु ने वीरवती कन्या को दुराहु को, महाचिर देश के राजा मान्धाता ने अलका कन्या को दुर्भीम को, समदीर्व देश के राजा शतमनु ने श्रीवत्सा कन्या को दुदानु को, क्षीर देश के राजा सोमदत्त ने गोपाबाली कन्या को दुर्भाव को, सौराष्ट्र देश के राजा शोरी ने शाकम्बरी कन्या को दुकंचक को, काशी देश के राजा काशीश्वर ने कामाक्षी कन्या को दुर्हर को, कौशिक देश के राजा काकुस्थ ने कौशिकी कन्या को दुरगत को, छत्रदेश के राजा वीरभ्रग ने छत्रावती कन्या को दुरांग को प्रदान किया।

55. महाभारत असंख्य अकलित सागर है। उसकी गणना करने की किसमें सामर्थ्य है ?

56. गंगा के बालू पर खड़िया से कौन लिख सकता है ? अकलित सागर की माप कौन कर सकता है ?
57. कल्पमुख से मार्कण्डेय भी लिख न सके। अन्त मे विमुख होकर अगाध सागर में फेंक दिया।
58. धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को बहन करने वाली यह सरिता सृष्टि और प्रलय का सम्पादन करती है।
59. मैं पूर्व जन्म की दुष्कृति के कारण मानव योनि मे पैदा हुआ। अतः मुझे मुनियों के सत्संग का लाभ नही मिल सका।
60 नीतिहीन संसार का मैं मूल्याकन न कर सका। अपने हृदय की व्यथा को मैं कहाँ तक कह सकता हूं ?
61 62 जखेरपुर वासिनी नर्मदा सरस्वती, अभय हिंगुला ने सारला चण्डी के रूप में कलिकाल जानकार शरीर का गोपन किया। उस देवी ने मेरे विगत जन्मों के पाप का खण्डन किया।
63 उसने नील सुन्दर पर्वत पर अपना स्वरूप मुझे दिखाया। सिद्धि पाथी देकर मुझे आदेश दिया।
64 65 उसकी आज्ञा से मैंने इतनी बडी कथा कही। श्रीचण्डी सारला देवी की प्रसन्नता से मै निर्भीक वक्ता हूं। ससार जनहित के लिए मैंने इस ग्रन्थ की रचना की। शूद्रमुनि सारला दास गतिमुक्ति की प्रार्थना करता है।

द्रुपद का वर-लाभ

1. वैवस्वत मनु ने अगस्त्य का पाद पूजन किया।
2. हे ब्रह्मपद साधक ! कुम्भऋषि के तनु ! एक कथा पूछूँगा। अपने ब्रह्मज्ञान से बताइये।
3 4. द्रोण के अपमान मे द्रुपद ईश्वर की तपस्या करने के लिए गया। क्या देव उमापति उस पर प्रसन्न हुए ? उस पांचाल चक्रवर्ती ने उनसे कौन सी कामना व्यक्त की ?
5 हे अगस्त्य ! तुम महापण्डित और भिज्ञ ऋषि हो। यह कथा मुझे विशेष भाव से बताओ।
6-7. अगस्त्य महात्मा भविष्यवाणी कर रहे हैं। हे क्लिंका नृपति ! ध्यान से सुनो। द्रुपद ने रुद्र का ध्यान किया।
8. सांसारिक काम-वासना त्यागकर श्वास निरोध करके उपवास के साथ अठारह वर्षो तक उसने तपस्या की।
9. उसका शरीर तपस्या मे डूब गया और वह भूमि पर लेट गया। उसकी कठोर तपस्या देखकर शिव प्रकट हुए।
10 द्रुपद को अशक्त देखकर विश्वनाथ ने तारण मन्त्र से उसके ऊपर जल छिडका।
11 चेतना पाकर राजा द्रुपद उठा और शिव को पास देखकर खड़ा हुआ।
12 एक परम महायोगी महात्मा ने कहा कि मैं तुमसे प्रसन्न हू। शीघ्र वर माँगो।
13 द्रुपद ने कहा, तुम कौन महात्मा हो ? मेरी दुखार्जित तपस्या को तुम क्यो विघ्नित कर रहे हो ?
14 विश्वनाथ ने कहा, तम किसकी तपस्या कर रहे हो ? द्रुपद ने कहा कि मैं विश्वनाथ की सेवा कर रहा हूँ।
15. द्रुपद ने कहा कि हे देव ! यदि तुम अनादि ईश्वर हो तो मै तुम्हारा स्वरूप देखना चाहता हू।
16 द्रुपद की बात सुनकर स्वामी ने वहाँ माया रचना की। शीघ्र ही उन्होंने द्रुपद को अपना स्वरूप दिखाया।
17 उनका शुक्लाम्बर शरीर धवल पुष्प की तरह और वक्ष स्थल चन्द्रकान्त मणि की तरह शोभायमान हो रहा है।
18 द्रुपदेश्वर यह देखकर प्रसन्न हुए कि रात दिन की तरह दिखाई दे रही है।
19. सिद्ध ध्यान, बांधन, साधन, अध्ययन से सर्वज्ञ नाथ पंचमुखी होकर विराजमान हुए।
20 23. हे भस्म विलेपित ! पिंगल निखिल पवित्र केशी, प्रशस्त वक्ष, प्रलम्बित शीतांशु, शरीर धवल, चन्द्र धवल मौलि, षड्ऋतु महारस-विगलित, सूर्य-चन्द्र और अग्नि प्रज्वलित, पंचदश चक्षु युक्त, सिर पर वैराग्य-लक्षण धारी, अर्क-इन्दु-अनल-रूप विधारण पण्डित, अनिमित्त और अकारण कामान्धता-विदारक तुम्हारी जय हो।
24. महामाया जिसकी पंचजटा से गंगा, यमुना और सरस्वती पुण्य प्रवाहिनी के रूप में प्रवाहित है।
25 धवल, पिंगल, लोहित, कृष्ण, नील और आरक्त वर्ण

का जिसका शरीर है।

26. जिसके शिखर पर सर्प लिपटा है और जो षड कुण्डली को धारण करने वाला है। जो रुद्र स्वरूप है और तेज सूर्य से अधिक है।

27. वैश्वानर, कालानल, प्राणत्याग-पिंगला, जात अनल को लेकर जो पंचपिंगल धारण करने वाले हैं।

28 जिसके पंच ललाट पर पंचदश अनल प्रस्फुटित हैं। जिसने किंचित् दोष से विष्णु के पुत्र का दहन किया।

29 ताण्डव नृत्य के द्वारा जो चराचर को रसातल भेज सकता है। वह कौतूहलवश महायुद्ध को क्रीडा भाव से ग्रहण करता है।

30 जिसके दुर्दण्ड शरीर पर मत्तमातंग लोटते हैं, जिसके दसों नख सूर्य की तरह दिखाई देते हैं।

31-32 खट्वांगधारी, दण्ड-मण्डल-देव मौलि, कोदण्ड भूषण, उदण्ड कापाली, मायारोपण, हिरण्य-चिरकुट धारी, हृदय पर भुजगमाल धारी, दिगम्बर, उत्तरायण दक्षिणायन शूलधारी पुरुष द्वारा दोनों पार्श्व में जो आरक्षित है।

34 आकाश की तरह विस्तीर्ण हृदय प्रदेश में वैजयन्ती की माला से शोभित वे वरुण की तरह सुन्दर प्रसन्न दिखाई देते है।

35 डमरू, वीणा और कर्नाट वाद्य बजाकर शिवगण मगरस में मत्त होकर चल रहे है।

36 उस त्रिलोक मे एक शरीरी ईश्वर दिगम्बर रूप मे बैल वाहन पर चल रहे है।

37 हरि और ब्रह्मा के क्षय होने पर भी जो परमयोगी विराजमान है, वह अपने गले मे मुण्डो की माला धारण किये हुए है।

38 कन्धे पर अनन्त नाग का उपवीत धारण किये हुए हैं। कान मे स्वर्ण कुण्डल और ललाट पर मलयगिरि के चन्दन का तिलक लगाये है।

39 कामदेव को भस्म करके उसकी राख को लेपन किये हुए वे कामदेव से भी सुन्दर दिखाई देते है।

40 ऐसे रूप मे स्वामी कापाली आकाशमण्डल से पांचाल नरेश को दिखाई दिये।

41 वामदेव स्वामी ने स्वरूप वर्ण दिखाया। द्रुपद ने शत सहस्र दण्ड-प्रणाम किया।

42. भक्ति देखकर विश्वनाथ प्रसन्न हुए। उन्होंने कहा कि हे द्रुपद ! वर माँगो।

43. द्रुपद ने कहा—हे स्वामी ! सावधान होकर सुनो। मै संग्राम में गुरु द्रोण को जीतने का वर माँगता हूँ।

44. हे अन्ध विदारक, अनादि गुरुदेव ! यदि मुझ पर प्रसन्न हो तो मुझे यही वर दो।

45 ईश्वर के हाथ में पिनाक धनु देखकर द्रुपद ने भक्तिभाव से उसे माँगा।

46-47 तीनों भुवन में जिसे कोई वहन नहीं कर सकता जो कोटि सहस्र बल धारी है, उस अनन्त पिनाक को शिव ने द्रुपद को दिया।

48-50 रुद्र शस्त्र, पाशुपत, तीक्ष्ण भाला, खट्वांग, त्रिशूल और अभय वज्र कवच आदि देकर उन्होंने कहा कि द्रोण को जीतो। द्रुपद ने कहा कि हे देव ! भीम, भूरिश्रवा, अश्वत्थामा आदि द्रोण को घेरकर रखते है। इनको जीतने पर ही द्रोण को जीता जा सकता है। हे देव ! मुझे ऐसा वर दो।

51 कर्ण, कृप, शल्य, शकुनि और कुरुपति ने बिना दोष के घोर अपमान करके दण्ड दिया।

52. इन सबके साथ मैं इनके गुरु द्रोण को जीतना चाहता हूँ।

53 ईश्वर ने कहा, भीष्म और अश्वत्थामा सत्यधर्मा होने के कारण मुझसे जीते नहीं जा सकते।

54 बिना विचारे यदि में तुम्हें वर दे दूँ तो पीछे सिद्धि न मिलने पर हम सब लोगो का नाश हो जायगा।

55 हे द्रुपद ! तुम इन लोगों को कभी भी नही जीत सकते, क्योंकि अर्जुन के स्वजन रूप में ये लोग है।

56. इस मृत्युलोक में उत्पन्न एक ही अर्जुन के साथ ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर और इन्द्र चारों दिग्पाल बराबरी नहीं कर सकते।

57 हम लोग एक-एक करके अर्जुन की बराबरी नही कर सकते तो तुम अर्जुन के द्वारा रक्षित इन लोगों को कैसे जीत सकते हो ?

58-59. द्रुपद ने कहा कि हे देवराज ! मुझे एक कन्या दो। उस दुहिता को अर्जुन को देकर मैं उसकी शरण मे जाऊँगा।

60. वह मेरा जामाता होगा। मैं अर्जुन के हाथ से कौरवो

को मरवाऊँगा।

61. ईश्वर ने कहा, हे द्रुपद ! तुम धन्य हो। यह तुम्हारी बात निश्चित होगी।

62. हे द्रुपद ! तुम्हें कन्या रूप में द्रौपदी प्राप्त हो। उसके द्वारा पृथ्वी का भार समाप्त हो।

63. तुष्टा ऋषि के शाप से इन्द्र के विनष्ट होने पर स्वामी के अभाव में शची घोर तप मे लीन हुई।

64. हम हर और पार्वती जब प्रसन्न हुए, तब उसने पाँच बार पति दो, पति दो कहा।

65. हमने कहा कि हे वनिता ! तुमने जैसी इच्छा की उसी के अनुसार हे सुन्दरी ! तुम्हारे पाँच पति हो।

66. इन्द्र देवता के पाँच मूर्ति का पाण्डवों के रूप मे जन्म हुआ है। उन पाण्डवो की तुम अकेली सती पत्नी हो।

67. ईश्वर ने कहा, हे दुर्वासा और वसिष्ठ ! द्रुपद भुवन मे जाकर यज्ञ विधान करके मन्त्र-कलश की स्थापना करो।

68. यज्ञ से एक कन्या उत्पन्न करो जिसे द्रुपद पाण्डव धनुर्जय को प्रदान करें।

69. यह अनेक कष्ट सहकर मेरा भक्त हुआ है। इसकी मनोवाञ्छा पूरी हो।

70. वर देकर सदाशिव ने प्रस्थान किया। उस आदि देव ने द्रुपद को एक पुष्पक विमान दिया।

71. द्रुपद रुद्र के शस्त्रों को हाथ मे लिए हुए है उनका शरीर अलंकार आभूषण से अलंकृत है।

72. ईश्वर की सेवा मे इस प्रकार फल-प्राप्ति हुई कि अमर विलासिनियाँ चामर डुलाती हैं।

73. अर्जुन ने जब द्रुपद को परास्त कर लिया, उस समय किरात राजा ने उसके राज्य पर अधिकार कर लिया।

74. द्रुपद की सेना को खेदकर मार डाला। द्रुपद को पुत्र और कन्या भी नहीं थी।

75-77. द्रुपद राजा की भार्या पद्मावती पद्मकेसर राजा की पुत्री थी। वह रात्रि काल में भागकर विम्बाधर शबर के घर में प्रविष्ट हुई। उसी रात में उस किरात ने उसे लेकर पद्मदल देश के राजा के पास पहुँचाया।

78. पद्मदल केसरी ने दुहिता को सम्भाला। उसको दूसरे प्रासाद में यत्नपूर्वक रखा।

79. विश्वनाथ की प्रसन्नता प्राप्त करके नरनाथ द्रुपद पांचाल देश में उपस्थित हुआ।

80. आकाश-मार्ग से पुष्पक विमान उड़ाकर राजप्रासाद के ऊपर विराजमान हुआ।

81. राजा के सामने जाकर दूतों ने यह खबर दी। किरात क्रोध से हाथ में खड्ग लेकर दौड़ा।

82. किरातेश्वर प्रासाद के ऊपर दौड़ता है। योद्धा और अमात्य उसका पीछा न कर सके।

83. चन्द्रशाला के ऊपर द्रुपद राजा हाथ में पिनाक लेकर उपस्थित था।

84. किरात के ऊपर आते ही उसने एक रुद्र वाण का प्रहार किया।

85. उसका शरीर शस्त्र के तेज से दग्धीभूत होकर कामदेव के दहन जैसा प्रतीत होता था।

86. उस किरात के पीछे-पीछे जो अमात्य गण आ रहे थे वे भी द्रुपद के शराघात से दग्ध हुए।

87. सभी सेना आशाहीन होकर भाग गयी। द्रुपद गर्जन करके वाण-प्रहार करने लगा।

88. वह अविच्छिन्न रूप से पाशुपत शस्त्र का प्रहार करता रहा, जिससे सभी भस्म होते हैं।

89. दौड़ाकर मारने से सारी सेना रथ, अश्व और गज छोड़कर भागने लगी।

90. ईश्वर द्वारा प्रदत्त शस्त्रों की परीक्षा करते हुए किरात की सारी सेना विनष्ट हुई।

91. उसकी सेना मे दस पद्म रथ, बीस पद्म गज, तीस पद्म अश्व और अगणित पदाति थे।

92. किरात जिस महासम्पदा को लेकर राज्य कर रहा था, उसे द्रुपद ने अपने अधिकार में ले लिया।

93. जो सामन्त गण भाग गये थे वे लौटकर द्रुपद राजा का दर्शन करने लगे।

94-96. यह वार्ता सुनकर पद्मावती को लेकर पद्मदल केसरी अपने साथ अनेक रथ, धन, गज, अश्व और सात अक्षौहिणी सेना लेकर द्रुपद के सामने उपस्थित हुआ। महादेवी अन्तःपुर में प्रविष्ट हुई।

97. अनेक देशों के राजागणों ने आकर द्रुपद के दर्शन किये।

98. ईश्वर की प्रसन्नता से द्रुपद ने बहुत सी सम्पत्ति का अर्जन किया। उसकी नगरी अलकापुरी की तरह दिखाई देने लगी।

99. उसकी राजधानी तीन योजन तक विस्तृत थी। सभी जाति के लोगों का घर सुवर्ण-मण्डित था।

100. देवता भी देखकर उसकी प्रशंसा करते हैं और हर्षित होकर कनक-रत्न की वर्षा करते हैं।

101. जहाँ आनन्द होता है वहाँ सभी एकत्र होते हैं और स्तुति करते हैं। पुण्यवान लोगों की सभी पूजा करते हैं।

102. पुण्य स्थान पर पुण्यवान लोग जाते हैं और उत्सपूर्ण स्थान पर उत्सव मनाते हैं।

103. पुण्य के साथ पुण्य और पाप के साथ पाप का बन्धुत्व होता है।

104. जो राजा सुव्यवस्थित ढंग से राज्य का पालन करता है, उसकी सेवा दसों दिग्पाल करते हैं।

105. देवता पुण्य-भुवन में विराजमान रहते हैं। पापाचार के स्थान पर वे कभी भी नहीं जाते।

106. धर्म देखकर जहां देवता उपस्थित होते हैं, वहाँ देवराज द्वारा पालित पृथ्वी फलदायक होती है।

107. द्रुपद ने जब ईश्वर की सेवा की तो सभी प्रजागण धार्मिक होकर धमार्थ का पालन करते है।

108. घर-घर में पुराणों के अर्थ की चर्चा होती है। इसके सुनने से सबका पाप दूर हो जाता है।

109 उस पुण्य भुवन में पापी लोग प्रविष्ट नहीं हो पाते। वे छिपकर भाग जाते हैं।

110. इस अनीति और मायापूर्ण संसार में पापाचारी लोगों के साथ सम्पर्क करना उचित नहीं।

111. पापाचार छोड़कर धर्म की इच्छा करने से जिस वस्तु की हृदय में चिन्ता की जाती है, वह प्राप्त होती है।

112 धर्म का आचरण करके मरने पर मनुष्य अमरलोक में स्थान पाता है।

113 114. धर्मार्थ पुरुषों की क्षुद्रता यमराज पकड नहीं पाता। वह चित्रगुप्त को निराधार आज्ञा देता है कि तुम युक्तिपूर्वक पाप-पुण्य का निर्णय करो जिससे पुण्यवान लोगों को पापी के रूप में निर्धारित न कर सको।

115-116. यम पुरुष के शरीर में धर्म देवता विराजमान होते हैं। वह पुण्यवान को मुक्ति और पापाचारी को दण्ड देते हैं। इस प्रकार वे नारायण की भक्ति करते हैं।

117. शरीर में ज्ञान रहने पर पाप का प्रवेश नहीं हो सकता। सारला दास का यही विचार है।

द्रुपद का सन्तान-यज्ञ और श्रीखण्डी-जन्म

1-2. अगस्त्य ऋषि वैवस्वत मनु से कहते हैं कि द्रुपद की कथा सावधान होकर सुनो। द्रुपद राजा का धर्माचरण देखकर धर्म-देवता ने उसके राज्य को सुविधान से पाला।

3 दिन में धूप होती है और रात में वर्षा होती है। उसके राज्य की भूमि दुगुनी फलदायक होती है।

4 7 द्रुपद राजा की धर्मकथा सुनकर आकाश से वसिष्ट, दुर्वासा, वाल्मीकि, व्यास, वैशम्पायन, मार्कण्डेय, शुक्र, ब्रह्मा, जैमिनि, विश्वामित्र, गौतम आदि धर्मात्मा ऋषिगण उत्तरीय धारण करके तर्पण-पात्र लेकर पवित्र महामन्त्र उच्चारणपूर्वक उसके राज्य में प्रविष्ट हुए। द्रुपद के सिंहासन पर बैठने के समय सभी उपस्थित हुए।

8. ऋषियों को देखकर राजा ने आसन से उठकर पाद-प्रक्षालन कर उनकी पूजा की।

9. सुवर्णपीठ पर कृष्णसार मृग के चर्म को बिछाकर तपचारियों को बैठाया गया।

10 सभी ऋषियों ने वेद-पाठपूर्वक उसे आशीर्वाद दिये कि तुम सहस्रायु हो और कोटि कल्प तक अमर हो।

11. भार्या सहित द्रुपद ने सबका पाद-प्रक्षालन किया और आनन्दपूर्वक चरणोदक लिया।

12. शत-सहस्र दण्ड-प्रणाम करके द्रुपद जमीन पर लेट गया।

13. सभी ऋषियों ने चिरायु कहकर आशीर्वाद दिये।

14. ऋषियों ने कहा, हे राजा बैठो। पूछा कि तुम्हारा राज्य अच्छी तरह तो चल रहा है ?

15. देवता अच्छी प्रकार हवि का भाग पा रहे हैं और

इन्द्र समय से वर्षा करके राज्य का अच्छी प्रकार से पालन तो करते हैं ?

16. तुम देवता और ब्राह्मण की भक्ति करते तो हो ? पृथ्वी उत्तम रूप से फलदायक तो है ?

17. तुम अच्छी प्रकार से अन्न, जल का दान देते हो ? पात्र-अमात्य तुम्हारी आज्ञा का पालन तो करते हैं ?

18. हे राजा ! तुम्हें दूसरे राजाओं के आक्रमण का भय तो नहीं है ? तुम असुरों से तपस्वियों की रक्षा तो करते हो ?

19. विद्रोह के लिए तुम सावधान तो हो ? कृषकों के प्रति अच्छी दृष्टि तो रखते हो ?

20 तुम लोगों के अभियोग के न्याय-अन्याय का विचार तो करते हो ? तुम्हारे राज्य की प्रजा स्वस्थ तो रहती है ?

21. गज-अश्ववाहिनी की अच्छी प्रकार चिन्ता करते तो हो? परीक्षापूर्वक उन्हें रस-मूल आदि देते तो हो ?

22 सैन्यवाहिनी और समस्त सामन्त राजा तुम्हारे भण्डार की रक्षा तो करते हैं ?

23. अश्व-गज आदि अच्छी प्रकार आहार पाते तो हैं ? सूर्य-काल में भोजन करते तो हो ?

24. देवार्चन के प्रति तुम्हारी चिन्ता रहती तो है ? गुप्तवर दूसरे राष्ट्र की खबर देते तो हैं ?

25 हे राजा ! तुम निरोग तो हो और तुम्हारी प्रजा कुशलपूर्वक तो है ?

26 हे नरपति ! धर्म-कर्म के अनुसार तुम जीवन यापन करना। अपराधी लोगों को मृत्युदण्ड न देना।

27 प्रजा की चिन्ता कभी हृदय से नहीं निकालना। कृषकों पर कभी अत्याचार न करना।

28. तुम अपनी स्त्री के साथ रहते तो हो ? तुम्हारे पुत्र-कन्या कुशलपूर्वक तो हैं ?

29. द्रुपद ने सब कुशल-समाचार बताया और कहा कि हे व्यास मुनि ! मेरे पुत्र और कन्या नहीं है।

30. राजा ने वसिष्ठ और दुर्वासा से कहा कि आप लोगों के आने से मेरी दुर्गति दूर हुई।

31. वसिष्ठ ने कहा कि हे राजा ! अपना दुःख शान्त करो। हम लोग तो इसीलिए आये हैं।

32. काशी नदी के किनारे पवित्र भूमि पर यज्ञशाला का निर्माण कराओ।

33-37. एक शुभ लग्न में प्राचीन काल में समस्त मंगल विधान पूर्वक यज्ञशाला का निर्माण करके नन्द भोपाल राजा ने यहाँ सन्तति यज्ञ किया था जिससे उसे वृहदध्वज नामक पुत्र प्राप्त हुआ।

38-39. प्रलयकाल को अतिग्राहित करके रहने वाले जटी, हटी, बट और सिंहोर वृक्ष की लकड़ी से यज्ञशाला की छत तैयार की गयी। वरुण देवता ने जल-धारा की।

40-41. ईशान में मार्कण्डेय, पश्चिम में शान्ति मुनि, दक्षिण में ईश्वर मुनि और पूर्व में दुर्वासा मुनि ने महामन्त्र से ब्रह्मा का वरण किया। वसिष्ठ मुनि याज्ञिक हुए।

42. दुर्वासा, मार्कण्डेय, व्यास और गौतम होम कर्म के लिए वरण किये गये।

43-44. अठारह समिधा और दूर्वा, यव, मकरतिल और काम्योद अग्नि को एकत्र किया गया। काली गाय को गोबर से बन्ध बनाकर उस पर समिधा को रखा गया। नौ तीर्थ का जल और चावल आदि इकट्ठा किया गया।

45. पंच होम, एक लक्ष्य साकल्य मन्त्र, स्वाहा-स्वधा मन्त्र, एकाक्षर जप के द्वारा वैश्वानर की स्तुति की गयी।

46. सौ अंगुल आयतन के बराबर यज्ञकुण्ड बनाया गया। मंदासुर पिण्ड को पहले बाहर किया गया।

47. वहाँ अग्नि देवता का वरण किया गया। द्रुपद विनय भाव से अग्निकुण्ड की प्रदक्षिणा करना है।

48. उपस्थित ब्राह्मण गण द्वितीय ब्रह्मा की तरह हैं। मैं उनकी महिमा का वर्णन कैसे कर सकता हूँ।

49. अनुसामध्वनि मन्त्र से प्रथम आहुति दी गयी। पवन मन्त्र द्वारा वैश्वानर पंचसहस्र मूर्ति हुए।

50. सातवें दिन प्रथम आहुति देने के बाद घी में चावल को पकाया गया।

51. राजा को पका हुआ चावल ऋषियों ने दिया जिसे लेकर वह प्रसन्नचित्त होकर पद्मावती को देने के लिए गया।

52. चावल लेकर राजा अन्तःपुर को गया। उस समय रानी स्नान करने के लिए गयी थी। वह देरी से

लौटी।

53. देर होने से चावल (चरु अन्न) का तेज कम हो गया। ऋषियों की आज्ञा से देवी ने प्रसाद ग्रहण किया।

54-56. दस मास होने पर एक शुभ लग्न में एक पुत्र पैदा हुआ।

57. पुत्र होने का समाचार चारों ओर फैल गया। जननी ने देखा कि नवजात में स्त्री या पुरुष का कोई लक्षण नहीं है।

59. राजा ने विस्मित होकर व्यास को याद किया। तपचारी इसे जानकर उपस्थित हुए।

60. विकल होकर राजा द्रुपद ने कहा कि तुम्हारी दया से एक अपूर्व पुत्र पैदा हुआ।

61-62. मैंने दुहिता के लिए यज्ञ किया था। समस्त तपस्वियों ने ईश्वर की प्रार्थना की। किन्तु सन्तान स्त्री-पुरुष दोनों में से कुछ भी नहीं हुई।

63. हाथ में तलवार लेकर राजा उठा और कहा कि व्यास के आगे ही इसका सिर काट दूँगा।

64. व्यास ने कहा—हे राजा ! रुको। क्रोध छोड़ो। इसमें भी एक आवश्यक कारण है।

65. भीष्म के नाश होने से ही कौरवों का नाश होगा। इसके दर्शन से भीष्म शस्त्र छोड़ देंगे।

66. पूर्व जन्म में यह अम्बा नामक कन्या थी। भीष्म ने इससे विवाह नहीं किया।

67. भीष्म के विरुद्ध अग्नि आरोपण करके इसने भीष्म को पराभूत करने के लिए स्वयं को भस्मीभूत कर दिया।

68. इसको देखकर भीष्म का नाश होगा। तभी द्रोण और कर्ण सहित कौरवों का नाश होगा।

69. हे राजा ! तुम इसका शिर खण्डन करने जा रहे थे। अतः इसका नाम श्रीखण्डी रखो।

70. व्यास ने जब ऐसी कथा सुनाई तब जन्मे नपुंसक पुत्र के प्रति उसका दुःख समाप्त हो गया।

71. हे व्यास ! तुम्हारी बात मेरे लिए कल्याणकारी हो। कभी भी महान् लोगों के कार्य का उल्लंघन नहीं किया जा सकता।

72. एक दुहिता मुझे उत्पन्न करा दें। अपने रहते ही मैं उसे अर्जुन को प्रदान करूँगा।

73. राजा की इच्छा से व्यास ऋषि ने पुनः सन्तान-यज्ञ किया।

74-75. एक शुभ दिन पर व्यास ने यज्ञाहुति दी। उससे ज्योतिपूर्ण धूम्र ऊपर को उठा।

76. धूम्रमण्डल की ओर व्यास ने देखा। अग्नि को विदीर्ण करके एक पुत्र उत्पन्न हुआ।

77. धूम्र की ओर दृष्टि रखने के कारण एक पुत्र उत्पन्न हुआ। इसलिए उसका धृष्टद्युम्न रखा।

78. द्रुपद ने कहा कि मुझे पुत्र की क्या आवश्यकता है? दुहिता उत्पन्न होने से कुरुवंश का नाश होगा।

79. अर्जुन को मैं अपनी कन्या प्रदान करूँगा। कौरवों को मारकर वह मेरे अपमान को दूर करेगा।

80. व्यास ने कहा कि इसका निरादर मत करो। यही धृष्टद्युम्न ही द्रोण का सिर काटेगा।

81. द्रोण का नाश होने पर तुम कुरु सेना को जीत सकोगे। यह सुनकर द्रुपद ने कहा कि मेरा यह पुत्र योग्य है।

82. जब इसके हाथ से द्रोण विनष्ट होंगे तो मैं इसका अनादर कैसे करूँगा ?

83. हे व्यास ! मैं तुम्हें शत-सहस्र दण्ड प्रणाम करता हूं। मेरे लिए एक दुहिता उत्पन्न कर दीजिये।

84. उस पुरुषोत्तम वेदव्यास महामुनि ने द्रुपद के कहने पर एक महायज्ञ को आरम्भ किया।

85 पंचाग्नियों को एकत्र करके महामुनि ने आहुति दी।

86. वह अग्नि-ज्योति ब्रह्माण्ड तक प्रसारित हुई।

87. शून्य पुरुष भी सँभाल न सके। महाज्वालामय अग्नि से वे दग्ध हुए।

88. हे वैवस्वत मनु ! ब्राह्मणो की मन्त्रशक्ति देखी ! अग्नि से वे सब कुछ उत्पन्न करते हैं।

89. अग्नि दक्षिणावर्त होकर घूम रही है और व्यास मुनि जीवन्यास आहुति दे रहे हैं।

90. दक्षिणावर्त्त अग्नि में हवि-भाग देने से पुत्र उत्पन्न होता है।

91. जब उन्होंने अग्नि की वाममूर्ति नहीं देखी तो अपनी एक जटा काटकर उसमें डाल दी।

92. तब भी अग्नि का तेज विकसित नहीं हुआ। व्यास मुनि ने कपाल का माँस काटकर आहुति दी।

93. व्यास की महा दृढ़ता देखकर वैश्वानर वामावर्त्त होकर प्रखर गति से घूमने लगे।

94. व्यास के तेज का वर्णन कौन कर सकता है ? अग्नि देवता भी उसे देखकर भयभीत हुए।

95-97. मकर शुक्ल सप्तमी तिथि को पंचाग्नि को विदीर्ण करके एक मूर्ति दिखाई दी। अग्नि से एक कन्या उत्पन्न हुई।

98. उसका ललाट, मुख, नासिका और चरण सुन्दर रूप में विकसित हुए। याज्ञसेनी के तेज से अग्निदेवता मलिन दिखाई देने लगे।

99. शरीर में मैल जम जाने से जैसे मनुष्य दिखाई देता है उसी प्रकार अग्नि प्रज्वलित होकर भी मलिन दिखाई देती है।

100. व्यास मुनि ने यज्ञ समाप्त किया। महानल भेदकर याज्ञसेनी उत्पन्न हुई।

101-102. वह शून्य देवी अनादि, अपर्णा, त्रैलोक्यमोहिनी, पृथ्वी का भार विनष्ट करने वाली वह सिद्ध देवी अग्नि विदीर्ण करके उत्पन्न हुई।

103. व्यास ने कहा कि हे द्रुपद ! सुनो। इस द्वापर युग में यह वचनसिद्ध होगी।

104. द्रुपद को समर्पित करके ब्रह्मर्षि चले गये। यह सब सोचकर द्रुपद शुभकेशी का पालन करता है।

105. नृपति ने नामकरण-उत्सवपूर्वक इसका नाम द्रौपदी रखा।

जयद्रथ के साथ दुःशीला का विवाह

1. सिन्धु देश के राजा मन्मथ का पुत्र सुरथ था।

2. सुरथ ने पांचाल देश के राजा द्रुपद के पास जाकर अपने पुत्र को उसकी कन्या देने के लिए कहने के लिए दूत को आदेश दिया।

3-5. उसने विजयसेन नामक मन्त्री को दूत रूप में भेजा। वह दूत द्रुपद के मन्त्री सदानन्द के घर पहुँचा।

6. सदानन्द ने विजय सेन मन्त्री के स्नान-भोजन आदि की व्यवस्था की।

7. भोजन के बाद आचमन किया और कर्पूर-ताम्बूल खाने के समय विजयसेन मन्त्री ने सदानन्द मन्त्री से विनयपूर्वक कहा—

8. सिन्धु देश के राजा सुरथ के पुत्र का नाम जयद्रथ है।

9. राजा को जाकर कहो कि वे जयद्रथ को द्रौपदी को दे दें।

10. सदानन्द मन्त्री ने कहा कि ऐसा नहीं हो सकता। द्रुपद राजा क्यों सहमत होंगे ?

11. जो कुमारी अग्नि से पेदा हुई, उसके पति स्वयं ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र ही हो सकते हैं।

12. इस संसार में उससे विवाह करने योग्य कोई राजा नहीं है। मानव होकर क्यों उससे विवाह की इच्छा करते हो?

13. सदानन्द की बात सुनकर विजयसेन मन्त्री ने कहा कि मुझे सिन्धु देश के अधिपति ने भेजा है।

14. राजा के सामने मुझे बात करने दो। देखूँ कि राजा मुझे क्या उत्तर देता है ?

15. मन्त्री ने कहा कि मैं बता नहीं सकता। सिंहासन पर बैठने के समय जाकर उनके दर्शन करो।

16. दोनों मन्त्री सहमत हुए। तुम्हारी बात अधूरी रहने पर मै पूरी कर दूँगा।

17. अवकाश स्थल पर राजा के पहुँचते ही सदानन्द मन्त्री ने पहले ही दर्शन किया।

18. सिन्धु देश के मन्त्री ने इस बात को बताने के लिए शीघ्र जाकर राजा का दर्शन किया।

19. द्रुपद ने कहा कि यह किस राजा के पास से आया है? सदानन्द ने उत्तर दिया कि यह सिन्धु देश का मन्त्री है।

20-22. यहाँ आने का क्या प्रयोजन है ? विनयपूर्वक मन्त्री ने कहा, हे देव ! सिन्धु देश के राजा मन्मथ का नन्दन सुरथ है। वह धार्मिक, विवेकी, पण्डित, भाग्यवान, उच्चवंशीय और संग्राम-समर्थ है।

23-24. उसके नन्दन जयद्रथ को आप अपनी दुहिता प्रदान करें। इसीलिए मुझे अत्यन्त आग्रहपूर्वक यहाँ भेजा गया है। हे देव ! मैं उसी निमित्त यहाँ

उपस्थित हूँ।

25. यह बात सुनकर नृपति द्रुपद क्रोधित हुआ और आदेश दिया कि नगर के बाहर ले जाकर उसका शिरश्छेदन करो।

26. ऊँची लकड़ी पर इसे लटका दो ताकि पुनः कोई दूत न भेज सके।

27. मैं अर्जुन को ही कन्या प्रदान करूँगा। नहीं तो ब्रह्मा, रुद्र या हरि को प्रदान करूँगा।

28. राजा की आज्ञा से क्रोधित होकर श्रीखण्डी और धृष्टद्युम्न सिन्धु देश के मन्त्री के केश पकड़कर बाहर ले गये।

29. नगर के बाहर ले जाकर उसका सिर काटकर ऊंचे काठ पर उसे लटका दिया।

30. मन्त्री के साथ जो लोग आये थे वे भयभीत होकर सिन्धु देश को भाग गये।

31-32 सिन्धुराज के आगे जाकर समाचार बताए कि पांचालराज ने मन्त्री की हत्या की और कहा कि मैं अर्जुन को ही कन्या दूंगा। मेरी कन्या के योग्य दूसरा कोई नहीं है।

33. सिन्धु देश का राजा सुनकर क्रोधित हुआ। द्रुपद के ऊपर आक्रमण करने के लिए सैन्य-सचालन किया।

34 जाते हुए मार्ग में सुबाहु नृपति से भेट हुई। सुरथ राजा के साथ उसकी अत्यन्त मित्रता थी।

35. द्रुपद के साथ हे राजा ! तुम युद्ध मत करो। सदानन्द ने उसे अनेक शस्त्र प्रदान किये हैं।

36 जिस किरात ने सहस्र राजाओं को जीता, वह द्रुपद के एक ही वाण से निरस्त हुआ।

37. मैं किरात राजा का सहोदर भ्राता हू, लेकिन द्रुपद के भय से यहाँ आकर रहता हूं।

38. मृत्युलोक में राजा होकर द्रुपद का प्रतिवादी होना उचित नहीं है। उसके साथ युद्ध करके क्यों विपत्ति बुलाओगे ?

39-40. द्रुपद तो हमारा शत्रु है। पाण्डवों को जब वह कन्या देगा तो हम लोग द्रोण से मित्रता करके द्रोण के नेतृत्व में द्रुपद का नाश करेंगे।

41 सुबाहु की बात सुनकर सिन्धु राजा ने सेना को लौटा दिया और स्वयं हस्तिनापुर को चल दिया।

42. अनेक रत्न संभार लेकर कर्ण के पास गया और उसके साथ जयद्रथ की मित्रता कराई।

43. कर्ण के सामने अत्यन्त विनयान्वित हुआ और दुःशला कन्या को जयद्रथ को देने के लिए अनुरोध किया।

44. कर्ण ने कहा कि यदि तुमने इस प्रकार कहा तो जयद्रथ को दुःशला प्रदान कराऊँगा।

45. जयद्रथ को लेकर कर्ण शीघ्र जाकर दुर्योधन के पास पहुँचा।

46. हे स्वामी कुरुनाथ ! मेरी बात सुनो। दुःशीला को जयद्रथ को दो।

47. कर्ण की बात को कुरुपति कभी नहीं तोड़ता क्योंकि उसी के वीरत्व से उसे भानुमती प्राप्त हुई।

48. दुर्योधन को सहमत करके शीघ्र ही धृतराष्ट्र के पास पहुँचकर उन्हें बताया।

49-50. सिन्धु देश के राजा सुरथ का पुत्र जयद्रथ ध ार्मिक,

50. विवेकी, बलवान, क्षत्रियवर, सुन्दर, कुलीन और रणजीत है।

51 कर्ण की बात सुनकर धृतराष्ट्र कहते हैं कि जयद्रथ मेरे मनोनुकूल है।

52-53. गान्धारी और विदुर सहित भूरिश्रवा, भीष्म, द्रोण और शकुनि आदि सभी की सहमति कराकर विवाह का आयोजन किया। शुभानुकूल नक्षत्र और योग का निर्धारण किया गया।

54. वैशाख, शुक्ल पक्ष, अक्षय तृतिया के रोहिणी नक्षत्र में विवाह का शुभ योग निर्धारित हुआ।

55. सिन्धु देश का राजा वार्त्ता पाकर अनेक उत्सवपूर्वक समदण्ड लेकर आया।

56. उद्दालक नामक पुरोहित ने विवाह का सारा आयोजन किया।

57. एक अत्यन्त विशाल छायामण्डप निर्मित हुआ। अनेक देशों के राजा आये।

58. स्वस्तिपूर्वक मंगल कृत्य हो रहा है। अनेक उत्सव पूर्वक विवाह का शुभारम्भ हुआ।

59. विविध छन्दों में वाद्य बज रहे हैं। सुरथ के पुत्र को वरभेष कराया गया।

60. पिता की गोद में जयद्रथ और धृतराष्ट्र की गोद में

दुःशलता बैठी।

61-62 यथाविधि पुरोहित मन्त्रोच्चारण करते हैं। सिन्धु राजा का कौशिक गोत्र और कुरुपति का जलद गोत्र था। इन दोनों गोत्रों का नामोच्चारण करके कन्यादान करवाते हैं।

63. जयद्रथ और दुःशला के हाथ को एक साथ रखकर कुश की पवित्री डाली गयी।

64. कौरवों ने रथ, गज, अश्व, गोधन और रत्न आदि बहुत-सा दहेज समारोहपूर्वक दिया।

65. विवाह समाप्त करके धृतराष्ट्र चले गये। पुरोहित गण मग ॰ घट के पास लाजा होम करते है।

66 व॰-कन्या के घृत-प्राशन (दही-गुर) के वाद जयद्रथ दुःशला को लेकर अन्तःपुर मे प्रविष्ट हुआ।

67 एक आमन पर कुमार और कुमारी को बेठाकर भोजन करवाया गया। शुभ मुखध्वनि करके मंगल-गीत गाया जा रहा है।

68 आचमन करके रमण-मन्दिर में प्रविष्ट होकर आनन्द-पूर्वक कर्पूर-ताम्बूल ग्रहण करते है।

69. दोनों मधुशैया पर जाकर सो गये। हर्ष और विनोद में रात्रि बीत गयी।

70 चौथे दिन चतुर्थी उत्सव और पंचम दिन एक अन्य उत्सव का विधान हुआ।

71 सातवें दिन मंगल-विधान समाप्त करके कन्या को लेकर जयद्रथ सिन्धु नगर में प्रविष्ट हुआ।

श्रीखण्डी का विवाह

1. वैवस्वत मनु ने पूछा—हे तपोवन्त ! पुत्र-दुहिता उत्पन्न करके नृपति द्रुपद ने क्या किया ?

2. अगस्त्य कहते है कि हे वैवस्वत मनु ! द्रुपद के ज्येष्ठ पुत्र का नाम श्रीखण्डी है।

3. वह एक अश्व को सुसज्जित करके अनेक अस्त्र-शस्त्र लेकर वन और पर्वत पर अनवरत घूमता है।

4. दौड़ाकर दुष्ट दानवों को मारता है और तपस्वियों की रक्षा करता है। इस प्रकार उसने संसार में प्रसिद्धि प्राप्त की।

5-6. कुम्भ मास कृष्ण-सप्तमी के दिन श्रीखण्डी एक लाख सेना लेकर विजय कौतूहल से उड़ंग मण्डल में चलता है।

7. उड़ंग देश का राजा मधुकेशर सेना-संचालन करके आ रहा है।

8. त्रिवेणी के किनारे दोनों की भेंट हुई। नृपति ने पूछा कि यह किसका कुमार है ?

9. आमात्यों ने कहा कि यह पांचाल अधिपति द्रुपद राजा का पुत्र है।

10 सुनकर मधुकेशर सानन्द हुआ। सम्मानपूर्वक अपने राज्य को ले गया।

11 अनंग की तरह सुन्दर श्रीखण्डी वीरवेश और अलंकार से सुसज्जित है।

12 सिहासन पर श्रीखण्डी को बेठाकर विभिन्न सत्कार-सामग्री का आयोजन करवाया।

13 राजा अपनी पटरानी मदनावती के साथ बैठकर विचार करता है।

14 हे महादेवी क्यों न हम लोग अपनी कन्या को श्रीखण्डी को प्रदान करें ?

15. अत्यन्त सुन्दर देखकर राज्य के सभी लोग मोहित हुए।

16 विशेषतः यह स्त्री है फिर भी पुरुष वेशी है। इसीलिए वह विद्याधर की तरह दिखाई देता है।

17 समस्त स्त्रियाँ और पुरुष उसे मधुमती को प्रदान करने की सलाह देते हैं।

18 जामाता जब वन्यापाना के लिए यहाँ आयेगा तब हम लोग आँख भरकर एक माह तक उसे देखेंगे।

19. साम्राज्य के सभी लोग ऐसी बात कहते हैं। मधुकेशर नृपति ने श्रीखण्डी का वरण किया।

20 शुभ योग में राजा ने विवाह सम्पादित किया। अश्व-गज और धन को दहेज रूप में दिया।

21. एक सहस्र रथ, पाँच सहस्र हाथी और शत-सहस्र श्वेत अश्व नृपति ने प्रदान किये।

22. एक लाख गोधन राजा ने प्रदान किया और विवाह योग करके मधुमती को समर्पित किया।

23. कुमार श्रीखण्डी कन्या को लेकर समदण्ड सुसज्जित करके अपने रथ पर आसीन हुआ।

24. एक सहस्र पाट-छत्र और दो सहस्र आलम्ब लटकन,

एक सहस्र छत्रधारी पालकी के साथ राजा प्रस्थान करता है।

25. नगारे और दमामे और तुरही तथा सिंगा आदि विजयसूचक लाखों वाद्यों से पृथ्वी काँप रही है।

26. एक सहस्र शंख, एक सहस्र शहनाई और एक सहस्र नर्तकियाँ सामने नृत्य कर रही हैं।

27. सुवर्ण रथ पर आरूढ़ होकर कन्या और कुमार श्रीखण्डी अपने राज्य की ओर चलते हैं।

28. दहेज की सामग्री पीछे आ रही है। गज, रथ और अश्व पास-पास लगे हुए हैं।

29. अष्टरत्न, स्पर्शमणि और सुवर्ण सामग्री पचास हजार कँवरी आ रही है।

30. अत्यन्त समारोहपूर्वक मधुकेशर ने विदाई दी। श्रीखण्डी ने मधुमती को लेकर अपने महल में प्रवेश किया।

31. पांचाल देश के लोगों को ऐसा प्रतीत हुआ जैसे रति को लेकर कामदेव आ रहा है।

32. सिंहासनासीन होकर द्रुपद ने देखा कि चित्रसेन गन्धर्व की तरह कोई आकाश से उतर रहा है।

33. मानव का रथ तो इस प्रकार सुसज्जित नहीं हो सकता। गुप्तचरों ने बताया कि हे देव ! कुमार श्रीखण्डी आ रहे हैं।

34. राजा उसे देखकर बहुत आनन्दित हुआ और सहसा हे देव ! कहकर सिर पर हाथ रखा।

35. विवाह के समय वस्त्र बदलते हुए किसी ने भी नपुंसक लक्षण नहीं देखा है।

36. इस संसार के लोगों के साधु वाक्य से क्या मेरा धर्म उदित होगा ?

37. इस प्रकार विचार करके राजा व्याकुल हो गया। मधुमती कन्या के मुँह की ओर देखकर पद्मावती सोचती है।

38. मधुमती और श्रीखण्डी की सभी वन्धापना करते हैं। इसके बाद दोनों जाकर माता-पिता को प्रणाम करते हैं।

39. पिता-माता स्नेहपूर्वक आशीर्वाद देते है। धर्म से तुम्हें पुरुष लक्षण प्राप्त हो।

40. अनेक स्त्रियाँ अर्घ्य देकर आनन्द से वन्धापना करती हैं और सुलक्षिणी नारियाँ शुभ मुखध्वनि करती हैं।

41. माता के गर्भ से वह नपुंसक पुत्र रूप में उत्पन्न हुआ था। राज्य में पुत्र उत्पन्न होने की उद्घोषणा हुई थी।

42. निःसंदेह नपुंसक जानकर दासी ने रानी के पास आकर गुप्त रूप में सूचना दी।

43. व्यास को लेकर चार लोगों के अतिरिक्त इस नपुंसकपन की बात कोई नहीं जानता।

44. दूसरे राज्य में श्रीखण्डी प्रतापी हुआ और ठगकर जगमोहिनी कन्या को लेकर वह आया।

45. जितने स्त्री-पुरुष उसके साथ आये थे, उनको नृपति ने बहुत उपहार दिये।

46. राजा द्रुपद ने बहुत उत्सव मनाया। उस द्रुपद राजा की सम्पत्ति देखकर वे सब आनन्दित हुए।

47. पाँच-सात दिन तक वे पांचाल देश में रहे। पुनः आदेश लेकर उड़ंग देश को लौट गये।

48. मधुकेशर राजा के पास आकर बताया कि पांचाल देश बहुत समृद्धिशाली है।

49. वर की माता का नाम पद्मावती है। वह पतिव्रता और लक्ष्मी रूपा है।

50. लोगों के मुख से इस प्रकार की बातें सुनकर मधुकेशर नृपति अत्यन्त हर्षित हुआ।

51. मधुमती की अत्यन्त सुसज्जा होती है। तीन वर्षो से वह सुन्दरी रजस्वला होती चली आ रही है।

52. मधुमती का रजोत्सव देखकर माता-पिता दिन-रात चिन्ता करते हैं और विधाता का स्मरण करते हैं।

53. सातवें दिन उसका शुद्ध स्नान हुआ। एक लाख अष्ट-रत्नखचित कमल-पुष्प दान दिया।

54. योग, लग्न, मंगल, ग्रह और करण शुभ अनुकूल योग में मधुमती को श्रीखण्डी की गोद में सुलाया।

55. दिव्य पलंग पर एक साथ सोये। पुरुष लक्षण नहीं है, फिर कैसे मिलन होगा ?

56. बाला कुमारी रतिरस नहीं जानती है। हर्ष प्रेम और कौतूहल से दो वर्ष बीत गये।

57. दूसरों की शृंगार कथा को सुनकर दिन-प्रतिदिन काम के शराघात से उसका शरीर पीड़ित हुआ।

58. लज्जा की उपेक्षा करके उसने स्वामी को गोद में पकड़ा और मुख का चुम्बन लेकर कहा कि हे स्वामी! मुझे रति नहीं दोगे ?

59. गोद में लेकर प्यार से श्रीखण्डी से कहा कि मुझे रति न देकर दो वर्ष तक क्यों ठगते रहे ?

60. श्रीखण्डी ने कहा कि हे सखि ! बाल्य वयस में काम के प्रति आसक्ति क्यों है ? इससे आयुष क्षीण होती हे और अल्प दिन में यौवन शिथिल हो जाता है।

61. मधुमती ने कहा कि तुम राजा के पुत्र होने के नाते सुखभोगी हो। इस प्रकार का विचार तो योगी करता है।

62 कुलीन वंशीय तुम्हें भोजन, साधन और शृंगार रस-भोगी होना चाहिए जिससे शीघ्र ही सन्तान-लाभ कर सको।

63 मेरे साथ की विवाहिता कुमारियों को चार-चार पुत्र प्राप्त हो चुके हैं।

64 मेरा कैसा दुर्भाग्य है कि राजपुत्री होकर भी मेरे किसी पाप से मेरी सारी तपस्या निष्फल हुई।

65 इस बात के सुनते-सुनते श्रीखण्डी निद्रा में अचेत हो गया। सुन्दरी को काम-कष्ट के कारण नींद नहीं आती है।

66-67. श्रीखण्डी के अचेत निद्रा में आते ही मधुमती ने उठकर उसके परिधेय वस्त्र खोल दिये। नग्न करके उसके सारे अंगों को वह सहलाती है। खोजकर भी कहीं उसमें पुरुष-लक्षण नहीं पा सकी।

68 हाथ में दीपक लेकर सुन्दरी ने ध्यानपूर्वक देखा कि क्या वह नपुंसक है ?

69 स्त्री या पुरुष का कोई लक्षण नहीं दिखाई दिया। वह बाला श्रीखण्डी को देखकर अचेत हो गयी।

70. हाय ! हाय ! देव ! तुमने मेरे साथ ऐसा किया! हस्तगत निधि को तुमने दूर करा दिया।

71. पुरुषों में यह सुलक्षण पुरुष है। वंश उद्धार में यह विलक्षण दीखता है।

72. प्रारम्भ से ही हर-पार्वती की सेवा करने के कारण सुलक्षण पति पाया।

73. समुद्र की तरह मेरी विस्तृत आशा थी कि मुझ सुन्दरी स्त्री को सुन्दर पुरुष प्राप्त होगा।

74. स्त्रियों की यही मनोकामना होती है कि वे सुन्दर पुरुष प्राप्त करें।

75. सुन्दर और सुलक्षण पुरुष देखकर मेरे पिता ने मुझे प्रदान किया, किन्तु दुर्भाग्यवश ऐसा हुआ।

76. इस प्रकार मधुमती व्याकुल हो रही है। भाग्य की निन्दा करते हुए रोते-रोते रात बीत गयी।

77. उसने वेश-भूषा को छिन्न-विच्छिन्न कर दिया और समस्त हार-अलंकार को दूर फेंक दिया।

78. अन्न-आहार के साथ सब कुछ की उपेक्षा की। अपना प्राण छोड़ने का व्रत लिया।

79. पिता के घर की जो दासी थी, उससे कहा कि तुम पिता से जाकर कहो कि मैं निराश हो गयी।

80. मेरे पिता ने जिसको मुझे प्रदान किया, वह न तो स्त्री है न पुरुष। वह जन्म से नपुंसक है।

81. मेरे पिता के निकट जाकर कहो कि मैं द्रुपद के भवन में शरीर का त्याग कर दूँगी।

82 ऐसी बात सुनकर गम्भीर दुःख से सभी दासियाँ चली गयीं।

83. पन्द्रह दिन में मधुकेशर राजा के पास पहुँचकर संदेश दिया।

84 हे देव राजेश्वर ! होने वाली बात को सुनो। श्रीखण्डी में स्त्री या पुरुष का लक्षण नहीं है।

85. हे देव ! मधुमती का कष्ट कौन सह सकता है ? आग जलाकर आत्मविसर्जन के लिए वह दृढ़-प्रतिज्ञ होकर बैठी है।

86. सुनकर मधुकेशर क्रोध से प्रचण्ड हुआ। आदेश दिया कि पांचाल देश पर आक्रमण के लिए सेना सुसज्जित करो।

87 ऐसे पापी ने क्यों विवाह किया ! नपुंसक होने की बात मुझसे क्यों नहीं कही ?

88 अग्नि जलाकर जब मेरी लाड़ली जल मरेगी तो मैं उसी अग्नि में श्रीखण्डी को काटकर फेंक दूँगा।

89. मेरी कन्या जब उसके लिए मर जायगी तो वह हीन नपुंसक क्यों जीवित रहेगा ?

माता के शोक से श्रीखण्डी को पुरुषत्व-प्राप्ति

1. इतना कहकर राजा ने प्रचण्ड क्रोध से द्रुपद के लिए सैन्य-सज्जा की।

2-3. एक अरब रथ, एक अरब हाथी, दस अरब अश्व और तेरह अक्षौहिणी पदाति, अस्सी लाख मुकुटधारी सेना

तथा दस हजार पारिदण्ड थे। घोर वाद्य-शब्द से ब्रह्माण्ड काँप रहा था।

4. द्रुपद की राजसभा में गुप्तचर ने सूचना दी कि हे देव! तुम्हारे राज्य पर उड़ंगेश्वर अभियान कर रहा है।

5. हे द्रुपद ! तुम सेना सुसज्जित कर लो। आज मधुकेशर राजा तुम्हारे ऊपर आक्रमण करेगा।

6. दुहिता का प्रतिशोध लेने के लिए अभियान कर रहा है। द्रुपद ने उत्तर दिया कि मैं क्यों सेना सुसज्जित करूँगा।

7. उसका और मेरा बन्धुत्व है। हम लोगों की आत्मा अभिन्न है। इसे कौन अलग कर सकता है ?

8-9. राजा द्रुपद हाथी पर आसीन होकर राजा मधुकेशर के पास जा रहा है। उसके साथ केवल सदानन्द मन्त्री और वाम पार्श्व में उसका पुत्र धृष्टद्युम्न है।

10. उड़ंगेश्वर त्रिपुरान्तक घाट पर था। पांचालेश्वर ने जाकर उसके साथ भेंट की।

11. मधुकेशर के पास जाकर दूत ने कहा कि द्रुपदेश्वर तुम्हारे पास आये हैं।

12. मधुकेशर ने क्रोध से द्रुपदेश्वर को पकड़ने का योद्धाओं को आदेश दिया।

13. द्रुपद ने कहा—हे समधी ! सुनो। मेरा क्या दोष है कि तुमने ऐसा विचार किया ?

14. तुमने परीक्षा न करके उससे क्यों विवाह किया ? बिना जाने सुने हठात् क्यों विवाह कर दिया ?

15. अपना दोष स्वयं क्यों नहीं समझते हो ? अपने किये हुए कृत्य के लिए मुझ पर क्यों क्रोध करते हो ?

16-17. मधुकेशर ने कहा कि मेरा दोष नहीं है। सुन्दर विलक्षण और कुलीन देखकर मैंने ग्रहण किया। उस श्रीखण्डी ने मुझे क्यों नहीं बताया ? मुझे ठगकर उसने मेरी दुहिता से विवाह किया !

18. अब जब मेरी दुहिता विनष्ट हो जायेगी तो वह हीन नपुंसक बनकर क्या करेगा ?

19. हे द्रुपद ! तुम मुझे श्रीखण्डी को दे दो। मैं उसको दुहिता के साथ आग में डाल दूँगा।

20. द्रुपद राजा को उसने बलपूर्वक पकड़ लिया। धृष्टद्युम्न प्राणभय से व्याकुल होकर भाग गया।

21. धृष्टद्युम्न ने सेना सुसज्जित करके मधुकेशर राजा की ओर अभियान किया।

22. दोनों पक्षों की सेना ने चीत्कार किया। दोनों ओर सेना बरछा तान रही है और धनुष की प्रत्यंचा खींच रही है।

23. इस समय महाघोर रात्रि आ गयी। उसी बीच महारानी श्रीखण्डी को लेकर भाग गयी।

24. पुत्र को लेकर गन्धमादन पर्वत पर प्रविष्ट हुई। पुत्र को गोद में लेकर ऊच्च स्वर में रोती है।

25. महानिशाकाल में निःशब्द वातावरण में उसका रुदन कोकिल ध्वनि की तरह प्रतीत होता है।

26. श्रीखण्डी के रूप और गुण को याद करके वह उच्च स्वर में विलाप करती है। हे बेटा ! तुम दुःखों के साथी और मुझ अन्धी की लाठी हो।

27. हे बेटा ! तुमको मैंने दस महीने तक गर्भ में धारण किया था। तुम्हारा कपाल सर्वगुण और सुलक्षण युक्त है।

28. हे बेटा ! तुम्हें विधाता ने दानवीर और संग्राम-समर्थ बनाया।

29. तुमने पूर्वजन्म में किसका लिंग उखाड़ा कि अब तुम्हें लिंग-भग्न-दोष हुआ ?

30. एक कोयल की भाँति सुशीतल और मृदुवाणी को सुनकर अन्धकार में तुलाकर्ण आकर पहुँचा।

31. गन्धमादन पर्वत पर यह दुःखपूर्ण वाणी सुनी गयी। उसका अनुसरण करके भक्त-वत्सल नाथ पहुँचे।

32. उसके विलाप को सुनकर गन्धर्व वीर चूड़ामणि दया-परवश होकर प्रकट हुए।

33. तुलाकर्ण ने पूछा कि तुम कहाँ से आयी हो ? इस घोर अरण्य में क्यों आधी रात को रुदन कर रही हो?

34. रानी ने कहा कि हे महात्मा ! तुम कौन देव हो ? मैं महादुःखिनी हूँ। मेरी दुःख की कथा मत पूछो।

35. गन्धर्व कहता है कि हे नारी ! सुनो। मेरा नाम तुलाकर्ण है। मैं अलकापुरी का चक्रवर्ती हूँ।

36. अलकाधिपति नाथ का मैं भण्डार अधिकारी हूँ। मेरी माता का नाम पद्मावती अप्सरा है।

37. नल कुमार की मेरे साथ मित्रता हुई। मेरे न जानते ही उसने भण्डार से धन चुरा लिया।

38 अभिषेक सामग्री सब चुरा ली। अभिषेक के समय देखा कि अभिषेक की सामग्री नहीं है।

39. वासव देवता ने मुझसे क्रुद्ध होकर मुझे देव भण्डार से निकाल दिया।

40 पद्मावती ने कहा कि मैं द्रुपद की भार्या हूँ और पद्मकेशर राजा मेरे पिता हैं।

41 मेरा नाम पद्मावती है। मेरे एक ही यह पुत्र उत्पन्न हुआ।

42 एक दिन यह पुत्र दिग्विजय करते हुए मधुकेशर राजा के पास पहुँचा। मधुकेशर राजा ने उसे मधुमालती को प्रदान किया।

43 इसमे पुरुष लक्षण न देखकर मधुमालती ने अग्नि मे जल जाने का निश्चय किया।

44 मधुकेशर ने पाचाल देश पर विजय अभियान किया। श्रीखण्डी के लिए राजा द्रुपद को पकड रखा है।

45 द्रुपद श्रीखण्डी को चारो ओर खोज रहा था। व्याकुल होकर मै इसे लेकर अर्द्धरात्रि मे भाग आयी।

46 गन्धर्व ने कहा कि मेरी माता पद्मावती है। युक्तित: तुम मेरी मौसी हुई।

47 श्रीखण्डी मेरा भाई हुआ। हे माता ! मै इसकी रक्षा का उपाय करूँगा।

48 श्रीखण्डी को लेकर गन्धर्व अन्तर्धान हो गया। अपनी इन्द्री काटकर श्रीखण्डी को लगा दी।

49 उसके ऊपर सजीवनी महोपधि लगा दी। महामन्त्र के द्वारा वह श्रीखण्डी के शरीर मे लग गया।

50 वैवस्वत मनु ने पूछा कि हे मुनि देव ! तुलाकर्ण की असीम महिमा के बारे में बताइये।

51. किस पाप के कारण इसने भक्तिवशात् अपना पुरुष लक्षण छोड़ा।

52 अगस्त्य ने कहा कि यदि कथा पूछी है तो सावधान होकर सुनो।

53. इन्द्र ने तुलाकर्ण पर अत्यन्त दया करके स्वर्गपुर मे नृत्य का शिक्षक बनाया।

54. वासव से अधिक सुन्दर होने के नाते अप्सरायें.देवताओ को छोड़कर तुलाकर्ण के प्रति आसक्त हुई।

55. सभी अप्सराओं के साथ यह परम रस से रमण करता था। इसको छोड़कर अप्सरायें इन्द्र के पास नहीं गयीं।

56 इसकी माता पद्मावती रम्भा की तरह रूपवती थी।

57 माता को देखकर यह कामार्त्त हुआ। एक दिन उसे बलात् पकडा।

58 माता को बलात् पकडकर शृंगार किया। उसे जानकर इन्द्र ने उसे अमरपुर से बाहर कर दिया।

59 अमरपुर मे कोई इसका मुँह नहीं देखना चाहता। वनगामी होकर इसने बहुत दुःख पाया।

60 उसी आत्मग्लानि के कारण उसने इन्द्रिय-छेदन करके नपुंसक लक्षण वहन किया।

61 आकाश मे उसने अत्यन्त अपयश प्राप्त किया, इसीलिए उसने क्रोधपूर्वक इन्द्रिय को दण्ड दिया।

62 हे सुबुद्ध जन ! मन मे विचार करो कि महान् व्यक्ति का साक्षात्कार अकारण ही कारण बन जाता है। "महान लोगो की भेंट किसी भी रूप मे सार्थक होती है।"

63 द्रुपद-पुत्र ने सार्थकता प्राप्त की। तुलाकर्ण के अनुग्रह से उसे अपना अभीष्ट लाभ हुआ।

64 तुलाकर्ण ने एक पुष्पक विमान देकर कहा कि इस पर आरूढ होकर माता और पुत्र दोनों गमन करो।

65 अपने शरीर पर जितने अलकार थे उससे श्रीखण्डी के अंगो को विभूषित किया।

66 देवागवसन आदि परिधान करके श्रीखण्डी तत्काल विमान पर सवार हुआ।

67 तुलाकर्ण ने समस्त शास्त्र और शस्त्र श्रीखण्डी को प्रदान किये। रूप से तेजस्वी कुमार कामदेव की तरह प्रतीत होता है।

68 पुत्र को लेकर पद्मावती वहाँ चली, जहाँ सेना लेकर मधुकेशर नृपति उपस्थित है।

69 त्रिपुरान्तक पर्वत पर उड़गेश्वर सिहासनासीन है। हठात् वे पुष्पक विमान से वहाँ उतरे।

70 विमान से द्रुपद-पुत्र को उतरते देखकर मधुकेशर राजा भयभीत होकर उठ पड़ा।

71 देवलोक से इन्द्र देवता के आविर्भाव के भ्रम से योद्धा और अमात्य दूर से ही सशंकित हो गये।

72 समस्त शस्त्रों को फेंककर सबने श्रीखण्डी को प्रणाम किया। उड़गेश्वर स्वामी ने श्रीखण्डी को प्रणाम किया।

73. कुमार आसन पर विराजमान हुआ। द्रुपद ने पुत्र को

देखकर गोद में पकड़ा।

74. श्रीखण्डी ने कहा, हे श्वसुर ! क्यों तुमने ऐसा काम किया ?

75. मधुकेशर ने कहा तुम अमराधिपति की तरह होने पर भी किस पाप के कारण नपुंसक हो ?

76. श्रीखण्डी ने कहा कि तुम्हारी दुहिता अभागिनी है। मैं परमयोगी साधक पुरुष हूँ।

77. मैं इच्छा से रति और इच्छा से ही विरति करता हूँ। इससे मधुमती मान कर बैठी।

78. दासियों ने परीक्षा करके तत्काल राजा को बताया।

79. राजा सुनकर प्रसन्न हुए। सेना के साथ पांचाल राज्य में प्रविष्ट हुए।

80. मधुमती श्रीखण्डी का हाथ पकड़कर ले गयी और कुमार की इच्छा से प्रीति बढ़ायी।

81 दोनों ने मनभर शृंगार किया। उस सुन्दरी की मनोकाक्षा पूरी हुई।

82. श्रीखण्डी के लिए राजा अत्यन्त विपण्ण हुआ था। दोनों कुलों में अत्यन्त हर्ष उत्पन्न हुआ।

83. मधुकेशर ने द्रुपद के चरणों में प्रणाम करके कहा कि मेरे दोष को सदा के लिए भूल जायें।

84. द्रुपद को सन्तुष्ट करके मधुकेशर राजा ने उड़ग दश के लिए प्रस्थान किया।

85. महादेवी के आगे जाकर सारा वृत्तान्त सुनाया। मधुमती की माता सुनकर हर्षित हुई।

86 87. भरत खण्ड के राजा कर्णमाधव की भार्या शुद्धमति के गर्भ से उत्पन्न कन्या का नाम हारावती था।

88. राजा ने उस हारावती को द्रुपदनन्दन धृष्टद्युम्न को प्रदान किया।

89-90. हे वैवस्वत मनु ! श्रीखण्डी को अनंग और मकरध्वज नामक कामदेव की तरह अत्यन्त सुन्दर दो पुत्र उत्पन्न हुए।

पाण्डवों का भिक्षाचरण

1-2. इसके बाद विलंका देश के राजा ने अगस्त्य के पाद पद्म की दिव्य पूजा करके पूछा कि पाँच पाण्डवों ने हिडिम्बक वन में रहकर क्या किया ?

3. हिडिम्बक वन में दस वर्ष के आत्मज घटोत्कच को राजा बनाया।

4. एक मात्र पुत्र को लेकर हे हिडिम्बा! तुम यहाँ रहो। हम लोग समय के अनुसार यहाँ आयेंगे।

5. राज्य छोड़कर जब हम लोग तीर्थवासी हुए तो पदचार करने से ही धर्म प्राप्त होगा।

6. मार्गशीर्ष माह, चतुर्थी शुक्लपक्ष, गुरुवार को हिडिम्बक वन से उन पंचवीरों ने प्रस्थान किया।

7. वन छोड़कर जाते हुए कामिनी नदी के किनारे एक अत्यन्त निर्मल नगर देखा।

8. युधिष्ठिर ने कहा कि यह अच्छा नगर है। नदी में स्नान करके यहाँ कुछ दिन ठहरेंगे।

9. हे भाइयो ! अपनी इच्छानुसार ब्राह्मण वेश धारण करो। दिन बिताने के लिए जाकर भिक्षा माँगेंगे।

10. अपने-अपने अनुकूल ब्राह्मण रूप धारण करके अपने हाथ में भिक्षापात्र धारण किया।

11-14. लम्बित जटा, त्रिकक्ष वसन, श्रीवत्स लक्षण युक्त पवित्र उत्तरीय, हाथ में त्रिदण्ड, काँख में वेदपोथी, गोपन अग्नि, कुशवटु, कन्धे पर छाता, पाँव में खड़ाऊँ, हाथ पर ताम्र स्रुवा, ताम्र गड्डुवा लेकर इस प्रकार ब्राह्मण का विधान करके उन्होंने अपने स्वरूप का गोपन किया।

15. भिक्षा माँगने के समय किसे कौन-सा पात्र लेने की इच्छा है—ऐसा युधिष्ठिर ने पूछा।

16. युधिष्ठिर ने एक सौर स्रुवा ताम्र पात्र और धनंजय ने एक थैला लिया।

17. युधिष्ठिर ने कहा, हरि छोड़कर हम लोगों के मुख पर कोई शब्द नहीं आना चाहिए। प्रति द्वार पर हरि गोविन्द बोलते रहना होगा।

18. अर्जुन ने चक्रपाणि को याद करके हरिगोविन्द नामांकित थैला हाथ में लिया।

19. नकुल और सहदेव ने ताम्बपात्र और देवि कुन्ती ने सौर पोटली ली।

20. युधिष्ठिर ने अर्जुन से कहा कि तुम भीमसेन से पूछो कि वह क्या कहकर भिक्षा माँगेगा ?

21. भिक्षा करना जीवन में सबसे हीन कर्म है। [illegible] और वपुधारी होने पर भी हम लोग असहाय हुए हैं।

22. भिक्षुकों का यही धर्म है कि दूसरों से विनम्र होकर बात करें।

23. क्रोध को दूर करके शान्ति लानी पड़ती है। भिक्षा से बहुत सम्पत्ति नहीं मिलती। कण-कण इकट्ठा करना पड़ता है।

24 हे भीम ! जब तुम इसका परिपालन कर पाओगे तो हम लोग, लोगों से याचना करके सुखपूर्वक दिन बिता सकेंगे।

25 भीमसेन ने कहा कि दस वर्ष तक हम लोग जन-समूह से अलग होकर वन में रहे।

26 अन्न के बिना वन-फल खाते रहे। इसके बाद भी हमारे देह में शक्ति, स्वास्थ्य और क्रोध है ?

27 शान्ति धारण करते हुए भी शौर्यहीन हो गये। अल्प-अल्प तण्डुल कण भिक्षा करके अन्त में हमारे दिन बीतेंगे।

28 जन-याचना के द्वारा जीवन बिताने की बात सुनकर कुन्ती माता विचार करती है।

29 हे बेटा ! भिक्षावृत्ति में लोगों के द्वारा प्रदत्त सामान्य कण भी ग्राह्य होना चाहिए।

30 कोई बहुत नहीं देता और अल्प ऑखों में नहीं लगता। अज्ञानी स्त्रियाँ जाओ कहकर भगा देती हैं।

31 न पाकर उसका घर न उखाड़ देना और क्रोध से सबको मार मत देना।

32 हे बेटा ! मेरे मन में यही भ्रान्ति है। माता की यह बात सुनकर भीमसेन हँसा।

33 जहाँ भिक्षा माँगने पर लोग लोटाते नहीं, हे माँ ! मै वहीं भिक्षा माँगूँगा।

34. कुन्ती ने कहा कि चक्र नामक एक भिक्षा है, जिसे निरंजन दीक्षा कहते हैं। सभी अपने हाथ से ही देते हैं।

35 इसमें धान, चावल, उड़द, मूँग, तरकारी, स्वर्ण, वस्त्र और हाड़ी आदि देते हैं।

36. उस ब्राह्मण को देखने से सारे दिन पाप दूर हो जाता है। इसको नमस्कार करना से एक सौ आठ ब्राह्मण को नमस्कार करने के बराबर होता है।

37. जो लोग दो चक्र भरकर अन्न दान करते हैं, वे जन्म-जन्मान्तर तक अन्न का कष्ट नहीं पाते हैं।

38. भीमसेन ने कहा कि हे माता ! तुमने बड़ी अच्छी बात बतायी। वही चक्र भिक्षा मेरे लिए उपयुक्त है।

39. कुन्ती ने कहा, बेटा ! चक्र भिक्षा माँगने में अनेक दोष लगते हैं। चक्र भिक्षुक के पास दो चकमक पत्थर के रूप में गोपन अग्नि रहती है।

40. जो भिक्षा वह माँगकर पायेगा उसमें से दो भाग करके एक भाग अग्नि को देगा।

41. चक्र भिक्षा देने वाले यजमान को अन्य कोई बात न कहकर केवल कल्याण की बात कही जाती है।

42 हे बेटा ! चक्र भिक्षा के अनेक दोष हैं। मिथ्या कहने पर ब्राह्मण रौरव नरक में पड़ता है।

43 भीमसेन ने कहा कि हे माता ! भिक्षा का जो नियम है मैं उसका पालन करूगा। मैं झूठ क्यों बोलूँगा।

44 भीमसेन ने वन से बेतलता काटी। उसे चीरकर अर्जुन ने दो चक्र बनाये।

45 एक बॉस काटकर भार यष्टि बनाई। लता से गूँथकर भीमसेन के कन्धे पर दोनों चक्र भार को रखा।

46 ललाट पर टीका लगाकर हाथ में कुश की पवित्री लेकर पाण्डव उड़ाद्रि शिवपुर को जाते हैं।

47 नगर के बाहर एक आवास देखते हैं। वहाँ एक ब्राह्मण वास करता है।

48 भीमसेन उसके द्वार पर जाने के लिए आगे बढ़ा। कुन्ती ने भीमसेन को उस द्वार पर जाने से मना किया।

49 हम लोगों को स्थायी रूप से नाम छिपाकर रखना होगा। यदि हम लोग आपस में वास्तविक नाम लेकर बातचीत करेंगे तो भेद खुल जायेगा।

50-52. युधिष्ठिर का नाम जयन्त, भीमसेन का नाम जयवन्त, अर्जुन का नाम अजय, नकुल का नाम जयसेन और सहदेव मन्त्री का नाम जयराष्ट्र हुआ। इस प्रकार पंचवीर क्षत्रियों ने गुप्त नाम वहन किया।

53. जयन्त ने कहा हे भाई रुको-रुको। नगर के बाहर अछूत लोग रहते हैं।

54. भीमसेन ने कहा कि भवन साफ-सुथरा है। यह निश्चय ही ब्राह्मण है क्योंकि इसने बाहर जीवों के लिए बलि का अन्न दान किया है।

55. एक पथिक को निकट बुलाकर पूछा कि हे भाई ! नगर के बाहर यह किसका घर है ?

56. उस सज्जन ने कहा कि यह विप्र का घर है। नगर से निकाल देने के कारण यह बाहर रहता है।

57. गोस्वामी उद्दालक नामक एक ब्राह्मण था। उसने ब्राह्मणी और शूद्राणी दो स्त्रियों को लेकर घर बसाया।

58. दोनों पत्नियों से दस-दस पुत्र उत्पन्न हुए। दो पृथक्-पृथक् घर बनाकर उसने उन्हें बसाया।

59. उन्हीं से विकसित शिवपुर नगर के ईशान कोण में एक लाख नौ हजार ब्राह्मण वास करते हैं।

60. पश्चिमी भाग में अवस्थित उड़ाद्रि नगर में दो लाख पाँच हजार लोग रहते हैं।

61. इस शिवपुर नगर में ब्राह्मण रहते हैं। अपुत्रिक होने पर उसे नगर से निकाल दिया जाता है।

62. इस नगर के मुखिया विष्णुकर पण्डा का वंश किसी प्रकार वृद्धि न पा सका।

63. इस नगर के लोगों ने अपुत्रिक समझकर पास न रखा और उसे पाँति से बाहर कर दिया।

64. उस विष्णुकर पण्डा का यह घर है। निःसन्तान होने के कारण नगर छोड़कर वह यहाँ रहता है।

65. युधिष्ठिर ने कहा कि यही योग्य स्थान है। नगर के बाहर गोचर भूमि में होने के कारण यह घर गुप्त वास के लिए उपयुक्त है।

66. इसके घर सबसे पहले भिक्षा ग्रहण करेंगे। यहीं एक घर मांगकर रहेंगे।

67. पंचपाण्डव ऐसा सोचकर वहाँ प्रविष्ट हुए। देवी कुन्ती पीछे-पीछे चल रही हैं।

68. विष्णुकर पण्डा के घर भिक्षा माँगने के समय ब्राह्मण-ब्राह्मणी भोजन करके अन्दर बैठे थे।

69. बुभुक्षित ब्राह्मण बारामदे में बैठकर वेद के महाब्रह्म मन्त्र का उच्चारण करते हैं।

70. भीतर से ही विष्णुकर सुनता है। उसका शरीर निर्धूम अग्नि की तरह दिखाई देता है।

71. ब्राह्मण सोचता है कि यह तो नारायण दीक्षा है। देव पुरुष कपट से भिक्षा माँगते हैं।

72-73. ब्राह्मणी ने कहा कि आज का दिन सुफल है। द्वार पर ब्रह्मा, विष्णु, महेश, इन्द्र, कुबेर पाँचों लोग मुझे कष्ट देने के लिए उपस्थित हैं। इन लोगों के साथ इनकी माता अनादि शक्ति हैं।

74. पहले तुम्हीं जाकर उनका दर्शन करो। देखो कि वे अनुरागवश तुम्हें क्या आज्ञा देते हैं ?

75. ब्राह्मणी अनेक वेश-भूषा से सुसज्जित होकर देव स्त्री की तरह सुन्दर लगने लगी।

76. एक पट्टवस्त्र पहनकर और झीना दुपट्टा ओढ़कर सोने की थाली में अर्घ्य सामग्री भरी।

77. विष्णुकर की वनिता ने भीतर से बाहर निकलकर ब्राह्मणों को पादार्घ्य देकर प्रणाम किया।

78. कुन्ती ने उसके शरीर को सहलाकर आशीष दिया कि मेरी तरह तुम्हें भी पाँच पुत्र हों।

80-81. ऐसी बात सुनकर ब्राह्मणी ने कुन्ती के पाद-पद्म में प्रणाम करके कहा कि हे महामाया तुम परमेश्वरी हो।

82. तुम परदुःख-चिन्ता से दूसरे के मन को पहचान गयीं। हे माता ! अपुत्रिक समझकर तुम मुझ पर प्रसन्न हुई।

83. हे सात्विक माता ! तुम्हारी बात सार्थक हो। तुम्हारी इच्छा से निश्चय ही मेरे पाँच सन्तान होंगी।

84. हे आर्या ! वे यदि पण्डित और शक्तिशाली नहीं होंगे तो उन हीन पुत्रों को लेकर क्या करूँगी ?

85. कुन्ती ने कहा कि हे द्विजवर ! मेरे पुत्र वीर और पण्डित हैं।

86. भिक्षा की आशा से वे भिक्षा पात्र लेकर कण-कण माँगकर रहते हैं।

87. अस्पृश्य, कृपण, क्रियाहीन और अजाति लोगों के घर में भी उन लोगों को भिक्षा माँगनी पड़ती है।

88. हे कर्म पुरुष ! तुम्हें मेरा प्रणाम हो। तुम्हारे कमल-चरणों में मेरा शत-सहस्र प्रणाम हो।

89. तुम जो करते हो उसे ही कर्म कहा जाता है। सारी अभिज्ञता होते हुए भी मैं जीवन के अन्तिम चरण में तुमसे पराजित हुई ।

90. मुझे ऐश्वर्य में उत्पन्न करके पुनः क्यों इस प्रकार की विपत्ति में डाल दिया ?

91. तुम्हीं लघु हो, तुम्हीं महागुरु हो। इस मानव जीवन में मुझे और विपत्ति मत दो।

92. हे देव ! तुम सचल, निश्चय और चंचल हो। भाव

और अभाव में तुम्हें कोई भेद नही है।

93 हे ससार के लोगो ! कोई पथ-भ्रष्ट न हो। कर्म पुरुष ही जीव को धारण करने वाला है।

94 हे कर्म पुरुष ! तुम्हारे चरणों में शरण लेकर कवि सारला दास नन्दिकेश्वर की सेवा करता है।

शिवपुर में चाण्डाल-वध और भीम का राज्याभिषेक

1 कुन्ती ने कहा, हे द्विजवर ! तुम्हारा ज्येष्ठ पुत्र, भाग्यवान और बुद्धिमान होगा।

2 कुन्ती की बात से आनन्दित ब्राह्मण ने ब्राह्मणी को शीघ्र भोजन बनाने के लिए कहा।

3 कुन्ती ने कहा कि हम लोग गृहस्थ लोगों के द्वारा पकाये परान्न को ग्रहण नही करते।

4 ब्राह्मण और ब्राह्मणी कुन्ती को लेकर गये और उनके लिए ईशान कोण का एक घर खाली कर दिया।

5 अन्न, चावल, मूग, उन्द आदि जितनी सम्पत्ति वहा भरी थी, उस गुप्तधन के साथ समस्त दान करके ब्राह्मण ने उस घर को छोड दिया।

7 पुत्रों को लेकर कुन्ती आराम से विप्र के घर मे रहने लगी।

8 ब्राह्मण-ब्राह्मणी अत्यन्त भक्ति करते है। उन्हे इष्टदेवता की तरह मानकर सारी व्यवस्था करते है।

पाण्डव कौतूहलपूर्वक भिक्षापात्र लेकर अर्धरात्रि में शिवपुर मे जाते है।

10 नगर के लोग उन लोगों को देखकर भक्ति करते है और उनका निवास-स्थान पूछते है।

11 पश्चिम सौराष्ट्र के हस्तिनापुर मे हम लोगों का जन्म स्थान है।

12 अनेक जन्म से हम लोग तीर्थवासी हैं। निर्मल नगर जानकर हम लोग यहाँ आकर रह रहे है।

13 विष्णुकर पण्डा के घर हम लोग रहते है। ग्रामीण कहते है कि तुम लोग अन्दर आओ।

14 परिवार-वृद्धि के कारण हम लोग भिक्षार्थी हुए। हम लोग पवित्र सोमवशी और विष्णु आश्रित है।

15 जिस पर वासुदेव की शुभ दृष्टि है, कौन उनके बस मे नही होगा ?

16 इन धार्मिक, विवेकी और पण्डित लोगों के नेत्र, शरीर और अधर बत्तीस लक्षणो से युक्त है।

17 लक्षणवान पुरुष को लक्ष्मी नहीं छोड़ती। ये प्रत्यक्ष रूप मे भार-निवारण हेतु उत्पन्न हुए हैं।

18 उस नगर मे उन्होने अत्यन्त गौरव प्राप्त किया। रात्रि मे ही भिक्षा माँगते है।

19 भिनसार मे ही नित्य-कर्म समाप्त करके छिप जाते है।

20 कुन्ती केवल घर मे रहती है और वे सभी दिनभर जगल मे घूमते है।

21 वन मे कन्दमूल, पक्व फल सग्रह करते है तथा गेंडे और हिरन मारकर नित्यकर्म करके भोजन के समय लौटते है।

22 पाचो लोगो की रात्रि भिक्षा मे जो चावल मिलता था, उसे कुन्ती पकाती थी।

23 आधा कुन्ती भीम को दे देती थी और आधा माता के साथ पाच लोग खाते थे।

24 बहुत कुतूहल से दिन बीत रहे है। युधिष्ठिर ने कहा कि कोई राज्य का विधान नही है।

25 तुला से वृष मास पर्यन्त आठ मास शिवपुर मे पाण्डव रहे।

26, 27 एक बार सिंह मास की शुक्ल द्वितीया को बृहस्पतिवार के मघा सिंह राशि पर बृहस्पति विराजमान हुए। अत गौतमी तीर्थ मे पितृ स्नान पर्व पड़ा।

28 पितृ लोग आकाश से उतरकर आते है। उसी स्थान पर सभी देवताओं के साथ मिलते है।

29 कोटि तीर्थ लेकर तीर्थाधिपति पुष्कर वहाँ तीन दिन तक रहते है।

30 उन तीन दिनो के बीच जो स्नान करता है, उसका जन्मभर का पाप क्षय हो जाता है।

31 एक बार सिर डुबाने से एक जन्म का पाप दूर हो जाता है।

32-35 नीच जन मान्य लोगों को जब जाने-अनजाने छूते है तो यह पाप अन्य जल मे स्नान करने से नही जाता। एक जाति के लोग जब दूसरी जाति की स्त्री के साथ रमण करते है तो उससे जो पाप होता है, वह महोदधि मे बृहस्पति योग मे स्नान करने से दूर

होता है।

36. महाकार्तिक में चन्द्रभागा तीर्थ में स्नान करने से महापाप दूर हो जाता है।

37-38. जिस समय सिंह में वृहस्पति रहता है, उस समय गौतमी तीर्थ में यदि सिर डूबता है तो उसके पितृ लोग स्वर्ग में जल पाते हैं।

39. सिंह छोड़कर जब वृहस्पति कन्या में जाकर बैठता है, तब कृष्णादेवी में कन्या वृहस्पति तीर्थ योग होता है।

40. वहाँ पुष्कर के कोटि तीर्थ लेकर उपस्थित होने के कारण कृष्णावेणी में स्नान करने से सब दोष दूर हो जाते हैं।

41. मकर मास में उत्तगंकुर में जो स्नान करता है, उसका स्पर्श पाप को दूर कर देता है।

42. मणिकर्णिका में जो लोग एक बार स्नान करते हैं, उनका महापातक धुल जाता है।

43. प्रयाग-त्रिवेणी में सिर डुबाने से यम-दण्ड कष्ट नहीं देता।

44. पुराण में इस प्रकार की बात लिखी है। इसीलिए पाण्डव तीर्थाटन के लिए तैयार हुए।

45. विष्णुकर पण्डा अपुत्रिक था। पाण्डवों की कृपा से उसकी भार्या आशावती हुई।

46. ब्राह्मणी के गर्भ के पाच महीना होने पर नगर में घोषणा हुई कि विष्णुकर पण्डा का अपुत्रिक दोष समाप्त हो गया।

47. विष्णुकर पण्डा को जाति बहिष्कृत कर दिया गया था। गौरवपूर्वक उसको सभा में बैठाया गया।

48. जयन्त ने कहा कि हे मा ! तुम यहीं रहो। हम पांच भाई गौतमी तीर्थ को जायेंगे।

49. कुन्ती ने कहा कि भीमसेन को नहीं जाना चाहिए। वहाँ दुर्योधन को देखने पर उसके साथ संग्राम करने लगेगा।

50. वनस्थली में रहकर यह जो दुःख भोग रहा है, उसके कारण वह वहाँ क्रोध को सँभाल नहीं सकता।

51. युधिष्ठिर ने विष्णुकर पण्डा से बताया कि हम चार भाई गौतमी तीर्थ को जायेंगे।

52. जयवन्त पण्डा और हमारी माँ यहाँ रहेंगी। हम लोगों के लौटने तक इन दोनों को सँभालकर रखना।

53. यह सुनकर विष्णुकर पण्डा अत्यन्त हर्षित हुआ। कहा कि जितनी खाद्य सामग्री की आवश्यकता होगी, मैं चार महीने तक पूरी करूँगा।

54. वे लोग सब समय भोजन से तुष्ट होंगे। तुम्हारी कृपा से मैं परम गति को प्राप्त करूँगा।

55. धर्मसुत ने भीम को राजी किया। चारों भाई गौतमी तीर्थ के लिए चलते हैं।

56. ब्राह्मण रूप में वे गमन करते हैं। उन्तीस दिन में तीर्थ स्थान पर पहुँचे।

57. कर्कट शुक्ल पक्ष पूर्णिमा के दिन उस उड़ाद्रि और शिवपुर नगर के लोग आपस में युद्ध करने लगे।

58. संग्राम से पाँच दिन पूर्व घोषणा हुई कि इस नगर मे बारह दिन तक युद्ध होगा। सभी धनुष और तूणीर सुसज्जित करो।

59. युद्ध घोषणा सुनकर चारों ओर कोलाहल मचा। वहाँ रथ, गज और अश्व कुछ भी नहीं था। सभी पदातिक रूप में युद्ध करने के लिए तैयार हुए।

60-63. सभी शस्त्र सुसज्जित करते हैं। खड्ग को साफ करते हैं। प्रचण्ड भाव से गर्जन-तर्जन करते हैं। त्रिकक्ष वसन पहनते हैं। जटा को वेणी से बाँधते हैं। हाथ में लाठी और गले में मन्दार की माला धारण करते हैं। कोई ईटों का चूर्ण और कोई राख और कोई देह में कालिख पोतते हैं। कर्ण में धतूरे का फूल और ललाट पर लाल कुमुदनी का पुंज धारण करते हैं। भीमसेन ने पूछा कि हे पण्डा ! तुम लोगों का इस प्रकार का भेष क्यों है ?

64. विष्णुकर ने कहा कि हे जयवन्त ! हमारे आदि पुरुष एक पुरोहित थे।

65. यशवन्ती नामक उनकी ब्राह्मणी के कामदेव की तरह दो पुत्र हुए।

66. दोनों का नाम भाग्यवर और वसुवर था। वेद-शास्त्र में कोई उनके समतुल्य नहीं था।

67. मकर मास में महात्मा उद्दालक वैतरणी स्नान के लिए अकेले घोर वन से होकर जा रहे थे।

68. विष्णुकूट नामक एक पर्वत पर सुरान्तक नामक एक चाण्डाल रहता था।

69-70. उसकी लड़की श्रिया ने वन में पुरोहित को देखा।

उस उद्‌दालक पुरोहित को पकड़कर पर्वत के नीचे बलात् मैथुन कराया।

71. चाण्डाली के गर्भ में मुनि ने महारेत विसर्जित किया। एक तात्कालिक पुत्र उत्पन्न हुआ।

72. इस प्रकार वे नित्य स्नान करने जाया करते थे। वह दुराचारिणी उनसे बलपूर्वक दुराचार करवाती थी।

73. इस प्रकार एक मास में दस पुत्र उत्पन्न हुए। वे दुष्ट स्वभाव-सम्पन्न हुए।

74. ब्राह्मणी से भी दस पुत्र उत्पन्न हुए। डर के कारण यती ने दोनों को दो भागों में रख दिया।

75 उड़ाद्रि शिव नगर में इन चाण्डालों का वास है। इसी श्रावण मास में प्रति वर्ष एक बार उड़ाद्रि शिवनगर के चाण्डालों के साथ युद्ध होता है।

76. कल इस नगर में संग्राम होगा। क्या तुम हम लोगों के साथ जाओगे ?

77 कुन्ती ने कहा कि यह मेरा पुत्र मूर्ख और दुष्ट है। इसको तुम उत्तेजित मत करो।

78-79. सर्प, राजा, वनमानुष, व्याघ्र, श्वान, मूर्ख, भालू, सिंह, बन्दर, खलदेव और खूंखार वीर आदि इन सबको उत्तेजित करने से निश्चय ही भयकर परिणाम होता है।

80. ब्राह्मण ने कहा कि हे माता ! पुरुष होकर कोई बिना युद्ध के यहाँ नहीं रह सकता।

81. भीमसेन ने कहा कि हे माँ ! कुछ मत बोलो संग्राम में जाते समय हे ब्राह्मण तुम मुझे बुला लेना।

82. कुन्ती डरकर चुप हो गयी। पुनः कोई उत्तर न दे सकी।

83. विष्णुकर द्विज ने भीम को ले जाकर सभा के बीच में खड़ा किया।

84. महातेजस्वी मूर्ति को देखकर ब्राह्मणों ने उसके शरीर पर चन्दन, कर्पूर, कस्तूरी और कुंकुम आदि को मिट्टी के पात्र में लेकर शीघ्रतापूर्वक लेप किया।

85. सौ रत्नमालाओं से उसके हृदय को विभूषित किया। कहा कि तुम्हारी कृपा से हम लोगों की मुक्ति होगी।

86. देवांगवसन और सूक्ष्म रेशमी वस्त्र लाकर ठाकुर की तरह उसकी देह को आभूषित किया गया।

87. उस शिवपुर और उड़ाद्रि नगर में राजा न होने के कारण वह घर-घर में ठाकुर के रूप में परिचित हुआ।

88. अत्यन्त गौरव के साथ भीम की पूजा की गयी। इस वरण के कारण वह दुष्ट-प्रकृति प्रसन्न हुआ।

89. उड़ाद्रि नगर से सब समय मारकर जीतने वाले चाण्डाल बाहर आये।

90. उन लोगों के केश रूक्ष, मुख भयंकर तथा कण्ठ मयूर की तरह लम्बा दिखाई देता है।

91. काछ के पास धूसर बालों को बाहर निकाल करके बाँह ठोंकते हुए रे-रे का चीत्कार करते हैं।

92. भाला, तलवार, बरछा, चक्र, लाठी, गदा और मुद्‌गर हाथ में लेकर ऊपर उठाकर आह्वान करते हैं।

93. चाण्डालों की सेना को देखकर ब्राह्मण दौड़ पड़े। ध र्म की उपेक्षा करके शस्त्र का प्रहार करते हैं।

94 शस्त्र से सुसज्जित और मदिरा से मत्त दुर्दान्त चाण्डाल सेना ब्राह्मणों को देखकर उनके ऊपर टूट पड़ी।

95. ढोल, नगारे आदि भयंकर वाद्यों के नाद के भीतर रे-रेकार चीत्कार करके आपस में पीटा-पीटी हो रही है।

96. कूदकर चीत्कार करते हैं। कमर में सारे शस्त्रों को खोंसकर चारों ओर लाठी घुमाकर प्रचण्डवेग से दौड़ते हैं।

97. मारो-मारो कहकर जब सबने चीत्कार किया, तब ब्राह्मण डरकर भाग गये।

98 दौड़ाकर वे पीटते हैं और ब्राह्मणों को उठाकर पटक देते हैं। इस प्रकार ब्राह्मणों को मारकर रक्त की नदी प्रवाहित कर दी।

99. सिन्दूरविलेपित महाकाल भैरव की तरह वे उन्मत्त चाण्डाल भयंकर दिखाई देते हैं।

100 भयंकर रूप से उन्होंने अनेक ब्राह्मणों को मारा। जयवन्त छिपकर चुपचाप बैठा था।

101. विष्णुकर बायें हाथ से उसके हाथ को पकड़कर कहता है कि हे ब्राह्मण ! चलो दूर भाग जायें।

102-104. युद्ध में हारने के समय रहकर हम क्या करेंगे ? अनेक लोगों के लिए हम लोग चाण्डालों के हाथ

क्यों अपने प्राण देंगे ? जयवन्त ने कहा कि युद्ध में आकर भाग जाने से यम दण्ड देता है।

105. जीतने पर उत्सव होगा और मरने पर स्वर्ग लाभ होगा। क्षत्रिय-धर्म इस प्रकार दुर्लभ-सुलभ है।

106. भीमसेन ने कहा कि हे ब्राह्मण ! रुको ! चाण्डाल सेना को हम लोगों के पास आने दो।

107. विष्णुकर पण्डा ने कहा कि ये प्रतिवर्ष हमारे पास आते हैं। हम लोग भाग जाते हैं और ये लोग सब ध्वंस करते हैं।

108. कुछ लोगों को मारते और कुछ लोगों को पकड़कर ले जाते हैं। पुनः उन्हें सात चोटी करके छोड़ देते हैं।

109. धन-वस्त्र लूटकर नगर जला देते हैं। सुन्दरी ब्राह्मणियों को लेकर वे घर बसाते हैं।

110. सब समय यही होता चला आ रहा है। हम लोग किसी भी समय उन लोगों के समकक्ष नहीं होते।

111. जयवन्त ने कहा कि हे ब्राह्मण ! स्थिर होकर रहो। मेरा शरीर क्रोध से कांपता है। मुझसे ऐसी बातें मत करो।

112-113. जब चाण्डाल सेना युद्ध करती हुई उनकी ओर बढ़ रही है, तब विष्णुकर पण्डा जयवन्त से विनीत अनुरोध करता है। हे स्वामी ! चलो भाग चलें। तुम किसके लिए अपने को नष्ट करोगे ?

114. तुम्हारे भाई मुझे तुम्हें समर्पित करके गये हैं। आने के समय माता ने मना किया है।

115. भीमसेन ने कहा कि तुम स्थिर होकर रहो। इसी क्षण में मारूंगा। ये कहाँ जायेंगे ?

116. विष्णुकर मन में सोचता है कि इसका मतलब समझा। इसका शरीर पर्वत की तरह विशाल है।

117. डर के मारे कोई इसके पास नहीं आयेगा। युद्ध देखकर वहां मुझे आगे ढकेल देगा।

118. वे मुझे मार डालेंगे। यह भाग जायेगा और मेरे घर पर यह अधिकार कर लेगा।

119. अच्छी प्रकार उसने सोचा कि यह पाप-हृदय है। मैंने जल-भवर के साथ प्रीति की।

120. दांत में तृण लेकर वह विनय करता है कि स्वामी! मेरी दोनों भुजाएँ छोड़ दो।

121. ऐसा सोचते समय चाण्डाल-सेना वाण वर्षा करती हुई इनके पास आकर युद्ध करने लगी।

122. जब हजारों ब्राह्मण गिर पड़े तब भीमसेन क्रोध से गर्जन करके उठा।

123. दो वृक्षों को उखाड़कर हाथ में लिया हुआ भीमसेन वर्षाकाल में विन्ध्य पर्वत की तरह भयंकर दिखाई देता है।

124. मारुति गर्जन करके कोपानल हुआ। उसकी दोनों आँखों की पुतलियाँ ताम्रचक्र की तरह दिखाई दे रही हैं।

125. भीम के पदाघात से ब्राह्मण काँप गया। त्रस्त होकर दुराचारी गण स्तब्ध हो गये।

126. वृक्ष घुमाकर भीम पीटने लगा। चाण्डाल सेना भाग गयी।

127. वीर भीमसेन ने उन्हें दौड़ाकर मारा। पच्चीस योजन तक उन्हें धराशायी कर दिया।

128. प्रलय वायु से जैसे कदली वन कॉपता है, वैसे ही उसके पदाघात से कॉपती हुई पृथ्वी रक्त-माँस से पंकिल हो गयी।

129. भीमसेन वज्राघात से पीटने लगा। वे नगर छोड़कर पच्चीस योजन तक भाग गये।

130. किसी को मुक्के से, किसी को थप्पड़ से प्रहार करता है। कोई मुक्के के आघात से भूमि पर गिर पड़ा।

131. जिसके जन्म के समय शतशृंग पर्वत टूट गया, उसके समकक्ष कोई मानव हो सकता है ?

132. सेना को टूटते देखकर ब्राह्मण दौड़े और पीछा करके प्रत्येक को मारा। कोई छूटने नहीं पाया।

133. स्त्रियों सहित सबका नाश किया। लूटकर अनेक धन-द्रव्य ले आये।

134. ब्राह्मणों ने छोटे शिशुओं को पटककर मारा। इस प्रकार उड़ाद्रि नगर को निष्कलंक कर दिया।

135. गन्ध-मादन नदी के किनारे अनन्त बट के नीचे शिवपुर मण्डप में सभी एकत्रित हुए।

136. ब्राह्मण दाँत में तृण लेकर रक्षा करो, रक्षा करो कहकर भीम के पैरों पर गिर पड़े।

137. हे अनन्त कालजयी महामल्ल ! तुमने चाण्डाल-सेना का ध्वंस करके ब्राह्मणों का उद्धार किया।

138. प्रतिदिन ब्राह्मण और चाण्डालों के बीच झगड़ा होता रहा। ये मदमत्त लोग सदा त्रास देते थे।

139. दुष्ट जनों का विनाश करके हम लोगों की रक्षा की। हे स्वामी ! अब तुम इस राज्य में अभिषिक्त हो।

140. हे स्वामी ! हमारा राज्य निश्चय की तुम्हारे योग्य है। इन दोनों राज्यों को अधिकृत करके तुम एकाधिपति होगे।

141 इस गन्ध-मादन नदी की प्रसिद्धि है कि यह अनन्त वैकुण्ठपुर को भेद कर निकली है।

142 सभी ब्राह्मणों ने वेदपाठ करके मूर्धाभिषेक करके सिर पर पगड़ी बॉधी।

143 उड़ाद्रि शिवपुर नगर का उसे अधिकारी बनाकर विष्णुकर पण्डा को आमात्य रूप में पगड़ी दी।

144 जयवन्त नामक विशालकाय नृपति की राजा के योग्य भोजन, सेवा और शासन की व्यवस्था की गयी।

145 भीमसेन ने पात्र, अमात्य, महापात्र, सामल, जेना आदि उपाधि देकर पगड़ी दी।

146 विष्णुकर पण्डा महापात्र ने यज्ञ किया। सभी लोगों ने मिलकर एक महल बनाया।

147 नगर परिचालक विष्णुपुर पण्डा का घर राजप्रासाद के रूप मे परिणत हुआ। उसी घर में कुन्ती रह रही है।

148 हजारों रसोइये भोजन बनाते हैं। भीमसेन सोचता है कि अब मै निश्चिन्त हुआ।

149 चारों ओर रहने वाले वनवासियों को खेदकर वह धन, भण्डार, रथ, गज और अश्व ले आता है।

150 कर्कट, सिह, कन्या, तुला, वृश्चिक राशि योग में राज्य की सुरक्षा का उत्सव हुआ।

151. शिकार के लिए जाकर गज, अश्व, शार्दूल, ऊँट, बाघ, गेंडा, वन महिष और मृग पकड़कर ले आता है।

152. निशान, ढोल आदि वीरवाद्यो के साथ उसने पॉच अक्षौहिणी सेना की सुसज्जा की।

153. उसने इस प्रकार वन और नगर के राज्य का शासन किया। सौ सैन्यवाहिनी उसकी सेवा करने लगीं।

154. अनेक ब्राह्मण इस वन-देश के राजा' भीमसेन की पाद-पूजा करते हैं।

155. महासमारोहपूर्वक उसने सैन्य सज्जा की। सोचता है कि मैं अपनी सेना लेकर हस्तिनापुर पर आक्रमण करूँगा।

विष्णुकर पण्डा का शिवपुर राज्य-लाभ

1. हे मनु महाशय ! इसके बाद यह महाभारत का वृत्तान्त सुनकर पाप-क्षय करो।

2. गौतमी तीर्थ के लिए जो चार पाण्डव गये हैं, वे रात में चलते हैं और दिन में वन में रहते हैं।

3. सिह शुक्ल अष्टमी के दिन रात्रि के अन्तिम प्रहर में गौतमी तीर्थ में पाण्डव पहुँचे।

4. जारा, नारका और काल यवन सहित सभी राजा वहाँ उपस्थित थे।

5 6 याणा, वज्रनाभ, स्वयंवर, काशीश्वर, निर्झर, गणपति, मालव, विराट, संकोचन, माधव, बाल्लिक, भैरव आदि राजाओं के साथ भीष्म, द्रोण, कर्ण, शल्य और सभी कोरव उपस्थित थे।

7 पाण्डवों ने रात्रि में सभी राजाओं को देखकर रात रहते स्नान और पिण्डदान किया।

8 पाच दिन और पॉच रात वे वहॉ रहे। चतुर्थ प्रहर वे प्रतिदिन स्नान और तर्पण करते रहे।

9. दिन में घोर वन में रहते थे। उस समय राजा गण पिण्डदान करते थे।

10 अगस्त्य कहते हैं, हे युगपति ! भूरिश्रवा से द्रुपद राजा एकान्त में पूछते हैं।

11. हे पार्थिव नृपति-सुत ! सावधान होकर सुनो। मैंने पाण्डवों को बहुत खोजा।

12 हे देव ! पाण्डु के पुत्रो को खोज न सका। पाण्डव कहाँ हैं ? उनका समाचार बताओ।

13. नृपति कुल सुत सुनकर कहते हैं, हे द्रुपद राजा ! सुनो।

14. भीम और दुर्योधन के बीच विरोध हुआ। धृतराष्ट्र ने पाण्डवों को वारुणावन्त में स्थान दिया।

15. वारुणावन्त में लाक्षागृह में रहते हुए पॉचों भाई माता के साथ दग्ध हुए।

16. पाण्डवों को मरे चौदह वर्ष हो गये। यह सुनकर द्रुपद राजा आश्चर्यचकित हुआ।

17. भूरिश्रवा के मुख से निष्ठुर बात सुनकर पांचाल नृपति

अत्यन्त दुःखी हुआ।

18. चिन्ताग्रस्त होकर कहा कि यह किस प्रकार हुआ? महेश्वर का वर तो प्राप्त नहीं हुआ।

19. इतना सोचकर नृपमणि द्रुपद अर्जुन का नाम स्मरण करके अत्यन्त दुःखी हुआ।

20. अब मैं राजाओं को निमन्त्रित करूँगा। महेश्वर की इच्छा तो व्यर्थ हो गयी।

21-23. इतना सोचकर द्रुपद ने हाथ में अर्घ्य लिया। चार को छोड़कर एक लाख राजा वहाँ उपस्थित हैं। द्रुपद अपने हाथ में श्रीफल और अक्षत लेकर समारोह में मण्डप के नीचे प्रणाम करता है। हाथ जोड़कर द्रुपद विनीत होकर निवेदन करता है।

24-25. सभी राजा सावधान होकर सुनें। मेरी एक पुत्री है। यह याज्ञसेनी द्रौपदी महासागर से उत्पन्न हुई। राजाओं को लेकर उसका स्वयंवर करूँगा।

26. मैं एक अपूर्व लक्ष्य निर्मित करूँगा। उसे जो भेद देगा उसे ही मेरी दुहिता प्रदत्त होगी।

27. मकर शुक्ल द्वितीया के दिन मेरे प्रासाद में सभी राजा उपस्थित हों।

28. अक्षत देकर मैं सबको निमन्त्रित करता हूँ। निश्चय करके सभी अनुकूल सहमति दें।

29. सभी राजाओं ने कहा कि यह महातीर्थ है। हम लोग धर्म के लिए यहाँ आये हैं।

30. यहाँ कहकर यदि सभा में नहीं जायेंगे तो हम लोग प्रतिज्ञाभ्रष्ट होंगे। जो नहीं जायेगा उसका सम्बन्ध विच्छेद कर दिया जायेगा।

31. यह हमारी अलंघ्य प्रतिज्ञा है। जो इसका पालन नहीं करेगा वह तीर्थ करने का फल नहीं पायेगा।

32. निमन्त्रण में जाना धर्म है। न जाने पर हम लोगों का अधर्म होगा।

33. राजाओं को निमन्त्रित करके द्रुपद राजा सेना लेकर पांचाल देश को लौट रहे हैं।

34. गौतमी तीर्थ के किनारे व्यास को देखकर हाथ जोड़कर राजा ने पूछा–

35. हे व्यास ! द्रौपदी को अर्जुन के लिए पैदा किया है। हे मुनि ! मुझे बताओ कि पाण्डव कहाँ हैं ?

36. सबके बीच पाण्डवों को न देखकर मैंने भूरिश्रवा से पूछा।

37. भूरिश्रवा ने कहा कि पाण्डव वारुणावन्त में थे। जातुगृह के दग्ध होने से सभी विनष्ट हुए।

38. पाण्डवों को मरे चौदह वर्ष हो गये। हे व्यास ! मुझसे भूरिश्रवा ने ऐसा बताया।

39. व्यास ने कहा कि तुमने तो ऐसा सुना। अब द्रौपदी के लिए क्या करोगे ?

40. व्यास ने कहा कि तुम स्वयंवर करो। मैं तुम्हारी सभा में एक लक्ष्य निर्माण करूँगा।

41. द्रुपद ने कहा कि माघ के प्रथम पक्ष में आने के लिए मैंने समस्त राजाओं को निमन्त्रित किया।

42. तुम्हीं वहाँ रहकर सारी व्यवस्था करोगे। उत्पन्न करने के नाते तुम्हीं उसे प्रदान करोगे।

43. सेना लेकर द्रुपद लौट रहा है। उसके पीछे-पीछे चारों पाण्डव चल रहे हैं।

44. द्रुपद के अपने भवन में जाने के बाद सभी राजा अपने-अपने देश को लौट गये।

45. पाण्डव उड़ाद्रि शिवपुर को चले। देखा कि महान् उत्सवपूर्वक राजकाज चल रहा है।

46. रथ, गज, अश्व और पदाति सेना देखकर वे सोचते हैं कि किस राजा ने यहाँ अधिकार कर लिया ?

47. इतना सोचकर वे वन में ही रह गये। दिन में राज्य के भीतर प्रविष्ट नहीं हुए।

48. अर्द्धरात्रि में नगर में प्रविष्ट हुए। देखा कि शून्य मन्दिर में कुन्ती अकेली है।

49. संकोच से पाण्डव भीतर नहीं घुसे। जयवन्त-जयवन्त कहकर दरवाजे पर पुकारा।

50. भीतर से ही देवी ने युधिष्ठिर का स्वर पहचान लिया। हाथ में जलपात्र लेकर देवी बाहर आयीं।

51. माता के चरणों में चारों भाई प्रणिपत्य हुए। युधिष्ठिर ने पूछा कि हे माँ भीमसेन कहाँ है ?

52. माता ने कहा कि हे बेटे ! अन्दर आओ। स्वस्थ होकर बैठो। मैं तुम्हें सब बताती हूँ।

53. स्नान से पवित्र होकर वे भीतर आये। कुन्ती ने दिव्य भोजन बनाकर दिया।

54. भोजन करके आचमन किया। स्थिर होने पर कुन्ती ने बताया–

55. हे बेटे ! तुम लोग गौतमी तीर्थ को गये। कर्कट पूर्णिमा के दिन यहाँ युद्ध हुआ।

56 विष्णुकर पण्डा भीम को साथ ले गया। भीम ने उड़ाद्रि शिवपुर के सभी चाण्डालों को मार डाला।

57 शिवपुर के ब्राह्मणो ने कृतज्ञतापूर्वक भीम को दोनो नगरों के राजा के रूप में अभिषिक्त किया।

58. विष्णुकर पण्डा इस राज्य का महामन्त्री हुआ। भीम कालेवर चक्रवर्ती रूप में प्रसिद्ध हुआ।

59 अनेक वन राज्य पर आक्रमण करके रथ, गज, अश्व समेत पॉच अक्षौहिणी सेना लाकर एकत्रित की।

60 युधिष्ठिर ने कहा कि हम लोग ऋपभ, मिथुन, कर्कट, सिह, कन्या और तुला इन छः महीनो तक नही थे।

61 इस समय भीम ने ऐसा कार्य किया। वहॉं जाने पर वह दुर्योधन के साथ अवश्य युद्ध करता।

62 हे मॉं ! तुम यहाँ अकेली रहती हो। तुम्हारी चिन्ता नही करता ?

63 कुन्ती ने कहा कि किस कुक्षण मे उसे पैदा किया कि वह मुझे शत्रु की तरह समझता है।

64 युधिष्ठिर न कहा कि हे माता ! क्या करें। उसके प्रासाद-द्वार पर जाकर संदेश देंगे।

65 पुत्रो को लेकर कुन्ती ने द्वारपाल को कल्याण वचन कहा।

66 हे बेटा ! हम लोग तीर्थवासी चार ब्राह्मण है। हम लोगो की राजा के साथ भेंट करा सकते हो ?

67 द्वारपाल न कहा कि प्रतीक्षा करो। देवार्चन के समय तुम्हें लेकर दर्शन कराऊँगा।

68 इतना कहकर उन्हें रोककर द्वारपाल राजा के पास गया और हाथ जोड़कर कहा।

69 हे देव ! कालवर दण्ड चक्रवर्ती ! पश्चिम सोमराष्ट्र के चार ब्राह्मण आये हैं।

70. उनके साथ महात्मानी माता है। जयन्त, अजय, जयसेन और जयराष्ट्र उनका नाम है।

71. हे देव ! वे गौतमी तीर्थ को गये थे। दर्शन के लिए वे आपके पास आना चाहते हैं। उन्हें ले आऊँ क्या ?

72. विष्णुकर महामन्त्री ने कान पर हाथ रखकर कहा कि अब तुम्हारी मॉं तुम्हारे पास आयी है।

73. हे देव ! वे तुम्हारे भाई है और तीर्थ करके लौटे हैं। उनका दर्शन करने से तुम्हारा पाप दूर हो जायेगा।

74. भीमसेन मन ही मन सोचता है कि ये मुझे लेकर पुनः वन में कन्दमूल फल खिलायेंगे।

75 द्वारपाल पूछता है कि हे स्वामी ! क्या अदेश है ? क्रोध से नेत्र को कालचक्र की तरह घुमाया।

76 द्वारपाल भय से भाग गया। ब्राह्मणों के पास जाकर बताया।

77 हे ब्राह्मण ! तुम लोगो पर ठाकुर क्रुद्ध हुए। तुम लोगों को निकट जाने की आज्ञा नही हुई।

78 हम लोगो पर भी क्रुद्ध हुए। यदि तुम लोग निकट जाते तो दण्ड पाते।

79 अर्जुन के क्रुद्ध होने पर युधिष्ठिर ने कहा कि हे अर्जुन! रुको। दुष्ट को मधुर वचन से सन्तुष्ट करना चाहिए।

80 हम लोगो के निकट वह अत्यन्त दुःख पा रहा था। राजा होने पर वह अत्यन्त सुख पा रहा है।

81 इतना कहकर युधिष्ठिर लौटे। वनस्थली मे प्रविष्ट होकर निजकर्म आरम्भ किया।

82 उत्तरीय और पवित्री लेकर सुमन्तक नामक पुरोहित प्रतिदिन भीमसेन के पास जाया करता था।

83 युधिष्ठिर ने मुनि को प्रणाम किया। उन्होंने आशीर्वाद देकर पूछा कि हे बेटे ! तुम लोगों के साथ भीमसेन तो नही है।

84 युधिष्ठिर ने कहा कि उस भीमसेन ने शिवपुर का राजा होकर हम लोगो की उपेक्षा की है।

85 हम लोगो को देखकर वह पास नही आया। यह सुनकर सुमन्तक ब्रह्मयती हसने लगा।

86 तुम लोग यही रहो। मै भीम को लेकर शीघ्र ही यहाँ आ रहा हूँ।

87 युधिष्ठिर को आश्वस्त करके पुरोहित गया। भीम को उत्तरीय और पवित्री धारण करायी।

88 पुरोहित ने कहा कि तुम अज्ञानी और मूर्ख हो। युधिष्ठिर की उपेक्षा करके तुम्हारे इस राज्य-सुख का क्या अर्थ है ?

89 भीमसेन ने कहा कि हे मुनि ! तुम चुप होकर रहो। मैं हस्तिनापुर एक बार जाकर लौट आऊँ।

90 धृतराष्ट्र के पुत्रों को युद्ध में मारकर लौटूँगा तब मैं

युधिष्ठिर के साथ मिलूँगा।

91. सुमन्तक ने कहा कि वे हस्तिनापुर में नहीं हैं। सभी राजा सेना लेकर द्रुपदपुरी को चले गये हैं।

92. द्रुपद राजा ने स्वयंवर का आयोजन किया है। एक लाख राजा वहाँ एकत्र होंगे।

93. फाल्गुनी राधा चक्र का भेद करेगा और याज्ञसेनी तुम लोगों को प्राप्त होगी।

94. अनेक कौतूहलपूर्ण रंगारंग होगा। तुम अभी युधिष्ठिर के पास चलो।

95. वह वीर मारुति पांचाल देश में कुरुपति के साथ भेंट होने की सूचना पाकर अत्यन्त प्रसन्न हुआ।

96. भीमसेन ने राज्यवासियों को बुलाकर कहा कि राजा होकर भी मेरे पुत्र और भार्या नहीं है।

97. मैं अभी प्रयाग तीर्थ को जाऊँगा। विष्णुकर महापात्र अब तुम्हारा राजा होगा।

98. सुमन्तक पुरोहित की आज्ञानुसार विष्णुकर शिवपुर का अधिकारी हुआ।

99. हे पण्डित जन ! सुनो। महान् लोगों के दर्शन से सब कार्य सफल होते हैं।

100. विष्णुकर पण्डा नगर-बहिष्कृत हुआ था। कुन्ती के आशीर्वाद से उसके दो पुत्र उत्पन्न हुए।

101. नगर के लोगों ने जिसे सभा से बाहर कर दिया था और पाति से हटा दिया था, अन्त में वही राज्य का अधिकारी हुआ।

102. महान् व्यक्ति की सेवा करने में ऐसा ही होता है। महान् लोगों के दर्शन से सकल कार्यों की सिद्धि होती है।

103. सुमन्तक मुनि वृकोदर को लेकर गये और युधिष्ठिर के दर्शन कराये।

104. भीमसेन ने युधिष्ठिर के चरणों में प्रणाम किया। युधिष्ठिर ने भीम के शरीर को प्यार से सहलाया।

105 106. इसके बाद सुमन्तक पुरोहित ने प्रस्थान किया। शिवपुर नगर का अतिक्रमण करके उत्तर कोण में तीन सौ योजन तक महोदधि की ओर घोर वनस्थली में पाँचों भाई चले।

वकासुर वृत्तान्त

1. शुद्धतपा नामक एक नदी आकाशगंगा से निकलकर महोदधि में मिलती है।

2 3. उस नदी के किनारे एकचक्रा नामक एक नगर था। विप्र आदि अठारह जातियों के लोगों ने उसे निर्मल देखकर वास स्थान किया है।

4. नदी का तट परिमल, शुचि और पुण्य भूमि है। वह माहेश्वरी नदी उत्तर दिशा में बहती है।

5. वन छोड़कर जाते हुए पाँचों वीर भिक्षा के लिए नगर में प्रवेश करते हैं।

6-7. युधिष्ठिर सौरभ पात्र, भीमसेन चक्रभार, अर्जुन हरिगोविन्द थैला, नकुल ताम्र कटोरा और सहदेव ताम्र पात्री लेकर कौतूहलपूर्वक नगर में घूमते हैं।

8. जनवहुल महानगर को वे देखते हैं। वहाँ सभी लोग भाग्यवान, स्वस्थ और सबल हैं।

9. घूमते-घूमते सूर्यास्त हो गया। अब कहाँ रहेंगे—ऐसी चिन्ता करते हैं।

10. एक वेदशर्मा द्विजवर के द्वार पर भिक्षापात्र लेकर

11. वह वेदशर्मा ब्राह्मण भिक्षाजीवी है। उसके द्वार पर वे वेदगान करते हैं।

12. ब्राह्मणी यह देखकर विरिमन हुई। ब्राह्मण अभी तक भिक्षा से नहीं लौटा है। अतः उसके पास देने के लिए कुछ भी नहीं है।

13. मेरे स्वामी भी इसी प्रकार भिक्षाजीवी हैं। अतः तुम लोग चले जाओ—ऐसा कहने का भाव उसके मुख में नहीं आता है।

14. अगर वे महान् दयावन्त यहाँ होते तो मधुर वचन कहकर इन्हें आश्वस्त कर सकते।—वह ऐसा मन में सोचती है।

15. ब्राह्मणी समार्जन करके उनसे कहती है कि उनके भिक्षा से लौटने पर मैं तुम अतिथियों को तृप्त करने के लिए आधा चावल दूँगी।

16. ब्राह्मणी ने कहा कि रात अधिक हो गयी है। मेरे घर में ही आज रह जाओ।

17-18. भाग्यवशात् भिक्षुक ब्राह्मण के घर में कुछ नहीं

है।

18. आधा घर खाली पड़ा हुआ है। उन्हें भीतर ले गयी। पाण्डव बहुत आनन्दपूर्वक रहे।

19. ब्राह्मणी उनके पास बैठकर जब उन लोगों का परिचय पूछ रही थी, उसी समय वेदशर्मा भिक्षा से लौट आये।

20 ब्राह्मणी ने शीघ्र ही ब्राह्मण के पास आकर सारी बातें बतायीं।

21 जो भिक्षा वह लाया था, उससे निकालकर कुछ हाँड़ी में रखा।

22. वेदशर्मा ने उनके सामने हाँड़ी, चावल, मूँग और नाना प्रकार की तरकारी रखकर पाण्डवों की अत्यन्त सेवा की।

23 इस नगर मे तुम लोग जब तक रहोगे, तब तक मैं तुम लोगो को अन्न-भोजन देता रहूगा।

24 वेदशर्मा के द्वारा घर का आधा हिस्सा दिये जाने के कारण माँ के साथ वे छः लोग निश्चिन्त होकर रहने लगे।

25 दिन में भिक्षा के लिए चार भाई जाते हैं। कुन्ती ने भीम को साथ लेने के लिए मना किया।

26 युधिष्ठिर ने कहा कि भीम भिक्षा के लिए न जाय। भिक्षा में लोग बहुत नहीं देते और अल्प इसकी आँखों में नहीं समाता।

27 जो लोग उसे जाओ कहकर मना करेंगे, यह उनका घर तोड़कर सबको मार डालेगा।

28. घर में भीम और माता को छोड़कर सभी भिक्षा के लिए नगर में घूमते है।

29. भिक्षा में वे लोग जो पाते हैं, उसे कुन्ती पकाती *

30 दो भाग करके आधा भीम को देती है। इसके आधे से कुछ देवता और अतिथि को देती है।

31 भात से जो माड़ निकलता है, उसे कुन्ती माँ भीम को देती है।

32. भीमसेन आधा भोजन करके भी किसी से बात नहीं करता और हमेशा क्रुद्ध रहता है।

33-35. तुला, वृश्चिक दो मास रहने के बाद धनु मास में तीन दिन बीत गये। धनु मास कृष्ण पक्ष द्वितीया के दिन वेदशर्मा ब्राह्मणी से कहता है कि मेरे सिर में दर्द है और शरीर में आलस्य है। आज मैं भिक्षा के लिए नहीं जा सकता।

36 ब्राह्मणी ने कहा कि यदि तुम्हारे शरीर में दर्द है तो रहने दो, भिक्षा के लिए मत जाओ।

37. वह सोचती है कि घर में तो एक भी चावल का दाना नहीं है। स्वामी के अस्वस्थ होने पर कैसे दिन बीतेंगे।

38 यदि मैं ब्राह्मण को जबरदस्ती भेजूँगी तो मेरे गृहिणीपन का दोष सब समय दिखाई देगा।

39 कहेंगे कि एक दिन खर्च पूरा न कर सकी तो रक्त मांस का यह दुर्बल शरीर कब तक चलाया जायेगा।

40 मैं जब जरा रोग और व्याधि को प्राप्त होऊँगा तो मेरे भिक्षा के लिए न जाने पर सभी लोग मरेंगे।

41 इतना कहकर मेरे गृहिणीपन को वह दूषित करेगा। द्विजवर आज भिक्षा के लिए न जाय। आज आराम करें—ऐसा वह सोचती है।

42. पुत्र-दुहिता दो ओर दो हम लोग है; डेढ़ सेर चावल उधार ले आऊँगी।

43 ब्राह्मण और ब्राह्मणी एक जगह बैठकर सुख-दुःख की बाते कर रहे हैं।

44. ब्राह्मण का नाम वेदशर्मा और ब्राह्मणी का नाम रमा देवी है।

45. पुत्र का नाम विद्याधर और दुहिता का नाम भानुमती है।

46 वे खेलने के लिए गये थे। लौटने पर माँ ने उनको कुछ भोजन दिया।

47-48. इस समय अम्बिका नामक चाण्डाल ने नगर में घोषणा की—सुनो-सुनो कहकर घण्टा बजाते हुए कहता है कि कल वेदशर्मा के घर ठाकुर की पारी है।

49 घण्टा सुनकर ब्राह्मणी ने कहा कि रुको-रुको, सुनेंगे कि कल किसके घर की पारी पड़ी है ?

50 सुनो-सुनो कहकर चाण्डाल ने घोषणा की कि वेदशर्मा के घर कल ठाकुर की पारी है।

51 ब्राह्मणी ने कहा—हे ब्राह्मण ! कल हमारे घर में ठाकुर की पारी है। यह सुनकर मेरा सिर जला जाता है।

52. ब्राह्मण ने कहा कि तुम बेकार में पागल मत हो। इस नगर में जाने कितने वेदशर्मा हैं ?

53. ब्राह्मणी ने कहा कि गणना करके देखो कि हमारे पारी दिये कितने दिन हुए।

54. द्विजवर खड़िया लेकर लेखन करता है। एकचक्रा नगर में ग्यारह हजार नौ सौ साठ घर हैं।

55. प्रत्येक घर की पारी को ध्यान में रखकर भूल न होने के लिए वह बारम्बार गणना करता है।

56. ग्यारह हजार नौ सौ साठ घर होने के कारण एक आदमी के घर तैंतीस वर्ष दो मास बीस दिन में पारी पड़ती थी।

57. लिख-लिखकर अन्त में ब्राह्मण बहुत दुःखी हुआ। कहा कि रात बीतने पर पारी हमारे घर में पड़ेगी।

58. यह बात समझकर अस्वस्थ ब्राह्मण और ब्राह्मणी वज्राघात की तरह मूर्च्छित हो गये।

59. माता-पिता की दुःखजनक अवस्था को देखकर दोनों निरीह बच्चे सेवा करते हैं।

60. ब्राह्मण के घर दुःखपूर्ण कोलाहल सुनकर कुन्ती झरोखे से झाँकती है।

61. ब्राह्मणी ने कहा, हे ब्राह्मण ! तुमने आलस्य किया। घर में कुछ न होने पर भी तुम भिक्षा के लिए नहीं गये।

62. हे नाथ ! उधार करके आज का दिन बीता। दूब-अर्घ्य देने के लिए एक चावल भी नहीं है।

63. इस समय बक राक्षस की पारी पड़ी है। यह सोचकर सभी भूमि पर लोटकर रोते हैं।

64. एक गाड़ी भात, एक गाड़ी पेठा, दो भैंसे, दो बैल और एक मनुष्य हम लोग कहाँ पायेंगे—कहकर व्याकुल होकर वे रोते हैं।

65. ब्राह्मणी ने कहा कि मैं अपने पिता के घर जाऊँगी। दो भैंसा, दो बैल और दो गाड़ी माँगूँगी।

66. ब्राह्मण ने कहा कि मैं अतिथि होकर सभी घर से एक थाली भात और एक थाली पेठा माँगूँगा।

67. किसी प्रकार तो इन सबको पूरा करूँगा किन्तु नरबलि के लिए मनुष्य कहाँ से लाऊँगा ?

68-69. ब्राह्मणी ने कहा कि एक उपाय किया जाय। तुम पुत्र और पुत्री को सँभालोगे। मैं कल दैत्य का भोजन होऊँगी। तुम जीवित रहने पर दूसरी स्त्री ला सकते हो।

70. कर्मयोग से धनार्जन करने से पुनः विवाह हो सकता है। हे स्वामी ! तुम अकेले रहो। मन में अन्य कुछ न सोचो।

71. ब्राह्मण ने कहा कि हे संगिनी ! यह नहीं हो सकता। पुत्र और पुत्रियाँ दोनों बच्चे हैं।

72. छोटे बच्चों को छोड़कर माँ जब मर जायेगी तो टुँवर बच्चों का दुःख देखकर पिता कैसे जी सकता है ?

73. इन अपने बच्चों की व्याकुलता को देखो। इनके इस दुःख को देखकर कौन जी सकता है ?

74. इन पुत्र-दुहिता को तुम सँभालो। मैं कल वक राक्षस का आहार होऊँगा।

75. ब्राह्मणी ने कहा कि हे नाथ ! तुम्हारे नष्ट होने पर मुझे मरने से भी अधिक कष्ट विधवा होने पर मिलेगा।

76. स्वामी के अभाव में जो नारी रहती हैं, वे नारियाँ बाद में दुराचारिणी हो जाती हैं।

77. ब्राह्मण ने कहा कि मेरे रहते वक राक्षस तुम्हें कैसे खा सकता है ?

78-79. पिता-माता की विकलता को देखकर पुत्र ने कहा, हे पिता ! हम लोगों के घर में एक राक्षस की पारी पड़ी है। पिता-माता के रहते तो पुत्र उत्पन्न होगा। तुम्हारे नाश होने पर सन्तान कैसे उत्पन्न होगी?

80. बकरियाँ होने पर बाघ आयेंगे ही। हे स्वामी ! कल की पारी में मुझे बकासुर को दे दो।

81. पुत्र रहते माता-पिता को क्यों कष्ट हो ? पापिष्ठ बक राक्षस कल मेरा भक्षण करे।

82. दस वर्ष के इस पुत्र की बात सुनकर ब्राह्मण-ब्राह्मणी उसे गोद में लेकर रोने लगे।

83. इस प्रकार की दुःखद बात मत कहो। तुम्हें देकर हम लोग कैसे जीयेंगे ?

84. तुम्हारे मुख से इस प्रकार की दुःखद बात सुनकर हम लोगों का शरीर इसी क्षण क्यों नहीं जल गया ?

85-86. दुहिता ने कहा कि मुझे तो तुम लोग पीछे किसी को प्रदान करोगे ही। इसलिए हे पिता-माता मत रोओ। मैं तो परगोत्री हूँ। इस बात को बुरा मत मानो। मुझे

देकर हे माता ! बक राक्षस की पारी से मुक्त हो।

87. ब्राह्मण ने कहा हे बेटी ! तुम तो बच्ची हो देखकर राक्षस कैसे सन्तुष्ट होगा ?

88 ब्राह्मण-ब्राह्मणी की यह बात सुनकर कुन्ती उनके पास आयी।

89. हे ब्राह्मण तुम्हारा इतना दुःख क्यों हैं ? मुझे बताओ।

90-91. ब्राह्मण ने कहा कि बड़ी दुःसह कथा है। हिरण्य कवच नामक एक दैत्य था। उसका नन्दन निर्वात कवच था। उसके एक लडकी और चार पुत्र पेदा हुए।

92 पुत्रों का नाम कुम्भीर, किन्नर, हिडिम्बक, बक ओर कन्या का नाम हिडिम्बा है।

93-94 कुम्भीर दैत्य सुरनदी के किनारे, किन्नर दैत्य मधुवन उद्यान में, हिडिम्बक दैत्य हिडिम्बक वन में और बक राक्षस एकचक्रा नगर में रहता है।

95 यह राज्य का विधान हे कि प्रत्येक घर से पारी के अनुसार एक गाड़ी भात, एक गाड़ी पेठा, दो भैंसे, दो बैल और एक आदमी खाने के लिए दिया जायेगा।

96. ततीस वर्ष दो मास बीस दिन में प्रत्येक घर से इतनी चीजें देनी होती हैं। इतना देने पर उसके घर में वह यमराज नहीं ढुक सकता।

97 उसके डर से बादल बरसते रहते हैं। एक बीघे खेत में पचास मन धान उत्पन्न होता है।

98 यहाँ दूसरा कोई उपद्रव नहीं है। रोग, व्याधि, जरा, मृत्यु आदि कोई भी दुर्भाग्य यहाँ नहीं होता है।

99. कल मेरे घर उसकी पारी पड़ेगी। सब कुछ की व्यवस्था कर सकता हूँ, लेकिन नरबलि की नहीं।

100 कुन्ती ने कहा कि मैं तुम्हारे घर में रह रही हूँ। अतः तुम्हारे घर में प्रवेश के दिन से ही तुम्हारे घर के पाप-पुण्य की भागीदार हूँ।

101. और सब जुगाड़ तुम शीघ्र करो। नरबलि हमारे हिस्से में छोड़ दो।

102. धरती छूकर ब्राह्मण ने कान पर हाथ रखा। कहा कि हे स्वामिनी ! तुमने ऐसा क्यों कहा ?

103. मेरे घर में केवल तीन महीने तक रहीं। मैं पापिष्ठ किस प्रकार तुम्हारे बच्चे को दे सकता हूँ ?

104. अब मैं असुर के पास जा रहा हूँ। तुम मेरे बेटे, बेटी और भार्या की रक्षा करना।

105. कुन्ती ने कहा कि यह मेरी बात सच्ची है। तुम्हारे लिए मैं अपना एक पुत्र दूँगी।

106. हे ब्राह्मण ! तुम कुछ विस्मित मत होओ। मेरे पास एक दुष्ट पुत्र है।

107. भिक्षा माँगने के लिए नहीं जाता है किन्तु आधा भोजन खा जाता है। तिसपर भी कुछ बोलता नहीं और मुँह फुलाकर बैठा रहता है।

108. उसकी मृत्यु की मैं कामना करती रहती हूँ। पर हम लोग उसे कैसे मार सकते हैं ? वह इसी प्रकार मरे।

109-110. दुष्ट पुत्र, नष्ट भार्या, ऋणकारी पिता, अभावग्रस्त मित्र, कुस्थान भूमि, असुर भोग-तीर्थ--इन सबकी पण्डित लोग उपेक्षा करते हैं।

111 द्विजवर को देवी कुन्ती ऐसा समझाकर भीमसेन के पास शीघ्र पहुँची।

112 माता का मुख देखकर भीमसेन हँसा। दो सग्गड़ भात-पेठा की बात तुम क्यों कर रही थीं ?

113. कुन्ती ने कहा कि मैं तुम्हारी विपत्ति अपने सिर लेती हूँ। कितने दिन तक तुम्हारा यह भोजन कष्ट देखती रहूँगी।

114-115 हे बेटा ! कल वेदशर्मा के घर बक राक्षस की पारी है। दो सग्गड़ भात और पेठा, दो भैंसे और दो बैल--ये सब लेकर तुम भल्लुकी नदी के किनारे जाओ और राक्षस को देकर आओ।

116. भात-पेठा का सग्गड़ लेकर जाने में सभी भय करते हैं। मैंने ब्राह्मण को वचन दिया है कि मैं साथ में अपना एक बेटा दूँगी।

117. भीमसेन ने कहा कि हे माँ ! मैं जाऊँ, देख लूँ कि वह राक्षस कैसा है ?

118. भीमसेन आदिशक्ति की प्रार्थना करता है कि हे देवी ! माँ कुन्ती को मुझे वहाँ भेजने के लिए प्रेरित करो।

119 माँ के दुःखी भाव से ऐसा प्रस्ताव करने के बाद सन्ध्या समय चारों भाई आ पहुँचे।

120. द्वार पर खड़े होकर वे वीरमणि पुकारते हैं कि हे

माँ ! पाँव धोने के लिए पानी लाओ।

121. कुन्ती दुःखी होने के कारण बाहर नहीं आयी। तब सभी भिक्षा का चावल लेकर घर में घुसे।

122. चारों भाइयों ने प्रणाम करके पूछा कि हे माँ ! भीम ने तुम्हें गाली दी क्या कि तुम ऐसे दुःखी होकर बैठी हो?

123. हे बेटे ! सुनो। कुन्ती ने कहा कि कल वेदशर्मा के घर बक राक्षस की पारी है।

124. ब्राह्मण ने सब वस्तुओं की व्यवस्था की किन्तु नरबलि के लिए कोई व्यवस्था न कर सका।

125-126. ब्राह्मण-ब्राह्मणी पुत्र-पुत्री के साथ रोदन कर रहे थे। उनके दुःख को देखकर मैं सहन न कर सकी। मैंने नरबलि के लिए एक पुत्र को देने के लिए प्रतिज्ञा की।

127. युधिष्ठिर सुनकर स्तम्भित हो गये और कहा कि हे माँ! हम सभी मात्र तुम्हारे पाँच ही पुत्र हैं।

128. सौ-सौ जिसके पुत्र हैं उनकी माँ भी इस प्रकार की बात नहीं कहती हैं।

129. हे माँ ! तुमने एक बार कुम्भीर दैत्य के लिए भीम को दिया था। धर्म-बल से वह बचकर पुनः हम लोगों के साथ आ गया।

130. मधुवन में किन्नर दैत्य और हिडिम्बक ने उसे मार डालना चाहा था। किन्तु वह लौट आया।

131. मैं भीमसेन के बाहुबल पर भरोसा करता हूँ ? अन्य किसी को दे दो जिसे वह राक्षस भक्षण करे।

132. नकुल और सहदेव ये दोनों मेरे विमाता भाई हैं। मेरे शरीर में प्राण रहते मैं उन्हें नहीं दे सकता।

133. हम सब तुम्हारे तीन पुत्र हैं। भीमसेन ही संग्राम में समर्थ है।

134. अर्जुन क्षत्रिय धनुर्धर है। उसे हरि ने द्वितीय कृष्ण नाम दिया है। उसे तो नहीं दिया जा सकता है।

135. मैं किसी योग्य नहीं हूँ। मुझे बक राक्षस के पास भेज दो।

136. कुन्ती ने कहा कि बेटा ! मैं भीमसेन को दूँगी। वह अवश्य ही बक राक्षस को मार डालेगा।

137. मैं इसके बल-वीर्य को जानती हूँ। दुर्दान्त पवन का वह पुत्र है।

138. जन्मकाल में जब मैंने इसे रात्रि में गोद में लिया था, उसी समय एक बाघ पर्वत के नीचे गर्जन कर उठा।

139. भय से मैंने पुत्र को नीचे गिरा दिया। उसके भार से शतश्रृंग गिरि पाताल में चला गया।

140. फेंककर मैं भय से भाग गयी और एक वृक्ष पर चढ़ गयी।

141. पाँव हिलाकर शिशु जब रो रहा था, तभी बाघ उसे खाने के लिए दौड़ा।

142. भीमसेन के पैर के अँगूठे के लगने से बाघ का मुण्ड शत-खण्ड होकर चूर हो गया।

143. दाहिने पैर की कानी उँगली के लगने से सौ योजन आयतन वाला पर्वत-शृंग टूट गया।

144. गिरिवर ने क्रोध से शाप दिया कि मुझे प्रथम प्रहार करने के कारण तुम प्रथम युद्ध में पराजित होगे।

145. बाघ की मृत्यु देखकर मैं वृक्ष से उतरी। पर्वत से पूछा कि मेरे पुत्र को क्यों शाप दिया ?

146. मैंने इस पुत्र को निष्कलंक पैदा किया। पर्वत ने कहा कि हे माँ ! मुझ पर क्रोध मत करो।

147. प्रथम युद्ध अवश्य ही यह हारेगा किन्तु द्वितीय युद्ध में मैं इसके शरीर में वास करूँगा।

148. उस समय ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र कुबेर और माहेश्वर सभी आकर भी वृकोदर को पराजित नहीं कर सकते।

149. हे बेटा ! मुझे ऐसा संदेश पहले ही प्राप्त है। अतः भीम को भेज रही हूँ।

150. हे बेटा ! तुम इसकी चिन्ता मत करो। आज भीमसेन अवश्य बक राक्षस को मारेगा।

151. हे बेटा ! हम लोग इस नगर में आकर रह रहे हैं। इस कार्य के द्वारा हमें युग-युग तक इस नगर के लोग याद करते रहेंगे।

कुन्ती के प्रस्ताव-अनुसार भीम को बकासुर के वध के लिए भेजना

1. युधिष्ठिर ने सहदेव की ओर देखकर पूछा कि सच में भीमसेन बक राक्षस को मार सकेगा तो ?

2. सहदेव ने कहा कि हे स्वामी ! कुम्भीर, किन्नर, वक और हिडिम्बा एक पिता से उत्पन्न हैं।

3 हिडिम्बा इन्हीं लोगों की बहन है। ठाकुर वृकोदर ने तीन भाइयों को मार डाला है।

4 पृथ्वी इन चारों के भार को सहन न कर सकी। आकाश में दिग्पाल नहीं रह पाये।

5 अमर स्वर्ग से ये अप्सराओं को ले आये। देव भण्डार लूटकर ले आये।

6 इन्द्र देवता असुरों के डर से भाग गये। यम देवता सजीवनीपुर में न रह सका।

7 महेश्वर, इन्द्र और कुबेर इन चारों भाइयों से बहुत युद्ध करते रहे। अन्त में हारकर भाग गये।

8 देवताओं के द्वारा जब इन असुरों का वध नहीं हुआ तो हम लोग मनुष्य रूप में उत्पन्न हुए।

9 इनके अन्त के लिए ही गुप्त रूप से हम लोगों का वनवास कराया गया।

10 सहदेव ने युधिष्ठिर से कहा कि भीमसेन का बल कुन्ती जानती है।

11 युधिष्ठिर ने सहदेव के वचन से आनन्दित होकर कहा कि हे भाई! जाओ। मेरी आयु लेकर जीते रहो।

12 प्रत्यक्ष देवी हिंगुला तुम्हारी विपत्ति खण्डन करें। सर्वमंगला तुम्हारे ऊपर मंगल करें।

13 वहाँ से उठकर कुन्ती ने ब्राह्मण को सारी व्यवस्था करने के लिए कहा।

14 जिसके लिए व्याकुल हो रहे थे, उस नरबलि के लिए मैं एक पुत्र को दूँगी।

15 द्विजवर सुनकर प्रसन्न हुआ। अनेक सामग्री का उसने जुगाड़ किया।

16 ब्राह्मणी ने अपने पिता के घर जाकर भात और पेठा दो सग्गड़ माँगा।

17 अच्छे लोग सदा संचय करके रखते है, क्योंकि दरिद्र ओर श्रीहीन लोग किसी भी समय माँग सकते है।

18 संचय किये हुए घर से उसने पाया। दो सग्गड भरकर दो भैंसे और दो बैल लेकर आयी।

19 लाकर खड़ा कर दिया। कुन्ती ने कहा, हे वृकोदर जाओ।

20 युधिष्ठिर ने भीम के कान में कहा कि गुप्त रूप में मारना। बिना किसी के जाने हम लोग यहाँ से बाहर हो जायेंगे।

21 सग्गड़ हाँककर भीमसेन चलता है। उसके पीछे-पीछे कुन्ती भी जा रही है।

22. नगर की स्त्रियाँ इसे देखकर पूछती हैं कि ऐसे पुत्र को क्यों भेज रही हो?

23 तुम क्या समझती हो कि यह सारा जुगाड़ लौट आयेगा? जो लोग साथ जाते है वे आग में भून दिये जाते हैं। क्या तुम यह नहीं जानतीं?

24 इसका मुख सौ चन्द्रमाओं को जीतने वाला है। यह तो चित्रसेन, नलकुबेर या कामदेव की तरह लगता है।

25 क्या तुम इसका पोषण नहीं कर सकती? इसका अकारण विनाश न करो। हम लोगों को दे दो।

26 कुन्ती ने कहा कि मैं ब्राह्मण के आधे घर में अधिकारपूर्वक रह रही हूँ। मैं इसीलिए इसके पाप-पुण्य की भागीदार हूँ।

27 मेरे कर्म में जो था वही हुआ। अनिच्छा व्यक्त करने पर धर्म की हानि होगी।

28-29 तीन वर्ष दो मास और बीस दिन में बक राक्षस की पारी पड़ती है। तुम्हें तो रहते यहाँ तीन मास ही हुआ। तुम क्यों राक्षस को नरबलि दोगी?

30 कुन्ती ने कहा कि मुझसे ऐसी बातें मत करो। स्वयं जो किया जाता है, उसे ही कर्म कहते हैं।

31 सभी लोग व्याकुल होकर कहते हैं कि हे महामानी! वह तुम्हारा पुत्र नहीं शत्रु है?

32 ज्ञानी लोगों ने कहा कि यह महान् है। परदुःख से दुःखी होकर या दूसरों की भलाई करने वाली है।

33 नगर के बाहर छोड़कर भाई और माँ लौटे। पवन-तनय गाड़ी हाँककर चल रहा है।

34 घोर गहन वन में जाते हुए भीमसेन नगर से साठ योजन दूर पहुँचा।

35 बैल और भैंसों को छोड़ दिया। स्नान करके गाड़ी से भोजन को नीचे गिरा दिया।

36. दायें घुटने को जमीन पर टेककर दायें हाथ से भात और बायें हाथ से पेठा उठाकर भीमसेन आनन्दपूर्वक खाने लगा।

37. दायें हाथ से एक मुट्ठी भात खाकर बायें हाथ से एक-एक पेठे को पेट में फेंकता जाता है।

38. महाक्षुधार्त्त भीमसेन पवन से अधिक गति से भोजन कर रहा है।
39. जब दो प्रहर समय हुआ, तब राक्षस अपने दोनों हाथों में दो शूल लेकर पहुँचा।
40. भोजन के समय वह विशालकाय भीमसेन उसे राहु की तरह दिखाई दिया।
41. अरे-अरे ! कहकर दैत्य दौड़ता है। कहता है कि मेरे भोजन को क्यों जूठा कर रहे हो ?
42. वह दुष्ट राक्षस दौड़कर चिल्लाता है। भोजन के आनन्द में मस्त भीम उसकी बात नहीं सुन पाता है।
43. भीमसेन ने जब उसका चीत्कार नहीं सुना, तब बकासुर ने महामत्त नाग की तरह गर्जना की।
44. दैत्य के गर्जन से सप्त ब्रह्माण्ड काँप गये, किन्तु भीमसेन दोनों हाथों से मुँह बाकर खा रहा है।
45. उसे बुला-बुलाकर वह दैत्य निराश हो गया। बधिर की तरह भीमसेन नहीं सुनता है।
46. क्रोध से उस दैत्य ने शूल घुमाकर वज्र की तरह भीम के ऊपर प्रहार किया।
47. दोनों शूल टूटकर धूल हो गये। प्रचण्ड मारुति फिर भी नहीं माना।
48. क्रोध से उस दानव कुल सांड़ ने एक पर्वत को उखाड़कर भीम के ऊपर पटक दिया।
49. वृकोदर के मुण्ड से टकराकर वह पर्वत धूल हो गया और भूमि पर गिर पड़ा।
50. राक्षस उसे देखकर दुःखी हुआ। भीम ने भोजन-मस्त होकर कुछ भी ध्यान नहीं दिया।
51. खाने के बाद सन्तुष्ट होकर भीम ने घूरकर राक्षस को देखा।
52. बायें हाथ से टटोलकर दैत्य की दोनों भुजाओं को पकड़ा। कहा कि रे दुष्ट दैत्य ! तुम स्वभाव से ही मूर्ख हो।
53. तुम अज्ञानी और पापी हो। तुम्हें ज्ञान नहीं है। खाने के समय शत्रु को मारना उचित नहीं है।
54. देखकर राक्षस विषण्ण हो गया। समझ गया कि यह मूढ़ मुझसे भी बड़ा है।
55. दानव ने कहा कि तुम कहाँ के ब्राह्मण हो ? किसलिए मेरे भोजन को जूठा किया ?
56. भीमसेन ने कहा कि अब तुम्हारा और जीवन शेष नहीं है। इष्ट देवता को याद करो। आज तुम्हारी मृत्यु निश्चित है।
57. क्रोध से निशाचर ने भीम को ढकेल दिया। असुरेश्वर ने कहा, हे ब्राह्मण ! हाथ छोड़ो।
58. असुर के दोनों हाथों को बायें हाथ से पकड़कर मारुति ने दायें हाथ से वज्रमुष्टिका का प्रहार किया।
59. भीमसेन की वज्रमुष्टिका असुर के मुण्ड पर पड़ी। उसके मुख से रक्त-वमन होने लगा।
60. पुनः सचेत होकर उस दानव महाबली ने भीम को ढकेल दिया। वह भूमि पर गिर पड़ा।
61. भीमसेन की छाती पर बैठ गया। पवन-सुत भीम प्रथम युद्ध में हार ही जाया करता है।
62. जिस प्रकार सचान पक्षी बगुले को मार बैठता है, उसी प्रकार दुर्दान्त असुर भीमसेन को दबोचकर प्रतिज्ञा करता है।
63. तुमने मेरे भोजन को जूठा किया। इसलिए हे पापिष्ठ! मैं तुम्हारे माँस को विदीर्ण करके खा जाऊँगा।
64. भीमसेन ने कहा कि हे दुष्ट असुरेश्वर ! तुम्हारी और मेरी धर्मयुद्ध में कुछ देर की विरति हो।
65. विरति की बात कहने पर दैत्य ने छोड़ा। खींचकर वृकोदर ने उसे उलट दिया।
66. वृकोदर राक्षस की छाती पर दबोचकर बैठ गया। वृकोदर महाबली के रूप में विकसित हुआ।
67. पर्वत को दबोचकर जैसे महेन्द्रगिरि बैठा है, उसी प्रकार भीम दैत्य के ऊपर बैठकर महागर्जन करता है।
68. गले को दबाकर वज्र-मूठ मारा। ललाट फटने से रक्त बहने लगा।
69. असुर ने कहा कि मेरी युद्ध-विरति दो। हे द्विजवर ! धर्मयुद्ध में हार गया, मुझे छोड़ दो।
70. हे-हे दानव ! तुम्हें ज्ञान नहीं है। ब्राह्मण के साथ युद्ध करने में विरति कैसे मिलेगी ?
71. दानव ने कहा कि मल्लयुद्ध का यही नियम है। मृत्यु से रक्षा के लिए विरति माँगी जाती है।
72. भीमसेन ने कहा कि मेरे युद्ध की विरति तुम्हारा कंटक है। मरने के समय क्यों कातर हो रहे हो ?
73. निर्वात कवच के चारों पुत्रों की मृत्यु मेरे हाथों ही

लिखी है। तुम्हारी मृत्यु अवश्य मेरे हाथों होगी।

74 75 कुम्भीर दैत्य को सुर नदी के भीतर, किन्नर दैत्य को मधुवन में और हिडिम्बिक दैत्य को हिडिम्बिक वन मे मारा। अब तक तुम बचे थे। अब मेरे हाथों में पड़े हो।

76 इतना कहकर जोर से उसके गले को दबा दिया। असुर ने दोनों ऑखें निकालकर प्राण त्याग दिये।

77 उसकी जिम्वा दो दण्ड पर्यन्त बाहर निकल आयी। इस प्रकार दुरापद असुर ने प्राण-विसर्जन किया।

78 पश्चिम की ओर सूर्य अस्त हुआ। सभी देवता साधु-साधु करते है।

79 असुर के केश पकड़कर रात्रि मे गया। नगर के अन्त मे मूर्ति की स्थापना की।

80 शाल वृक्ष से टिकाकर नगर की ओर मुंह करके उसने असुर को महामूर्ति रूप मे स्थापित किया।

81 ढाई प्रहर रात्रि बीत चुकी है। पॉचो लोग बाट जोहते हुए द्वार पर बैठे थे।

82 ठीक तीन प्रहर होने पर युधिष्ठिर के पास भीमसेन पहुँचा।

83 युधिष्ठिर ने कहा कि हे माँ ! शीघ्र चला जाना चाहिए। रात बीतने पर सभी लोग जान जायेंगे।

84 इस नगर के लोग हमारी पूजा करेंगे और भीमसेन को पुनः राजा बनायेंगे।

85 यह सोचकर निशा रात्रि मे निकलकर नगर छोड़कर वे वन मे शीघ्र प्रविष्ट हुए।

86 बडे-बड़े वृक्ष और गहन कण्टकाकीर्ण भूमि पर माता कुन्ती और युधिष्ठिर चल नही पाते है।

87 युधिष्ठिर, ने कहा कि यह वन छोडकर बहुत दूर निकल जाये जिससे हमे नगर के लोग खोज न पायें।

88 भीमसेन ने कहा कि हे माता ! मेरे सिर पर बैठो। प्रसन्न होकर कुन्ती सिर पर बैठी।

89 दाये कन्धे पर युधिष्ठिर, बायें पर अर्जुन और दोनों कॉख में नकुल और सहदेव रहे।

90 वृकोदर पवन से भी तेज चलता है। ठोकर के आघात से पर्वत चूर हो जाते हैं।

91. नगर से बाहर होने तक रात्रि एक प्रहर बची थी। भीमसेन एक प्रहर में एक सौ बीस योजन तक गया।

92 श्रीराम वेणी नामक नदी के किनारे सबेरा होते ही पहुँचे।

93 लक्ष्मण ने जयासुर को उस वन में मारा था। उस वन प्रान्त का नाम शततपा था।

94 उस नदी मे वीरो ने प्रातः स्नान किया। वहीं रण-सुन्दर नामक एक सुन्दर पर्वत भी था।

95 देखते है कि गेडा और हिरण झुण्ड के झुण्ड वहाँ चरते है। युधिष्ठिर ने कहा कि यह वन रहने के लिए अच्छा है।

96 पाण्डुनन्दन उस घोर गहन वन मे रहने लगे। वे सुखपूर्वक उस वन मे विचरण करते है।

97 अगस्त्य ऋषि ने कहा कि युधिष्ठिर की जानकारी में बक दैत्य का वध हुआ।

98 भीमसेन राक्षस के केश पकड़कर लाया और उसे नगर के बाहर प्रेताधिपति के रूप में स्थापित किया।

99 पाण्डव महारात्रि मे घोर वन मे चल दिये।

100 हे योगेश्वर ! सुनो। अगस्त्य कहते हैं कि अन्धकार को विदीर्ण करके सूर्य ने ज्योति विकीर्ण की।

101 सबेरे नगर के लोग जब बाहर आये, तो देखा कि प्रज्वलित आँखो से भयंकर राक्षस आँख फाडकर देख रहा है।

102 भयकर मुख से जीभ बाहर निकल गयी है। उसके दसो नख बिजली की तरह तेज बिखेर रहे हैं।

103 विस्तृत मुख से निकलकर जिस्वा हृदय पर लटक रही है। नगर के लोग ऐसे दुर्लभ रूप को देखकर दौड़ पडे।

104 महाभीष्म मूर्ति को देखकर नगर के लोग सोचते हैं कि ठाकुर अतृप्त हुआ।

105 अम्बिका नामक घोषणाकारी को बुलाकर पूछा कि कल किसके घर पारी थी ?

106 शीघ्र ही जाकर उद्घोषक वेदशर्मा को बुला लाया।

107 नगर के लोग ब्राह्मण से पूछते है कि तुम ठाकुर की तृप्ति नहीं कर सके।

108 हे ब्राह्मण ! तुमने कल कौन-कौन सी सामग्री दी थी? वेदशर्मा ने कहा कि मैंने सब कुछ की व्यवस्था की थी।

109. नरबलि की क्या व्यवस्था थी ? वेदशर्मा ने नगर

वासियों को बताया।

110. मेरे घर में माँ और उसके पाँच पुत्र रहते थे। मेरा कष्ट देखकर उन्होंने एक भाई को दिया।

111. नगर के लोगों ने कहा कि तुमने बुरा काम किया। स्वयं न जाकर दूसरे को क्यों भेजा ?

112 जिसको भेजा था, उसे अपने घर में जाकर देखो। उसी समय ब्राह्मण ने दौड़कर अन्तःपुर में ढूँढ़ा।

113 देखा कि वहाँ जन-मानव कोई नहीं है। वेदशर्मा ब्राह्मण ने आकर यह बात कही।

114 हे ब्राह्मण ! उस दुर्मुख ब्राह्मण ने सारी सामग्री खा ली और रात में ही वे लोग भाग गये।

115 नगर के लोग ब्राह्मण को घेरकर शोरगुल करने लगे। अपना काम क्या दूसरा करता है ?

116 तुम्हारे प्रमाद से ठाकुर का कोप हुआ। इसी क्षण नगर के ऊपर भीषण विपत्ति पड़ेगी।

117 हे वेदशर्मा ब्राह्मण ! तुम जाओ और इसी समय ठाकुर का भक्ष्य होकर नगर की रक्षा करो।

118 अनेक शीतल पेय और अपरिमित खाद्य सामग्री लेकर नगरजन आये।

119 गाड़ी में भात-पीठा भरकर वह विप्र दैत्य के पास पहुँचा।

121 दूर से खड़ा होकर विप्र ने प्रणाम किया। विनयभाव से अनन्त स्तुति करता है।

122 एक कदम आगे बढ़कर विनयपूर्वक प्रणाम करता है। कहा कि हे देवस्वामी ! नगरवासियों पर कोप न करो।

123 आप शान्त करके हे देव ! इस भुवन की रक्षा करो। मेरे घर पापी थी, मेरा भक्षण करो।

124 बहुत दुःख और व्याकुलता से ब्राह्मण स्तुति करता है। प्रणाम करता हुआ उसके पास पहुँचा।

125 ब्राह्मण ने बक राक्षस के शरीर में जीवन का लक्षण नहीं देखा। जीवन से निराश कर ब्राह्मण अब निर्भय हो गया।

126 असुर का हाथ पकड़कर ब्राह्मण ने कहा कि हे स्वामी! एकचक्रा नगर तुम्हारे द्वारा शासित था।

127 हम सभी पुरजन तुम्हारे अधीन हैं। तुम्हारे भाव-अभाव में हम लोग दोषी हैं।

128 इतना कहकर ब्राह्मण ने असुर का हाथ खींचकर कहा कि स्वामी मेरा भक्षण करो।

129. असुर वृक्ष से टेककर खड़ा किया गया था। खींचने से भूमि पर वह कामरूपी असुर गिर पड़ा।

130 असुर को देखकर वेदशर्मा निश्चिन्त हुआ कि उसके शरीर में प्राण नहीं हैं।

131 नगर के लोग दूर खड़े थे। दौड़कर वे सभी पास आये।

132 असुर के वध को देखकर लोगों ने वेदशर्मा की स्तुति की। कहा कि तुम्हारी कृपा से हमारा कष्ट दूर हो गया।

133. महान् लोगों के साथ रहने के कारण तुम्हारे द्वारा हम लोगों का कार्य सिद्ध हुआ। वे चारों ओर उन भिक्षुक ब्राह्मणों को खोजने लगे।

134 उस अद्भुत पुरुष को कैसे खोजकर पायेंगे ? वह हम लोगों का राजा होता।

135 एकचक्रा नगर के लोगों ने वेदशर्मा की पूजा की। वेदशर्मा उस नगर का राजा हुआ।

136 अगस्त्य कहते हैं, हे मनु ! महान् लोगों के आश्रय में होने पर लोगों का ऐसा ही कल्याण होता है।

137 इसी नगर में वेदशर्मा भिक्षा माँगता था। महान् के आश्रय में अब उसी नगर का राजा हुआ।

138 वेदशर्मा की पत्नी भिक्षुक ब्राह्मणी पुण्य-प्रसाद से नगर की रानी हुई।

139 बक राक्षस के पास जितना धन-भण्डार था, उसे नगर-वासियों ने लूट लिया।

140 वेदशर्मा ब्राह्मण का राज्य में अभिषेक हुआ। पात्र और अमात्य की उसने नियुक्ति की।

141. नगर के लोग बड़े निश्चिन्त हुए। असुर के कारण उनके मन में बहुत भय रहता था।

142 इन्द्र देवता अत्यन्त सन्तुष्ट हुए। असुर के नाश से स्वर्ग का अनिष्ट दूर हुआ।

143 राक्षस ने अनेक देवजाति का नाश किया था। समस्त कष्ट और त्रास समाप्त हुआ।

144 पृथ्वी का भार हल्का हुआ। दुर्भार राक्षस का सहज ही विनाश हुआ।

145. अगस्त्य कहते हैं कि हे युगपति ! स्वयं दुर्गति में

पडकर भी पाण्डव दूसरे की विपत्ति दूर करते है।

146 कुम्भीर, किन्नर, हिडिम्बक और बकासुर—ये मनुष्य का विनष्ट करने के नाते पृथ्वी के महाभार हो गये थे।

117 देवताओ न भी बहुत कष्ट पाया। वसुधा भी इनके द्वारा व्याकुल हो गयी।

118 ऋषि, विप्र और तपस्वी तपस्या की उपेक्षा करने लगे। असुर के भय से कोई उनकी रक्षा नहीं कर सकता था।

11 देवतागण ने आकाश मे बैठकर विचारपूर्वक पाण्डवो का वनवास करवाया।

11 इन चारो दैत्यो के वध के लिए पाण्डवो का वनवास हुआ था।

... का निवारण करके वन भुवन की रक्षा की। मधुवन और हिडिम्बक ... राजा बनाया।

... शिवपुर मे इन वनवासियो ने ... अतिथि का ... करके यज्ञ का ... किया।

... ब्राह्मण के आश्रय मे रहे ... शिवपुर का राजा बनाया।

1 एकचक्रा नगर मे ... ब्राह्मण के घर रहे। ... नगर का ... हुआ।

द्रौपदी के स्वयंवर के लिए लक्ष्य-स्थल निर्माण

1 मनु अगस्त्य से पूछकर सन्तुष्ट हुआ।

2 इसके बाद हे महामुनि ! क्या हुआ ? तुम्हारे मुख से सुनकर मै धन्य होऊगा।

3 4 कार्तिक शुक्ल पूर्णिमा के दिन राम कृष्ण दोनो भाई द्वारिका से हस्तिनापुर धृतराष्ट्र से मिलने के लिए गये।

5 धृतराष्ट्र ने उन्हे देखकर गौरवपूर्वक अत्यन्त स्वागत किया। देवाधिदेवराज आसन पर बैठे।

6 विदुर को एकान्त मे बुलाकर गोविन्द ने बातचीत की और कुशल-क्षेम पूछा।

7 विदुर ने पूछा कि हे स्वामी ! माँ सहित पाँचो कहा गये। हमे अभी तक कोई सूचना नही है।

8 विदुर ने कृष्ण से कहा कि पुत्रो को किसी प्रकार सूचित किया जाय कि उन्हे शीघ्र पाचाल देश पहुँचना है।

9 पाचाल अधिपति ने राजाओ को निमन्त्रित किया है। वहा द्रौपदी अर्जुन को प्राप्त होगी।

10 द्रुपद राजा ने स्वयंवर रचा है। दुर्योधन आज अढाई प्रहर को जायगा।

11 समस्त देश के राजा वहा जायगे। अर्जुन के लिए ही द्रुपद ने द्रौपदी को पैदा किया है।

12 वीर कहा है ? मै खोजकर भी न पा सका। हे कृष्ण ! इस सन्दर्भ मे चिन्ता करो।

13 हे स्वामी ! पाण्डव तो तुम विष्णु के आश्रित है तुम्हारे चिन्ता न करने से वे कैसे राज्य पायेगे ?

11 नारायण ने विदुर के साथ बात करते समय व्यास का स्मरण किया।

15 दण्ड कमण्डल कौपीन, कपाल और विभूति धारण किये हुए व्यास ... ।

16 विदुर ने ... शत सहस्र प्रणाम किया। श्री पुरुषोत्तम देव स्वामी ने व्यास की पूजा की।

17 नारायण ने व्यास की ओर देखकर पूछा कि हे देव ! इस समय पाण्डव कहा है ?

1 व्यास ने ध्यान से देखा कि पाण्डव पचवटी वन मे है।

11 व्यास ने कहा कि हे दामोदर ! पाण्डव श्री रामायणी नाथ मे है।

20 22 मरुनदी मे कुम्भीर ... मधुवन मे किन्नर दैत्य, हिडिम्बक वन मे हिडिम्बक, एकचक्रा नगर मे बकासुर को मारकर भीमसेन ने हिडिम्बा से विवाह किया। घटोत्कच नामक एक पुत्र उत्पन्न हुआ।

23 पाण्डव यहा समस्त कुशल क्षेम से है जिनकी पुरुषोत्तम हर समय चिन्ता करते है।

24 व्यास ने कहा कि विदुर की दया है। इसकी बुद्धि से पाण्डव कुशलपूर्वक पार हो गये।

25 जगन्नाथ ने कहा कि हे व्यास ! तुम द्रुपद देश को जाओ। व्यासकूट बनाकर एक लक्ष्य का निर्माण करो।

26 वह लक्ष्य तीनो लोक मे अश्रुत और अदृष्ट हो। मनभेदी बाण से ही वह लक्ष्य भेद किया जा सके।

27. इस प्रकार का एक लक्ष्य निर्माण करो। एक लक्ष-बल विशिष्ट धनुष नीचे रख देना।
28. ऐसा करके तुम घोर वन में चले जाना। पाण्डवों को द्रुपद नगर में भेज देना।
29. दुर्योधन और शकुनि जब गर्व करेंगे तभी हम लोग एक लाख राजाओं को वहाँ अर्जुन की महिमा दिखायेंगे।
30. गोविन्द ने कहा कि द्रुपद ने हम लोगों को भी निमन्त्रित किया है। हम दोनों भाई अग्रसेन के साथ जा रहे हैं।
31. नारायण की आज्ञा से व्यास मुनि चल रहे हैं। उन्होंने व्यास के हाथ में मनभेदी वाण दिया।
32. वह वाण लेकर अर्जुन को देना। इसी वाण से वह राधाचक्र को भेदेगा।
33. सभा में राधाचक्र का स्थापन किया गया होगा जो आकाश में अदृश्य होकर चक्कर लगाता होगा।
34. राधाचक्र और मनभेदी वाण को लेकर व्यास महामुनि चल दिये।
35. पांचाल देश में प्रविष्ट हुए। सदानन्द मन्त्री ने बताया कि व्यास मुनि आ गये हैं।
36. द्रुपद ने तत्क्षण आसन छोड़ दिया पादार्घ्य देकर व्यास के कमलवत् चरणों में प्रणाम करते हैं।
37. व्यास ने कहा कि राजा कल्याण हो। स्वयंवर-विधान की क्या विशेषता है ?
38. गंगा नदी के किनारे आवास निर्माण हो रहा है। पाँच अरब शिल्पी लगे हुए हैं।
39. पाँच दण्ड वाले लट्ठे से एक-एक घर की माप तीन लट्ठा है।
40. प्रत्येक गृह में बासठ कक्ष हैं। इस प्रकार दो लाख चालीस हजार अतिथि-गृह बने हुए हैं।
41. पांच अक्षौहिणी और पन्द्रह हजार गजशाला तथा सत्तर सागर अश्वशाला बनी हुई है।
42. राजाओं के लिए एक लाख स्वर्ण प्रासाद बने हुए हैं।
43. स्तम्भ के ऊपर छत का सारा द्वार स्वर्णनिर्मित है। उसके ऊपर रूपे का छाजन है। उसके ऊपर रत्न खचित कलश स्थापित है।
44. राजाओं के बैठने के लिए एक लाख आसन निर्मित हैं। भोजनालय में हजारों प्रकार की भोजन-सामग्री की व्यवस्था है।
45. एक लाख राजाओं के लिए एक लाख सोने के घड़े की व्यवस्था है।
46. छायामण्डप में स्वयंवर स्थान निर्मित है। पाँच योजन पर्यन्त रत्न और सोने से मण्डित है।
47. छायामण्डप में एक लाख स्तम्भ हैं। सुवर्ण स्तम्भ अष्टरत्न खचित हैं।
48. राजाओं को बैठने के लिए सुवर्ण सिंहासन निर्मित हैं।
51. उसके पास सुवर्ण स्तम्भ निर्मित करके रेशमी वस्त्र का चँदोवा खड़ा किया गया है। इस प्रकार चारों ओर सभा के परिमण्डल में अष्ट रत्न खचित मुक्तामालाएँ झूल रही हैं।
52. अतिथिशाला में चार-चार परिचारकों के साथ अनेक आभूषणकारी और रसोइये हैं।
53. अश्व और गज के लिए चरणी और जलकुण्ड निर्मित हैं। आहार के लिए घास और उड़द की व्यवस्था की गयी है।
54. व्यास ने द्रुपद राजा की प्रशंसा करके कहा कि इस द्वापर युग में तुमने प्रशंसनीय कार्य किया है।
55. द्रुपद ने कहा कि हे व्यास ! यदि अर्जुन होता तो मैं उसे ही द्रौपदी को प्रदान करता।
56. अग्नि से उत्पन्न इस याज्ञसेनी के लिए मैंने इन सबको निमन्त्रित किया।
57. व्यास ने कहा कि मेरी बात मानो। मैं इस स्वयंवर स्थल में एक लक्ष्य का निर्माण करूँगा।
58. पाण्डवों के मरने के समाचार को सारा संसार जानता है, मैं उस पर विश्वास नहीं करता हूँ।
59. ये पाँचों वीर धर्म, पवन, इन्द्र और अश्विनीकुमार के पुत्र हैं।
60. अर्जुन की आत्मा जगन्नाथ श्रीकृष्ण हैं। उसे गोद में लेकर द्वितीय कृष्ण नाम दिया है।
61. सर्वज्ञ विदुर सब समय पाण्डवों की रक्षा करते हैं और सहदेव भी सर्वज्ञ हैं।
62. इनके रहते कभी भी पाण्डवों पर विपत्ति नहीं पड़ सकती। इन्हीं कारणों से मैं इस बात पर विश्वास नहीं करता।
63. महायज्ञ से तुमने जिस कन्या याज्ञसेनी को उत्पन्न

किया उसे क्या मानव को प्रदान करोगे ?

64. मैं एक लक्ष्य निर्माण करूँगा। जो लक्ष्य का भेदन करेगा, उसे ही तत्क्षण अपनी कन्या प्रदान करना।

65 मुनि व्यास ने जिस व्यासकूट का निर्माण किया, वह देव और मानव के लिए अगोचर और अदृश्य है।

66 देवताओं का एक ताड़ मानव के सात ताड़ के बराबर है। इसी अनुमाप में सात देवताड़ ऊँचाई पर गधाचक्र स्थापित हुआ।

67 मानव ताड़ के अनुसार उनचास ताड़ ऊँचाई पर देखने से अदृश्य द्वितीय स्वर्ग की तरह दिखाई देता है।

68 सहस्र धार वाला राधाचक्र कुम्हार के चाक की भाँति निरन्तर घूम रहा है।

69 उसके ऊपर एक स्वर्ण-मत्स्य रखी गयी। नीचे एक लाख गुनी शक्ति का एक धनुष रखा गया।

70 एक ताड ऊँचाई पर एक सोने का पटग रखा गया। उसी के नीचे एक तीर्थ-जल घट रखा गया।

71 व्यास ने द्रुपद से कहा कि एक लाख गुनी शिव-धनुष पकड़ने में कौन समर्थ हो सकता है ?

72 नीचे की ओर देखकर ऊपर मुष्टि करके वाण प्रहार करना होगा, जिससे चक्र भेदकर मछली की बायी आँख फूट जाय।

73 इस प्रकार जो लक्ष्य-भेद करेगा उसे परम आनन्द से दुहिता प्रदान करना।

74 व्यास ने द्रुपद से एकान्त में कहा कि जो लक्ष्य भेद करेगा वह इन्द्र, गोविन्द या फाल्गुनी ही होगा।

75 यह निश्चिन्त रूप से जान लो। यह कहकर महात्मा अन्तर्धान हो गये।

76. पाण्डव श्रीराम वेणी तीर्थ में रह रहे हैं। व्यास छद्मवेश में वहाँ पहुँचे।

77 उनकी जटा कमर तक लम्बी हैं और वे पचवक्र होकर चल रहे है।

78. उनकी देह की रोमावली रस्सी की तरह लटक रही है। सारे शरीर पर सफेद दाग है।

79 लंगोटी धारी, कुब्ज, वक्रदृष्टि और गलित चक्षु को देखकर भीमसेन हाथ की ताली बजाकर हँसने लगे।

80. हे माँ ! मैंने एक पागल, विकलांग और वीभत्स मनुष्य देखा।

81 युधिष्ठिर ने सहदेव की ओर देखकर पूछा कि चौदह वर्ष वन में घूमते हो गया, किन्तु इस प्रकार कोई व्यक्ति तो नहीं देखा।

82. सहदेव ने कहा कि हे देव ! उपहास मत करो। हम लोगों के कष्ट दूर करने के लिए मुनि व्यास उपस्थित हुए हैं।

83. विदुर और वासुदेव ने भेजा है। ये कुत्सित रूप होकर हम लोगों को डरा रहे हैं।

84 पुत्रों को लेकर कुन्तीदेवी शत-सहस्र प्रणाम करके भूमि पर लेट गयीं।

85 व्यास ने कहा कि तुम कैसे पहचान गयी ? ।

पहचानने की बात सोचकर ही मैं ऐसे आया।

86 मुनि ने प्रपच रूप छोड़कर अपना रूप धारण किया और आसन पर बैठे।

87 पुनः-पुनः प्रणाम करके पाण्डुपुत्रों ने उनको कृष्णसार मृग की छाल दी।

88 कुन्ती ने व्यास की ओर देखकर दुःख प्रकट किया। तुम्हारे रहते मेरे पुत्र वन में घूमते हुए दुःख पाते हैं।

89. हीन जन की तरह नगर में घूमकर भिक्षा माँगते हैं। गान्धारी के पुत्रों को जहाँ सारी सम्पदा है वहाँ मेरे पुत्रों को इतना दुःख है।

90 मै कुन्तिभोज की दुलारी सोमवशी कुलवधू हूँ। फिर भी मेरा सारा जीवन व्यर्थ हो गया।

91 ये मेरे पुत्र क्षत्रिय रूप मे उत्पन्न हुए। किन्तु किस दोष के कारण अपूज्य हुए !

92 कहते हुए कुन्ती का दुःख अपार हो गया। व्यास ने कहा कि हे बेटी ! दुःख शान्त करो।

93-95 कुम्भीरी किन्नरी, हिडिम्बक और बकासुर ने जब स्वर्गपुर को विनष्ट किया और पृथ्वी इनका भार न सह सकी तब ब्रह्मा ने इन लोगों को असुर-वध के लिए आज्ञा दी। इससे देवगण अत्यन्त आनन्दित हुए।

96 हे बेटी ! अब तुम पुत्रों को लेकर सुख-भोग करोगी। देवताओं ने तुम्हारे निष्कंटक राज्य की व्यवस्था की है।

97. भार-निवारण के लिए ही तुम्हारा जन्म हुआ है। आपाद-मस्तक तुम धर्मनिष्ठ हो।

98. जन्म, कर्म, ज्ञान और मृत्यु एक ही शरीर में एक ही साथ भोग्य होते हैं।

99. जन्म-नक्षत्र के कारण इतना दुःख पाया। किन्तु कर्म-नक्षत्र के कारण अब सुख भोग करोगे।

100. दुःख समाप्तप्राय है। अल्प दिन ही सहना पड़ेगा। यहाँ एक दण्ड भी न रुककर रात-दिन चलते रहो।

101. द्रुपद राजा अभी स्वयंवर कर रहे हैं। एक लाख राजा उनके नगर में उपस्थित होंगे।

102. यह वीर फाल्गुनी राधा चक्र का भेदन करेगा और याज्ञसेनी द्रौपदी को प्राप्त करेगा।

103. कन्या लाने के साथ संग्राम होगा। भीमसेन वहाँ कौरवों का दर्प-मर्दन करेगा।

104. हरि और बलराम दोनों भाई आ रहे हैं। वहाँ उनके साथ भेंट होगी।

105. स्वयंवर होने में सोलह दिन बाकी हैं। यहाँ से द्रुपद का राज्य तीन सौ पचास योजन है।

106. हे बेटा फाल्गुनी ! श्रीकृष्ण ने मेरे हाथ से तुम्हें मन-भेदी बाण भेजा है। तुम उससे वह लक्ष्य भेद सकोगे।

107. इस मन-भेदी बाण को तुम यत्नपूर्वक रखो। जिसे इच्छा करोगे उसे एक बार में ही भेद सकोगे।

108. मैं स्वयंवर-स्थल को जा रहा हूँ। तुम लोग पवन वेग से चलो।

109. इतना कहकर मुनि ने पादुका मन्त्र प्रदान किया। इस मन्त्र को पढ़कर पादुका ग्रहण करने से एक निमिष में लाख योजन तक जाया जा सकता है।

110. शस्त्र और मन्त्र देकर जाते समय युधिष्ठिर देव ने व्यास मुनि से पूछा—

111. हे मुनि ! क्या द्रौपदी हम लोगों को प्राप्त होगी ? कन्या यदि मिले तो हम लोगों का जाना उचित है।

112. यदि द्रौपदी प्राप्त नहीं होगी तो दूसरे की सम्पत्ति देखकर अफसोस करने हम क्यों जायेंगे ?

113. व्यास ने कहा कि हे युधिष्ठिर ! अर्जुन के लिए ही द्रुपद ने स्वयंवर रचा है।

114. युधिष्ठिर ने कहा कि देव ! तुम झूठ कह रहे हो। हम लोगों ने भी द्रुपद की स्वयंवर-वार्त्ता सुनी है।

115. तुमसे कहा कि अर्जुन के लिए स्वयंवर है किन्तु यह सुनकर मुझे आश्चर्य हो रहा है।

116. तीनों लोक में यह बात विदित है कि पाण्डव जातुगृह में मर चुके हैं।

117. द्रुपद इतना धार्मिक कहाँ से हो गया कि वह अर्जुन के लिए स्वयंवर कर रहा है।

118. व्यास ने कहा, हे बेटा ! आदि कथा सुनो। तुम उसकी बात जानते हो ?

119. द्रोण और द्रुपद में जब झगड़ा हुआ, तब द्रोण ने अर्जुन के हाथों द्रुपद को बँधवाकर अपने पास बुलवाया।

120. दुर्योधन ने द्रुपद का अपमान किया। द्रोण ने मित्र की भर्त्सना करके छोड़ दिया।

121. लज्जा से द्रुपद अपने राज्य में नहीं गया। कौरवों को जीतने के लिए महेश्वर की उपासना करने लगा।

122. कठोर तप देखकर शिव उपस्थित हुए। बोले कि तुम स्वयं कौरवों को नहीं जीत सकते हो।

123. पृथ्वी का भार हल्का करने वाला अर्जुन है। उसके हाथों भीष्म और द्रोण सभी क्षय होंगे।

124. तुम अर्जुन के साथ प्रीति बढ़ाओ। अकेले अर्जुन के बल से कौरवों का विनाश होगा।

125. विश्वनाथ की आज्ञा से द्रुपदेश्वर गया और मेरा वरण करके सन्तान यज्ञ किया।

126. हम लोगों की पूजा करके द्रुपद राजा ने कहा कि मुझे एक कन्या पैदा करा दो।

127. उस कन्या को मैं अर्जुन को दूँगा और उस अर्जुन के हाथों कौरवों का नाश कराऊँगा।

128. उसकी बातों से यज्ञ आरम्भ किया। पुत्र और दुहिता दोनों को यज्ञ से उत्पन्न कराया।

129. पुत्र धृष्टद्युम्न और पुत्री द्रौपदी हुई। अर्जुन को द्रौपदी देने के लिए निश्चित किया।

130. पाण्डवों के विनाश की वार्ता सुनाई दी। इसलिए द्रुपद ने स्वयंवर रचा।

131. द्रुपद राजा बड़ा विलक्षण है। वह तुम लोगों के विनाश की बात पर विश्वास नहीं करता है।

132. इसीलिए उस द्रुपद ने महालक्ष्य का निर्माण किया। अर्जुन के अतिरिक्त अन्य कोई यह कार्य नहीं कर सकता।

133 संसार मे द्रौपदी का स्वयवर जाना जा रहा है किन्तु द्रुपद के हृदय में केवल अर्जुन स्वयवर की बात है।

134 यद्यपि सभी देशो के राजा वहाँ पहुँच रहे हैं, किन्तु अर्जुन के जाने पर ही स्वयवर होगा।

135 द्रौपदी के स्वयंवर की बात तुमने कहाँ से सुनी ? अर्जुन के गये विना वह स्वयंवर नही हो सकता है।

136 व्यास के मुख से ऐसी बात सुनकर पाण्डव मन में सोचकर आनन्दित हुए।

137 इतना कहकर महात्मा अन्तर्धान हो गये। पाण्डव वहा अत्यन्त सन्तुष्ट मन से जा रहे है।

अंगारपन्नग-युद्ध

1 एक ही दिन मे सा योजन जाकर कतुगाल वन मे प्रविष्ट हुए।

2 गन्धर्व नदी दक्षिण की ओर बह रही है। यहा ऊर्ध्वगामी गन्धमादन पर्वत है।

युधिष्ठिर ने अर्जुन से कहा कि प्रात स्नान के लिए जलस्रोत देखो।

4 हे भाइ ! कितनी दूर जल का घाट है ? प्रकृति शका के कारण बडा कष्ट है।

5 हाथ मे धनुष लेकर अर्जुन उस गन्धर्व नदी के किनारे पहुचा।

6 उस नदी के किनारे उद्यान था। वहा पके हुए फल नीचे गिर थ।

7 वह उद्यान को देखकर वीर पार्थ प्रशसा करता है।

8 उसी के निकट विलासिनिया रहती है। वे रम्भा की तरह जगज्जनमोहिनी है।

9 कामिनिया सर्व आभणो मे आभूषित होकर विचित्र रग के झीने रेशमी वस्त्र पहने हुए है।

10 जलक्रीडा रग मे वे युवतियाँ मदमस्त थी। उनके स्तन और जघा से यौवन प्रस्फुटित हो रहा है।

11 अपूर्व विलासिनियाँ बधूक पुष्प की तरह सुन्दर और बिम्बोष्ठी है। पुष्प तोडती हुई गीत गा रही हैं।

12. उद्यान के बीच अत्यन्त सुन्दर अर्जुन को देखकर मदन-ज्वर से आक्रान्त हुई।

13 भय और सकोच से वे भागकर अगारपन्नग के पास पहुँचीं।

14 गन्धर्व ने पूछा कि क्या हुआ ? किसको देखकर तुम्हारा चित्त इतना भयभीत है ?

15 विद्याधरियों ने कहा कि एक पुरुष देखा। वह अत्यन्त सुन्दर है। उसे देखकर मोहित हो गयीं।

16 उसके भय मे हे देव ! हम लोग भाग आयीं। वह क्या विष्णु का पुत्र मकरध्वज है ?

17 युवतियों की समस्या सुनकर क्रोध से अंगारपन्नग का शरीर कदली पत्र की तरह कोपने लगा।

18 मै त्रिभुवन मे सबसे सुन्दर हूँ। मुझ इन्द्र पुत्र से सुन्दर और कौन है ?

19 स्वर्ग छोडकर मै यहाँ हजारो युवतियो को लेकर नित्य जल-क्रीडा कर रहा हूँ।

20 श्रीहस्त मे उद्दण्ड नामक धनु लेकर उस इन्द्रपुत्र गन्धर्व ने टकार किया।

21 देखता है कि वह फाल्गुनी पके हुए फल तोड़ रहा है। उस विद्याधर ने तीक्ष्ण वाण चलाया।

22 गुण-टकार का सुनकर सव्यसाची उसके वाण-सचार से भयभीत हुआ।

23 पुन: विद्याधर ने पच-शर चलाया जिसने अर्जुन के मुख को चूम लिया।

24 पुन-पुन: वह अगारपन्नग शर-सघात करता है। क्रोध म फाल्गुनी प्रबल तेजस्वी हुआ।

25 पार्थ ने अपने हाथ मे धनुष लेकर अगारपन्नग पर शर-सघात किया।

26 सव्यसाची ने दो हजार वाण मारे किन्तु सभी अंगार-पन्नग के पैरो तक पहुचकर प्राचीर बन गये।

27 बिना पहचाने दोना भाई सघर्ष कर रहे है किन्तु वाण धर्म का उल्लंघन नही करते।

28 विद्याधर जिस वाण से अर्जुन को मारता है, वह अर्जुन के मुख को चूमकर भूमि पर गिर जाता है।

29 अर्जुन कोपानल होकर वाण मारता है किन्तु वह वाण अगारपन्नग के पैरों के पास जाकर गिरते हैं।

30 अपरिमित युद्ध होने पर भी वह गन्धर्व को नहीं जीत सका।

31 समय के साथ वे दोनों वासव-सुत अधिक क्रुद्ध हुए। अंगारपन्नग ने कोपानल होकर देव-शस्त्र का प्रहार

किया।

32. वज्र-शस्त्र को उसने बाहर किया। सन्धान से पूर्व ही अर्जुन ने उसे काट दिया।

33. विद्याधर ने क्रोध से एक शस्त्र चलाया। अर्जुन ने उसको वज्र मुद्गर से रोक लिया।

34. इन्द्रपुत्र ने जब अग्नि-शस्त्र चलाया, तब अर्जुन ने उसका गरुड़ शस्त्र से विवारण किया।

37. क्रमशः अर्जुन का क्रोध बढ़ा। उसने अमोघ शस्त्र मारा।

38. हे चाण्डाल ! तुमने मुझे अनेक शस्त्र मारे। अब तुम मेरे इस शस्त्र को सँभालो।

39. विद्याधर ने कहा कि मैं इस उद्यान का अधिकारी हूँ। हे मूर्ख ! अकस्मात् इसमें तुम कहाँ से आकर प्रविष्ट हुए ?

40. तुमने आज अपने वंश को कलंकित किया। आज मैं तुम्हारा अस्थि-माँस काटकर बलि दूँगा।

41. अर्जुन ने कहा कि तुम रास्ते में आ गये हो। आज निश्चय ही तुम्हारा प्राण-नाश होगा।

42. हजारों युवतियाँ तुम्हारे आश्रित हैं। इनकी विकलता को ध्यान में रखते हुए मैं तुम्हें एकबारगी नहीं मारूँगा।

43. पार्थ की बात सुनकर गन्धर्व क्रोधित हुआ। सिर धुनता हुआ दोनों गदा घुमाते हुए अर्जुन की ओर दौड़ता है।

44. अर्जुन ने जब मोहन शस्त्र का प्रहार किया, तब अंगारपन्नग गिर पड़ा।

45. कोपानल होकर अर्जुन गर्जन करके दौड़ा और बायें हाथ से अंगारपन्नग के केशों को पकड़ा।

46. बायें हाथ से केश पकड़कर उसके सीने पर घुटने से चाँप दिया और दायें हाथ में विजयकर्ण कटारी उठा ली।

47. फाल्गुनी इसी समय उसका मुख देखते हुए पूछता है कि तुम किसके पुत्र हो और तुम्हारी जननी कौन है?

48. तुम विद्याधर की तरह सुन्दर लगते हो। तुम्हें सच में मारने की इच्छा नहीं होती है।

49. एक सहस्र युवतियाँ जल से बाहर हुईं और लज्जा-अभिमान त्यागकर प्रणिपत्य हुईं।

50. इसी समय युधिष्ठिर गन्धर्व नदी के किनारे आ पहुँचे। सहस्र युवतियाँ जाकर उनके पैरों पर गिर पड़ीं।

51. हे स्वामी ! वह कौन व्यक्ति है जो बिना दोष हमारे स्वामी का प्राण-नाश कर रहा है?

52. जब वह एक ही पुरुष का नाश करेगा, तो हम हजार नारियाँ विधवा हो जायेंगी।

53. दाँत में तृण लेकर ये कातर होकर कहती हैं कि हमारे पति को प्राण दान करो। पति के प्राण की रक्षा करो।

54. हम तुम्हारे चरण की सेवा करती हैं। हे स्वामी। अनुग्रह करके स्वामी-दान करो।

55. युधिष्ठिर भीम से कहते हैं कि तुम दौड़कर जाओ नहीं तो वह मार डालेगा।

56. भीमसेन तो उससे भी दुष्ट है। अर्जुन को उससे छुड़ाकर स्वयं उसका निधन कर देगा।

60. धर्म-धर्म ! स्मरण करके वे स्वयं दौड़ते हैं। मेरे जाने तक अर्जुन उसे बचाये रखता।

61. दौड़ता हुआ भीम दूर से ही हाँक लगाता है। हे भाई! बचाये रखो। युधिष्ठिर आ रहे हैं।

62. सहदेव ने जाकर गन्धर्व को घेर लिया। कहा कि ठाकुर की आज्ञा है कि इसे न मारो।

63. युधिष्ठिर ने पुकारा कि हे पार्थ ! रुको। मेरी शपथ है, उसको न मारना।

64. नारी-गण माँगती हैं कि उन्हें दान दें। किस कारण उन्हें अनाथ करेंगे ?

65. हे भाई ! एक ही पुरुष की वे नारियाँ हैं। इनके समान युवक-युवतियाँ नहीं हैं।

66. अर्जुन ने कहा कि स्वामी ! यह मेरे मार्ग को अवरोध करने वाला है। इसको मारने में दोष नहीं है। यह पृथ्वी का महाभार है।

67. अर्जुन के हाथ से युधिष्ठिर ने खड्ग पकड़ लिया। कहा कि तुम सार्थक प्रतिज्ञ हो।

68. स्वामी के आदेश से उसके केश छोड़ दिये। विद्याधर अर्जुन के पैरों में प्रणिपत्य हुआ।

69. मानव देह धारी होकर भी तुम्हारी महिमा अशेष है। तीनों लोक में मुझे जीतने वाले तीन लोगों में से तुम एक हो।

70. अंगारपन्नग की बात सुनकर अर्जुन ने पूछा कि तीनों

लोक में तुम्हें कौन-कौन जीत सकता है ?

71-72. आकाश में इन्द्र देवता, पाताल में वासुकि और

72. मर्त्यलोक में फाल्गुनी ही मुझे जीत सकता है। इन तीनों लोकों में अन्य कोई जीतने वाला नहीं है।

73-74. इन्द्र का पुत्र मैं अंगार-पन्नग हूँ। इसीलिए पिता होने के नाते वे मुझे जीत सकते हैं।

75. मर्त्यलोक में अर्जुन जीत सकता है क्योंकि युक्तितः वह मेरा भाई है।

76 युधिष्ठिर ने कहा कि तुम्हारा क्या नाम है ? उसने उत्तर दिया—मैं विद्याधर श्रेष्ठ अंगार पन्नग हूँ।

77 ऐसा सुनकर अर्जुन ने प्रणाम किया। कहा कि हे स्वामी ! मेरे दस दोषों के अपराध को क्षमा करो।

78 हे देव ! मेरा नाम फाल्गुनी है। अज्ञानवश मैं तुम्हें पहचान नहीं सका।

79 मैं अनेक दोष करके ही द्रोही हुआ। हे देव ! मेरी इन दोनो भुजाओं को काट डालो।

80 इन्हीं भुजाओ से हे स्वामी ! मैंने तुम्हारे केश पकड़े। मै चण्डाल अब बचकर क्या करूँगा ?

81 अर्जुन की बात से विद्याधर सन्तुष्ट हुआ। मेरा धन्य भाग्य है कि मै अन्य किसी के हाथों पराजित नहीं हुआ।

82 मेरे भाई ने मेरा स्वागत किया। मेरा निस्तार हुआ। अब मैं क्यो अभिमान करूँगा ?

83. अंगार पन्नग ने अर्जुन को गोद मे बैठाकर मुख चुम्बन देकर उसके शरीर को सहलाया।

84. भाई ! मैं तुम्हें संग्राम में न जीत सका। मैंने अब तुम्हारे क्षत्रियत्व को पहचान लिया।

85-86. हे भाई ! आरम्भ से ही सोमवंशी लोग पृथ्वी का उद्धार करते आ रहे हैं। चन्द्र देवता के वीर्य से बुद्ध का प्रकाश हुआ। बुद्ध के नन्दन पुरुरवा अमराधिपति, स्वर्ग के राजा इन्द्र थे।

87-88. उस त्रैलोक्यनाथ ने अमर भुवन में दो सौ चौरासी युग तक भोग किया। पुरुरवा के नन्दन आयु नृपति सोमवंशी राजा के रूप में अमर वारस्वति में प्रतिष्ठित हुए।

89-90. आयु के नन्दन नहुष पचास युग पर्यन्त इन्द्र पद पर बैठे। महा उग्र तप के कारण ऋषियों को दुःख दिया। शाप पाकर महासर्प हुए।

91. नहुषनन्दन ययाति हुआ। उसने स्वर्ग की नौ जातियों की नौ कन्याओं को ग्रहण किया।

92. उन कन्याओं से नौ पुत्र पैदा हुए। पिता ने पृथ्वी को नौ खण्ड करके बाँट दिया।

93 हे फाल्गुनी ! तभी से पृथ्वी को नौ खण्ड मेदिनी कहते हैं।

94. देवकन्या देवयानी शुक्र की दुहिता थी। प्रथमतः ययाति को प्रदान हुई।

95. देवयानी से पुरुरवा नामक पुत्र हुआ। वह सात मन्वन्तरों तक कुबेर पद लेकर बैठा रहा।

96 पुरुनन्दन के पुत्र प्रवीर ने यम से बलात् कालदण्ड छीन लिया।

97 नौ युगों तक उसने यमदण्ड को धारण किया। फलतः संसार में किसी का विनाश नहीं हुआ। सभी अमर हो गये।

98. राजा मनु ने उससे आनन्दित होकर उसके पुत्र का नाम मनु सानन्द रखा।

99 इसके नन्दन इलावीर का पुत्र दुष्यन्त हुआ।

100 दुष्यन्त की महिमा कहनी नही होगी। वह महात्मा सप्तद्वीप का एकछत्र चक्रवर्ती हुआ।

101 दुष्यन्त का पुत्र भरत हुआ। उसने भारतखण्ड की मेदिनी को देवताओं का भोग कराया।

102. भरत के नन्दन भूमनु ने पाताल लोक का भोग किया।

103. उसका पुत्र विरथ सबको रथशून्य करके अनन्य क्षत्रिय होकर रहा।

104 उसका पुत्र शम्भुराण नृपति हुआ। उसको सूर्य की दुहिता तपती प्रदान हुई।

105. उसके पुत्र कुरु से कुरुवंश की उत्पत्ति हुई।

106. हे भाई ! तुम्हारे वंश की महिमा इसी प्रकार की है। मैं इन्द्र देवता का ज्येष्ठ पुत्र हूँ।

107. मेरी माता का नाम जानकी सरस्वती है। मैं वैश्वानर वंश में उत्पन्न हूँ।

108. हे भाई ! जब इन्द्र देवता की महिमा क्षीण हो जाती है, तब देवता मुझे इन्द्र पद देते हैं।

109. मैं दिव्य स्वर्ग का आंशिक भोग करता हूँ। उसी से मेरा

नाम अंगार पन्नग है।

110. अर्जुन ने कहा कि तुमने अंग से त्रैलोक्य की रक्षा की। हे स्वामी ! इसीलिए तो तुम अंगार नाम वहन करते हो।

111. हे स्वामी ! पन्नग नाम तुमने क्यों वहन किया ? इस सन्दर्भ में मुझे बताओ।

112. विद्याधर ने कहा कि हे फाल्गुनी ! गरुड़ ने समस्त सर्पो का नाश किया।

113. गरुड़ के भय से साँप रह नहीं सके। अतः स्वर्ग में जाकर मेरी शरण में आये।

114. मैं युद्ध में गरुड़ का सामना करने में समर्थ नहीं था किन्तु शरणागत की रक्षा के लिए मैंने नागों को आश्रय दिया।

115. गरुड़ के घोर गर्जन को सुनकर सर्प मेरे शरीर से चिपक गये।

116. सभी सर्पो की व्याकुलता देखकर मैंने उन्हें गर्भस्थ कर लिया।

117. मेरा अंग सर्पमय होने के कारण ही मेरा नाम अंगार पन्नग हुआ।

118. अंगार पन्नग ने अपने गर्भ को विस्तृत किया। अर्जुन ने उसके गर्भ में पाताल लोक को देखा।

119. अनेक योजन तक विस्तीर्ण होकर सर्पगण क्रीड़ा और विहार कर रहे हैं। ऐसा उसने अपनी आँखों से देखा।

120. अर्जुन उसे देखकर शत-सहस्र प्रणाम करके कहता है कि हे स्वामी ! मेरे समस्त दोष क्षमा करो।

121. अंगार पन्नग ने कहा कि दूसरों को मैं अत्यन्त भयंकर दिखाई देता हूं। तुमसे संग्राम में हारा। कारण कि तुम मेरे भाई हो।

122. हे पार्थ ! वर मांगो। मैं तुम्हें दूँगा। अर्जुन ने कहा कि मैं कैसे वर माँगूंगा ?

123. अभक्त होकर मैं कैसे वर मांग सकता हूँ ? ऐसा जानकर भी हे स्वामी ! आप स्वयं अनुग्रह करें।

124. विद्याधर ने सुनकर अनुग्रहपूर्वक अर्जुन को श्रेष्ठ गन्धर्व शस्त्र प्रदान किया।

125. हे फाल्गुनी ! अरुण किरण के रंग का एक विमान तुम्हें प्राप्त हो।

126. यह विमान सदा मेरे पास होगा। स्मरण करते ही तुम्हें प्राप्त होगा।

127. हे पार्थ ! तुम पांचाल देश में लक्ष्य-भेद करोगे। तुम्हें याज्ञसेनी प्राप्त होगी।

128-129. हे भाई ! अभिषेक के समय एक पुरोहित की आवश्यकता होगी। हमारे अमरलोक से धर्म पुरोहित पांचाल देश को तुम्हारे साथ जाकर द्रौपदी को तुम्हें प्रदान करें।

130. अंगार पन्नग के स्मरण करते ही स्वर्ग से धर्म पुरोहित मर्त्यलोक को पहुँचे।

131. उन्हें पाण्डवों को समर्पित करके कहा कि इनके स्मरण करते ही वहाँ पहुँचना।

132. हे भाई ! मैं नक्षत्र लोक को जा रहा हूँ। सभी देवता पांचाल देश की ओर जायेंगे।

133. इतना कहकर विद्याधर स्वर्ग को गये। पाँचों वीर माता के साथ घोर वन को गये।

पाण्डवों का कुम्हारशाला में प्रवेश

1. व्यास से दुर्योधन के आने की बात सुनकर भीम महाक्रोध से जल रहा है।

2. वन-गहन कन्दरा का बड़ी तेजी से अतिक्रमण करता हुआ वीर चला जा रहा है। पथरीली, ऊँची-नीची, कंकरीली, खाल भूमि तथा रेतीली भूमि पर कुन्ती चल नहीं पाती है।

3. कुछ दूर जाकर रुककर कहती है कि हे देव ! स्वयंवर को शीघ्र नहीं जायेंगे ?

4. युधिष्ठिर ने कहा कि व्यास ने हम लोगों से स्वयंवर की बात बताकर अच्छा नहीं किया।

5-6. कुरुपति अनेक वैभव के साथ आये होंगे। उन्हें देखने से पूर्व ही यह इतना भयंकर हो गया है। वन में यह अनेक कष्ट भोग रहा है। इसके मन में दया-माया नहीं है। उन भाइयों को देखते ही यह मार डालेगा।

7. इसके क्रोध से दुर्योधन का नाश हो जायेगा। मेरे अन्ध राजा अनाथ होंगे।

8. हम लोग धीरे-धीरे वन में चलते रहें ताकि स्वयंवर समाप्त हो जाय और द्रौपदी को कोई दूसरा ही ले

जाय।

9 जाने पर एक कन्या ही मिलेगी। क्या एक स्त्री के लिए अपने सहोदर को मरवा देंगे ?

10 ऐसा सोचकर देव धीरे-धीरे चलते है। आओगे कि नही—ऐसा वृकोदर पुकारता है।

11 युधिष्ठिर ने कहा कि तुम पवन वेग से चल रहे हो। हम लोग इतनी तेजी से नही चल सकते है।

12 भीमसेन ने कहा कि यदि हमारे पीछे नही चल सकते हो तो तुम लोग आगे चलो। मै तुम लोगो के पीछे चलूँगा।

13 आगे युधिष्ठिर और उसके पीछे भीम चल रहा है। वेग से चलने के कारण कुन्ती के पैरो को ठोकर लगती है।

14 भीम ने कहा कि यह कैसी बात है ? आगे भी नही चल सकते और पीछे भी नही चल सकते।

15 भीमसेन ने कुन्ती की भुजा पकड़कर अपने सिर पर उठा लिया।

16 दाये कन्धे पर युधिष्ठिर, बाये पर अर्जुन और दोनो काखो मे नकुल सहदेव को ले लिया।

17 भीमसेन पवन गति से चल रहा है। उसके पदाघात से पत्थर के ढेर चूर हो जाते है।

18 भीमसेन आकर्षणमूर्ति होकर चल रहा है। एक ही रात मे एक सौ सत्तर योजन चला गया।

19 द्रुपद राज्य से पचास योजन दूर गंगा सागर की ओर वह रही है।

20 भीमसेन उसी नदी के किनारे सबको उतारता है। पाण्डवगण अगरु वन मे बैठे।

21 उसी नदी के जल मे प्रातःस्नान करके वे वाराह गिरि पर्वत पर चढे।

22 देखा कि राजा गण रथ, गज, अश्व और पदाति के समारोह के साथ आ रहे है।

23-25 उत्तर दिशा से दो कम चालीस हजार, पश्चिम दिशा से एक कम पचास हजार, पूर्व दिशा से सात हजार और दक्षिण दिशा से तीन हजार नृपति आ रहे है।

26 पैतीस योजन तक सेना दिखाई दे रही है। युधिष्ठिर ने कहा कि प्रवेश का कोई रास्ता नहीं है।

27 हे भाई ! पाँच ताड गहरी नदी दिखाई दे रही है। तुम थाह लगाओ कि नदी मे कितना जल है।

28 हम लोग किस प्रकार पार होगे ? यह सुनकर भीमसेन सात ताड़ ऊँचा हो गया।

29 भीमसेन ने दोनो भुजाओ को फैला दिया। दोनों कन्धो पर चारो भाइयो को और सिर पर माता को बैठाया।

30 भुजा मुड गयी, पानी सिर तक पहुँच गया किन्तु पानी मे डूबकर भी मारुति ने सबको पार कर दिया।

31 उत्तरी किनारे पर उन वीरो ने खडे होकर देखा कि सेना की अत्यन्त भीड लगी हुई है।

32 रथ, गज, हय और पदाति पचास योजन तक भरे हुए है। घुसने के लिए रास्ता नही है।

33 भीमसेन ने कहा कि मै आगे चलता हूँ। तुम लोग मेरे पीछे-पीछे शीघ्र आओ।

34 वृकोदर हाथो को हिलाकर चल रहा है जिसके आघात से सैनिक दोनो ओर गिर पडते है।

35 भुजा की टक्कर से गज गिर पडते है। परस्पर टक्कर से रथ चूर हो जाते है।

36 युधिष्ठिर ने कहा कि हे भीमसेन ! रुको-रुको। हम लोगो को इसी क्षण लोग जान जायेगे।

37 दिन मे इस भीड़भरे रास्ते से दूर ही रहेंगे। रात होने पर रास्ता तय करेगे।

38-39 रास्ता छोड़कर युधिष्ठिर और भीम वन मे खड़े हो गये। कहा कि हे भीम ! तुम अकेले ही जाकर एक सुन्दर स्थान देखो, जहाँ से जाना-आना आसान हो।

40 आज्ञानुसार भीमसेन जाकर सन्ध्या के समय द्रुपद के नगर मे पहुँचा।

41 वहाँ राजाओ का विश्राम-स्थल है, जहाँ सैन्य गण पाँच योजन पर्यन्त घेरकर रह रहे है।

42 तिल फेंकने पर भी जमीन पर नही गिरेगा। बारह योजन पर्यन्त कही भी जरा सी भी जगह नही है।

43 नगर के पश्चिम ओर यमुना के किनारे देखा कि एक छोटी सी कुम्हारशाला खाली है।

44 द्रुपद की राज्यसभा और प्रासाद को देखकर भीमसेन सोचता है कि यह दिव्य नगर है।

45 भीमसेन दूर से देखता है कि राजाओ के सिंहासन खाली है। उन पर कोई नहीं है।

46. एक सुन्दर सिंहासन को देखकर भीमसेन सोचता है कि युधिष्ठिर को इसी क्षण लाकर इस पर बैठाऊँगा।
47. अत्यन्त आनन्द से भीमसेन दौड़कर युधिष्ठिर के पास पहुँचकर हाथ जोड़कर कहने लगा—
48. हे देव ! सभा के मध्य एक सिंहासन निर्मित है। लगता है हम लोगों के लिए ही द्रुपद ने निर्मित किया है।
49. भीमसेन की बात सुनकर युधिष्ठिर हँसे। कहते हैं कि क्या मूर्ख लोग पण्डित की तरह बातें कर सकते हैं ?
50 हम लोग तो मर चुके हैं—ऐसा सभी लोग जानते हैं। हमारा कोई चिह्न-वर्ण नहीं है। द्रुपद हम लोगों को कैसे जान सकता है ?
51. मैं तुमसे क्या कहूँ ? हमारा भाग्य ही मन्द है। अच्छा किया कि वहाँ जाकर तुमने झगड़ा नहीं किया।
52. हमारा यही भाग्य है कि राजाओं को देखकर तुमने मन में क्रोध नहीं किया।
53. युधिष्ठिर ने कहा कि अर्जुन ! ब्राह्मण वेशधारी होकर हाथ में भिक्षापात्र लेकर जाओ।
54. युधिष्ठिर की आज्ञा से फाल्गुनी कन्धे पर फटा छाता और हाथ में हरिगोविन्द थैला लेकर चलता है।
55. पांचाल देश के राजा की स्वयंवर-व्यवस्था को देखकर उस वीर ने साधु-साधु कहा।
56. बारह योजन पर्यन्त उसने कोई स्थान नहीं देखा। फाल्गुनी ने बस वही कुम्हारशाला देखी।
57. वन के निकट पर्वत के नीचे निर्मल गंगा नदी के किनारे वह स्थान है।
58. अर्जुन ने सोचा कि वासुदेव ने इसकी व्यवस्था की है। यह अन्य किसी को क्यों प्राप्त होगा !
59. पार्थ ने युधिष्ठिर के पास पहुँचकर कहा कि हे देव ! कुम्हारशाला खाली है। चलें, वहीं रहेंगे।
60. भीमसेन ने कहा कि भाई ! तुमने तो अच्छा स्थान रहने के लिए ढूँढ़ा।
61. यह खाल, ऊँची-नीची, खपड़ा और राखपूर्ण भूमि है। उसमें देव युधिष्ठिर कैसे रहेंगे ?
62. धर्मदेव कहते हैं कि वृकोदर ! चुप रहो। वह स्थान बड़ा ही पवित्र है।
63. गोशाला और कुम्हारशाला पुण्य भूमि होती है। ये सब समय पातक दग्ध करती हैं।
64. उस स्थान पर एक दिन भी रहने पर छः मास तक पातक विनष्ट हो जाता है।
65. रात में नगर के बाहर से जाकर एक शुभ घड़ी में प्रातः कुम्हारशाला में जाकर पहुँचे।
66. भगवान देव दामोदर को याद करके रह रहे हैं। हे देव! इस कष्टकर अवस्था से पार करना।
67. हे माहेश्वर ! तुम्हारे चरणों में शत-सहस्र दण्ड प्रणाम करता हूँ। अब तक पाण्डव बचते आ रहे हैं क्योंकि हरि सदा उनके हृदय में प्रेम भाव से विद्यमान रहते हैं।
69-70. जिसका मुखमण्डल नील कमल की तरह, जिसके हृदय पर श्रीवत्स चिह्न विराजित है, जो पुरुष सिंह शंख धारण करते हैं, जो देव भावग्राही हैं और सबकी चिन्ता करने के कारण जनार्दन नाम वहन करते हैं, वे ही सृष्टिकर्ता हैं।
71. जब तक चन्द्र-सूर्य रहें तब तक श्री जगन्नाथ का नाम हृदय में धारण करो।
72 संसार के मोह रूपी जाल में जब मनुष्य बह जाता है, तब धर्मरूपी नाव किनारे आकर खड़ी हो जाती है।
73. उस नाव पर बैठकर मनुष्य अगाध जल पार कर जाता है। नारायण नाम ही दो किनारे हैं।
74. वे अनुग्रहनाथ सदय और जगतबन्धु हैं। संसार के अगाध जल में वे ही नारायण परम बन्धु हैं।
75. जल में देव ने मेदासुर के शरीर को कीचड़ बनाकर वसुन्धरा को बनाया। जिसके कारण उसका नाम मेदिनी हुआ।
76. हे शरणरक्षक जगत् श्रेष्ठनाथ श्रीकृष्ण का नाम मैं जन्म-जन्म स्मरण करता हूँ।
77. शूद्र कवि सारला दास तुलसीवल्लभ, कालिन्दी प्राण नाथ को शत-सहस्र प्रणाम करता है।

द्रौपदी-स्वयंवर

1. अगस्त्य कहते हैं—हे कुम्भ-ऋषि-पुत्र ! नारायण को स्मरण करने पर सकल कार्य सिद्ध हुआ।
2. निर्जन स्थान में पवित्र कुम्हार-शाला में पाण्डव शुभ

बेला में जाकर रहने लगे।

3. कुन्ती ने कुम्हारशाला को देखकर कहा कि मेरे विचार से यह स्थान बड़ा सुखकर है।

4. यहाँ काठ और अग्नि खोजनी नहीं पड़ेगी तथा आवश्यकतानुसार नई हाड़ियाँ भी मिल जायेंगी।

5 इस माघ महीने में हमारे पास शीत-वस्त्र नहीं है। राख बिछाकर गरमाहट में सोयेंगे।

6-7. पंचकटक के राजा और जगन्नाथ के पंचभूत स्वरूप धर्म, पवन, इन्द्र और अश्विनीकुमार से उत्पन्न पाण्डव कर्म की निर्बलता से ऐसे हो गये हैं।

8. जो रत्न की खाट पर हंस के पंखों के समान कोमल रेशमी शय्या और रेशमी तकिया लगाकर सोते थे, वे ही आज राख पर सोकर सन्तुष्ट हो रहे हैं।

9. विपत्ति के समय प्राणी इस प्रकार का विचार करते हैं किन्तु सुख-दुःख का सहना क्षत्रिय धर्म है।

10 उन्होंने संसार-तारण के लिए स्वयं कष्ट सहन किया। उनका चरित्र सुनने मे दुर्गति और विपत्ति समाप्त हो जाती है।

11 इस प्रकार महाभारत आदि पर्व की कथा मनोरथ पूरी करने वाली और पाप-हारी है।

12 सम्पत्ति-विपत्ति अवश्य होती है। श्री महाभारत सुनने से पातक ध्वस्त होता है।

13 कुन्ती ने पुत्रों को बुलाकर कहा, ब्राह्मण वेश धारण करके ब्राह्मण सभा में जाओ।

14. द्रुपद राजा के दान देने के समय तुम लोग ब्राह्मणों के झुण्ड में रहना।

15. युधिष्ठिर ने कहा कि मैं इसी क्षण जा सकता हूँ किन्तु तुम्हारे बेटे भीम के क्रोध से डरता हूँ।

16. राजा मानगोविन्द अनेक सम्पत्ति लेकर आया है। कहीं भीम उसके साथ द्वन्द्व न कर बैठे।

17. कुन्ती ने कहा कि हे बेटा भीम ! तुम्हें मेरी कसम है, युधिष्ठिर की आज्ञा का उल्लंघन मत करना।

18. पाण्डवों ने ब्राह्मण भेष धारण करके कमर में त्रिकक्ष वस्त्र पहना है।

19. नौ सूत्र जनेऊ कन्धे पर पड़ा है। पाठ और मन्त्रपोथी काँख में दबाये हैं।

20. बाहर वैष्णव तिलक लगाये हुए हैं। काँख में वेदपोथी लेकर वे तेजस्वी ब्राह्मण की तरह दिखाई देते हैं।

21. कन्धे पर छाता, स्रुवा और प्रोक्षणी लिये हुए हैं। सबकी काया ताँबे की तरह चमक रही है।

22-23. गुप्त अग्नि और कुशा पवित्री अण्टी में लगाये हैं। शालिग्राम की मूर्ति, गड़आ, ताम्र-पात्र, खर्पर, हाथ में जप माला, कण्ठ में तुलसी-माला और भुजा में रुद्राक्ष की माला धारण किये हैं।

24. क्षत्रिय वृत्ति छोड़कर ब्राह्मण के रूप में पाण्डव गुप्त रूप से सभा को जा रहे हैं।

25 यद्यपि गुप्त रूप से शरीर को छिपाते हैं फिर भी उनका स्वरूप आग के अंगार की तरह चमक रहा है।

26 छायामण्डल के दक्षिण दिशा में ब्राह्मणों की सभा महा समारोहपूर्वक आदित्य ज्योति को विकीर्ण कर रही है।

27-28. ब्राह्मण सभा में उपस्थित पाँचों वीर ब्रह्मा, रुद्र, कुबेर, इन्द्र और विष्णु की तरह प्रत्यक्ष दिखाई देते हैं।

29 वहाँ वसुदेव नामक एक ब्राह्मण था जो वैतरणी नदी के किनारे ईशान कोण में स्थित गाँव में रहता है।

30 वह बड़ा धार्मिक, अर्थवेदी, विवेकी और मन्त्रसिद्ध था।

31 वह गुणवान ब्राह्मण पाण्डवों का रूप देखकर सोचता है कि इस प्रकार की पंचमूर्ति ब्राह्मण कुल में उत्पन्न नहीं हो सकती ।

32 पांचाल देश के कष्ट को देखकर पाँचों दिग्पाल आकाश से तो नहीं उतर आये ?

33. इनका तेज मानवीय नहीं जान पड़ता। अन्त में इन सबका तेज-वीर्य जाना जायेगा।

34 गुणवान और लक्षणवान देखकर उन्हें बैठने के लिए स्थान दिया। ब्राह्मणों की सभा में पाँचों पाण्डव बैठे।

35. भीमसेन सोचता है कि ये राजागण बड़े गर्व से स्वर्ण-आसन पर बैठे हैं।

36. युधिष्ठिर थोड़ी भी आज्ञा देते तो निमिष मात्र में ही लाखों राजाओं का मुण्ड तोड़ देता।

37. चारों दिशाओं से राजा उत्साहपूर्वक आ रहे हैं। द्रुपद राजा सम्मानपूर्वक सभा में बैठाते हैं।

38. गंगा में स्नान करके सभी राजा भोजन करके सभा में उपस्थित हो रहे हैं।

39. प्रत्येक को कर्पूर-ताम्बूल देकर सदानन्द मन्त्री सबकी सम्वर्धना कर रहा है।

40. उत्तर, दक्षिण, पूरब, पश्चिम चारों दिशाओं में राजागण अपने-अपने आसन पर बैठते हैं।

41. द्रुपद राजा के भुवन में अनेक उत्सव हो रहे हैं। पन्द्रहवें दिन राजागण आकर पहुँचे।

42. श्रीकर में अर्घ्य लेकर धृष्टद्युम्न सभी राजाओं का सम्मान कर रहा है।

43-44. सिर पर मणिमुकुट और हृदय पर रत्नमाला, कर्ण में कर्णाभूषण ओर माँग में माँग टीका, भुजा में भुजदण्ड, चरणों में नूपुर, मणिमय हार, कुण्डल आदि सभी राजा धारण करते हैं।

45. शरीर पर चतुस्सम और कस्तूरीलेपित और सिर पर सुन्दर पुष्पमाला आभूषित हैं।

46. एक राजा को सौ-सौ वस्त्र देकर द्रुपद राजा ने इस प्रकार के लाख राजाओं का वरण किया।

47. सभी राजाओं को कुमार वरण करता है। उसी समय राजा द्रुपद अर्घ्य लेकर सभा मे प्रविष्ट हुए।

48. अर्घ्य लाकर सभी के बीच रखकर विधिपूर्वक शत-सहस्र प्रणाम किया।

49. जरासन्ध ने कहा कि हे द्रुपद ! उठो। तुम्हारी क्या इच्छा है—बताओ।

50. द्रुपद ने कहा कि हे स्वामी ! सावधान होकर सुनो। अग्नि से उत्पन्न मेरी दुहिता शुद्ध वामा है।

51. महात्मा वेदव्यास ने कोटि ऋषियों को लेकर होम यज्ञ किया। उसी महाअग्नि से उसका शरीर उत्पन्न है।

52. मैंने जिसके लिए मनोकामना की थी, दैव-विपाक से वह विनाश को प्राप्त हुआ।

53. उसके समान योग्य इस पृथ्वी पर किसी को न पाकर मैंने इस स्वयंवर का आयोजन किया है।

54. अपने पूर्व पुण्य से इस प्रकार की दुहिता को उत्पन्न करके आज मैंने लाखों राजाओं को प्राप्त किया।

55. चार कम लाख राजाओं को मैने निमन्त्रित किया है। किसको मैं हाँ कहूँगा, किसको नहीं कहूँगा।

56. मैंने अपनी प्रतिज्ञा के निर्वाह के लिए महालक्ष्य का निर्माण किया है। युक्तितः मेरी कन्या अपनी इच्छा से वरण नहीं करेगी।

57. मेरे इस महालक्ष्य को हे स्वामी ! जो भेद देगा वही कन्या प्राप्त करेगा। सावधान होकर सुनें। मैं लक्ष्य की महिमा बता रहा हूँ।

58-59. सहस्र धार वाला राधाचक्र कुम्हार चक्र की तरह घूम रहा है। उसके ऊपर स्वर्ण मीन है। नीचे एक लाख बल विशिष्ट धनुष रखा है।

60. राधाचक्र सात ताड़ ऊपर घूम रहा है। एक ताड़ ऊँचाई पर एक सोने का पटरा रखा हुआ है।

61-62. उसके नीचे तीर्थजल का एक घड़ा है। एक लाख बल का धनुष लेकर उस पटरे पर चढ़ना होगा। नीचे दृष्टि और ऊपर मुष्टि करके वाण संचालन करना होगा जो चक्र भेदकर मछली की बायीं आँख को फोड़ दे।

63. इस प्रकार जो क्षत्रिय लक्ष्य-भेद करेगा, मेरी दुहिता द्रौपदी उसे ही प्रदान होगी।

64. उस लक्ष्य को जो बेधेगा वही कन्या प्राप्त करेगा। उससे तुम लोग कोई ईर्ष्या मत करना।

65. तुम लोग सभी महाबली राजा हो। जो कन्या लेगा, उसके साथ द्वन्द्व मत करना।

66. हे स्वामी ! यह बात दृढ़तापूर्वक मान लो। तभी अपनी पुत्री को मैं सभा मै लाऊँगा।

67. समस्त राजाओं ने सत्य-सत्य कहा। जिसका पुण्य होगा, वही कन्या प्राप्त करेगा।

68. जो उसे सहन न करके उसके साथ युद्ध करेगा, समस्त राजा एक साथ उसका शिरोच्छेदन करेंगे।

69. स्वयंवर वरण-स्थान पर लक्ष्य की बात कहकर द्रुपद राजा अन्तःपुर में प्रविष्ट हुए।

70. हे बेटे धृष्टद्युम्न व श्रीखण्डी ! कन्या भेष कराकर द्रौपदी को ले आओ।

71. केशिनी नामक दासी के नेतृत्व में लाखों दासियाँ शृंगार करा रही हैं।

72. सभी मिलकर कन्या को स्नान कराती हैं। विभिन्न सुगन्धित पदार्थों से केश-प्रक्षालन करती हैं।

73. शरीर पर कुंकुम-कपूर का लेपन करती हैं। उसके ऊपर कस्तूरी का लेप करती हैं।

74. पंखा चलाकर केश सुखा रही हैं। अंगों में नूतन सूक्ष्म वस्त्र परिधान करा रही हैं।

75. जातक, जुही, मल्लिका, मालती, नागेश्वर आदि सुगन्धित फूलों से वेणी को सुसज्जित किया।

76. सुन्दर सुसज्जित जूड़े की सुगन्ध से मधुकर लोभ से चारों ओर घूमते हैं।

77. मुक्ता जाल के ऊपर माँग टीका और ललाट पाटी में अष्ट रत्न हीरा खचित है।

78. कान में तरकी, नाक में रत्नफूल, हृदय में अमूल्य रत्न-हार झलक रहा है।

79. भुज में कंगन और हाथ में रत्नचूड़ी शोभित है। अंगुलियों में अष्टरत्नजटित अंगूठी सुशोभित है।

80. पैरों में नपुर के हीरे झलक रहे हैं। सुन्दरी अत्यन्त रत्नभार को नहीं सह पाती है।

81. गणिकायें मिलकर चित्रकारी करती हैं। इस वेश-भूपा से सुन्दरी खिन्न होती है।

82. उसके ऊपर इन्द्र-गोविन्द नामक ओढ़नी डाली गयी है। अग्निज्योति उसकी देह से विकसित हो रही है।

83. उसके साथ एक लाख दासियाँ हैं। उनकी भेप-भूपा की बात कौन कह सकता है ?

84. वह स्त्रीरत्न पूर्ण युवती अनेक कन्याओं में सर्वोपरि रूपवती और तेजस्विनी है।

85. मानो अमर विलासिनियाँ आकर उपस्थित हो गयी हों, जो अन्य की नायिकायें होने पर भी कृष्णा की दासी जैसी हैं।

86. स्त्रीरत्न स्वरूप युवतियाँ अनेक वेश-भूपित होकर जगत को मुग्ध करती हैं।

87. एक हज़ार डोलते हुए स्वर्ण चामर झलक रहे हैं।

88. युवतियाँ एक हजार राजकीय छत्र धारण किये हुए हैं। पास में एक हजार युवतियाँ नृत्य कर रही हैं।

89. मधुर रस-वाद्य शुद्ध तान में बज रहे हैं। गायिकायें कोकिल स्वर में गाती हैं।

90. सुवर्ण अर्घ्य थाली लेकर सहस्र दासियाँ चल रही हैं। सहस्र कन्याएँ आगे-आगे पुष्प-वर्षा करती चल रही हैं।

91. कनक पालकी पर द्रौपदी बैठी है। उसके पास शुभांगनायें चल रही हैं।

92. नाना प्रकार के वाद्यों से वातावरण पूरित हो गया है। शरद् उत्सव में सुसज्जित हाथियों के प्रवेश जैसा वातावरण लग रहा है।

93. इस प्रकार की शोभा देखकर राजाओं ने प्रशंसा की।

94. कोई द्रौपदी का मुख नहीं देख पाता है। दासियों का मुख देखकर ही सभी मुग्ध हो गये।

95. उसे घेरी हुई लाखों युवतियाँ भी लाखों राजाओं की प्रिया होने योग्य हैं।

96. गणिकाओं ने मंगल-ध्वनि की। बालिकायें द्रौपदी को लेकर सभा के बीच खड़ी हुईं।

97. पालकी के भीतर सुशोभित द्रौपदी का मुख पूर्णिमा के चन्द्रमा की तरह विराजित हो रहा है।

98-99. सभा में खड़ा होकर धृष्टद्युम्न कहता है कि तुम लाखों राजा जो अपने-अपने स्थान पर बैठे हो, उन सबको मैंने वर भेष में विधानपूर्वक वरण किया।

100. अपनी बहन द्रौपदी को यहाँ ले आया हूँ। आप लोग इसकी रूप-कान्ति को देखकर विचार करें।

101. जो लक्ष्य-भेद कर पायेगा, उसी को मैं द्रौपदी के लिए वरण करूँगा।

102. सभी राजा मौन होकर बैठे। मगधेश्वर नृपति ने उत्तर दिया।

103. जरासन्ध ने कहा कि हे धृष्टद्युम्न ! कोई तुमसे संकोचवश वास्तविक बात नहीं कह पा रहा है।

104. तुम जो द्रौपदी को पालकी में बैठाकर लाये तो कोई उसके स्वरूप को नहीं देख सका। वे किसके लिए लक्ष्य-भेद करेंगे ?

105. पालकी से उसे उतार लाओ। सभी राजा अपने अभीष्ट का दर्शन करें।

106. जरासन्ध की बात सुनकर द्रुपद नृपति तत्क्षण पालकी से उसे उतार लाया।

107. केशिनी और जयसेनी द्रौपदी का हाथ पकड़े हुए हैं। सभी द्रौपदी का स्वरूप देख रहे हैं।

108. मुख देखकर राजाओं को मतिभ्रम हुआ। कामशर के आघात से वे निष्प्रभ हो गये।

109-110. निर्झर देश के राजा गणपति ने इस सुन्दरी की मूर्ति देखकर सोचा कि इस कन्या को जन्म

देकर राजा धन्य हुआ और उसका पालन करके सारा वंश ही धन्य हुआ।

111. आकुंचित सघन केशराशि पर मधुकर फूलों को त्याग कर विहार कर रहे हैं।

112. रसाल के किसलय की तरह ललाट बंधूक फूल की तरह ओठ और दाड़िम के बीज की तरह दाँतों से वह बिम्बोष्ठी शोभायमान है।

113. अमूल्य रोमावली पूर्ण भ्रूलता कपोल देश में खचित सी दिखाई देती है।

114. आँखों के डोरे रक्तिम दिखाई देते हैं। इन आँखों से देखते ही सभी मूर्छित हो जायेंगे।

115 वक्र नयन से देखते ही सबका हृदय विदीर्ण हो जायेगा। संसार की रक्षा के लिए उसने दृष्टि नीचे भूमि पर कर दी है।

116. यदि यह किंचित् मात्र सभा की ओर देखेगी तो इसको अनेक पुरुषों की हत्या का दोष लगेगा।

117-118. यह स्त्री-धर्म में सुज्ञानी है। पाप का भय करके ही यह मानिनी की तरह नतशिर है। सभी राजा ऐसा सोचते हैं कि यह कन्या योनिजात न होकर अग्निजात है।

119. हे धर्म देवता ! यह सभा की ओर देखे न। हम लोग यहा अच्छे आये ! किसी प्रकार हम लोग निरापद यहाँ से लौट जायें।

120. यदि वज्र की तरह पाषाण भी हो तो इसके कटाक्ष-पात से वह भी वेधित हो जायेगा।

121. यह जगत्मोहिनी केवल देवताओं के योग्य है। यह ऋषि, मुनि और तपस्वियों के तप को भंग करने वाली है।

122. तिल का पुष्प उसकी नासिका की बराबरी नहीं कर सकता क्योंकि वह दिन के अन्त में भूमि पर गिर पड़ता है।

123. अटूट शोभायमान स्वर्णपत्र की तरह वह दिखाई देती है और प्रलम्बित कर्ण काम-हिण्डोल की तरह तथा रोमावली रेखा चमकती विद्युत् की तरह दिखाई दे रही है।

124. इसकी नासिका से निकलते हुए मलयानिल की तरह सुशीतल वायु के लगने पर नीम वन चन्दन वन में परिणत हो सकता है।

125. बिना ताम्बूल के ही उसका होंठ इतना लाल दिखाई दे रहा है कि बाल-सूर्य से भी उसकी उपमा नहीं दी जा सकती।

126. बिम्बफल भी उसकी तुलना नहीं कर सकते क्योंकि वे भी समय के साथ नीचे गिर जाते हैं।

127. उसके दोनों होठ घोले हुए शुद्ध लाल अंगूर की तरह दिखाई देते हैं।

128. उसके दाँतों की पंक्तियों के पास अशोक के फूल भी नहीं जा सकते। पके दाड़िम की तरह उनका रूप विकसित हो रहा है।

129. सुललित और सुन्दर दोनों होंठ बत्तीस कलाओं से युक्त चन्द्रमा की तरह दिखाई देते हैं।

130. यह ज्ञानवती सुन्दरी जब बोलेगी, तब इसके वाक्य को सुनकर संगीत-उन्मत्त पिकगण आम्रकुंज छोड़कर भाग जायेंगे।

131. जिस किसी व्यक्ति से यह बातचीत करेगी, वह कैसे शरीर धारण करेगा ? वह अवश्य अचेत हो जायेगा।

132-133. उसके मुख की तुलना शरद् पूर्णिमा के चन्द्रमा के साथ की जा सकती है, किन्तु राहुग्रसित होने के कारण वह कलंक वहन करता है। इसका मुख निष्कलंक और निर्दोष है। अतः चन्द्रमा से इसकी तुलना नहीं की जा सकती।

134. प्रजापति के शाप से उसका शरीर क्षीण हो जाता है। इस बात को न जानने वाला ही तुलना कर सकता है।

135. गला सुवर्ण घट की तरह प्रतीत हो रहा है। मानो छोटे खराद पर रखकर इसे बनाया गया हो।

136. दोनों कान कन्धे की ओर लटकते हुए ऐसे दिखाई दे रहे हैं, जैसे कृष्ण मेघ के आने पर बगुले उड़ने की चेष्टा करते हैं।

137. उसका विस्तीर्ण वक्षस्थल शत्रुदर्प-भंजनकारी है और कोटि देश कृपण के दान की तरह क्षीण है।

138. यह अनादि, अपर्णा और स्वयंभू है। इसके शरीर का वर्णन करने में कोई कैसे समर्थ हो सकता है?

139. अग्नि से उद्भूत इसका तेज विस्तीर्ण है। मैं मनुष्य

होकर कैसे इसका वर्णन कर सकता हूँ।

140. उसकी माँसल और सुन्दर भुजायें कुमुद नाल के ऊपर स्वर्णजटित कमल की तरह हैं।

141. दोनों हथेलियाँ स्वर्ण की तरह और अगुलियों चम्पे की कली की तरह हैं।

142 नाखून जातक फूल की पंखुड़ी की तरह न तो अति सूक्ष्म हैं और न ही अति तीक्ष्ण हैं।

143. दोनों जंघायें उल्टे कदली-स्तम्भ की तरह हैं। तलुवे रक्त कुमुद की तरह हैं।

144 पैरों के नाखून सुन्दर कौडी की तरह हैं। सबके दर्प को हरकर अरक्षित कर दिया।

145 सभा के बीच में कालदमन ने कहा कि कन्या के शरीर पर तो अल्प अलंकार है।

146 दुर्योधन ने कहा कि तुम पागल हो गये हो? शरीर पर भार होने के कारण ही अलकार धारण नही किये हैं।

147 कर्ण ने कहा कि क्यों अलकार धारण करेगी ? सोने से भी सौ गुना इसका तेज है।

148 जिसका तेज अग्नि की तरह दीप्त है, स्वर्ण उसकी किस प्रकार शोभा बढ़ायेगा !

149 जल में जैसे हंस गति करता है, उसी प्रकार सुन्दरी की पादगति है।

150 बिना जाने-समझे ही द्रोपदी का स्वयवर रचा गया है। इस सभा में कोई उसका उपयुक्त वर नही है।

151. कामदेव यदि पुनः जन्म लेकर आवे तो वही इसके साथ शोभा पा सकता है।

152. इस प्रकार राजाओं के सोचते समय केशिनी दासी ने राजाओं को निर्दिष्ट करके दिखाया।

स्वयंवर-सभा में राजाओं का रूप-निर्णय

1. द्रौपदी ने पूछा, हे केशिनी ! ये सब किस देश से सेना लेकर आये हैं ?
2. हमारे देश में क्यो आये हैं ? केशिनी ने उत्तर दिया कि राजा ने तुम्हारा स्वयवर रचा है।
3. देवी तुम अभी बच्ची हो। इसीलिए यह नहीं जानती हो। तुमसे विवाह के लिए राजागण यहाँ इकट्ठे हुए हैं।
4. दासी की बात सुनकर द्रौपदी कहती है कि इस सभा में मेरा पति होने वाला कौन है ?
5. दासी ने कहा, हे बेटी ! यह तुम्हारा स्वयंवर है। जो लक्ष्य-भेद करेगा, वही तुम्हारा वर होगा।
6. द्रौपदी ने पूछा कि किस देश का राजा कौन है ? कौन कितना धनवान, गुणवान और विवेकी है ? कौन किस गुण मे प्रसिद्ध है ?
7. हे दासी ! ये सब बात मुझे सक्षेप में बताओ। जिससे मैं इन लोगों का गुण-रूप समझ सकूँ।
8. दासी द्रौपदी से कहती है कि राजाओं की महिमा सुनो।
9. देखो वह कुंजगढ़ देश के राजा धृतराष्ट्र का नन्दन मान चक्रवर्ती है।
10. यह बड़ा अभिमानी है। अकारण इसने गान्धारसेन के वंश का नाश किया।
11. उसकी करस्थली मे शंखनिधि ओर पद्म निधिशोभित है। पाषाण पर हाथ लगते ही वह सोना हो जाता है।
12. अति मान के कारण वह मानगोविन्द राजा कहा जाता है। भूमि पर चलते समय नाल रहित स्वर्ण पद्म खिलता है।
13. भीष्म नामक सेनापति गंगा से उत्पन्न हैं और उन्हें इच्छा-मृत्यु वर प्राप्त है।
14. काल की युक्ति से भी ये शरीर नहीं छोड़ सकते। पिता के लिए इन्होने दारा स्वीकार नहीं की।
15. भरद्वाज के पुत्र गुरु द्रोणाचार्य परशुराम के विद्या बल से सबको जीत सकते हैं।
16. जब तक इनके हाथ में शस्त्र रहेगा, तब तक त्रैलोक्य में इनको जीतने वाला नही है।
17. इसके नन्दन महारथी अश्वत्थामा त्रिकालजीवी योद्धा है। पृथ्वी पर इसे कोई नहीं जीत सकता।
18. अश्वत्थामा के मामा द्रोणचार्य के साले कृपाचार्य हैं।
19. हे सखी ! देखो । शाकल्य देश का राजा शल्य महारथी पाण्डवों का मामा है और दुर्योधन का सेनापति है।
20. यह जब संग्राम करने के लिए धनुष धारण करता है, तब पुरुषोत्तम भी भय करते हैं।
21. यह देखो गान्धार देश का शकुनि मन्त्री है। पत्थर के घर में बन्द करके दुर्योधन ने इसके वंश का नाश कर दिया।

22. हे सखी ! देखो—ये भूरिश्रवा महारथी हैं जो प्रत्यक्ष सोमवंशी चक्रवर्ती हैं।
23. दुःशीला का स्वामी जयद्रथ सिन्धु देश के राजा सुरथ का बेटा है।
24. हे महासती ! इसका चरित्र सुनो। तुमसे विवाह करने की इसने इच्छा की थी।
25. हे द्रौपदी ! इसके बाद देखो मगध देश का राजा जरासन्ध है।
26. छियानवे राजा इसकी सेवा करते हैं। तेईस अक्षौहिणी सेना लेकर यहाँ आया है।
27. सौ लट्ठा दूर बैठा हुआ गगिरि का राजा उर शल्य है।
28. चेदि देश का राजा दमघोष सात अक्षौहिणी सेना लेकर आया है।
29. यह शिशुपाल का पुत्र अत्यन्त सुन्दर है। यह रुक्मिणी का वर मनोनीत हुआ था।
30. बलपूर्वक कृष्ण के द्वारा हरण के किये जाने के कारण वह सब समय उनसे युद्ध करता है।
31. द्रौपदी ने कहा कि इनका कोई प्रयोजन नहीं है। ये अल्पायु हैं।
32. हे सखी ! देखो कुण्डी नगर के राजा के चार पुत्र, रुक्म, रुक्मण, रुक्वाहु और रुक्माली हैं।
33. कुण्डी नगर के राजा की पुत्री रुक्मिणी प्रत्यक्ष कमलिनी की तरह है और नारायण की पत्नी है।
34. बज्रगिरि देश का राजा वनमाली दो अरब रथ लेकर सब समय चलता है।
35. इसकी काया अत्यन्त सुकुमार है। यह आकाश में अंगार-पन्नग की तरह चलता है।
36. मालव देश के राजा कृतवर्मा के हाथी का नाम अश्वत्थामा है।
37. यह कुबेर की तरह धनवान है और इसकी नौ अक्षौहिणी सेना है।
38. काशी देश का राजा काशीश्वर है। इसके पास ग्यारह अक्षौहिण सेना है।
39. निर्झर देश का राजा गणपति बड़ा प्रतापी और जगत्-विख्यात है।
40. इसके पास पाँच लाख रथ, आठ लाख हाथी, पचास लाख घोड़े और तेरह अक्षौहिणी सेना है।
41. कलिंग देश का राजा कलिंगसेन है। इसके पास नौ लाख हाथियों के साथ सात अक्षौहिणी सेना है।
42. हे सखि ! उड़ंग देश का राजा महावर मधुकेशर श्रीखण्डी का श्वसुर है।
43. वैश्वानर देश का राजा धृतसेन दस लाख योद्धा लेकर तुम्हारी आशा में आया है।
44. कन्नौज देश का राजा जम्बुमाली आठ अक्षौहिणी सेना लेकर पांचाल देश में आया है।
45. डाहाल देश का राजा जनार्दन एक पद्म सफेद अश्व लेकर आया है।
46. गंगवंशी राजा वीरबाहु सात लाख रथी लेकर आया है।
47. तेलंग देश का राजा चुड़ंग चक्रवर्ती सूर्यवंशी और प्रतापी महाक्षत्रिय है।
48. खंजन देश के राजा अनुपम चक्रवर्ती के साथ अश्व गज बिना तीन कोटि रथी हैं।
49. सौ लट्ठे आयतन में इसका मल्हार नामक महल है। पश्चिमी कौशल में इसके समान कोई राजा नहीं है।
50. त्रिहुती देश का राजा वीरबाहु महाभीष्म रूपी है और संग्राम में राहु की तरह निःशंक है।
51. गुंज देश के राजा दामोदर सेन के पास रथ, गज, अश्व सहित ग्यारह अक्षौहिणी पदाति हैं।
52. मद्र देश के राजा त्रिगर्त के पास पाँच अक्षौहिणी सेना और तीन कोटि रथ थे।
53. कीचक ने इसके राज्य पर बलपूर्वक अधिकार कर लिया। हतराज्य होकर वन-प्रदेश में घूमता है।
54. मत्स्य देश के राजा विराटेश्वर के साथ सात अक्षौहिणी सेना है।
55. दुधारू गायें दो पद्म, बारह लाख कलोर गायें, बारह लाख बछड़े और तीस लाख बाछियाँ हैं।
56. हे सखी ! दो पद्म दुधारू गायों को गोपालगण दुहते समय प्रथम धार पृथ्वी पर गिरा देते हैं।
57. एक ताड़ गहरी धवल क्षीर नदी नगर के चारों ओर सात घड़ी तक बहती रहती है।
58. उस वन में रहने वाले सभी जीव-जन्तु दूध पीकर बचते हैं।
59. पूर्व जन्म में जिसने प्रयाग में आत्मविसर्जन किया हो वही इस प्रकार के राज्य का भोग कर सकता है।

60 हे सखी ! शरद् के राजा कंचन को देखो। वह उत्तर दिशा में विख्यात है।

61 कीचक सहित सौ पुत्रों को लेकर इसने दुर्वासा ऋषि को अपने पुण्य बल से तुष्ट किया।

62 कीचक सेनापति सौ सिहो का बल रखता है। नौ योजन पर्यन्त विस्तृत कनकगिरि को उसने उखाड दिया।

63 चिर देश के राजा वामदेव के पास रथ, गज, अश्व मिलकर सत्तरह सागर सेनाये है।

64 वीर देश का सुबाहु सीमान्तक मणि प्राप्त करके धनाढ्य हुआ है।

65 महाराष्ट्र का राजा दुर्जय देव, दानव, मानव आदि किसी का भय नही करता।

66 भाट देश का राजा कर्णकेशर सेना न लाकर तीन कोटि सागर रथ लेकर आया है।

67 इसके सभी रथ रत्नमय दीखते है। हे सखी ! इच्छा हो तो इसका ही वरण करो।

68 मलार देश का राजा ऋषिकेशी है। वह तर पद्म सेना लेकर आया है।

69 कामरूप देश का राजा कामपाल कन्दर्प की तरह सुन्दर क्षत्रिय महायोद्धा है।

70 उसके पास दस लाख रथ, दस लाख हाथी, दस लाख अश्व और दस लाख पदाति है।

71 बगाल देश का राजा सदाशिव पाच अक्षौहिणी सेना लेकर आया है।

72 खेचर देश के राजा मनोहर के साथ पाच सागर सेनाये है।

73 गुर्जर देश का राजा मदन महादेव एक लाख युवतियो के साथ विलास करता है।

74 कामाक्षी की कृपा से काम्यक नृपति साधन विद्या जानता है।

75 कौशिक देश का राजा कर्ण माधव सेन दस अरब सेना लेकर तुम्हारे नगर मे आया है।

76 छत्र देश का राजा चण्ड बली असख्य सेना लेकर पृथ्वी पर घूमता है।

77 विचित्र देश का राजा विकर्ण चार अक्षौहिणी सेना लेकर आया है।

78. नेपाल देश के राजा नरान्तक के पास अनेक रथ, गज, अश्व और पदातिक है।

79 वारस्वति पुर के वामदेव नृपति के पास श्वेत वर्ण के तीन सागर हाथी है।

80 रथ, गज, अश्व और पदाति कुछ नही है। लक्ष्मी कभी उसका कन्धा नही छोड़ती है।

81 हे सखी ! जिसने अत्यन्त पुण्य किया होगा, वही इसकी भार्या होगी।

82 पारिजात देश का राजा माल्यार्च परशुराम की विद्या से पृथ्वी जीत सकता है।

83 हे सखी ! इसके पिता जलतरग नृपति ने त्रेता युग मे वरुण को तीन बार दण्डित किया।

84 भोज देश के राजा कुन्तिभोज पृथ्वी पर महाराजा है।

85 इनकी दुहिता देवी कुन्ती है जिसको राजा पाण्डु प्रदान हुए।

86 कुन्ती के तीन पुत्र उत्पन्न हुए—युधिष्ठिर, भीम और अर्जुन। तीनो बड़े बलवान है।

87 माद्री नामक कुन्ती की सपत्नी से नकुल और सहदेव नामक दो कुमार पैदा हुए।

88 ये पाचो पाण्डव महाबलिष्ठ थे। दुर्योधन ने कपट पूर्वक उनका प्राण-नाश किया।

89 भोट देश के राजा सुरगसेन वीर के हृदय पर चन्द्र किरण की तरह हार सुशोभित है।

90 इसके पास अठारह अरब हाथी है। वह तुम्हारा स्वयवर देखने के लिए आया है।

91 भोटाग देश का राजा मन्मथ ब्रह्म चार अक्षौहिणी सेना लेकर सभा मे आया है।

92 अनुपम देश के राजा कृतान्तक के पास अनेक अश्व, गज, रथ और पदाति है।

93 चण्डीहर देश के राजा दर्मानक के साथ नो लाख तुरग है।

94 गिरिव्रज देश का राजा पुण्डरीक्ष वासुदेव विष्णु की तरह काठ के गरुड पर बैठकर घूमता है।

95 काठ की दो भुजाओ का निर्माण करके शख-चक्र वहन करता है। जगन्नाथ की दुर्वचन कहकर निन्दा करता है।

96 द्रौपदी कहती है कि कुछ मत कहो। इसकी आयु

गिनी-गिनायी है।

97. यह संसार विष्णुमय है। असुर जाति के लोग ही जगन्नाथ की निन्दा करते हैं।

98. अरविन्द देश का राजा अनंग वासुदेव बड़ा ही विद्वान्, गुणवान, शान्त और सुन्दर स्वभाव का राजा है।

99. शाकल्य देश का राजा शाल्व दस सहस्र रथ लेकर आकाश-मार्ग में गमन करता है।

100. प्राग्ज्योतिपपुर का राजा मनसिज सात अक्षौहिणी सेना लेकर चलता है।

101. हे सखी ! कामपुर नगर के राजा विरूपाक्ष का वाहन शार्दूल है। उसके पास दस लाख मुकुटधारी सेना है।

102. सखि ! निखिल देश के राजा दरदसेन के पास अस्सी परार्ध सेना है।

103. यमुना पुर का राजा जमागोष्ठ है। वह उन्नीस पद्म सेना लेकर चलता है।

104. हे सखी ! इसकी महिमा देवताओं को भी दुलर्भ है। इसके दाहिने हाथ की कनिष्ठिका अंगुली में जीवन है।

105. इसका नाम लिखकर पोंछ देने पर यह दो खण्ड हो जाता है। इसके समान यमदण्ड भी नहीं है।

106. हिरण्यपुर का राजा पद्मनाभ महावैष्णव है। वह वासुदेव की पूजा करता है।

107. तैलंग पुर के राजा विश्वनाथ का शरीर भस्म-विलेपित और सिर पर जटा विराजमान है।

108. धर्म के सन्दर्भ में इसकी दूसरे पर इच्छा नहीं। योग लय करके विश्वनाथ में मन लगाता है।

109. तीन सौ योजन में चक्रवर्ती है। सत्य-अचारनिष्ठ और स्वपत्नीनिष्ठ है।

110. हे सखी ! भैरव देश के भैरवराज का एक चरण और चार भुजायें हैं।

111. डम्बरू, त्रिशूल, खट्वांग और पात्र हाथ में लिये है। सिर पर जटा है और उसका शरीर धवल वर्ण का है।

112. सभी बैल पर चलते हैं। एक निमिप में भुवन को जीत सकते हैं।

113. जेनावलि नगर के राजा गोसिंह महारथी के पास अस्सी कोटि सेना है।

114. विजयनगर का राजा ऋतुपर्ण है। यह अम्लान सूर्यवंशी श्रीराम नन्दन है।

115. पचास सागर सेना इसकी सेवा करती है। तुम्हारी आशा से यह आया है।

116. विराल देश का राजा नरसिंह शंख चक्र धारी श्रीरंग की सेवा करता है।

117. कर्नाट देश का राजा यदुराष्ट्र अस्सी लाख सेना लेकर आया है।

118. जाजनगर का राजा धरणीधर समदण्ड लेकर आया है।

119. यमनिक देश का राजा यमनिक तुम्हारी आशा में आया है।

120. द्विजनगर का चन्द्रकेतु नृपति समदण्ड लेकर स्वयंवर के लिए आया है।

121. अनिल देश का राजा सुरपति नौ सागर रथी लेकर उपस्थित है।

122. रणजय नगर का राजा वीरमणि तुम्हारे स्वयंवर में उपस्थित है।

123. पद्मदल देश का राजा सुरमणि स्वयंवर में उपस्थित है।

124. चण्ड देश का राजा चण्डेश्वर चौदह अक्षौहिणी सेना लेकर स्वयंवर में उपस्थित है।

125. खड्गनगर का राजा कीर्तिसेन असंख्य सेना लेकर आया है।

126. देवनगर के राजा कुशकेतु के साथ पाँच लाख सेना चलती है।

127. कांचीनगर का राजा नलसेन अठारह अक्षौहिणी सेना लेकर आया है।

128. केशरी नगर के राजा पद्म केशरी नौ सागर सेना के साथ आये हैं।

129. कुशमण्डल के राजा परमानन्द मल्ल पाँच अक्षौहिणी सेना के साथ हैं।

130. दुर्ग मण्डल का राजा परशुध्वज अपना राज्य छोड़कर तुम्हारी आशा में आया है।

131. चन्द्रमण्डल देश का राजा मार्कण्ड बारह अक्षौहिणी सेना लाया है।

132. शिवमण्डल का राजा धूर्जटी रण में अजेय वीर श्रेष्ठ है और संग्राम से नहीं लौटने वाला है।

133. गौरीमण्डल का राजा रुद्रदास बहुत दूर से तुम्हारे पास आया है।

134. वीरमण्डल के राजा भीष्म चक्रवर्ती के पास पच्चीस

वृन्द पदाति हैं।

135-136. भूमन्यु मण्डल के राजा भूमन्यु नृपति एक पद्म रथ, चार पद्म हस्ती, दस पद्म अश्व और पचास पद्म सैन्य लेकर बहुत दूर से आया है।

137. मुधवन मण्डल का राजा उग्रसेन अपने साथ पांच परायुध सेना ले आया है।

138-139. प्रजापति नामक मण्डल है। वहाँ के राजा की नौ सौ सेनादल बराबर सेवा करती है। पचास हजार सेना लेकर तुम्हारी आशा से हे स्वामिनी ! आया है।

140-141. उत्तर दिशा में ध्रुवमण्डल का राजा धूमक्षेत्र है। नौ सागर सेना लेकर वह नृपमणि तुम्हारे स्वयंवर के लिए आया है।

142-143. पश्चिम प्रदेश के मेरु मण्डल के राजा मेरुशूल की पॉच सागर लोहित वर्ण सेना बाघ पर सवार होकर आयी है।

144. मन्दारमण्डल का राजा बसन्त अपने साथ पॉच कोटि रथ लाया है।

145. मल्ल देश का राजा मान अर्जुन पांच लाख योद्धाओं के साथ बेठा है।

146. केशरी राष्ट्र का राजा इन्दुवर छः सागर सेना लेकर आया है।

147. उड़ राष्ट्र के राजा नर केशरी की सेना में बा र लाख पदाति है।

148. वैराष्ट्र के राजा वेरी धूमान्त के राज्य में वैदूर्य मणि उत्पन्न होती है।

149. हरि राष्ट्र देश का राजा यर्मानिक सूर्य की कृपा से संग्राम मे अभय है।

150. उत्तर दिशा के अन्त में सोराष्ट्र के राजा उत्तगसेन की असंख्य सेना है।

151. पश्चिम दिशा में रत्न राष्ट्र का विष्णुवंश राजा बड़ा ही बलिष्ठ है।

152. हाड़ाल देश का नृपति दामोदर अपने साथ तेरह सागर रथ लाया है।

153. विन्ध्यगिरि देश का राजा विन्ध्य माली तेरह सागर सेना लेकर स्वयंवर को आया है।

154. महेन्द्र देश का राजा मधुसेन सोलह लाख रथ लेकर आया है।

155. बारह राष्ट्र और छत्तीस मण्डल के राजाओं को दासी केशिनी ने पहचनवाया।

156 विन्ध्यमाल देश के राजा जरा शबर के पास अमात्य मन्त्री सहित तेरह सागर सेना है।

157 महेन्द्रपाल के राजा मल्हार के पास पाँच लाख हाथी हैं।

158. हेममाल के राजा कुदाल हरिहर पाँच पद्म अश्व लेकर स्वयंवर मे आये हैं।

159. गिरिमाल देश के राजा किरात ध्वजमाली चार लाख ऊँट लेकर स्वयंवर मे आये है।

160 दरद देश के राजा चित्रवली सेन के साथ तीन पद्म सेना है।

161 दक्षिण देश का राजा केतुमाली एक ही लाख सेना लेकर आया है।

162 पश्चिम कोशल के राजा मृगसेन की मुकुटधारी तेरह सागर सेना है।

163 सुरभि कोशल के राजा सुरजीत के साथ नौ अयुत सेना है।

164 उत्तर कोशल के राजा लग्नजीत के साथ वेगवान श्वेत घोडों के सहित चौदह अरब सेना है।

165 चाण्डाल कोशल के राजा नारका अस्सी पद्म सेना लेकर अकेले ही संसार का दहन करता है।

166 ईशान कोशल का राजा यमनिक पाँच पद्म सेना लेकर आया है।

आनन्द पटना का राजा सुजान एक अयुत नौका लेकर आया है।

168 चैतन्य पटना का राजा कन्दर्प नौ लाख नौका लेकर आया है।

169. निरन्तर पटना का राजा कर्नाट एक कोटि नौका लेकर उपस्थित है।

170. कमलापुर पटना का अरविन्द चक्रवर्ती तीस हजार नौका लेकर आया है।

171-176. मिथुन पटना का कनक चक्रवर्ती दस हजार नौका, हरहिर पटना का अजान चक्रवर्ती एक लाख नौका, कनकावती पटना का नीलगाम दण्डधर अस्सी हजार नौका, नरपुर पटना का राजा अमरारि

अस्सी हजार नौका, कंटा धीर पटना का दास सेन नृपति परार्ध नौका, बेलाल पटना का बेलाल सेन दस लाख नौका लेकर आये हैं।

177. जम्बूद्वीप में नौ हजार नौ सौ सत्तानवे पटना हैं। इस घटना का मैं कितना उल्लेख करूँगा ?

178. सभी पटना के राजाओं को केशिनी दासी ने पहचनवाया

179. केशिनी ने कहा कि हे स्वामिनी ! दानव राजाओं का परिमाण-निर्णय कौन कर सकता है ?

180. शाखापुर नगर के वज्रनाभ और शतनाभ की सेना को पृथ्वी पर स्थान नहीं है।

181. इनके नगर में आकाश से मर्त्यलोक पर्यन्त ऊपर नीचे हवा नहीं बहती।

182-183. हिरण्य भुवन के राजा स्वयंवर की शत-सहस्र सेना और सौ पुत्र हैं। असुर कुल में इसका पटान्तर नहीं है।

184. शोणितनगर के राजा वाणासुर के पास चौरासी अक्षौहिणी सेना और एक हजार मत्त गज हैं।

185. बिराल भुवन के राजा कुम्भ-निकुम्भ महादुरान्तक दानव हैं।

186. विजया भुवन का दानव कंचन असंख्य सेना लेकर आया है।

187. महिदास नगर का राजा कालनेमि दस नील सेना लेकर आया है।

188-189. हे सखि ! उत्तर कोशल का राजा जमगोप्ठि है। उसका नाम लिखकर पोंछ देने से दो खण्ड हो जाता है। काली ने उसके दक्षिण हाथ मे कटार दी है।

190. हे सखी ! यह दरदसेन है। बड़ा शक्तिशाली है। संग्राम में कोई इसके समान नहीं है।

191. कृतान्त की सेना का आकलन नहीं किया जा सकता। तुम्हारी सभा में समस्त दानव-शक्ति बैठी है।

192. तुम ऐसी जगमोहिनी हो कि समस्त तुम्हारे वशीभूत हो गये हैं।

193. तुम्हें जितने राजाओं को दिखाया, वे सभी शत्रु-मित्र होने पर भी प्रिय भाव से बैठे हैं।

194. लाख राजाओं की जितनी सेना है, सभी नक्षत्र-राशि की तरह दिखाई देती है।

195. उसी महासभा में तुम चन्द्रमा की तरह उदित हो, जिस कारण अन्धकार का दर्प समाप्त हो गया है।

196-197. अगस्त्य ने कहा कि हे मनु पुरुष ! केशिनी ने द्रौपदी को विशेष रूप में समझाया। द्रौपदी ने कहा कि अब तक मैंने राजाओं का नाम सुना है। अब हे केशिनी! विभिन्न राज्य और मण्डलों का नाम बताओ।

198. केशिनी ने कहा कि अब मैं बारह राष्ट्र और छत्तीस मण्डलों का विस्तृत वर्णन करूँगी।

199-211. कलिंग, उड़ंग, बंग, तेलंग, खांजण, त्रिहुत, भोट, घोट, कर्नाट, मन्दार, काउंरी, डाहाल, बेलाल, खेचर, खिनीखिना (किष्किन्धा), मालव, गुर्जर, मद्य, मत्स्य, कश्मीर, दरद, कौशिक, निर्झर, कुब्ज, मान्धार, कन्नौज, क्षेत्र, विक्षेत्र, पारिजातक, भोपाल, मल्लार, नेपाल, वारस्वति, वृन्दारक, लाट, केदार, पद्मदल, करंच, नील, अनिल, बंगाल, चीर, महाचीर, कंध, चुहाण, विन्ध्यमाल, गौड़, गोविन्द, चुड़ंग, कांचीकावेरी, कंचन, नैपध, म्लेच्छ, मंवेश्वर, काशी, पद्मदल, हिरण्य, शाखा मण्डल, उदय मण्डल, भापा मण्डल, चोल मण्डल, पाणि मण्डल, उड़ंग मण्डल, भास्कर मण्डल, उदय मण्डल, नक्षत्र मण्डल, चन्द्र मण्डल, माहेन्द्र मण्डल, सुवेल मण्डल, विष्णु मण्डल, रुद्र मण्डल, जानु मण्डल, भानु मण्डल, ब्रह्मा मण्डल, करस्थल मण्डल, भद्र मण्डल, यम मण्डल, कौस्तुभ मण्डल, कनक मण्डल, कौशल मण्डल, पद्म मण्डल, वारुणा मण्डल, इन्द्र मण्डल, वज्रगिरि मण्डल, शोणित मण्डल, मेरु मण्डल, मलय मण्डल, मन्दार मण्डल, सुर मण्डल, योजन मण्डल आदि। इस प्रकार छत्तीस मण्डलों का नाम लेकर केशिनी ने द्रौपदी को समझाया जिसे सुनकर द्रौपदी आनन्दित हुई।

212-214. अंग राष्ट्र, सोम राष्ट्र, भैरव राष्ट्र, अयोध्या राष्ट्र, सिहमाल राष्ट्र, चित्र राष्ट्र, ओड्र राष्ट्र, अनुपम राष्ट्र, जय राष्ट्र, गंग राष्ट्र, महाराष्ट्र, सौराष्ट्र इसी प्रकार बारह राष्ट्रों के नाम केशिनी ने

बताये जिन्हें सुनकर महादेवी सन्तुष्ट हुई।

215-221. जाज नगर, भैरव नगर, उज्जैनी नगर, कांचीपुर नगर, विजया नगर, कामपुर नगर, कांचीपुरी, यमुनापुरी, मधुरापुर, जेनावली, मात्यवन्त, जयन्ता नगर, वारुणावन्त नगर, बसन्तपुर, शिव नगर, हस्तिनापुर, एकचक्रा, विन्ध्यमाली नगर, पदूम दल नगर, विष्णु नगर, कंचन पुर नगर, काशी पुर, ब्रह्म पुर नगर, जम्बू नगर, अनुभव नगर, खड्ग पुर, माहेन्द्र नगर, भोज कुण्ड नगर, भीमा डर नगर, हिरण नगर, कौशिक नगर, वेद नगर, पाटुलि नगर, मालती नगर, गौरी नगरी, रुद्र नगर, आदि नगरों के राजा तुम्हारी आशा में यहाँ आये हैं।

222-223. भरत खण्ड, लवण खण्ड, प्रचण्ड खण्ड, उदय खण्ड, कौस्तुभ खण्ड, काशी खण्ड, कृतान्तक खण्ड, कौशिक खण्ड, मण्डल खण्ड के राजाओं का हे द्रुपद आत्मजा ! मैंने वर्णन किया।

224-225. ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र चारों जातियों, दैत्य, दानव, राक्षस, पिशाच, असुर, यक्ष, किन्नर, हरिवल, यवनबल, कृतान्तक बल, वृन्दारक बल, सोमवंश, सूर्यवंश, युदवंशद्व भोजवंश, अन्धक वश, हैहय वंश, चुहाण वंश, वृष्णिक वंश, गोपाल वंश, कुक्कुर वंश, दक्षवंश, चोल चालुक्य, पुलक-, गंग, भोपाल आदि इस प्रकार अठारह वंश हैं। इन अठारह वंशों के भीतर चार कम एक लाख नृपति तुम्हारी आशा से इस सभा में उपस्थित हैं।

230. पृथ्वी पर जितने राजा हैं उनके बारे में संक्षेप करके भी मैं नहीं कह सकती।

231. सूचना रूप मे मैंने इतना वर्णन किया। केवल बड़े-बड़े राजाओं की वात कही।

232. केशिनी ने कहा कि हे स्वामिनी ! तुम्हारे लिए द्रुपद राजा ने सबको निमन्त्रित किया है।

233. राजाओं की भोजन-व्यवस्था के लिए प्रत्येक राजा को सौ-सौ भार खाद्य दिया जा रहा है।

234. भोजन समाप्त करके जब राजा गण आचमन करते हैं, उस समय रत्नपात्रों को जल में फेंक देते हैं।

235. पुनः नये पात्र की व्यवस्था करके राजा गण भोजन करते हैं।

236. लाख राजाओं की इसी प्रकार व्यवस्था है। तुम्हारे लिए राजा विनष्ट हो गया।

237. देवताओं के लिए दुर्लभ और मनुष्यों के लिए अगोचर ऐसा स्वयंवर कभी सुना नहीं गया।

238. प्रत्येक महल सौ कक्षों का है। इस प्रकार दो सौ पचास अरब अतिथिशालाओं का निर्माण हुआ है।

239. गजशाला और अश्वशाला की कोई गणना नहीं कर सकता। अन्नागार और वस्त्रागार से जो जितना माँगता है, उतना दिया जाता है।

240. द्रौपदी ने पूछा, हे केशिनी दासी ! कोटि पद्म, सागर और अक्षौहिणी किसे कहते हैं ?

241. एक पद्म और एक सागर कितना होता है। हे सखि ! संक्षेप में मुझे बताओ।

242. केशिनी दासी प्रणिपत्य होकर कहती है—हे स्वामिनी ! अक्षौहिणी कितनी होती है सुनो।

243-248 पैंसठ सहस्र रथ, पैंसठ सहस्र गज, पैंसठ सहस्र अश्व, पैंसठ सहस्र पदाति, पैंसठ सहस्र छत्र, पैंसठ सहस्र आलम्बविलम्ब, पैंसठ सहस्र उदण्ड, पैंसठ सहस्र मयूर पंखे, पैंसठ सहस्र सूपकार, पैंसठ सहस्र दासियाँ, पैंसठ सहस्र वाद्यकार पैंसठ सहस्र मुखवाद्य, पैसठ सहस्र बैलगाड़ी, इतनी सेना को अहिव्रत कहते हैं।

249-253. दस अहिव्रत से एक पाटल, दस पाटल से एक सेना मुख, दस सेना मुख से एक जलधारा दस जलधारा, से एक वारुणि, दस वारूणि से एक नल, दस नल से एक ऊर्ध्व, दस ऊर्ध्व से एक वृन्द, दस वृन्द से एक नक्षत्र, दस दक्षत्र से एक मनुमुख, दस मनुमुख से एक अक्षौहिणी होता है।

254-255. पुनः केशिनी ने कहा कि हे स्वामिनी ! यदि तुम न जानकर पद्म की बात पूछती हो, तो मैं उसे कहती हूँ। सावधान होकर सुनो।

256-267. दस गुणे दस होने पर सौ होता है। दस सौ का एक हजार, दस सहस्र का एक अयुत, दस अयुत से एक लक्ष, दस लक्ष से एक कोटि, दस कोटि से एक अर्बुद, दस अर्बुद से एक मेवच्छ, दस मेवच्छ से एक वृन्द, दस वृन्द से एक खर्व, दस खर्व से एक निखर्व, दस निखर्व से एक शंख, दस शंख से

एक पद्म, दस पद्म से एक सागर, दस सागर से एक अनन्त, दस अनन्त से एक परार्ध, दस परार्ध से एक परायुध, दस परायुध से एक अक्षौहिणी, दस अक्षौहिणी से एक विक्षौहिणी, दस विक्षौहिणी से एक अंकुश, दस अंकुश से एक अनिल, दस अनिल से एक काठी, दस काठी से एक विकाठी होता है।

268-269. इसी प्रकार से लोग तुम्हारे स्वयंवर में उपस्थित हैं। केशिनी ने कहा कि हे द्रौपदी ! इस प्रकार सभी सेना का आकलन किया जाता है।

270. केशिनी ने निर्धारित करके कहा। पांचाली सुनकर आश्चर्यचकित हुई।

271-272. अगस्त्य के चरणों को प्रणाम करके विलंका अधिपति ने पूछा—हे मुनि ! विस्तारपूर्वक कथा कहो जिससे पातक दूर होता है।

273. केशिनी ने द्रौपदी को सभी राजाओं को पहचनवाया। किस प्रकार उसने सभी राजा एवं राज्यों का नाम जाना ?

274. हे महामुनि ! यह बात मुझे संशयपूर्ण लग रही है कि केशिनी मानव योनि की है।

275. अगस्त्य कहते हैं कि हे मनु धार्मिक ! तुम इसे जानने के योग्य हो।

276 अगस्त्य उस पूर्व कथा को बता रहे हैं जिससे केशिनी महाज्ञाता हुई।

277. आकाशगंगा में नारद मुनि के तप-स्नान के समय यह जाकर उनसे मिली।

278 अत्यन्त प्रार्थना के साथ वह दण्डवत् सो गयी। ऋषि ने पूछा कि तुम्हारा क्या कार्य है, बताओ ?

279. केशिनी ने कहा कि तुम तो सर्वज्ञ हो। तुम्हारे सामने मैं क्या कहूँगी ?

280. हे मुनियर ! मुझ पर कृपा करें जिससे तुम्हारी कृपा से मुझे सब गत-आगत विदित हो।

281. यह सुनकर मुनि ने झोले से अंजन निकालकर दिया। कहा कि इसे आँख में लगाने से तुम्हें सब कुछ दृश्यमान होगा।

282. इसके बाद मन्त्र सारस्वत पढ़ा। कहा कि इसे पढ़कर देखने पर तुम्हें तीनों भुवन दिखाई पड़ेंगे।

283. उस मन्त्रित अंजन को केशिनी ने आँख में लगाया जिससे उसे सब कुछ दृश्यमान हुआ।

284. उसी से वह द्रौपदी को सबको पहचनवाने में समर्थ हुई। हे राजा ! केशिनी का ऐसा चरित्र सुना तो ?

285. मनु ने अगस्त्य से पूछा कि इसके बाद लक्ष्य-विधान कैसे हुआ ?

286. द्रौपदी ने कहा कि मेरे मन्द बुद्धि भाइयों ने अकारण क्यों इतने राजाओं को आमन्त्रित किया ?

287. इतने बड़े समारोह के साथ मेरे स्वयंवर की व्यवस्था की। इस सभा में मेरा उपयुक्त वर कौन है ?

288. केशिनी ने कहा, मैं सच्ची बात बता रही हूँ कि मैं निश्चित रूप से नहीं जानती कि तुम्हारा वर कौन है ?

289. राजा की दृढ़ प्रतिज्ञा है कि जो राधाचक्र महालक्ष्य का भेदन करेगा, वही तुम्हारा वर होगा।

290. यहाँ से तुम ध्यान रखना कि जो लक्ष्य भेदेगा, तुम उसी की मनोहारिणी होगी।

291. केशिनी ने स्वयंवर की कथा संक्षेप में बताकर द्रौपदी को मंच पर बैठाया।

292. धृष्टद्युम्न हाथ जोड़कर कहता है कि हे राजागण ! सावधान होकर सुनें।

293. आप सबने कन्या के रूप और गुण का निरीक्षण किया। अब जो लक्ष्य-भेद करेगा, वही कन्या को प्राप्त कर सकेगा।

294. इसी बीच बलराम और कृष्ण शुभ योग में छप्पन कोटि यदुवंशियों को लेकर उपस्थित हुए।

295. उग्रसेन, नन्द और उपनन्द के साथ जगमोहन इस कौतूहल को देखने के लिए उपस्थित हुए।

296. उत्सव स्थान पर तीर्थयात्रा की तरह देव गण कौतूहल पूर्वक उपस्थित हुए।

297. नारायण पृथ्वी के अलंकार स्वरूप हैं। शरीर के बिना अलंकार कैसे शोभित होगा ?

298. सकल संसार के नारायण ही स्वामी हैं। वासुदेव के आते ही सभा शोभित हुई।

299. दानव-सेनायें भयभीत होती हैं—ऐसा जानकर स्वामी ने नन्दीघोष रथ को आकाश में रखवा दिया।

300. तालध्वज रथ द्वारा श्री बलराम रेवती के साथ उपस्थित हुए।

301. नारायण को देखकर इन्द्र विद्याधरों को लेकर उपस्थित हुए।

302. श्री हस्त में वज्र लेकर और ऐरावत पर आरूढ़ होकर आ रहे हैं। हाथी के चारों ओर चौंसठ कोटि विद्याधरी सेवा कर रही हैं।

303. देवगण चारों ओर छत्र लेकर सेवा कर रहे हैं। इन्द्र और गोविन्द शून्य आकाश में एक साथ रह रहे हैं।

304. इन्द्र देव जब चले आये, तब शिव रुद्रों को लेकर प्रविष्ट हुए।

305 वृषभ आरोहण करके गणपति, कार्तिकेश्वर और चौदह कोटि शिवगणों के साथ महेश्वर आये।

306. हृदय में पार्वती, सिर पर गंगा और चन्द्र को धारण करने वाले को देखकर बलराम और कृष्ण प्रणिपत्य हुए।

307-308 मरुत्, वैश्वानर, देवगुरु बृहस्पति, भृगु, कश्यप, अंगिरा, ब्रह्मयती नारद, वरुण, नैऋत, कुबेर, चन्द्र, सूर्य द्रुपद के राज्य के आकाश में उपस्थित हुए।

309. देवगण आकाश में आकर उपस्थित हुए। इस स्वयंवर को देखकर नारायण ने प्रशंसा की।

310. आकाश से पुष्पवृष्टि होती है। सभा में शीतल जल छिड़का जा रहा है।

311. मलयानिल के आने से जैसे सुगन्धि मे परिवेश आमोदित हो जाता है, उसी प्रकार सभी देवराज के आने से अनुभव करते हैं।

312. पुष्पवृष्टि के बाद कनकवृष्टि हुई। बारह योजन तक लोग आनन्द से उसे बटोर रहे हैं।

313. राजा गण द्रुपद की प्रशंसा करके साधु-साधु कहते हैं। तुम्हारी कृपा से ही सभी लोग आनन्दित हुए।

314. ब्रह्मा ब्रह्माण्ड से उतरकर यह उत्सव देख रहे हैं। वसिष्ठ महामुनि भी स्वयंवर स्थान में प्रविष्ट हुए।

315. साथ में नौ हजार शिष्य है। सभी राजागण अपने स्थान छोड़कर उनके चरणों में नत होते हैं।

316. दुर्वासा दस हजार शिष्यों को लेकर महासभा के बीच उपस्थित हुए।

317. पौलस्त्य, विश्रवा, अगस्त्य महामुनि आदि देवर्षि और ब्रह्मर्षिगण आसन पर विराजमान हुए।

318. सुदेव, मार्कण्डेय, उद्दालक आदि के साथ उनके दस हजार शिष्य भी उपस्थित हैं।

319. गौतम, उत्तंग और भारद्वाज के साथ हजार-हजार शिष्य आये हुए हैं।

320. सनक, सनातन, सनन्दन और सनत्कुमार आदि ब्रह्मर्षि चालीस हजार शिष्यों को लेकर सभा में उपस्थित हुए।

321. माण्डव्य, विभाण्डक, ऋष्यशृंग दस हजार शिष्यों के साथ उपस्थित हुए।

322 सुमन्तक, वाल्मीकि, लोमस और सत्यतपा तीस हजार शिष्यों को लेकर उपस्थित हुए।

323. शान्तनु, पराशर और विश्वामित्र के साथ पन्द्रह हजार शिष्य उपस्थित हुए।

324. साठ हजार शिष्यों को लेकर वेदव्यास, शुक, जैमिनी, वैशम्पायन के साथ उपस्थित हुए।

325 धौम्य पुरोहित लाख ब्राह्मणों को लेकर विश्वदेवों के साथ आकाश से उतरे।

326 द्रुपद राजा ऋषियों को देखकर चरणोदक लेकर पाद- पूजा करता है।

327. सबको एक-एक करके कृष्णसार मृग की छाल भेंट की। यह सब द्रुपदेश्वर के द्वारा सम्पादित हुआ।

328. राजा द्रुपद प्रणिपत्य होकर लेट गया। ऋषियों ने कहा कि तुम्हारी मनोवांछा पूरी हो।

329. हाथ में कुशा लेकर राजा द्रुपद ने ब्राह्मणों को चार भण्डार धन दान दिया।

330. सभा के ईशान कोण में गो-दोहन हो रहा है। देवी को बलिभोज एवं देवों को शीतल भोज्य प्रदान किया जा रहा है।

331. मनु ने अगस्त्य से पूछा कि कितनी गायें दुही गयीं? विशेष रूप से बतायें।

332-335. हजार गायों का एक गोष्ठ, शत गोष्ठों का एक पल्ली, शत पल्ली का एक नउड़ी, शत नउड़ी का एक महाखुर, शत महाखुर का एह महाभोई होता है। इस प्रकार बारह महाभोई में जितनी गायें हो सकती हैं, उतनी ही गायें द्रुपद ने आपद शान्ति के लिए दुहवाईं।

336. वहाँ जंगल में एक दूध की नदी बहने लगी। बन

के जीव-जन्तु सुखपूर्वक पान करते हैं।

337. अगस्त्य कहते हैं कि हे आदि ब्रह्मा ! द्रौपदी के स्वयंवर की ऐसी महिमा है।

338. दूर तक विस्तृत एक लाख लिंगों को पंचामृत से स्नान कराया जा रहा है।

339. भद्रकाली को अनेक शीतल भोज्य-द्रव्य के साथ लाख-लाख भैंसा, भेड़ा और बकरे की बलि दी जा रही है।

340. ऋक्, यजु, साम और अथर्व वेदी लाख-लाख ब्राह्मणों का वरण किया गया।

341. महायज्ञशाला में हवि की आहुति दी जा रही है। महामन्त्र के द्वारा देवी को स्वाहा-स्वधा दिया जा रहा है।

342. अनेक विद्याधरियाँ नृत्य गीत करती हैं। चारणपुत्र मंगल गान कर रहे हैं।

343-344. ज्योतिषीगण, रवि, सोम, मंगल, बुद्ध, वृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु-केतु आदि ग्रहों की स्थिति और तिथि वार नक्षत्र योग आदि बताते हैं और ऋषि पुत्र उच्च स्वर में मंगल पाठ करते हैं।

345. द्रुपद के राज्य में इस प्रकार की सम्पदा है। सबको तृप्त करने के लिए अविरत दान दिया जा रहा है।

346. लक्ष्यस्थल के चारों ओर धन रत्न और देवांगवसन आदि उपहार सामग्री रखी गयी।

347. राजाओं को शत-शत मणियाँ और पृथ्वी को आलोकित करने योग्य बत्तियाँ दी गयीं।

348. धनुष और तरकस के साथ हीरे से जड़ित सो दीप चारों ओर जल रहे हैं।

349. ओढ़नी, झीने रेशमी वस्त्र के ढेर के चारों ओर शत-शत रत्नदीप जल रहे हैं।

350. पुनः असिपत्र और ढाल स्थापित की गयीं। उसके चारों और मुक्ता के दीप प्रज्वलित हो रहे हैं।

351. गदा और भालों के ढेर के चारों ओर नीलम के शत-शत दीप जल रहे हैं।

352. मर्कतजड़ित सुवर्ण के दीप-स्तम्भों पर शत-शत दीप राजाओं के सामने प्रज्वलित हैं।

353. रेशमी चाँदनी के ऊपर कनक पुष्प माला और पुंज-पुंज अष्टरत्न खचित माणिक्य सुसज्जित हैं।

354. इसी प्रकार लाखों राजाओं को वैभव से सम्पादित किया गया है। उसकी तुलना कुबेर भुवन से भी नहीं की जा सकती।

355. अमरलोक के साथ इसकी तुलना की जा सकती है। किन्तु यह अमरलोक के पुनर्जन्म की तरह होने के कारण अकल्पित है।

356-357. जगन्नाथ ने इस प्रकार की समारोहपूर्ण सभा को देखकर बलराम से पूछा कि द्रुपद ने जिस दुर्लभ लक्ष्य का निर्माण किया है, उसे भेदने में कौन समर्थ है?

358-359. बलराम ने कहा कि हे भाई जनार्दन ! राधेय कर्ण दृष्टिभेदी है। निश्चय ही वह लक्ष्य-भेद करेगा और द्रौपदी को मानगोविन्द को प्रदान करेगा।

360. यह दूसरों को अशक्य और अगोचर दिखाई देता है। मेरे मन में ऐसा ही विचार आ रहा है।

361. संकर्षण के ऐसा विचारपूर्वक कहने पर श्रीकृष्ण संत्रस्त हो गये।

362. द्रुपद राजा ने एक व्यास कूट लक्ष्य का निर्माण किया है। उसके नीचे एक तीर्थजल घट की स्थापना की है।

363. नीचे दृष्टि करने पर मीन की छाया दिखाई देती है। बिना देखे क्या कर्ण दृष्टि-भेद कर सकता है ?

364. बलराम भूत-भविष्य जानने वाले हैं। उन्होंने क्या बिना सोचे-समझे ही ऐसी बात कही।

365. बलराम के साथ बात करते हुए नारायण मन में चिन्ता करते हैं।

366. स्वामी देव दामोदर ने सुदर्शन चक्र को आज्ञा दी कि तुम आकाश में चार ताल ऊँचाई पर घूमते रहोगे।

367-368. भीष्म, द्रोण, कर्ण, शल्य, अश्वत्थामा, जयद्रथ, कृतवर्मा आदि सप्तरथी और भूरिश्रवा महावीर जितने बाण चलायेंगे वे सब तुमसे टकराकर भूमि पर गिर पड़ेंगे।

369. नारायण की आज्ञा से सुदर्शन चक्र जाकर चार ताल ऊँचे आकाश में रहा।

370. देव, दानव और मानव आदि किसी को भी यह

चक्रकूट दिखाई नहीं देता है।

371. श्रीहरि की चक्रकूट माया-रचना के कारण ब्रह्मा ने उनका नाम चक्रकूट हरि रखा।

372. देव दामोदर ने ऐसी माया की कि वह बलराम को भी गोचर नहीं हुई।

373. आकाश में जगतपिता ब्रह्मा ने और पृथ्वी पर भूत-भविष्य ज्ञाता व्यास ने देखा।

374. स्वयं दामोदर ही जानते हैं। इन तीनों के अतिरिक्त चौथा कोई नहीं जानता है।

375 ब्रह्मा ने देखकर अनेकशः स्तुति की। मायाधर जानकर उन्होने अनेक विनती की।

376 हे मायाधर, माया मेखली, चक्रकूट, वनमाली, सफल संसार जन-बन्धु, प्रलयान्तक सिन्धु, अनन्तकाम रूपी, सर्व तनुव्यापी माधव, सर्वात्मा, योग मन्त्र ब्रह्मा, अनन्त श्रीरंगी, व्याकूट-भंगी, सकल जन पालनकर्ता, कृतान्तक-रक्षक, नीलेन्दु पुष्प वर्ण, महापानक दलन, भक्तवत्सल, अनन्त कलारूप, भारती बल्लभ, शरण रक्षण वासुदेव ! तुम्हारी जय हो। हे माधव ! शुद्रमुनि सारलादास शत-सहस्र प्रणाम करके तुम्हारे चरणों में शरण लेता है।

लक्ष्य-भेदन

1. वैवस्वत मनु ने अगस्त्य से कहा कि इस लक्ष्य का चरित्र मुझे संक्षेप में बताओ।
2. अगस्त्य ने कहा कि हे राजन् ! द्रुपद के लक्ष्य-विधान को कहा नहीं जा सकता।
3. धृष्टद्युम्न सभा के बीच में खड़े होकर बोला कि जो लक्ष्य-भेदन कर सके, वह आवे।
4. हे राजन् ! मैंने जिसके लिए स्वयंवर रचा, उसे आप लोग सार्थक बनावें।

5-7. राजधिराज मान चक्रवर्ती, लक्ष राजाओं के मुकुटमणि, सोमवंश अधिपति, गुणी, विद्वान्, वक्ता, समर्थ, पराक्रमी, धन में गरीयान, तेज में बलवान, वंश में निष्कलंक, वेदमन्त्र में प्रसिद्ध, संग्राम में इच्छाजित निष्कलंक योद्धा ! तुम आओ।

8. धृष्टद्युम्न की सम्मानसूचक बात को सुनकर दुर्योधन ने कर्ण की ओर देखा।
9. हे मित्र क्यों चुप हो। महालक्ष्य भेदकर द्रौपदी को प्राप्त करें।
10. कर्ण ने कहा कि तुम अत्यन्त गर्व के कारण ही मान गोविन्द हो। द्रुपद ने तुम राजागणों को लक्ष्य-भेदन करने के लिए कहा है।
11. तुम लोगों का उसने द्रौपदी के लिए वरण किया है। मैं बिना निमन्त्रण क्यों बीच में घुसूँगा ?
12. तुम राजा गण आगे लक्ष्य-भेदन करो। तुम लोगों के भेदन न कर पाने के बाद में मैं लक्ष्य-भेदन करूँगा !
13. कर सको या न कर सको किन्तु युक्तितः तुम्हारा भेदना उचित है। तुम लोगों के भेदन न करने के पूर्व मे कैसे भेद सकूँगा ?
14. सोमवंश और सूर्यवंश पृथ्वी के मूल वंश हैं। अन्य राजागण तुम्हारी भुजाओं के नीचे हैं।
15. कर्ण की बात सुनकर राजा मान चक्रवर्ती शीघ्र आसन से उतरा।
16. धृतराष्ट्र का वह पुत्र [illegible] की तरह दिखाई देता है।
17. चलते समय वह पराक्रमी सिंह की तरह शोभित हो रहा है। विचित्र शुद्धमणि गजमुक्ता की तरह जगमगा रहा है।
18. सिर पर कोटि माणिक्य खचित अनर्घ्य मणिमुकुट और पांव में कोटि सौभाग्यसूचक कमलिनी मण्डित है।
19. चलते समय वृन्तहीन कमल खिलता है। वह दुर्योधन चौरासी गुण-लक्ष्य युक्त है।
20. प्रत्यक्ष पन्नग नारायण मूर्ति को देखकर द्रौपदी केशिनी से पूछती है।
21. हे सखी ! किस देश का राजा है ? लगता है अमरलोक छोड़कर इन्द्र ही आ गये हैं।
22. कुंकुम, चन्दन लेपित करके मंगल-विवाह सूत्र धारण किये हुए यह विवाहित जान पड़ता है।
23. केशिनी ने कहा कि इसकी भार्या भानुमती है। प्रति आठवें दिन यह उससे विवाह करता है।
24. यह पन्नग नारायण रूपी है। माता-पिता आदि किसी को नमस्कार नहीं करता है।
25. इसका शरीर अत्यन्त सुकुमार है। इसका स्वरूप तरुण

आदित्य की तरह दिखाई देता है।

26. इन्द्रप्रस्थ, जयन्ता, वारुणा इन पाँचों कटकों का यह राजा है। यह जम्बूद्वीप को धारण करने वाला है।

27. जातुगृह का निर्माण करके इसने पाण्डवों का विनाश किया। कूट कपट में इसके समान कोई राजा नहीं है।

28. द्रौपदी ने कहा कि इसकी उम्र अभी कम है। इसी वय में वह हत्यारा, विवादी और महापापी हुआ।

29. पत्थर के घर में बन्द करके गान्धारसेन के वंश का नाश किया। जातुगृह की रचना करके इसने पाण्डवों का नाश किया।

30. युद्ध में जीतने से ही क्षत्रिय की महिमा जानी जाती है। इसने अकारण ही विश्वासघातपूर्वक सहोदरों को मारा।

31. इसके समान कोई दुष्ट और अत्याचारी नहीं है। इतने पापिष्ठ को क्यों सभा में बैठाया गया।

32-33. विष, औषधि और मन्त्र के कौशल से जो प्राणियों का नाश करता है। उसका मुख देखने से रौरव नरक में जाना पड़ता है और पुनः जन्म नहीं होता।

34. इस प्रकार के पापिष्ठ यदि लक्ष्य-भेद कर सकेंगे तो वेद शास्त्र आदि सब मिथ्या हो जायेंगे।

35. द्रौपदी और कंशिनी के इस प्रकार सोचते समय दुर्योधन बड़े रौब के साथ लक्ष्य स्थान पर पहुँचा।

36. धृष्टद्युम्न की ओर देखकर पूछता है कि लक्ष्य-भेदन का विधान क्या है ?

37. धृष्टद्युम्न ने कहा, हे कुरुपति ! लक्ष्य-भेदन की प्रणाली सुनो।

38. सात ताड़ ऊँचाई पर कनक मीन है। उसके नीचे राधाचक्र अनवरत घूम रहा है।

39. एक ताड़ ऊपर अपूर्व पटरा है। नीचे एक जलघट रखा है।

40. ऊपर पटरे पर एक लक्षभार की एक धनुष रखा है। पटरे पर चढ़कर उस धनुष को उठाना होगा।

41. ऊपर मुट्ठी करके नीचे जल-घट को देखना होगा।

42. आकर्ण खींचकर वाण चलाना होगा जिससे वाण मछली की बायीं आँख को भेद दे।

43. वाण दाहिनी आँख के रास्ते से निकल जाना चाहिए। तभी हे राजा ! मेरी द्रौपदी को प्राप्त कर सकोगे।

44. ऐसी बात सुनकर कुरुपति महालक्ष्य पटरे पर शीघ्र ही चढ़ गया।

45. मानगोविन्द ने द्रौपदी के मुँह को देखा। उसे देखकर वह मदन-विह्वल हो गया और आँख रहते ही अन्धे जैसा हो गया।

46. दिन में ही उसे कुछ नहीं दिखाई दिया। लक्ष्य के नीचे राजा धनुष को टटोलता है।

47. धनुष समझकर हाथ बढ़ाया किन्तु हाथ जलघट में चला गया।

48. श्रीखण्डी और धृष्टद्युम्न ने उपहास करके भागो-भागो कहकर उसे ढकेल दिया।

49. धृतराष्ट्र की तरह तुम्हारी आँख हो गयी है ? आँख रहते भी तुम अन्धे हो गये हो।

50. यदि तुम धनुष और जलघट में अन्तर नहीं कर पाये तो तुम लक्ष्य कैसे भेद सकोगे ? लौट जाओ।

51. श्रीखण्डी ने उसे बहुत अपमानित किया। कहा कि वरभेष होकर तुम संसार जन को ठग रहे हो।

52. मानगोविन्द लज्जित होकर बैठ गया। जरासन्ध रास्ता छोड़ो कहकर बाहर आया।

53. लक्ष्य के नीचे मगधेश्वर खड़ा हुआ। अपने बायें हाथ में लक्ष-बल धनुष को धारण किया।

54. धनुष की डोरी को पकड़कर उसे चढ़ा न पाया। सभी राजा करताली देकर हँसने लगे।

55. लज्जा से वह मगधेश्वर लौट आया। मुकुट उतारकर सभा में बैठा।

56. उसका अपमान देखकर कुमार शिशुपाल तत्काल बाहर आया।

57. प्रतिज्ञा करके दमघोष के पुत्र शिशुपाल ने धनुष को खींचकर पकड़ा।

58. दोनों हाथों से जब धनुष को जोर से उठाया तो उसकी नाक से खून बहने लगा।

59. क्रोध से श्रीखण्डी ने उसे पीछे से पकड़ा। गर्दन पर धक्का देकर उसे सभा में ले आया।

60. शिशुपाल का अपमान देखकर रुक्मण रे-रे करके तत्क्षण सभा से बाहर आया।

61. खींचकर उसने धनुष को पकड़ा किन्तु भूमि से उसे

उठा न सका।

62. श्रीखण्डी ने अपमानित करके भाग जाने के लिए कहा। श्रीखण्डी के ढकेलने से वह उछल पड़ा।

63. रुक्मण महाक्षत्रिय लज्जित होकर सभा में बैठा। इसके बाद निर्झर गणपति सभा से बाहर आया।

64. लक्ष्य के नीचे वह प्रविष्ट हुआ किन्तु धनुप उठाकर डोरी नहीं चढ़ा सका।

65. लक्ष्य के नीचे वह अत्यन्त लज्जित होकर वही खड़ा रहा। सभा में न आ सका।

66. श्रीखण्डी ने अंकवार में लेकर उसे सभा में पहुँचाया।

67. काशी का राजा काशीश्वर लक्ष्य-भेदन के लिए सभा से निकला।

68. दौड़कर उसने धनुष को पकडा किन्तु हटा न सकने के कारण अपमानित होकर बेठ गया।

69 श्रीखण्डी ने उसे शीघ्र पकड़ा और गले पर हाथ रखकर सभा मे छोड़ा।

70-71 काशीश्वर के अपमान के बाद कलिंगसेन राजा सभा से बाहर आया और धनुप न हटा सका। द्रुपद-पुत्र ने उसे भगा दिया।

72 कलिंगसेन के अपमान के बाद राजा सवर प्रतिज्ञा करके सभा से निकला।

73. महाप्रतापी वह बलवान नृपति अमुरेश्वर महाराजा संग्राम में समर्थ है।

74. लक्ष्य के नीचे जाकर खड़ा हुआ। प्रतिज्ञानुसार धनुप को तानता है।

75. उसका पराक्रम शत सिंह के समान है। संग्राम मे पृथ्वी पर कोई राजा उसके समकक्ष नहीं है।

76. खींचकर उस नृपमणि ने धनुष को पकड़ा। टंकार नाद को सुनकर आकाश कॉप गया।

77. हाथ में धनुष लेकर वह नृपमणि खड़ा हुआ। क्रोध में वह मत्त नाग की तरह गर्जन करता है।

78. डोरी चढ़ाने के लिए दोनों हाथ मे धनुप उठाया। आकर्पण के समय उसके मुख से खून निकल पड़ा।

79. लज्जित होकर वह असुराधिपति सभा में बैठा। बज्रनाभ महाक्षत्रिय सभा से बाहर आया।

80. वह महाराजा लक्ष्य के समीप खड़ा हुआ। धनुप राहु के तेज के समान चमकता है।

81. अपने भुजबल से धनुष को पकड़कर उठा न सका। धनुष ने वज्रनाभ के वक्षस्थल को दबा दिया।

82. वह असुराधिपति उत्तान होकर गिर पड़ा। श्रीखण्डी ने बाँह पकड़कर उठाया।

83 वज्रनाभ और सबर जब अपमानित हुए, तब कोई असुर राजा सभा से बाहर नहीं आया।

84 अनेक देश के राजा आकर भी शिवधनु को नहीं उठा सके।

85. वसुधा का नन्दन नारकानन्द रे-रेकार ध्वनि करके सभा से बाहर आया।

86 लक्ष्य के नीचे जाकर पहुंचा। बाये हाथ में धनुष को पकड़कर ऊपर उठाया।

87. धनुप की नोक पर पॉव रखकर शिवधनु पर डोरी न चढ़ा सका।

88 वह नारकासुर लोभ से धनुष नहीं छोड़ रहा था। श्रीखण्डी ने कहा कि अब वहाँ रहकर क्या कर रहे हो?

89. धृष्टद्युम्न ने कहा कि सभा में भाग जाओ। लज्जित होकर वह सभा में लौट आया।

90. सभी राजा सभा में सिर झुकाकार बैठ गये। इसे देखकर राजा द्रुपद विषण्ण हुआ।

91. सभा में सबको सान्त्वना देते हैं। हे राजागण ! अभिमान छोड़कर समाधान की ओर चलें।

92 द्रुपद ने कहा कि क्षत्रियों का यही विधान है। इस बात पर कोई दुःखी न हो।

93 जो समर्थ हो वही लक्ष्य-भेद करे। अब तो दोनों कुल के लिए लज्जा की बात हो रही है।

94. राजागण जब मौन हो गये, तब द्रुपद ने योद्धा और अमात्यों का आह्वान किया।

95. कौन क्षत्रिय लक्ष्य-भेदन करने में समर्थ है ? मैं उसे ही कन्या प्रदान करूँगा। यही मेरी प्रतिज्ञा है।

96 द्रुपद की बात सुनकर मानचक्रवर्ती कर्ण के मुख की ओर देखने लगा।

97. हे मित्र ! क्यों देर कर रहे हो ? यह बात आदित्य-सुत ने सुनी।

98. वीर कर्ण सभा से बाहर आया जो धार्मिक, विवेकी, सुन्दर और लोहित वर्ण है।

99. दोनों कानों में अमृत कुण्डल शोभायमान हैं। लगता है इस संसार में बाल-सूर्य उदित हुआ।

100. सिर पर मणि मुकुट है और वह सिंह गति से चल रहा है। उसे देखकर द्रौपदी ने पूछा कि यह किस देश का राजा है।

101-103. केशिनी ने कहा कि हे पांचाली ! सूर्य ने कुन्ती को वीर्य प्रदान किया। आदित्य के वीर्य से उत्पन्न यह महाबली कर्ण है। अविवाहित काल में भोजपुत्री ने विद्या की परीक्षा की। देवी ने लज्जा के कारण आदित्य के वीर्य को धारण नहीं किया। कान के रास्ते से आशु पुत्र पैदा हुआ।

104. कान से उत्पन्न होने के कारण इसका नाम कर्ण हुआ। शतभार सुवर्ण यह नित्य दान करता है।

105. दबावपूर्वक चलने से पृथ्वी के मुख से खून बहता है। भय के कारण पृथ्वी प्रतिदिन एक शत भार सुवर्ण धूल देती है।

106. यह दान में और मान में शूरवीर तथा बल में बलवान है। यह संग्राम में समर्थ और दुर्योधन का मित्र है।

107. वीर कर्ण लक्ष्य के नीचे जाकर खड़ा हुआ। बलराम ने कहा हे जनार्दन ! देखो।

108. इसी समय वीर कर्ण लक्ष्य-भेद करेगा और द्रौपदी को लेकर मानगोविन्द लौटेगा।

109. गोविन्द ने कहा कि तुम महाब्रह्मज्ञानी हो। तुम्हारी बात क्या असत्य होगी ?

110-111. इसी बीच कर्ण ने बायें हाथ से धनुष को पकड़ा। धनुष की कोटि पर पाँव रखकर दबाया और सहज रूप में डोरी चढ़ा दी।

112. डोरी चढ़ाकर धनुष को खींचा। साधु-साधु कर्ण का स्वर सभा में गूँज गया।

113. धृष्टद्युम्न ने पूर्ववत् लक्ष्य-भेदन का स्वरूप वर्णन किया। कहा कि इस प्रकार लक्ष्य-भेद करने पर मैं चन्द्रमुखी को दूँगा।

119. कुमार की बात सुनकर वीर कर्ण शीघ्र ही लक्ष्य-पटल पर चढ़ा।

120. दोनों धनुष कोटि का आमंत्रण किया। गुण-टंकार से घोर शब्द हुआ जिससे विद्याधर भयभीत हुए।

121. नीचे दृष्टि और ऊपर मुष्टि किये हुए कर्ण की ओर सबकी दृष्टि लगी हुई है।

122. वीर कर्ण ने खींचकर वाण मारा। आकाश में चार ताड़ ऊँचाई पर घूमते हुए चक्र से वाण टकरा गया।

123. लौटकर वाण भूमि पर गिर पड़ा। नहीं हुआ, सभी चिल्लाने लगे।

124. लज्जित होकर कर्ण लौट आया। अब द्रोण महारथी सभा से निकले।

125. प्रतिज्ञापूर्वक भारद्वाज पुत्र ने पिनाकी धनुप को पकड़ा।

126-127. वाण चढ़ाकर पटरे पर चढ़े। नीचे दृष्टि और ऊपर मुष्टि करके द्रोण गुरु ने वाण मारा। सुदर्शन-चक्र से लड़कर वाण गिर पड़ा।

128. सभा में गुरु महात्मा लज्जित हुए। इसके बाद उनका पुत्र अश्वत्थामा सभा से बाहर आया।

129. प्रतिज्ञापूर्वक द्रोण के पुत्र ने गुण टंकार करके ध नुष को पकड़ा।

130. पटरे पर चढ़कर क्रोध से वाण चलाया।

131. चार ताड़ ऊँचे सुदर्शन चक्र से टकराकर दो टुकड़े होकर वाण नीचे गिर पड़ा।

132. लज्जित होकर अश्वत्थामा सभा में बैठा। इसके बाद भीष्म सेनापति बाहर आये।

133-135. गांगेय लक्ष्य के समीप आये। शिवधनु को खींचकर द्रुपद के पुत्र से पूछा कि मैं यदि लक्ष्य-भेद करूँगा तो तुम कन्या दुर्योधन को देना क्योंकि मैंने दारा-संहरण का व्रत लिया है।

136. श्रीखण्डी ने कहा जैसी तुम्हारी इच्छा है। अब तुम्हारा पराक्रम देखूँगा।

137. धनुष लेकर भीष्म ललकार रहे थे। श्रीखण्डी को दखते ही लौट आये।

138. दुर्योधन ने पूछा कि हे तात ! क्यों लौट आये ? भीष्म ने कहा कि मुझे कष्ट हुआ।

139. सभा में महावीर भीष्म चुप होकर बैठे। राजगुरु शल्य सभा से बाहर आये।

140. लक्ष्य के नीचे जाकर प्रकट हुए। बायें हाथ में धनुष लेकर गुण टंकार किया।

141. पटरे पर धनुप लेकर चढ़े। नीचे दृष्टि और ऊपर मुष्टि करके निष्ठापूर्वक वाण मारा।

142. वाण तीन ताड़ ऊँचाई तक पहुँचकर भूमि पर लौटकर गिर पड़ा।

143 राजागण ताली बजाकर हँसने लगे। महारथी शल्य अपमानित होकर बैठे।

144. शल्य राजगुरु के वैठ जाने पर आचार्य कृप आसन से उठे।

145. हटो हटो कहकर धनुप पकडा और पटरे पर चढकर वाण मारा।

146. वाण तीन ताड़ ऊपर जाकर भूमि पर लौट आया।

147 सभी ने देखकर व्यंग्य किया। कृपाचार्य लज्जित होकर लौटे।

148 महाक्षत्रिय चुप होकर बैठे। महारथी भूरिश्रवा सभा से उठे।

149. रे-रेकार करके हाथ में धनुप लेकर पटरे पर बैठे।

151 महाभीष्म मूर्ति होकर वाण चलाया। वाण चार ताड ऊपर जाकर चक्र से टकराकर लौट आया। नहीं हुआ, नहीं हुआ कहकर सभी राजा चिल्लाये। लज्जित होकर भूरिश्रवा आसन पर बैठे।

153-155 दु:शला का पति जयद्रथ आसन से कूदकर लक्ष्य के पास खड़ा हुआ। धनुप पकडकर पट पर उठकर धनुप खींचा। धनुप ने उसके गले का दवा दिया।

156-158. जयद्रथ मुँह के बल गिर पडा। नाक से खून बहने लगा। गिरकर वह अचेत हो गया। धृष्टद्युम्न ने उसके ऊपर से धनुप को हटाया। भाग जा। कहकर श्रीखण्डी ने उसे ढकेल दिया। पुन: थोडी दूर पर मुँह के बल गिर पड़ा।

159-162. कर्नाटक देश के राजा कन्दर्प ने धनुप को खींचा और धनुप उसकी छाती पर गिर पड़ा जिसमे वह अचेत होकर पटरे पर गिर पडा। दौडकर श्रीखण्डी ने धनुप को उठाकर उसको बाहर निकाला।

163-164. इस प्रकार असंख्य राजा लौट आये। लक्ष्य-भेद न कर पाने के कारण अपमानित होकर निस्तब्ध होकर वैठे। लक्ष्य भेदने का किसी ने मन नहीं बढ़ाया।

165 धृष्टद्युम्न ने सभा में प्रविष्ट होकर पूछा, हे राजा गण! क्यों चुप हो गये ?

166. लक्ष्य भेदने के लिए कोई नही आयेगा, जिसके लिए मैने इतनी व्यवस्था की ?

167 सभी आकर अन्त मे निष्फल होते हो। तुम लोग सदा के लिए लज्जित हो गये।

168 पुनः पुन. द्रुपद-पुत्र पूछता है कि लक्ष्य-भेदन करने की किसी की इच्छा नहीं है।

169 लक्ष्य की ओर देखने की किसी की इच्छा नहीं है किन्तु कन्या लेने की सबकी इच्छा है।

170 171 राजाओं ने कहा कि हे श्रीखण्डी ! इस प्रकार लक्ष्य-भेदन देवताओ के लिए भी असम्भव है। कहाँ चक्र है और कहाँ मत्स्य है और उसके बाद भी धनुप एक लाख बल युक्त है।

172 न दिखाई देने वाले को कैसे भेदा जा सकता है ? कैसे-कैसे राजा लौट आये।

173 174 द्रौपदी ने कहा कि हे सखि ! स्वयवर समाप्त हुआ। कोई राजा लक्ष्य भेदने मे समर्थ नहीं हुए। केशिनी ने कहा कि बड़े-बडे राजाओं के असमर्थ होने पर छोटे-छोटे राजागण भय से बाहर नहीं आये।

175 द्रौपदी ने कहा कि जब स्वयवर की व्यवस्था की गयी, उसी समय मैने कहा कि यह लक्ष्य देवताओं के लिए भी अगोचर है।

176 दुष्ट भाइयो की बुद्धि इतनी मन्द है कि लक्ष्य को देवताड के अनुसार सात ताड ऊँचाई पर बनवाया।

177. मानव ताड़ के अनुसार उनचास ताड ऊँचा है। देखने पर आधे आकाश की तरह जान पडता है।

178 चक्र के ऊपर कैसे भेदेगे ? इतनी ऊँचाई तक कैसे दृष्टि जायेगी।

179 मानव ताड़ के अनुसार सात ताड़ होता तो राजा गण भेदन कर पाते।

180-182 देवता ताड़ से सात ऊँचा बनाया। उसके ऊपर एकचक्र रखा। वह चक्र भी स्थिर होकर नहीं रहा। अनवरत कुम्हार के चक्र की तरह घूम रहा है। पुनः इसके बाद कनक मत्स्य को देखो। चक्र के

ऊपर भेदा जा सकता है ?

183-184. ऐसा करके मछली बनाई। उस मछली की देह को लक्ष्य न बनाकर उसकी बायीं आँख को लक्ष्य बनाया। हे सखी ! तुम सोचो कि कितना प्रपंच किया?

185. भूमि पर रहकर वाण संचालन किया जाना चाहिए किन्तु उसने ऐसा न करके एक ताड़ ऊपर एक पटरा रखा।

186. उसके ऊपर चढ़कर धनुष को लेकर नीचे देखने से सिर घूमने लगेगा और गिर पड़ेंगे।

187. जिसका जो धनुष है, उसी पर उसका अभ्यास होता है किन्तु उसे छोड़कर यहाँ लक्ष शक्ति के शिव धनुष को रखा है।

188. इस प्रकार समस्त अशक्य परिस्थितियों में नीचे सिर करके क्या वाण-भेदन किया जा सकता है ?

189. और विपरीत अवस्था देखो कि ऊपर मुष्टि होगी और नीचे दृष्टि होगी एवं चक्र भेदकर मछली की बायीं आँख फूट जायेगी।

190. इस प्रकार अगोचर लक्ष्य क्यों बनाया ? सभी ध्वस्त हो गये किन्तु कुछ लाभ नहीं हुआ।

191. इस प्रकार इतना बड़ा स्वयंवर निष्फल हो गया। हाथ जोड़कर केशिनी दासी ने कहा—

192. हे द्रौपदी ! मेरी बात मानोगी ? अपनी इच्छानुसार किसी राजा को चुनोगी ?

193. प्राचीन काल में राजा भीष्मक ने स्वयंवर किया। देवताओं को छोड़कर दमयन्ती ने नल का वरण किया।

194. चन्द्रध्वज राजा की दुहिता इन्दुमती ने अपनी इच्छा से अज नरपति का वरण किया।

195. अपनी इच्छा से ही सीता ने राम का वरण किया। लक्ष्मी देवी ने अपनी इच्छा से श्रीपति का वरण किया।

196. समुद्र मन्थन से उत्पन्न वरुण की दुहिता ने ब्रह्मा रुद्र को छोड़कर जगन्नाथ का वरण किया।

197. पद्ममाधव की दुहिता ने इन्द्र का वरण किया। सुमित्रा ने राजा दशरथ का वरण किया।

198. सूर्य ने तपती का स्वयंवर किया। उसने देवताओं को छोड़कर शम्भुराण नृपति का वरण किया।

199. रुक्मिणी ने शिशुपाल का वरण किया। पुनः गुप्त रूप से नारायण का वरण किया।

200. अपने विचारानुसार एक राजा का वरण करो। हे देवि! यह बात मानो।

201. द्रौपदी ने कहा तुमने सत्य कहा किन्तु इन राजाओं को वरण करने का मेरा मन नहीं करता।

202. पता नहीं चक्रधर ने क्या व्यवस्था की है ? वही मेरी आशा को जानते हैं।

203. अभय माहेश्वरी अनादि शक्ति वाली हैं। सहस्रभुजी अग्नि से उत्पन्न हैं।

204-206. हाथ में खट्वांग, डमरू, पिनाक, त्रिशूल शंख, गदा, पद्म, सारंग धनु, अदृश्य नील सुदर्शन चक्र, शल्य, बाबल, कुन्त, नाराच, मुद्गर आदि लेकर नौ लक्ष वाले मनवाले ताल से नृत्य कर रही हैं।

207-211. हे त्रिशूल शक्ति, अमोघ शक्ति, वज्र शक्ति, हिम अस्त्र, सूर्य अस्त्र और अनल तेज कान्ति, कालपाश, नागपाश, जलपाश, अभया, कान्तानी, मातंगी, मार क्षोर खण्डिनी, कोदण्ड, अजंग धनु, आर्द्रा बलि धनु, नाराच शस्त्र, वज्र शस्त्र, मोहन शस्त्र धारिणी, मानिनी, मानवती व अभय घोर रूपा, अनन्त नाग भूपिता, आकाश में चरण क्षेपणी ! तुम्हारे चरण पाताल में और शिर आकाश में विराजमान हैं। भीम विलेपित शरीर में वज्र कवच शोभित है।

212-214. वंशी, मजीरा, घर्घरा, बार-बार बज रहा है। हे गोस्वामिनी! तुमने मोहिनी रूप में दैत्य बल का मर्दन किया।

215. हे मातंगी ! डिम-डिम डमरू बजाकर मदिरा के रस में विभोर होकर नाचती गाती हो।

216-217. अचेत अवस्था में मतवाली और सुरंग रस-पानकारिणी सर्व भय भंजिनी भक्त जन चिन्ता कारिणी, चन्द्रिका चूल-मण्डना, पर दुःख-कातरा ! मेरे अनिष्ट, आपद और पातक को खण्डित करो।

218. चण्डी, चामुण्डी, भैरवी, भूत-प्रेत, पिशाचनी सब मिलकर तुम्हारे साथ कौतुक से नाचती हैं।

219. स्तम्भन, मोहन, वस्य, उच्चाटन को ग्रहण करके

मधुमांस भोग करके महारस में डूब जाती हो।

220. हे गोस्वामिनी ! तुम अमार्ग को मार्ग, त्रैलोक्य को एक खण्ड, मनु को चार दण्ड समझती हो।

221. हे चंचला, चर्चिका, मेखला, महाखला, सर्वमंगला,

222. कलिकाल पातक खण्डिनी, अभय वरदायिनी, सिद्ध सारला चण्डी ! शूद्र मुनि सारला दास के ऊपर प्रसन्न रहो।

223 द्रौपदी ने जब ऐसी स्तुति की तो वह सदय भद्रकाली प्रसन्न हुई।

224 पांचाली का धर्म उदित हुआ। उसके सामने शुभ्र कण्ठ ओर नील कण्ठ पक्षी दिखाई दिये।

225 बायीं आँख जल्दी-जल्दी स्फुरित होने लगी। शाकुम्भरी ने शुभ शकुन दिखाया।

226 इसी समय स्वामी बलराम ने पुरुषोत्तम से पूछा—

227 द्रुपद ने असम्भव लक्ष्य बनाया जिसे राजागण भेद नहीं पाये।

228 नारायण ने कहा—हे बलदेव ! तुमने तो कहा था कि कर्ण महालक्ष्य-भेदन करेगा।

229 बलराम ने कहा वह दृष्टिभेदी है। इसीलिए माना था कर्ण लक्ष्य-भेद कर सकेगा।

230. हे हरि ! इस लक्ष्य को भेदन करने में कौन समर्थ है? मुझे संक्षेप में बताओ।

231. जब बलराम ने हठ किया तो हरि ने उन्हें बताना आरम्भ किया—

232. श्रीवत्स कहते हैं कि सावधानीपूर्वक सुनो। तीन लोक में भेदन करने वाले तीन लोग ही है।

233. बलराम.ने कहा कि हे जगन्नाथ ! कौन लक्ष्य भेद कर सकता है—बताओ।

234-235. जगन्नाथ ने कहा आकाश में सुरपति, पाताल में वासुकि, मर्त्यलोक में वीर फाल्गुनी ही भेदन कर सकता है। त्रैलोक्य में ऐसे तीन लोग ही हैं।

236. बलराम ने कहा कि यदि इन्द्र देवता लक्ष्य-भेद कर सकते हैं तो अमरपुर छोड़कर क्यों नहीं आये ?

237-239. जगन्नाथ ने कहा कि हे बलराम ! द्रौपदी इन्द्र के योग्य नहीं है। क्योंकि प्रत्यक्ष पांचाली अग्नि से उत्पन्न है।

240. द्रुपद प्रत्यक्ष ब्राह्मण राजा हैं। महायज्ञ करके कन्या को अग्नि से उत्पन्न कराया।

241 अगस्त्य ने कहा कि वैवस्वत मनु नारायण के मुख से मिथ्या वचन नहीं निकलते हैं।

242 वह अर्जुन की भार्या होकर इन्द्र की कुलवधू होगी।

243. बलराम को छिपाकर दामोदर ने कहा कि वह इन्द्र के लिए अयोग्य है।

244 श्री बलराम जान न पाये। अयोग्य होने के कारण वह वज्रपाणि तो नहीं आयेगा।

245 हे वनमाली ! यदि तुम लक्ष्य-भेद कर सकोगे तो यह पांचाली द्वारिका मे अभिषिक्त हो सकेगी।

246 प्रत्यक्ष अदारा, अयोनि उत्पन्ना है। महामुनि व्यास ने महायज्ञ से उत्पन्न किया है।

247 248 नीलाम्बर के आगे जगन्नाथ कहते हैं कि मेरे पास मन-भेदी बाण तो नहीं है। मैं कैसे भेदन कर सकता हूँ। अतः द्रौपदी मुझे अप्राप्य है।

249-251 बलराम ने कहा कि हे कृष्ण ! यह इन्द्र के अयोग्य और तुम्हें अप्राप्य है। पाँचों पाण्डव जातुगृह मे दग्ध हो गये। अब यहां रहने की क्या जरूरत है ? द्रौपदी निश्चय ही अविवाहित रह जायेगी।

252 हे वासुदेव ! उठो। द्वारिका चलेंगे। ताप, ओस, कुहासे और शीत में क्या रहेंगे ?

253 श्री जगन्नाथ ने कहा कि आज रहेंगे। हे देव ! कल अवश्य एक व्यक्ति लक्ष्य-भेद करेगा।

254 बलराम ने कहा मुझे बताओ कि स्वयं भेदन करोगे तो मुझसे क्यों छिपा रहे हो ?

255 जनार्दन हाथ जोड़कर कह रहे है कि कल सबेरे अर्जुन लक्ष्य-भेदन करेगा।

256 नारायण की यह बात सुनकर [illegible] आत्मोत्सर्ग की तरह दुःखी हो गये।

257 हे कृष्ण ! क्या तुम दिवास्वप्न देख रहो हो ! पाण्डव तो जातुगृह में दग्ध हो गये।

258. हम सभी देखने के लिए गये थे। प्रत्यक्ष देखा कि पाण्डव दग्ध हो गये हैं।

259. पंचपाण्डव, कुन्ती और पुरोचन ब्राह्मण दग्ध हो गये थे। हम लोगों ने उसके चिह्न देखे।

260. हे वासुदेव ! तुमने असम्भव बात कही। अब और कहाँ पाण्डव बचे हैं !

261. नारायण ने कहा कि हे बलराम ! पाण्डवों की उत्पत्ति पृथ्वी के भार निवारण के लिए हुई है।

262-264. देवकुल में इन्द्र, ऋषिकुल में व्यास, राजकुल में विदुर और मन्त्री चूड़ामणि सहदेव के रहते पाण्डवों की मृत्यु असम्भव है। हे नाथ ! तुम मत्त होकर यह बात नहीं समझते हो।

265. यदि पाण्डवों की सच में मृत्यु हो गयी होती तो तुम मुझे कैसे देखते ?

266. पाण्डवों के मृतपिण्ड का मैं चिता काष्ठ हूँ। इस संसार में हम छः लोगों की उत्पत्ति हुई है।

267. जगन्नाथ की निष्ठुर वाणी सुनकर बलराम विस्मित हो गये।

268. मैं तुम्हारा सहोदर हूँ। मुझसे इस प्रकार का कपट कर रहे हो। हम लोगों को छिपाकर पाण्डवों के प्रति तुम्हारी इतनी दया है ?

269-271. चिताग्नि देखने के लिए तुम मुझे साथ ले गये थे। वहाँ मृत पिण्ड देखकर मूर्च्छित हो गये। मैंने अनेक प्रकार से तुम्हें सान्त्वना दी, किन्तु तुम भूमि पर लोटकर रो रहे थे। हे हरि ! तुम्हारी यह बात कहाँ गयी ? समय आने पर पुनः ऐसी बात हुई।

272. तुम्हारे हृदय में मेरे प्रति यदि इतना कपट है तो मैं अब तुम्हारे साथ नहीं रहूँगा।

273. इतना कहकर बलराम क्रोध से उठे और कहा कि तुम्हारा मुँह नहीं देखूंगा।

274. कादम्बरी पान से उनकी मति भ्रमित थी किन्तु कुछ दूर जाकर शान्तचित्त होकर सोचते हैं।

275. मैं जब इससे नाराज होकर जाऊँगा तो इन्द्र समझेंगे कि मैं पाण्डवों का शत्रु हूँ।

276. थोड़ी दूर से बलराम लौट आये और पुनः जगन्नाथ के पास आकर बैठे।

277. हे भाई ! तुम्हारा परम कल्याण हो। सच में पाण्डव अभी जीवित हैं ?

278. यदि पाण्डव कुशलपूर्वक हैं तो जातुगृह में कौन-कौन लोग दग्धीभूत हुए ?

279-294. इसके बाद कृष्ण ने बलराम से जातुगृह में आग लगने से शबर राजा के पाँचों पुत्र सहित जयन्ता के जलने और विदुर की योजना से विवर द्वारा पाण्डवों के बाहर जाने तथा कुम्भीर, हिडिम्बक आदि चारों भाइयों के पाण्डवों द्वारा वध आदि की कथा संक्षेप में बता।

295. गोविन्द ने कहा कि हे बलराम ! यहाँ ब्राह्मण सभा में युधिष्ठिर आदि उपस्थित हैं।

296. नारायण की बात सुनकर बलराम ने कहा कि युधिष्ठिर, नकुल, सहदेव, अर्जुन, कुशल से बचे रहें।

297. अकेला भीम ही मरें क्योंकि वह मेरे साथ झगड़ा खोजता रहता था।

298. हम लोगों को देखकर वह नहीं उठता था और पीठ हम लोगों की ओर करके बैठता था। उसके प्रति ही मेरे हृदय में किन्तु का भाव है।

299. गोविन्द ने कहा, स्वामी ! जब भीम मर जायेगा तो पृथ्वी का भार कौन दूर करेगा ?

300. ये जो महावीर बैठे हैं, उनका भार पृथ्वी सहन नहीं करती है।

301. जगन्नाथ की बात से बलराम ने सोचा कि धृतराष्ट्र के पुत्र कैसे बचेंगे ?

302. पाण्डवों के प्रति जब तुम्हारी इतनी दया की भावना है तो निश्चय ही गान्धारी के सौ पुत्र विनाश को प्राप्त होंगे।

303. बलराम ने पूछा, हे गोविन्द ! अर्जुन अभी लक्ष्य भेदन के लिए क्यों नहीं आता है ?

304. नारायण ने बलराम को समझाया कि अर्जुन कैसे आयेगा। उसे युधिष्ठिर की आज्ञा नहीं है।

305. युधिष्ठिर क्यों उसे आज्ञा नहीं देते हैं ? अर्जुन के लक्ष्य-भेदन को देखने का मन में कौतूहल है।

306. गोविन्द ने कहा कि युधिष्ठिर क्यों आज्ञा देंगे क्योंकि द्रुपदेशवर ने राजाओं से लक्ष्य भेदने के लिए कहा है।

307. वे अभी अभिषिक्त नहीं हुए हैं अतः युधिष्ठिर ने अर्जुन को आदेश नहीं दिया है।

308. जिस समय द्रुपद कहेगा कि ब्राह्मण, चाण्डाल जो भी हों आवें और लक्ष्य-भेद करें। मैं उसे अपनी दुहिता द्रौपदी को प्रदान करूँगा।

309. उस समय युधिष्ठिर आज्ञा देंगे। एक निमिष में ही अर्जुन लक्ष्य-भेद करेगा।

310. राम-कृष्ण दोनों भाइयों के ऐसा सोचते समय द्रौपदी ने धर्मदेवता का स्मरण किया।

311. द्रुपद राजा ने सभा में प्रविष्ट होकर पूछा कि राजागण क्या लक्ष्य-भेद नहीं करेंगे ?

312. राजागण जब लक्ष्य भेद नहीं कर पायेंगे तो जितने पात्र, मन्त्री, अमात्य, सामन्त, योद्धा हैं, उनके द्वारा लक्ष्य-भेद करने पर मैं दुहिता प्रदान करूँगा।

313. जो भी लक्ष्य-भेद करेगा मैं उसे ही अपनी दुहिता दूँगा। यह मेरी बात एकदम सत्य है।

315. उसे सुनकर सभी सन्तुष्ट हुए। द्रुपद ने बार-बार अनुरोध किया।

316. आचाण्डाल ब्राह्मण जो भी लक्ष्य-भेद करेगा मैं उसे अपनी दुहिता दूँगा।

317. द्रुपद ने जब दो टूक बात कही तब युधिष्ठिर ने अर्जुन के मुँह की ओर देखा।

318. स्वामी की अनुमति समझकर उनकी आज्ञा से फाल्गुनी शीघ्र उठा।

319. अर्जुन के उठते ही सभी ब्राह्मणों ने उसे आकर पकड़ लिया।

320. हे ब्राह्मण ! तुम क्यों उठे ? सुन्दर कन्या देखकर लोभ किया क्या ?

321. महा-महाराजा लज्जित हो रहे हैं। हे भाई ! तुम्हारे समान कोई निर्लज्ज नहीं है।

322. हम ब्राह्मणों को कुश-कांस पकड़ने का अभ्यास है। राजकुमारी के लिए तुम्हें क्यों मोह है ?

323. लक्ष्य-भेद नहीं करके तत्क्षण भाग जाओगे और लोग सभी ब्राह्मणों को मारो-मारो कहकर मारने लगेंगे।

324. बहुत-सी दूर से आशा लेकर आये हो। हमारा सारा जीवन दान के भरोसे ही चलता है।

325. हे भाई ! तुम ब्राह्मण कुल में कलंक हुए। हम लोग दान भी नहीं पायेंगे। और प्राण-नाश होगा।

326. पुराना छाता, फटा जूता और हरिगोविन्द झोला लेकर तुम सिर हिलाकर उठे।

327. सभी ब्राह्मणों ने अर्जुन को पकड़कर बैठा दिया। ऐसी अवस्था को द्रुपद ने देखा।

328. एक ब्राह्मण उठ रहा था, सभी ब्राह्मणों ने मिलकर उसे रोक दिया।

329. धृष्टद्युम्न को बुलाकर राजा ने कहा कि युक्तितः ब्राह्मण आदि क्षत्रिय होते हैं।

330. ब्राह्मण के कुल में ही परशुराम पैदा हुए, जिन्होंने इक्कीस बार पृथ्वी को क्षत्रियविहीन कर दिया।

331. ब्राह्मण सभा की ओर देखकर द्रुपद ने कहा कि वह कोई महात्मा गुप्त रूप में हो सकता है।

332. जिसके शरीर में गुण और विद्या है, उसे लक्ष्य-भेद करने पर द्रौपदी को दूँगा।

333. पुनः युधिष्ठिर ने अर्जुन के मुख को देखा। भुजा उठाकर वह सभा से उठा।

334. ब्राह्मण गण ने पुनः आकर घेर लिया। कहा कि तुम बड़े निर्लज्ज हो। ऐसा स्वभाव तुम्हारा कैसे हुआ ?

335. ब्राह्मण होकर तुम्हारा ऐसा भरोसा क्यों है ? इन्द्र पद पर बैठने के लिए मन बढ़ाओ।

336. हम ब्राह्मण भिक्षाजीवी हैं। हम लोग राजकुमारी के योग्य नहीं हैं।

337. अर्जुन का हाथ पकड़कर ब्राह्मण युधिष्ठिर से पूछते हैं—

338. हे ब्राह्मण ! यह तुम्हारा क्या लगता है ? युधिष्ठिर ने कहा कि यह मेरा कनिष्ठ भ्राता है।

339. हे ब्राह्मण ! यदि यह तुम्हारा भाई है तो इतने दुष्ट को अपने साथ क्यों रखा है ?

340. बहुत दूर से हम लोग दान की आशा में आये हैं। इसके प्रमाद से सब नष्ट हो जायेगा।

341. युधिष्ठिर ने कहा कि हे ब्राह्मण गण ! रुको। लक्ष्य-भेद करने में सक्षम व्यक्ति सभा में लज्जा पायेगा ?

342. जो लक्ष्य-भेद न कर सके वे तो लज्जित नहीं हुए। हे ब्राह्मण ! तुम लोग क्यों बाधा दे रहे हो ?

343. जिसके शरीर में गुण, विद्या और साधना नहीं है, वह क्या सीधे जा सकता है ?

344. युधिष्ठिर देव ने भीमसेन को दिखाकर कहा कि यह ब्राह्मण लक्ष्य-भेद करने के लिए क्यों नहीं गया ?

345. युधिष्ठिर ने अर्जुन का हाथ पकड़कर कहा कि देखो कि दोनों हाथों में धनुष की डोरी का घट्ठा पड़ा हुआ है।

346. हे ब्राह्मण ! जाओ लक्ष्य-भेद करो। सभी ब्राह्मणों ने कहा कि निषेध न करके सभी आशीर्वाद दो।

347. समस्त ब्राह्मणों ने उसे आशीर्वाद देकर कहा कि तुम लक्ष्य-भेद करो और तुम्हें शुभ्रकेशी प्राप्त हो।

348. कल्याण हो, कल्याण हो की आवाज सुनाई दी। लक्ष्य- भेद करके द्रौपदी प्राप्त हो।

349. युधिष्ठिर ने उस वीर को आज्ञा देकर कहा कि शत्रु मारकर खड़ा हो। तुम्हारा अनिष्ट नष्ट हो।

350. ब्राह्मण सभा की ओर ताकते हुए बलराम श्रीकृष्ण से प्रश्न पूछते हैं।

351. अर्जुन की पराक्रमी गति देखकर वासुदेव शीघ्र ही आसन छोड़कर उठे।

352. नारायण कहते हैं कि आज निस्तार हुआ। प्राणसखा अर्जुन को आज मैंने अपनी आँखों से देखा।

353. मेरे शरीर में जो पाप था, वह तुम्हारा मुख देखते ही समाप्त हुआ।

354. इस प्रकार मधुरिपु कृतकृत्य होते हैं जिसे देखकर बलराम दुःखी हुए।

355. फाल्गुनी पादगति करता हुआ चल रहा है जिसे देखकर महामुनि व्यास आनन्दित हुए।

356. विदुर ने कहा कि आज मेरा निस्तार हुआ। अर्जुन को देखकर मेरा कार्य सफल हुआ।

357. कर्ण की ओर देखकर दुःशासन बोलता है कि हे भाई! ब्राह्मण का यह चरित्र कैसा है–समझें ?

358. ब्राह्मणगण हूनर कर रहे हैं कि राजा गण लज्जित होकर भाग जायें।

359. दुर्जय ने कहा कि सभी तलवार ले लो। इसी जगह मारकर ब्राह्मणों को खत्म करेंगे।

360-361. दुष्ट ब्राह्मण, जपहीन योगी, मन्दचारी स्त्री, अत्यन्त क्रोधी तपस्वी को मारने पर कोई पाप नहीं होता। ऐसा हठ कर्म शास्त्र में विवेचित है।

362. दुर्योधन ने कहा कि हे दुःशासन! उस ब्राह्मण को अन्यथा न समझो।

363. वह ब्राह्मण अभी लक्ष्य-भेद करे। वह भिक्षार्थी ब्राह्मण होकर राजकन्या लेकर क्या करेगा ?

364. हम लोग इसे ढेर सारा धन देकर कन्या को लेकर हस्तिनापुर जायेंगे।

365. मानगोविन्द ने जब ऐसी आज्ञा दी तो सबने कहा कि ब्राह्मण लक्ष्य-भेद करे।

366. भीष्म ने द्रोण की ओर देखकर पूछा कि इस ब्राह्मण को पहचान पाये ?

367. द्रोण ने कहा कि हम लोग बरयात्री होकर यहाँ बैठे हैं। इतनी देर के बाद वर आ पहुँचा।

368. द्रोण महारथी ने बड़े आनन्द से भीष्म से कहा कि पाण्डवों के विनाश की बात कही जाती थी किन्तु वे अब भी बचे हैं।

369. अर्जुन की प्रतिज्ञा अभी देखो। लक्ष्य-भेद करके वह सभा को सुशोभित करेगा।

370. भीष्म ने कहा कि यह तो बड़ा दुर्लभ है। जातुगृह में दहन होना मैंने प्रत्यक्ष भाव से देखा था।

371. भस्म हुए लोग कैसे अंकुरित हुए। कैसी अद्भुत माया है ? मैं नहीं जान पाया।

372. भीष्म ने कहा कि तुम पहचान न पाये। सच में क्या वह पाण्डव फाल्गुनी है ?

373. द्रोण ने कहा कि स्थिर होकर रहें। कुछ समय के बाद हम लोग सत्य घटना जानेंगे।

374. द्रुपद राजा ने उपहारस्वरूप धनुष, गदा, शस्त्र, मुद्गर, धनरत्न आदि रखा है।

375. दरिद्र व्यक्ति यदि लक्ष्य-भेद करने के लिए आयेगा तो वह धन, रत्न राशि देखकर स्तम्भित हो जायेगा।

376. वीर होकर जब लक्ष्य-भेद करने आयेगा तो तलवार, गदा और कुन्त, मुद्गर, धनु आदि को अजमायेगा।

377. क्षत्रिय होकर जब लक्ष्य-भेद करने जायेगा तो निश्चय ही वह धनुष पकड़कर खींचेगा।

378. जो क्षत्रिय नारायण का भक्त होगा, वह पुराण पुस्तक पर ध्यान रखकर लक्ष्य-भेद की प्रणाली का बयान करेगा।

379. इस प्रकार द्रुपद राजा सब उपहार रखकर एक उपहार लेने के लिए कहेगा।

380. अर्जुन वहाँ पहुँचकर धनराशि की निन्दा करके कहता है कि इसका क्या प्रयोजन है ?

381. पार्थ धनराशि को देखकर चला गया। एक धनुष को देखकर बायें हाथ में पकड़ा।

382. खींचकर उसे फेंक दिया। राजा ने कहा कि यह तो भिक्षुक नहीं है।

383. यह भिक्षुक होता तो निश्चय ही रत्न-अलंकार सब

शरीर में आभूषित करता।

384. धुनष लौटाकर फाल्गुनी ने रख दिया। पुराण पुस्तक देखकर मन ही मन सोचता है।

385. द्रौपदी ने कहा कि हे सखि ! मैंने सन्देश प्राप्त किया। इसके बाद शुभ शकुन परिलाक्षित हुआ।

386. केशिनी दासी से द्रौपदी ने कहा कि अब इतनी देर बाद वर आया और सभी वरयात्री हैं।

387. हे सखि ! यह ब्राह्मण सहज में ही लक्ष्य-भेद करेगा। यही मेरा स्वामी होगा।

388. केशिनी ने कहा कि तुम्हारा जैसा कर्म है। कैसे पाप-लक्षण से तुम्हारा जन्म हुआ।

389. ये लाखों राजा मूर्धाभिषिक्त हैं। इनको देखकर तुम्हारी इच्छा नहीं बढ़ी।

390 भिक्षार्थी ब्राह्मण पर निछावर होगी। राजाओं को छोड़कर इसकी पत्नी बनोगी ?

391 392. द्रौपदी ने कहा कि हे दासी ! जब मैंने इसके मुख को देखा, उस समय ऐसा लगा कि पंचबाण लेकर कामदेव उपस्थित है। ऐसा ही स्वरूप उसके अंगों में दिखा। जब मैंने इसका मुख देखा, उस समय मैं काम-शराघात से पीडित हुई।

394. हे सखि ! लक्ष्य को स्थिर होकर देखो। अभी ब्राह्मण लक्ष्य-भेद करेगा।

395 मैंने यदि पूर्व जन्म में तपस्या की है तो ब्राह्मण की दुहिता मैं ब्राह्मण की ही मनोहारिणी होऊँगी।

396 इस प्रकार वह परम महामती अनादि शक्ति कात्यायनी को याद करती है।

397. हे देवी ! तुम इसी समय उसके कन्धे पर विराजमान हो जिससे वह ब्राह्मण लक्ष्य-भेद कर सके।

398. इसी समय वीर फाल्गुनी लक्ष्य के नीचे खड़ा हुआ जिसे किसी ने नहीं पहचाना।

399. दुर्बल और क्षीण देखकर सभी उपहास करते हैं। अर्जुन ने जल्दी से धनुष बायें हाथ,से पकड़ा।

400. ऊर्ध्व बाहु करके धनुष को उठाया। ब्राह्मणों की साधु- साधु की ध्वनि सभा में गूँजी।

401. शिखण्डी और धृष्टद्युम्न दोनों भाइयों से अर्जुन ने लक्ष्य के विधान को पूछा।

402 ब्राह्मण के आगे धृष्टद्युम्न ने लक्ष्य-विधान को बताया।

403. अन्य राजाओं के सामने मैंने जिसे गुप्त रखा था, उसे तुम्हारे सामने बता रहा हूँ।

404. देवताल के अनुसार सात ताड़ ऊंचाई पर लक्ष्य है, वहाँ एक सुन्दर राधाचक्र घूम रहा है।

405 वह चक्र सहस्र धार से युक्त है और पवन वेग से कुम्हार के चक्र की तरह घूमता है।

406. उसके ऊपर स्वर्ण मत्स्य है। एक लाख बल का दूसरा शिव धनुष की तरह धनुष को समझो।

407 एक ताड के ऊपर पटरा है जिसके नीचे तीर्थजल का घड़ा रखा है।

408 नीचे दृष्टि और ऊपर मुष्टि करके जल में मछली की आख की छाया देखनी होगी।

409 चक्र भेदकर मछली की आख फूट जानी चाहिए। इस प्रकार लक्ष्य-भेदन करके कन्या को प्राप्त कर सकते हो।

410 अर्जुन ने कहा कि मैं लक्ष्य-भेद करूँगा किन्तु सैन्य-हीन होने के नाते मैं किसी प्रकार की समस्या होने पर क्या कर सकता हूँ ?

411 राजाओं की अपरिमित सेना है। अत. दुष्ट राजागण मेरे साथ कहीं बल-प्रयोग न करें।

412 श्रीखण्डी ने कहा कि हे ब्राह्मण ! ऐसा न सोचो। मैं सात अक्षोहिणी सेना लेकर तुम्हारी सहायता करूँगा।

413 तुम सब जाकर राजाओं से पूछो कि अब भी उनकी लक्ष्य-भेद करने इच्छा है ?

414 जिसकी इच्छा हो वह आकर लक्ष्य भेद करे अथवा ब्राह्मण के भेद करने पर राजागण लज्जित न हों।

415 बाद में मुझ पर क्रोध न करें। मैं अनिमन्त्रित बीच में आया हुआ व्यक्ति हू।

416 यह सुनकर श्रीखण्डी ने जल्दी से सभा में प्रविष्ट होकर उच्च स्वर मे राजाओं से कहा–

417 जो राजा सक्षम हो आकर लक्ष्य-भेद करे, नहीं तो एक ब्राह्मण लक्ष्य-भेद कर रहा है।

418 राजागण न सुन पाने का सा भाव कर निरुत्तर रहे। श्रीखण्डी ने लौटकर अर्जुन से कहा।

419 धनुष लेकर अर्जुन सोचता है कि इस धनुष पर वीर कर्ण ने डोरी चढ़ायी है।

420. जो क्षत्रिय डोरी चढ़ाता है उसके द्वारा आधा काम समाप्त हुआ समझा जाना चाहिए। इसे प्रेमपूर्वक स्वीकार करना क्षत्रिय पुरुष का धर्म है।

421. बायें पॉव को दाहिनी जंघा पर अर्जुन ने रखा और सहज भाव से धनुप को बायें हाथ में पकड़ा।

422. घुटने के ऊपर धनुष की कोटि रखी और बायें हाथ से दृष्टि मुष्टि करके धनुष की डोरी को उतार दिया।

423. सभी राजा उसे देखकर आश्चर्यचकित हो गये। सोचने लगे कि इस प्रकार की कृति मानव में दिखाई नहीं देती।

424. डोरी उतारकर पार्थ ने भूमि पर धनुप की कोटि को रखकर बायें घुटने पर रखकर धनुप को सीधा कर दिया।

425. पुनः भैरवमूर्ति होकर एक ही पांव से पृथ्वी पर खड़ा हुआ।

426. दायें घुटने पर बायाँ पेर रखा। अनायास अर्जुन ने धनुष की डोरी चढ़ाई।

427. फाल्गुनी ने जब धनुष पर शून्य में डोरी चढ़ाई, तब सभा में साधु-साधु की ध्वनि सुनाई दी।

428-429. पण्डित जन मन में सोचते हैं कि जब पृथ्वी पर कोई लक्ष्य-भेद करने वाला नहीं हुआ, तो अग्नि से उत्पन्न पांचाली के लिए गुप्त रूप में अंशुमाली उपस्थित हुए।

430. यदि यह आदित्य नहीं है तो निश्चय की अमरादि देव इन्द्र उपस्थित हुए हैं।

431-432. यदि गौतम पत्नी के हरण के कारण यह ब्राह्मण रूप धारी इन्द्र नहीं होगा तो कुबेर हो सकता है।

433. सभा मे राजा इस प्रकार सोचते हैं। उधर अर्जुन ने धनुप पर बाण रखा।

434-435. मानगोविन्द की सभा में द्रोण गुरु उपस्थित हैं। उन्हें प्रणाम करने पर सभी पहचान जायेंगे। अतः बाण चढ़ाकर उसने धरती पर मारा और द्रोण का नाम लेकर माथे पर मिट्टी लगायी।

436. सभा मे उपस्थित गुरु द्रोण ने यह देखकर हाथ फैलाकर कल्याण-कामना की।

437. तुम्हे विद्या और कन्या प्राप्त हो। तुम्हारी कामना सिद्ध हो।

438. हमारी आयु लेकर शत्रु-विनाश करके जीते रहो। पंचकटक जीतकर तुम एकमात्र क्षत्रिय हो।

439. अमरलोक में स्थित इन्द्र को अर्जुन ने प्रणाम किया।

440. इसे देखकर पुरन्दर ने विद्या और कन्या-प्राप्ति का आशीर्वाद दिया।

441. समयानुसार शत्रु का विध्वंस करके तुम पंचकटक के राजा हो।

442. दक्षिण की ओर होकर अर्जुन ने श्री जगन्नाथ का नाम लेकर प्रार्थना की।

443. गोविन्द ने कहा कि बलदेव ! वीर पार्थ तुम्हें नमस्कार करता है।

444. तुम उसकी कल्याण-कामना करो जिससे उसकी इच्छा पूरी हो।

445. अर्जुन के प्रति बलराम के मन में कल्याण की बात न आकर हमेशा अकल्याण की इच्छा आती है।

446. गोविन्द के भय से उन्होंने कहा कि कल्याण हो। हे भाई ! तुम लक्ष्य-भेद करो और कन्या दूसरा ले जाय।

447. जगमोहन ने बलराम के मन के खोट को समझ लिया और स्वयं आशीर्वाद दिया।

448. विद्या और कन्या-लाभ हो। शत्रु का विनाश करो।

449. सभी राजाओं का निपात करके तुम पृथ्वी के भार को दूर करो और पंचकटक के एकछत्र अधिपति हो।

450. ब्राह्मणों की सभा में स्थित युधिष्ठिर को किरीटी ने प्रणाम किया।

451-452. युधिष्ठिर ने कहा कि हे ब्राह्मण गण ! उस लक्ष्य-भेदी ब्राह्मण की ओर देखो। वह ब्राह्मण-सभा को प्रणाम कर रहा है। सभी उसको कल्याण प्रदान करें।

453. सभी ब्राह्मणों ने हाथ फैलाकर कहा कि तुम्हारी मनोवांछा पूरी हो।

454. तुम्हें यश और कन्या प्राप्त हो। तुम द्रुपद की दुहिता को प्राप्त हो।

455. ब्राह्मण-सभा ने जब ऐसी आज्ञा दी जब उसने

ज्येष्ठ भाइयों को स्मरण किया।

456. ऋषियों के साथ महामुनि व्यास हैं। उनको अर्जुन ने प्रणाम किया।

457. मार्कण्डेय ने कहा कि हे व्यास लक्ष्य-भेदी ब्राह्मण को जानते हो कि नहीं ?

458. मैं भविष्यत् कथा तो कह सकता हूँ किन्तु गुप्त कथा सबके सामने कहना उचित नहीं।

459. जिसके लिए द्रुपद ने कामना की थी, घटनाक्रम से उसे ही द्रौपदी प्राप्त होगी।

460. इतना विचार करके सभी ऋषियों ने उच्च स्वर में कल्याण-कल्याण कहा।

461-462. अर्जुन ने कहा कि लाख राजाओं की जितनी सेना है, अठारह वंश के ब्राह्मण और सभी महामुनियों के सामने इस सभा में मेरी विनीत प्रार्थना है कि जो लक्ष्य-भेद कर सके, वे लक्ष्य-भेद करें।

463. सहन न करके द्रोण ने कहा कि हे ब्राह्मण ! जल्दी लक्ष्य-भेद करो। जले घाव पर कितना चूना लगा रहे हो।

464. लाख राजाओं ने साधु-साधु का चीत्कार किया। उस समय वह बिना देखे ही लक्ष्य-भेद करने को प्रस्तुत होता है।

465. सभी लोग अपनी दोनों आखों से ...कलंध होकर अर्जुन के मुख को देख रहे हैं।

466. इस सभा को शत-सहस्र बार मेरा प्रणाम है। मैं लक्ष्य- भेद करने जा रहा हूँ, मुझे आज्ञा दो।

467. महासभा में घोर ध्वनि उठी कि सबकी इच्छा तुम्हारे साथ है। तुम्हें द्रौपदी प्राप्त हो।

468. पण्डित,जन जगन्नाथ के दास हैं अतः वे उनके भक्त की मंगल-कामना करते हैं।

469. दुष्ट राजागण लक्ष्य-भेद करने की मंगल-कामना करते हैं जिससे दरिद्र ब्राह्मण को धन देकर द्रौपदी को खरीद लेंगे।

470. कुछ दुष्ट और शिष्ट राजा सोचते हैं कि बलपूर्वक इससे कन्या ले लेंगे। अतः कहते हैं कि ब्राह्मण लक्ष्य-भेद करें।

471. दुष्ट और शिष्ट राजाओं के मुख से इस प्रकार मंगल- ध्वनि सुनाई दी।

472. एक ताड़ के ऊपर पटरे पर अर्जुन जब चढ़ा, तब कृष्ण ने सुदर्शन चक्र को हटा लिया।

473. धनुष पकड़कर डोरी को खींचा। इन्द्र देवता को स्मरण करके मन-भेदी बाण मारा।

474. मातलि ने लाकर हाथ में बाण दिया। उसको अर्जुन ने धुनष की डोरी पर चढ़ाया।

475. अर्जुन वाण चढ़ाकर खड़ा हुआ। गुरु द्रोण ने कहा, बेटा ! मेरी आयु लेकर जीओ।

476. गोविन्द ने कहा कि हे बलराम ! इस शूर-वीर की प्रतिज्ञा देखी। इसके खड़े होने की भंगी अर्जुन की भंगी की तरह दिखाई देती है।

477 पीठ की ओर मुख देखकर घुमाकर दाहिनी ओर अंगों को टेढ़ा करके नीचे की ओर दृष्टि की।

478 जिस समय अर्जुन ऊपर की ओर मुष्टि करके खड़ा रहा, उस समय द्रौपदी ने कहा कि सर्व मंगल हो।

479 पार्थ ने धनुष पर मन-भेदी बाण रखकर शस्त्र को लक्ष्य की ओर प्रस्तुत किया।

480 अर्जुन शस्त्र को निर्देश देता है कि जितनी दूरी पर लक्ष्य मीन है, वहाँ तक जाकर उसकी बायीं आँख भेद दो।

481. इस आनन्द उत्सव और कन्या के हर्षित भाव को देखकर उसकी प्रतिज्ञा दृढ़ हुई।

482 द्रोण अर्जुन की प्रशंसा करके भीष्म से पूछते हैं कि किस शुभ मुहूर्त मे इसने विद्या प्राप्त की ?

483. एक सो सात शिष्यों का मैं गुरु हुआ किन्तु किसी को इसकी धनुष पकड़ने की शक्ति नहीं हुई।

484. हम पिता-पुत्र दोनों का हाथ काँपने लगता है। दर्प- भंग होता है ओर शस्त्र निस्तेज हो जाता है।

485-486 भीष्म का शिर, कर्ण का जानु, दुर्योधन का हृदय और दुःशासन का शरीर तथा युधिष्ठिर, भीम और शल्य की मुष्टिका, कृप एवं भूरिश्रवा की चुटकी काँपती है।

487. विधाता ने किस क्षण में तुम्हारा निर्माण किया कि तुम्हारा शरीर निष्कंप और निष्कलंक रहता है।

488. भीष्म और द्रोण के इस प्रकार विचार करते समय अर्जुन ऊपर की ओर तल्लीन होकर भवानी को याद करता है।

489. वाण चढ़ाने के समय उसकी भयंकर मूर्ति विष्णु की तेज कान्ति त्रैलोक्य में विकसित हुई।

490. नारायण, इन्द्र, व्यास, द्रोण और रुद्र सभी उसके पक्ष में हैं।

491. अर्जुन के बाण भेदने के समय शत्रु और मित्र शुभ-ध्वनि उच्चरित करते हैं।

492. लाख राजाओं के बीच अर्जुन एकमात्र योद्धा है। रे-रेकार ध्वनि करके वह लक्ष्य-भेद करता है।

493. बहुत दिनों से उसने धनुष नहीं पकड़ा था, इसीलिए उसने प्रचण्ड क्रोध से बाण छोड़ा।

494. देवता के सात ताड़ को मानव के उनवास ताड़ के बराबर जानकर उसने सोचा कि लक्ष्य अर्ध आकाश में अवस्थित है।

495. राधाचक्र भेद करके मछली के बायें नेत्र को भेदकर बाण दायें नेत्र से होकर निकल गया।

496. बाहर होकर बाण ने वेग से छः लाख योजन दूर जाकर अमरलोक में विश्राम किया।

497. सभी राजागण साधु-साधु कह उठे और सभी कामिनियों ने मंगल-ध्वनि की।

498. उस मछली के वाम चक्षु में एक पुष्पमाला बँधी थी। वह टूटकर सभा में गिर पड़ी।

499. आकाश से देवताओं ने पुष्पवर्षा की। श्री जगन्नाथ ने पाचजन्य शंख बजाया।

500. पांचजन्य शंख की महागह्वर ध्वनि सुनकर दुष्ट राजाओं का हृदय काँप गया।

501. इसे सुनकर राजागण अपने आसन से उठे। बोले कि जगन्नाथ श्रीकृष्ण कहाँ उपस्थित हैं ?

502. असुर राजा गण भय के कारण वहाँ न रह सके। त्रस्त होकर राजागण भाग जाते हैं।

503. नीलोत्पल रत्नमाला हाथ में लेकर द्रोपदी अर्जुन के पास पहुँची।

504. जयकार और मंगल-ध्वनि तीनों लोक में सुनी गयी। ऐसा लगा मानो शिव पिनाक लेकर उपस्थित हुए हों।

505. दुर्योधन ने धृष्टद्युम्न से कहा कि आगे बाला को रोको कि वह ब्राह्मण को वरमाला न दे।

506. सभी राजागण देखकर विचार करें कि मछली की आँख में बाण नहीं रहा।

507. ब्राह्मण ने जिस बाण को मारा वह चक्षु में लगकर बगल में छूता हुआ चला गया।

508. यदि मछली की आँख में बाण लगा रहता तो पता चलता कि सच में ब्राह्मण ने लक्ष्य-भेद किया है।

509. लक्ष्य-भेद का कोई चिह्न वर्ण नहीं है तो वह किस प्रकार कन्या प्राप्त कर सकता हैं ?

510. द्रुपद ने कहा यदि ब्राह्मण ने भेद नहीं किया तो वाम नेत्र की पुष्पमाला कैसे टूट गयी ?

511. मानगोविन्द ने कहा कि डोरे में लगा था। बाण के लगने से वह टूट गया।

512. श्रीखण्डी ने कहा कि तुमने तो प्रत्यक्ष आकाश से पुष्पवृष्टि देखी। तिस पर भी इसे मिथ्या कह सकते हो?

513. दुष्ट राजाओं ने अस्वीकार किया और कहा कि ब्राह्मण ने लक्ष्य-भेद नहीं किया तो द्रौपदी को कैसे वरण करेगा ?

514. द्रुपद ने कहा कि नारायण ने स्वयं पांचजन्य शंख से ध्वनि की है।

515. जरासंध ने कहा कि तुम कुछ नहीं जानते हो। नन्द ग्वाल का बेटा कृष्ण अत्यन्त हीन है।

516. तुम जिसे गोविन्द-गोविन्द पुकारते हो, वह ग्वाल कुल में उत्पन्न और बड़ा ही मन्द है।

517. उस अज्ञानी ग्वाल को कुछ ज्ञान नहीं है। एक शंख लेकर अविच्छिन्न रूप से बजाता रहता है।

518. यदि वह नारायण है तो मेरा सामना क्यों नहीं करता? अठारह बार मैंने जामाता के लिए इसके ऊपर आक्रमण किया।

519. गोकुल छोड़कर मथुरा चला गया और पुनः मेरे भय से मथुरा भी छोड़ दी।

520. जो मधुवन नगर में नहीं रह सका उस क्षार व्यक्ति की कथा इस सभा में क्यों कहते हो ?

521. भीष्म ने कहा कि तुम क्यों नारायण की निन्दा करते हो ? वे स्वयं न मारकर अन्य द्वारा बाद में मरवा देंगे।

522. अगस्त्य से वैवस्वत मनु ने कहा कि अर्जुन का लक्ष्य-भेद करना तो निष्फल हो गया।

523. पुनः अब क्या हुआ ? हे तपस्वी ! उसे मुझे अच्छी

प्रकार से बताओ।

524. अगस्त्य कहते हैं कि हे योगेश्वर ! दुष्ट राजाओं ने अपार कीर्ति का ध्वंस किया।

525. सभा में प्रचण्ड कोलाहल मचा। बलराम नाक पर हाथ रखकर हँसे।

526. गोविन्द ने कहा कि हे देव ! क्यों हँसे ? मुझे यह उपहास जैसा लग रहा है।

527. बलराम ने कहा, हे अच्युत तुम्हारी शंख-ध्वनि का क्या अर्थ है ?

528. पाण्डवों ने तुम्हें घूस देकर बुलाया था क्या ? बिना लक्ष्य-भेद किये तुमने क्यों शंख बजाया ?

529. गोविन्द ने कहा, हे स्वामी नीलाम्बर ! अर्जुन की महिमा देव और दानव लोक मे अगोचर है।

530. यदि राजागण कोलाहल मचायेंगे तो वह पुनः लक्ष्य-भेद करेगा।

531. दुष्ट राजाओं के सौ बार विरोध किये जाने पर भी अर्जुन के सिवा कोई द्रौपदी का वरण नहीं कर सकता।

532. नारायण ने जब दृढ़ बात कही तो अर्जुन को वह बात सुनाई दी।

533. कोलाहल सुनकर द्रौपदी ने विस्मित होकर पापनाशिनी देवी को स्मरण किया।

534. हे देवी, जगत्तारिणी महामाया, भक्तवत्सला ! इस विपद को दूर करो।

535. तुम्हारी कृपा से मं अपना पति प्राप्त करूँगी। तुमने जो विधान किया वह बाधित हो रहा है।

536. वह हाथ में कनक पुष्पमाला लेकर ध्यान से दुर्गा का स्मरण करती है।

537. द्रौपदी की व्याकुलता को समझकर अर्जुन उस ।रद् शशिमुखी के मुख को देखने लगा।

538. अर्जुन ने कहा, हे मानिनी ! रुको। अकारण दुःख क्यों कर रही हो ?

539. यदि दुष्ट राजा लोग बाधा उत्पन्न करेंगे तो मैं सौ बार इस महालक्ष्य का भेदन करूँगा।

540. द्रौपदी इसे सुनकर हृदय से प्रसन्न हुई।

541. अर्जुन ने धृष्टद्युम्न से कहा कि राजाओं को जाकर शान्त करो।

542. इस बार मैं महा लक्ष्य-भेद करके चक्रसहित सब कुछ तोड़ दूँगा। सभी लोग देख सकेंगे।

543-544. अर्जुन की बात से धृष्टद्युम्न ने सभा-स्थित राजाओं को सम्बोधित करके कहा कि हे राजा गण ! यह विप्र पुनः लक्ष्य-भेद करेगा।

545. धृष्टद्म्युन ने बार-बार कहा कि इसी क्षण हम लोग प्रत्यक्ष कर्म-बल को देखेंगे।

546. स्थिर होकर तुम लोग लक्ष्य की ओर दृष्टि लगाये रखो। पुनः ब्राह्मण लक्ष्य-भेद करेगा।

547. धृष्टद्युम्न की बात सुनकर राजागण अपने-अपने स्थान पर बैठे।

548 अर्जुन ने धनुष को जब आमंत्रित किया तो देखा कि धनुष में कुछ शक्ति नहीं है।

549. इस धनुष को बलहीन मानकर जब मैं अपने धनुष का स्मरण करूँगा तो राजागण पुनः आपत्ति करेंगे।

550-551 धृष्टद्युम्न को पास बुलाकर अर्जुन ने प्रेम से पूछा कि यह धनुष बलहीन हो चुका है, अब अन्य ध ानुष से लक्ष्य-भेद कर सकता हूँ।

552. धृष्टद्म्युन ने कहा कि मैं तो सहमत हूँ, लेकिन राजाओं से पूछना उचित है।

553. इतना कहकर धृष्टद्युम्न ने राजाओं से कहा कि इस धनुष में बल नहीं है। ब्राह्मण इसीलिए अन्य धनुष से लक्ष्य-भेद करना चाहता है।

555 राजाओ ने कहा कि यह उचित नहीं है। तुम्हारी प्रतिज्ञा अन्यथा हो जायेगी।

556. यह बात सुनकर अर्जुन मन में सोचता है कि नारायण ने मुझे दुःसह संकट में डाल दिया।

557 पट के ऊपर चढ़कर इन्द्र का स्मरण करते हुए कहता है कि हे पिता ! मुझे गाण्डीव धनुष दो।

558. अर्जुन के संकेत को समझकर इन्द्र ने अन्तरिक्ष से गाण्डीव लाकर अर्जुन के हाथ में दिया।

559. यह घटना किसी को दिखाई नहीं दी। केवल नारायण और वेदव्यास ही जान पाये।

560. अर्जुन ने कहा कि इस धनुष को कहाँ रखूँगा ? इसे देखकर राजागण पुनः आपत्ति करेंगे।

561. इतना विचार करके अर्जुन ने दोनों धनुषों को खींचकर हाथ में लिया।

562. गोविन्द ने बलराम से कहा कि अर्जुन का ऐसा दुःसाहस देखो।

563-564. द्वितीय पिनाक पर मनभेदी शर को रखकर अर्जुन ने विनयपूर्वक प्रार्थना की कि चक्र भेद करके मछली की बायीं आँख को भेदते हुए दाहिनी आँख में निकलकर पड़ा रहे।

565. अपने गाण्डीव पर तीक्ष्ण शर रखकर कहा कि तुम राधाचक्र पर जाकर लगो।

566. राजागण देखें कि तुमने चक्र को तोड़कर नीचे गिरा दिया।

567. अर्जुन ने दो धनुषों पर दो बाण रखकर आकर्षण करके छोड़ा।

568. नीचे दृष्टि और ऊपर मुष्टि करने के समय उसका भीष्म रूप प्रकट हुआ।

569. अन्तरिक्ष मार्ग से दोनों बाण दो लक्ष्य बल विशिष्ट दोनों धनुषों के द्वारा ऊपर चले गये।

570. सभा का अभिमान करके अर्जुन ने जगन्नाथ का स्मरण करके क्रोध से शर-सन्धान किया।

571. मनभेदी बाण शून्य पथ से जाकर तत्क्षण मछली की बायीं आँख में घुसा।

573-574. पाशुपत बाण उसके पीछे गया जो चक्र पर लगा। मछली के साथ राधाचक्र टूटकर राजाओं के सामने जाकर गिरा।

575. द्रुपदेश्वर ने उसे हाथ में उठाकर दुर्योधन को प्रत्यक्ष रूप में दिखाया।

576. हे बेटे तुमने अस्वीकार करके कोलाहल मचाया।

577. हाथ में लेकर श्रीखण्डी और धृष्टद्युम्न ने जरासंध को दिखाया।

578. मनभेदी बाण मछली की बायीं आँख में घुसा देखकर राजाओं के मुख से कोई बात नहीं निकली।

579. देवहरि ने शंख-ध्वनि की। उनकी पाचजन्य शंख-ध्वनि से त्रैलोक्य काँप गया।

580. सुन्दरी पांचाली रत्नमाला लेकर अर्जुन के सामने उपस्थित हुई।

581. कण्ठ में माला डालते समय अर्जुन ने कहा कि हे द्रौपदी ! मेरा वरण मत करो।

582-583. जब अर्जुन ने द्रौपदी को वरण नहीं करने दिया, तब मानगोविन्द ने शकुनि को बुलाकर कहा। हे मामा! ब्राह्मण की आशा समझे ? धन की आशा में उसने वरमाला नहीं स्वीकार की।

584. हे मामा ! द्विजवर के पास चलो। ब्राह्मण और द्रौपदी को पास ले आवें।

585. ब्राह्मण ने जब धन की इच्छा की तो उसकी इच्छानुसार धन-रत्न दूँगा।

586. राजा की आज्ञा से गान्धारसेन का पुत्र शीघ्र ब्राह्मण के पास पहुँचा।

587. एकान्त में उस ब्राह्मण को पास बुलाकर कहा कि हे ब्राह्मण ! तुम्हारा जीवन साधु और धन्य है।

588. जिस लक्ष्य को तीनों लोक में कोई नहीं भेद सका, उसे तुमने लाख राजाओं के सामने भेदा।

589. आनन्दपूर्वक कुंजगढ़ के अधिपति मानगोविन्द ने तुम्हें अपने पास आने के लिए आदेश दिया है।

590. तुम तो भिक्षार्थी ब्राह्मण हो। कर्मवशात् तुम्हें चारु केशी प्राप्त हुई।

591. तुम्हारे पास से उस पुण्यवती को कोई न कोई बलात् ले जायेगा।

592. तुम्हारी जितनी इच्छा होगी उतना धन दूँगा और सौ विलासिनियाँ भी दूँगा।

593. तुम्हें नगरपति के रूप में नियुक्त करूँगा। तुम्हीं पंचकटक के अधिकारी होगे।

594. ऐसी बात सुनकर अर्जुन ने कहा कि ये बातें मेरे कान में नहीं घुसीं।

595. हे मन्त्री शकुनि ! तुम्हारी सारी बातें झूठी हैं। प्रत्यक्षतः में पंचकटक का अधिकारी तो हूँ ही।

596. आज निश्चय ही तुम लोग मुझसे युद्ध करोगे, लेकिन युद्ध करने पर कोई बचकर नहीं लौटेगा।

597. विधाता ने तुम लोगों के लिए ऐसा ही विधान किया है। पांचाल राज्य में तुम लोगों की मृत्यु उपस्थित हो गयी है।

598. यदि तुम्हें स्वयं और धन की इच्छा हो रही हो तो भानुमती को किसी को देकर धन प्राप्त करो।

599. जब ब्राह्मण ने इस प्रकार की बात उच्च स्वर में कही तो भूरिश्रवा और भीष्म नाक पर हाथ रखकर

हँसे।

600. दुःशासन ने क्रोध से कहा कि क्षत्रिय होकर ऐसी बात सह रहे हो।

601. समुद्र यदि उल्लंघन कर जाय तो कुल की रक्षा की जा सकती है ? यदि सुमेरु पर्वत उलट जाये तो पृथ्वी की स्थिति रहेगी ?

602. भिक्षार्थी ब्राह्मण से इतनी विनती क्यों करते हो ? नीच लोगों को गौरव देने से ऐसा ही होता है।

603. इतना कहकर दुःशासन चौसठ भार गदा लेकर आसन से उठकर दौड़ा।

605. श्रीखण्डी और धृष्टद्युम्न के अर्जुन के पास रहने के समय ही वह प्रतिज्ञा समर्थ रे-रेकार करके दौड़ा।

606 स्वयं द्रुपद दुःशासन को समझाकर कहते हैं कि हे बेटा! सत्य-लंघन करना अनुचित है।

607 क्रोध मे दुःशासन ने द्रुपद को एक थप्पड मारा, जिससे वह खून उगलकर उलट पड़ा।

608. राजा को अचेत देखकर श्रीखण्डी लोट पड़ा और धृष्टद्युम्न ने दुःशासन को रोक लिया।

609. श्रीखण्डी ने कहा कि हे द्विजवर ! द्रौपदी को लेकर हमारे भवन में चले जाओ।

610. दुःशासन ने जब धृष्टद्युम्न को खींचा, तब उसे अस्सी हजार योद्धाओं ने घेर लिया।

611. द्रुपदेश्वर स्वस्थ होकर उठे और अर्जुन के मुँह को सहलाये।

612. मैं तुम्हारी विपत्ति को ले रहा हूँ। तुम यहाँ से हट जाओ, नहीं तो यहाँ रहने पर तुम्हारा विनाश होगा।

613. अर्जुन के दोनों पैरों में प्रणाम करके द्रौपदी ने कहा कि हे ब्राह्मण ! सबके अनुरोध को मानकर यहा से चले जाओ।

614. क्रोध से दुष्ट दुःशासन चला आ रहा है। इसे मेरे भाई सह नहीं सकते। अभी युद्ध शुरू हो जायेगा।

615. मानगोविन्द दुर्दान्त राजा है। कर्ण, जयद्रथ, शिशुपाल, जरासंध, पुण्डरीक, दन्तवक्र, वाणासुर, नारका आदि एक साथ हो जायेंगे और तुम अकेले हो जाओगे।

617. हे स्वामी, मैं तुम्हारी विपत्ति लेती हूँ। शरीर-नाश मत करो। मैं अनाथिनी हो जाऊँगी।

618. हे स्वामी ! क्या अकेले पराक्रम से पृथ्वी धारण की जा सकती है ? क्या अकेले समुद्र-मन्थन किया जा सकता है ?

619. क्या एक आदमी के बल से पर्वत टल सकता है ? एक व्यक्ति के क्रोध से क्या अनेक व्यक्तियों का विनाश सम्भव है ?

620 देवता होने पर भी अकेले शोभा नहीं होती। एक आदमी के होने पर तीर्थ नहीं होता।

621. हे स्वामी ! इस प्रकार नष्ट हो जाओगे और कोई कार्य नहीं होगा। संसार में अकेले व्यक्ति को कोई नहीं पूछता।

622 जब दुःशासन ने आकर झगड़ा आरम्भ किया, तो धृष्टद्युम्न ने हाथ में शस्त्र पकड़ लिया।

623. द्रौपदी ने व्याकुल होकर भद्रकाली को स्मरण करते हुए कहा कि हे माँ ! पापी दुर्योधन सत्य का पालन नहीं करता है।

624. हे कौरव ! हमें दुःख दे रहे हो। हे पापिष्ठ ! तुम सत्य का उल्लंघन कर रहे हो।

625 मैं दुःख से व्याकुल हो रही हूँ। मेरा यह अश्रु तुम्हारे लिए मंगलदायक होगा क्या ?

626 628. यदि मैं याज्ञसेनी, अग्नि से उत्पन्न, अदारा, अयोनिज और सत्यवती हूँ, यदि व्यास ने मुझे महामन्त्र से उत्पन्न कराया है तो मेरा यह अभिशाप तुम्हारे ऊपर प्रत्यक्ष पड़े। मेरे इसी स्वामी के द्वारा कौरवों का विनाश हो।

629. यह सुनकर अर्जुन भयभीत हुआ कि द्रौपदी यह न कहे कि तुम्हारा वंश-नाश हो।

630 धीरे-धीरे उसका क्रोध बढ़ रहा है। इसका अभिशाप अन्त में हमारे पास भी आ सकता है।

631. इस महासती का अभिशाप मिथ्या नहीं जा सकता। अर्जुन ने कहा कि हे देवी मेरी बात सुनो।

632. हे देवी ! तुम मुझे अकेला समझती हो किन्तु अकेले हनुमान ने लंका का दहन किया।

633. एक ही मन्दराचल ने समुद्र का मन्थन कर दिया। एक ही नारायण मूर्ति ने निदास की शक्ति को ध्वस्त कर दिया।

634. एक ही विनतानन्दन गरुड़ ने निर्भय होकर नाग-वंश का ध्वंस किया।

635. इक्ष्वाकु वंश के कुमार भगीरथ ने अकेले ही आकाश गंगा को लाकर पृथ्वी पर प्रवाहित किया।

636. एक ही नागराज अनन्त ने अपने फण पर नवद्वीप पृथ्वी को धारण किया।

637. एक ही परशुराम ने क्षत्रियत्व ग्रहण करके इक्कीस बार पृथ्वी को क्षत्रियविहीन किया।

638. हमारे पूर्वज ययाति ने अकेले ही नव खण्ड पृथ्वी का विधान किया।

639. अकेले ही अगस्त्य ऋषि ने बाल लीला में ही सम्पूर्ण समुद्र को पान कर लिया।

640. हे संगिनी ! तुम मुझे अकेला न समझो। गम्भीर समुद्र को तुम क्यों काठी से नापती हो ?

641. इसी क्षण मेरा चरित्र देखो। दुष्टों को मारकर आज ध्वस्त कर दूँगा।

642-643. लाख वीरों के साथ कुमार श्रीखण्डी पवन गति से चलने वाले अश्वारोही और गजारोही योद्धाओं और पाँच लाख पदातियों के साथ शस्त्र लेकर अर्जुन का सहायक हुआ।

644. हाथ में धनुष लेकर गुण-टंकार करके लाख स्तर करके दुःशासन को घेर लिया।

645. दुःशासन को घिरा हुआ देखकर कुरुपति मानगोविन्द स्थान छोड़कर उठा।

646. मणिनाग नामक मत्त गज की पीठ पर जल्दी से बैठ गया।

647. सत्तर-सत्तर भार गदा को दोनों हाथों में लेकर योद्धा और अमात्यगण रथ पर बैठे।

648. गज, रथ, अश्व और पदाति योद्धाओं का आकलन नहीं किया जा सकता। दुन्दुभी के शब्द से पृथ्वी काँप रही है।

649-651. पाशुपत, गदा, मुद्गर, शल्य, चक्र, कटारी, भाला, खड्ग, असिवर, मूसल, शक्ति, धनुष, ढाल, असिपत्र, यष्टि, कमान, तोप, उद्दण्ड आदि लेकर दौड़ते हुए मारो-मारो पुकारते हैं। घण्टा-ध्वनि करके हाथी जोर से दौड़ते हैं।

652. जरा, नामक, शिशुपाल और रुक्मण आदि राजा गण रे-रेकार करके उठे।

653. पण्डित, विवेकी और धार्मिक राजागण दुष्ट राजाओं को समझाते हैं।

654. तुम लोग अकारण ब्राह्मण से युद्ध मत करो। उसे तुम लोग सामान्य मत समझो।

655. असम्भव लक्ष्य को भेदने में जो सफल हुआ, उसे तुम लोग किस प्रकार जीत सकते हो ?

657. जो मूर्ख, अपण्डित और दुष्ट प्रकृति के होते हैं वे पण्डितों की बात नहीं सुनते।

658. दुर्योधन ने कहा कि तुम लोग कुछ नहीं जानते हो। यदि वह स्वर्ग का व्यक्ति है तो इसका यह स्वरूप क्यों है ?

659. यह यदि विष्णु है तो शंख, चक्र और गदा कहाँ है ? इसके हृदय पर श्रीवत्स चिह्न क्यों नहीं है ?

660-663. मर्त्यलोक में विष्णु ने जन्म लिया। गोकुल में नन्द सुत कहे गये। मथुरा में जाकर कंस और अष्ट मल्लों का नाश किया। वहाँ उग्रसेन को राजपद दिया, किन्तु वे ही कृष्ण जरासन्ध के भय से द्वारिकापुर भाग गये।

664. यदि साक्षात् इन्द्र भी आ जाये तो किसी का साहस नहीं है कि इससे कन्या छीन ले।

665. मेरे सामने से कन्या लेने वाला कौन है ? देखता हूँ कि यह ब्राह्मण कितना युद्ध करेगा ?

666. इतना कहकर दुर्योधन अत्यन्त क्रुद्ध हुआ। उसका शरीर केले के पत्ते की तरह काँपने लगा।

667-668. जो बुद्धिमान राजागण उसे समझा रहे थे, उनसे मानगोविन्द ने क्रोध से कहा कि इतने राजा यदि युद्ध से डर रहे हो तुम सभी लोग यहाँ से भाग जाओ।

669. तुम लोगों ने तो स्पष्ट रूप से देखा कि एक ब्राह्मण ही आया। देखते हुए भी अन्धे की तरह रास्ता क्यों भूलते हो ?

670-671. फटा छाता, फटा जूता, हरिगोविन्द झोला लेकर ब्राह्मण आया था। धर्म बल से लक्ष्य-भेद तो कर लिया। उस सामान्य व्यक्ति को तुम दिक्पाल क्यों समझते हो ?

672. अभी तुम्हारा पराक्रम देखेंगे—कहकर सज्जन राजागण दूर हो गये।

673. पकड़ो-पकड़ो, मारो-मारो का चीत्कार हो रहा है।

चरण के आघात मे पृथ्वी काँप रही है।

674. रथ, अश्व, गज और पदाति की गणना नहीं की जा सकती। भेरी, शहनाई, झाल और घण्टा, ढोल आदि बज रहे हैं।

675. समुद्र धरती को छोड़कर उछल पड़ा। शून्य में सैन्यवाहिनी की सज्जा की ध्वनि सुनाई दी।

676. ब्राह्मणों ने जब ऐसी बातें सुनीं तो सभी क्रोध मे सभा से उठे।

677. भीम, नकुल और सहदेव युधिष्ठिर की आज्ञा की प्रतीक्षा में बैठे हैं।

678. ब्राह्मण गण वहां से दौड़े। कहने लगे कि हमारी प्रतिज्ञा को भ्रष्ट करने वाला कौन है ?

679-680. कोई दायें हाथ में पोढ़ा और कोई बायें हाथ में ताम्रपात्र, गडुआ आदि लेकर दौड़ते है। सुव, प्रोक्षणी और सोटा घुमाकर सभी मारो-मारो कहने लगे।

681-682. छाने को तोड़कर उसके दण्डे को घुमाकर खन्ती को लेकर ब्राह्मण गण दौड़े और रे-रेकार करके टूट पड़े।

683. ब्राह्मणों की मूर्ति और सेनाओं के चीत्कार से भीमसेन का शरीर रोमांच से काँपने लगा।

684. उसका काँपता हुआ शरीर देखकर युधिष्टिर ने कहा कि ब्राह्मण ! क्या तुम जाना चाहते हो ?

685. भीम थोड़ी सी आज्ञा की प्रतीक्षा में था। जाने की बात पूछते ही भीमसेन दौड़ पड़ा।

686. उस भीम ने इमली के दो वृक्ष देखकर उखाड़ लिये।

687. बलराम ने कहा कि हे गोविन्द ! देखो—अर्जुन की दशा अब क्या हुई ?

688. गोविन्द ने कहा, हे स्वामी बलराम ! दो वृक्षों को घुमाते हुए वीर भीमसेन युद्ध में उपस्थित हुआ है।

689. खड़े होकर बलराम ने भीम के वृकोदर रूप को देखा।

690. हिरण्यकश्यप के वध के समय नृसिंह की तरह भीमसेन दिखाई दे रहा है। इस समय उसकी दोनों पुतलियाँ ताम्रचक्र की तरह घूमती हैं।

691. इस समय भीमसेन ऐसा लग रहा था मानो पर्वत ही स्वयं उखड़कर चला आ रहा हो अथवा मानो स्वयं यमराज ही सामने आकर आक्रमण कर रहा है।

692. अरे-अरे करके भीम ने चीत्कार किया। उससे ऐसा लगा मानो पूरी पृथ्वी ही उलट पड़ रही हो।

693. पाँच लाख योजन दूर संजीवनीपुर में देव यमराज ने भय से आसन छोड़ दिया।

694. कृष्ण ने कहा कि जिस वृक्ष को भीम ने उखाड़ा वह वृक्ष आज से पाण्डव-वृक्ष के नाम से जाना जायेगा।

695. युधिष्ठिर ने जब भीमसेन की मूर्ति देखी, तब उसने ललाट पर दोनों हाथ रख लिये।

696-697. उसका शरीर काँपते देखकर मैंने जब जाने की उसकी इच्छा पूछी, तभी वह अपने हाथों में दो वृक्ष लेकर गर्जन करके दौड़ पड़ा। बक और हिडिम्बक के वध के समय वह जैसा लग रहा था, वैसा ही प्रतीत हो रहा है।

698. वन में रहने के कारण वह अपने मन में हिंसा-भाव रखता है। उसी क्रोध से वह मेरे कौरव भाइयों को मार डालेगा।

699. हे भाई नकुल ! शीघ्र जाकर मेरी तरफ से भीम को लौटा लाओ।

700. स्वामी की आज्ञा से नकुल दौड़ पड़ा। नकुल का उत्साह भीम से भी अधिक बढ़ गया।

701. नकुल भीम के साथ हो लिया। वह भी दो वृक्ष लेकर जोर से दौड़ने लगा।

702. निर्धूम अग्नि की तरह उनका शरीर बढ़ रहा था। इस समय वे केतु और मंगल की तरह लग रहे थे।

703. युधिष्टिर अपने सिर पर हाथ रखकर दुःखी हुए। सहदेव से पूछा कि हे भाई ! यह क्या हुआ ?

704. एक से दो और दो से तीन हो जाने पर क्या दुर्योधन आज अपना शरीर लेकर लौट पायेगा ?

705. क्रोध से भीम सबको मारेगा। हमारा अन्धा राजा असहाय हो जायेगा।

706. हे भाई ! यह बात मुझे अच्छी नहीं लगती कि एक स्त्री के लिए हम अपने सहोदर भाई को मारें।

707. हे भाई ! द्रौपदी चाहे हम लोगों की न हो। इससे हमारा मतलब नहीं है। हे सहदेव ! तुम जाकर सबको लौटा लाओ।

708. हे भाई ! तुम तो धार्मिक, भिज्ञ, पण्डित और मन्त्री चूड़ामणि हो। तुम्हीं बताओ कि सहोदरों को मारकर रमणी लेना उचित है ?

709. वह क्या सामान्य स्त्री नहीं है। भाइयों के रहने पर अनेक स्त्री मिलेंगी।

710. हे भाई ! मेरी कसम हैं। तुम शीघ्र जाकर उन्हें ले आओ। युधिष्ठिर की आज्ञा से सहदेव दौड़े।

711. जब मन्त्री चूड़ामणि तेजी से दौड़ा तो युधिष्ठिर ने सोचा कि यह तुरन्त लौटाकर ले आयेगा।

712. सहदेव झगड़ालू नहीं है। चारों भाई इसकी बात नहीं टालते हैं।

713. वन में कष्ट को याद करके अत्यन्त उत्साह से भीम, नकुल और सहदेव तेजी से दौड़े।

714. यह देखकर युधिष्ठिर आश्चर्यचकित हुए। सोचा कि सहदेव का अनिष्ट भाव सबसे बढ़ गया।

715. युधिष्ठिर ने कहा कि एक-एक को भेजकर मैंने स्वयं गलत काम किया।

716. एक से दो, दो तीन और तीन से चार हुए। ये वन के कष्ट को याद करके घोर युद्ध करेंगे।

717. वृकोदर नाक की सीध में ऐसा दौड़ता है मानो शशि को निगलने के लिए राहु दौड़ रहा है।

718. जैसे चन्द्रमा राहु के तेज से अन्तर्हित हो जाता है, उसी प्रकार समस्त योद्धा युद्ध छोड़कर भाग गये।

719. दुःशासन गदा हिलाकर ब्राह्मण की ओर सीधे दौड़ता है।

720. श्रीखण्डी और धृष्टद्युम्न अर्जुन के पास थे। दुःशासन को देखकर भाग गये।

721. अर्जुन के पास से जाते समय उन्होंने कहा कि हे ब्राह्मण ! यहाँ मत रहो। शीघ्र पीछे हट जाओ।

722 क्या धूल फेंकने से समुद्र पट जायेगा और ढेला फेंकने से पहाड़ चूर हो जायेगा ?

723. अर्जुन ने कहा कि तुम लोग राज पुत्र हो। तुम लोग राज्यभोगी हो, कष्ट क्यों भोगोगे ?

724. तुम तो राज पुत्र हो और मैं ब्राह्मण हूँ। तुम लोग लौट जाओ, संग्राम मत करो।

725. मैं भिक्षार्थी ब्राह्मण हूँ। जीवन के प्रति मेरा कोई मोह नहीं है। मुझे भाग्य से युद्ध प्राप्त हुआ। उस युद्ध में आत्मविसर्जन कर दूँगा।

726. जीतने पर साधु-साधु उच्चरित होगा। मरने पर स्वर्ग-पुरी प्राप्त करूँगा।

727. इस प्रकार कहते समय दुःशासन गदा हिलाते हुए दौड़कर अर्जुन के पास पहुँचा।

728. अरे-अरे ब्राह्मण ! तुम्हारा इतना साहस कि जलती हुई आग में कूद रहे हो ?

729. हे ब्राह्मण ! तुम शीघ्र द्रौपदी को छोड़ो। ब्रह्महत्या का विचार न करके मैं तुम्हारा मुण्ड मरोड़ दूँगा।

730. दुःशासन के द्वारा अर्जुन से इस प्रकार कहने के समय रे-रेकार करते हुए भीम पीछे से उसके पास पहुँचा।

731. ब्राह्मण से बात करते समय दुःशासन को चेत नहीं था। पांचाली को पकड़ने के लिए ठेलकर आगे बढ़ा आ रहा है।

732. अरे-अरे बोलकर भीम ने दोनों वृक्षों को घुमाकर दुःशासन की पीठ पर मारा।

733. दुःशासन गर्जन करके भूमि पर गिर पड़ा। नाक से अपरिमित रक्त प्रवाहित होने लगा।

734. नीचे गिरे दुःशासन को लाँघकर भीम अर्जुन के पास पहुँचा।

735. द्रौपदी ने पूछा कि हे ब्राह्मण ! विशालकाय यह ब्राह्मण तुम्हारा कौन लगता है ?

736. अर्जुन ने द्रौपदी को बताया कि यह मेरा बड़ा भाई है।

737. भीम गर्जन करके दौड़ा और टटोलकर बायें हाथ से दुःशासन के केश पकड़े।

738. जैसे ही उसकी गर्दन मरोड़नी चाही, अर्जुन ने कहा कि हे देव ! क्रोध शान्त करो।

739. युधिष्ठिर देव इसे सहोदर कहते हैं। सामान्य दोष पर विराट् दण्ड उचित नहीं होता।

740. अर्जुन ने दुःशासन के केश छुड़वा दिये। भीम ने उसे दोनों टाँगों के बीच से फेंक दिया।

741. दुर्योधन के सामने शकुनि ने कहा कि ब्राह्मण के दर्प से तुम्हारा दुःशासन विनष्ट हुआ।

742. शकुनि की दो टूक बात सुनकर दुर्योधन क्रोध से सिर

धुनता हुआ उठा।

743. क्रोध से कुरुपति ने हाथ कँपाया। ब्राह्मण समझकर ही वह शान्त बना हुआ था।

744. दुःशासन का अपमान देखकर सभी भाई कोपानल होकर गर्जन करके दौड़े।

745. नकुल और सहदेव दौड़कर आ रहे थे। उस समय दुर्जय और दुरान्तक उनके सामने आ गये।

746. दुर्जन ने नकुल को भाला मारा। नकुल ने उसे बचा कर बायें हाथ से पकड़ लिया।

747. भाला पकड़कर दुर्जय को पैर से मारा। दुःशासन का वह छोटा भाई उत्तान होकर गिर पड़ा।

748. उसी भाले को लेकर उसके ही हृदय पर मारा। राजा मानगोविन्द हाथी पर बैठा देख रहा था।

749. दुर्जय को अचेत देखकर दुराष्ट्र दौड़ा। सहदेव वृक्ष से पीटने लगा।

750. आघात से वह कौरव मुह के बल गिर पड़ा। पाषाण पर गिरकर रक्तरंजित हुआ।

751. जब तीनों भाई युद्ध में व्यर्थ हुए तब शकुनि ने युद्ध मे भाग लिया।

752. शकुनि को देखकर सहदेव दौड़ा और रे-रेकार करके एक वृक्ष के आघात से पराजित किया।

753. वृक्ष के आघात से सारथी गिर पड़ा और तत्क्षण रथ भूमि पर बैठ गया।

754. रथ के ऊपर से शकुनि जल्दी से नीचे कूद पड़ा। हाथ में धनुष लेकर सहदेव को मारा।

755. वाण को बचाकर सहदेव ने शकुनि पर एक वृक्ष से प्रहार किया।

756. आघात से शकुनि अचेत हो गया। सहदेव ने उसके केश पकड़ लिये।

757. सहदेव ने दायें पैर को बढ़ाकर ऊपर उठाया और टॉग के नीचे से उसे झटककर फेंक दिया।

758. शकुनि का रथ लेकर दोनों भाइयों नकुल और सहदेव ने अर्जुन के पास पहुँचकर उसे प्रणाम किया।

759. रथ में अनेक रत्न मण्डित देखकर द्रौपदी प्रसन्न हुई।

760. हे स्वामी ! ये तुम्हारे कौन लगते हैं ? अर्जुन ने कहा कि हे द्रौपदी ! ये मेरे छोटे भाई हैं।

761. उन्हें देखकर द्रौपदी उनके शरीर की प्रशंसा करते हुए कहती है कि चारों ही कामदेव की तरह दिखाई देते हैं।

762. पराक्रमी रूप में वे केतु और मंगल की तरह दिखाई देते है। द्रौपदी उन्हें देखकर आनन्दित हुई।

763. भीम ने कहा कि तुम रथ पर बैठो। यह सुनकर द्रौपदी केशिनी दासी के साथ रथ पर बैठी।

764. दोनों ओर चार अयुत गजारोहियों से परिवेष्ठित होकर महारथी कर्ण इसी समय पहुँचा।

765. कर्ण को देखकर भीम आनन्दित हुआ और दो वृक्षो को घुमाकर गरज उठा।

766. अर्जुन ने प्रणाम करके भीमसेन से कहा कि हे स्वामी! प्रमादरहित होकर सावधानी से युद्ध करो।

767. दर्प चूर करके सेना को भगा दो जिससे कौरव पराजित होकर भाग जायें।

768. शत्रु-दर्प-मर्दन के यश को हम प्राप्त करें किन्तु युधिष्ठिर का मन दुःखी नहीं होना चाहिए।

769. इस प्रकार की बात सोचते समय कर्ण ने आकर वाण मारा।

770. भीम ने दुःशासन को जीतकर उसके चौंसठ भार गदा को छीन लिया था।

771. उसके दोनों हाथों में गदा है और पार्थ के हाथ में राजा द्रुपद का धनुष है।

772. विश्वकर्मा ने प्रथम जिस धनुष की रचना की उसे त्रेता युग में महादेव ने धारण किया।

773. नकुल ने दुर्जय को जीतकर उसके हाथ से भाला छीन लिया था।

774. वही भाला नकुल अपने हाथ में लिये हुए है। सभी योद्धा उसे देखकर दाँतो तले होंठ दबाते हैं।

775. सहदेव ने युद्ध में दुराष्ट्र को जीतकर उसका धनुष हाथ में ले लिया है।

776-778. त्रिकच्छ वस्त्र का फेंटा मारकर, लम्बे केश को जूड़ा की तरह बाँधकर बायें हाथ में जनेऊ को बाँध लिया। ब्राह्मण वेशधारी ये त्रिदण्डी क्षत्रिय अस्त्र-शस्त्र लेकर खड़े हैं जिनकी आँखें लाल हैं, दाँतों में होंठ दबाये हुए हैं और पूरा शरीर रोमांचित है।

779. रे-रेकार ध्वनि करते हुए चारों टूट पड़े। दर्पिष्ठ का

दर्प भंजन करने ये चारों पवन गति से आगे बढ़ते हैं।

780. विदुर ने पाण्डवों की मूर्ति देखकर सोचा कि वन में मेरे पुत्रों को अन्न का कष्ट मिला।

781. भीष्म ने कहा कि हे द्रोण ! ये कौन हैं ? द्रोण ने कहा कि ये भीम, नकुल, सहदेव और पार्थ हैं।

782. चारों भाई आकर एक हो गये हैं। अब कौरव-शक्ति दुर्बल हो जायेगी।

783. भीष्म ने कहा कि चलो द्वन्द्व का समाधान कर दें किन्तु द्रोण ने कहा कि रुको, युद्ध देखा जाय।

784. हम लोग भी अनासक्त होकर युद्ध करेंगे। देखेंगे कि पाण्डव कितने बड़े योद्धा हैं।

785. चार अयुत मुकुटबंधा सेना लेकर कर्ण दुर्योधन को रोककर आगे दौड़ा।

786 कर्ण के रथ का विकर्ण सारथी होकर घोड़ों को पवन गति से हाँकता है।

787. भीमसेन ने गदा हिलाकर कर्ण के रथ पर गदा से वार किया।

788 रथ टूटकर शत खण्ड हो गया। वीर भीम यमराज की तरह जाकर कर्ण से मिला।

789. कर्ण को विरथ देखकर शल्य और अश्वत्थामा ने रथ पर आसीन होकर घेर लिया—ऐसा भीम ने देखा।

790. अपने-अपने धनुष पर वाण रखकर उन्होंने भीम के ऊपर प्रहार किया।

791 भीमसेन ने आकाश में गदा हिलाई। भीम की छाती से टकराकर सारे वाण चूर हो गये।

792 घोर गर्जन करके भीम ने शल्य के रथ को टटोलकर पकड़ लिया।

793. रथ को पकड़कर आकाश में घूमते हुए अश्वत्थामा के रथ पर पटक दिया।

794. दोनों रथ टूटकर धूल हो गये। प्रचण्ड होकर भीम रण-रंग में उन्मत्त होकर नाचता है।

795. हाथियों पर बैठे महावत तीक्ष्ण भाले और अंकुश से प्रहार करते हैं।

796. निर्भयतापूर्वक भीम ने बायें अंगों को दिखाते हुए दोनों हाथियों को टटोलकर पकड़ लिया।

797. महामत्त हाथी पर्वत की तरह दिखाई देते हैं। उन्हें भीम आसानी से घुमाता है।

798. दोनों हाथों से पकड़कर आकाश में घुमाते हुए हाथियों को गजारोही योद्धाओं के ऊपर पटक दिया।

799. गज से गज टकराकर भूमि पर गिर रहे हैं। टक्कर लगने से रथ टूटे जा रहे हैं।

800. अरे-अरे ! कहकर गर्जनपूर्वक पदाघात करता है। पदाघात से अश्व और अश्वारोही गिर पड़ते हैं।

801. पटरा, भाला, अंकुश, खड्ग और मूसल, शल्य, चक्र मेघ में बिजली की तरह चमकते हैं।

802. घेरकर योद्धा प्रहार करते हैं किन्तु वृकोदर के अंगों में वाण नहीं घुसते।

803. जन्म के समय शतशृंग ने प्रसन्नतापूर्वक वरदान दिया था कि वृकोदर होने के समय तुम्हारा शरीर वज्र के समान होगा।

804 वीरवर भीम ने वही रूप विकसित करके सौ सिंहों के पराक्रम को धारण किया।

805 उस संग्राम की कथा कहना असम्भव है। यमराज ने भी भय से आसन छोड दिया।

806. घोर युद्ध में देखकर महामुनि नारद ने अर्जुन से कहा कि दौड़ो, भीम को शत्रुओं ने घेर लिया है।

807. तपस्वी युद्ध हो जायें कहकर नृत्य कर रहे हैं। पाण्डवों के गुप्त नाम को लेकर दौड़ने के लिए प्रेरित करते हैं।

808. कौरवों को दौड़ने के लिए प्रेरित करते हुए कहते हैं कि तुम लोग चार ब्राह्मणों के साथ युद्ध करने के लिए समर्थ नहीं हो ?

809. अरे कौरवो ! तुम लोग क्यों उपेक्षा कर रहे हो ? ब्राह्मण तुम्हारे समान नहीं हैं।

810. इन सबको सामान्य ब्राह्मण मत समझो। हे दुर्योधन ! तुम स्वयं उठो।

811. कलह-कौतूहल देखने के लिए मुनि उन्हें पाण्डव कहकर परिचित नहीं कराते हैं।

812. चार ब्राह्मणों के साथ एक लाख क्षत्रिय लड़ रहे हैं। यहाँ से भागकर किसको मुँह दिखाओगे ?

813. लड़ो-लड़ो कहकर नारद पुकारते हैं। नारद की बात सुनकर सभी राजा दौड़े।

814. कुन्त, बाण, खड्ग, ढाल, भाला लेकर सभी दौड़ते हैं और दुन्दुभि वाद्य से घोर ध्वनि हो रही है।

815. अर्जुन, नकुल और सहदेव हाथ में धनुष लेकर महाघोर

चीत्कार करते हुए दौड़े।

816. भीम को जो सौ राजा घेरे थे, उन्हें नकुल ने भाला लेकर दो भागों में विभाजित करके हटा दिया।

817-818. इन्द्र ने दुःसह युद्ध देखकर आकाश से तरकस मातलि को दिया। उसने लाकर अर्जुन को प्रदान किया।

819. देवशस्त्र प्राप्त करके अर्जुन अविच्छिन्न रूप से वाण वेधने लगा।

820. पचास हजार राजाओं को लेकर वीर जरासन्ध ने अर्जुन को सौ स्तरों में घेर लिया।

821. कोई सौ वाण, कोई दो सौ वाण और कोई शत-सहस्र वाण अविच्छिन्न भाव से वेध रहा है।

822. कोई पाँच सहस्र, कोई एक अयुत वाण प्रहार कर रहे हैं। वाण पथ श्रावण मास की वर्षा की तरह दिखाई देता है।

823. महाघोर दुःसह वाणों के प्रहार से आकाश मे सूर्य दिखाई देता है।

824. राजागण अनेक वीरों के साथ शर-सन्धान करते हैं, जिससे दिन रात की तरह दिखाई देता है।

825. हे पाण्डव ! तुम्हारी महिमा धन्य है। तुम केवल चार लोग एक लाख राजाओं की सेना के साथ लड़ रहे हो।

826. गोविन्द ने बलराम से कहा कि पाण्डवों का दुर्धर्ष संग्राम और योद्धापन देखो।

827. दस हजार राजाओं के समस्त वाणों का अकेले ही अर्जुन छेदन करता है।

828. नकुल की महिमा का वर्णन कौन कर सकता है ? एक ही भाले से उसने अपार सेना का वध किया।

829. युद्ध में सहदेव पवन से भी द्रुत हैं। एक पह में उसने दस हजार रथों को चूर कर दिया।

830. भीमसेन का संग्राम देवताओं के लिए भी अगोचर है। रथी अश्व और सारथी सभी एक प्रहार में चूर हो जाते हैं।

831. रत्नजटित मुकुट और मांगटीका तथा गन्ध-चन्दन सब रक्तरंजित हो गया।

832. राजा जरासन्ध अर्जुन के पास पहुँचकर हाथ में धनुष लेकर वाण वर्षा करने लगा।

833. अर्जुन ने तीक्ष्ण नोक वाले वाण का प्रहार किया। बाणों के आवरण में जरासन्ध को कुछ दिखाई नहीं देता था।

834. एक महाबाण उसके हृदय में कवच भेदकर घुसा।

835. घायल होकर जरासन्ध जमीन पर गिर पड़ा। साधु-साधु पार्थ ! कहकर बलराम ने प्रशंसा की।

836. तुम्हारे जैसे मित्र के रहते हम लोगों की यह अवस्था है। इसी जरासन्ध के भय से हम लोगों ने बहुत दुःख पाया है।

837. इस मगध के महिपाल की ऐसी महिमा है कि कोटि सिंह का बल होने पर भी मैं इससे तीन बार हार गया।

838. यदि हम लोग तुम्हें पहले ही वरण किये होते तो मथुरा जैसा राज्य हम लोग कैसे छोड़ते ?

839. हे हरि ! तुम स्वयं संग्राम में जुड़ो। अर्जुन से कहो कि यह जरासन्ध का शिरश्छेदन करे।

840. हे जगन्नाथ ! हम लोगों का भय दूर हो। श्रीकृष्ण ने कहा कि वीर पार्थ क्षत्रिय धर्म का पालन करता है।

841. वाण के आघात से व्याकुल होकर पीठ दिखाकर भागने वाले दुःखी जन को वह कभी नहीं मारता।

842. हे देवराज ! तुम जरासन्ध से भय मत करो। इन्हीं पाण्डवों के हाथ से मैं उसका विनाश करवाऊँगा।

843. बलराम सुनकर प्रसन्न हुए। अब क्या कौरवों का जीवन बचेगा ?

844. बलराम ने कहा कि हे हरि ! चलो द्वारिका लौट चलें जिससे धृतराष्ट्र के पुत्रों का कष्ट न देख सकें।

845. गोविन्द ने कहा कि आज हे स्वामी ! यहीं रहेंगे। देखेंगे कि पाण्डव इस कन्या को लेकर क्या करेंगे ?

846. अर्जुन ने स्वयं महालक्ष्य-भेदन किया किन्तु अब भीम रण-मन्थन कर रहा है।

847. वय-क्रम से युधिष्ठिर ज्येष्ठ भ्राता हैं। नियमतः अर्जुन कन्या का वरण नहीं कर सकता।

848. द्रौपदी किसे प्राप्त होगी ? व्यास महामुनि कौन-सी व्यवस्था करेंगे ?

849. इस प्रकार केशव और बलराम अनेक विचार-विमर्श कर रहे हैं।

850. महाभारत अगाध सागर की तरह है। सभी कथा का

यदि संयोजन किया जाय तो लिखना असम्भव हो जायेगा।

851. इसीलिए बचा-बचाकर संक्षेप में मैंने कहा। हे पार्वती ! मेरे हृदय में निवास करो।

852. मुझे जितना दिखाई देता है, उतना लिखने में समर्थ नहीं हूं। पुनः अति गोचर विषय को मैं नहीं कह सकता।

853. इस प्रकार सारला दास इस प्रसंग को संक्षेप में कह रहा है।

राजाओं के साथ पाण्डवों का युद्ध

1. वैवस्वत मनु ने अगस्त्य से पूछा कि हे महामुनि ! मुझे रण-रंग का कौतूहल बताओ।

2. महात्मा अगस्त्य मनु से कहते हैं कि जरासन्ध को निश्चेष्ट देखकर अर्जुन ने छोड़ दिया।

3-4 वाणासुर, नारका, वज्रनाभ और सम्बर इन चार राजाओं के साथ चार सागर योद्धा थे। इनको लेकर असुर गण उठे जो मन्दर पर्वत की तरह दिखाई देते थे।

5. ये उल्कापात की तरह पृथ्वी को आच्छन्न कर देते हैं। द्रौपदी इन्हें देखकर विस्मित हुई।

6. द्रौपदी ने कहा कि हे केशिनी ! घोर अन्धकार की तरह दिखाई पड़ने वाली सेना किसकी है ?

7-8 दासी ने कहा कि हे स्वामिनी ! तुमने जो पूछा उसे मैं प्रामाणिक रूप से बता रही हूं। ये चार असुर राजा वाण, नारका, वज्रनाभ और सम्बर युद्ध-अभियान कर रहे हैं।

9. इनकी सेना द्वितीय समुद्र की तरह दिखाई दे रही है। देवतागण भय से स्वर्ग-पथ छोड़ देते हैं।

10 यदि ये इन्हें सहज रूप में जीत सकेंगे तो निश्चय ही ये दिग्पाल हैं।

11. द्रौपदी ने केशिनी से कहा कि मैंने शुभ शकुन देखा है। य इसी क्षण जीतेंगे।

12. भीमसेन ने कहा कि देव और दानवों में जिसकी महिमा दुर्लभ है, वह वज्रनाभ मेरे युद्ध के हिस्से में पड़े।

13. अर्जुन ने भीम से कहा कि सहस्रभुज वाण मेरे हिस्से पड़ा।

14. नकुल ने कहा कि इस नारकासुर को उसकी सेना सहित मैं अकेले ही अवरुद्ध करूँगा।

15. सहदेव ने कहा कि नृपति सम्बर मेरे हिस्से में रहा।

16. चारों राजाओं को चार भागों में बाँटकर प्रथम मारुति ने गर्जन किया।

17. वज्रनाभ महाबली एक रथ पर बैठा है जिसमें एक हजार सिंह जुते हैं।

18. हाथ में वज्रशक्ति लिये है। भय के कारण सूर्यादि देवता पास नहीं आते हैं।

19. जिस समय आदित्य अस्त हो गये, उसी समय भीम ने महाकोपानल होकर तेज विकीर्ण किया।

20 सारथी अति वेग से रथ हाँक रहा है।

21. भीमसेन ने क्रोध से पन्द्रह योजन दूर वज्रनाभ को फेंक दिया।

22. खींचकर उसने रथ-दण्ड को पकड़ा। उस समय प्रचण्ड पवन ने भीम की सहायता की।

23. भीम ने असुर के रथ को तेजी से घुमाकर दक्षिण दिशा में फेंक दिया।

24. भीमसेन ने क्रोध से पन्द्रह योजन दूर वज्रनाभ को फेंक दिया।

25. राजा की पराजय से सेना भाग रही है और वृकोदर उनके पीछे गदा लेकर दौड़ता है।

26. दुरान्तक सेना युद्ध छोड़कर व्याकुल पक्षी की तरह भाग रही है।

27. दो हजार रथ और तीन कोटि हाथी त्रास-भग्न पक्षी की तरह व्याकुल होकर भाग रहे हैं।

28. अनगिनत अश्व और असंख्य पदातिक उस असुर सेना में हैं, जिन्हें मारकर भी समाप्त नहीं किया जा सकता।

29. इतनी सेना को भीम ने अकेले ही मार दिया। असुर बल संग्राम में धराशायी हो गये।

30. वाण और अर्जुन के युद्ध में वाणासुर पाँच सौ भुजाओं से वाण मारता है।

31. वीर पार्थ ने हावड़ा बाण मारा जो वज्राघात की तरह वाणासुर के हृदय पर लगा।

32. राजा बलि का बेटा घाव से पीड़ित हुआ। अर्जुन ने पुनः मोहन शर मारा।

33. मूर्च्छित होकर वाणासुर उत्तान होकर गिर पड़ा। उसका सारथी रथ को आकाश-पथ में ले चला।

34. राजा की पराजय से सेना भग हो गयी। भीमसेन ने अनेक सेनाओं को पीछे से दौड़कर भाग।

35. असुर गण वाताहत कदली वन की तरह भूमि पर लोट गये।

36. भीमसेन और अर्जुन शीघ्र दौड़कर नारकासुर और सम्बरासुर के साथ क्रोध से मिले।

37. नारकासुर का रथ भीमसेन ने पकड़कर सम्बर नृपति के रथ पर पटक दिया।

38 जिस प्रकार महोदधि पवन के आघात से ऊपर उठता है उसी प्रकार पाण्डवों ने लाखों राजाओं को आप्लावित किया।

39. नारकासुर और सम्बर के रथ चूर्ण हो गये। दानव सेना सोचती है कि कोई भी प्रतिरोधी नहीं है।

40 महाघोर संग्राम निशा रात्रि में हुआ। दानव सेना भाग रही है, पास नहीं रहती।

41. आपस में लड़ाई करते हैं। अपने और पराये को पहचान नहीं पाते हैं।

42. केशिनी दासी द्रौपदी का रथ हाँकती है। पाण्डव अनेक सेनाओं का विनाश कर रहे हैं।

43. असुर सेना का ध्वंस करके भीमसेन लौटता है। तेरह योजन तक दानव गण पाँव-पाँत की तरह गिर पड़े।

44 वन के बीच रक्त की नदी बहती है। असुर गण कदली वृक्ष के गट्ठर की तरह प्रवाहित होने लगे।

45. युद्ध करते करते रात बीत गयी। कुरु सेना को लेकर मानगोविन्द रुका रहा।

46. भीमसेन कौरव सेना को क्रोध से आंख तरेरकर देखने लगा।

47. पाण्डवों का अंग रक्त से पंकिल हो गया है। हिरण्य को विदीर्ण करने वाले नरसिंह की तरह दिखाई देते हैं।

48-49. शल्य, अश्वत्थामा, कृपाचार्य, शकुनि, जयद्रथ और कलिंगसेन आदि वीरगण अपने-अपने रथ पर आसीन गिरिवर की तरह दिखाई दे रहे हैं।

50. असुर सेना का संहार करके चारों वीर लौट रहे हैं। द्रौपदी एक रथ पर आसीन होकर उनके साथ आ रही है।

51. दूर से सिंह की पूँछ—चिह्नित धवल-वर्ण पताका दिखाई दी।

52. रात बीतने के समय गर्व से जाती हुई कुरुसेना को देखा।

53 असुरों से छीने हुए वज्रमुद्गर को लेकर पाण्डव क्रोध से दौड़ता है।

54. उसकी दोनों भुजाये पर्वत की तरह दिखाई देती हैं। ऐसा लगता है कि चांदों के बीच राहु क्रीड़ा कर रहा हो।

55. महावली पाण्डव इस प्रकार शोभायमान हो रहे हैं। सभी मन्दार पुष्प की तरह रक्तवर्ण हैं।

56 रे-रेकार करके भीमसेन दौड़ता है। महावली कर्ण ने उसे सामने से रोका।

57 महाक्रोध से अनेक शर-सन्धान किया। भीम के शरीर से टकराकर शस्त्र भग्न हो गये।

58 कर्ण के रथ पर वज्रमुष्टिका मारी। महाभार से रथ शत खण्ड हो गया।

59 सारथी और अश्व गिर पड़े। कर्ण के हृदय पर उसने वज्रमुष्टिका मारी।

60 भीमसेन के वज्रमुष्टिका के आघात से कर्ण मूर्च्छित हो गया। अश्वत्थामा ने शीघ्र आकर रथ आगे लगा दिया।

61 अर्जुन अश्वत्थामा के पास जाकर मिला। द्रोणनन्दन ने महाक्रोध से वाण मारा।

62 क्रोध से हजारों वाण मारे। वे सब वाण पार्थ के ऊपर पड़े।

63. अश्वत्थामा के वाण से तीनों भुवन कांप गये। इसे देखकर फाल्गुनी ने प्रतिरोध किया।

64. पुनः अश्वत्थामा ने दस हजार वाण चढ़ाकर क्रोध से अर्जुन के ऊपर प्रहार किया।

65. जलधारा की तरह शर-वृष्टि हुई। इसे देखकर अर्जुन ने बचाव किया।

66. पुनः अश्वत्थामा ने तीन बार एक लाख वाण मारे।

67-70. अर्जुन ने अश्वत्थामा के वाणों को रोककर एक हजार वाणों से अश्वत्थामा पर प्रहार किया। चालीस रथ के ऊपर, चालीस हजार चार अश्वों पर और दस हजार

शर सारथी के ऊपर मारे। एक ही साथ सबका निरोध करके चारों तरफ अन्धकार करके अर्जुन ने वाण मारा।

71. अविच्छिन्न भाव से वाण लगने से अश्व और सारथी गिर पड़े।

72. इसके बाद अश्वत्थामा का रथ भग्न होकर उसके ऊपर गिर पड़ा।

73. घायल होकर अश्वत्थामा अचेत होकर गिर पड़ा। शल्य ने रथ पकड़कर वीर भीम के ऊपर पटका।

74. नकुल के वज्र कुन्त के आघात से कृपाचार्य का रथ सारथी सहित टूटकर गिर पड़ा।

75. सहदेव ने शकुनि को मुद्गर से मारा जिससे रथ टूटकर शकुनि के ऊपर गिरा।

76. अश्वत्थामा, कृपाचार्य, शल्य और शकुनि चारों घायल शरीर लेकर भाग गये।

77. चारों वीर जो सेना का सचालन कर रहे थे, वे भग्न होकर सेना के भीतर घुस गये।

78. भीमसेन ने अरे-अरे चीत्कार करते हुए रणांगन में घुसकर सागर की तरह सेना का मन्थन किया।

79 80. मानचक्रवर्ती ने अट्ठानवे भाइयों के साथ मत्त हाथी पर विराजमान होकर हाथ में गदा, परशु, मुद्गर आदि लेकर भीमसेन को घेरते हुए प्रहार किया।

81 गहन युद्ध देखकर क्रोध से कालेश्वर पाण्डवों की ओर दौड़ा।

82 83. आख नीचे की ओर बैठी हुई, विकराल मुख, भैरव मूर्ति, कंकालमय रुद्र शरीर, विशाल उदर, बीहड़ दाढ़, भयंकर दाँत और बिखरे हुए केश तथा निरन्तर घूमती हुई आँखें, उसके विकराल रूप को प्रदर्शित कर रही हैं।

84. दोनों हाथों में टटोलकर दो हाथियों को पकड़ा और आकाश में घुमाने लगा।

85. घोर चीत्कार करके जब भीम दौड़ा तब कौरव-दल भग्न होकर पीठ दिखाकर भाग गया।

86. वीर भीम ने क्रोध से हाथी से हाथी को टकराया और राजा के हाथी को बायें हाथ से पकड़ा।

87. दाहिने हाथ से वज्र मुष्टिका का प्रहार किया। मत्त हाथियों की हड्डियाँ और माँस चूर हो गये।

88. दुर्योधन पैदल भागने लगा। भीम पीछे से बुलाता है कि हे भाई ! रुको-रुको।

89. भीम ने जब राजा का उपहास किया तब अपने-अपने रथ पर चढ़कर भीष्म और द्रोण दौड़कर आये।

90. भीमसेन भीष्म और द्रोण को देखते ही कौरवों को छोड़कर गर्जन करते हुए उनकी ओर दौड़ा।

91. भीमसेन का शरीर पर्वताकार हाथी की तरह है। उसके पदाघात से सारा संसार काँप गया।

92. द्रोण गुरु ने भीमसेन को देखकर भीष्म से कहा कि पवन-नन्दन आ गया।

93. जिसके पदाघात से शतशृंग पर्वत टूट गया, वह वनवास के कष्ट की स्मृति से क्रोधित दौड़ता हुआ आ रहा है।

94. वह मूर्ख, अज्ञानी, दुर्भार, मन्द और दुष्ट है। इसके साथ द्वन्द्व युद्ध करके जीत सकते हैं ? ऐसा भीष्म ने कहा।

95. द्रोण ने कहा कि हम लोगों के युद्ध न करके लौटने पर दुर्योधन क्रोध नहीं करेगा ?

96. भीष्म और द्रोण ने दुर्योधन को सामने से घेरे रखा। भीम पवनगति से दौड़ रहा है।

97. रक्तवर्ण कुमुदिनी की तरह उसके नेत्र विकसित हुए। क्रोध से भीम ने दो लोहे के गदाओं से पीटा।

98. भीष्म स्वर्ण आच्छादित चाँदी के रथ पर बैठे थे। यम स्वरूप भीम ने उसे गदाघात से भग्न किया।

99. भीष्म का रथ जब टूटकर चूर्ण हो गया, तब एक अन्य रथ पर चढ़कर आगे बढ़े।

100. भीष्म और द्रोण एक मुख होकर दोनों योद्धा अविच्छिन्न रूप से भीम के ऊपर वाणों का प्रहार करने लगे।

101 जैसे पर्वत पर जल की धारा लटकती हुई दिखाई देती है, उसी प्रकार भीम के शरीर से लगे वाण खद्योत की तरह चमक रहे हैं।

102. भीष्म और द्रोण के वाणों का उसे कोई भय नहीं है। वाण उसके शरीर से लगकर पर्वत पर मारे गये ढेले की तरह चूर्ण हो जाते हैं।

103. दुःसह युद्ध देखकर महातेजस्वी पाण्डव ने क्रोध से भीष्म के रथ को पकड़ा।

104. हाथ को ऊपर उठाकर रथ को घुमाते हुए द्रोण के रथ

पर पटका।

105. दोनों रथ टूटकर चूर्ण हो गये और दोनों महारथी आहत होकर पड़े रहे।

106. मानगोविन्द दूर से दुःखी होता है कि क्यों मैंने इतनी सम्पदा नष्ट की ?

107. कर्ण, अश्वत्थामा, कृपाचार्य, भूरिश्रवा, शल्य आदि महामल्लों ने निरर्थक शरीर को पीड़ा दी।

108. शकुनि से आरम्भ करके भीष्म, द्रोण आदि का पतन हुआ। ऐसी विपत्ति मुझे किसने दी ?

109. सौ भाइयों के साथ धर्म के कारण जान बच गयी। किस विधाता के लेख से मैंने राज्य को डुबा दिया।

110. भीम ने द्रोण और भीष्म को दोनों हाथों से तानकर ऊपर उठाया हुआ है।

111. द्रोण के ऊपर गदा से प्रहार करने के समय अर्जुन, नकुल और सहदेव ने आकर उसे पकड़ा।

112. अर्जुन ने कहा कि हे भाई रुको। इन्हें मारने की बड़े भाई की आज्ञा नहीं है।

113. अर्जुन ने कहा कि हे भाई ! मन में क्यों नहीं सोचते कि पिता और गुरु के प्रति धर्म-पालन करना उचित है।

114. अर्जुन के कहने पर भीमसेन का क्रोध शान्त हुआ। स्वस्थ होकर द्रोण ने साधु-साधु बेटा कहा।

115. तुम्हारा जीवन धन्य है, तुम्हारे पिता और साध्वी जननी धन्य हैं।

116. भीष्म और द्रोण ने उनकी प्रशंसा की। उन्हें प्रणाम करके चारों लोग लौटे।

117-118. सेना को घेरे हुए शाल्व, पुण्डरीक्ष, दमघोष, रुक्मण, शिशुपाल आदि के ऊपर भीमसेन ऐसे टूट पड़ा जैसे जंगली जन्तुओं पर सिंह टूट पड़ता है।

119. भीम की विकट दृष्टि देखकर सेना भाग गयी। पांचों राजा एकत्रित होकर जोर से शराघात करने लगे।

120. वृकोदर शस्त्र का भय नहीं करता। अर्जुन पाँचों राजाओं के बाणों का छेदन करता है।

121. भीमसेन घोर गर्जन के साथ गदा प्रहार करता है। इस प्रकार चौदह घड़ी दिन बीत गया।

122. रात सहित तीन दिन तक घमासान युद्ध हुआ। उपवास और क्लान्ति से कोई वाण नहीं चला पा रहा

123. भीम और अर्जुन को संग्राम में तृप्ति नहीं है। युद्ध में कूद जाने पर अन्य विषय की चिन्ता नहीं है।

124. पाण्डवों की ऐसी महिमा है कि पैंतालीस अक्षौहिणी सेना के बीच में घुसकर महायुद्ध करते हैं।

125. सूर्य अस्ताचल पर पहुँच गया। अब दिन बीत गया, रात होने लगी।

126. भीष्म और द्रोण रक्तरंजित होकर भागते हुए किंशुक फूल की तरह दिखाई दे रहे हैं।

127. दुर्योधन एक योजन दूरी पर था। भीष्म और द्रोण उस कुरुनाथ के पास पहुँचे।

128. गंगा के किनारे रणंजय नामक पर्वत पर भग्न-ब... होकर कुरुनाथ रह रहा है।

129. इतने घोर आन्दोलन का वर्णन कौन कर सकता है ? भीम के चीत्कार से ब्रह्माण्ड उछल रहा है।

130. भीष्म और द्रोण ने कहा कि यहाँ रहना उचित नहीं। चलो घोर वन में प्रवेश करें।

131. वह सेना को मारकर हम लोगों की तरफ आयेगा। कोई नहीं बचेगा, सभी डूब जायेंगे।

132. कुरु राजा के साथ सभी वन में खिसक गये। गदाघात के कारण जरासन्ध की सेना भाग नहीं पा रही है।

133. किसी का अंग टूट गया, किसी का पैर लंगड़ा हो

134. गया। गज और अश्व वाण लगने से चल नहीं सकते हैं।

134. कदली वन में घुसे हुए मत्त नाग की तरह वह घुस गया। सेना गरुड़ को देखे हुए सर्प की तरह बिल में घुस गयी।

135. वह विशेषतः महामत्त है दूसरे घोर अन्धकार है। महाघोर शोर करके उसने दुश्मन के बल का संहार किया।

136. कौन पराया और कौन अपना है ? कौन शत्रु और कौन मित्र है ? इसका निर्धारण नहीं किया जा सकता।

137. पैर के आघात से जलता हुआ मशाल बुझ गया। पवन पुत्र ने दुगुने बल से प्रहार किया।

138. जो रथहीन और शस्त्रहीन लोग संग्राम मे पीठ दिखाकर भागते हैं, उन्हें अर्जुन नहीं मारता।

139. भीमसेन ने बहुत सी सेना को मारा। दोनों हाथों में रथ लेकर आपस में टकराकर पीटा।

140-141. वज्रनाम का रथ सौ लट्ठा लम्बा है। उसमें दस हजार सिंह जुते हुए हैं। दस लाख भार मणि-माणिक्य लगा हुआ है। उस रथ को भीम ने फेंक दिया जो एक योजन की दूरी पर जाकर गिरा।

142. रथ भग्न देखकर भीष्म और द्रोण भाग गये। अब कौन बेचारा उसके पास रहेगा।

143. जिस प्रकार मन्दराचल ने क्षीर सिन्धु का मन्थन किया था, उसी प्रकार भीम ने सेना का मन्थन किया। ऐसा लगता था मानो यमराज काल-दण्ड लेकर उपस्थित है।

144. दुःसह संग्राम में चारों भाई घुस गये। ठाकुर की आज्ञा न होने से सेना का वध नहीं करते।

145. अकेले ही भीम ने अपार सेना का वध किया। सेना शस्त्र फेंककर दाँत में तृण दबाकर शरणापन्न होती है।

146. रथ, गज, अश्व छोड़कर महादुःख से भागते समय मुँह में दसों नख डालकर कहते हैं कि स्वामी ! रक्षा करो।

147. जिसका शरीर दुर्दान्त और हृदय निष्ठुर है, वह भीम शरण माँगने पर दुगने बल से प्रहार करता है।

148. अर्जुन सेना की विकलता देखकर दुःखी होता है। हे स्वामी ! ये सब निरीह हैं, इनको मारने से क्या लाभ होगा ?

149. तीनों राजाओं को हराकर वीर ने महायुद्ध किया। पन्द्रह योजन तक पैरा पड़ गया।

150-153. दमनक, शाल्व, पुण्डरीक्ष, रुक्मण और शिशुपाल ये पाँचों एक प्रहार में ही रथशून्य हो गये। दोनों हाथों से पाँचों के केश पकड़कर भीम खींचकर ले आ रहा है। ऊपर उठाकर लाने से उनके पाँव जमीन पर नहीं पड़ते हैं।

154-155. उच्चासनासीन युधिष्ठिर के सामने चारों भाई एक शुभ मुहूर्त में उपस्थित हुए।

156. युधिष्ठिर भीम की मूर्ति देखकर शीघ्र उतर आये।

157. प्रणाम करके चारों भाई लेट गये। युधिष्ठिर ने भीम के हाथ में केश पकड़े हुए लोगों को देखा।

158. युधिष्ठिर ने कहा कि हे ब्राह्मण ! इन पाँच राजाओं को छोड़ दो, भाग जायें।

159. हम लोग ब्राह्मण हैं, हत्याकारी नहीं। वेदशास्त्र हम लोगों के शरीर की शोभा है।

160. उन पाँच राजाओं को टाँग के नीचे से फेंक दिया। वे छोड़ते ही प्राण लेकर भागे।

161. वे भग्न-सैन्य होकर कुरुसेना में घुस गये। किसी को अपने पर भरोसा नहीं है। सभी भाग रहे हैं।

162. एक दूसरे पर कोई विश्वास नहीं करता है। असम्भार होकर भागते हैं। भय से कोई पीछे मुड़कर नहीं देखता है।

163. ये पाँच राजा जो भाग गये वे रात बीतने पर जाकर सेना से मिले।

164. सेना मन्दाकिनी नदी के किनारे थी, जहाँ अपने प्राण लेकर ये पहुँचे।

165. दुर्योधन राजा सहित सेना नित्यकर्म समाप्त करके वन में कन्दमूल फल आदि का आहार कर रही है।

166. सभी राजागण सेना की समीक्षा करते हैं। किसी की चौथाई और किसी की आधी सेना समाप्त हुई।

167. दुर्योधन राजा की अट्ठारह अक्षौहिणी सेना में से सात अक्षौहिणी समाप्त हुई और ग्यारह अक्षौहिणी बच गयी।

168. जितने लोग बचकर आये, उनमें कोई अक्षत नहीं है।

169. दुर्योधन ने पाँचों राजाओं को पास बुलाकर पूछा कि तुम्हें तो ब्राह्मण ने पकड़ लिया था। कैसे छोड़ दिया ?

170. रुक्मण ने कहा कि हे दुर्योधन ! उसके भाई ने हम लोगों की रक्षा की।

171. वह द्विजवर वीर और संसार में श्रेष्ठ है। धर्म के कारण हम पाँचों का मुण्ड नहीं काटा।

172. उन लोगों का पिता या भ्राता एक महाज्ञानी ब्राह्मण है। उसने ही इस प्रकार की बात कही।

173. हे ब्राह्मण छोड़ दो। इस प्रकार दयापूर्ण बात से उसने हम लोगों को छोड़ दिया।

174. दुर्योधन ने कहा कि यह बात समझ में नहीं आती कि भिक्षुक ब्राह्मण होकर वे ऐसे कैसे हुए ?

175. भीष्म ने कहा कि तुम राजाधिराज शिरोमणि हो। इतने

समय में उन्हें कैसे पहचान न सके ?

176. दुर्योधन बार-बार भीष्म से पूछता है कि वे कौन थे? मैं अब भी नहीं जान पाया।

177-178. भीष्म ने कहा कि हे दुर्योधन ! लाख राजाओं की सेना को जीतने वाला केवल इन्द्र, गोविन्द और अर्जुन ये तीन ही हैं।

179. हम लोग तो इन्द्र के शत्रु नहीं हैं। पुनः अर्जुन के नाते वे हमारे पितृव्य हैं।

180. हमारे गदागुरु बलदेव हैं जिसके कारण गोविन्द हम पर स्नेह करते हैं।

181. पाण्डव तो जातुगृह में जल गये। अब हमें जीतने में कौन समर्थ है ?

182. भीष्म ने कहा कि हे बेटा ! तुम्हारा ज्ञान डूब गया है। जिसने लक्ष्य-भेद किया, वह प्रत्यक्ष अर्जुन था।

183. दो वृक्षों को घुमाकर जो पहले दौड़ा था, वह पवन- नन्दन भीमसेन था।

184. उसके पीछे जो दो वृक्ष लेकर दौड़े थे माद्री के पुत्र नकुल और सहदेव थे।

185. उनके साथ मात्र युधिष्ठिर नही थे। चारों भाइयों ने लाख राजाओं को जीता।

186 187. दुर्योधन ने कहा कि यह तो बड़ा आश्चर्यजनक है। कुन्ती और पॉच पाण्डव तथा पुरोचन सहित सात लोगों को जातुगृह में मरा हुआ मैने प्रत्यक्ष रूप मे देखा।

188. भीष्म ओर द्रोण ने कहा कि यह सब झूठ है। केवल पुरोचन का नाश हुआ यही सत्य है।

189 शकुनि, दु:शासन, कर्ण ओर शल्य ने कहा कि हम लोग पहले से ही जानते हैं कि कुरु बल को नृप कभी भी अच्छा नहीं कहते।

190. पाण्डव जातुगृह मे प्रत्यक्ष नाश को प्राप्त हुए। हे भीष्म ! तुम कभी भी पक्षपात नहीं छोड़ते।

191. द्रोण से वे लोग कहते हैं कि ये बड़े क्षुद्र हैं। मरे हुए लोगों के प्रति इनकी बड़ी श्रद्धा है।

192-193. वे भिक्षार्थी ब्राह्मण के अलावा कुछ नहीं हैं। गुरु परशुराम को सन्तुष्ट करके ऐसी विद्या को प्राप्त किया।

194. भीष्म ने कहा कि मेरी बात न मानने के कारण केवल देह-पीड़ा प्राप्त की किन्तु बच गये।

195-196. धर्मराज युधिष्ठिर अजातशत्रु हैं। ये चारों भाई उसकी बात का उल्लंघन नहीं कर सकते। इसलिए उन लोगों ने युद्ध में तुम लोगों का नाश नहीं किया। तुम सबका जीवन कलंकित हुआ।

197. अरे मत्तता और गर्व के कारण तुमने हम लोगों को डुबा दिया। दो-चार दिनों में ही सच और झूठ जान पड़ेगा।

198. भग्न-सैन्य होकर मानगोविन्द जा रहा है। युधिष्ठिर पांचाली को देखकर आनन्दित हुए।

199 व्यास मुनि के महत वाक्य से हम लोगों ने द्रौपदी को प्राप्त किया।

200. मदनगिरि पर्वत पर दुर्योधन ने सेना को रोक लिया। वहाँ से द्रुपद के पुत्र का कोई चिह्न नहीं दिखाई देता है।

201. भीमसेन ने कहा कि हे देव ! चलो, द्रौपदी को लेकर हम लोग द्रुपद के राजप्रासाद में जायें।

202. तभी हम लोग द्रुपद की इच्छा समझेंगे। युधिष्ठिर ने कहा कि ऐसा उचित नहीं है।

203 204. हम लोग तो विपत्ति काल में कुम्हारशाला में रहकर बचे। सम्पत्ति के समय क्यों दूसरी जगह जायेंगे? उसी कुम्हारशाला में रहकर विवाह करेंगे।

205-206 विपत्ति के समय जिस कुम्हार ने हम लोगों को ठॉव दिया था, वह हम लोगों का विवाह देखकर आनन्दित होगा। यह बात पाण्डव, द्रौपदी और केशिनी वैदूर्य पर्वत पर बैठकर सोच रहे हैं।

207. एक लाख राजा छत्र-भग्न होकर भाग गये। वे सभी एक होकर हम लोगों का रास्ता रोक सकते हैं।

208. हम लोगो के रहते द्रुपद पर विपत्ति पड़ेगी। वे दुहिता देकर हम लोगों के प्रति समर्पित हुए।

209. केशिनी ने कहा कि तुम पाँचों लोग महान् हो। एक लाख राजाओं को तुम लोगों ने जीता है।

210. पुत्रों को लेकर द्रुपद भाग रहे हैं। अत्यन्त व्याकुल होकर तुम लोगों को खोज रहे हैं।

211. हे स्वामी ! चलो अपने देश को चलें। पांचाल देश के राजा को दोष न दो।

212. हे स्वामी ! द्रौपदी को जिस कार्य के लिए पैदा किया था, इस समय उसका सुफल प्राप्त किया।

213. युधिष्ठिर ने कहा कि हम लोग तो भिखारी हैं। क्या हम लोगों को देने के लिए द्रौपदी को पाला था ?

214. केशिनी ने कहा कि मैं इसका रहस्य जानती हूँ। मुझे मालूम है कि तुम लोग पंच पाण्डव हो।

215-216. द्रोण ने जब अर्जुन के हाथों द्रुपद राजा को पकड़वाकर बन्दी बनाया तब दुर्योधन ने अकारण अपमानित किया। उसके प्रतिशोध के कारण राजा ने महादेव की सेवा की।

217. अट्ठारह वर्ष में महादेव प्रसन्न हुए। द्रुपद ने कहा कि मुझे एक कन्या प्रदान कीजिये।

218. मैं उस कन्या को प्रदान करके उसके हाथों कौरवों का विनाश कराऊँगा।

219. ईश्वर ने व्यास और दुर्वासा को एक कन्या पैदा करने के लिए आदेश दिया।

220. स्वामी की आज्ञा से ऋषि ने यज्ञ किया। श्रीखण्डी और धृष्टद्युम्न पहले पैदा हुए।

221. बाद में द्रौपदी पैदा हुई। पाण्डव जातुगृह में दग्ध हुए—ऐसी बात सुनी गयी।

222. व्यास को पूछकर यह सब घटना जान सके। तब महालक्ष्य निर्माण करके व्यास कूट की रचना की गयी।

223 अर्जुन के अतिरिक्त इसे कोई नहीं भेद सकता। अतः निश्चय किया कि इस लक्ष्य को जो भेदेगा उसी को दुहिता दूँगा।

224. मुनि व्यास ने ऐसी रचना की। राजा ने तुम्हारी आशा में स्वयंवर का विधान किया।

225. सदाशिव की बात कौन अन्यथा कर सकता है ? द्रुपद ने जो चाहा उसे पाया।

226. युधिष्ठिर ने केशिनी से पूछा कि तुमने कैसे जाना कि हम लोग पाण्डव हैं ?

227. केशिनी ने कहा कि सत्ययुग के प्रथम अवतार में द्रौपदी का नाम केतुका रखा था।

228. मेरा उग्रतारा था। इसकी मनोहारिणी दासी के रूप में मैं सेवा करती थी।

229. द्वितीय जन्म में इसका नाम एकबला पार्वती था। मेरा नाम तब कांवरी मालती था।

230. जन्म-जन्म से मैं इसकी सहचरी हूँ। भृत्य भाव से इसके चरणों की सेवा करती हूँ।

231. तृतीय जन्म में यह शची देवी हुई। मैं प्रियंवदा होकर इसके चरणों की सेवा करती रही।

232. चौथे जन्म में यह द्रौपदी रूप में पैदा हुई। मेरा नाम केशिनी हुआ। इस प्रकार मैं इसकी जन्म-जन्मान्तर की दासी हूँ।

233. तुम लोग एक ही इन्द्र की पाँच मूर्तियाँ हो। मैं तुम्हें जानती हूँ कि तुम लोग जन्म-जन्मातर के पति हो।

234. केशिनी ने जब अनेक जन्मों की कथा कही, तब युधिष्ठिर ने कहा कि तुम पूजा के योग्य हो।

235. उन्होंने केशिनी का बहुत सम्मान किया। पांचाली को सूर्यमण्डल में अपर्णा की तरह समझे।

236. कन्या को लेकर पंचपाण्डव माता के पास कुम्भकारशाला की ओर चल दिये।

237. उस कन्या को देखकर युधिष्ठिर सोचते हैं कि अर्जुन ने तो लक्ष्य-भेद किया किन्तु ज्येष्ठ अनुक्रम से मुझे क्यों कन्या प्रदान नहीं किया।

238-239. तपस्वी व्यास ने कैसा विधान किया ? युक्तितः कन्या मुझे मिलनी चाहिए। युधिष्ठिर कन्या के लोभ से ऐसा सोचते हैं।

240-241. भीमसेन सोचता है कि अर्जुन ने तो लक्ष्य-भेद किया किन्तु मानगोविन्द ने दुष्ट राजाओं को लेकर शोरगुल मचाया। यदि मैं युद्ध न करके चुप हो जाता तो यह क्षार अर्जुन द्रौपदी का ला सकता था!

242. युक्तितः यह मेरी होगी। अर्जुन इसका उल्लंघन कैसे कर सकता है ?

243. युक्तितः यदि मुझे युवती नहीं देगा तो मैं बलपूर्वक अवश्य छीन लूँगा।

244. संग्राम मैं वे चारों मेरे बराबर नहीं हैं। पांचाली को लेकर मैं हिडिम्बक वन आवास में रहूँगा।

245. नकुल ने सोचा कि सुकुमार देखकर यह शरद-चन्द्रमुखी अवश्य मुझे वरण करेगी।

246. सहदेव सोचते हैं कि मैं तो मन्त्री चूड़ामणि हूँ। मुझे अवश्य द्रुपद-कन्या प्राप्त होगी।

247. सबके मन में ऐसा ही विचार है। युधिष्ठिर ने सोचा कि हम लोग क्यों लोभ करें ?

248. हम लोगों के लोभ करने से बहुत बुरा होगा। भाइयों के बीच द्वन्द्व होगा और हम लोग कलंकित होंगे।

249. माता के पास गुप्त रूप से कहेंगे। माँ जैसी आज्ञा देगी, वैसा किया जायेगा।

250. ढाई प्रहर रात हो चुकी है। इस समय स्वयंवर-कन्या को लेकर वे कुम्हारशाला के द्वार पर पहुंचे।

251. हे माँ ! पाँव धोने के लिए एक कलश पानी दो। कुन्ती ने भीतर से पूछा कि आज क्या प्राप्त हुआ ?

252. युधिष्ठिर ने कहा कि हे माँ ! आज एक बड़ा ही सुन्दर फल प्राप्त हुआ है।

253 माता ने कहा कि यदि एक ही फल मिला है तो पाँचों भाई बाँटकर खा लो।

254. हे परम अपर्णा ! तुमने जैसी आज्ञा दी, उसे मानना हम लोगों का कर्तव्य है। तुम्हारी आज्ञा हमारे लिए पत्थर की लकीर है।

255. भीमसेन ने कहा कि हे माँ ! यह सचमुच फल नहीं है। लक्ष्य-भेद करके द्रुपद की दुलारी को ले आया हूँ।

256. कुन्ती ने कहा कि बेटा ! महान् लोगों की बात अन्यथा नहीं होती। तुम लोग अच्छे बेटे हो। मेरी बात अन्यथा मत करो।

257. एकबारगी मैंने जो आज्ञा दी, उसके अनुसार तुम पाँचों द्रुपदकुमारी को प्रदान हो।

258. युधिष्ठिर ने कहा कि हे माँ ! यही उचित है। तुम हम लोगों का आन्तरिक भाव जानती हो।

259. केशिनी का मुँह देखकर द्रौपदी ने कहा कि ये लोग भिक्षापात्र लेकर कैसे घूम रहे हैं ?

260. महानिशाकाल में कुम्हारशाला में घुसकर कुछ पुआल जलाया।

261-262. केशिनी ने कहा कि मैंने इनका आवास देख लिया। द्रुपद का मन व्यग्र होगा। राजा से सब बात बताकर यहाँ ले आऊँगी।

263. इस प्रकार समझाकर केशिनी शीघ्र द्रुपद भुवन की ओर चली।

264. कुम्हारशाला में एक राख की शय्या तैयार की। एक छोटी चटाई लेकर कुन्ती सोयी।

265. उसके पाँव के नीचे एक पांशु शय्या बनाकर युधिष्ठिर सोये।

266. युधिष्ठिर के पाँव के नीचे पांशु शय्या पर भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव सोये।

267. उनके पैरों के नीचे एक पांशु शय्या बनाकर कुन्ती ने द्रौपदी को सोने के लिए कहा।

268. क्षार-शय्या देखकर द्रौपदी ने देव ! कहकर माथे पर हाथ रखा।

269. कुन्ती ने कहा कि मेरे पुत्र भिक्षार्थी हैं। अपने भाग्य के कारण ही तो तुम्हें ये मिले।

270. जो जो कुछ अर्जन करता है, उसी का भोग करता है। सम्पत्ति और विपत्ति दोनों संसार में ही रहती हैं।

271. द्रौपदी पांशु-शय्या देखकर व्याकुल हो गयी। सोचती है कि हे देव पुरुष ! मेरे भाग्य में यही लिखा था।

272. गजदन्त निर्मित रत्नखचित पलंग पर हंस की तरह स्वच्छ और कोमल विस्तर बिछाकर एक लाख दासियाँ मुझे सुलाती थीं।

273 उस उत्तम शय्या के ऊपर रेशमी वस्त्र बिछाकर उसके ऊपर कपूर-चूर्ण और सुवासित फूल की पंखुड़ियाँ बिछाती थीं।

274. उस पर भी मेरा शरीर रगड़ खाता था। इस पांशु-शय्या पर मैं कैसे सोऊँगी ?

275-276. व्यास महामुनि ने लाख ब्राह्मणों को लेकर महायज्ञ कुण्ड से मुझे उत्पन्न कराया। मैं पांचाल राजा की दुलारी हूँ। हे देव पुरुष ! मुझे यहाँ लाकर ऐसा कर दिया !

277. राख उड़कर शरीर पर पड़ने से दिनभर की सुकृति समाप्त हो जाती है। उस पर पाँव रखकर जाने से आयु और श्री की हानि होती है।

278. मैं परम माहेश्वरी हूँ। शरीर में ज्ञान रहते इस

समय भस्म शय्या पर कैसे सोऊँगी।

279. यह देखकर भीमसेन ने आँख तरेरकर देखा। हे द्रौपदी! क्या चाहती हो ? सोती क्यों नहीं हो ?

280. इसे देखकर द्रौपदी भयभीत हुई। सोचने लगी कि यह दुष्ट ब्राह्मण मुझे मार डालेगा।

281. भयभीत पांचाली पाण्डवों के पाँवों के नीचे व्याकुल होकर सो गयी।

282-284. द्रौपदी ने चक्रभार, ताम्र खर्पर, गगरी, गडुआ, पीढ़ा आदि देखा कि सिर के पास रखे हैं। फटा छाता, फटा जूता, हरिगोविन्द झोला, स्रुवा प्रोक्षणी, जलपूर्ण सौरभ पात्र, कुश, ताम्रपत्र, पवित्री, पुष्कर माला आदि देखकर द्रुपददुलारी मूर्च्छित हुई।

285. राजकुमारी होकर मेरा ऐसा भाग्य हुआ कि मैंने भिक्षार्थी ब्राह्मणों को वर रूप में प्राप्त किया।

286. हे देव पुरुष ! तुम पाप-पुण्य का विचार नहीं करते हो। स्त्रियों को तुम क्यों जन्म देते हो ?

287. यदि मुझे किसी राजा ने प्राप्त किया होता तो सिर पर बैठाकर मुझे अपने घर ले जाता।

288. ये निर्दयी ब्राह्मण स्नेहरहित हैं। अन्त में मैं इनके पाद-तल के योग्य हुई।

289. द्रौपदी की चिन्ता का वर्णन कौन कर सकता है ? वह एक तो राजपुत्री है, दूसरे बारी उमर की है।

290. भीम के भय से व्याकुल होकर बार-बार नारायण नारायण स्मरण करती हुई वह सो गयी।

द्रौपदी की पूर्व जन्म-कथा

1. अगस्त्य ऋषि कहते हैं कि वैवस्वत मनु ! सुनो। परिवार को बैठाकर द्रुपद विचार करते हैं।

2. निरर्थक मैंने क्यों स्वयंवर रचा ? कार्य भी नहीं हुआ और ध्वंस होकर मरा।

3. एक ब्राह्मण ने प्रत्यक्षतः लक्ष्य-भेद किया। दुर्योधन के साथ हमेशा के लिए शत्रुता हुई।

4. जिस प्रकार दुष्ट राजाओं ने झगड़ा किया, वह मेरा कृत्य है। दूसरे को क्यों दोष दूँ ?

5. पता नहीं कहाँ किसने उस ब्राह्मण को मार दिया होगा ? हम लोग तो भय से भाग गये। कुछ देख न सके।

6. कौन मेरी पांचाली को बलात् ले गया ? दुहिता के लिए व्याकुल होकर द्रुपदेश्वर रो रहे हैं।

7. धृष्टद्युम्न का कष्ट कौन बता सकता है ? वह भूमि पर गिरकर रुदन करता है।

8. दुहिता की व्याकुलता से पद्मावती रोती है। सोचती है कि हे बेटी ! इतने दिन तक तुम्हारा पालन-पोषण किया। अब वह सब व्यर्थ हुआ।

9. पता नहीं कौन जान से मार डाला या कौन कहाँ ले गया ? क्या मालूम ? मेरा शरीर जल जाये। मैं क्यों नहीं मर गयी ?

10. हे मेरे बेटे श्रीखण्डी और धृष्टद्युम्न ! ब्राह्मण का निशान ढूँढ़ो।

11. झगड़े के समय वे छिप सकते थे। हम लोग तो भय से भाग गये, किन्तु ब्राह्मण पीछे न हटे।

12. उनके साथ-साथ हम लोगों ने युद्ध क्यों नहीं किया ? द्रौपदी के लिए युद्ध करके हम लोग क्यों मरे नहीं ?

13. द्रुपद के आदेश से उनके दोनों बेटों ने एक हजार मशाल लेकर प्रस्थान किया।

14. सभागृह में, परिसर में खोजते हुए जा रहे है। देखा कि अनेक योद्धा और राजा गिरे पड़े हैं।

15. रत्नमण्डित मुकुट विराजित ललाट वाले रक्त से रंजित होकर रणभूमि में पड़े हुए हैं।

16. रक्त और माँस देखकर श्मशानचण्डी योगिनियों को लेकर रक्तपान करती है।

17. विकट अट्टहास ओर उल्लास ध्वनि और डमरू के प्रचण्ड नाद से ब्रह्माण्ड उछल रहा है।

18. मत्त हाथियों को लेकर देवियाँ भ्रमण करती हुई विचित्र क्रीड़ा करती हैं।

19-20. चर्चिका, चामुण्डा, चाचकेश्वरी, भद्रकाली, कंकाली, बेताली, काली, भैरवी, बासिला आदि देवियाँ, खेचरी, भूचरी, चकिता, चंचला आदि के साथ हृदय पर माला लटकाये मत्त होकर खेलती हैं।

21. कोई व्याघ्र, कोई सिंह, कोई शार्दूल, कोई गज और कोई गधे पर बैठकर चल रही हैं।

22. प्रेत भूत आदि घोर रव करके कौतुकपूर्वक खेलते हुए

नाचते हैं, गाते हैं और बजाते हैं।

23. महानिशाकाल में रक्त-माँस का बेड़ा तैर रहा है। हे माँ सर्वमंगला ! मैं तुम्हारे रूप का ध्यान करता हूँ। मेरा उद्धार करो।

24. नौ करोड़ चण्डियों के चरण में मेरी सेवा अपित है। हे देवी ! शूद्रमुनि सारला दास पर प्रसन्न हो।

25. धृष्टद्युम्न आदि जब मशाल लेकर पहुँचे तब समस्त देवियाँ अन्तर्धान हो गयीं।

26. सिंहासन, मण्डप, देव-आस्थान, उद्यान-गृह और नृत्य गृह और घोर वन आदि छिपने वाले स्थान में खोजत हुए घुस गये।

27. सभी गुप्त स्थानों को व्याकुल होकर खोज रहे हैं। पता नहीं किस स्थान पर वे छिपे बैठे हैं।

28-29. अपरिमित मृत पिण्ड रुधिर में पड़े हुए हैं। आस्थान आदि से चौबीस योजन तक खोजकर द्रुपद के बेटे पा न सके। घूमते हुए कुम्भारशाला के पास पहुँचे।

30. श्रीखण्डी ने कहा, यह गोपन स्थान है। लगता है ब्राह्मण यहीं छिपे होंगे।

31. पवन-पुत्र उत्तान होकर सोये हुए हैं। निश्वास के आघात से छप्पर आकाश में उठना-गिरता है।

32 पाँच दिन तक भोजन और नींद नहीं थी। शत्रुओं का मर्दन करके वह निश्चिन्त होकर आराम से सो रहा है।

33. निश्वास के आघात से छप्पर बाहर ताड़ के ऊपर बन्धन छोड़कर उड़ता है।

34. निश्वास लेने पर पुनः लौटकर बैठता है। दूर से ही देखकर धृष्टद्युम्न भयभीत हुआ।

35. श्रीखण्डी ने कहा, हे भाई ! उसके पास मत जाना। कोई राक्षस सो रहा है। इसी समय हम लोगों को खा जायेगा।

36. भय से कुमार उसके पास नहीं गये। लौटकर पिता द्रुपद से कहते हैं–

37. हे पिता ! हम लोगों ने बहुत दूर तक की यात्रा की, किन्तु किसी को नहीं देख सके।

38. द्रौपदी और ब्राह्मणों का कोई निशान नहीं है। इसे सुनकर द्रुपद का मन विषण्ण हो गया।

39. भूपति उच्च स्वर से रुदन करता है। उसके साथ पूरा परिवार रो रहा है।

40. हे बेटी ! तुम अदार, अयोनिजात और अग्निकुमारी हो। पिता की मूर्खता से महादुःखिता हुई।

41. अपने हृदय की बात किससे कहूँगा ? अब मैं शोक के योग्य नहीं हूँ। अपना शरीर विसर्जित कर दूँगा।

43. महल की सभी स्त्रियाँ रुदन कर रही हैं। उसी समय केशिनी पहुँची।

44. आज्ञा पाकर मृदुशूली दासी अन्तःपुर में प्रविष्ट हुई। सभी स्थिर होकर कहते हैं कि यह तो साथ में थी।

45 मृदुशूली ने समस्त कुशल बताया। द्रुपद ने कहा कि मेरा निस्तार हो गया।

46 48 केशिनी ने बैठकर सारा वृत्तान्त बताया। जिस वीर ने लक्ष्य-भेद किया उसके साथ कौरवों ने युद्ध किया। तब उसका एक बड़ा भाई उसके साथ आ मिला। दोनों हाथों में दो वृक्ष उखाड़कर ले लिया था, उसे देखकर दुष्ट राजागण भाग गये।

49. पवन-गति से वृक्ष घुमाकर मारने से रथ, गज, अश्व सभी भूमि पर गिर पड़े।

50 पुनः दो ब्राह्मण एक-एक वृक्ष लेकर दौड़ आये।

51 52 आता हुआ मन्त्री शकुनि भय से भाग गया। उसके रथ को ये लोग ले आये। उस बहुरत्न खचित रथ पर द्रौपदी के साथ मुझे बैठाया।

53 54 ब्राह्मणों ने जिस प्रकार से युद्ध किया, वह देवों के लिए दुर्लभ और मानव के लिए अगोचर है। चार ब्राह्मण लाख राजाओं के साथ लड़े। कितने लोग गिरे उसका अन्त नहीं।

55 जिस समय रुक्मण, बाणासुर, सम्बर और वज्रनाभ के साथ युद्ध किया, वह देखा तो अवश्य गया किन्तु कहा नहीं जा सकता।

56-57. रथ के साथ रथ को और गज के साथ गज को टकराकर पीटा। एक ही साथ चार-चार घोड़ों को पटक देते हैं। सभी राजा भाग गये। कोई वहाँ न रह गया। पन्द्रह योजन तक रक्त की नदी बहने लगी।

58. वे ब्राह्मण महाबलशाली हैं। चार व्यक्तियों ने ही लाखों राजाओं का दर्प-मर्दन किया।

59-60. कालदमन, शिशुपाल, पुण्डरीक्ष, रुक्मण और शाल्व इन पाँच दुष्ट राजाओं की असंख्य सेना को मारकर

पाँचों राजाओं के केश पकड़कर ले आये।

61-62. जयदेव नामक एक ब्राह्मण दक्षिण पंचमण्डप पर बैठा था। उसके सामने पाँचों को पटक दिया। उन चारों ब्राह्मणों ने इसके बाद दण्डवत् प्रणाम किया।

63. वह बड़ा धार्मिक, विवेकी और दयावान है। कहा कि छोड़ दो। इन्हें मारकर क्या पाओगे ?

64. उसकी बात हे देव ! अलंघित है। आज्ञानुसार उन लोगों ने उन्हें छोड़ दिया।

65. हे देव ! उन लोगों ने समस्त राजाओं को दोनों टाँग के बीच से फेंक दिया। समस्त राजाओं का यह दण्ड कहा नहीं जा सकता।

66. संक्षेप में केशिनी ने सारी बाते कहीं। उसे सुनकर द्रुपद अत्यन्त आनन्दित हुए।

67. वे कहते हैं कि तुम मेरी बेटी हो। मैं तुम्हारी विपत्ति लेता हूँ।

68. केशिनी ने कहा कि हे नृपति ! मेरी बातें सावधान होकर सुनो।

69. हम लोगों को लेकर वे ब्राह्मण कुम्हारशाला में पहुँचे।

70. हे स्वामी ! मैंने द्रुपद-भुवन मे जाने के लिए उन्हें अत्यन्त विनयपूर्वक कहा।

71. हे स्वामी ! इच्छा करने पर वे तीनों लोक में जा सकते हैं किन्तु इच्छा न होने पर वे सुमेरु पर्वत से भी अचल हो जाते हैं।

72. हे देव ! द्रौपदी ने मुझे बुलाकर कहा कि मेरे पिता को जाकर शीघ्र ले आओ।

73. हे देव ! वहाँ शीघ्र चलें। यदि वे शून्य पथ में चले जायेंगे तो हम लोग नहीं देख सकेंगे।

74. श्रीखण्डी ने कहा कि वहाँ ब्राह्मण नहीं । वहाँ कोई दानव सो रहा है।

75. हे देव ! हम लोगों ने उसी कुम्हारशाला में देखा। राक्षस के भय से पास नहीं गये।

76-77. द्रुपद ने कहा कि हे केशिनी ! तुम धृष्टद्युम्न और श्रीखण्डी को साथ ले जाकर दिखाओ। ये छिपकर देखेंगे कि वे ब्राह्मण हैं या दैत्य हैं।

78-79. रात ढाई प्रहर हो चुकी है। केशिनी राजकुमारों को लेकर चल दी। कुम्हारशाला के पास जाकर दोनों भाई भय से दूर रहें।

80-81. हाथ में मशाल लेकर केशिनी निर्भ्रम होकर धीरे से भीतर घुसी। देखा कि सातों लोग सोये हुए हैं। चुपके से ब्राह्मणों को देखने के लिए उन्हें बुलाया।

82-83. देखा कि माथे की ओर एक माँ सो रही है। उसके पैरों के नीचे एक ब्राह्मण सो रहा है। उसके पाँव के नीचे चार ब्राह्मण राख बिछाकर सोये हैं, कोई चटाई भी नहीं है।

84. उनके पाँव के नीचे द्रौपदी सो रही है। वे सोचते हैं कि हे बहन ! तुमने कौन-सा पाप किया कि इतना दण्ड भोग रही हो।

85. रत्नजटित कोमल शय्या विशिष्ट पलंग पर रेशमी चादर और जातक पुष्प की पंखुड़ियां बिछी होती थीं, वहाँ भी तुम्हारा शरीर रगड़ खाता था।

86-88. पचास हजार भरी कपूर का चूर्ण तीन बार शय्या पर छिड़का जाता था। लाख दासियाँ चामर लेकर तुम्हारी सेवा करती थीं। ये भिक्षार्थी ब्राह्मण हैं या कि कामरूपी राक्षस हैं—यह भी पता नहीं। अन्त में आज तुम इन लोगों के पद तल के योग्य हुई।

89. क्रोध से श्रीखण्डी ने तलवार निकालकर कहा कि इन ब्राह्मणों को काट डालूँगा।

90. केशिनी ने कहा कि यह तुम्हारी विनाश की बुद्धि है। तुम इसी समय द्रुपद के वंश को डुबा दोगे।

91. इनके शरीर से टकराकर पर्वत भी चूर हो जाते हैं। तुम्हारी तलवार के आघात से इनका क्या होगा ?

92. चलो द्रुपद राजा को ले आयें। प्रार्थना करके इन्हें ले जायेंगे।

93. धृष्टद्युम्न ने कहा कि सच है। द्रुपद आकर अपनी कन्या का कष्ट देखें।

94. कन्या को लेकर छिपकर भाग गये। गुप्त स्थान समझकर यहाँ छिपे हुए हैं।

95. फटा छाता, टूटा जूता और हरिगोविन्द झोला ही इनकी सम्पत्ति है। मेरी बहन ने जन्म से ही पाप किया था।

96. केशिनी ने कहा कि हे भाई ! ऐसा मत सोचो। बड़ों की निन्दा करने से अपना ही अमंगल होता है।

97. लक्ष्मी को पैर से क्यों मारते हो। दोनों भाई मरने का उपाय क्यों करते हो ?

98. देवताओं की निन्दा करने से नरक मिलता है। ब्राह्मण की निन्दा करने से निर्वंश होता है।

99. तपस्वी की निन्दा करने से शरीर क्षय होता है। सती की निन्दा करने से पुरुष नपुंसक होता है।

100. गुरु की निन्दा करने से शिरोच्छेदन होता है। माता-पिता की निन्दा करने से विपत्ति आती है।

101. पाठगुरु की निन्दा करने से विद्या प्राप्त नहीं होती। जो योगी और सिद्ध की निन्दा करता है वह बावला हो जाता है।

102. जो बिना जाने वैद्य की निन्दा करता है, वह जन्म-जन्मान्तर तक चिररुग्ण होता है।

103. जो बिना जाने क्षत्रिय की निन्दा करता है, वह राजदण्ड का अपराधी होता है और अवश्य मृत्युदण्ड पाता है।

104. शस्त्र की निन्दा करने से क्षत्रियत्व नहीं मिलता। शास्त्र की निन्दा करने से गलित कुष्ठ रोग होता है।

105. लक्ष्मी की निन्दा करने से जन्म-जन्म में दरिद्र होता है। सरस्वती की निन्दा करने से वंशानुक्रम से राज मूर्ख होता है।

106. मन्त्र की निन्दा करने से बधिर होता है। औषधि की निन्दा करने से अपार रोग होते हैं।

107. पशु की निन्दा करने से कृषि की क्षति होती है। पुत्र की निन्दा करने से निर्वंश होता है।

108. स्त्री की निन्दा करने से गृहवास नहीं होता। महान् व्यक्ति की निन्दा करने से अपरिमित दोष होता है।

109. तुम लोग महान् और ज्ञानी होकर क्यों पर-निन्दा करते हो ? ये शस्त्रधारी ब्राह्मण हैं।

110. तुम लोग जब भाग रहे थे, तब मैंने अपनी आँखों से देखा। अज्ञानवशात् क्यों मरना चाहते हो !

111. केशिनी दासी ने समझाकर श्रीखण्डी और धृष्टद्युम्न को भयभीत किया।

112. तीन पहर रात बीतने पर दोनों कुमार पिता के पास पहुँचे।

113. हे देव ! महायज्ञ करके जिस कन्या को उत्पन्न करवाया, उसकी अवस्था चाण्डाल से भी बदतर हुई।

114. बेचारे पाँच भिक्षार्थी ब्राह्मण जन्म से ही दरिद्र हैं। धूल-धूसरित होकर राख में लेटे हैं।

115. इस माघ महीने की शीत में उनके पास वस्त्र नहीं और वे राख बिछाकर सोये हैं। चक्र हरिगोविन्द झोले में भिक्षा माँगकर वे जीते हैं।

116. हे देव ! तुमने महा स्वयंवर करवाया। उसके भाग्य को कौन बदल सकता है ?

117. हे देव ! उस महादुःखिनी की ऐसी अवस्था देखी। द्रौपदी को उनकी पाद-सेविका रूप में देखा।

118. हे देव ! एक विधवा माँ कुम्हारशाला में राख पर सोई है। उसके पैरों के नीचे एक बेचारा सोया है।

119. उसके पैरों के नीचे चार बेचारे सोये हुए हैं। वे दुर्दान्त महावीर मन्त्रहीन दिखाई देते हैं।

120. उनके पैरों के नीचे राख पर व्याकुल द्रौपदी सोई है।

121. वे दरिद्र भिक्षुक हीन जाति के हैं। कन्या को लेकर वे डर मे छिपे हुए हैं।

122. यह मूर्ख केशिनी बड़ी दुराचारी है। यह परिचारिका दूतिका बहुत चालाक है।

123. यदि कोई नीच व्यक्ति इसे थोड़ा भी धन देगा तो यह रोगी लोगों को भी कामदेव की तरह बता सकती है।

124. द्रुपद ने कहा कि हे बेटे ! तुम लोगों ने क्यों परिचारिका केशिनी की निन्दा की ?

125. यदि अन्य राजा मेरी कन्या को पाता तो गंगा की तरह उसे माथे पर रखता।

126. यदि उनके पैरों के योग्य मेरी कुमारी है तो वे निश्चय ही ब्राह्मण नहीं हैं, अपितु स्वर्ग के अवतारी हैं।

127. द्रौपदी के भाग्य से मेरे वंश का बड़ा पुण्य हुआ। देखकर कष्ट दूर हुआ और मुक्ति मिली।

128. हे बेटा ! इसे जानकर मेरा राज्य और राज्यवासी मुक्त हुए। शीघ्र मेरे नगर में उत्सव कराओ।

129. राजा की आज्ञा से नगर में घोषणा की गयी। वीर-वाद्य और नगाड़े बजने लगे।

130. समदण्ड लेकर राजा द्रुपद कुम्हारशाला के पास पहुँचे।

131. इसी बीच करुणाकर कुम्हार ने कुन्ती को जगाकर कहा कि कितनी सोती हो ?

132. हे माँ! अपने बेटों को जगाओ। स्वयं द्रुपद उपस्थित हैं।

133. कुन्ती ने युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव को जगाया। वे महाबली पाण्डव चिहुँककर उठे।

134. ऋषिता नामक कुम्हारी ने द्रौपदी को जगाकर बैठाया।

135 नवघट गंगा जल लाकर उसने द्रौपदी को स्नान कराया।

136. अनेक सुगन्धित पदार्थ लगाकर और केश सँवारकर अपना एक रेशमी वस्त्र पहनाया।

137-138. युधिष्ठिर ने अर्जुन से कहा कि तुम हृदय में राम-कृष्ण दोनों का स्मरण करो। अर्जुन हृदय में तल्लीन हुआ और नारायण को याद किया।

139. हरि और बलराम योगबल से इसे जानकर गरुड़ की पीठ पर आसीन होकर शून्य-पथ से पधारे।

140. द्वारिका के सातवंशी नगर वालों और अष्टपाटवंशी नायिकाओं को लेकर युधिष्ठिर का विवाहोत्सव देखने के लिए आये।

141. नीलाम्बर तालध्वज रथ पर विराजमान हुए। उस बलदेव का भार गरुड़ नहीं सह पाता है।

142. छप्पन कोटि यादव वीरों के साथ नारायण कुम्हारशाला के पास उपस्थित हुए।

143. गरुड़ की पीठ से उतरकर नारायण युधिष्ठिर को प्रणाम करते हैं।

144. युधिष्ठिर ने बलदेव की पूजा की। भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव ने श्रीकृष्ण को प्रणाम किया।

145. छप्पन कोटि यादव-सेना युधिष्ठिर के चरणों में प्रणाम करती है।

146. जिस समय श्रीकृष्ण पहुँचे उसी समय साठ हजार शिष्यों को लेकर व्यास महामुनि पहुँचे।

147. एक लाख पुरोहितों को लेकर धौम्य पुरोहित विवाह-सामग्री के साथ पहुँचे।

148-149. एक लाख शिष्यों को लेकर उद्दालक, सुमन्त, वसिष्ठ विश्वामित्र और हजार शिष्यों को लेकर
179. मार्कण्डेय, वाल्मीकि, लोमस, दुर्वासा भारद्वाज, जनक और विभामण्डक प्रभृति याज्ञिक गण युधिष्ठिर के विवाहोत्सव हेतु प्रवष्टि हुए।

150. दस हजार शिष्यों को लेकर गौतम, शान्तनु, पाराशर महर्षि उपस्थित हुए।

151. महर्षियों को प्रविष्ट होते देख युधिष्ठिर ने सबको पदार्घ्य दिया।

152. समस्त ऋषियों को लेकर जब नारायण उपस्थित हुए, उसी समय देवताओं को लेकर इन्द्र उपस्थित हुए।

153. स्वर्गपुर से देवसभा बुलाई गयी। कुबेर ने अपने भण्डार से अनेक रत्न-अलंकार निकाले।

154. आकाश से सभी देवता आकर कुम्हारशाला के पास पहुँचे।

155. देवताओं ने वहीं एक रत्नप्रासाद का निर्माण किया था। वह मानव को कुम्हारशाला की तरह दिखाई देता था।

156. वैवस्वत मनु ने अगस्त्य से पूछा कि स्वर्णप्रासाद किस प्रकार कुम्हारशाला के रूप में परिणत हुआ।

157-158. अगस्त्य ने कहा कि हे मनु ! जब द्रुपद ने स्वयंवर की व्यवस्था की उस समय लाख राजाओं के लिए एक लाख महल बनवाया, किन्तु सभा में पाण्डवों का नाम नहीं लिया।

159-160. इन्द्रदेव ने आकाश से जानकर विश्वकर्मा को आदेश दिया कि आकाश से अन्तरिक्ष-भुवन को लेकर द्रुपद राज्य में त्रिवेणी नदी के पास स्थापति करो।

161. उस भुवन की रक्षा करुणाकर विद्याधर करता था। जब असुरों का भय होता तब इन्द्र वहाँ छिपता था।

162-163. वह अन्तरिक्ष-भुवन स्वर्ग से अदृश्य है। नगर रत्न-नील आदि से खचित है। विश्वकर्मा ने इन्द्र की आज्ञा से उसे लेकर त्रिवेणी के किनारे रख दिया।

164. इन्द्र ने करुणाकर विद्याधर से कहा कि तुम गुप्त रूप में कुम्हार होकर रहो।

165. मेनका की दुहिता अमर विलासिनी ऋषिता तुम्हारी पत्नी होकर वहाँ रहेगी।

166. ईधन, आग, हाँड़ी, आदि तुम रखे रहना। मेरे लिए ही पाण्डव दुःखी होते रहे हैं।

167-168. कुम्भीर, किन्नर, हिडिम्बक, बक आदि राक्षस अमरलोक में सब समय अभियान करते थे। उनके वध के लिए ही जान-बूझकर पाण्डवों को वनवास करवाया।

169. मेरे लिए दुःख पा रहे हैं। क्या द्रुपद के राज्य में सुख नहीं पायेंगे ?

170. गहन वन में सुन्दर भूमि पर इन्द्र ने कनक भुवन का निर्माण करवाया।

171. इस प्रकार इन्द्र ने महल की रचना करवाई कि वह स्वर्गीय भुवन कुम्हारशाला की तरह दिखाई देता है।

172. मुक्ता को चूर्ण करके उसमे कपूर-चूर्ण को मिलाकर चार हाथ से मोटाई तक डाला।

173 इस प्रकार देवताओ ने व्यवस्था की कि रत्न कपूर का चूर्ण कुम्हार की राख की तरह दिखाई देता है।

174 करुणाकर विद्याधर और ऋषिता विद्याधरी गुप्त रूप मे कुम्हार-कुम्हारिनी की तरह दिखाई दते हे।

175 पाण्डवो के छिपाने के लिए वे छिपे थे। उनका छिपने का समय समाप्त होते ही वे प्रकट हुए।

176 वह परिमल भुवन द्वितीय स्वर्ग की तरह दिखाई देता है। उसे देखकर बलराम के साथ यादव गण प्रशसा कर रहे है।

177-179 व्यास ने वासुदेव से पूछा कि द्रौपदी पाँचो पाण्डवो को प्रदान होगी। इनकी बात सुनकर द्रुपद क्या कहेंगे ? द्रुपद की पुत्री क्या उत्तर देगी ? एक क्षण के लिए हम लोग छिपकर इन दोनो कुलो का गोत्रोच्चार सुनेंगे।

180-182. ऐसा सोचकर वे कोटि ऋषि छिपकर कुम्हारशाला मे रहे। सातवश लेकर राम कृष्ण उग्रसेन, देवताओ के साथ इन्द्र और रत्न अलकार के साथ कुवेर वहाँ छिपकर रहे।

183. इसी समय केशिनी मृदुशूली रत्न-वस्त्र और अलकार लेकर द्रौपदी को सजाने के लिए आयी।

184 सूत्रकारों को बुलाकर राजा ने राजप्रासाद के दक्षिण द्वार मे कुम्हारशाला तक छायामण्डल बनाने के लिए आदश दिया।

185 द्रुपद के राजप्रासाद के सिंहद्वार मे कुम्हारशाला तक पाँच योजन तक पाँच लाख बढई लगे।

186 राजा द्रुपद सर्वसम्पन्न थे। आज्ञा दते ही सब कुछ सम्पादित हुआ।

187. आलेख आदि की सामग्री लेकर केशिनी ने आकर देखा कि देवसभा की तरह चतुर्दिक् सैन्य सुसज्जित है।

188-189 द्रौपदी ने कहा—हे केशिनी ! मेरे माता-पिता का जीवन धन्य है। मै तो उत्तम नारी-कुल में उत्पन्न हुई, लेकिन ये पाचो आकाश के आदि ब्रह्म देवता की तरह है।

190 यह कनक भुवन मनुष्य को कुम्हारशाला की तरह दिखाई देता है।

191 सभी देवता अभी वही थे। द्रुपद के मन की बात जानने के लिए यहाँ अन्तर्धान हो गये।

192 यह जो राख देख रही हो हो यह कपूर का चूर्ण है और हॉडियाँ सोने की है।

193 ये जो खण्ड-खण्ड खपड़े है वे सब सोने के है।

194 मेरे पिता के पास जाकर कहो कि इन्हे ब्राह्मण समझकर कोई गलत बात न कहे।

195 केशिनी ने कहा कि मुझसे ये सब बाते क्यो कह रही हो ? मै तो पहले ही सब बता चुकी हूँ।

196 द्रुपद राजा अपार उत्सव के साथ कुम्हारशाला के पास पहुँचे।

197 इस प्रकार ढण्ढ-मण्ड घर को देखकर सभी वीरों ने उपहास किया।

198 इतना स्थान होने पर भी ये यहाँ क्यो आये ? खराब जगह समझकर स्वयवर के समय यहाँ कोई नही आ सका।

199 दुःखी लोग ही इस प्रकार के कुठौंव मे रहते है। लगता है कि इनका जीवन असार्थक है।

200 द्रुपदेश्वर बाहर से ही पुकारते है कि हे लक्ष्य-भेदी ब्राह्मण ! बाहर आओ।

201 अहकार के कारण राजा द्रुपद की बात नही सुनते है। सभी योद्धा सोचते है कि ये ब्राह्मण बधिर है ?

202 राजा के चर बडे दुष्ट और घमण्डी हैं। क्षण-क्षण पर खराब बाते बालते है।

203 वे कहते है कि ये योगी, तपस्वी या यायावर या भिक्षार्थी है ? माँगकर ये खाते है फिर भी व्यर्थ में गर्व कर रहे है।

204 युधिष्ठिर ने कहा कि हे भाई धनंजय जाओ, देखो कि द्रुपद राजा क्या कह रहे हैं ?

205. अर्जुन ने कहा कि हे स्वामी ! मैं कैसे जाऊँगा ? जाने पर द्रुपद अवश्य ही मुझे ही वरण करेंगे।

206. तुम्हीं द्रुपद के पास जाओ। तुम्हीं सावधान होकर सुनना कि क्या आदेश देते हैं ?

207-208. युधिष्ठिर ने कहा कि वे लक्ष्यभेदी ब्राह्मण को बुला रहे हैं। मैं उन्हें क्या उत्तर दूँगा। मुझसे पूछेंगे कि तुमने लक्ष्य-भेद किया है क्या ? मैं कैसे झूठ बोलूँगा ?

209. भीमसेन ने कहा कि तुम मत जाओ और न अर्जुन ही जाय। बुला-बुलाकर द्रुपद क्षुब्ध हो जाय।

210 क्या मैं द्रुपद के पास जाऊँ ? देखूँ कि वह क्या कहता है ?

211. भीमसेन की बात सुनकर युधिष्ठिर ने हँसकर कहा—मैं तुम्हारे मन की बात जान रहा हूँ।

212. पाँचो पाण्डव एक-दूसरे का हाथ पकड़कर एक मूर्ति होकर बाहर आये।

213 इन पाचों की मूर्ति देखकर द्रुपदेश्वर ने पादार्घ्य देकर पूजा की।

214. हे ब्राह्मणो ! बताओ कि किसने लक्ष्य-भेद किया ? मैं किसको अपनी कन्या प्रदान करूँगा ?

215. युधिष्ठिर ने कहा कि हम पाँच भाइयों के बीच एक भी कुछ अर्जन करता है तो हम सभी उसका भोग करते हैं।

216. पाँचो की एक ही आत्मा है। कोई एक भी चीज पाने पर हम लोग बाँटकर खाते हैं।

217. द्रुपद ने कहा कि यह तो बहुत बड़ी बात है। महान् व्यक्ति ही ऐसी बात कहता है।

218. द्रुपद ने कहा कि यह तो स्त्री रत्न है। एक व्यक्ति से ही विवाह करना उचित है।

219. युधिष्ठिर ने कहा कि हमारा यही सिद्धान्त है। एक ही द्रौपदी के हम पाँचों वर हैं।

220. हे नृपति ! अपना करणीय करो। हम पाँचो को कन्या प्रदान करो।

221. इसे सुनकर राजा मूर्च्छित हो गया। धृष्टद्युम्न ने कटु वचन कहा।

222. श्रीखण्डी ने कहा कि तुम भिक्षार्थी ही नहीं हो अपितु जन्म से ही भ्रष्ट हो।

223. इस प्रकार का व्यवहार नटों में ही होता है। उनकी युवतियाँ बहुपुरुषगामिनी होती हैं।

224. द्रुपद ने कहा कि तुमने अनीतिकर बात कही। एक स्त्री के पाँच पति कहीं देखे हैं ?

225. युक्तितः एक पुरुष को पाँच पत्नियाँ होनी हैं। तुम्हारी बात लोकाचार-विरुद्ध है।

226. महान् होकर भी तुमने निन्दनीय बात कही। पुरुष इसे सहन नहीं कर सकते।

227-228. बार-बार द्रुपदेश्वर क्रोधित होकर बातें करता है। व्यास की ओर देखकर कृष्ण कहते हैं—भीमसेन द्रुपद की अपमानजनक बात को नहीं सह सकता। इसी समय द्रुपद का प्राणनाश हो सकता है।

229. उसी समय व्यास बाहर होकर द्रुपद और पाण्डवों के बीच उपस्थित हुए।

230. द्रुपद ने व्यास को देखकर शत-सहस्र प्रणाम किया।

231. द्रुपदेश्वर ने कहा कि हे स्वामी ! तुम्हारी दया हमेशा मेरे ऊपर रहती है। मेरी इस दुश्चिन्ता में तुम स्वयं आ पहुँचे।

232. आपने दस हजार मुनियों को लेकर महायज्ञ के द्वारा मेरी पुत्री को उत्पन्न किया।

233. तुम्हारी आज्ञा से राजाओं को निमन्त्रित करके लक्ष्य- भेद का विधान किया।

234. इस ब्राह्मण ने अनिमन्त्रित भाव से लक्ष्य-भेद किया। अब कह रहा है कि हम पाँचों विवाह करेंगे।

235. तुमने साठ लाख ग्रन्थों की रचना की। तुम्हारे शास्त्र में कहीं एक स्त्री के लिए पाँच पतियों का विधान है?

236. व्यास ने कहा कि हे द्रुपद ! तुम्हारी दुहिता के लिए पाँच पतियों का विधान पूर्वलिखित है।

237. तुमने पूर्व जन्म कथा पूछी तो सावधान होकर सुनो; मैं उसे कह रहा हूँ।

238-239. कृतसर्व नामक प्रलय काल में महार्णव के जल में विरालचक्र नामक सर्प के शरीर के ऊपर अनन्त शय्या पर नारायण योगस्थ होकर सोये थे।

240. उस समय स्वर्ग, मर्त्य, या पाताल नहीं था। पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश आदि कुछ नहीं रहा।

241. देव, दानव, यक्ष, किन्नर, नाग, जंगम, कीट-पतंग समस्त प्रलय में निमग्न हुए।

242. सूर्य, चन्द्र, पवन, दिन-रात, सन्ध्या, अवकाश कुछ भी नहीं रहा।

243. दक्षिण दिशा में सिर करके महा सर्प सोया है। इतने प्रलय जल से भी उसका पेट नहीं भरता।

244 उस सर्प के फण पर देव नारायण सिर रखकर महायोग से शयन कर रहे हैं।

245. पास में अनादि अपर्णा आदि नारी विलासिनी सेवा करती हैं।

246 सत्य युग सत्रह लाख बत्तीस हजार वर्ष का होता है। इसका एक चरण चार लाख बत्तीस हजार वर्ष का होता है।

247 त्रेता युग बारह लाख छियानवे हजार वर्ष का होता है। इसका एक चरण तीन लाख चौबीस हजार वर्ष का होता है।

248 द्वापर युग आठ लाख चौंसठ हजार वर्ष का होता है। इसका एक चरण दो लाख सोलह हजार वर्ष का होता है।

249 कलियुग चार लाख बत्तीस हजार वर्ष का होता है। इसका एक चरण एक लाख आठ हजार वर्ष का होता है।

250 चारों युग को एक गण्डा कहते हैं। इस प्रकार सर्प के एक दिन में चारों युगों का एक गण्डा समाप्त हो जाता है।

251. इसी प्रकार एक सौ आठ वर्ष में इन्द्र देवता का विनाश होता है।

252-253. इन्द्र के विनाश होने तक ब्रह्मा का एक दिन होता है। इस प्रकार ब्रह्मा के एक सौ आठ वर्ष में जब ब्रह्मा की आयु समाप्त होती है, तब महादेव का एक दिन समाप्त हो जाता है।

254 इस प्रकार विष्णु के एक सौ आठ वर्ष तक महारुद्र देवता की आयु होती है।

255. रुद्र के नाश होने पर आदित्य का एक दिन होता है। उसके एक सौ आठ वर्ष में आदित्य का नाश होता है।

256. एक सौ आदित्य के जाने पर चन्द्र का एक दिन होता है। एक सौ आठ वर्ष में चन्द्र का विनाश होता है।

257. इस प्रकार एक सौ आठ वर्ष में चन्द्र का नाश होता है। चन्द्र के नाश होने पर विष्णु का एक दिन होता है।

258. दिन के समाप्त होने पर रात में शयन होता है। विष्णु की निद्रा टूटने पर महायोग की अवस्था टूटती है।

259. अनादि पुरुष जब निद्राग्रस्त होते हैं, उस समय पृथ्वी, जल, तेज, वायु आकाश सब कुछ नष्ट हो जाते हैं।

260 उनके सो जाने पर कुछ नहीं रह जाता। जितने समय तक दिन होता है, उतने ही समय तक रात होती है।

261 नारायण के निद्रा में निमग्न होने पर रात होती है। उनकी दोनों आँख खुलने पर दिन का उदय होता है।

262. वे देखते हैं कि चर और अचर कुछ भी नहीं है। चारों ओर जल-निमग्न है. श्री विष्णु बैठकर अमृत नेत्रों से इस दृश्य को देखते हैं।

263 उस अनादि ने जब अमृत-दृष्टि से देखा, तो शून्य को भेदकर जल से पन्द्रह ब्रह्मा उत्पन्न हुए।

264 पुनः नारायण ने जल उत्पन्न किया जो ब्रह्मा के घुटने तक हुआ।

265 सरस्वती को युवती रूप में देखकर उन्होंने उसे पकड़कर खींचा। उस अनादि धवलमुखी ने क्रोधपूर्ण दृष्टि से देखा।

266 उस अनादि नारी के कटाक्ष नेत्र से त्रैलोक्यमोहिनी कन्या उत्पन्न हुई।

267 उस अनादि नारी ने आहार माँगा। वाक् देवी ने कहा कि तुम पन्द्रह ब्रह्मा खा जाओ।

268. जब आदि नारी ने कौन तुम कहकर पुकारा तो उससे उसका नाम केतुका हुआ।

269 वाक्‌देवी की आज्ञा से केतुका दौड़कर गयी और एक हजार वर्ष में उसने अकेले एक ब्रह्मा को मारा।

270 चौदह हजार वर्ष में उसने चौदह ब्रह्मा को मारा और उसके रुधिर माँस को सन्तोषपूर्वक खाया।

271. करोड़ों ब्रह्माण्ड जलमग्न थे किन्तु जल ब्रह्मा और केतुका के घुटने तक हुआ।

272 शूद्रक ब्रह्मा को पकड पाने पर उसके पीछे-पीछे दौड़ने लगी। उस ब्रह्मा ने नारायण को शरण के लिए

पुकारा।

273. महाचीत्कार सुनकर योगसिद्ध पुरुष की योगनिद्रा टूट गयी। उस योगसिद्ध ने आँख मलते हुए देखा।

274. भागते हुए पहुँचकर शूद्रक ने कहा कि हे नारायण! रक्षा करो। नारायण ने कहा रुको-रुको, आर्या ।

275. केतुका ने कहा कि यह मेरा भक्ष्य है। मैं इसे खाकर तृप्त हूँगी। तुम इसकी रक्षा क्यों करते हो?

276. विष्णु ने पूछा कि मेरे और ब्रह्मा कहाँ हैं ? धवलांगी ने कहा कि हे स्वामी ! अब कोई जीवित नहीं है।

277. तुम्हारे निद्राकाल में उन्होंने मुझसे शरण करने की इच्छा की। इसलिए मैंने अपने दोनों नेत्रों से केतुका को पैदा किया।

278. केतुका को आज्ञा दी कि इन सबको खा जाओ। यह मूर्ख बड़ा दुष्ट है। इसकी रक्षा करते हो ?

279. श्री नारायण ने कहा कि यह जब मेरी शरण में आया है तो अभी इसकी रक्षा करो। द्वापर युग में इसका भक्षण करना।

280. वाक्देवी ने पूछा कि हे देव ! इसे विस्तारपूर्वक बतावें कि यह कैसे होगा ?

281-282. नारायण ने कहा कि अभी सत्य युग होगा। सत्य युग के बाद त्रेता और उसके बाद द्वापर युग होगा। यह शूद्रक ब्रह्मा दुःशासन रूप में उत्पन्न होगा।

283. यह केतुका द्रौपदी रूप में जन्म लेकर दुःशासन को द्वापर युग में खायेगी।

284. यह केतुका ब्रह्मा की शत्रु हुई तो इसने चौदह ब्रह्मा को गर्दन मरोड़कर खाया।

285. इस शूद्रक ब्रह्मा का क्रोध सब समय इसके ऊपर रहेगा। अतः कौरव सभा में केतुका के केश पकड़कर खींचेगा।

286-287. द्रौपदी के पति भीमसेन के साथ दुःशासन का युद्ध होगा। भीम उसको युद्ध में मारकर भुजा उखाड़कर केतुका के माथे पर रक्त उड़ेलेगा।

288. द्रौपदी रक्तस्नान और रक्तपान करके तृप्त होगी।

289. हे द्रुपदेश्वर ! इस अनादि सिद्ध की कथा सुनो। तुम्हारी द्रौपदी दुहिता का यही स्वरूप है।

290. यही द्रौपदी है और यही भीमसेन है। दुःशासन के रुधिर का यह पान करेगा।

291. यह सुनकर द्रुपद ने व्यास से पूछा कि त्रेता युग को इसने कैसे बिताया ?

292. व्यास ने द्रुपद से कहा पहले केतुका हुई बाद में एक- बला पार्वती हुई।

293. हिमालय के नीचे मालती नदी के किनारे एकबाला पार्वती ने योग साधना की।

294. एकबला की इच्छा हे देव हरि ने की। सदाशिव उसके पास आकर सेवारत हुए।

295. मीन मास, शुक्ल पक्ष, एकादशी, वसन्त ऋतु, हस्त नक्षत्र की कन्या राशि के दिन गायत्री गंगा में पानी पीने के लिए आती हैं।

296-297. निरंजन पुरुष उसके पति हैं। निरंजन की पंचात्मा पाँच साँड़ होकर गायत्री के पीछे-पीछे दौड़ती है।

298. ईश्वर ने एकबला पार्वती से कहा कि तुम्हारी माता गायत्री कितनी असती है ?

299. एक ही गाय के पीछे पाँच साँड़ दौड़ते हैं। पाँचों को आशा दिखाकर परेशान कर रही है।

300. जिस साँड़ पर उसकी इच्छा होगी उसे वह चार को निराश करके ग्रहण करेगी।

301. इन पाँचों को आशान्वित किया है। यह स्त्रियों का अनुचित स्वभाव है।

302. कपिला के बारे में एकबला के मन में विकृति आयी। कहा कि माँ का यह आचरण उचित नहीं है।

303. स्त्री जाति होकर इतना अविश्वासी है ? ईश्वर और एकबला ने गायत्री को दोषी ठहराया।

304. इस प्रकार की बात कपिला ने जान ली। कहा कि हे एकबला ! तुमने अपने मन में विकार-भाव उत्पन्न किया।

305. हे ईश्वर ! केवल आँख से देखकर विकृति लाये। अतः तुम इसका भाई धृष्टद्युम्न होकर पैदा होगे।

306. हे एकबला ! जब तुम्हारे मन में भी विकार आया, तो तुम द्रौपदी रूप में पैदा हो और तुम्हारे पाँच पति हों।

307. ऐसा शाप देकर कपिला चली गयी। एकबला

महायोग में बैठी।

308. वह पचपन कोटि लाल वस्त्र बिछाकर सम्पूर्ण जंजाल

छोड़कर महायोग में बैठी।

309. आदित्य के पुत्र शनीचर की दृष्टि पड़ने पर संसार दग्ध होता है।

310. डर से कोई उसे कन्या नहीं देता है। अतः वह दस लाख वर्ष से अविवाहित ही पड़ा है।

311-312 दक्षवंश के राजा अनलसेन की कृत्तिकावती नामक कन्या थी। सूर्य ने अनलसेन से अपने पुत्र के लिए दुहिता देने के लिए कहा।

313. कर्तार के वचन को न तोड़ सकने के कारण अपनी दुहिता देने के लिए उसने प्रतिज्ञा की।

314 तुम दुहिता को पचपन कोटि लाल वस्त्र से आवृत्त करके रखना जिससे शनि की दृष्टि नहीं पड़ेगी।

315 उस वस्त्र के तेज से शनि का आकर्षण शान्त होगा। इस प्रकार मैं कन्या दूँगा—यह सत्य है।

316 राजा की बात सुनकर सूर्य ने देखा कि एकरंगा लाल रंग का वस्त्र कहीं नहीं है।

317 पचपन कोटि लाल वस्त्र के ऊपर एकबला पार्वती बैठी हैं। उससे माँगने में मन में संकोच होता है।

318-319. वह अनादि कन्या जहाँ तपस्या में बैठी है, वहाँ उससे सूर्य अकेले जाकर मिले। आदित्य ने एकबला पार्वती की बहुत स्तुति की। उसकी विनय देखकर वह प्रसन्न हुई।

320-322. एकबला पार्वती ने पूछा कि क्या चाहते हो ? सूर्य देव ने कहा कि हे महामाया ! मैं शनीचर का विवाह कराऊंगा। मेरे पुत्र के ऊपर हे सिद्ध देवी ! दया करो। एकरंगा लाल वस्त्र पचपन कोटि मुझे दो। इसे प्राप्त करके अनलसेन अपनी दुहिता प्रदान करेगा।

323. एकबला ने कहा कि हे देव ! इस वस्त्र से नारायण का बहुत कार्य है।

324. आदित्य ने कहा कि तुम्हारी आवश्यकता के समय यह वस्त्र मैं तुम्हें लौटा दूँगा।

325. चौथे युग में मैं द्रौपदी होकर पैदा हूँगी और कपिला के शाप से मेरे पाँच पति होंगे।

326-327. मेरे सतीत्व को नष्ट करने को कौरव जब मुझे कुरुसभा में विवस्त्र करना चाहेंगे; उस कष्ट के समय मैं तुमसे वस्त्र माँगूँगी।

328. पचपन कोटि में एक कोटि मिलाकर तुम छप्पन कोटि वस्त्र लाकर दोगे।

329. सूर्य ने प्रतिज्ञापूर्वक पचपन कोटि वस्त्र मँगा लिया।

330. अनलसेन नृपति को ले जाकर यह वस्त्र दिया। विवाह के समय कन्या को इससे आवृत्त किया गया।

331. शनीचर को कृत्तिकावती प्रदान की गयी। रक्त वस्त्र पर दृष्टि पड़ने से शनि शान्त हुए।

332 विवाह के बाद सूर्य ने उतरवा लिया। उसे सुरक्षित करके रथ के ऊपर रख लिया।

333 द्रुपद से व्यास ने कहा कि दूसरे अवतार की कथा मैंने बतायी।

334. तृतीय अवतार में शची रूप धारण करके क्षत्राधिपति पुष्कर के घर उत्पन्न हुई।

335 उस पुष्कर राजा ने इसे इन्द्र देवता को प्रदान किया। यह अक्षय पाटवंशी अमर स्वर्ग स्थान में बैठी।

336. जम्बू दैत्य को मारकर इन्द्र के निष्कंटक राज्यत्वकाल में यह वासव की मनोहारी बनकर रही।

337-342 अगस्त्य ने वैवस्वत मनु से कहा कि अनुरथ के वंश में एक केशीरथ नामक ब्राह्मण उत्पन्न हुआ। उसका पुत्र दाशरथ, उसका पुत्र मनुरथ, उसका पुत्र उदयरथ, उसका पुत्र महारथ, उसका पुत्र विष्णुरथ, उसका पुत्र यमरथ, उसका पुत्र रुद्ररथ था। उसका पुत्र त्वष्टारथ वेदशास्त्र में पारंगत द्वितीय ब्रह्मा की तरह था।

343-344. वैशाख शुक्ल, द्वितीया अर्कवार रोहिणी नक्षत्र को त्वष्टारथ अमर स्वर्ग को गया। इन्द्रदेव ने उसके बैठने के लिए नहीं कहा।

345-346. क्रोध से वह तपचारी राजसभा से लौट आया। क्रोध से वृत्ररथ को बुलाकर आज्ञा दी कि अरे वृत्र! तुम रुद्र देवता की सेवा करके अमर स्वर्गपुर को प्राप्त करो।

347. त्वष्टा रथ की आज्ञा पाकर वह वृत्र रथ महर्षि कैलाश-कन्दरा में पहुँचा।

348. वह बालक और कुछ नहीं जानता था। बाल-क्रीड़ा की तपस्या से विश्वनाथ की सेवा करने लगा।

349. स्नान, षटकर्म आदि नित्यकर्म शेष करके दो घड़ी रात रहते ही वह ध्यानस्थ होता था।

350. शिव-शिव करके हमेशा स्मरण करता था। इस प्रकार डेढ़ पहर तक पेट के बल पड़ा रहता था।

351. चौबीस वर्ष तक घोर तपस्या करने से महादेव का आसन काँप उठा।

352-353. मेष मास, शुक्ल पक्ष पंचमी रात में नित्य कर्म विधान हेतु जाने के समय कैलाश के ईशान कोण में सर्पाघात हुआ।

354. महाविष ज्वाला लगने से उस बालक के मुख से गरल निकलने लगा। इस प्रकार उसका विनाश हुआ।

355. वर देने के लिए आते समय उमा और महेश्वर ने देखा कि वह मरा पड़ा है।

356. उमा ने कहा कि हे स्वामी ! तुम्हारी सेवा का यही परिणाम है। तुम्हारी सेवा करके ही यह बालक मारा गया।

357. सदाशिव ने कहा कि हे उमा ! इस पुत्र को स्वर्गपुर का राजा बनाऊँगा।

358. ईश्वर ने नारद को बुलाकर कहा कि इस पुत्र को तुम यशोवन्त पुरी को ले जाओ।

359. ब्रह्मा से कहना कि यह रुद्र का भक्त है। इसे वे अपने से अच्छे स्थान पर रखें।

360. मृत पिण्ड को मन-पवन दण्ड पर रखकर यशोवन्त पुर में प्रविष्ट हुए।

361. महर्षि ने वृत्र के पिण्ड को ब्रह्मा को समर्पित किया और कहा कि सदाशिव की आज्ञा है कि इसे अच्छे स्थान पर रखो।

362. मृत पिण्ड लेकर विधाता ने अपना प्राण देकर उसे जीवित किया।

363. नारद को बुलाकर बालक को ब्रह्मा ने समर्पित करके कहा कि मुझसे अच्छा स्थान तो अमरपुर ही है।

364. वासव देवता का इन्द्रपद समाप्त हुआ। हे नारद ! वृत्र महर्षि को इन्द्र पद पर बैठाओ।

365. कलह-प्रिय नारद पिता की आज्ञा से चले। विधाता की बात इन्द्र को बतायी।

366. इन्द्र से कहा कि तुम्हारा इन्द्रपद समाप्त हुआ। वृत्र महर्षि स्वर्गपुर में इन्द्र होंगे।

367. मघवा ने पितामह रुद्रदेव की आज्ञानुसार अमरपुर को छोड़ दिया।

368. इन्द्र ने दण्ड, छत्र आदि और शची को छोड़कर अमरपुर को छोड़ दिया।

369. इन्द्र देवता जब शची को छोड़कर अमरपुर से गये, तब वृत्र महर्षि इन्द्र पद पर बैठे।

370. तप से त्रिलोचन को प्रसन्न करके उसने इन्द्र पद को प्राप्त किया।

371. वृत्र महर्षि की आज्ञा का पालन दिग्पाल करने लगे। अप्सरायें और वाहन ऐरावत हाथी सेवा करने लगे।

372. समस्त ब्रह्माण्ड नियमानुसार शासित होने लगा। महर्षि ने अति धर्मपूर्वक सचराचर का पालन किया।

373. इन्द्र देवता राज्य-भ्रष्ट होकर पद्म वन में जाकर नारायण की स्तुति करने लगे।

374. चौबीस वर्ष में जनार्दन ने जाना और गरुड़ वाहन से आकर इन्द्र देवता से भेंट की।

375. इन्द्र ने अत्यन्त व्याकुल होकर नारायण के पैरों पर शत सहस्र दण्ड प्रणाम किया।

376. हे स्वामी ! जम्बू दैत्य को मारकर मैंने स्वर्गपुर की रक्षा की और सत्रह मनु पर्यन्त इन्द्र पद पर रहा।

377. ईश्वर ब्रह्मा ने मेरे इन्द्र पद को छीनकर वृत्र महर्षि को प्रदान किया।

378. हे जगतभूत अनाथबन्धु नारायण ! तुम्हारी कृपा से मैं अपना अभीष्ट प्राप्त करूँगा।

379. नारायण ने कहा कि तुम स्वर्गपुर जाकर वृत्र महर्षि को मारकर अपने इन्द्र पद को ग्रहण करो।

380. इन्द्र ने कहा कि उसने मेरा सब कुछ ले लिया। मेरे पास शस्त्र नहीं है। क्या लेकर मैं युद्ध करूँगा ?

381. उसी स्थान पर महर्षि दधीचि तपस्यारत थे। उन्हें बुलाकर नारायण ने आज्ञा दी।

382. तुम इन्द्र के लिए प्राण-त्याग करो। तुम्हारी अस्थि

लेकर यह वृत्र महर्षि को मारे।

383. श्रीवत्स की ऐसी आज्ञा से दधीचि महर्षि ने प्राण-विसर्जन किया।

384. ऋषि का पिण्ड लेकर सहस्राक्ष ने अभेद्य कवच बनाया।

385. पांजर के हाड़ से धनुष बनाया। उसके मेरुदण्ड के चर्म से धनुष की डोरी बनायी।

386. अंगुलियों को बाण और पैर की हड्डी से मुद्गर बनाया।

387. ऋषि का चर्म मेखला हुआ। इस सब को लेकर मघवा ने प्रयाण किया।

388 389. नारायण के आदेश से इन्द्र क्रोधान्वित होकर स्वर्गपुर में तत्क्षण पहुँचे।

390. वृत्र महर्षि के साथ बहुत युद्ध हुआ। वह बालक होने के नाते सहज ही पराभूत हुआ।

391. ऋषि के कवच को उसने घुमाकर मारा जिससे वृत्र ऋषि अचेत हो गया।

392. ऋषि के नाखून से बने तीक्ष्ण परशु से वृत्र महर्षि धूल हो गये।

393. इन्द्र वृत्र महर्षि को मारकर इन्द्र पद पर बैठा।

394. अपने स्वर्ग का वह राजा हुआ। सभी दिग्पालों ने उसकी पाद-पूजा की।

395. नारद ने त्वष्टा महर्षि से बताया कि तुम्हारे पुत्र का इन्द्र ने नाश किया।

396. उसने पुनः बलात् इन्द्र पद छीन लिया। त्वष्टा ने योग में लय होने के कारण कोई उत्तर नहीं दिया।

397. क्रोध से भूमि पर एक मुट्ठी बालू फेंकी, उससे दो लड़के उत्पन्न हुए।

398. बार्लाम्बिक और त्र्यम्बक नाम देकर उन्हें इन्द्र देवता को मारने के लिए भेजा।

399. वे दोनों बेटे पिता की आज्ञा से निर्भयतापूर्वक अमरपुर में घुसे।

400. चित्रसेन, जयसेन, अंगार पन्नग और प्रचण्डाबली आदि चार कुमारों ने ऋषि पुत्रों को रोका।

401. विद्याधरों ने घोर युद्ध किया। ऋषिकुमारों ने अनेक गन्धर्वों को मारा।

402. मोहशर से उन्हें धराशायी करके खाण्डव वन में इन्द्र के पास पहुँचे।

403. इन्द्र के साथ घोर युद्ध हुआ। इन्द्र ने वज्र के द्वारा ऋषिकुमारों को मारा।

404. अंगार पन्नग, जयसेन, प्रचण्डाबली और चित्रसेन आदि अपने पुत्रों को अमृत देकर जिलाया।

405. नारद ने जाकर त्वष्टा ऋषि से कहा कि इन्द्र ने तुम्हारे दोनों पुत्रों का नाश किया।

406. त्वष्टा सुनकर महाक्रुद्ध हुए। वह परम योगी कालानल की तरह आ रहा है।

407. कहा कि देखें ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर आज कौन इन्द्र देवता की रक्षा करता है?

408. मन पवन-दण्ड पर चढ़कर नारद ने शीघ्र जाकर इन्द्र देवता को खबर दी।

409. ऋषिपुत्रों का तुमने प्राण-घात किया। इससे क्रुद्ध होकर त्वष्टा तुम्हारे पास आ रहा है।

410. वह मन्वन्तरि महात्मा कल्प-कल्प का तपस्वी है। उसकी आयु ब्रह्मा की आयु के समान है।

411. उसके क्रोध से सुमेरु पर्वत टलमल हो जाता है। भागकर समुद्र में घुस जाओ। अब यहाँ रहकर क्या करोगे?

412. इन्द्र ने कहा कि त्वष्टा महर्षि की प्रचण्ड क्रोधाग्नि से समुद्र दग्ध होगा।

413. इस प्रकार के महात्मा जब मुझ पर क्रोध करेंगे तो नारायण आदि मेरी कौन रक्षा करेगा?

414. सुरपति ने शरीर से पंचात्मा को बाहर किया और धर्म के पास एक आत्मा रखा।

415. दूसरी आत्मा को पवन में और तीसरी आत्मा को अन्तरिक्ष में रखा।

416. चतुर्थ आत्मा का अश्विनी को और पंचम आत्मा को लेकर कुमार को समर्पित किया।

417. पाँचों आत्माओं को पाँच स्थानों में रखकर पापात्मा को लेकर पुरन्दर बैठा।

418. त्वष्टा आकर वासव से मिला। क्रोध से उसका शरीर थरथरा रहा था।

419 420. वासव की ओर देखकर तपोनिष्ठ कहता है कि हे दुष्ट! तुमने मेरे पुत्रों का विनाश किया। ऋषि ने शाप दिया कि तुम्हारा शरीर भस्म हो।

421. वासव ने कहा कि हे मुनिवर ! सुनो। सोच-समझकर क्रोध करो। मेरा कोई दोष नहीं है।

422. कोपानल से देखते ही अग्नि प्रज्वलित होकर इन्द्र देवता को भस्म कर दिया।

423. त्वष्टा स्वयं इन्द्र पद पर बैठकर आनन्दपूर्वक त्रैलोक्य का पालन करने लगे।

424. व्यास ने कहा कि हे द्रुपद त्वष्टा के कोप से इन्द्र भस्म हुआ।

425. उसकी भार्या शची देवी आकाश गंगा के किनारे रुदन करती है।

426-427. सिंह मास, शुक्ल पक्ष, द्वादशी, चन्द्रवार के उत्तराषाढ़ नक्षत्र में शिव-पार्वती वृषभ वाहन से आकाश गंगा के किनारे पहुँचे।

428. वृषभ को रोककर चन्द्रमुखी ने कहा कि कोई बड़ी दुःखी अनाथ स्त्री रुदन कर रही है।

430. गौरा ने कहा कि हे विश्वेश्वर ! एक स्त्री के जन्म में ही अनेक कष्ट होता है।

431. एक स्त्री को रोते हुए देखकर एक स्त्री अवश्य ही रुक जायेगी। अन्य कोई होने पर दूर से ही पूछेगा।

432. यह स्त्री का स्वभाव है कि कलह, द्वन्द्व और हिंसा सब कुछ दोष होने पर भी किसी का रुदन सुनकर अवश्य रुकेगी।

433. जो स्त्रियाँ इस बात पर विचार नहीं करतीं उन्हें यमराज कठोर मेंढक की तरह पैदा करता है।

435. हे देव ! स्त्रियों के लिए ऐसा दण्ड-विधान है। तुम यहीं क्षणभर विश्राम करो। मैं उसके दुःख को शान्त करती हूँ।

436 इस प्रकार के दोष का पार्वती जैसी स्त्रियाँ भय करती हैं। सुज्ञानी स्त्रियाँ इसके परिणाम का विचार करती हैं।

437. ईश्वर को समझाकर देवी वृषभ से उतरीं। हे आर्या! मत रोओ—कहकर मुख पर हाथ दिया।

438. तुम्हारा शरीर सुन्दर, सुकुमार और सुलक्षण है। तुम प्रत्यक्षतः अमर नायिका की तरह दिखाई देती हो।

439 हे महात्मानी ! जो इच्छा हो, माँगो। तुम्हारी इच्छा अवश्य पूर्ण होगी।

440. हम लोग वस्तुतः शंकर और गिरिजा हैं। तुम अपने घर लौट जाओ। तुम्हारी मनोकामना पूरी होगी।

441. पति दो, पति दो—उसने पाँच बार कहा। प्रसन्न होकर पार्वती ने कहा कि तुम्हारे पाँच पति हों।

442. शची ने कहा कि यदि तुम हर-पार्वती हो तो बताओ कि एक ही स्त्री के पाँच पति कैसे होंगे ?

443. ईश्वर ने कहा कि तुम व्याकुल होकर चिन्ता मत करो। त्वष्टा के कोप से इन्द्र का शरीर दग्ध हुआ।

444. पाँच आत्माओं को पाँच स्थानों पर रखा था। वही पंच आत्माएँ मर्त्यलोक में अवतीर्ण हैं।

445. धर्म के पास जिस आत्मा को रखा था, वह धर्म के तेज को लेकर युधिष्ठिर के रूप में पैदा हुआ।

446. जिस आत्मा को पवन के पास रखा था, वह पवन के तेज को लेकर भीम रूप में पैदा हुआ।

447. इन्द्र ने जिस आत्मा को शून्य में रखा था, इन्द्र का तेज लेकर अर्जुन पैदा हुआ।

448. जिस आत्मा को अश्विनी के पास रखा था, वह अश्विनी के तेज को लेकर नकुल रूप में पैदा हुआ।

449. जिस आत्मा को कुमार के पास रखा था, उसी सत्व से सहदेव धार्मिक पैदा हुआ।

450. हे शची ! तुम द्रुपद के यज्ञ में द्रौपदी रूप में उत्पन्न होगी। पंच पाण्डवों को अपना शरीर अर्पित करोगी।

451. इस प्रकार हर-पार्वती की आज्ञा से शची देवी यज्ञ में उत्पन्न हुई।

452. एक ही द्रौपदी के लिए ये पाँचों पाण्डव हैं। पृथ्वी का कष्ट दूर करने के लिए मर्त्यलोक में उत्पन्न हुए हैं।

453. इन पाँचों मूर्तियों को तुम भिन्न-भिन्न न समझो। तुम पाण्डवों को एक ही समझो।

454 द्रुपद ने यह सुनकर बहुत प्रसन्न होकर व्यास की बहुत स्तुति की।

455. हे पराशर पुत्र व्यास ! जिसका नौका में तेज विकसित हुआ था उसे नमस्कार हो।

456. तुम सत्यवती के नन्दन भूत-भविष्य ज्ञाता हो। तुम सार्थक पुरुष और अदृष्ट वक्ता हो।

457. अज्ञानी को ज्ञान, अगति को मोक्षगति, मूर्ख को पाण्डित्य देने का तुम्हारा यश सर्वविदित है।

458. तुम अनाकार पुरुष होकर भी रूप-चिह्न निर्णय करने

में सक्षम हो। अजपा जय करके तुमने शून्य को स्थूल बनाया।

459. हे धातुवाद पुरुष ! तुमने हेमन्त, शिशिर, वसन्त, ग्रीष्म, वर्षा, शरद् आदि षड् धातुओं को सबके कल्याण के लिए बनाया।

460. तुम्हारे उदर में कोटि ब्रह्माण्ड अवस्थित हैं। तुमने नारायण के गर्भ में सौ प्रलयकाल बिताया।

461. तुम परमानन्द पुरुष ग्रन्थकारी कवि हो। मैं क्या तुम्हारा वर्णन कर सकता हूँ ?

462. तुम अनर्गला सरस्वती के भण्डार अधिकारी हो। चुपचाप तुम चार कोटि कल्प तक विकसित होते रहे।

463-464. जो ऋषिकाल से उत्तीर्ण है, जो ब्रह्मा के ब्रह्मपद का ध्यान करने में अभ्यस्त है, उसके पद्मपाद में नित्य शरणागत होकर सुचित्त से शूद्र मुनि सारला दास यह कथा कहता है।

465. तुम्हारी भाषा सरस्वती द्वारा कथित है। समस्त द्वन्द्व छोड़कर मैंने तुम्हारी ओर अपना मन आकृष्ट किया।

466-467. मैं गिरिजा के वाक्य से मानव हुआ हूँ। हे नारायणवल्लभी ! मुझे आज्ञा दो। संसार जन-हित में इस समय तक रहकर श्री महाभारत के आदि पर्व की रचना कर रहा हूँ।

द्रौपदी-परिणय

1. द्रुपद ने जब व्यास की स्तुति की, तब नारायण स्वामी की बात सुनकर परम आनन्द चित्त हुए।
2. बन्धु वर्ग, कुटुम्ब और पत्नी आदि को लेकर त[illegible] बलराम व कृष्ण उपस्थित हुए।
3. द्रुपद ने देखकर अत्यन्त भय किया। विनीत होकर दण्डवत् लेट गया।
4. चक्रधर ने उसे गोद में [illegible]कर कहा [illegible] [illegible]म अपापी पुरुष हमारे श्वसुर हो।
5. एक ही द्रौपदी ने तुम्हारे वंश को तार दिया। तुमने उत्तम कन्या उत्पन्न की। इससे हम सब तुम्हारे बस में हुए।
6. एक ही दुहिता प्रदान करके तुमने त्रैलोक्य को जीत लिया। तुम्हारे कोटि पुरुषों का पातक नष्ट हुआ।
7. पण्डित, धार्मिक और सुज्ञानी लोग विचारपूर्वक शुभ कार्य करते हैं।
8. सुअवसर पर उत्तम पुरुष भाग्यवशात् ही मिलते हैं। अतः तुमने जामाता रूप में देवोपम पुरुषों को प्राप्त किया।
9. देव कृष्ण के द्वारा बहुत प्रशंसा किये जाने पर द्रुपद ने स्वीकार किया कि मैं ज्ञानभ्रष्ट हो गया था।
10. हे पाण्डवगण ! मेरे पुत्रों ने तुम्हारे जैसे महान् पुरुषों की भर्त्सना की। तुम लोग मेरे दोष की उपेक्षा करो।
11. अश्रुपूर्ण होकर अत्यन्त स्तुतिपूर्वक राजा द्रुपद बार-बार उनके पाँवों पर गिरता है।
12. हे देव ! मैं अज्ञानी हूँ। मेरे दोषों को मन में मत रखना। मेरे अपराधों को क्षमा करना।
13. मैं सांसारिक धर्म में अपने को भिक्षुक की तरह समझता था। क्या मैं भी श्वसुर पद के लिए उपयुक्त हूँ ?
14. बार-बार पुत्रों के साथ द्रुपद जमीन पर लोटता है। देव युधिष्ठिर ने उसे अपनी गोद में पकड़ा।
15. कहा कि तुम पापहीन पुण्यवान पुरुष हो। तुम्हारी कन्या याज्ञसेनी परम साध्वी है।
16. हे भूपति द्रुपद ! तुमने अश्वमेध यज्ञ करके इहलोक और परलोक को तार दिया।
17. इस प्रकार के कर्म से जो कन्या उत्पन्न होती है, उसे पुण्यवान और धार्मिक व्यक्ति देखकर प्रदान करना चाहिए।
18. बिना विचारे नीच, अपण्डित और अकुलीन लोगों को प्रदान करने से महा दण्ड मिलता है।
19. बिना विचारे कार्य करने से दोनों कुलों का नाश होता है। बिना विचारे कार्य करने से महान् विपत्ति आती है।
20. इस कलंकपूर्ण कलियुग में अपार अनीति है। पण्डित लोगों को इसका विचार करके कार्य करना चाहिए।
21. विचारपूर्वक कार्य करने से पुण्य होता है और अविचार-पूर्वक कार्य करने से सकल धर्म नष्ट होता है।

-23. अशुद्ध गगरी पर चित्र अंकित करके तीर्थस्थान पर रखने से लोग उसकी पूजा करते हैं किन्तु कुम्हार के नये घट को बुरे स्थान पर होने पर कोई उसे नहीं पूछता है।

24. युधिष्ठिर ने कहा कि हम लोगों ने पहले परिचय नहीं दिया। गुप्त रूप में रहने के कारण तुम पहचान न सके।

25. युधिष्ठिर ने धार्मिक बातों से सान्त्वना दी। द्रुपद ने भय छोड़कर भक्तिभाव से सम्मानित किया।

26. जो कुम्हारशाला एकदम हीन लग रही थी अब वह स्वर्गपुरी की तरह द्रुपद को दिखाई देती है।

28. शून्य से दिग्पाल गण आये। ऐरावत पर सवार होकर इन्द्र उपस्थित हुए।

-30. यह सुनकर वैवस्वत मनु ने अगस्त्य से पूछा कि त्वष्टा महर्षि ने तो इन्द्र देवता का नाश कर दिया था; हे अगस्त्य ! वर्तमान यह इन्द्र कौन है ? मुझे बड़ा सन्देह लगता है।

31. कुम्भ ऋषि के पुत्र अगस्त्य कह रहे हैं कि हे विलंका देश के राजा ! सुनो।

32. क्रोध से त्वष्टा इन्द्र का विनाश करके अमरभुवन में इन्द्र-पद पर बैठा।

33. तपस्वी लोग क्या राज्य-शासन विधि जानते हैं ? सारा राज्य एकदम अराजकतापूर्ण हो गया।

34 चौसठ कोटि अमर विलासिनियाँ उपयुक्त नायक न पाकर आनन्दपूर्वक सेवा करने से विरत हुई।

35. नित्यकर्म करने में ही मुनि का दिन समाप्त हो जाता था। सभी दिग्पाल अपने स्थान पर अचल हो गये।

6-37. एक दिन पितामह अमरपुर मे आये। त्वष्टा ने उनसे कहा कि पुत्र के मरने के कारण क्रोध से मेंने स्वर्ग पर अधिकार किया। यह मेरे लिए उपयुक्त नहीं है। मैं तपस्या में ही निमग्न रहना चाहता हूँ।

38 हे सृष्टिकर्त्ता पितामह ! तुम अमरलोक के लिए दूसरे शासक की व्यवस्था करो।

39. जिस स्थान पर इन्द्र का दहन हुआ था, वहाँ से ब्रह्मा ने शीघ्र ही अपने हाथ में राख उठा ली।

40. कमण्डल के जल से सींचकर राख को सानकर शरीर आकार में एक पिण्ड बनाया।

41. जीवनन्यास मन्त्र पढ़कर अमृत दृष्टि से देखने से कर्त्ता के आदेशानुसार एक पुरुष पैदा हुआ।

42. इन्द्र का स्वरूप देकर उसको अमर स्वर्ग राज्य प्रदान किया।

43. हे वैवस्वत मनु ! तुमने जो पूछा, वही पुरुष पितामह की आज्ञा से इन्द्र हुआ।

44. त्वष्टा ऋषि आकाश छोड़कर आकाश-गंगा के किनारे तपस्यालीन हुए।

45. द्रुपद ने जब दिग्पालों को देखा, तो वह आनन्द से कृतकृत्य हुआ।

46. दिग्पाल गण जब कुम्हारशाला में उपस्थित हुए, तब इन्द्र भी अमर सभा छोड़कर आये।

47. विवाह की सामग्री लेकर द्रुपदेश्वर राजा ने युधिष्ठिर के पाद-पद्मों की पूजा की।

48. ब्रह्मा के साथ सभी देवताओं का वरण किया और विघ्नराज मन्त्र से शून्य पुरुष को तुष्ट किया।

49. राजा ने सभी ऋषियों की पूजा और सभी अष्टकुल नागों का वरण किया।

50. उसने प्रथम दिन विवाह की व्यवस्था के बाद विलक्षण ब्राह्मण रसोइये के द्वारा भोजन तैयार करवाया।

51. ऋषियों को गैंडा माँस का भोजन दिया। इसके अतिरिक्त अंगूर और कन्दूमल सभी ने इच्छा भर खाये।

52. कृष्ण और बलराम दोनों भाई युदवंशी, भोजवंशी तथा द्वारका की सेना को लेकर अमृत-रसपूर्ण भोजन करते हैं।

53 कृष्ण अट्ठारह वंशों की नायिकाओं को लेकर केलि-क्रीड़ा करते हैं।

54. द्रुपद ने अपने निकट के प्रिय राजाओं को निमन्त्रित किया।

55. सभी राजा सूचना पाकर दण्ड सेना लेकर आ रहे हैं।

56-61. एक पाप ग्रह रहित शुभ मुहर्त्त में विवाह का कार्य आरम्भ हुआ।

62-65. युधिष्ठिर की द्विजामेष भीमसेन की रोहिणी, वृष, अर्जुन की कन्या उत्तरा-फाल्गुनी, नकुल कुमार की स्वाति-तुला राशि और सहदेव की सतभिषा-कुम्भ जन्म राशि को समझकर पुरोहितों ने मंगल विधान

किया और सबके शरीर में कुंकुम का लेप किया।

66. आपस में सभी हास-परिहास कर रहे हैं। उत्सव मंगल से बड़ा हर्ष उत्पन्न हुआ।

67. जिस प्रकार कौतूहलपूर्ण अपरिमित मंगल मनाया गया, उसमें देव और मुनष्य सभी एक हो गये।

68. गंगाजल में घुसकर शरीर प्रक्षालन करते हैं। नदी का सम्पूर्ण जल कुंकुम वर्ण हो गया।

69. द्रुपद के नगर में ऐसा उत्सव हुआ। सभी नर-नारी देवता की तरह दिखाई देते हैं।

70. बहुत लोग मिलकर गीत गाते हुए देव और देवियों को गन्ध-पुष्प से भूषित करते हैं।

71-72. वर-कन्या को वेशभूषा से सुसज्जित करते हैं। मह. ामुनि व्यास इसी समय द्रौपदी से पूछते हैं कि आर्ये! पाण्डव पंचमूर्ति हैं। उनमें से तुम्हारा मन किसके प्रति अधिक आसक्त है ?

73. व्यास की बात सुनकर द्रौपदी ने कहा कि हे महामुनि! मेरी बात सुनो।

74. तुम तो ब्रह्मवेत्ता परम गुरु हो। तुम्हारे सामने मिथ्या कैसे कह सकती हूं।

75 मेरे माता-पिता तो यहाँ प्रत्यक्ष उपस्थित हैं। पाँचों मुझे एक ही इन्द्र की तरह दिखाई देते हैं।

76 व्यास ने कहा कि हे द्रुपद ! तुमने स्वयं सुन लिया तो? मेरी बात को तुम गलत समझते थे।

77. द्रुपद ने कहा कि तुम तो प्रत्यक्ष ब्रह्मवेत्ता हो। तुम्हारी दिव्य-कथा की निन्दा कौन कर सकता है !

78. पाँचों पाण्डव व्यास की गोद में बैठे। धौम्य पुरोहित महामन्त्र उच्चारण करते हैं।

79. वे देश-काल वाक्य का पाठ करते हैं और देवताओं का आह्वान करते हैं।

80. श्रीराम मुद्रा और शालिग्राम के स्नान किये हुए पवित्र जल को पाण्डवों और द्रौपदी के सिर पर डालते हैं।

81. ब्रह्मावरण और देवपूजन के बाद अष्टकुल नागों के लिए शीतल द्रव्य अर्पित किया।

82-83. शंख पद्म, महापद्म, कर्कट, कुणिक, वासुकि, तक्षक और अनन्तक आदि को सगोत्र वाक्य सुनाकर सभी ने आनन्दपूर्वक वेद-ध्वनि की।

84. वेद वाक्य से कंगन बाँधा गया। कुंकुम लेपन करके कन्धे में जनेऊ पहनाया गया।

85. दूब और बेर के पत्ते को लेकर वर-कन्या के हाथ में बाँधा गया।

86-96. ग्रह शान्ति मन्त्र के द्वारा ग्रह पूजन किया गया। आदित्य, सोम, मंगल, बुद्ध, वृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु, केतु, आदित्य कश्यप, सोम-आत्रेय, मंगल-भारद्वाज, बुद्ध-आत्रेय, वृहस्पति-अँगिरा, शुक्र-भार्गव, शनीचर- काश्यप, राहु-पैठिनसी, केतु-जैमिनी, ब्रह्मा उदक गोत्र, वरुण का कौण्डिनस
98 गोत्र, अष्टकुल नाग का जटायु गोत्र, अग्नि देवता का दधीचि गोत्र, ग्राम देवता का विमल गोत्र, शान्तनु का सोमपाल गोत्र, पाण्डु देव का चन्द्र गोत्र, विचित्र देव का सोम पाल आदि गोत्रों का गोत्रोच्चार करके चन्द्रध्वज देव की प्रपौत्री, वृषा देव की पौत्री, द्रुपदेश्वर की पुत्री को पाण्डुदेव के पुत्रों के लिए समर्पित किया।

97-98. स्वयं धौम्य पुरोहित के पौरोहित्य और व्यास मुनि के आचार्यत्व में यजुर्वेदी ब्राह्मणों के वरण के पश्चात् एक शुभ मुहुर्त में दोनों कुलों के गोत्रोच्चार के साथ विवाह मंगल कर्म आरम्भ हुआ। स्वयं जगन्नाथ ने अपने पांचजन्य शंख को बजाया।

100. नर्तकियाँ सामने नृत्य करती हैं और नारियाँ मंगल-ध्वनि करके मंगल गान करती हैं।

101. ब्राह्मण गण वेदध्वनि और कामिनियाँ 'उलू' ध्वनि करती हैं।

102. महेन्द्र योग और शुभ लग्न बेला में युवतियाँ प्रतिज्ञा कराती हैं।

103. धौम्य पुरोहित वर-कन्या का हाथ पकड़कर दोनों हाथों को एक पर रखवाते हैं।

104-109. द्रौपदी देवी के ज्येष्ठ अँगूठे के साथ युधिष्ठिर का श्रीहस्त, तर्जनी अंगुली के साथ भीम का श्रीहस्त, मध्यमा अंगुली के साथ अर्जुन का श्रीहस्त, अनामिका अँगुली के साथ नकुल का श्रीहस्त, कनिष्ठा अँगुली के साथ सहदेव का श्रीहस्त धौम्य पुरोहित ने मन्त्रोच्चार के द्वारा कुश से बाँध दिया। इस प्रकार द्रौपदी की पाँचों अंगुलियों से पाण्डवों के पाँचों हाथ बाँध दिये गये।

110. सभी मुनियों ने जयध्वनि की और जगन्नाथ ने शंख- ध्वनि की।

111. शंख-ध्वनि से ब्रह्माण्ड उछल पड़ा। इन्द्र ने आकाश से पुष्प-वृष्टि की।

112. आकाश में जब पाण्डवों के विवाह का समाचार सुनाई दिया, तब देव-स्त्रियों ने कहा कि चलो देखने चलें।

113. विविध अलंकारों से विभूपित होकर देवांगनायें आड़ में रहकर देखती हैं।

114. सर्व साध्वी देवियों ने स्वर्ग से मंगल-ध्वनि की।

115. देव-स्त्रियों ने मंगल कामना पूर्वक आकाश से साधु- साधु उच्चरित किया।

-123. ब्रह्मा की भार्या सावित्री, रुद्र की भार्या पार्वती, वासव की भार्या महासती शची, कुबेर की भार्या अपर्णा हारावती, चन्द्र की भार्या संज्ञा और छाया जो दोनों रानियाँ सिद्ध अपर्णा और साध्वी महात्मानी हैं, वैश्वानर की भार्या स्वाहा, स्वधा, आगम पुरुप की भार्या मेधा ओर सुमेधा, यम देवता की भार्या काली और कराली, मेघ की भार्या नीरवती रानी, वसुधा और वसुमती ये तीन बहनें, ये सब दक्ष की चौसठ कन्याएँ हैं। इनका शरीर कोटि-कोटि वर्षो तक प्रलय का अतिक्रमण करने वाला है।

124. ये सब साधु कामना करती हैं। सारलदास कहते हैं कि हे पृथ्वी के कष्ट को निवारण करने वाली देवियो ! स्वर्ग और मर्त्य की रक्षा करो।

125. अपर्णा देविगण ने आकाश में मंगल-ध्वनि की जिससे स्वर्गलोक में मंगल-ध्वनि व्याप्त हो गयी।

126. मर्त्यलोक में सभी ने सुना और साधु-साधु द्रुपद कहा।

27. स्वर्ग-मर्त्य और पाताल लोक में अनेक मंगल-ध्वनि और साधु कामना व्याप्त हुई।

28. दक्षिणावर्त्त शंख में जल और तिल लेकर धौम्य पुरोहित ने द्रुपद के हाथ में दिया।

29. हे राजा ! तुमने पाण्डवों को कन्यादान किया। अब विधान के अनुसार उपहार दो।

30. ब्राह्मणगण युधिष्ठिर, भीमसेन, अर्जुन, नकुल और सहदेव के समर्पण के समय महामन्त्र की ध्वनि उच्चरित करते हैं।

131-144. द्रुपदेश्वर नृपति ने श्री हस्त में शंख जल लेकर बछड़े सहित पाँच लाख गायें, पाँच भण्डार अष्टरत्न अलंकार, पंच लाख दासियाँ, रथ के साथ पाँच लाख योद्धा, एक अरब पूर्ण सुसज्जित हाथी, दस लाख अरबी घोड़े, पाँच सौ योजन आयतन विशिष्ट रुद्र मण्डल और यम मण्डल नामक दो राज्य, सर्वांग अलंकार विभूषिता एक लाख युवतियाँ, शय्या से युक्त पाँच स्वर्ण पलंग और प्रत्येक पलंग पर लाख-लाख भरी अलंकार, दो लाख सैनिकों के साथ पाँच लाख पाट-छत्र, आलावर्त, उद्दण्ड, पाँच लाख मयूर पंखा, पाँच लाख आलम्ब और पाँच लाख पालकी, टमक निशान आदि नाना प्रकार के वाद्य आदि विनय भाव से दहेज रूप में प्रदान किये।

145. अपने आसन से उठकर राजा द्रुपद युधिष्ठिर के पाद- तल में दण्डवत् लेट गया।

146-147 उमने कहा कि हे गोस्वामी प्रत्यक्ष निरंजन अनादि सोमवंशी, हृषीकेश-सखा ! तुम्हें देहज देने की मुझमें सामर्थ्य कहाँ ? एक दुहिता देकर समर्पित हुआ हूँ। मेरे दसों दोषों को क्षमा करो।

148. अत्यन्त विनयपूर्वक राजा द्रुपद पुत्रों के साथ मुँह के बल लेट जाता है।

149. द्रुपद की पटरानी पद्मावती ने अत्यन्त उत्साह के साथ दहेज दिया।

150. धौम्य पुरोहित ने जब प्रार्थना-वाक्य का उच्चारण किया, उम समय रानी की दोनों आँखें में आँसू बहने लगे।

151. गम्भीर शोक से राजा द्रुपद ने कहा कि पुनः कभी दुहिता न उत्पन्न हो।

152. जगतश्रेष्ठ पुरुष की भी कन्या होने पर प्रदान के समय यह भृत्य का भृत्य हो जाता है।

153. अपने समस्त बल-वीर्य को छिपाकर भृत्य की तरह दूसरों की परिचर्या करनी पड़ती है।

154. जो स्त्री दुहिता पैदा करती है, उसका परित्याग करना चाहिए।

155. उसे सुनकर व्यास मुनि ने कहा कि विवाह के

समय अवश्य ही ऐसा क्रोध उत्पन्न होता है।

156. अनादि सरस्वती आदि देवांगनाओं से सृष्टि और प्रलय की उत्पत्ति होती है।

157. आदि ब्रह्मांशी दक्ष प्रजापति ने यक्ष से साठ कन्याओं को उत्पन्न किया।

158-159. इन्हें यत्नपूर्वक दिग्पालों को बाँट दिया और ध र्मदेवता को आनन्दपूर्वक श्रुति, मति, धृति, कान्ति, शान्ति, तनु, भानु, मेधा, सुमेधा, श्रद्धा आदि दस कन्यायें प्रदान कीं।

160. हे द्रुपद ! इन्हीं कन्याओं से शून्य पुरुष की उत्पत्ति हुई।

161-165 श्रुति से आवर्तक मेघ, मति से सम्वर्तक मेघ, धृति से द्रोण मेघ, कान्ति स पुष्कर मेघ, शान्ति से आयुर्वेद, तनु से ज्योति मन्त्र, भानु से धनु महामन्त्र, मेघा से सुमुम्ना यन्त्र, सुमेधा से वरुण, श्रद्धा से हेम, शिशिर, वसन्त, ग्रीष्म, वर्षा, शरद आदि षड ऋतुयें उत्पन्न हुईं।

166-167. ईश्वर को उमा प्रदत्त हुई जिससे प्रजापति के कोटि पुरुषों को उद्धार हुआ।

168-169. सचराचर अधिकारी महाब्रह्मवेत्ता ने दिति, अदिति, कद्रू, विनिता, कला, अरिष्टा, सिहका, सुरभि, गुहिजा, दनु गन्धर्वा, ऋक्षा, पुरुश्रेष्ठा आदि तेरह कुमारियो को कश्यप को प्रदान किया।

170. हे द्रुपद राजा ! सावधान होकर सुनो कि इन तेरह कन्याओं से किसकी उत्पत्ति हुई ?

171-174. अदिति-दिति से असुरगण, कद्रु से नागवृन्द, विनता से अरुण और गरुड़ पक्षी, कला से कालकेय, गन्ध र्वा से गन्धर्व गण, दक्षा से दक्षगण, ऋक्षा ने सिह, शार्दूल, गज अश्व, व्याघ्र, भालु, मर्कट, बेल आदि चतुष्पद जीव जन्तु उत्पन्न हुए।

175-178. अरिष्टा से अरिष्ट जीव-जन्तु, दनु से दानव गण, मानुषी से खण्डि... आदि समस्त मानव जाति, सिहका से राहु-राक्षस सुरभि से गोधन, गुहिका से गुह्यक जन—इस प्रकार साठ कन्याओं से सभी उत्पन्न हुए।

179. हाथ जोड़कर द्रुपद ने कहा कि हे मुनि ! एक बात ।, मुझ पर क्रोध न करना।

181. सभा में द्रुपद ने कहा कि उमा के कारण दक्ष प्रजापति का क्यों विनाश हुआ ?

182. मार्कण्डेय ने कहा कि कहने से मात्र कथा का विस्तार होगा। हे द्रुपद ! अब तुम कन्या समर्पित करके जाओ।

183. धौम्य पुरोहित ने लाजा होम किया। इसके बाद द्रुपद ने अपने आश्रम की ओर प्रस्थान किया।

184. विस्तारपूर्वक लाजा होम किया। अमृतपूर्ण घृताहुति देकर अग्नि को तृप्त किया।

185 देवपुरोहितों ने धर्मानुसार अग्नि की जिम्वा में पूर्णाहुति दी।

186 वर कन्या के हाथ में बचा हुआ घी रखा। पाँचों भाइयों ने कन्या का हाथ पकड़कर पारण किया।

187 देवी द्रौपदी घृत धारण करके आचमन के बाद आसन पर बैठी।

188. नट, भाट, भिक्षार्थी सभी दरिद्रो को अनेक रत्न दिये।

189. चार भण्डार जो दहेज रूप में पाये थे, उनमें से कन्या-प्राप्ति के बाद अनेक दान दिये।

190. गोधन धन, वस्त्र, अलंकार समस्त चीजें पाण्डवों ने दान स्वरूप दिये।

191 द्रौपदी की माता पद्मावती लाख स्त्रियों के साथ वर-कन्या के सिर पर अर्घ्य देती हैं।

192 हे बेटी ! तुम्हारी आयु, धन, पुत्र सब सम्पदा इच्छानुसार प्राप्त हो।

193. प्रत्यक्ष निरंजन युधिष्ठिर देव की विवाह-कथा को सुनकर सभी मुक्ति लाभ करें।

194. अनेक जन्मों का पाप और दुःख खण्डित हो। अनपराध का कष्ट दूर हो और यम का दण्ड न लगे।

195. आपत्ति, विपत्ति, दुःख क्लेश से मुक्ति हो। दरिद्र दोष समाप्त हो और शत्रु की शान्ति हो।

196. हे सर्वमंगला देवी ! सुसमय अनुकूल और राजा के मुख में यशगान हो।

197 जो इसको सावधान चित्त से पढ़ते और सुनते हैं, उनका कोटि पातक पुष्कर स्नान की तरह दूर हो जाता है।

198. इहलोक में गति और परलोक में मुक्ति की महाभारत की फलश्रुति है।

199. मैं समस्त जनों के हित की आकांक्षा रखता हूँ और सभी लोग बैकुण्ठ लोक ही आशा करें।

200 समस्त जनों की विपत्ति दूर हो। आयु, धन और पुत्र की कामना सिद्ध हो।

201. कलिकाल का पाप जब संसार को पीड़ित करने लगा, तब जगन्नाथ ने उसके दर्प का ध्वंस करने के लिए मुझे आदेश दिया।

202. बिना पढ़े पण्डित होकर सारला देवी की कृपापूर्ण आज्ञा से मैंने अर्थपूर्ण ग्रन्थ की रचना की।

203. वे जो कहती हैं, उसी प्रकार मैं लिखता हूँ। मैं पण्डित नहीं हूँ, मूर्ख होकर भी लेखन किया।

204. जहाँ मेरे मन में भ्रान्ति होती है, वहाँ देवी अपने श्रीहस्त से पूर्ण करके लिख देती हैं।

205. उन्होंने मुझे अपना प्रत्यक्ष रूप दिखाया। नहीं तो मैं इस दिव्य लेखन में कैसे समर्थ होता ?

206. मैं श्री चण्डी सारला को विनय भाव चित्त से शत-सहस्र दण्ड प्रणाम करता हूँ।

-208. मैंने जिस सारला देवी की कृपा से इस आदि पर्व का लेखन किया उस विकसित शतदल कमल के समान दिव्यकाय, भक्तवत्सला, इहलोक वरदायिनी महामाया के पादपद्म में मेरा सिर लोटे।

209. तुलसीवल्लभ के चरणों में लीन होने की आशा में शूद्रभुनि सारला दास यह कथा कहता है।

ण्डवों को अर्घ्य राज-दान

1. हे राजन् ! श्रीखण्डी और धृष्टद्युम्न दोनों भाइयों ने अन्त में अग्नि-शान्ति कराई।

2. धर्मराज कन्या का हाथ पकड़कर द्रुपद के घर गये।

3. अन्तःपुर में भोजन-स्थान पर धर्मराज उपस्थित हुए।

4. श्री जगन्नाथ की एक सौ आठ रानियाँ और सोलह सहस्र रमणिया अलंकार-विभूषित होकर हाथ में अर्घ्य थाली लिये हैं।

5. अपने हाथों में माणिक्य दीप को लेकर वर-कन्या के सिर पर अर्घ्य करती हैं।

6. सभी बालकों ने मंगल कामना की और द्वारिका की स्त्रियों ने मंगल-ध्वनि की।

7. द्रुपदेश्वर ने अत्यन्त भक्तिपूर्वक पूरे परिवार के साथ दण्डवत् प्रणाम किया।

8. पूर्व जन्म में मैंने सत्कर्म किया था। इसीलिए पाण्डवों की कृपा से मुझे नारायण का प्रेम मिला।

9-10. द्रुपद के महल में स्नान और भोजन के बाद बलराम ने युधिष्ठिर से कहा कि हम लोग द्वारिका जा रहे हैं। तुम लोग पन्द्रह दिन बाद कन्या लेकर चले जाना।

11. युधिष्ठिर ने कहा कि हे योगानन्द पुरुष ! तुम तो जा रहे हो; मेरे ऊपर दया रखना।

12. गोविन्द ने युधिष्ठिर को प्रणाम किया। उठकर प्रभु ने उन्हें गोद में ले लिया।

13. अर्जुन, नकुल और सहदेव तीनों बलराम और कृष्ण के चरणों में विनयपूर्वक प्रणाम करते हैं।

14. द्रुपद ने बहुत अर्घ्य-पूजा की। इसके बाद कृष्ण गरुड़ की पीठ पर आसीन हुए।

15. कन्याओं को साथ में लेकर कृष्ण द्रुपद भवन से आकाश मार्ग में चले।

16. नगर की स्त्रियाँ गरुड़ध्वज के दिखाई देने तक मंगल ध्वनि करती हैं।

17. स्वामी अदृश्य हो गये। किसी का मन घर लौटने को नहीं करता।

18. जिसका नाम लेने से मुक्ति गति मिलती है, उसको द्रौपदी की कृपा से हमने आँख भरकर देखा।

19. हे द्रुपद की पुत्री पांचाली ! धन्य हो। तुम्हारे पालन कर्त्ता का जीवन धन्य है।

20-21. जिसको द्रौपदी प्रदान हुई उसे स्वयं जगन्नाथ प्रणाम करते हैं। इसीलिए पाण्डवों का दर्शन उनसे बढ़कर है। इतना कहकर नगर के लोग लौट आये।

22. कन्याएँ अपने-अपने घर आती हैं। भोजन स्थान से कन्या लेकर वर चलते हैं।

23. आचमन के बाद कर्पूर ताम्बूल खाकर चन्द्रशाला कक्ष में जाकर निश्चिन्त भाव से सोये।

24. एक ही पलंग पर पाँचों भाइयों के साथ द्रौपदी सोयी। निद्रालस्य में रात बीत गयी।

25-26 धर्मसुत आदि ने नित्यकर्म करके द्वितीय दिन का अर्घ्य प्रसन्नचित्त होकर ग्रहण किया। चतुर्थ दिन चौथी का कार्यक्रम हुआ।

27. पाँचवें दिन कर्दम उत्सव हुआ। विवाह मंगल के हर्ष मे कौतुकपूर्वक खेलते हैं।

28-29 कोई कुकुम लेकर पिचकारी मारता है। सबकी देह पंकिल हो गयी। सभी नदी मे स्नान करने गये। विधानपूर्वक गगा-पूजन हुआ।

30 सातवें दिन इन्द्र-उत्सव और आठवे दिन अष्टमगला उत्सव मनाया गया।

31 वर वेश त्याग द्रुपद के घर से लौटकर वे कुन्ती के पुत्र उसी कुम्हारशाला म रहने लगे।

32 पाचाल देश से पाण्डव आये। कुन्ती भोजन परोसती है और पाचो भाई खाते है।

33-34 श्रीराम कृष्ण के द्वारका जाते समय बलराम ने कहा कि हे जनार्दन ! सुनो! हम लोग शीघ्र हस्तिनापुर जाकर धृतराष्ट्र से बातचीत करें।

35 देव हरि बलराम की बात का उल्लघन नही कर सकते, अतः नारायण हस्तिनापुर म उपस्थित हुए।

36 सजय ने कहा कि हे धृतराष्ट्र ! द्वारका का सवाद लेकर बलराम और कृष्ण आये हुए है।

37 अन्धराज सुनकर सिहासन छोड़कर उठा और रामकृष्ण के पाद-पद्म में दिव्य पूजा की।

38 शत-सहस्र प्रणाम करके कहा कि हे देवस्वामी ! बहुत पुण्य अर्जन करके मुक्त हुआ।

39 हे रामकृष्ण ! उग्रसेन और यदुओ के साथ क्यो यहाँ उपस्थित हुए ?

40 बलराम ने कहा कि हे धृतराष्ट्र! हम लोग अर्जुन के स्वयंवर में गये थे।

41 धृतराष्ट्र ने कहा कि हे बलराम ! यह तो बडी विचित्र बात कह रहे हो।

42-43 द्रौपदी के स्वयवर की ... सुनी है। लाखो राजा उसके नगर में पहुँचे। पाण्डव तो जातुगृह में मर गये, फिर अर्जुन का स्वयवर कैसे हुआ ?

44 बलराम ने कहा कि हे धृतराष्ट्र ! इस प्रकार की घटना कोई नहीं जान सका।

45 राजा द्रुपद ने स्वयवर किया और अर्जुन को कन्या प्रदान करने के लिए एक लक्ष्य की रचना की।

46 सोलह दिन तक स्वयंवर चला। सभी उस लक्ष्य द्वारा पराजित हुए।

47 भीष्म, द्रोण, कर्ण, शल्य और दुर्योधन सभी राजा अपमानित हुए।

48 इसके बाद पाण्डवों का प्रवेश हुआ। वासव-सुत ने लक्ष्य भेद किया।

49 धृतराष्ट्र उसे सुनकर स्तम्भित हो गया। पूछा कि हे बलराम ! तुमने कैसी बात कही ?

50-51. हे देव हरि ! तुमने अपनी आँखों से देखा कि जातुगृह में पाण्डव दग्ध हुए। तुमने स्वयं प्रेतकर्म करवाया। पुनः पाण्डव अब कहाँ हैं ?

52 हे बलराम ! जैसे पुण्डरीक वासुदेव का नाम है, उसी प्रकार पाण्डव का नाम वहन करने वाले किसी को तो नही देखा।

53 बलराम ने कहा कि ऐसा नही है। पाँचों पाण्डवों को प्रत्यक्ष रूप मे देखा।

54 युधिष्ठिर भीम, अर्जुन, नकुल, सहदेव आदि को कुन्ती के साथ उसी स्थान पर देखा।

55 एक ही द्रौपदी के साथ पांचो भाइयों का विवाह हुआ। वहाँ धौम्य पुरोहित और व्यास मुनि भी उपस्थित थे।

56 व्यास की गोद मे बैठकर विवाह किया। इन्द्र भी वहीं उपस्थित थे।

57 वे ही पाण्डुपुत्र है जिनके दादा विचित्रवीर्य और परदादा शान्तनु है।

58-59 द्रुपद ने धन-धान्य, गोधन, गज-अश्व, रथ, भण्डार, देश, सेना आदि दहेज दिया जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता।

60 धृतराष्ट्र ने कहा कि यह कैसे हुआ ? भस्म भी अकुरित होता है—ऐसा तथ्य मै नही जानता।

61-63 यह कैसी माया है ? नहीं समझ सका। बलराम धृतराष्ट्र से कहते है कि युधिष्ठिर से पूछा तो उसने सब कुछ बताया। जिस दिन वारुणावन्त पर्वत दग्ध हुआ, उस दिन रात में जातुगृह से बाहर निकलकर सुरनदी के किनारे विश्राम किया।

64-66 नौका में बैठकर नदी पार करने के समय भीमसेन

ने कुम्भीर राक्षस को मारा। मधुबन में किन्नरी दैत्य को, हिडिम्बक वन में हिडिम्बक को, एकचक्रा नगर में बकासुर को, अंगार पन्नग को रास्ते में मारा।

67. पार्थ ने ब्राह्मण रूप में महालक्ष्य-भेद किया। छद्म रूप को कोई जान न सका।

68. अर्जुन ने जब लक्ष्य-भेद किया, तब तुम्हारे बेटा मानगोविन्द ने अकारण गोलमाल किया।

69. वहाँ आपस में बहुत युद्ध हुआ जिसके कारण सेना के साथ अनेक राजा धराशायी हुए।

70. एक ताड़ ऊँचाई तक रक्त की धार नदी की तरह बहने लगी।

71. दमनक, शाल्व, शिशुपाल, पुण्डरीक और रुक्मण इन पाँचों के केश पकड़ भीमसेन ले आया।

72. युधिष्ठिर की महिमा धन्य है कि इतना कष्ट होने पर भी उसके मन में क्रोध नहीं आता।

73. उन्होंने छोड़ देने के लिए भीमसेन को आदेश दिया। भीमसेन ने टाँग के बीच से फेंककर कहा कि जाओ भाग जाओ।

74. धृतराष्ट्र ने कहा कि मुझे सच बताओ कि मेरे सभी पुत्र जीवित तो हैं ?

75. गोविन्द ने कहा, कि हम लोगों ने तो दिन में देखा था किन्तु रात में युद्ध होने के कारण निश्चय नहीं कर सका।

76. पराजित होकर भागे बाईस दिन हो गये। अभी भी दुर्योधन लौटकर क्यों नहीं आया ?

77. बलराम ने कहा कि सेना बहुत घायल हो गयी है। लम्बा रास्ता है। इसलिए चल नहीं पा रहे होंगे।

78. सेना को सँभालते हुए कुरुपति आ रहा है। इसीलिए विलम्ब हो रहा है।

79. धृतराष्ट्र ने पूछा कि तुम लोगों ने जो वृत्तान्त बताया, उसके बाद भी क्या मेरे पुत्र जीवित हैं ?

80. बलराम ने कहा युधिष्ठिर अक्रोधी हैं। इतने कष्ट पर भी उसने दया नहीं छोड़ी।

81. इतना कहकर उन्होंने धृतराष्ट्र को समझाया। नीलाम्बर की बात से राजा दुःखमुक्त हुआ।

82. गोविन्द ने कहा कि हे धृतराष्ट्र, इन्ही चार दिनों के बीच में तुम पुत्रों से भेंट कर सकोगे।

83. हम लोग द्वारिका जा रहे थे। तुम अपने पुत्रों के आने पर समझाना।

84. पुत्रों को लेकर पांचाल देश जाना और हर्षपूर्वक युधिष्ठिर को ले आना।

85. धृतराष्ट्र ने कहा कि हे हरि ! चार दिन रह जाओ। दुर्योधन के आने पर उसे समझाकर कहना।

86. गोविन्द ने कहा कि हम लोग परिवार के साथ स्वयंवर देखने के लिए पांचाल देश में थे।

87. द्वारका में इन्हें छोड़कर पाँच दिन बाद पुनः आऊँगा।

88. सभी मिलकर पांचाल देश में जायेंगे और समारोह-पूर्वक पाण्डु पुत्रों को ले आयेंगे।

89. इस प्रकार समझाकर बलराम और कृष्ण यादव सेना लेकर अपने नगर की ओर चलते हैं।

90. द्वारका भुवन में प्रविष्ट हुए। उन्हें देखकर नगरवासी हर्षित हुए।

91. द्वारका नगर में बहुत हर्ष और उत्सव हुआ। सब लोग अपने स्थान पर गये।

92-93. कुम्भ मास, शुक्ल पक्ष, तृतीया रविवार, रेवती नक्षत्र में पराजित सेना लेकर कुरुराज हस्तिनापुर में पहुँचा।

94. संजय ने धृतराष्ट्र से कहा कि दुर्योधन अत्यन्त खिन्न होकर राज्य में लौटा है।

95. अठारह अक्षौहिणी सेना लेकर गया था। सात अक्षौहिणी का पतन हुआ और ग्यारह अक्षौहिणी लेकर लौटा है।

96. हे देव ! बिना घाव का कोई नहीं है। सभी दुःखद अवस्था को भोगते हुए आ रहे हैं।

97. धृतराष्ट्र सुनकर प्रसन्न हुआ। कहा कि पुत्रों को पाने मात्र से ही इतना होने के बाद भी निस्तार हुआ।

98. भीष्म, द्रोण, कर्ण, कृप, अश्वत्थामा, भूरिश्रवा की यथानुकूल सेवा की गयी।

99. निन्नावे पुत्र पिता को प्रणाम करके लेट गये किन्तु दुर्योधन ने पिता को नमस्कार नहीं किया।

100. सभा में कौरव शिरोमणि बैठे। राज्य में बहुत आर्त्तनाद सुनाई दे रहा है।

101. धृतराष्ट्र ने विदुर को एकान्त में बुलाकर पूछा कि तुमसे क्या पाण्डवों की भेंट हुई !

102. विदुर ने कहा कि हे ज्येष्ठ भ्राता ! पाण्डवों का

चरित्र-चित्रण करने में मानव जाति मे कौन सक्षम है?

103. द्रुपद को द्रोण जब पकड़कर लिया आये थे, तब कुरुपति ने उनका बहुत तिरस्कार किया था।

104. उस क्रोध को द्रुपद ने अपने हृदय में सँजोये रखा। वह राज्य मे न लौटकर शिव की तपस्या करने लगा।

105. द्रुपद ने तपस्या करके कौरवों के निधन और भीष्म-द्रोण को पराजित करने के लिए वर माँगा।

106 शिव ने कहा कि तुमसे यह सिद्ध नहीं हो सकता क्योंकि अर्जुन भी उस युद्ध में प्रतिपक्षी योद्धा होगा।

107 दुर्वासा को बुलाकर त्रिपुरारि ने कहा कि [illegible] के द्वारा द्रुपद को एक कुमारी उत्पन्न करके दो।

108 वह कन्या अर्जुन को प्रदान करके अर्जुन के द्वारा [illegible] का [illegible] कराओ।

109 [illegible]
समारोहपूर्वक [illegible] का [illegible]।

110 इस महायज्ञ मे [illegible] उत्पन्न [illegible]।

111 राजा दुहिता का [illegible] लगा किन्तु

112 पाण्डवों के विनाश की बात सुनकर अर्जुन [illegible] पाने की आशा छोड़कर राजा ने [illegible] की व्यवस्था की और दुर्लभ लक्ष्य की रचना की जिसे भेदने में कोई समर्थ नहीं हुआ।

113 117 पूर्वोक्त लक्ष्य को सोलह दिन तक कोई भेदन न कर सका। इसके बाद एक भिक्षुक ब्राह्मण ने [illegible] से निकलकर एक क्षण में ही भेदन किया। वह [illegible]चक्र भेद करके बाण ने मछली की बायी आँख को भेद दिया।

118. सबसे पहले दुर्योधन के आपत्ति करने पर उस वीर ने पुनः भेदन किया।

119. मछली की बायी आँख से घुसकर दायीं आँख से निकलते हुए चक्र के साथ वह भूमि पर गिर पड़ा।

120. द्रौपदी जब वरण करने के लिए आयी, तब तुम्हारे पुत्र दुर्योधन ने अकारण गोलमाल किया।

121. ब्राह्मणों को मारो कहकर दुःशासन दौड़ा। वह विद्वान् ब्राह्मण युद्ध से भयभीत न हुआ।

122 दूसरा एक ब्राह्मण दो वृक्ष उखाड़कर दौड़ा जैसे कि गजयूथ देखकर केसरी दौड़ पड़ता है।

123. सबसे पहले दुःशासन को ही पीटा। एक ही आघात से तुम्हारा बेटा धराशायी हुआ।

124 बाल पकड़कर सिर रगड़ने के समय लक्ष्य-भेद करने वाले ब्राह्मण ने उसे रोका।

125 वह द्विजवर बड़ा ही दयावान है। उसकी कृपा से तुम्हारे पुत्र की रक्षा हुई।

126 तब भी मूर्ख मानगर्विन्द नहीं रुका। चार ब्राह्मणो ने मिलकर इतनी सेना को मार डाला।

127 दो दिन और दो रात तक युद्ध हुआ। अठारह योजन तक सेना [illegible] होकर धरती पर गिर पड़ी

128 [illegible] लाखों राजाओं को [illegible]।

129 [illegible] कहा कि ये चार ब्राह्मण [illegible]।

130 घोर [illegible] निश्चित [illegible] कि ये [illegible] पाण्डु के नन्दन हैं।

131 [illegible] ने कहा कि मुझे दिव्य ज्ञान मिला। ये निश्चय ही पाण्डु के पाँच पुत्र हैं।

132 मैं तो तुम्हारे वश में अन्धा हूँ लेकिन आँख रहते हुए भी तुम लोगों को क्यों कुछ नहीं दिखाई दिया।

133 तुम लोग जब सेना लेकर भागे उस समय पाण्डवों से द्रुपद की भेंट हुई?

134 शुभ मुहूर्त मे द्रुपद ने [illegible] विवाह पाँचों पाण्डवों से किया।

135 नृपति पंचाल ने दहेज रूप मे अनेक धन, भण्डार, रथ, गज, सेना आदि प्रदान किये।

136 यह सुनकर विदुर ने प्रसन्नचित्त से पूछा कि हे देव! ये सब बातें कैसे जानें?

137 138 गान्धारी ने विदुर से कहा कि विवाह में बलराम और कृष्ण उपस्थित थे। विवाह-उत्सव देखकर चौथे दिन वे यहाँ आये थे।

139. वे विवाह उपहार की अनेक सामग्री लेकर आये थे। बलराम ने हमें दिखाया।

140-141. भीष्म, द्रोण, कर्ण, शल्य और शकुनि के साथ दुर्योधन को बैठाकर संजय ने कहा—हे बेटा ! अपनी मूर्खता से तुमने सैनिकों को मरवाया। कोई भी पाण्डवों को पहचान न सका ?

142. विवाह के समय बलराम और कृष्ण उपस्थित थे। पाँचों पाण्डवों को द्रौपदी प्रदत्त हुई।

143. धृतराष्ट्र ने कहा कि पांचाल देश को जाकर सम्मान पूर्वक पुत्रों को ले आया जाय।

144. भाई-भाई के बीच संग्राम हुआ। हे बेटा इसमें अभिमान की क्या बात है ?

145. यदि किसी अन्य ने तुम्हारी सेना का विनाश किया होता तो मेरे वंश के लिए वह लज्जाजनक होता।

146. हे बेटा ! उस बात को मन में मत रखो। अपने बड़प्पन की रक्षा स्वयं करो।

147. धृतराष्ट्र की बात सुनकर कुरूपति ने कहा कि पाण्डवों ने मुझे पहचानकर भी इतना दण्ड दिया।

148. उनको लाने के लिए मैं कैसे जाऊँगा ? पाण्डव ही मेरे असली शत्रु हैं।

149. मैंने तो बिना पहचाने ही युद्ध किया किन्तु उन लोगों ने हमें पहचानकर भी मेरी सेना को मारा।

150. हे राजा ! इसके लिए मुझसे मत कहो। अब पाण्डवों के साथ सद्भाव कहाँ है ?

151. भीष्म ने कहा कि अकारण ऐसा मत कहो। उन लोगों ने ही हम लोगों के बड़प्पन की रक्षा की।

152. दृढ़प्रतिज्ञ होकर यदि वे युद्ध करते तो क्या हम लोगों में से कोई भी बचकर घर आ सकता था ?

153. अर्जुन में हमारे प्रति बहुत-बहुत मोहासक्ति है। इसीलिए उसने भीमसेन के क्रोध को शान्त किया।

154. अनजान बात में कोई दोष नहीं होता। सम्मानपूर्वक ले आने से बहुत यश प्राप्त होगा।

155. हे कुरुराज ! यदि तुम उन लोगों को नहीं ले आओगे तो इस राज्य में क्या उनका आना बन्द हो जायेगा !

156. भीष्म और द्रोण के बहुत मनाने पर कुरुराज सहमत हुआ।

157. दस दिन तक अपनी सेना को विश्राम देकर कुरुपति ने सेना को सुसज्जित किया।

158-162. भीष्म और द्रोण के नेतृत्व में समस्त रथी, महारथी, अश्व, गज, रथ और पदाति सेना लेकर एक शुभ योग में कुरुपति सैन्य संचालन करके हस्तिनापुर से बाहर हुआ।

163. दुर्योधन के जाने के एक दिन बाद द्वारका से बलराम और कृष्ण हस्तिनापुर में प्रविष्ट हुए।

164. धृतराष्ट्र के पास देवराज कृष्ण पहुँचे। उसने उनके पाद-पद्म की पूजा की।

165. धृतराष्ट्र ने कहा कि दुर्योधन को समझाने पर वह सेना लेकर पांचाल देश को गया।

166. धृतराष्ट्र ने कहा कि हे देव ! मेरी बात मानो। चलो सभी पांचाल देश को चलें।

167. धृतराष्ट्र की बात सुनकर कृष्ण और बलराम पांचाल देश में जाने के लिए तैयार हुए।

168. मीन कृष्ण पंचमी, विशाखा के सोमवार को ६ ृतराष्ट्र रथ पर आसीन हुए।

169-170. विदुर सारथी रूप में रथ हाँक रहे हैं। संजय, गान्ध ारी और भूरिश्रवा आगे और बलराम-कृष्ण पीछे-पीछे चलने लगे। सबसे पीछे रथ, गज अश्व और सेनावाहिनी चलने लगी।

171. प्रथम दिन चलते-चलते एक सौ बीस योजन दूर उज्जैन नगर में पहुँचे।

172. एक दिन और चलकर राजा सौ योजन जाकर पद्मदल देश में पहुँचा।

173. अन्य दिन सेना के साथ छियानवे योजन जाकर राजा मन्दार देश में पहुँचा।

174. अन्य दिन चलकर राजा सेना के साथ रोहिणी गंगा के किनारे पहुँचा।

175. इस प्रकार बाईस दिन तक यात्रा करते हुए उद्दालक पटना पहुँचा।

176-177. द्रुपद राज्य वहाँ से चौबीस योजन था। राजदरबार में गुप्तचर बार-बार संवाद देते हैं कि सेना के साथ मानचक्रवर्ती पाण्डवों को लेने के लिए आ रहा है।

178-179. यह सुनकर पांचाल देश के राजा ने आसन छोड़कर युधिष्ठिर को बात बताई कि धृतराष्ट्र,

भीष्म, द्रोण और बलराम कृष्ण सेना लेकर आ रहे हैं।

180-181. युधिष्ठिर ने श्रीखण्डो से कहा कि रथ, गज, अश्व सब शीघ्र सुसज्जित करके लाओ। स्वयं धृतराष्ट्र और बलराम-कृष्ण आ रहे हैं। हम लोग कुछ दूर तक अगवानी करने के लिए जायेंगे।

182-184. आज्ञानुसार धृष्टद्युम्न और श्रीखण्डी ने रथ, गज अश्व और सेना को सुसज्जित किया। अनेक रत्नों से श्वेत हाथी को मण्डित किया। मुक्ता माल चारों ओर लटक रही है। अनेक चामर और पताका से सुसज्जित उस श्वेत हाथी पर युधिष्ठिर विराजमान हुए।

185. लाख मुकुटधारी सेना को साथ लेकर एक हाथी पर बैठकर भीमसेन आगे चला।

186. अर्जुन एक हाथी पर चढ़कर दो लाख मुकुटधारी सेना के साथ युधिष्ठिर के दायीं ओर चलने लगा।

187. नकुल दो लाख मुकुटधारी सेना के साथ युधिष्ठिर के बायीं ओर चलने लगा।

188. चार लाख मुकुटधारी सेना लेकर मन्त्री चूड़ामणि सहदेव युधिष्टिर के पीछे चलने लगा।

189. सुवर्ण रथ पर सवार राजा द्रुपद एक मर्भूत सेना लेकर युधिष्टिर के पीछे चला।

190. एक हजार योद्धा धृष्टद्युम्न के दोनों ओर पाट छत्र लेकर खड़े हैं।

191. श्रीखण्डी के दोनों ओर हजार योद्धा चामर डुला रहे थे।

192. वीरवाद्य, विजय घोष, दमामा, ढोल आदि बाजों को दो लाख वाद्यकार सामने बजाते हैं।

193. इसी समय युधिष्ठिर समारोहपूर्वक गंगा के उत्तरी किनारे से होकर चलते हैं।

194. गोविन्द ने कहा कि हे कुरुपति ! पाण्डव गण तो महासमारोहपूर्वक आ रहे हैं।

195. धृतराष्ट्र ने विदुर कहा कि बड़ा उत्सवपूर्ण वीर तूर्य बज रहा है।

196. विदुर ने कहा कि हे स्वामी ! पूर्व जन्म में पाप किया था, नहीं तो आँख होने पर युधिष्ठिर का वैभव देखते।

197. श्वेत हाथी पर बैठे युधिष्ठिर प्रत्यक्ष इन्द्र की तरह दिखाई देते हैं।

198. राजा द्रुपद पाँच लाख सेना लेकर और चामर-छत्र तथा आलम्ब लेकर धृष्टद्युम्न और श्रीखण्डी दोनों भाई आ रहे हैं।

199. शकुनि ने दुर्योधन से कहा कि पाण्डवों की महिमा और कृतित्व देखो कैसा है ?

200. यह देखकर विस्मित कुरुराज का मुखचन्द्र मलिन हो गया।

201. भीष्म, द्रोण, भूरिश्रवा, संजय और विदुर का मन अत्यन्त प्रसन्न हुआ।

202. दुर्योधन के सौ भाई, कर्ण, कृप, शल्य, अश्वत्थामा आदि विस्मित हुए और उनकी पंचात्मा व्याकुल हो उठी।

203. शकुनि पाण्डवों की सम्पत्ति देखकर उत्साहित हुआ। सोचा कि मैं पाण्डवों को माध्यम बनाकर पिता की प्रतिज्ञा का पालन करूँगा।

204-205. कुछ लोग प्रसन्न और कुछ लोग दुःखी हैं। इसी बीच गंगा के किनारे नैरुत नामक पर्वत के नीचे परस्पर भेंट हुई। धर्मराज युधिष्ठिर हाथी से उतरे।

206 युधिष्ठिर को देखकर सभी योद्धा गण वाहन को छोड़कर दो भागों में विभक्त हो गये।

207. देवहरि ने नन्दीघोष रथ से उतरकर युधिष्ठिर को नमस्कार किया।

208. युधिष्ठिर ने बलराम को प्रणाम करके धृतराष्ट्र को प्रणाम किया।

209-211. भीष्म, द्रोण, शकुनि, अश्वत्थामा, कृप, भूरिश्रवा आदि को युधिष्ठिर ने नमस्कार किया। सबने आशीर्वाद दिया कि हमारी आयु लेकर जीओ। तुम्हारी मनोकामना पूरी हो। शत्रु को मारकर तुम गर्व से खड़े रहो और तुम्हें राज्य प्राप्त हो।

212. द्रुपदेश्वर ने श्रीहस्त में अर्घ्य लेकर धृतराष्ट्र के पद्मपाद की दिव्य पूजा की।

213. ज्येष्ठ अनुक्रम से विधिपूर्वक भूरिश्रवा के बाद भीष्म, द्रोण की पूजा की।

214-215. द्रुपद सबसे कुशल वार्ता पूछ रहे हैं। सभी आनन्द से सर्व कुशल कहते हैं किन्तु मानगोविन्द

सिर नीचे करके बैठा है।

216. दुर्जय आदि गान्धारी-पुत्र भीमसेन को देखकर लज्जा से नतशिर होकर बैठे हैं।

217. शकुनि ने कहा कि तुम लोग बड़े दुष्ट हो। हारना-जीतना तो क्षत्रिय का प्रधान धर्म है।

218. स्वागत करके द्रुपद ने दुर्योधन को लेकर आसन पर बैठाया।

219-221 वाहन को छोड़कर बलराम, कृष्ण, संजय, विदुर, धृतराष्ट्र, भीष्म, द्रोण, भूरिश्रवा, कर्ण, शल्य, अश्वत्थामा, वाह्लिक, सोमदत्त, शकुनि, कृप आदि सभी योद्धाओं ने आसन ग्रहण किया। युधिष्ठिर ने यथायोग्य उनका सत्कार किया।

222. सभी लोग यथायोग्य सम्मानित हुए, किन्तु दुर्योधन ने किसी को भी नमस्कार नहीं किया।

223. मूर्खता के कारण उसने किसी को नमस्कार नहीं किया। आपस में अन्य लोगों से कुशलवार्ता की।

224 धृतराष्ट्र ने युधिष्ठिर को गोद में लेकर कहा कि हे बेटा ! तुम्हारी विपत्ति सुनकर मैं दुगुना दुःखी हुआ।

225. कहते-कहते धृतराष्ट्र शोकाकुल हो गये। युधिष्ठिर ने उन्हें समझाया।

226 हे स्वामी ! जब जातुगृह में आग लगी, उस समय हम लोग भागकर महाघोर वन में प्रविष्ट हुए।

227 अनेक दुर्गम स्थानों पर मार्ग-अमार्ग से जाना पड़ा। वन के जीव-जन्तुओं के साथ अनेक क्रीड़ाएँ कीं।

228-229 वज्र कवच के वंशधर कुम्भीर, किन्नरी, बक और हिडिम्बक आदि चार असुर वीरों का भार पृथ्वी सहन नहीं कर पा रही थी। उन्हें भीमसेन ने अकेले मारा।

230 अगार पन्नग विद्याधर को फाल्गुनी ने जीता जिससे उसने अनेक अस्त्र देकर पूजा की।

231. इस स्वयंवर के लिए द्रुपद राजा ने गौतमी तीर्थ में सबको निमन्त्रित किया।

232 हे देव ! हम लोग उस समय गौतमी तीर्थ में थे। उसी सूचना के अनुकूल हम लोग स्वयंवर देखने के लिए यहाँ आये।

233. हे देव ! भाग्यवशात् अर्जुन ने लक्ष्य-भेद किया। दुष्ट राजाओं ने मिलकर अनर्थ मचाया।

234. धृतराष्ट्र ने कहा कि हे बेटे ! तुम लोगों को देखकर मैं बहुत आनन्दित हुआ और इससे मेरा निस्तार हुआ।

235. द्रुपद राज्य में उत्सवपूर्वक भोजन आदि की व्यवस्था करवाई गयी।

236. वीरों को स्नान-सामग्री दी। सभी ने सुगन्धित तेल लगाकर गंगा में स्नान किया।

237-238. रसोइयों ने अमृत भोजन की व्यवस्था की। कृष्ण बलराम और सामन्त राजाओं को देखकर धृतराष्ट्र भोजन करने बैठे।

239-240. गैंडा, हिरण, मृग माँस के सहित भोजन जिसकी जितनी इच्छा है, परसा जा रहा है। परसने वाले प्रसन्नतापूर्वक परस रहे हैं। सभी सेनाएँ खाकर तृप्त हो रही हैं।

241-242 राजा द्रुपद पुत्रों के साथ शाक, मूँग, व्यंजन, उड़द बड़ा, मधुरुचि, छेना-बड़ा, घृत में तला माँस आदि परोसते है।

243. आमिष, निरामिष, खटाई, सजाव दही आदि एक सौ बीस प्रकार का व्यंजन खाकर सभी तृप्त होते हैं।

244. पीठा की महिमा का वर्णन कौन कर सकता है ? घृत के माधुर्य से वह अमृत रस की तरह है।

245. बहुत गोरस लाकर परसा जा रहा है। उसे पीकर राजागण तृप्त होते हैं।

246-247. सुवासित जल से पूर्ण रत्नखचित लोटा आचमन के लिए दिया। दाँतों में खरिका करने के लिए सोने की सींक दी। इसे देखकर धृतराष्ट्र ने प्रशंसा की।

248. धृतराष्ट्र ने द्रुपद से कहा कि तुम्हारी महिमा धन्य है और तुम्हारे कार्यों को साधुवाद देता हूँ। यह बड़ी अच्छी बात है कि तुम्हारी दुहिता मेरी कुलवधू है।

249. हे द्रुपद ! हम लोग अत्यन्त तृप्त हुए। मेरे पुत्रों के प्रति तुम्हारा यह सद्भाव सर्वदा बना रहे।

250-252. दुर्योधन ने द्रुपद की महिमा की प्रशंसा करके कहा कि केवल मेरी ही नहीं अपितु लाख-लाख राजाओं

की सेनाएँ यहाँ सोलह दिन तक रहीं। उनके भोजन की व्यवस्था समान भाव से करते रहे। हे द्रुपद! तुम्हारी महिमा धन्य है। इस प्रकार का कार्य करने वाला संसार में दूसरा कोई नहीं है।

253. पांचाल देश में कुरुपति आठ दिन तक रहे। द्रुपद ने बहुत भक्ति और सम्मान दिया।

254-256. युधिष्ठिर, भीम, नकुल और सहदेव को सुसज्जित सेना के साथ लेकर जाते समय अन्तःपुर से कुन्ती ने धृतराष्ट्र से कहा कि अभी तो इन्हें ले जा रहे हो किन्तु बाद में मेरे पुत्रों को संभाल न सकोगे।

257-259. पुरोचन ब्राह्मण को लेकर जिसने एक कूट जातु घर का निर्माण किया, पुरोचन ने रात मे उसमें आग लगा दी। दूसरे की हिंसा करने में उसका स्वयं नाश हुआ। धर्मवशात् मैं भाग आयी नहीं तो पुत्रों के साथ उसी रात जलकर मर जाती।

260 धृतराष्ट्र ने कहा कि उसे मन मे मत रखो। जिसने व्यवस्था की उसका विनाश हो गया।

261 चारों युग में धर्म ही श्रेष्ठ होता है। धर्म रहने पर प्राणी शुभ योग में पार हो जाता है।

262. हे कुन्ती ! पांचाली को लेकर रथ पर सवार हो। मेरे मूर्ख पुत्रों के दोष को मन में मत रखो।

263 युधिष्ठिर ने कहा कि हे मा ! धृतराष्ट्र के रहने तक दुर्योधन की बातों पर ध्यान देने की क्या आवश्यकता है।

264-265 •वह स्वभावतः बचपन से ही अभिमानी है। जो, जो कुछ कहता है, वह उसी बात के बस में हो जाता है। युधिष्ठिर मा को समझाते हुए कहते हैं कि इस शुभ योग में रथ पर बैठो।

266 मातलि आकाश से पुष्पक विमान लेकर पहुंचा। कुन्ती और पांचाली इस देवरथ पर आसीन हुई।

267 माँ ने पांचाली के सिर पर अर्घ्य देकर कहा कि अनेक प्रकार से पति की सेवा करना।

268. हे बेटी ! तुम मानवी रूप में प्रत्यक्ष निरंजनी हो। तुम अकेली दुहिता ने मेरे कोटि पुरुषों का उद्धार किया।

269. धृष्टद्युम्न और श्रीखण्डी दो भाई और केशिनी दासी के साथ में गयीं।

270-279. द्रुपद राजा ने आनन्दपूर्वक, एक सौ रथ रत्नालंकार, दस हजार रथ, बीस हजार हाथी, पाँच वृन्द अश्व और तीन अक्षौहिणी पदाति, पाट छत्र, उद्दण्ड आदि एक लाख, चौदह लाख आलम्ब, पृथ्वी को आन्दोलित करने वाले दो वृन्द बाजे, बछड़े के साथ एक लाख दुधारू धेनु गाय, श्रीखण्डी नामक पुत्र, केशिनी के साथ एक लाख सुन्दरी दासियाँ आदि प्रदान किया। सबने एक शुभ मुहुर्त मे स्त्रियों की मंगल-ध्वनि के बीच पांचाल देश से प्रस्थान किया।

280-281. सत्तर योजन दूर गन्धर्व नदी तक सेना के साथ उस शुभ मुहूर्त में विदाई देने के लिए राजा द्रुपद गये।

282 वहाँ गन्ध-मादन पर्वत के पास दोनों की भेंट हुई। धृतराष्ट्र रथ से उतरे।

283. धृतराष्ट्र ने द्रुपद का आलिंगन करके कहा कि हे समधी ! मेरे पुत्रों के गत दोष को मन में मत रखना।

284 वे मूर्ख बच्चे हैं। द्रोण के कहने पर उन्होंने तुम्हारे साथ अपराध किया।

285 अर्जुन तुम्हारा दामाद हुआ तो वह सब कुछ अर्जुन को देखते ही समाप्त हो गया।

286 अपनी दुहिता को समझाओ कि वह मेरे मूर्ख पुत्रो के दोष को मन में न रखे।

287. दस बार वह उनके दोष को क्षमा करे। इसके बाद वे अपने भाग्य को भोगेंगे।

288 द्रुपद ने कहा कि वह परम माहेश्वरी, सर्वज्ञ और सती है। उसे मैं क्या समझाऊँगा ?

289. हे समधी ! अपने राज्य को लौट जाओ। तुम्हारे साथ तुम्हारे दोनों पुत्र भी चले जायें।

290. द्रुपद सबका कल्याण चाहते हुए एक-एक का हाथ पकड़कर सबको समझाते हैं।

291. कुरुनाथ ने दक्षिण दिशा में प्रस्थान किया और द्रुपद गन्धर्व नदी के किनारे से लौटे।

292-296. एक शुभ मुहुर्त में कुरुनाथ हस्तिनापुर में प्रविष्ट हुए। नगर की नारियाँ प्रसन्नतापूर्वक मंगल-ध्वनि करने लगीं।

297. युधिष्ठिर ने कहा कि हे तात ! हम लोग उस परिमल वारुणावन्त क्षेत्र में रहें।

298. धृतराष्ट्र ने कहा कि ऐसा मत बोलो। तुम एक सौ पाँच भाई एकात्मा होकर एक साथ रहो।

299-300. हे बेटा ! तुम लोगों के साथ अनेक ईर्ष्या और हिंसा का भाव रखा किन्तु दहन वार्ता सुनकर बहुत विकल हुआ था। हे पण्डित जन ! विचार करके देखो कि सहोदर के साथ ईर्ष्या नहीं करनी चाहिए।

301 पुत्रों को समझाकर धृतराष्ट्र हस्तिनापुर में प्रविष्ट हुए।

302 नगर के लोगो ने हाहाकार करके पूछा कि ये लोग अपना शरीर लेकर कहाँ छिपे थे ?

303-306. अनेक मंगल कामनाओं के साथ कामिनियाँ जय-ध्वनि करती हैं। भानुमती अपने कक्ष से अर्घ्य लेकर बाहर आयी। द्रौपदी के सिर पर अर्घ्य देकर शत-सहस्र दण्ड प्रणाम करके भानुमती ने अनेक मंगल कामना की। द्रौपदी ने प्रचुर उपहार पाये।

307. हस्तिनापुर के पश्चिम दिशा में पुष्पा नदी के किनारे पाण्डव रहने लगे।

308. युधिष्ठिर देव को राजसभा में बुलाकर कुरुपति आसन पर बैठे।

309-310. सभा में कृष्ण ने कहा कि हे दुर्योधन ! पाण्डवों को यत्नपूर्वक रखना। इनसे अच्छे सहोदर कोई अन्य नहीं हैं। सहोदर की रक्षा करने से अत्यन्त पुण्य होता है।

311. हे नृपति ! यदि तुम पाण्डवों की रक्षा नही करोगे तो संसार में तुम्हारा अपयश होगा।

312. हे कौरव ! तुम लोग मन में ऐसा विचार रखो कि चारो युगों में पाण्डवों का विनाश नहीं होता है।

313. दुर्योधन ने कहा कि हे देव हरि! जो तुम्हारी आज्ञा नहीं मानता, उसका अवश्य ही विनाश होता है।

314. सबको समझाकर कृष्ण और बलराम दोनों भाइयों ने द्वारकापुरी को प्रस्थान किया।

315 नन्द और वसुदेव के पूछने पर कृष्ण बलराम ने पाण्डवों की सारी बातें सुनायीं।

316 पाण्डवों और दुर्योधन में अत्यन्त प्रीति उत्पन्न हुई है।

317. भोजन और शयन दिन रात-दिन साथ हैं। ईर्ष्या हिंसा आदि छोड़कर अभेद और प्रीति दिन पर दिन बढ़ रही है।

मालती शबरी उपाख्यान

1. वन में आनन्दपूर्वक विचरण करने वाले शबरी नारायण केशव ! तुम्हारी जय हो।
2. अजमेर किरात की दुहिता मालती से किरात चक्रवर्ती का विवाह हुआ।
3. स्वामी किरात चक्रवर्ती के सिर पर बिखरे हुए केश शोभायमान हैं। गले में गुंजा और रुद्राक्ष की माला तथा ललाट पर टिकुली विराजित है।

4-5. माँग में स्वर्ण पुष्प, कण्ठ में रुद्राक्ष माला, कर्ण में स्फटिक कुण्डल, लाल केयूर, और कर्णाचल शोभित है। गाल विकसित और होंठ लाल हैं।

6. हृदय पर झीने वस्त्र का आवरण और दोनों हाथों पर मयूर पूँछ का अलंकार शोभित है।
7. आँखें लोहित वर्ण की हैं। ललाट पर किंशुक पुष्प तथा पवित्र कमल की पंखुड़ी और जुगनू की तरह चमकता हुआ टीका विराजित है।

8-9. साही के काँटे से निर्मित वनमाला परिहित किरात राजा रंगीन मदिरा से मत्त होकर घो-घो आवाज के साथ उन्मत्त नृत्य करता हुआ देवी के साथ क्रीड़ा और बिहार करता है।

10. कमर में शार्दूल चर्म की लंगोटी धारण किये हुए हैं और शुद्ध स्फटिक और मयूर पक्षी के पंख से आभूपित हैं।
11. मालती शबरी आनन्द से गेंडा और वनमृग मारकर बिहार करती है।
12. कान में पक्षी के आकार का कर्णाभूषण और कण्ठ में नीलकंठ पक्षी के पर तथा वक्षस्थल पर तारा पक्षी के पर शोभित हैं।
13. पैर में नूपुर, गालों पर चंचल कुण्डल, पावन करस्थली में झलझलाता हुआ मर्कत शोभित है।
14. मालती शबरी और उसके स्वामी शबरी नारायण के चरणों में शूद्रमुनि सारला दास की शरण है।

हरि जन्म व्रत

1-2. मनु ने महामुनि से कहा कि युधिष्ठिर हस्तिनापुर न जाकर वारुणावन्त में रह गये और धृतराष्ट्र हस्तिनापुर लौट आये।

3 माता सहित ये सातो लोग यहाँ सब सामान रखकर रहने लगे।

4. वैवस्वत मनु ने ब्रह्मवेत्ता अगस्त्य से कहा कि मैं एक बात पूछूँगा, बताओ।

5-6. मानगोविन्द पन्नग नारायण के कन्धे पर लक्ष्मी कैसे बैठी। हे मुनि ! यह बात मुझे विस्तार से बताओ। तुम्हारे मुँह से इसे सुनकर मेरा उद्धार होगा।

7 अगस्त्य कहते हैं कि हे वैवस्वत मनु ! इस कथा को तुम्ही सुन सकते हो।

8-12 सिंह मास कृष्ण पक्ष अष्टमी तिथि, रोहिणी नक्षत्र के बृहस्पतिवार को भीष्म, द्रोण, कर्ण, भूरिश्रवा, संजय, विदुर, दुःशासन, दुर्दक्ष दुकर्ण प्रभृति लोगों ने हस्तिनापुर की राजसभा मे बैठकर हरि जन्म व्रत देखने को द्वारका जाने के लिए आपस मे विचार किया।

13 इस प्रकार विचार करने पर कुरुबल द्वारका मण्डल पहुचा। -

14 सोम वंश के अधिपति को देखकर नारायण ने सम्मान- पूर्वक आसन पर बैठाया।

15-16 सभी यदुवशी सेना खडी है। आसन पर बैठकर नारायण ने पूछा कि यहाँ तुम्हारे आने का क्या कारण है ? इतनी बनी सेना लेकर कहीं गये थे क्या?

17 भीष्म ने कहा कि तुम्हारा हरि जन्म व्रत सुनकर देखने के लिए हम लोग आये हैं।

18. यह सुनकर हरि ने उन्हें रात मे रोका। उस रात में जन्माष्टमी का उपवास हुआ।

19. समस्त कुरुवासी भोरों के सवेरे उठने पर कमला की दृष्टि मानगोविन्द पर पड़ी।

20. पृथ्वी पर ऐसा गुणवान और श्रीमान् पुरुष सम्भव है? ऐसा सोचकर लक्ष्मी दुर्योधन को छोड़ न सकी।

21. इसके कन्धे पर कैसे बैठ सकूँगी ? यह सोचकर कमला विचलित हुई।

22 इस प्रकार वहाँ कई दिन बीत गये। लक्ष्मी का शरीर दिन पर दिन क्षीण होने लगा।

23 एक दिन एकान्त में बैठने के समय सरस्वती ने कमला से पूछा कि हे सखी ! तुम्हारा मन खिन्न क्यो है ?

24 लक्ष्मी ने कहा कि हे सखि ! मैं अपने हृदय की वेदना तुमसे न बताकर किससे बताऊँगी ?

25-27 हे सखि ! द्वारका में धृतराष्ट्र का पुत्र आया था। उसका श्रीवन्त लक्षण देखकर मेरे मन मे उसके कन्धे पर बैठने की कामना है। इसी बात के लिए मेरा मन विकृत है।

28-30 इस बात को मैं खुलकर स्वामी से नही कह पा रही हूँ। यह सुनकर शारदा ने कहा कि इस छोटी सी बात की चिन्ता मत करो। इसी रात मैं प्रभु के कण्ठ में बैठूँगी। तुम्हें जिस वस्तु की आवश्यकता होगी, उसके लिए उन्हे सहमत कर लेना।

31-32 इस प्रकार सूर्यास्त हुआ। लक्ष्मी नारायण आपस में मिले। नारायण ने पूछा कि तुम क्यों विचलित हो ? मुझे बताओ।

33-34 महालक्ष्मी नारायण से कहती हैं कि द्वारका में धृतराष्ट्र का पुत्र आया था जो अत्यन्त लक्षणवान था। उसे देखकर उसके कन्धे पर बैठने का मेरा मन करता है।

35-36 उस कारण को मै तुमसे खोलकर नही कह पा रही थी। हो सकता था कि तुम मुझ पर क्रोध करते। यह सुनकर जगन्नाथ ने प्रसन्नतापूर्वक आदेश दिया कि मानगोविन्द के कन्धे पर बैठो।

37 यह सुनकर कमला का मन प्रसन्न हुआ। उसने तत्क्षण हस्तिनापुर के लिए प्रस्थान किया।

38-39. कुरुपति आसन पर बैठा था। लक्ष्मी उसके कन्धे पर विराजमान हुई। कन्धे पर कमला के बैठने से उसी दिन से दुर्योधन सिर नहीं उठा सकता। सिर लटकाकर कुरुवीर बैठता है।

40 लक्ष्मी के कन्धे पर बैठने के दिन से दुर्योधन की श्री सम्पत्ति बढ़ने लगी।

41. हे राजा ! इसी दिन से लक्ष्मी हस्तिनापुर में रहने

लगी। .सी कार.। • न' ' हंकारी हुआ।

42. राजा मनु सुनकर प्रसन्न .   ौर अगस्त्य से एक और बात पूछी।

43. कहा कि लक्ष्मी के बैठने स दुर्योधन के चतुर्पाद मे लक्ष्मी की वृद्धि हुई ?

लक्ष्मण कुमार जन्म

1 हे पुरुषोत्तम ! लक्ष्मण कुमार जन्म की कथा मुझे विस्तार से बताओ।

2 मानगोविन्द का पुत्र कैसे पैदा हुआ ? यह तुम्हारे मुँह से सुनकर मै पवित्र हो जाऊँगा।

3 6 अगस्त्य वैवस्वत मनु से कहते है कि वृषभ शुक्ल पचमी सोमवार को रोहिणी नक्षत्र मे भानुमती रजस्वला हुई। इस प्रकार सात दिन गुप्त रूप मे बीत गये। इसके बाद सुन्दरी प्रभात स्नान करके अपने अन्त पुर मे आयी।

7-8 इस प्रकार सूर्यास्त हुआ। भानुमती के साथ मानगोविन्द ने काम-क्रीडा और रति विलास किया। उसी दिन रानी गर्भवती हुई।

9 11 इस प्रकार दस मास दस दिन पूरा होने पर मकर मास मे एक लक्षणवान अत्यन्त सुन्दर पुत्र पैदा हुआ, जिसे देखकर सभी आनन्दित हुए।

12 ज्योतिषी बुलाकर जन्मपत्री की गणना कराई गयी। उसने कहा कि सब कुछ तो अच्छा है किन्तु सामान्य दोष जान पडता है।

13 उत्सव करके राजा ने विप्रो को बुलाकर स्वर्ण दान किया।

14 सबसे पहले पुत्र को भूरिश्रवा की '' म रखा। कुलवृद्ध ने नवजात शिशु को गोद मे लिया।

15 दूसरी बार भीष्म, तीसरी बार विदुर, चौथी बार सजय महामन्त्री ने शिशु को गोद मे लिया।

16 धृतराष्ट्र ने सजय से पूछा कि यह पुत्र योग्य तो है ?

17 सजय ने गोद मे लेकर कहा कि यह पुत्र सम्पन्न है।

18 उसे सर्वलक्षणसम्पन्न देखकर लक्ष्मण कुमार नाम दिया गया।

19 20 यह पुत्र सब कुछ मे विचक्षण होगा किन्तु अल्प वय मे ही महाभारत युद्ध में मारा जायेगा। कोई भी मुखाग्नि इसके हाथ से नहीं पायेगा।

21 22 इसे सुनकर धृतराष्ट्र प्रसन्न हुआ। मनु ने कहा कि हे अगस्त्य महामुनि ! लक्षमण कुमार के जन्म की कथा सुनकर मैं आनन्दित हुआ। इसके बाद पाण्डवों ने क्या किया—बताइये।

प्रचण्डासुर वध

1 नकुल को स्वर्ग में कैसे पगडी मिली ? यह जानने की मेरे मन मे इच्छा है।

2 अगस्त्य ने मनु से कहा कि जिस प्रकार इन्द्र ने नकुल को पगड़ी दी—उसे सुनो।

3-9 सारोची सत्य युग मे इडाव्रत खण्ड मे हन्तकार का दुर्दण्ड नामक पुत्र पैदा हुआ। दुर्दण्ड से वसु असुर, वसु से लोहासुर, लोहासुर से केतुमाला, केतुमाला से पिगला, पिगला से कुण्डली, कुण्डली से मूषली, मूषली से जम्बासुर, जम्बासुर से स्कन्द, स्कन्द से कालकेतु का जन्म हुआ। उस प्रतापी असुर ने अनेक जीव-जन्तुओ को खाकर पृथ्वी पर हड्डियों का ढेर लगा दिया। ब्रह्मा ने घोर हुकार के साथ उसका विनाश किया।

10-14 कालकेतु से ध्रुवासुर, ध्रुवासुर से सघटासुर, सघट से सिहनाद, सिहनाद से विषाद, विषाद से वज्रबाहु, वज्रबाहु से केतुमाला, केतुमाला से धूमासुर और धूमासुर से प्रचण्डासुर नामक पुत्र पैदा हुआ। इस प्रतापी असुर ने कैलाश पर जाकर अनशनव्रत के द्वारा सदाशिव को प्रसन्न किया।

15 उस जातुधन ने हजार वर्षो तक सेवा की तथापि वह शिव का रूप वर्ण न देख पाया।

16 17 अकुश के नोक से दोनो आँखें को निकालने पर पकजाक्षी उमा ने शिव की ओर देखकर कहा कि प्रचण्डासुर ने तुम्हारी सेवा की। हे स्वामी ! उसके प्रति इतने निष्ठुर क्यों हो ?

18-19 अम्बिका की बात सुनकर सदाशिव वृषभारोहण करके उसके पास उपस्थित हुए। देखा कि असुर के शरीर में चेतना नही है। उन त्रिलोचन ने उसे अमृत नेत्रों

से देखा।

20. उसी समय असुर सचेत होकर उठा। कहा कि तुमने मेरी दुखार्जित तपस्या को क्यों तोड़ दिया ?

21. हे यती ! मैंने तुम्हारा कोई दोष नहीं किया। तुमने अकारण मेरी तपस्या क्यों भंग की ?

22. सदाशिव ने कहा कि तुम जिस सदाशिव की तपस्या कर रहे हो, मैं वही सदाशिव हूँ। मेरा स्वरूप देखो।

23. असुर ने कहा कि यदि तुम सदाशिव हो तो अपना रूप धारण करो, मैं देखूँगा।

24-29. प्रचण्डासुर के कहने पर शिव ने निज रूप ६ ारण किया। धवल कमल वपु व्याघ्र चर्म वस्त्र परिहित है। कन्धे पर सर्प का उत्तरीय शोभित है। कण्ठ तल नवजलधर की निन्दा करता है। त्रिशूल और डमरू आकाश में स्फुरित है। बायीं जंघा पर पार्वती आसीन हैं। सिर पर कालीय नामक सप्तमणि नाग शोभित है। स्वामी त्रिनेत्रधारी हैं और ललाट पर चन्द्र नाग शोभित है। उनके पंचमुख से पाँचों वेद क्षण-क्षण स्फुरित हो रहे हैं। गणपति और कार्तिकेय पास में हैं। सिर पर त्रिमुण्डी जटा शोभित है। इस रूप को देखकर प्रचण्डासुर सन्तुष्ट हुआ।

30. उसी समय शत-सहस्र दण्ड प्रणाम करके दोनों हाथ जोड़कर कहा कि हे स्वामी ! मेरा उद्धार करो।

31. बहुत स्तुति करके पद्मपाद में प्रणाम करता है। सन्तुष्ट शिव ने कहा कि वर माँगो।

32. प्रचण्डासुर ने कहा कि हे देव काशी ! हे दयासागर ! आप मुझपर प्रसन्न होकर आये। यह आपकी महान् कृपा है।

33-34. देवता और असुरों में युद्ध लगा हुआ है। देवता असुरों का शिरोच्छेदन करते हैं। मुझे ऐसा वरदान दो कि युद्ध में घुसने पर देवगण मुझसे डरें और इन्द्र आदि देवता मुझे जीत न सकें।

35. ब्रह्मा विष्णु के हाथों भी मेरा विनाश न हो। हे देव ईश! मेरे अंग वज्र हों—ऐसा वर दो।

36. अन्तरिक्ष में मेरा रथ घूमे और तीनों लोकों में वीरता प्रचारित हो।

37. कोई अस्त्र मेरे शरीर में न घुसे। सिर कटने पर भी बार-बार लग जाय।

38. तीनों लोकों में किसी का भय न हो। मैं जिसे मारूँ वह अवश्य मरे।

39. नर और असुर किसी के हाथों मैं न मरूँ। पुनः मैं चिरंजीवी होऊँ।

40. सदाशिव ने कहा कि ऐसा ही हो। नर, सुर और असुरों का तुम्हें भय न रहे।

41-42. यह कहकर सदाशिव ने कहा कि इसका नाम तो मृत्युलोक है। यहाँ जन्म होने पर मृत्यु अवश्य प्राप्त होती है। पृथ्वी पर जन्म लेने पर देवताओं की भी मृत्यु होती है।

43. कैसे मृत्यु प्राप्त करूंगा ? साफ-साफ कहें। यह सुनकर वे ब्रह्माण्ड ईश्वर आज्ञा देते हैं।

44. ईश्वर ने कहा कि हे प्रचण्ड दानव ! पंच इन्द्र जन्म लेकर तुम्हें मारेंगे।

45. सदाशिव की बात सुनकर असुर सोचता है कि एक इन्द्र होने पर उसे स्वर्ग ही सहन करता है।

46. यह सोचकर पूछता है कि पंच इन्द्र का अवतार कैसे होगा ? सदाशिव ने उत्तर दिया कि वह अश्विनी कुमार होगा।

47. नारी के गर्भ से और अश्विनी के वीर्य से पंच इन्द्र का जन्म मृत्युलोक में होगा।

48. उसके हाथ से तुम्हारी मृत्यु होगी। इतना कहकर सदाशिव अन्तर्धान हो गये।

49. वह महाबल असुर प्रचण्डासुर वर प्राप्त करके जेनावली नगर की ओर चला।

50. जेनावली पुर कौमुदी पर्वत के नीचे है। उस गाँव में असुरों के नौ लाख घर हैं।

51. वह महाबली असुर उस गाँव में प्रविष्ट हुआ। उसे देखकर सभी राक्षसों ने घेर लिया।

52. हर के वर से पृथ्वी उन समस्त राक्षस महावीरों का भार सहन न कर सकी।

53. प्रचण्डासुर के नगर में नौ लाख खन्दक हैं। उस नगर में राक्षसों की सेना अकलनीय है।

54. पन्द्रह योजन विस्तृत गाँव में आसन, मण्डप, सभागार, मन्दिर, अट्टालिकायें और नौ लाख गलियाँ हैं।

55. वह असुर कुबेर की तरह धनवान है। रथ, गज, तुरंग और पदातिक अपरिमित हैं।

56. जिस दिशा में उसकी सेना चलती है उस दिशा में ऊधम मच जाता है।

57. सेना सुसज्जित करके वह चराचर मही पर घूमा। उस असुर के सामने कोई सिद्ध नहीं हुआ।

58. उसकी सेना सत्तरह योजन तक घेरकर चलती है। वे सब पापिष्ठ जन-जन्तु का भक्षण करते हैं।

59. वीर योद्धाओं के पदचाप और चीत्कार से आषाढ़ मास के बादलों की गड़गड़ाहट जैसी आवाज होती है।

60. उसके पास रक्त वीर्य से चारगुना सेनायें हैं। मृत्युलोक में उसके समान कोई राजा नहीं है।

61. वह महावीर पश्चिम दिशा में प्रवेश नहीं कर पाता है। उस प्रचण्डासुर के भार को मेदिनी सहन नहीं कर पाती है।

62. हिमाद्रि को जीतकर वह असुर चल रहा है। रास्ते में मन्दराज को देखकर यह सोचता है कि यह किंचित् मात्र है।

63. रखने की इच्छा होगी तो रखूँगा, नहीं तो इसे फेंक दूँगा। किन्तु यह पृथ्वी को धारण करने वाला है, इसे क्यों दण्ड दूँ।

64. सुमेरु के पास आकर सोचता है कि यह बड़ा ही सौन्दर्यमय है। उसकी शत शृंखलायें आकाश से लगी हुई हैं।

65. नौ लाख योजन तक इसका आयतन है। यह मेरे लिए किंचित् महत्त्वपूर्ण होगा।

66. इस प्रकार सोचकर वीर ने गर्जन किया। सुमेरु पर्वत पर मंदराचल टूटकर गिर पड़ा।

67. उस गर्जन के आघात से सुमेरु पर्वत ने त्रस्त होकर विनयपूर्वक लाख भार रत्न दिया।

68-69. कहा कि हे दैत्यपति ! मेरी बात सुनो। मैं निर्दोष हूँ और चराचर धारण करता हूँ। किसी के साथ मैं द्वन्द्व नहीं करता। प्रस्तर स्वभाव के कारण मैं अचल हूँ।

70. तथापि मैं तो तुम्हारा शत्रु नहीं हूँ। अकारण तुमने मुझे क्यों दण्ड दिया ?

71. तुम्हारे सामने यदि हो सकते हैं तो दस दिग्पाल ही होंगे। मैंने तुम्हें यह सूचना दी। अब तुम उन लोगों के पास जाओ।

72-73. इस समय उसके मन्त्री शूरधन्या ने कहा कि जब सन्धान देकर शरण में आया तो शरण में आये हुए लोग का ध्वंस करना उचित नहीं है। मन्त्री की बात से वह महावीर लौट गया।

74. वह अलका भुवन में जाकर पहुँचा। वीर के हुंकार से कुबेर चिहुँक उठा।

75-76. सुनकर धनाधिपति भयभीत हो गया। रत्न भण्डार समर्पित करके माथा नीचे करके कहा कि मैं चौरासी भण्डार का मालिक हूँ। समझो कि यह सब भण्डार तुम्हारा ही है।

77. मैं तुम्हारा भण्डार-रक्षक मात्र हूँ। तुम्हारी इच्छा हो तो यहीं रखना, नहीं तो जब इच्छा हो तो यहाँ से ले जाना।

78. मन्त्री ने कहा कि इसमें कोई गर्व की भावना नहीं है। इसके साथ झगड़ा करने का मतलब क्या है ?

79. प्रचण्डासुर ने कहा कि सारी पृथ्वी घूमा किन्तु एक दण्ड के लिए भी युद्ध नहीं किया।

80. मन्त्री ने कहा कि यदि कोई शत्रु रूप में बाहर आता तो उसके साथ एक क्षण तक युद्ध किया जाता ।

81. अरक्षित लोगों की तुम्हारे बिना कौन रक्षा करेगा ? ऐसी इच्छा क्यों करते हो ?

82. मन्त्री के वचन से वह असुर शान्त होकर कुबेरपुर से लौटा।

83. मन में सोचता है कि इस मर्त्यलोक में मेरे समकक्ष कोई नहीं है। अब पाताल को जाऊँगा, हो सकता है नाग राजा युद्ध करे।

84. इतना कहकर पाताल लोक की ओर सेना को बढ़ाया। आगे-आगे मन्त्रिवर ने रास्ता दिखाया।

85. हिमालय के अन्तिम छोर पर हिमाद्रि नामक नदी पातालगंगा को भेदकर आ रही है।

86. वह नदी के उत्तर के रास्ते से पाताल की ओर जाती है। उस रास्ते को भेदकर असुर की सेना चली।

87. दस योजन पर्यन्त भूमि की अंधकार सुरंग से होकर पाताल लोक में घुसे।

88 देखा कि वह पाताल विचित्र रत्नों से पूर्ण है। उस लोक में रात और दिन का भेद नहीं किया जा सकता।

89. लाख-लाख निर्मल रत्नों के दीपकों की पंक्तियाँ जलती रहती हैं। बिना आग के ही वे अत्यन्त निर्मल जलते हैं।

90. चारों द्वारों पर नायक रूप में अनन्त, तक्षक, वासुकि और कर्कटक अवस्थापित हैं।

91. प्रथम द्वार पर अनन्तक द्वार रक्षक थे। असुर सेना को देखकर वे आश्चर्यचकित हो गये।

92. मन में सोचा कि यह कैसा असुर है ? यह निशाचर पाताल बैकुण्ठ में पहुँच ही गया।

93. अगाध समुद्र की तरह सेना बढ़ती चली आ रही है। उसे देखकर नाग राजा ने रास्ता रोका।

94. सहस्र फन फैलाकर रास्ता रोका। उनका महाविष अग्नि की ज्वाला से भी प्रखर हुआ।

95. एक योजन दूर से ही फन की आकृति दिखाई दी। वह लाख योजन तक घेरे हुए है।

96. पाताल बैकुण्ठ के रास्ते में नौ ताड़ की ऊँचाई का किवाड़ है। सेना उस ऊँचाई तक उछल रही है।

97 जिसको पहचानेगा उसे भीतर घुसने देगा। रोकने पर किसी में घुसने का सामर्थ्य नहीं हो सकता।

98. पूँछ के ऊपर मुँह टेककर खड़े हैं। सहस्र मुख से टकराकर हवा लौट आती है।

99. मुख के दोनों ओर वे अपनी दो ाे जीभो को बार-बार घुमाते हैं।

100. ज्वालामय विष वाष्प सभी के अगों में व्याप्त हो गयी। मन्त्री ने चिल्लाकर कहा कि लौटो। यहां सुयोग नहीं है।

101. इस जल पूर्ण सुरग में रास्ता नहीं है और आश्चर्यजनक अग्नि दुगुने वेग से जल रही है।

102. विषाग्नि के लगने से क्या शरीर मे बल रहेगा ? घड़ी भर रहने पर भी सभी मर जायेंगे।

103. प्रचण्डासुर ने कहा कि शीघ्र लौट जाओ। इस नगर के सर्प समूह वैरी नहीं हैं।

104. रथ, गज आदि के चलने के लिए यह पथ संकीर्ण है। अकारण इतनी बड़ी सेना कष्ट पायेगी।

105. राजा के कहने पर सेना लौट आयी। पीछे से शूरधन्या मन्त्री भी लौट आया।

106. प्रचण्डासुर ने कहा कि किससे भय किया ? मन्त्री ने कहा कि रास्ता नहीं पाया।

107. मन्त्री धीरे से कान में उत्तर देता है कि यह अनन्त राजा का नगर बड़ा ही अकलनीय है।

108. वस्तुतः सर्प के बिल से क्या प्रयोजन है ? एक-एक सर्प सुमेरु पर्वत के समान है।

109. मुख खोलने पर स्वर्ग और पाताल घुस जायेगा। सर्प जीतकर हमारा क्या लाभ होगा ?

110. हमारा शत्रु इन्द्र है। उसे जीतकर स्वर्ग भोग करना उचित है।

111. शूरधन्या मन्त्री ने जब यह बात कही तब नृपतिमणि ने सेना को अपने राज्य की ओर लौटाया।

112. दमामा, ढोल और शहनाई बजाती हुई सेनावली नगर को सेना लौट आयी।

113. राजा के आगे एक लाख चामर डोलाते हैं और एक लाख पाट छत्र फहराया जा रहा है।

114 एकमुखी और पंचमुखी [illegible] शंख बज रहे हैं।

115 कौमार पर्वत के नीचे जब सेना पहुँची तब दूतों के सूचित करने पर द्वारपाल ने द्वार खोल दिया।

116 असंख्य सेना गढ़ में प्रविष्ट हुई। सभी योद्धा आज्ञानुसार अपने-अपने घर चले।

117. जो जहाँ थे अपना नित्य कर्म समाप्त करके विधि पूर्वक भोजन किया।

118. प्रचण्डासुर ने नित्यकर्म समाप्त किया। हाथी और घोड़ों के लिए चरनी में खाद्य द्रव्य दिया गया।

119. नौकरों ने आवश्यकतानुसार विभिन्न खाद्य द्रव्य भण्डार से लेकर भोजनशाला में पहुँचाया।

120. प्रचण्डासुर ने स्वयं आसुरी भोजन किया।

121 आचमन के बाद ताम्बूल आदि खाकर वह रत्न खाट के ऊपर सोया।

122. नियुक्त सेवकों ने सेवा की। डुग्गी पीटकर घोषणा की गयी।

123. रात बीतने पर नगर के लोग जागकर राजा के सिंह-द्वार पर एकत्रित हुए।

124. असुर कुलपति सिंहासन पर बैठा है। पात्र-मन्त्री सभी आकर मिलते हैं।

125. असुर की सभा में बहुत उत्सव मनाया जाता है, जैसे कि अमरलोक में इन्द्र की सभा में मनाया जाता है।

126. इसी समय नारद मुनि असुर सभा में प्रविष्ट हुए।

127. प्रचण्डासुर ने नमस्कार करके सोने के आसन पर बैठाया और षडार्घ्य द्वारा पूजा की।

128-132. असुर की भक्ति देखकर कलहप्रिय नारद पूछते हैं कि हे असुर कुलपति ! अच्छे तो हो ? दारा, पुत्र, बन्धु सब कुशल से तो हैं ? गज, अश्व आदि को ठीक से भोजन तो मिलता है ? पात्र मन्त्री और अमात्य तुम्हारी सेवा तो करते हैं ? रथी, महारथी, पदातिक आदि तुम्हारी सेना तुम्हारी आज्ञानुसार तो है? दासियाँ अन्तःपुर में अच्छी तरह से तो हैं ?

133. प्रचण्डासुर ने कहा कि तुम्हारी कृपा से ये सभी बिना प्रमाद के मेरा आदेश मानते हैं।

134. नारद ने कहा कि तुम शत्रु का दमन करते हो कि नहीं ? शत्रु जीतकर झण्डा फहराते हो कि नहीं ?

135. असुर ने कहा कि मेरा तो कोई शत्रु नहीं है, अतः शत्रुजित पताका क्यों फहराऊगा ?

136. नारद ने कहा कि तुम तो उदासीन हो। जानते तो हो कि तुम्हारे पिता धूमासुर को इन्द्र ने मारा था।

137. पुत्र होकर यदि कोई पितृकार्य नहीं करता तो उसकी गणना कुपुत्रों में होती है।

138. देव और असुरों के बीच युग-युग से विवाद चल रहा है। किस श्रद्धा के चलते तुम ऐसा भाव रखते हो !

139. इतना कहकर मुनि अन्तर्धान हो गये। यह सुनकर असुर के मन में क्रोध उत्पन्न हुआ।

140. मन्त्री से कहा कि सेना सजाओ। स्वर्गपुर को मैं खण्ड-खण्ड कर दूँगा।

141. स्वर्गपुर में एक भी देवता को नहीं छोड़ूँगा। असुर ने इस प्रकार मन्त्री को आदेश दिया।

142. मन्त्री ने सुनकर सिंहद्वार पर पहुँचकर घोषणा की।

143. साजो-साजो की घोषणा हुई। तत्क्षण चतुरंगी सेना सुसज्जित हुई।

144. सुनकर शीघ्र सेना सुसज्जित हुई। सोचते हैं कि आज राजा स्वर्ग पर अभियान करेंगे।

145. असंख्य सेना सुसज्जित होकर सिंहद्वार पर इकट्ठी हुई।

146-148. तीन सहस्र रथी, पदातिक तीन लाख और तीन लाख अश्वारोही सुसज्जित होकर सभी सिंहद्वार पर इकट्ठे हुए। दिन में भी सूर्य की किरण दिखायी नहीं देती है।

149. नाना वर्ण के हजारों ढोल, झाँझ, डुग्गी और सिंगा घनघोर रूप में बज रहे हैं।

150. असुर मद पीकर मत्त हैं। मुख-ध्वनि से चीत्कार करते हैं।

151. सुसज्जित शूरधन्या मन्त्री श्रेष्ठ घोड़े पर चढ़कर बाहर आया।

152. अश्व से उतरकर राजप्रासाद में जाकर उसने राजा को प्रणाम किया।

153. राजा से कहा कि शीघ्र रथ सजाओ। सभी सेना सिंहद्वार पर एकत्रित है।

154. मन्त्री की बात सुनकर प्रचण्डासुर विधानपूर्वक वेश-भूषित हुआ।

155. दिव्य वेश होकर रथ पर बैठा और शुभ योग में प्रस्थान किया।

156. उसकी शिखा आकाशमण्डल में लगी हुई है। हाथ में चन्द्रहास खड्ग लेकर चमकाता है।

157-160. एक शुभ योग में स्वर्ग की ओर प्रयाण किया। रथी, हाथी और पदातिक अत्यन्त तीव्र वेग से चलते हैं। प्रत्येक अकेले ही इन्द्र को जीत सकते हैं।

161. शिव के वर से वह अपरिमित बलशाली है। देवासुर गन्धर्वो को कीट-पंतग की तरह समझता है।

162. पीछे-पीछे शोभा यात्रा के रूप में अनेक सैनिक शल्य, चक्र गदा और तलवार लेकर चल रहे हैं।

163. टमक, निशान, भेरी और डुग्गी बजाकर अगली सेना के आगे ये चलने लगे।

164. दिव्य सुखासन पर बैठकर राजा पिछली सेना के बीच में चल रहा है।

165. पादाघात से गगन काँपता है। उल्कापात की तरह शब्द सुनाई देता है।

166. महासेना का संचालन करके असुर चल रहा है।

असुर की सेना के पदाघात से पृथ्वी काँपती है।

167. डर से पृथ्वी थरथर कर काँप गयी। वासुकि नाग सिर नहीं टेक सका।

168. समारोहपूर्वक असंख्य सेना चलते-चलते अमरपुर के पास पहुँची।

169. हे स्वामी ! सुनो। इस बीच इन्द्र देवताओं को लेकर घूमने गये थे।

170. ऐरावत पर चढ़कर इन्द्र दक्षिण स्वर्ग की ओर भ्रमण कर रहे हैं।

171. असुरों के आने की बात कोई नहीं जानते। व.. केवल चित्रसेन और अंगार पन्नग ही हैं।

172 इसी समय प्रचण्डासुर ने आक्रमण किया जिससे अमर लोक में उथल-पुथल मच गयी।

173 धरो-धरो, मारो-मारो का शब्द सुनाई दे रहा है। मुख- ध्वनि से कच्छप भी उछल पड़ा।

174 गन्धर्व गण सुनकर क्रोध से दौड़े। सबसे आगे चित्रसेन ने जाकर रोका।

175 इन्द्र खाण्डव वन में थे। वहाँ चित्रसेन ने दूत भेजा।

176 इन्द्र ने दूत से समाचार पाकर क्रोध से ऐरावत को दौड़ाया।

177-178 दूत से इन्द्र पूछते हैं कि क्या समाचार है ? दूत ने बताया कि हे स्वामी ! कौमार देश के सेनावली नगर के प्रचण्डासुर ने द्वितीय सागर की तरह सेना के साथ स्वर्ग पर आक्रमण किया।

179. इस प्रकार की बात सुनकर इन्द्र क्रोध से दौड़ने हैं। उनके साथ तीन-तीन कोटि देव हैं।

180. सभी अपने अपने वाहनों सहित असुर सेना की ओर दौड़े।

181. जटीबट के नीचे असुर से भेंट हुई। रे-रेकार करके रोका।

182 नाना शस्त्रों से मारपीट हुई। कोई किसी के साथ युद्ध में नहीं हटता है।

183. दोनों सेनाओं ने उत्साह के साथ एक प्रहर तक युद्ध किया अपने और पराये का निर्णय नहीं किया जा सकता था।

184-185. अस्सी कोटि गन्धर्व शस्त्र लेकर दौड़े। श्रावण के जल-धार की तरह लाख-लाख गन्धर्व शर बरस रहा था। लाख-लाख असुर अर्द्धमृत हो गये।

186. यम, नैरुत, कुबेर और वरुण के बाणों से असुरों ने प्राण हराये।

187. असंख्य असुर रणभूमि में पतित हुए। सात ताड़ गहरी रक्त की नदी बहने लगी।

188. उस रक्त नदी में मरे हुए लोग भर गये। किसी का मुण्ड, पैर, हाथ और धड़ कटकर उसी में गिरता है।

189. ऐरावत पर चढ़े इन्द्र के वज्र प्रहार से कोटि-कोटि असुरों का क्षय होता है।

190. तथापि असुर सेनाये विमुख नहीं होतीं। एक से एक सभी रण-रंक हैं।

191. इसी समय प्रचण्डासुर ने अपनी सेना का क्षय देखकर रथ को दौड़ाया।

192 अंगार पन्नग ने दूर से देखकर प्रचण्डासुर को आगे बढ़कर रोका।

193 उस असुर कुलर्गनि ने देखकर पूछा कि तुम दोनों इन्द्र के पुत्र हो ?

194 असुर के पूछने पर दोनों ने क्रोध करके प्रचण्डासुर के सिर पर गन्धर्व शर से प्रहार किया।

195. उसके अंगों से शस्त्र टकराकर गिर पड़ता है। क्रोध से असुर ने सिंह-गर्जन किया।

196. प्रचण्डासुर ने अनेक वाण मारे। अंगार पन्नग ने उनका प्रतिशर द्वारा निवारण किया।

197 क्रोध से असुर को वाण मारा। वाण भेदन न करके ऊपर से नीचे खिसक पड़ा।

198. चित्रसेन गन्धर्व ने रथ पर चढकर युद्ध में प्रविष्ट होकर असुर को रोका।

199 'रुको-रुको' कहा और एक गदा लेकर गर्जनपूर्वक असुर के ऊपर प्रहार किया।

200. एक ही प्रहार से सौ-सौ गिर पड़ते हैं। गदाघात से दैत्यगण धूल हो जाते हैं।

201. क्रोध से इन्द्र ने ऐरावत को दौड़ाकर शीघ्र युद्ध में प्रवेश किया।

202. उसे देखकर दुर्भार असुर पूछता है कि तुम्हारा ही नाम वज्रधर है ?

203. तुम यही वज्रधर हो जो मेरे पिता के वैरी हो और

बिना कारण उनका वध किया ?

204. मघवा सुनकर क्रोधित हुए और कहा कि इसी क्षण तुम्हें पिता के पास भेजूँगा।

205. इतना कहकर वज्रधर ने वज्र को घुमाकर प्रचण्डासुर के ऊपर प्रहार किया।

206. जिस वज्राघात से सुमेरु पर्वत चूर्ण हो जाता है, उससे असुर का कुछ नहीं हुआ। यह दुष्ट हँसने लगा।

207. इन्द्र को देखकर वह दुराचारी कहता है कि जितने भी शस्त्र हों, तुम प्रहार करो।

208. वज्र के द्वारा कुछ भी प्रभाव न होने पर इन्द्र निस्तेज हो गये। हाथ में शूल घुमाकर असुर दौड़ा।

209. उस शूल को लेकर इन्द्र के ऊपर मारा। घायल होकर इन्द्र ऐरावत्त के ऊपर गिर पड़ा।

210. अचेत देखकर ऐरावत इन्द्र को नन्दन कानन में ले गया और एक गुफा में रखा।

211. कल्पद्रुम और विषल्यकरणी पवन के लगने से वज्रपाणि सचेत होकर उठे।

212. मन में सोचा कि यह दुर्भार असुर आज अमरपुर को लूट लेगा।

213. जीवन के भय से इन्द्र बाहर न निकला। गुप्त रूप में गुफा में आत्मरक्षा करने लगा।

214. इसी बीच चित्रसेन गन्धर्व एक मर्भूत गन्धर्वों को लेकर नन्दन वन की ओर दौड़ा।

215. अंगार पन्नग युद्ध में वहाँ प्रविष्ट हुआ। असंख्य गन्धर्व सेना के साथ चलता है।

216. हाथ में इन्द्र धनुष की तरह धनुष को लेकर वाण मारते हैं जो अग्नि की तरह दिखाई देते हैं।

217. गन्धर्व गण नाना शस्त्र मारते हैं। लाख-लाख असुरों का प्राण नाश करते हैं।

218. चित्रसेन और अंगार पन्नग दोनों रथी प्रचण्डासुर की सेना का निपात करते हैं।

219. गन्धर्व गण गदा, कुन्त, चक्र, त्रिशूल और असि से प्रहार करते हैं जिससे असुर गण भूमि पर लोटते हैं।

220. असुर नाना शस्त्रों से गन्धर्वों पर प्रहार करते हैं जिससे गन्धर्व सेना अचेत होकर पृथ्वी पर लोटती है।

221. दोनों सेनायें निर्भय होकर चीत्कार करती हैं। सभी एक से एक रण-रंक हैं।

222. दिग्पाल नाम सुनकर भाग गये। अमर लोक छोड़कर गुप्त स्थान पर चले गये।

223. चित्रसेन और अंगार पन्नग ने युद्ध करके अपार असुर सेना का विनाश किया।

224. एक ताड़ पर्यन्त रक्त की नदी बह रही है। ढेर-ढेर करके शव बहते हैं।

225. रण रंग के कौतूहल से कबन्ध नाचते हैं। इधर इन्द्र स्वर्ग को छोड़कर चले गये हैं।

226. रण में प्रचण्ड होकर गन्धर्वों ने लाख-लाख असुरों का सिर काटा।

227. प्रचण्डासुर इन्द्र के साथ जूझा था। युद्ध में इन्द्र के भाग जाने पर स्वर्ग की ओर दौड़ा।

228. वीर समर भूमि में बलपूर्वक घुसा। सारा स्वर्ग राक्षस सभा से भर गया।

229. असुर राजा ने देखकर हाहाकार किया। मन में सोचता है कि किसने ऐसा किया ?

230. क्रोध से महाबली ने रथ दौड़ाया। अंगार पन्नग के सामने तत्क्षण पहुँचा।

231. देखा कि वह असुर सेना का मन्थन कर रहा है। कोई उसके सामने टिक नहीं पाता।

232. अपनी सेना के भग्न को देखकर वह असुर कुलपति महाक्रोध से दौड़ा।

233. बोला कि हे पामर ! तुमने मेरी सेना का नाश किया। इतना कहकर उसने क्रोध से रुद्र शूल द्वारा पीटा।

234. वह शूल अंगार पन्नग के ऊपर पड़ा। किसी भी प्रकार वह उसे रोक न सका।

235. वह शूल हृदय में अग्नितेज की तरह पड़ा। रक्त उगलकर वह वीर गिर पड़ा।

236. यह देखकर चित्रसेन ने आगे जाकर अवरोध किया। सावन की वर्षा की तरह वाण-वर्षा करने लगा।

237. वज्र से भी अजेय उस प्रचण्डासुर के शरीर से टकराकर वाण चूर हो जाते हैं।

238. चित्रसेन ने बावल शर मारा जो महागिरि पर ढेले की तरह लगा।

239. उस इन्द्रसुत ने अर्द्धचन्द्र वाण मारा। दैत्य ने मुख विस्तार करके उसे घोंट लिया।

240-241. जलधारा, नागपाश, कालानल, कुहुका, सूर्यावर्त्त, खगेन्द्र, सिम्बूर, वज्राशर, कालपाशी, आदि कोई भी देव शर उसके शरीर में नहीं घुसे।

242. जितने जीवहन्ता गन्धर्व शर थे, उनसे चित्रसेन पवन गति से प्रहार करता है।

243. पलभर में कोटि-कोटि वाण मारता है। शरीर को न भेदकर वे नीचे गिर पड़ते हैं।

244. प्रचण्डासुर ने कहा कि हे इन्द्रसुत ! जितने शस्त्र हों उन्हें शीघ्र चलाओ।

245. देख-सुनकर चित्रसेन के मुख से बात न निकली। वह वीरवर के पराक्रम से युद्ध करता है।

246. प्रचण्डासुर ने भैरव मूसल लिया। वह शस्त्र दावानल के तेज की तरह दिखाई देता है।

247. उस शूल को उसने तीन बार घुमाकर चित्रसेन के ऊपर प्रहार किया।

248 उस शस्त्र को निवारण करने के लिए चित्रसेन ने शर प्रहार किया, किन्तु निवारित न होकर दसों दिशाओं को ढककर वह शस्त्र दौड़ आया।

249. हर-वर के प्रसाद से असुर का यह शूल चित्रसेन के हृदय में घुसकर पीठ की ओर से निकल गया।

250. कुमार उत्तान होकर गिर पड़ा। उसे छिन्न-छत्र देखकर गन्धर्व भाग गये।

251. स्वर्गमण्डल छोड़कर देवगण भाग गये। जीवन के लिए व्याकुल होकर जो जहाँ पाया वहीं छिप गया।

252. असुर सेनायें अमर लोक में प्रविष्ट हुई। घुसकर देवभण्डार को लूट लिया।

253. इन दुर्भार असुरों ने हीरा, मोती, नीला, माणिक्य आदि रत्नों को इच्छापूर्वक लूटा।

254. देवताओं का सारा धन लूट लिया। असुर सेना के प्रवेश करने से तिल मात्र भी जगह नहीं है।

255. गन्धर्वों और किन्नरों का बलात् अपहरण किया। अमरपुर को छोड़कर छिन्न-भिन्न कर दिया।

256. असुर गण निर्भय होकर गली-गली में घुसें।

257. महादानवों ने स्वर्गलोक को घेरकर इच्छानुसार स्वर्ग-भण्डार को लूटा।

258. प्रचण्डासुर इन्द्रपुर में घुसकर अप्सराओं को पकड़ लाता है।

259. इन्द्र की चन्द्रशाला में प्रवेश किया। देखा कि उस महल में शची देवी हैं।

260. शूरधन्या मन्त्री से असुर ने कहा कि अमर-मण्डल हमारे बस में हुआ।

261. इन्द्र की भार्या शची यही है जिसे लेकर इन्द्र राजा सिंहासन पर बैठता था।

262. भोलानाथ ने मुझे जो वर दिया था उसकी सिद्धि आज हुई।

263. इतना कहकर चन्द्रशाला पुर में घुसा। शची देवी का हाथ पकड़कर खींच लाया।

264 उसे लेकर अपने रथ पर बैठाया। महाभय से शची देवी ने बहुत शोक किया।

265. अप्सरायें और दासियाँ शची के साथ गयीं।

266. अमर भुवन विजय करके असुर बाहर आये। सोचते हैं कि आज स्वर्ग जीता गया।

267. वे जेनावली नगर की ओर चतुरंगी सेना के साथ चले।

268. नगर में पहुँचकर घोषणा की गयी और रथ से शची देवी को उतारा गया।

269. बोला कि हे इन्द्राणी ! तुम आज से मेरी पत्नी हो गयीं।

270. यक्ष और विद्याधर मेरे हुए। यह बात असुर ने शची के आगे कही।

271. ऐरावत के साथ इन्द्र का नाश हुआ। अप्सरायें तो मेरे पास रहकर मेरी सेवा करेंगी।

272. अमर मण्डल में मैं सुख का विलास करूँगा। इन्द्रपन से सुधर्मा की सभा में बैठूँगा।

273. यह गर्वोक्ति असुर ने शची के सामने की। शची ने कहा कि मेरे भाग्य में यही लिखा है।

274. प्रचण्डासुर ने विनयपूर्वक शची से कहा कि अमर मण्डल में मुझे इन्द्र रूप में स्वीकार कर लो।

275. शची ने कहा कि यह बात क्यों पूछते हो जबकि बलात्कारपूर्वक मुझे स्वर्ग से यहाँ ले आये।

276. मैं व्रताचरण करके यहाँ बैठी थी। बलात्कारपूर्वक लाकर मुझे इतना हीन मान कर दिया।.

277. इक्कीसवें दिन मेरा व्रत पूरा होगा, उसी दिन मैं तुम्हारी भार्या होऊँगी।

278. तुम्हें लेकर मैं अमरलोक में अभिषिक्त होऊँगी। विधि ने जो लिखा है उसे अन्यथा क्यों करूँगी ?

279. शची ने कपटपूर्वक यह बात कही। उस बात को असुर ने सत्य समझा।

280. शची ने कहा कि एक बात और है। ध्यान से सुनो।

281. हे राजा ! इक्कीस दिन तक मैं पुरुष का मुख नहीं देखूँगी।

282. मुझे गुप्त स्थान पर रख दो। इक्कीस दिन पूरे होने पर आकर मुझे देखना।

283 दैव की घटना को कौन नहीं मानेगा ? असुर राजा ने उस पर विश्वास किया।

284. मन्त्री से कहा कि एक और महल बनवाओ आर शची को एकान्त में रखो।

285. प्रचण्डासुर की आज्ञा से मन्त्री ने एक अन्य नगर का निर्माण करके शची को रखा।

286. इसके बाद हे नृपराज ! सुनो। इन्द्र विवर में छिपा हुआ था।

287-288. असुर जब शची को हरकर ले जा रहा था, तब दूतों ने सूचना दी कि अंगार पन्नग और चित्रसेन को मारकर दैत्य शची को ले गया।

289. अपरिमित गन्धर्व सेना को मारकर शची के साथ स्वर्गपुर का अपहरण किया।

290. इन्द्र सुनकर काफी क्रोधित हुआ। स्वयं सुधर्मा सभा में चला गया।

291. देखा कि वह देव सभा नष्ट हो गयी है। सोचते हैं कि उस पापिष्ठ ने ऐसी दशा की।

292. इस समय मातलि ने वहाँ पहुँचकर विनयपूर्वक माथे पर हाथ रखकर कहा।

293. इन्द्र ने कहा कि हे मातलि ! इसी क्षण चलो। ब्रह्मादि देवता शीघ्र ले आओ।

294. इन्द्र की ऐसी आज्ञा से मातलि शीघ्र चल दिया।

295. मातलि ने ब्रह्मा के घर पहुँचकर देखा कि वे बैठे हैं।

296. कुछ दूर से देखकर पाँव पर गिर पड़ा और सिर पर हाथ देकर पीछे हट गया।

297. ब्रह्मा ने आशीर्वाद देते हुए पूछा कि तुम क्यों आये हो? सविस्तार बताओ।

298-299. मातलि ने कहा कि हे वेदवर ! इन्द्र ने शीघ्र यहाँ आने का आदेश दिया। कल प्रचण्डासुर ने स्वर्ग पर आक्रमण करके चित्रसेन और अंगार पन्नग का वध किया।

300 शची देवी के साथ सभी किन्नरियों, विद्याधरियों और स्वर्ग के सारे भण्डार को लूट लिया।

301. यह सुनकर विधाता ने शीघ्र ही हंस वाहन पर चढ़कर प्रस्थान किया।

302. ब्रह्मा सुधर्मा सभा की ओर, मातलि वृहस्पति भुवन की ओर चले।

303. मातलि ने कहा कि हे गुरु ! शीघ्र ही जाकर इन्द्र की दशा देखें।

304. यह सुनकर वृहस्पति ने शीघ्र ही प्रस्थान किया और अमरलोक में पहुँचे।

305-307 पिता को देखकर गुरु ने प्रणाम किया। ब्रह्मा ने कहा कि हे कुमार सुनो। प्रचण्डासुर ने कल अमरलोक पर आक्रमण करके चित्रसेन और अंगार पन्नग को मार डाला। शची देवी के साथ उस पामर ने सब कुछ हर लिया। अब इन्द्र के कुमार को जिला दो।

308 वृहस्पति ने आज्ञा पाकर समरमण्डल में प्रवेश किया।

309-310 अंगार-पन्नग और चित्रसेन के साथ सभी गन्धर्वों को सीधे-सीधे लेटाकर गुरु ने कमण्डल से जल छिड़ककर मृत्यु संजीवनी मन्त्र से जीवन दान दिया।

311-312. अंगार-पन्नग और चित्रसेन के साथ सभी गन्धर्व निद्रागत प्राणी की भाँति उठे और अपने-अपने अस्त्रों को टटोलकर उठा लिया।

313-314. अंगार पन्नग और चित्रसेन अमर सभा में पहुँचे। वृहस्पति के द्वारा सभी सेना को जीवित किये जाने पर इन्द्र बहुत प्रसन्न हुए।

315-318. इन्द्र ने गुरु की बहुत प्रशंसा की। तैंतीस कोटि देवता आपस में मिले। नारद वीणा बजाते हुए पहुँचे। वरुण और पवन, अश्विनी कुमार, अष्टवसु, नौ ग्रहों के साथ चन्द्र सूर्य, गन्धर्व गण देवता जो

जहाँ थे, वहाँ से आकर सभा में मिले।

319-320. त्रिशूलपाणि उसी समय चौदह कोटि शिवगणों को लेकर पहुँचे। देखा कि इन्द्र सभा में चुपचाप बैठे हैं।

321-322. अंगार पन्नग और चित्रसेन के पीछे-पीछे वसुमती आयीं। उसके मुख से झर-झर खून बह रहा है। उन्होंने कहा कि देव ! अपनी पृथ्वी को सँभालो।

323. वसुधा की बात सुनकर सभी देवता नाराज होकर शिव की ओर देखने लगे।

324 सदाशिव ने कहा कि क्यों चिन्ता करते हो ? पवन ने कहा कि हे स्वामी ! तुम्हारी कृपा से।

325-326. असुर गणों को मनोवांछित वर देते हो। वे वर पाकर अमर लोक पर आक्रमण कर देते हैं और देवताओं का विनाश करके देव स्त्रियो का अपहरण करते हैं। तुम्हारे भक्त धन्य हैं और तुम्हारी महिमा भी धन्य है।

327 सदाशिव ने कहा कि यह मेरा स्वभाव है। जो मुझसे जो वर मांगता है, मैं उसे वही वर दे देता हूं।

328 जिसकी जिससे मृत्यु लिखी है, वह मरता ही है। दुष्ट लोग कुछ दिन भोगकर मरते ही हैं।

329. वरुण ने कहा कि दुष्ट कैसे मरेंगे ? हम सभी देवों ने बहुत कष्ट और अपमान सहा।

330. सदाशिव ने कहा कि बृहस्पति जानते हैं कि किसके हाथ से असुर का विनाश होगा।

331-333. यह कथा सुनकर सभी गुरु से पूछते हैं। सुनकर गुरु पंजिका खोजकर कहते हैं कि अश्विनी के वीर्य से उत्पन्न नकुल के हाथों अनायास राक्षस का विनाश होगा।

334-335. यह सुनकर इन्द्र ने मातलि से कहा कि शीघ्र ही पुष्पक रथ पर बैठाकर माद्री-तनय नकुल को ले आओ। युधिष्ठिर के आगे मेरा कष्ट निवेदित करके शची-हरण की बात बता देना।

336-338. वे मेरे पंचपुत्र मुझे जानते हैं। इन्होंने लक्ष्य-भेद कर क्षण मात्र में लाख राजाओं को जीत लिया। अभी दुर्योधन सम्मानपूर्वक द्रौपदी के साथ इन्हें लौटाकर ले आया है। कलह के कारण हस्तिनापुर में न जाकर वे निश्चिन्ततापूर्वक वारुणावन्त में हैं।

339-340. द्रुपद ने असंख्य द्रव्य दहेज रूप में दिया जिसे तीनो लोकों में कहीं नहीं देखा गया। पुत्रों का विवाह देखने गया था।

341 मेरी यह दशा सुनते ही वे नकुल को भेज देंगे। उसके आने पर स्वर्ग स्थिर होगा और उसके हाथों अहंकारी असुर का वध होगा।

342-345. इन्द्र ने सभी देवताओं के सामने आदेश दिया। मातलि आकाश से विमान को पवन से भी तीव्र गति से उड़ाकर ले गया। वारुणावन्त में प्रवेश करके सिंहद्वार पर रथ खड़ा करके उतरा।

346-348 देखा कि युधिष्ठिर आसन पर बैठे हैं। इसी समय मातलि प्रविष्ट हुआ। मातलि को देखकर पाँचों वीर उठे और नमस्कार किया। सम्मानित करके आसन पर बैठाया और आने को कारण पूछा।

349-350 मातलि ने कहा कि इन्द्र की आज्ञा से नकुल को रथ पर बैठाकर ले जाने आया हूँ। युधिष्ठिर ने कहा कि जब इन्द्र ने बुलाया है, तब नकुल क्यों जायेगा, अर्जुन ही जाय।

351-361 मातलि ने कहा कि नकुल को ले जाने की आज्ञा है। बिना आज्ञा अर्जुन को कैसे ले जाऊँगा' युधिष्ठिर ने पूछा कि स्वर्ग में किसका भय है' इस प्रकार उसने प्रचण्डासुर के आक्रमण और शिव के वरदान की सारी कथा बतायी।

362-363 यह असुर किसी से नहीं मरेगा केवल नकुल के हाथों से ही इसकी मृत्यु निश्चित है। इसीलिए ब्रह्मा, बृहस्पति और इन्द्र ने आज्ञा दी है।

364-366. देवताओं की आज्ञा से मैं नकुल को लेने के लिए आया हूँ। अर्जुन ने कहा कि इसी क्षण भेज दो। सुरपति की आज्ञा होने पर नकुल के न जाने से अन्यथा मानेंगे।

367-370 भीमसेन ने कहा कि सहदेव से पूछ लो कि वह किसके हाथ से मरेगा! भीम की बात सुनकर प्रसन्न युधिष्ठिर ने सहदेव की ओर देखकर पूछा—हे भाई! अपना विचार बताओ कि नकुल के हाथ से क्या वह असुर मरेगा! यह सुनकर मन्त्री ने हाथ

देखकर बताया कि नकुल ही उसे मारेगा।

371. यह सुनकर युधिष्ठिर आनन्दित हुए और नकुल को शीघ्र जाने का आदेश दिया।

372-375. युधिष्ठिर से आज्ञा पाकर माद्री का तनय धनुष लेकर खड़ा हुआ। युधिष्ठिर को नकुल ने प्रणाम करके भीम और अर्जुन को नमस्कार किया। सहदेव ने नकुल को नमस्कार किया। इसके बाद 'जा रहा हूँ' कहकर वह रथ पर बैठा। तीनों भाई बहुत आशीर्वाद देते हैं कि कुशलता से जाकर प्रण्डासुर को मारो।

376-380. मातालि और नकुल रथ पर बैठे। वह देवरथ अर्द्ध आकाश पथ पें धीरे-धीरे चलने लगा। नकुल ने कहा कि तुम मेरी बात सुनो। रथ को यहीं रोको। असुर को बिना मारे मैं स्वर्ग को नहीं जाऊँगा। तभी पाण्डवों के नाम की वीर पताका उड़ेगी।

381-383. इसके बाद विलंका देश के राजा ने अगस्त्य के चरणों में प्रणाम करके कहा कि इसके बाद क्या हुआ!-- मुझसे कहो। अगस्त्य ने कहा कि हे मनुराजा! विचित्र आख्यान अमृत रसमय है।

384-388. देवसभा से नारद बाहर हुए और मन दण्ड पर चढ़कर असुर राज्य में प्रचण्डासुर से मिले। नारद को देखकर असुर ने उनको प्रणाम किया और कहा कि आज मेरा भाग्य कितना अच्छा है कि अपनी आँखों से ब्रह्मा सुत को देखा।

389-390. असुर की भक्ति देखकर नारद ने हंसकर आशीर्वाद दिया। कहा कि तुम्हारे प्रति मेरा बहुत स्नेह है। इसीलिए हे नरस्वामी! कुशल समाचार लेने के लिए आया।

391-396. एक गुप्त कथा मैं बता रहा हूँ। शत्रु आ चुका है। नरपति युधिष्ठिर का तृतीय कनिष्ठ भाई तुम्हारे साथ युद्ध करने के लिए आ रहा है। उसे सुनकर वह असुर गर्जन करके उठा और नारद की प्रशंसा की और कहा कि हे स्वामी! मैं शिव की कृपा से युद्ध में शत्रुओं से नहीं डरता हूँ।

397-405. असुर ने पूछा कि बतावें कि वह पाण्डुनन्दन कहाँ है! नारद ने कहा कि वह मातलि के साथ अर्द्ध स्वर्ग में है। यह सुनकर असुर ने मन्त्री से कहा कि सेना सजाओ। आज ही पाण्डु के पुत्र को मारकर लौटूँगा। आज्ञा पाकर मन्त्री ने सिंहद्वार से नगाड़ा पिटवाया। नगाड़ा सभी सेना को सजने की सूचना देता है। हाथी, रथी, पदातिक और अश्वारोही सुसज्जित होकर आये। बारह कोटि रथी रथ पर शस्त्र रखकर बाहर आये। मन्त्री से कहा कि तुम मेरे रथ पर बैठो। आज मैं नकुल का विनाश करूँगा।

406-409. इन्द्र यदि उसके लिए प्रतिबन्धक होगा तो भी वह उसके साथ यमपुर जायेगा। असंख्य सेना लेकर असुर जेनावली नगर से बाहर हुआ। गधा, सूकर, महिष, शार्दूल वाहन से असुर गण चलते हैं। सेनायें रथ और गजों पर बैठकर चलती हैं। पृथ्वी दल-दल करके काँप रही है। असुर विकट गर्जन करते हैं।

410-411. असुर अर्द्ध आकाश में जाकर मिला। सिंहनाद से आकाश कँपा दिया। पादाघात की धूल से सूर्य का तेज निस्तेज हो गया। मारो-मारो, पकड़ो-पकड़ो का स्वर सुनाई दिया।

412-416. दिन में अन्धकार देखकर नकुल पूछता है कि दिन में अन्धकार क्यों दिखाई दे रहा है! मातलि ने कहा कि नारद के मुख से समाचार सुनकर तुमसे लड़ने के लिए असुर जा रहा है। यह सुनकर क्रोधित नकुल ने द्रोण का स्मरण कर धनुष ताना। अपने गाण्डीव सदृश धनुष पर डोरी चढ़ाकर टंकार मेघ-गर्जन की तरह सुनाई दी। असुर ने रे-रेकार करके सिंहनाद किया।

417-421. पुनः-पुनः जगन्नाथ को स्मरण करके कहता है कि हे करुणाकर सागर स्वामी! मेरी दीनता को समझो। दैत्य निषूदन के कारण ही तुम्हारा नाम दैत्यारि है। मत्स्यादि दस अवतार धारण किये। कूर्म रूप में सुमेरु को पीठ पर धारण किया और बाराह रूप में वसुन्धरा का उद्धार किया। मत्स्य रूप में शंखासुर का तथा नरसिंहावतार रूप में हिरण्याक्ष राक्षस का वध किया। पृथ्वी के भार को दूर करने के कारण हे दीनबान्धव! तुम्हें दीनशरण कहते हैं।

422-426. हे स्वामी! हम पाण्डव तुम्हारी शरण में हैं। हे कमला-रमण ! इस संकट से मेरी रक्षा करो। श्री हरि को मन में स्मरण करने से नकुल के शरीर में असीम बल उत्पन्न हुआ। इसी समय मर्भूत सेना लेकर प्रचण्डासुर प्रविष्ट हुआ। नकुल के रथ को घेर लिया। 'मारो-मारो' सभी निशाचर चिल्लाते हैं। इसी समय असुरों ने शस्त्र-संचालन किया। नकुल शस्त्र-प्रहार करके उनको काट देता है।

427-431. जलधारा की तरह वाण असुरों को बेधता है। एक ही वाण से नकुल उसका छेदन करता है। लाख घेरे में नकुल को घेर लिया। शल्य, चक्र, वाण और बर्छे से आघात करने लगे। समय-समय पर अगोचर युद्ध होने लगता था। नकुल क्रोध से काँपने लगा। नकुल ने द्रोण गुरु को याद करके क्रोध से बाण मारा। असंख्य वाणों द्वारा एक सौ बीस निशाचर-रथियों के प्राण चले गये।

432-436. रथी, हाथी और महावत सभी नष्ट हो गये। सम्पूर्ण संग्राम-भूमि रक्तमय हो गयी। असंख्य दानव नकुल को घेर क्रोध से कुन्त, शक्ति और मुद्‌गर से प्रहार करते हैं। तीक्ष्ण शर नकुल ने देखकर अत्यन्त क्रोध के साथ धनुष पर शर चढ़ाया। मन्त्र पढ़कर वाण संचालन किया। असुरगण के सिर और धड़ अलग होकर गिर पड़े।

437-442. रक्त से पृथ्वी पर कीचड़ हो गया। असुर भूमि पर गिरकर लुढ़कने लगते हैं। इनको गिरते देखकर रथियों ने सौ फेरे में नकुल को घेर लिया। अपार तीक्ष्ण शर, शक्ति और भाले बेधने लगे। माद्री कुमार उनको दुर्निवार करता है। असुर ग" और क्रोधित होकर नकुल के ऊपर कुन्त से प्रहार करने लगे। रत्न निर्मित पचास वाणों को नकुल ने मन्त्र से पूत करके भेजा। उस वाण के लगने से दो हजार रथी, पाँच ::टि अश्वारोही और एक मर्भूत हाथी गिर पड़े।

443-452. नकुल के शराभिघात से असुर गण गिर पड़े। रक्त नदी के स्रोत में कुछ बह गये। जैसे वाताघात से कदली वन टूट जाता है, उसी प्रकार असुरों को गिरा दिया। वहाँ एक ताड़ ऊँचाई तक रक्त की नदी बहने लगी। इसे देखकर प्रचण्डासुर ने महाकोप किया। असुर ने अपने मन्त्री से कहा कि नकुल के पास मेरा रथ ले चलो। सेना को हटाते रात बीत गया। दूसरे दिन का भी एक प्रहर हो गया। नकुल ने एक सागर असुरों का नाश किया। पृथ्वी का कुछ भार हल्का हुआ। प्रचण्डासुर ने मन में प्रशंसा की कि हे पाण्डव तुम धन्य हो। तुम्हारे समान कोई क्षत्रिय नहीं है। कहते-कहते उसके मन्त्री ने रथ हाँककर नकुल के पास जे जाकर खड़ा किया। मन्त्री ने कहा कि यह तुम्हारा शत्रु है, इसके रूप को देखो! इसका विनाश करके दुःख को भूल जाओ।

453-458. मन्त्री की बात से वह अत्यन्त क्रोध करके नकुल को देखकर गाली देने लगा। दोनों महाक्षत्रियों में कोई किसी से कम नहीं है। महातीक्ष्ण वाण तरकस से निकालकर मारते हैं। असुर ने एक हजार वाणों को प्रत्यंचा पर चढ़ाकर नकुल पर प्रहार किया। उन वाणों को जाते देखकर नकुल ने एक वाण से काट दिया। असुर यह देखकर क्रोध से थरथरा गया। नकुल ने क्रोध से असंख्य वाण मारे। असुर के शरीर में लग कर अग्नि उत्पन्न हुई। नोक मुड़कर वाण भूमि पर गिर पड़ा।

459-466. असुर ने क्रोध से पन्नग शर मारा। पन्नग फण फैलाकर दिशाओं को ढक्कर दौड़ते हैं। नकुल ने देखकर गरुड़ शर मारा जिसने असुर के साँपों को दूर से निगल लिया। असुर ने पुनः मेघाशर मारा जिसे नकुल ने पवन शर से उड़ा दिया। वाणों के आने-जाने से आकाश नहीं दिखाई देता है। सावन की वर्षा की तरह वाण-वर्षा होती है। एक-दूसरे पर शर-प्रहार करना और शर निरोध करना बराबर चल रहा है। कोई किसी से कम नहीं है। जिसके तरकस में जो अमोघ वाण है, उसे वे निष्ठुर होकर मारते हैं। शर आने-जाने से रण-भूमि नहीं दिखाई देती है। एक के वाणों को दूसरा काटता रहता है। तीन दिन और रात तक युद्ध हुआ किन्तु किसी को कोई युद्ध में जीत न सका।

467-472. वाणों के आने-जाने और गुण टंकार से शून्य में शून्य पुरुष गण स्तब्ध हो गये। शरों के गर्जन से प्रलयकाल जैसा मालूम होता है। दिन-रात बीतते सात दिन हो गये। वाणों की चमक बिजली की तरह है और वे बादलों की तरह गड़गड़ाते हैं। एक वाण मारता है और दूसरा निवारण करता है। किसी का वाण किसी को लगता नहीं है। दोनों वीर वाण संचालन करते- करते असमर्थ हो गये। अब वाणों का निवारण नहीं हो पाता है। वाण शरीर में घुसे जा रहे हैं। समय-समय पर दो धनुर्धर महाक्षत्रिय घोर युद्ध करते हैं।

473-484. वाणों से नकुल का शरीर आच्छन्न हो गया। वाणों के आघात से शरीर से दर-दर रक्त बहने लगा। नकुल ने महा क्रोध से वाणाघात किया और असुर के शरीर को खण्ड-खण्ड करके काट दिया। दोनों का शरीर रक्त से जर्जर हो गया है। कोई किसी के सामने पैर नहीं हटाता है। नकुल ने एक हजार तीक्ष्ण शर को भेजकर पुनः असुर के शरीर को काटा। पुनः नकुल ने वज्रशर के द्वारा असुर के सिर को काट दिया। गले के कटते ही धड़ और सिर भूमि पर गिर पड़ा। पुनः गर्भ के भीतर से एक सिर निकला जिसे देखकर नकुल क्रोधित हुआ। पुनः नकुल ने अर्द्ध चन्द्र वाण मारकर सिर को काटकर भूमि पर गिरा दिया। पुनः गर्भ से एक सिर निकला। सिर को देखकर नकुल की बुद्धि लुप्त हो गयी। मन से सोचता है कि यह तो दुर्निवार असुर है। चक्रधर के मन में क्या विचार है! नकुल ने पुनः इन्द्रशर से प्रचण्डासुर के सिर को काट दिया। सिर पुनः उदर से बाहर हुआ और धनुष लेकर असुर ने नकुल से युद्ध किया।

485-493 नकुल का शरीर वाणों से आच्छन्न हो गया। वह सोचता है कि क्या उपाय करूँगा! किस प्रकार इस असुर का संहार करूँ! सोचते-सोचते उसने पाशुपत शस्त्र का प्रहार किया जिससे असुर का सिर कमल कट गया। पुनः उसके उदर से सिर तैयार हुआ और वह असंख्य वाण मारने लगा। इसी प्रकार सौ बार घटना घटी। नकुल की ओर देखकर असुर बोलता है कि इन वाणों से मेरी मृत्यु कैसे हो सकती है! सिर कटने पर यदि मैं मरता तो क्या पृथ्वी पर इतने दिन तक रहता। सभी देव गण मुझे घेरकर मार डालते। तुम यह बात समझ नहीं सकते। तुम्हारे हाथों में मेरी मृत्यु कहाँ है! इसी क्षण मैं तुम्हें यमपुर भेजूँगा।

494-501. इतना कहकर असुर वाण बेधने लगा। माद्रीनन्दन अत्यन्त दुःखी हुआ। यदि मैं समर्थ नहीं हूँगा तो दामोदर और अर्जुन क्या कहेंगे! भीमसेन मुझे बहुत धिक्कारेगा और कौरव सुनकर उपहास करेंगे। मरने से भी मुझे अधिक लज्जा होगी। सहदेव ने मुझे क्या अनजाने में भेजा! इस प्रकार सोचते हुए मन में विस्मय हुआ। हाथ जोड़कर मातलि से पूछता है कि हे मातलि! अब क्या उपाय करूँ। कटने पर तो सिर पुनः हो जाता है। असुर जितने वाणों का मुझ पर प्रहार करता है वे सब मेरे अंगों में घुसते हैं, कोई व्यर्थ नहीं होता। मेरा शरीर घावों से आच्छन्न हो गया है। हे मातलि! बताओ, असुर कैसे मरेगा!

502-520. मातलि ने कहा कि सावधान होकर सुनो। असुर कैसे मरेगा मैं जानता हूँ। शिव के वर से उसे अमरत्व मिला किन्तु इस संसार में जन्मे व्यक्ति की मृत्यु अवश्यम्भावी है। अतः असुर के पूछने पर शिव ने उसके मरण का उपाय बताया। शिव ने कहा कि मुण्ड कटने या छाती फटने से तुम्हारी मृत्यु नहीं होगी। अग्निशर लेकर तुम्हें जो मारेगा, अंग जल जाने से ही तुम्हारी मृत्यु होगी। मातलि ने जब ऐसी बात कही तब नकुल का संशय दूर हुआ। नकुल कुँवर ने तरकस से अग्निशर निकालकर प्रत्यंचा पर चढ़ाया। जब उसने डोरी को कानों तक खींचा, तब प्रचण्ड अग्नि शिखा आकाश में फूटी। द्रोण गुरु को याद करके वाण छोड़ा। प्रचण्डासुर का शरीर दग्ध हो गया। मन्त्री के साथ रथ आदि दग्ध हुआ। इन्द्र अमरलोक में निष्कंटक हुआ। जब वह असुर विनष्ट हुआ, उसे देखकर नारद महर्षि नृत्य करने लगे। उसे देखकर मातलि आनन्दित हुआ और नकुल कुँवर की बहुत प्रशंसा की।

असुर को मरते देख नारद चले और सुधर्मा सभा में प्रविष्ट हुए। सभा मण्डल में सुरनाथ बैठे हैं। नारद तपोवन्त प्रविष्ट हुए।

521-528. सात दिन और सात रात तक युद्ध हुआ। एक सागर योद्धाओं को उसने सहज में ही जीत लिया। प्रचण्डासुर का नकुल वध किया। हे इन्द्र! ऐसा कभी नहीं देखा था। यह सुनकर इन्द्र आनन्दित हुए और नकुल कुँवर की बहुत प्रशंसा की। स्वर्गपुर में जय-जय की ध्वनि सुनाई दी। इन्द्र का मुख कमल की तरह खिल गया। वहाँ धीरे-धीरे वसन्त का वात प्रवाहित हुआ। स्वर्गवासी आनन्दित हुए। सुरराज सभा सुसज्जित करके बैठे और वृहस्पति को बुलाया।

529-535 तैंतीस कोटि देवता आकर सुधर्मा सभा में उपस्थित हुए। कैलाश ईश्वर ग्यारह कोटि शिव गणों को लेकर पहुँचे। जो जैसा था, आकर पहुँचा। यशवन्तीपुर से वेद ब्रह्मा भी आये। देखकर देव गणों ने प्रणाम किया। विधाता स्वर्ण आसन पर बेठे। ब्रह्मा ने इन्द्र से पूछा कि प्रचण्डासुर तो मर गया। अब तो स्वर्ग में कुशल है! वृहस्पति ने इन्द्र को आदेश दिया कि नकुल कुमार को बुलाकर लाओ। इन्द्र ने कहा कि सुरसेन जाकर मेरी आज्ञा को नकुल से कहें।

536-544 आज्ञा पाकर गन्धर्व चला और नकुल के पास पहुँचा। कहा कि वासव ने तुम्हें बुलाया है। मैं तुम्हें लेने के लिए आया हूं। सुरसेन की बात सुनकर नकुल मातलि की ओर देखकर मधुर वचन बोला। कहा कि दैत्य के प्रासाद में हम शीघ्र चलें। वहाँ शची देवी हैं। यह सुनकर मातलि सहमत हुआ। मातलि ने सुरसेन के रथ पर बैठकर जेनावली नगर की ओर प्रस्थान किया। उस नगर के पुर जनों से पूछते हैं कि तुम लोग जानते हो कि माता शची कहाँ हैं! दूतो ने कहा कि वे असुर पुर में नही हैं। अरड़ पर्वत के नीचे हैं। दूतो से नकुल ने कहा कि मुझे रास्ता दिखाओ और वहाँ ले जाकर हमसे भेंट कराओ।

545-551. प्रचण्डासुर ने स्वर्ग को ध्वस्त किया किन्तु नकुल के हाथों मारा गया। यह सुनकर दूत आगे बढ़े। शची के नगर में वज्र किवाड़ है। आगे जाकर उन सबने गन्धर्व नारियों को पुकारा। बोले कि दरवाजा खोलो। तुमसे भेंट करने के लिए नकुल आया है। चित्ररेखा, नन्दिनी मदना गन्धर्वी शची की सदा सेवा करती है। उन्होंने बताया कि हे माँ शची स्वामिनी! तुमसे मिलने के लिए नकुल दरवाजे पर खड़े हैं। हम लोगों को उन्होंने दरवाजा खोलने का ओदश दिया। साथ में सुरसेन है। अतः संकट की कोई बात नही है।

552-560. शची ने कहा कि हे सखी! बताओ, क्या बात है! क्या सच में माद्री का पुत्र आया है! जाओ, तुम लोग किवाड़ खोल दो। दूर के नाते से नकुल मेरा बेटा है। यह सुनकर गन्धर्वी ने शीघ्र जाकर किवाड़ खोल दिया। रास्ता दिखाने वाले दूत भीतर घुसे और देवी को सब समझाकर बताया। नकुल ने सात दिन और सात रात युद्ध करके प्रचण्डासुर को मारा और अब वह इन्द्र से भेंट करने के लिए तुम्हें लेने आया है।

561-565. शची सुनकर आनन्दित हुई और उनका मुख पूर्णिमा के चन्द्रमा की तरह विकसित हुआ। शची नकुल की प्रशंसा करके कहती है कि तुम धन्य हो। प्रचण्डासुर महाबली था। सतहत्तर बार उसने स्वर्ग पर आक्रमण करके तैंतीस कोटि देवताओं को सहज में ही जीत लिया। उसकी सेनायें सरसठ अक्षौहिणी थीं! तुम्हारी महिमा धन्य है। तुम्हारी कीर्ति चौदहों भुवनों मे व्याप्त हुई।

566-571. इसी बीच नकुल ने प्रवेश किया। शची देवी को दूर से देखते ही भूमि पर लेट गया। शची ने पुकारा कि हे नन्दन! उठो। नकुल उठकर विनय-प्रदर्शन करता है। शची देवी ने दौड़कर नकुल को गोद में लेकर उठाया। अपने आँचल से धूल झाड़ी। हाथ से पकड़कर जंघा पर बैठाया। शची देवी व्याकुल होकर रोने लगी। आँसू का जल गंगा-यमुना की तरह बहने लगा। नकुल ने कहा कि हे माँ! दुःख मत करो। तुम्हारी कृपा से असुरों का विनाश हुआ।

572-578. शची ने कहा कि हे बेटा। इस संकट से तुमने बचाया और हमारे सम्मान की रक्षा की। हे बेटा! तुम्हारा ऋण मैं कैसे चुकाऊँगी! शची ने बहुत प्रशंसा की। नकुल ने हाथ जोड़कर कहा कि तुम्हारी आज्ञा से असुर का विनाश हुआ। मैं तो केवल तुम्हारा भृत्य हूँ। अनायास ही यश लाभ किया। शची ने कहा कि बेटा! ऐसा नहीं है। तुमने अमर भुवन की रक्षा की। असुर की सेना द्वितीय समुद्र की तरह थी। हे नकुल! तुमने अकेले कैसे उसका विनाश किया! यह कहते हुए नकुल के शरीर को सहलाकर कहा कि तुम्हारा अंग वज्र हो।

579-584. नकुल ने कहा कि माँ! रथ पर बैठो। शीघ्र ही अमरलोक जायेंगे। हे स्वर्ग की देवी माँ! तुम्हारे विना स्वर्गपुर शोभा नहीं देता है। देवी नकुल की बात से शीघ्र उठीं और अप्सराओं को साथ लेकर रथ पर आसीन हुई। मातलि ने पुष्पक रथ को पवन से भी तेज गति से चलाया। स्वर्ग भुवन को पहुँचा। स्वर्ग देवी अपने भवन में प्रविष्ट हुई। सेविकायें अपने-अपने कार्य में लगा गयीं।

585-589 नकुल को लेकर मातलि सुधर्मा सभा में पहुँचा। ब्रह्मा, शिव, वृहस्पति और इन्द्र को देखकर माद्री-तनय पाँव पर गिरकर लेट गया। इन्द्र ने कहा कि हे पाण्डु राजा के पुत्र! उठो। हे चित्रसेन! जाकर नकुल को उठाओ। दौड़कर चित्रसेन ने नकुल को उठाया। हाथ जोड़कर नकुल खड़ा हुआ। इन्द्र ने सुधर्मा सभा में आज्ञा दी और धन्य-धन्य कहा।

590-598. नकुल के आसन पर जाने के समय अश्विनीकुमार ने उसे गोद में ले लिया। प्रसन्नतापूर्वक पिता ने उसके मुख का चुम्बन किया। ब्रह्मा और वृहस्पति ने कल्याण वाक्य कहा। जितने गन्धर्व देवता बैठे थे, सबने कहा कि तुम अमर लोक के अधिकारी हो। एक-एक करके सभी ने कल्याण-कामना की। वीर पुरुषार्थ के लिए शची स्वामी ने उठकर गोद में लिया। हे बेटा! तुम्हारे द्वारा स्वर्गपुर की रक्षा हुई। यह अमर मण्डल सम्पूर्ण रूप में तुम्हारा अर्जित है। पुरन्दर ने नकुल का सम्मान किया और उसके शरीर को अलंकृत किया। इन्द्र ने एक देवांग वस्त्र लेकर नकुल के सिर पर बाँध दिया। पुरन्दर ने अभिषेक-विधि से उसका अभिषेक कराया।

599-609. सभी देवों ने आनन्दित होकर नकुल के सिर पर पुष्प-वृष्टि की। शची खबर पाकर अर्घ्य थाली लेकर बाहर आयीं। उनके साथ स्वर्ग की सभी नायिकाओं ने दीपावली लेकर नकुल की आरती की। अमर मण्डल में नकुल की श्रेष्ठता स्वीकार की गयी। उसी समय गन्धर्व गण और देवताओं ने जय-ध्वनि की। वेदवर ने उसके सिर पर आशीर्वाद का अक्षत फेंका। इस प्रकार राज्याभिषेक समाप्त हुआ। इन्द्र ने नकुल से कहा कि हे बेटा! तुम इन्द्रासन पर बैठो। मेरे मन में कोई चिन्ता नहीं है। नकुल ने स्वीकार नहीं किया। सभा समाप्त हुई और दसों दिग्पाल चले गये।

610-617. इन्द्र भुवन में सात दिन रहने के बाद नकुल ने वारुणावन्त जाने की इच्छा की। इन्द्र से कहा कि हे स्वामी! मुझे आज्ञा दो। मैं वारुणावन्त जाऊँगा। अस्वीकार मत करना। मघवा स्वामी सुनकर प्रसन्न हुए। मातलि को आदेश दिया कि पुष्पक पर बैठाकर नकुल को ले जाओ और नकुल को वारुणावन्त छोड़कर आओ। मातलि पुष्पक विमान सजाकर ले आया। नकुल ने सबसे बिदाई ली। वीर पुष्पक विमान पर बैठा। मातलि सारथी ने रथ को आकाश में उड़ाया। देवरथ आकाश में धीरे-धीरे चल रहा है। पार्थ ने इसे वारुणावन्त के पास देखा। अर्जुन ने कहा कि हे देव! एक विमान वारुणावन्त की ओर आकाश की ओर से उतर रहा है।

618-620. भीमसेन ने कहा कि यह कौन राक्षस है! हे देव मुझे आज्ञा दो। मैं उसका नाश करूँगा। युधिष्ठिर ने कहा कि हे भीम! तुम्हारा यही स्वभाव है। कोई कहीं जाये, तुम अनीति की बात बोलते हो। यह सुनकर सहदेव कलकल करके हँसे। युधिष्ठिर ने पूछा कि हे सहदेव! क्या बात है!

621-635. यह विमान किसका है और कहाँ जा रहा है! सहदेव हाथ जोड़कर कहते हैं कि नकुल जो स्वर्ग

लोक में गये थे, वहाँ प्रचण्डासुर का वध किया। स्वर्ग में सभी देवताओं ने उनके सिर पर पगड़ी बाँधी। शची और इन्द्र ने अर्घ्य दिया। विदा होकर तुम्हारे पास लौट रहे हैं और यहाँ वृकोदर युद्ध करने के लिए तैयार हैं। युधिष्ठिर सुनकर उसी क्षण धीरे से सिंहद्वार पर पहुँचे। पीछे-पीछे तीनों भाई भी चले। आकाश से देवरथ भूमि पर पहुँचा। माद्रीनन्दन रथ से उतरे। नकुल युधिष्ठिर को देखते ही विनयपूर्वक प्रणाम करके पाँव पर लेट गये। नकुल उठ नहीं रहा था। युधिष्ठिर ने दौड़कर गोद में उठा लिया। युधिष्ठिर के उठाने पर नकुल उठा और भीम और अर्जुन के चरणां में प्रणाम किया। भीमसेन ने दौड़कर नकुल को गोद मे लिया और सहदेव ने नकुल के चरणों को पकड़ा। उसी समय नकुल ने सहदेव को गोद में उठाया। इन चारों पाण्डवों ने मातलि का सम्मान किया। छः लोग सभा में गये। मातलि ने युधिष्ठिर को सारी बातें बताईं। इससे चारों भाई आनन्दित हुए।

636-638. वह मातलि युधिष्ठिर से विदाई लेकर रथ के साथ स्वर्ग की ओर चले। इन्द्र से सारी बातें बताईं। शचीकान्त स्वर्ग में आनन्दपूर्वक रहने लगे। अगस्त्य ने वैवस्वत मनु से नकुल के स्वर्गपुर ही श्रेष्ठता की पगड़ी पाने का वृत्तान्त बताया।

639-640. वैवस्वत मनु आदि पर्व का यह चरित सुनकर कृतकृत्य हुए। इसके बाद मध्य पर्व का लेखन होगा। सदाजयी आदि पर्व सम्पूर्ण हुआ।

641-647. जंखेरपुर वासिनी महामाया श्रीचण्डी सारला देवी ने मेरे कण्ठ में क्रीड़ा की। मुझे आज्ञा दी कि श्री महाभारत लिखो। इसलिए मैंने आदि पर्व का वर्णन किया। हे प्राणी गण! इसे सुनकर धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष लाभ करो। उस शारदा की कृपा से मैं महाभारत की कथा कहता हूँ। वे जो कहती हैं, मैं वही लिखता हूँ। हे विवेकी जन! मुझे दोष न देना। उसी शारदा के दोनों चरणों में चित्त रमाकर शुद्रमुनि सारला दास यह गीत गा रहा है। सुजन लोगों से मेरा निवेदन है कि लेखनकार के दोषादोष को न लेना। कभी-कभी मुनियों के मन में भी उत्पन्न हो जाता है। मेरे समान क्षार और अधम व्यक्ति की क्या गणना!

।। आदि पर्व समाप्त।।



या साहित्य में सारलादास एक ऐसे लेखक हैं
नकी लेखनी साहित्य का अर्थ केवल 'जीवन'
मझती थी।
कल के महान कृषक कवि सारलादास
कृत महाकाव्य के नायक नायिकाओं को
ी प्रकार अपने जीवन्त रक्त-मांस
ति में चित्रित कर जाते हैं।
वि अपने समग्र महाकाव्य को एक हिन्दू जन
ो देवी की दृष्टि के नीचे ही लिखते चला है।
सके रहते, उनकी कृषक प्रतिभा को
पने धर्म अनुयायी संस्कृत महाकाव्य के
राट नायक नायिकाओं को
मालय की
च्चता से खींचकर गाँव के
ीचड़युक्त पथ पर चला पायी है,
सीलिए यह विराट शूद्र सबके लिए नमस्य है।
रला को पाण्डित्य या भिज्ञता का
रा भी अहंकार न था।
बारम्बर अपने निम्न जन्म, विद्याहीनता और
ुद्धिहीनता का उल्लेख करते हैं;
न्तु सत्य या विनय के नीचे एक उच्चकोटि
ी साहित्यिक सृजनशक्ति
नके भीतर जागृत थी।
ायद वे उसे स्वयं भी नहीं जानते थे।
रला महाभारत एक स्वतंत्र और अभिनव
ृष्टि है। सारला का प्रचण्ड कवित्व और
तिभा ने इसको एक नूतन महाभारत
परिणति करके इस महाकाव्य को
धिक संवेदनशील कर दिया है।

